CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रमोद कुमार वाजपेयी

श्री प्रमोद कुमार

श्री प्रमोद कुमार जी
बाजपेयी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संशोधित एवं परिवर्द्धित सोलहवाँ संस्करण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाषा-भास्कर

[A BOOK OF GENERAL HINDI]

द्वितीय आलोक

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान आदि बोर्डों के पाठ्यक्रमानुसार

इस पुस्तक में :—व्याकरण, सन्धि, शब्द विभाग, अन्य विभाग, हिन्दी भाषा का शब्द भंडार, मुहावरे और कहावतें, अन्तर्कथाएँ, अलंकार, काव्य के भेद, छन्द, अशुद्धि संशोधन विचार, अपठित गद्यांश तथा पद्यांश, संस्कृत, हिन्दी साहित्य का इतिहास, हिन्दी काव्य के कीर्ति स्तम्भ, कवियों की जीवनी, काव्यगत विशेषताएँ तथा उन पर आधारित प्रश्न, हिन्दी गद्य के आलोक स्तम्भ, गद्य लेखक की जीवनी लेखन विशेषताएें एवं उन पर आधारित प्रश्न, निबन्ध रचना ५७ निबन्धों सहित।

आधुनिक निबन्धों से युक्त :—

{ विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण, काश्मीर समस्या, सीमाविवाद, राष्ट्र भाषा, भाषाभेद और राष्ट्रीय एकता, भारत में भ्रष्टाचार की समस्या, आधुनिक युग की प्रमुख समस्याऐं तथा ५१ अन्य निबन्ध। }

१९६८ वां संस्करण

लेखक:—

शान्तिस्वरूप दीक्षित एम० ए० (हिन्दी-संस्कृत), साहित्याचार्य
पालीवाल इन्टर कौलिज, शिकोहाबाद

तथा

रामचरणसिंह तंवर एम० ए०, साहित्यरत्न, साहित्य शास्त्री
जे० सी० मिल्स उच्चतर माध्यमिक बहुउद्देशीय विद्यालय,
बिरलानगर, ग्वालियर (म० प्र०)

कृष्णा बुकडिपो,
शिकोहाबाद, (बक्सीपुर) गोरखपुर, (ग्रासभेरों) वाराणसी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
प्रकाशक ।
प्रद्युम्नकुमार अग्रवाल, एम० ए०
कृष्णा बुकडिपो, शिकोहाबाद ।

जूनियर कक्षाओं के लिये
भाषा भास्कर प्रथम आलोक
इन्टरमीडियेट के विद्यार्थियों के लिये
भाषा भास्कर तृतीय आलोक

१९६८-६९
मूल्य : तीन रुपया पचत्तर पैसा

मुद्रक ।
कल्याण प्रिंटिंग प्रेस,
राजामंडी, आगरा-२ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
—व्याकरण	
विषय प्रवेश	१
वर्ण विभाग	२
—सन्धि	
स्वर सन्धि	३
व्यञ्जन सन्धि	४
विसर्ग सन्धि	५
—शब्द विभाग	
व्युत्पत्ति के शब्द भेद	८
उत्पत्ति के शब्द भेद	८
अर्थ के विचार से शब्द भेद	६
परिवर्तन के विचार से शब्द भेद	९
संज्ञा	१०
लिंग और वचन	११
कारक	१२
कारकों में सज्ञाओं के रूप, पद परिचय	१४
सर्वनाम	१५
सर्वनाम का पद परिचय	१६
विशेषण	१७
विशेषण की तुलना	१६
विशेषण का पद परिचय	१९
क्रिया	२०
अकर्मक और सकर्मक क्रिया की पहचान	२०
क्रियाओं का रूपान्तर	२१
काल	२२
प्रकार	२३
क्रिया का पद परिचय	२४
अविकारी शब्द (अव्यय)	२५
सम्बन्ध बोधक अव्यय	२७
समुच्चय बोधक अव्यय	२७
विस्मयादि बोधक अव्यय	२७
अव्यय का पद-परिचय	२७
एक शब्द के अनेक शब्द भेद	२८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शब्द व्युत्पत्ति २९
उपसर्ग ३०
प्रत्यय ३१
तद्धित ३२
समास ३३
अव्ययी भाव ३३
तत्पुरुष ३४
कर्मधारय ३५
द्विगु ३६
बहुव्रीहि ३६
द्वन्द ३६
कुछ समस्त पद और उनके विग्रह ३६
अभ्यास ३६

४—अन्य विभाग

कर्त्ता विशेषण अथवा उद्देश्य का विस्तार ३८
क्रिया विशेषण अथवा क्रिया का विस्तार ३९
वाक्य विश्लेषण ४०
अभ्यास ५१
विराम चिह्न ५६

५—हिन्दी भाषा का शब्द भंडार

पर्यायवाची शब्द ६२
विपरातार्थक शब्द ६६
तद्भव तत्सम शब्द ६७
अनेकार्थक शब्द ६९
समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द ७१
विभिन्न भाषाओं के समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द ७३
विभिन्न उपसर्गों द्वारा धातुओं से बने शब्द ७४
एकार्थक शब्दों में सूक्ष्म अन्तर ७५
विशेषार्थक संख्यावाचक शब्द ७८
पदवी वाचक शब्द ८२
विशेष भाववाचक शब्द ८३
विविध शब्दावली ८५
संविधान में प्रयुक्त हिन्दी शब्द ८५
कुछ प्रचलित अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी रूपान्तर ८८
साधारण रूप से प्रचलित विभिन्न भाषाओं के शब्दों का हिन्दी रूपान्तर ९०

६—मुहावरे और कहावतें

मुहावरे ९२
अन्तर्कथा सम्बन्धी मुहावरे १०६
कहावतों की भांति प्रयुक्त अनूठी उक्तियां १०८
संस्कृत की कहावतें ११०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

७—अन्तर्कथाएँ ११९
८—रस
विभावादि क्या है १२२
रस, स्थायीभाव विभाव आदि का उदाहरण १२४
रस के भेद लक्षण और उदाहरण १२५
रस चक्र १३१
९—अलंकार
शब्दालंकार १३४
अर्थालंकार १३७
अलङ्कार चक्र १४४
१०—काव्य का भेद १४६
११—छन्द १५४
वर्णिक छन्द १५७
मात्रिक छन्द १६२
छन्दों का चक्र १६७
१२—अशुद्धि संशोधन विचार
संज्ञा सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७१
सर्वनाम सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७१
विशेषण तथा क्रिया विशेषण सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७२
क्रिया सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७३
अव्यय सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७४
वर्ण और मात्रा सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७४
समास तथा सन्धि सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७६
प्रत्यय सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७७
पुनरुक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७७
लिंग सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७७
विभक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ १७८
कर्त्ता कारक विभक्ति 'ने' १७८
'ने' का प्रयोग कहाँ होता है १७९
'का' विभक्ति का प्रयोग १८०
'से' विभक्ति का प्रयोग १८१
'पर' तथा 'के ऊपर' विभक्ति का प्रयोग १८२
१३—अपठित गद्यांश तथा पद्यांश
१ लिखने का ढंग १८३
२ उदाहरण १८६
३ अभ्यास १९१
१४—संस्कृत—
१ वचन, पुरुष, लिंग २०५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
२ सन्धि
३ संज्ञा सर्वनाम और विशेषण (रूप)
४ क्रिया धातु रूप
५ अव्यय
६ अनुवाद
२५—हिन्दी साहित्य का इतिहास
२६—हिन्दी काव्य कीर्ति स्तम्भ
१ कबीरदास
२ महात्मा सूरदास
३ गोस्वामी तुलसीदास
४ मीराबाई
५ नरोत्तमदास
६ रहीम
७ आचार्य केशवदास
८ कविवर बिहारीलाल
९ भूषण
१० भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र
११ जगन्नाथ दास 'रत्नाकर'
१२ अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
१३ मैथिलीशरण गुप्त
१४ बाबू जयशंकर प्रसाद
१५ पं० रामनरेश त्रिपाठी
१६ पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
१७ सुमित्रानन्दन पन्त
१८ सुभद्राकुमारी चौहान
१९ श्रीमती महादेवी वर्मा
२० रामधारीसिंह दिनकर
२१ पद्माकर
२२ माखनलाल चतुर्वेदी
२७—हिन्दी गद्य के आलोक स्तम्भ
१ पण्डित बालकृष्ण भट्ट
२ पं० प्रताप नरायण मिश्र
३ पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी
४ मुन्शी प्रेमचन्द्र
५ अध्यापक पूर्णसिंह
६ आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल
७ बाबू श्यामसुन्दरदास
८ बाबू गुलाबराय
९ श्री रायकृष्णदास
१० आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
११ वियोगी हरि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१८—कवियों पर आधरित प्रश्न और उत्तर ३१८

१९—निबन्ध रचना

विचार समूह या विषय सामिग्री ३३१

किसी महापुरुष की जीवनी (महात्मा गान्धी) ३३३

हमारे प्रिय नेता (पं० जवाहरलाल नेहरू) ३३५

हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव ३३६

आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कार ३३८

सिनेमा का आधुनिक जीवन में स्थान ३४१

विद्यार्थी जीवन ३४३

पुस्तकालय से लाभ ३४५

जीवन में परिश्रम का महत्व (उद्योग) ३४७

समाचार पत्र और उनकी उपयोगिता ३४९

वर्षा ऋतु ३५१

वसन्त ऋतु ३५२

किसी मनोरंजक यात्रा का वर्णन ३५४

देश प्रेम ३५६

ग्राम्य जीवन और उसमें सुधार की आवश्यकता ३५८

मनोरंजन के आधुनिक साधन ३६१

चरित्रबल ३६३

किसी मेले का वर्णन ३६५

किसी त्यौहार का वर्णन ३६८

आधुनिक काल का सर्वश्रेष्ठ कवि ३७०

मेरी प्रिय पुस्तक (रामचरित मानस) ३७०

कुटीर उद्योग ३७३

देशाटन ३७६

ग्राम पंचायत ३७७

वाढ़ का वर्णन ३७९

शठ सुधरहिं सत्संगति पाई ३८१

परोपकार ३८३

आधुनिक काल का सर्वाधिक लोकप्रिय लेखक ३८५

सफलता का रहस्य ३८६

भारत की वर्तमान खाद्य समस्या ३८८

भारत में बेकारी की समस्या ३९१

शान्ति के समर्थक लालबहादुर शास्त्री ३९४

सादा जीवन उच्च विचार ३९७

मित्रता ३९७

आधुनिक भारत की प्रमुख समस्याएँ ३९७

परिवार नियोजन ३९८

सैनिक शिक्षा ३९८

किसी जादू के खेल का वर्णन ३९८

किसी प्रदर्शिनी का वर्णन ३९८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किसी मैच का वर्णन (फुटबाल मैच)	३९९
ग्राम पंचायत	३९९
अपनी रुचि	३९९
अपनी पसन्द का खेल (कबड्डी का खेल)	४००
संयुक्त राष्ट्र संघ	४००
शिक्षा में क्रीड़ा का स्थान	४००
समय का सदुपयोग	४०१
किसी राष्ट्रीय उत्सव का वर्णन (स्वतन्त्रता दिवस)	४०१
व्यायाम (उ० प्र० १९६५)	४०१
जीवन में अनुशासन का महत्व	४०१
सच्चरित्रता	४०२
भारत की कुछ आदर्श नारियाँ	४०२
विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण	४०२
काश्मीर समस्या	४०५
सीमा विवाद	४०७
राष्ट्र भाषा	४१०
भाषा भेद और राष्ट्रीय एकता	४१४
भारत में भ्रष्टाचार की समस्या	४१६
आधुनिक युग की प्रमुख समस्याएँ	४१९
परिशिष्ट	
पद्माकर	४१९
माखनलाल चतुर्वेदी	४१२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाषा-भास्कर

व्याकरण

विषय-प्रवेश

प्रत्येक प्राणी के मन में परिस्थिति के अनुसार अनेक प्रकार के भावों का उदय हुआ करता है; तथा इन भावों को दूसरों पर प्रकट करने की इच्छा तथा आवश्यकता भी हुआ करती है । पशु-पक्षी भी अपने मनोगत भावों की विशिष्ट मुख-ध्वनि तथा शारीरिक चेष्टाओं द्वारा प्रकट करते हैं । किसी पक्षी की 'चहचहाहट' को सुनकर हम सहज ही जान जाते हैं कि वह आनन्द में मस्त है, और कभी उसी की 'चीं-चीं को सुनकर समझ लेते हैं कि वह 'बाज' आदि के भय से त्रस्त है । सृष्टि के आरम्भ में (जब भाषण कला का विकाश नहीं हुआ था) मनुष्य भी पशु-पक्षियों की भाँति स्वर तथा संकेतों द्वारा अपने भावों को प्रकट किया करता था । मनुष्य एक विकास शक्ति सम्पन्न प्राणी है, धीरे-धीरे उसने अपनी भाव प्रकाशन प्रणाली में यथोचित उन्नति की और जीभ, कण्ठ, दाँत आदि द्वारा विभिन्न ध्वनियों को जन्म दिया । यही व्यक्त ध्वनि-संकेत भाषा कहलाये । इस प्रकार भाषा उन व्यक्त ध्वनि-संकेतों का नाम है, जिनके द्वारा मनुष्य अपने मनोगत भावों को दूसरों पर प्रकट करता है ।

जलवायु, धर्म, राजनीति आदि के प्रभावों के कारण विभिन्न स्थानों पर स्थित मनुष्यों के वाग्यंत्र, विचार-प्रणाली तथा प्रकाशन प्रणाली में भिन्नता का आना स्वाभाविक था; अतः अलग-अलग स्थानोंपर स्थित मनुष्यों की भाषाओं में भिन्नता आई; और इस प्रकार असंख्य भाषाओं का जन्म हुआ । संसार की भाषाओं की तो गणना ही क्या, भारत में भी बहुत सी भाषाएँ हैं, जैसे:—मराठी, कन्नड़, मलयालम, तामिल, तेलगू, बँगला, हिन्दी आदि । इनमें से हमारी भाषा 'हिन्दी' है । एक भाषा के अन्तर्गत बहुत सी उपभाषाएँ या प्रान्तीय भाषाएँ हुआ करती हैं । अवधी, ब्रजभाषा, खड़ी बोली आदि हिन्दी की उपभाषाएँ हैं । आज जिस भाषा में हम लिखते-पढ़ते हैं; और जो भारत की राष्ट्रभाषा है, वह हिन्दी की 'खड़ी' बोली ही है ।

मनुष्य की आवश्यकताएँ निरन्तर बढ़ती रही हैं; और उनकी पूर्ति के लिये वह नाना प्रकार के आविष्कार करता रहा है । उसने देखा कि श्रोता के समीप होने पर तो मौखिक ध्वनियों (भाषा) विचारों का आदान-प्रदान हो जाता है; किन्तु दूर स्थित व्यक्ति के पास तक उन्हें पहुँचने में कठिनाई होती है । अतः उसने मुख से निकाली हुई ध्वनियों की कुछ आकृतियाँ नियत कर लीं और उन्हें 'काँटों' आदि से 'पत्तों' आदि पर चित्रित करना आरम्भ कर दिया । यही आकृतियाँ लिपि कहलाईं । इस प्रकार उन आकृतियों के समूह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
को जिनमें मन के भाव चित्रित किये जाते हैं, लिपि कहा जाता है। संसार में अनेक लिपियां हैं जैसे—रोमन, बंगला, देवनागरी आदि। हमारी लिपि का नाम देवनागरी है। सारांश यह है कि भाव प्राण है, भाषा शरीर और लिपि उसकी प्रतिमा है। भाषा के इन बोले जाने वाले तथा लिखे जाने वाले रूपों के अनुसार भाषा के कथित तथा लिखित दो भेद किये जाते हैं। इस प्रकार कथित भाषा वह है जिसका प्रयोग सम्मुख स्थित व्यक्ति पर विचारों को प्रकट करने के लिये किया जाता है, और लिखित भाषा, भाषा का वह कल्पित रूप हैं, जिसका प्रयोग लिखने में होता है।

मनुष्य बौद्धिक प्राणी है। वह स्वभाव से ही अपने चारों ओर की वस्तुओं के सम्बन्ध में अपनी जिज्ञासा-वृत्ति (Curiosity) को शान्त करने के लिए नियम-उपनियम जानना चाहता है। भाषा से उसका सदा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। उसने उससे सम्बन्धित प्राकृतिक नियमों का पता लगाया और इस प्रकार व्याकरण को जन्म दिया। अतः व्याकरण उस विद्या का नाम है जिसके द्वारा भाषा के वाक्यों, शब्दों और अक्षरों के भेद, बनावट, उत्पत्ति आदि के नियमों का ज्ञान होता है तथा जिसके द्वारा भाषा का ठीक ढङ्ग से बोलना, लिखना, तथा पढ़ना आ जाता है। प्रत्येक भाषा का व्याकरण अलग-अलग होता है। प्रस्तुत पुस्तक में हम 'हिन्दी व्याकरण' के बारे में विचार करेंगे।

बोलते समय हमारे मुख से बहुत सी ध्वनियाँ निकलती हैं, और उनमें से कुछ ध्वनियों के योग से कोई एक पूरी बात समझ में आ जाती है, इसी को व्याकरण में वाक्य कहा जाता है। इस प्रकार वाक्य ध्वनियों के उस समूह का नाम है, जिससे कोई पूरी बात समझ में आ जाय। जैसे राम आया।

एक वाक्य में कई अलग-अलग ध्वनियाँ होती हैं, जो अपना अलग-अलग अर्थ बतलाती हैं, ऐसी ध्वनियों को शब्द कहते हैं। इस प्रकार शब्द वह ध्वनि है, जिसका कोई अर्थ होता है। जैसे—उक्त वाक्य में 'राम' और 'आया'।

ध्यान देने पर विदित होगा कि एक ध्वनि में ऐसी कई छोटी-छोटी अन्य ध्वनियाँ होतीं हैं, जिनके खण्ड नहीं हो सकते। इन्हीं मूल ध्वनियों को अक्षर कहा जाता है। इस प्रकार अक्षर ऐसी मूल ध्वनि है, जिसके खंड नहीं हो सकते। जैसे: र्, आ, म्, अ।

हर एक अक्षर (अखण्ड ध्वनि) के लिए लिपि में एक-एक आकृति नियत है, जिसे वर्ण कहते हैं। जैसे: क, प, ट। इस प्रकार अक्षर से भाषा के उच्चारित तथा वर्ण से भाषा के लिखित रूप का बोध होता है, किन्तु अब भाषा में ये दोनों शब्द समान अर्थ के वाची हैं। इन वर्णों के समूह का नाम वर्णमाला है। हिन्दी की वर्णमाला में कुल ४४ वर्ण हैं (११ स्वर+३३ व्यंजन)।

प्रत्येक भाषा की व्याकरण में इन तीनों (वर्ण, शब्द तथा वाक्य) का ही विवेचन किया जाता है; अतः व्याकरण को वर्ण-विभाग, शब्द विभाग तथा वाक्य-विभाग नाम के तीन भागों में बांटा जाता है।

वर्ण-विभाग

वर्ण विभाग—व्याकरण का वह विभाग है, जिसमें वर्णों के उच्चारण लेखन तथा प्रकार आदि का वर्णन होता है।

वर्ण दो प्रकार के होते हैं—स्वर और व्यंजन।

स्वर (Vowel) वे वर्ण हैं, जिनका उच्चारण स्वतन्त्र रूप से दूसरे वर्णों की सहायता के बिना भी हो सकता है। जैसे—अ, इ, उ। ये अधिक दूर से सुनाई देते हैं तथा इ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उच्चारण में मुख द्वार सदैव थोड़ा बहुत खुला रहता है और वायु बिना किसी रुकावट के ..ह्र निकलती है। ये स्वर 'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ' हैं।

इसमें 'अ, इ, उ, ऋ' के बोलने में कम समय तथा 'आ, ई, ऊ, ॠ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ' के बोलने में अधिक समय लगता है, अतः पहलों को ह्रस्व स्वर तथा दूसरों को दीर्घस्वर कहते हैं।

व्यंजन (Consonant)—वे वर्ण हैं जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना होता। जैसे—क, च, त, प। इनमें श्रावण गुण अधिक नहीं होता, अर्थात् ये स्वरों की ..क्षा कम दूरी से सुनाई पड़ते हैं। समान रूप से बोलने पर 'च' की अपेक्षा 'इ' अधिक से सुनाई देती है। इसके उच्चारण में जिह्वा के स्पर्श द्वारा वायु थोड़ी या बहुत अवश्य रुक कर बाहर निकलती है।

ये व्यंजन हैं—क, ख, ग, घ, ङ (कवर्ग); च, छ, ज, झ, ञ, (चवर्ग) ट, ठ, ड, ढ, , (टवर्ग); त, थ, द, ध, न, (तवर्ग); प, फ, ब, भ, म, (पवर्ग); य, र, ल, व, श, ष, स, । क़, ख़, ग़, ज़, ड़, ढ़, फ़, वर्ण (जो विदेशी शब्दों में प्रयुक्त होते हैं) व्यजनों के ही न्तर्गत माने गये हैं। इसके अतिरिक्त अनुस्वार (ं) चन्द्र बिन्दु (ँ) तथा विसर्ग (:) ी व्यंजनों के ही अन्तर्गत हैं, क्योंकि इनका उच्चारण स्वरों की सहायता के बिना नहीं हो कता। अन्तर केवल इतना ही है कि अन्य व्यंजनों में स्वर व्यंजन के बाद आता है, से—'च' में अ, 'च' के बाद है किन्तु इनमें पहले आता है। (जैसे—'दुः' में विसर्ग 'उ' बाद है)।

हिन्दी में क्ष, त्र, ज्ञ इन संयुक्ताक्षरों का भी प्रयोग होता है इसमें क्ष, क तथा ष् के ोग से; त्र, त् तथा र के योग से एवं ज्ञ, ज तथा ञ के योग से बनते हैं।

सन्धि

निकटवर्ती दो वर्णों के मेल से जो विकार होता है, उसे सन्धि कहते हैं। जैसे, ..ार्थी (विद्या+अर्थी) में आ और अ मिलकर 'आ' हो गया है।

सन्धि तीन प्रकार की होती है

(१) स्वर सन्धि, (२) व्यञ्जन सन्धि, (३) विसर्ग सन्धि।

स्वर सन्धि

स्वर के साथ स्वर के मिलने से जो विकार होता है, उसे स्वर सन्धि कहते हैं। से—'विद्या+ ..र्थी विद्यार्थी' में विद्या के अन्त के 'आ' और अर्थी के आदि के 'अ' को ..लकर 'आ' हो गया है। 'आ' तथा 'अ' दोनों ही सर्वी है अतः यह स्वर सन्धि है।

इसके प्रधान पाँच भेद हैं

१—दीर्घ, ..—गुण, ३—वृद्धि, ४—यण, ५—अयादि।

१—दीर्घ स्वर सन्धि—यदि ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ के बाद क्रमशः ह्रस्व या अ, इ, उ, ऋ आवें, तो उन दोनों के स्थान पर क्रमशः आ, ई, ऊ, ॠ हो जाते हैं।
—

अ+आ=आ, शुभ+आगमन=शुभागमन।

इ+इ=ई, कवि+इन्द्र=कवीन्द्र।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उ+उ=ऊ, भानु+उदय=भानूदय।
ऋ+ऋ=ॠ, पितृ+ऋण=पितृण।

२—गुण स्वर सन्धि—यदि 'अ' अथवा 'आ' के बाद ह्रस्व अथवा दीर्घ इ उ, ऋ आयें, तो अ+इ=ए, अ+उ=ओ और अ+ऋ=अर् हो जाते हैं। जैसे—

अ+इ=ए, देव+इन्द्र=देवेन्द्र।
अ+उ=ओ, पर+उपकार=परोपकार।
आ+ऋ=अर्, महा+ऋषि=मह+अर्+षि=महर्षि।

(३) वृद्धि स्वर सन्धि—यदि 'अ' अथवा 'आ' के बाद ए, ऐ, ओ, औ, आयें, तो अ अथवा आ+ए अथवा ऐ=ऐ और अ अथवा आ+ओ अथवा औ=औ हो जाते हैं। जैसे—

आ+ए=ऐ, सदा+एव=सदैव।
आ+ऐ=ऐ, महा+ऐश्वर्य=महैश्वर्य।
अ+ओ=औ, उष्ण+ओदन=उष्णौदन।
अ+औ=औ, वन+औषधि=वनौषधि।

(४) यण स्वर सन्धि—यदि ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ के बाद कोई असमान स्वर आये तो इ का य्, उ का व् और ऋ का र हो जाते हैं। जैसे—

इ+आ=य्+आ=या, इति+आदि=इत्+य्+आदि=इत्यादि।
उ+आ=व्+आ=वा, सु+आगत=स्=व+आगत=स्वागत।
ऋ+आ=र्+आ=रा, पितृ+आज्ञा=पित्+र्+आज्ञा=पित्राज्ञा।

(५) अयादि स्वर सन्धि—यदि ए, ऐ, ओ, औ के बाद कोई स्वर आये, तो इनके स्थान पर क्रमशः अय्, आय्, अव्, आव् हो जाते हैं। जैसे—

ऐ+अ=अय+अ=अय्, चे+अन=च्+अय्+अन=चयन।
ऐ+अ=आय्+अ=आय, नै+अक=न्+आय्+अक=नायक।
ओ+इ=अव्+इ=अवि, पो+इत्र=प्+अव्+इत्र=पवित्र।
औ+अ=आव्+अ=आव, पौ+अक=प्+आव+अक=पावक।

व्यञ्जन सन्धि व्यञ्जन के साथ व्यञ्जन अथवा स्वर के योग होने से जो विकार होता है, उसे व्यञ्जन सन्धि कहते हैं। जैसे—उत्+चारण=उच्चारण, वाक्+ईश=वागीश। यहाँ प्रथम उदाहरण में व्यञ्जन के साथ व्यञ्जन के आने से तथा दूसरे व्यञ्जन के बाद स्वर आने से विकार हुआ है।

इनके प्रधान नियम ये हैं—

(१) यदि वर्गों के प्रथम वर्ण (क, च, ट, त, प) के बाद स्वर अथवा वर्गों के तृतीय अथवा चतुर्थ वर्ण अथवा य, व, र, ल में से कोई भी वर्ण आये तो उस प्रथम वर्ण के स्थान पर उसी वर्ग का तीसरा वर्ण हो जाता है। जैसे—

वाक्+ईश=वागीश। अच्+अन्त=अजन्त। षट्+रिपु=षड्रिपु
भगवत्+भक्ति=भगवद् भक्ति। सुप्+अन्त=सुबन्त।

(२) यदि वर्गों के प्रथम अक्षर के बाद किसी भी वर्ग का पाँचवाँ वर्ण आये, तो प्रथम वर्ण के स्थान पर उसी वर्ग का तीसरा अथवा पाँचवाँ वर्ण हो जाता है। जैसे—जगत्+नाथ=जगद्नाथ अथवा जगन्नाथ।

अपवाद—यदि बाद में आने वाला अक्षर (वर्ग का पाँचवाँ वर्ण) किसी प्रत्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का हो, तो केवल पाँचवाँ वर्ण ही होता है, तीसरा नहीं। जैसे—चित्+मय=चिन्मयः। यहाँ पर चिद्मय अशुद्ध है।

(३) यदि त् अथवा द् के बाद च अथवा छ हो, तो त्, द् का च् हो जाता है। जैसे—उत्+चारण=उच्चारण।

(४) यदि त् अथवा द् के बाद ज अथवा झ हो, तो त्, द का ज् हो जाता है। जैसे—सत्+जन=सज्जन।

(५) यदि त् अथवा द् के बाद ट अथवा ठ हो, तो त्, द का ट् हो जाता है। जैसे—सत्+टीका=सट्टीका।

(६) यदि त् अथवा द् के बाद ड, ढ अथवा ष हो, तो त्, द् का ड् हो जाता है। जैसे—उत्+डयन=उड्डयन।

(७) यदि त् अथवा द् के बाद ल हो, तो त्, द् का ल हो जाता है। जैसे—तत्+लीन=तल्लीन।

(८) यदि त् अथवा द् के बाद श हो तो त्, द् का च् और श का छ हो जाता है। जैसे—सत्+शास्त्र=सच्छास्त्र।

(९) यदि त् अथवा द् के बाद ह हो, तो त्, द् का द् और ह का ध हो जाता है। जैसे—उत्+हत=उद्धत।

(१०) यदि स् के बाद च वर्ग का कोई वर्ण आये, तो स् का श् हो जाता है। जैसे—दुस्+चरित्र=दुश्चरित्र।

(११) यदि स् के बाद टवर्ग का कोई वर्ण आये, तो स् का ष् हो जाता है। जैसे—दुस्+ट=दुष्ट।

(१२) यदि ष् के बाद त अथवा थ आये, तो त् का ट और थ का ठ हो जाता है। जैसे—आकृष्+त=आकृष्ट, ष ष्+थ=षष्ठ।

(१३) यदि 'म्' के बाद य, व, र, ल, श, ष, स, ह में कोई वर्ण हो, तो 'म्' का अनुस्वार हो जाता है। जैसे—सम्+हार=संहार।

(१४) यदि 'म्' के बाद किसी भी वर्ग का कोई भी वर्ण आये, तो म का अनुस्वार अथवा 'म्' के स्थान पर आगे वाले वर्ण के वर्ग का पाँचवाँ वर्ण हो जाता है। जैसे—किम्+चित्=किंचित्, अथवा किञ्चित् (यहाँ म् के बाद च् है, अतः म् का अनुस्वार हो जायेगा, अथवा म् के बाद च 'चवर्ग' का होने के कारण चवर्ग का पाँचवाँ वर्ण ञ् हो जायेगा।)

(१५) यदि ऋ, र अथवा ष के आगे 'न' आये और इनके बीच में कोई स्वर, कवर्ग, पवर्ग अनुस्वार य, व, र, ह अथवा न हो, तो 'न' का 'ण' हो जाता है। जैसे—प्र+मान=प्रमाण, तृष्+ना=तृष्णा।

(१६) यदि किसी शब्द का पहला अक्षर स हो और इसके पहले अ, आ को छोड़कर अन्य स्वर अथवा कवर्ग हो, तो स का ष हो जाता है। जैसे—अभि+सेक=अभिषेक।

१७—जब 'छ' से पहले कोई स्वर आये, तो 'छ' का 'च्छ' हो जाता है। जैसे—परि+छेद=परिच्छेद, आ+छादन=आच्छादन।

विसर्ग सन्धि—विसर्ग के साथ स्वर अथवा व्यञ्जन के मिलने से जो विकार होता है, उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं। जैसे—निः+रोग=नीरोग।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसके प्रधान नियम ये हैं—

१—यदि विसर्ग के बाद क, ख, प, फ में से कोई भी वर्ण हो, विसर्ग में कोई परिवर्तन नही होता। जैसे—अन्तः+पुर=अन्तःपुर

अपवाद १—यदि विसर्ग से पहले इ अथवा उ हो और बाद में क, ख, प, फ हों तो विसर्ग का 'ष्' हो जाता है। जैसे—निः+काम=निष्काम। दुः+कार्य=दुष्कार्य। निः+फल=निष्फल।

२—'दुःख' की विसर्ग में कोई परिवर्तन नहीं होता।

३—ऐसे भी बहुत से शब्द हैं, जिनमें विसर्ग से पहले 'अ' अथवा 'आ' हो और बाद में 'क' हो, तो विसर्ग का 'स्' अथवा 'ष' हो जाता है। (किन्तु ये गिने चुने ही हैं।) जैसे—नमः+कार—नमस्कार। पुरः+कार=पुरस्कार। भाः+कर=भास्कर।

४—यदि विसर्ग के बाद च, छ हों तो विसर्ग का 'श्' हो जाता है। जैसे—निः+छल=निश्छल। निः+चल=निश्चल।

५—यदि विसर्ग के बाद ट, ठ हों, तो विसर्ग का 'ष्' हो जाता है। जैसे—धनुः+टंकार=धनुष्टंकार।

६—यदि विसर्ग के बाद त, थ हों, तो विसर्ग का 'स्' हो जाता है। जैसे—मनः+तर्क=मनस्तर्क।

७—यदि विसर्ग के बाद में श, ष, स हों, तो विसर्ग का विसर्ग ही रहता है, अथवा विसर्ग आगे वाले वर्ण के सदृश आधा वर्ण बन जाता है। जैसे—निः+शंक—निःशंक, निश्शंक। निः+सार—निःसार, निस्सार।

८—यदि विसर्ग से पहिले 'अ' हो और बाद में कोई कोमल व्यञ्जन (वर्गों के तीसरे, चौथे, पांचवें वर्ण, य, र, ल, व, ह) हों, तो 'अ' और विसर्ग के स्थान पर 'ओ' हो जाता है। जैसे—वयः+वृद्ध=वयोवृद्ध।

९—यदि विसर्ग के पहले 'अ' 'आ' को छोड़ कर अन्य कोई स्वर हों, और बाद में कोई कोमल व्यञ्जन (किसी वर्ग का तीसरा, चौथा, पाँचवाँ वर्ण, य, र, ल, व, ह) अथवा कोई स्वर हो, तो विसर्ग का 'र्' हो जाता है। जैसे—दुः+आशा=दुराशा। निः+दयी=निर्दयी।

१०—यदि विसर्ग से पूर्व 'अ' 'आ' को छोड़कर अन्य कोई स्वर हो और बाद में 'र' हो, तो विसर्ग का लोप हो, जाता है। यदि विसर्ग से पूर्व ह्रस्व स्वर हो, तो उसका दीर्घ भी हो जाता है। जैसे—निः+रोग=नीरोग।

सन्धि का सम्बन्ध प्रधानतः संस्कृत शब्दों से है। हिन्दी में संस्कृत तत्सम शब्द तथा सामाजिक पदों के प्रयोग होने के कारण ऊपर कुछ साधारण नियम दिये गये हैं। स्वतन्त्र रूप से हिन्दी में सन्धि का नियम नहीं है। कुछ शब्दों के साथ प्रत्यय अवश्य जुड़ते हैं, जिनमें कुछ तो ऊपर के नियमों के अन्तर्गत आते हैं और कुछ स्वतन्त्र रूप से।

१—पढ़+आई=पढ़ाई। बुरा+आई=बुराई (यहाँ 'दीर्घ स्वर-सन्धि' का काम हुआ है)।

२—लट्ठ+इया=लठिया। लोट+इया=लुटिया (यहाँ 'गुण स्वर-सन्धि' नहीं हुई)।

३—व+ह=भ हो जाता है। जैसे—कब+ही=कभी। जब+ही=जभी तब+ही=तभी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास

१—सनियम सन्धि-विच्छेद कीजिए

रामाराधन, वागीश, इत्यत्र, जगन्नाथ, विष्णूदय, निष्कारण, शिरोभूषण, महेश्वर, देवर्षि, भवदाज्ञा, महौषधि, देवैश्वर्यं, उज्ज्वल, सुरेश, चयन, वृहदाकार, पवित्र, पित्राराधन, सच्चारण, यमुनोदक, स्वरोदय, सल्लाभ, श्रीश, मनोरथ, सुध्युपास्य, जगदीश, गंगौघ, निश्चल, शीततु , सच्चरित्र, दण्डकारण्य, व्यवसाय, आविष्कार, दुरुपयोग, उद्योग। (उ० प्र० हाई० १९४७)

तमसाच्छन, उद्वेलित, प्रत्येक, अनुल्लङ्घनीय। (हाई० १९४८)
उपर्युक्त, निश्छल, शरच्चन्द्र, महेश्वर्य। (हाई० १९६०)
विद्यार्थी, रमेश, दिगन्त, निर्गुण (हाई० १९६१)
पित्रादेश: अथवा नायक: (हाई० १९६३)
विवादास्पद, अभ्युदय (हाई० १९६४).

२—सनियम सन्धि कीजिए

पितृ+अनुमति, मनः+नीत, सु+अच्छ, उत्+गम, सु+आगत, शुभ+ओदन, दिक्+गज, मनः+हर, राका+ईश, भगवत्+भक्ति, कृष्ण+ऋद्धि, सूर्य+उदय, उत्+डयन, भो+अन, सत्+चित्+आनन्द, ने+अन, दुः+तर, शुभ+आगमन, मनः+रम, मत+ऐक्य, शुभ+इच्छु, सम्यक्+दर्शन, कृपा+अभिलाषी, मनः+जव, महा+औषधः, नदी+आदयः।

उत्तर—१—राम+आराधन, वाक्+ईश, इति+अत्र, जगत्+नाथ, विष्णु+उदय, निः (निस्)+कारण, शिरः+भूषण, महा+ईश्वर, देव+ऋषि, भवत्+आज्ञा, महा+औषधि, देव+ऐश्वर्य, उत्+ज्वल, सुर+ईश, चे+अन, बृहत्+आकार, पो+इत्र, पितृ+आराधन, सत्+चारण, यमुना+उदक, स्वर+उदय, सत्+लाभ, श्री+ईश, मनः+रथ, सुधी+उपास्य, जगत+ईश, गंगा+ओघ, निः+चल, शीत+ऋतु, सत्+चरित्र, दण्डक+अरण्य, वि+अवसाय, आविः+कार, दुः (दुर्)+उपयोग, उत्+योग, तमसा+आ+छद्+न, उत्+वेलित, प्रति+एक, अन्+उत्+लङ्घनीय, उपरि+उक्त, निः+छल, शरत्+चन्द्र, महा+ऐश्वर्य, विद्या+अर्थी, रमा+ईश, दिक्+अन्त, निः+गुण, पितृ+आदेशः, नै+अकः। विवाद+आस्पद, अभि+उदय।

२—पित्रनुमति, मनोनीत, स्वच्छ, उद्गम, स्वागत, शुभौदन, दिग्गज, मनोहर, राकेश, भगवद्भक्ति, कृष्णर्द्धि, सूर्योदय, उड्डयन, भवन, सच्चिदानन्द, नयन, दुस्तर, शुभागमन, मनोरम, मतैक्य, शुभेच्छु, सम्यग्दर्शन, कृपाभिलाषी, मनोजव, महौषधः, नद्यादयः।

शब्द विभाग

शब्द-विभाग में शब्दों के भेद उत्पत्ति तथा उनके रूपान्तर आदि का वर्णन होता है। जैसा कि हम कह आये हैं कि 'शब्द' वह ध्वनि है, जिसको सुनकर किसी अर्थ का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्ञान होता है। जैसे—'गाय' कहने से ऐसे पशु का बोध होता है जो पालतू आदि गुणों से युक्त है, अतः गाय एक शब्द है। किन्तु इसी के एक भाग 'गा' से कुछ भी समझ में नहीं आता अतः यह निरर्थक ध्वनि है और शब्द नहीं है। व्याकरण में निरर्थक ध्वनियों पर विचार नहीं किया जाता। बहुत से शब्द स्वयं तो कुछ अर्थ नहीं देते, पर अन्य शब्दों के साथ मिलकर वह अपनी विशेषता प्रकट करते हैं, अतः ये भी शब्द कहलाते हैं। जैसे—का, में, से आदि। केवल 'का' कुछ भी अर्थ नहीं बतलाता, किन्तु 'राम का घोड़ा है' में 'का' से घोड़ा की विशेषता प्रकट होती है, और उसके द्वारा ही 'राम' और 'घोड़े' का सम्बन्ध प्रकट होता है, अतः 'का' भी शब्द है।

पदार्थों की खड़खड़ाहट, ताली आदि का बजाना, पशु-पक्षियों की बोलियाँ, 'पत्थर-पत्थर' आदि में प्रयुक्त 'पत्थर' आदि शब्द भी स्वतन्त्र रूप से किसी भी अर्थ का बोध नहीं कराते अतः वाक्य में प्रयुक्त न होने तक तो वे केवल 'ध्वनि' ही रहते हैं और उन्हें शब्द नहीं कहा जाता किन्तु वाक्य में प्रयुक्त होते ही वे अपना विशिष्ट अर्थ ध्वनित करते हैं, अतः उस अवस्था में उन्हें 'शब्द' संज्ञा दी जाती है। जैसे—'फक् फक्', 'टप टप' स्वतन्त्र रूप से ध्वनियाँ ही हैं किन्तु 'फक् फक् करती आई रेल' तथा 'टप टप पानी टपक रहा है' में वे सार्थक होने के कारण शब्द हैं।

विशेष—व्याकरण का विषय 'शब्द' है पदार्थ नहीं। व्याकरण का 'पानी' शब्द से सम्बन्ध तो है, किन्तु 'पानी' पदार्थ से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

शब्दों का वर्गीकरण कई विचारों से किया जा सकता है। इनमें चार विचार मुख्य हैं—(१) व्युत्पत्ति के विचार से, (२) उत्पत्ति के विचार से, (३) अर्थ के विचार से, (४) परिवर्तन के विचार से।

१—व्युत्पत्ति के विचार से शब्द के भेद

व्युत्पत्ति के विचार से शब्द के तीन भेद हैं—रूढ़, यौगिक, योगरूढ़।

(१) **रूढ़**—वे शब्द हैं जो किसी अन्य शब्द या शब्दों से न बने हों। जैसे—खाट, मेज, लड़का।

(२) **यौगिक**—वे शब्द हैं जो दो से अधिक शब्दों के मेल से अथवा शब्द और शब्दांश के योग से बनते हैं। जैसे—घुड़सवार (घोड़ा+सवार), विद्यालय (विद्या+आलय) प्रहर (प्र+हृ+अण)।

(३) **योगरूढ़**—वे शब्द हैं, जो यौगिक होने पर भी अपना कोई विशेष अर्थ रखें। जैसे—'चारपाई' का यौगिक अर्थ है 'चार पैरों वाली' किन्तु सभी 'चार पैरों' की वस्तुओं को हम 'चारपाई' नहीं कहते, केवल 'खाट' को ही 'चारपाई' कहते हैं। इस प्रकार 'चारपाई' शब्द यौगिक होते हुए भी 'खाट' में रूढ़ हो गया है; अतः यह योगरूढ़ है। इसी प्रकार 'चौपाया' भी पशु के अर्थ में ही आता है; अतः योगरूढ़ है। यदि ये दोनों शब्द यौगिक होते तो एक ही अर्थ को बतलाते किन्तु ऐसा नहीं है; अतः ये दोनों योगरूढ़ हैं।

२—उत्पत्ति के विचार से शब्द के भेद

उत्पत्ति के अनुसार शब्द के ६ भेद हैं।

(१) तत्सम, (२) तद्भव, (२) देशज, (४) अनुकरणात्मक, (५) विदेशी, (६) द्विज।

(१) **तत्सम**—वे शब्द जो संस्कृत से हिन्दी में लिये गये हैं, तथा जिनमें कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ है। जैसे—पवन, जल, बालक स्त्री आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(२) **तद्भव**—वे संस्कृत शब्द हैं जो बिगड़े हुए रूप में हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—नाक, कान, पत्थर, आँख। ये क्रमशः संस्कृत के नासिका, कर्ण, प्रस्तर, अक्षि शब्दों से विगड़ कर बने हैं।

(३) **देशज**—वे शब्द हैं जिनकी उत्पत्ति के विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। जैसे—खिचड़ी, पगड़ी, चिड़िया आदि। यह तो पता नहीं है कि ये शब्द अन्य भाषाओं के हैं अथवा अनार्य भाषाओं के; किन्तु इतना निश्चित है कि ये हैं इसी देश के; अतः इन्हें देशज कहते हैं।

(४) **अनुकरणात्मक**—वे शब्द हैं जो पदार्थों तथा पशु-पक्षियों की बोलियों के आधार पर बनाये गए हैं। जैसे—फड़फड़ाना, खटपट, कांव-काँव।

(५) **विदेशी**—वे शब्द हैं जो विदेशी अथवा दूसरी भाषाओं के हैं किन्तु हिन्दी में ज्यों के त्यों काम में लाये जाते हैं। जैसे—अफसोस (फारसी), इमारत (अरबी), दरोगा, (तुर्की), पठान (पश्तो), इञ्च (अँग्रेजी), बोतल (पुर्तगाली), कारतूस (फ्रांसीसी)।

(६) **द्विज**—वे शब्द हैं जो दो भाषाओं के सम्मिश्रण से बने हैं। **जैसे—अमन-सभा** [(अरबी), अमन+(संस्कृत) सभा], डबल-रोटी (अंग्रेजी) डबल+(हिन्दी) रोटी], रामबख्स [(हिन्दी) राम+(फारसी) बख्स], क्लर्की, साहिबी, पतंगबाजी आदि।

३—अर्थ के विचार से शब्द के भेद

अर्थ के अनुसार शब्द के ३ भेद हैं—(१) वाचक, (२) लाक्षणिक, (३) व्यंजक।

(१) **वाचक**—वे शब्द हैं जो उसी अर्थ में बोले या लिखे जायें, जिनके लिए वे बने हैं। जैसे—पशु विशेष के लिए 'गाय' और पर्वत विशेष के लिए 'हिमालय'।

(२) **लाक्षणिक**—वे शब्द हैं जो साधारण अर्थ में प्रयुक्त न होकर अपने से सम्बद्ध किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—'मोहन तो उल्लू ही है' में 'मोहन' 'उल्लू' नह. हो सकता, अतः 'उल्लू' शब्द अपने से सम्बद्ध 'मूर्ख' अर्थ को बतलाता है। इस प्रकार साधारण अर्थ 'पक्षी विशेष' को छोड़कर विशेष अर्थ मूर्ख को बताने के कारण यह 'उल्लू' शब्द लाक्षणिक है।

(३) **व्यंजक**—वे शब्द हैं जो वाच्य तथा लक्ष्य से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, तथा जिनका साधारण अर्थ से कुछ सम्बन्ध नहीं होता। जैसे—एक यात्री ने दूसरे यात्री से कहा—'छः बज गये।' यात्री का भावार्थ है कि चलने का समय हो गया है। यह अर्थ उक्त वाक्य के कहने से नहीं निकलता, अतः यह वाच्य नहीं है; न इस अर्थ का इन शब्दों से कोई सम्बन्ध ही है; अतः लक्षय भी नहीं है। केवल उक्त वाक्य से ऊपर का अर्थ प्रकरण की सहायता से ही समझ में आ जाता है; अतः यह व्यंग्य अर्थ है, और इस अर्थ को बताने वाले उक्त शब्द 'व्यंजक' हैं।

४—परिवर्तन के विचार से शब्द के भेद

परिवर्तन के अनुसार शब्द के दो भेद हैं—

(१) विकारी। (२) अविकारी।

विकारी—वे शब्द हैं, जो लिंग, वचन, कारकादि के अनुसार बदलते रहते हैं। जैसे—मोहन, सुन्दर, जाता है इत्यादि।

इसके चार भेद हैं—संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२) अविकारी—वे शब्द हैं जो लिंग वचन कारकादि के अनुसार नहीं बदलते। जैसे—और, हाय ! किन्तु आदि।

'अव्यय'—'अविकारी का ही दूसरा नाम है। इनके चार भेद होते हैं—क्रिया-विशेषण, सम्बन्ध बोधक, समुच्चय बोधक, विस्मयादिबोधक।

आगे इस विकारी तथा अविकारी शब्दों के भेदों पर बिचार किया जायगा।

संज्ञा (NOUN)

किसी जाति, द्रव्य, गुण, भाव, व्यक्ति, स्थान और क्रिया आदि के नाम को संज्ञा कहते हैं। जैसे—पशु (जाति), दूध (द्रव्य), सुन्दरता (गुण), व्यथा (भाव), मोहन (व्यक्ति), आगरा (स्थान), मारना (क्रिया)।

विशेष—ध्यान रखना चाहिए कि 'नाम' को ही संज्ञा कहा जाता है वस्तु आदि को नहीं। 'नदी' नाम संज्ञा है, 'नदी' वस्तु संज्ञा नहीं है।

संज्ञा तीन प्रकार की होती है।

(१) जातिवाचक, (२) व्यक्तिवाचक, (३) भाववाचक।

जातिवाचक संज्ञा—(Common Noun)—वह संज्ञा है, जिसके द्वारा एक जाति के प्राणियों अथवा पदार्थों का ज्ञान होता है। जैसे—मनुष्य, नगर, पुस्तक आदि।

व्यक्तिवाचक संज्ञा (Proper Noun)—वह संज्ञा है, जिसके द्वारा एक ही प्राणी अथवा पदार्थ का ज्ञान होता है। जैसे—राम, आगरा, रामायण आदि।

बहुत से व्यक्तिवाचक नाम ऐसे हैं जो एक से अधिक के लिए प्रयुक्त होते हैं। जैसे 'राम' कई पुरुषों का नाम हो सकता है, परन्तु 'राम' को जातिवाचक संज्ञा नहीं कहेंगे, क्योंकि किसी सामान्य गुण के कारण उनका नाम 'राम' नहीं रखा गया है। जातिवाचक तथा व्यक्तिवाचक संज्ञाओं में प्रधान भेद यह है कि जातिवाचक संज्ञा के नाम एक सामान्य गुण के आधार पर रखे जाते हैं, किन्तु व्यक्तिवाचक संज्ञा में 'सामान्य गुण' का कोई विचार नहीं किया जाता। वह तो व्यक्ति को पुकारने का साधन है। बहुत से जातिवाचक शब्द भी व्यक्तिवाचक की तरह काम में आते हैं। जैसे 'गांधी जी इस युग के एक महान पुरुष थे'। 'गांधी' शब्द जातिवाचक होने पर भी व्यक्ति के लिए ही प्रयुक्त हुआ है, अतः यह व्यक्तिवाचक हां है। कभी व्यक्तिवाचक संज्ञा भी जातिवाचक की तरह प्रयोग में आती है। जैसे—'तुलसीदास जी हिन्दी के कालिदास हैं' में 'कालिदास' जातिवाचक ही है, क्योंकि इस नाम से केवल एक अत्यन्त विद्वान पुरुष का बोध होता है। व्यक्तिवाचक संज्ञा जब बहुवचन में प्रयुक्त हो जाती है, तब उसे जातिवाचक संज्ञा ही कहते हैं। जैसे—'अब युधिष्ठिर तो नहीं दिखाई देते, पर दुर्योधन सर्वत्र विद्यमान हैं' में युधिष्ठिर तथा दुर्योधन।

भाववाचक संज्ञा (Abstract Noun)—वह संज्ञा है, जिसके द्वारा गुण, दशा, स्वभाव अथवा व्यापार का ज्ञान हो। जैसे—सुन्दरता, बुढ़ापा, भलाई, लेन देन।

भाववाचक संज्ञाएँ भी व्यक्तिवाचक संज्ञा की भाँति एक ही भाव की बोधक होती हैं। जहाँ वे एक से अधिक भाव का बोध कराती हैं, वहाँ वे जातिवाचक ही कही जाती हैं। जैसे—तुम्हें देखकर मेरे हृदय में नाना प्रकार की भावनाएँ उत्पन्न हो जाती हैं' में भावनाएँ 'जातिवाचक ही है' क्योंकि इससे अनेक भावों का बोध होता है। सारांश यह है कि बहुवचन होने पर 'भाववाचक' संज्ञा 'जातिवाचक' हो जाती है।

'भाववाचक' संज्ञाएं शब्द के विभिन्न भेदों से बनाई जाती हैं। जैसे—

जातिवाचक संज्ञा से— मानव से मानवता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सर्वनाम से—	अपना से अपनापन ।
विशेषण से—	मोटा से मुटापा ।
क्रिया से—	ठहरना से ठहराव ।
अव्यय से—	सम से समता ।

भाववाचक संज्ञाएँ निम्न वस्तुओं का नाम होती हैं—

(१) गुणों के, जैसे—कठोरता, सुन्दरता, कालापन ।

(२) रोगों के, जैसे—ज्वर, विसूचिका, क्षय ।

(३) मन के भावों के, जैसे—रोग, द्वेष, दयालुता, कृपा ।

(४) समय अथवा समय के विभागों के, जैसे—रात, दिन, वर्ष ।

(५) विद्याओं के, जैसे—न्याय, व्याकरण, ज्योतिष ।

(६) कामों के, जैसे—लड़ाई, भाग-दौड़ ।

विशेष—भाववाचक संज्ञाओं के अन्त में अधिकतर त्व, ता, पन, पा, हट, वटा ई आदि जुड़े रहते हैं किन्तु इनका सर्वदा जुड़ा रहना आवश्यक नहीं है ।

कुछ शब्द एक अर्थ में भाववाचक तथा दूसरे में जातिवाचक होते हैं । जैसे—

स्याही—	(१) लिखने की वस्तु,	जातिवाचक
	(२) कालापन,	भाववाचक

पाठ—(१) पढ़ने की वस्तु, जैसे—इस पुस्तक में कितने 'पाठ' हैं । (जातिवाचक)

(२) पढ़ने का काम, जैसे—इस पुस्तक का 'पाठ' करो । (भाववाचक)

जैसा कि पहले कह आये हैं, संज्ञा 'विकारी' (परिवर्तनशील) शब्द है । यह विकार (परिवर्तन) लिङ्ग, वचन तथा कारक के कारण होता है । इनका वर्णन क्रमशः आगे किया जा रहा है ।

लिंग और वचन (Gender and Number)

परिभाषा—संज्ञा द्वारा व्यक्त वस्तु की जाति को लिङ्ग कहते हैं ।

लिङ्ग दो प्रकार के होते हैं—

(१) पुल्लिग (Masculine Gender)—जिससे पुरुष जाति का बोध हो । जैसे—राम, बकरा, पंडित ।

२—स्त्रीलिंग—(Feminine Gender)—जिससे स्त्री जाति का बोध हो । जैसे—रमा, बकरी, पण्डिताइन ।

यद्यपि हिन्दी भाषा में लिंग निर्णय के लिए बहुत से नियमों का प्रचलन है, किन्तु उनके इतने अपवाद हैं कि उनसे विशेष लाभ नहीं होता । अतः लिङ्ग का निर्णय खड़ी बोली के बोले जाने वाले प्रदेशों के व्यवहार तथा विद्वानों द्वारा लिखित पुस्तकों के आधार पर होता है । लिङ्ग प्रायः शब्द के साथ आने वाली क्रिया सर्वनाम अथवा विशेषण को देखकर जाना जाता है । जैसे 'मोटा रस्सा' । यहाँ 'मोटा' पुल्लिग है, अतः 'रस्सा' भी पुल्लिग है । 'मोटी मन्थरा' में 'मोटी' स्त्रीलिंग है, अतः 'मन्थरा' भी स्त्रीलिंग है । इसी प्रकार 'कनेर बढ़ रही है' तथा 'बेला फूल रहा है,' में 'रही है' 'रहा है' के प्रयोग से कनेर स्त्रीलिंग और बेला पुल्लिग है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वचन (Number)

परिभाषा—शब्द के जिस रूप से यह ज्ञान होता है कि वह एक के लिये प्रयुक्त हुआ है अथवा एक से अधिक के लिए, उस रूप को वचन कहते हैं।

वचन दो प्रकार के होते हैं—एकवचन, बहुवचन।

१—एकवचन—(Singular Number)—जिस शब्द से एक वस्तु का बोध होता है, उसे एकवचन कहते हैं। जैसे—गाय, बैल।

२—बहुवचन—(Plural Number)—जिस शब्द से एक से अधिक वस्तुओं का बोध होता है, उसे बहुवचन कहते हैं। जैसे—गायें, बैलों।

शिष्टाचार के भाव में एकवचन का प्रयोग भीं बहुवचन की तरह होता है। जैसे—'गाँधी जी एक महान पुरुष थे।' यहाँ 'थे' क्रिया बहुवचन की है; परन्तु शिष्टाचार में एकवचन में ही प्रयुक्त हुई है। कभी-कभी एकवचन भी बहुवचन का अर्थ देता है। जैसे—'रुपया इकट्ठा हो गया है' में 'रुपया'।

केवल जातिवाचक संज्ञा में ही दोनों वचन होते हैं, व्यक्तिवाचक और भाववाचक में नहीं। यदि व्यक्तिवाचक और भाववाचक संज्ञायें बहुवचन में प्रयुक्त हों, तो वे भी जातिवाचक ही मानी जाती हैं।

विशेष—१—प्राण, दर्शन, लोग आदि शब्द केवल बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं। जैसे—जब उसके प्राण चले गये, तब तुम आये। प्रह्लाद को भगवान् के दर्शन प्राप्त हुए। आप लोग यहाँ बैठिए।

२—जनता, तैयारी, सामग्री आदि शब्द प्रायः एकवचन में ही प्रयुक्त होते हैं।

कारक (Case)

कारक—संज्ञा अथवा सर्वनाम के जिस रूप से उसका सम्बन्ध वाक्य के अन्य शब्दों के साथ जाना जाता है, उसको कारक कहते हैं। जैसे—'राम जाता है' में 'जाना' क्रिया को करने वाला 'राम' है, अतः 'राम' का 'जाता है' के साथ 'कर्तृत्व' सम्बन्ध है। इसी से कारक की सूचना मिलती है।

संज्ञा—संज्ञा अथवा सर्वनामों का प्रयोग वाक्य में ८ प्रकार से होता है, अतः कारक के ८ भेद होते हैं, जो चिन्ह सहित नीचे दिये जाते हैं।

कारक	चिह्न
१—कर्त्ता	ने।
२—कर्म	को।
३—करण	से, के द्वारा (सहायता के अर्थ में)
४—सम्प्रदान	के लिए, को (देने के अर्थ में)
५—अपादान	से (सम्बन्ध विच्छेद)
६—सम्बन्ध	का, की, के, रा, री, रे, ना, नी, ने।
७—अधिकरण	में, पे, पर।
८—सम्बोधन	हे, अरे, अहो।

(१) कर्त्ता—(Nominative Case)—वाक्य में क्रिया के करने वाले को कर्त्ता कहते हैं। (इसका चिह्न 'ने' कभी-कभी छिप भी जाता है।) क्रिया से पहले 'कौन' अथवा 'किसने' लगाने पर जो शब्द उत्तर में आता है, वह कर्त्ता होता है। जैसे—'घोड़ा दौड़ता

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है', में 'कौन दौड़ता है' ? 'घोड़ा'। अतः 'घोड़ा' कर्त्ता कारक है। इसी प्रकार 'राम ने रोटी खाई', में 'किसने खाई' ? 'राम ने' अतः 'रा ' कर्त्ता है।

(२) कर्म—(Objective Case)—जिस पर क्रिया के व्यापार का फल पड़े, उसे कर्म कारक कहते हैं। (क्रिया के आगे 'किसको' अथवा 'क्या' लगाने से उत्तर में जो कुछ आता है, वह कर्म होता है। जैसे—'मैंने पुस्तक पढ़ी' में 'क्या पढ़ी' ? 'पुस्तक', अतः यह कर्म है। इसी प्रकार 'तुमने कुत्ते को मारा' में 'किसको मारा' ? 'कुत्ते को', अतः यह भी कर्म है। (इसका चिह्न 'को' कभी-कभी छिप भी जाता है।)

(३) करण—(Instrumental Case)—कर्त्ता जिसके द्वारा या जिसकी सहायता से कुछ काम करता है, उसे करण कहते हैं। जैसे—'मैं डण्डे से कुत्ते को पीटता हूँ' में पीटने का काम 'डण्डे' की सहायता से किया गया है; अतः 'डण्डे' करण कारक है।

(४) सम्प्रदान (Dative Case)—कर्त्ता किसके लिये कार्य करता है, उसे सम्प्रदान कारक कहते हैं। जैसे—'राम मोहन के लिए पुस्तक लाता है' में 'राम' 'मोहन' के लिये पुस्तक को लाने का काम करता है, अतः 'मोहन' सम्प्रदान कारक है।

(५) अपादान (Ablative Case)—जिससे किसी वस्तु का अलग होना पाया जाता है। उसमें अपादान कारक होता है। जैसे—'पेड़ से फल गिरा' में 'पेड़' से 'फल' का अलग होना पाया जाता है, अतः 'पेड़' में अपादान कारक है।

विशेष—'करण' तथा 'अपादान' दोनों का चिह्न द्वारा 'से' होने से इनके अन्तर को जान लेना चाहिए। 'करण' का 'से' 'सहायता से' काम का होना बतलाता है; और अपादान का 'से' दूर होना बतलाता है। जैसे—'मैं डण्डे से कुत्ते को पीटता हूँ' में 'डण्डे' की सहायता से ही 'पीटना' हुआ, तथा पीटते समय 'डण्डे' और 'कुत्ते' की समीपता थी; अतः यहाँ करण कारक है, और 'पेड़ से फल गिरा' में पेड़ से फल का अलग होना पाया जाता है, तथा गिरते समय 'पेड़' से 'फल' का दूर होना पाया जाता है, अतः यहाँ अपादान कारक है।

(६) सम्बन्ध (Possessive Case)—जिसके द्वारा किसी एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ लगाव, अधिकार अथवा मेल का ज्ञान होता है, उसे सम्बन्ध कारक कहते हैं। जैसे—'राम का घोड़ा' में राम का अधिकार घोड़े पर प्रकट होता है, अतः 'राम' में सम्बन्ध कारक है।

(७) अधिकरण (Locative Case)—वाक्य में जो क्रिया का आधार होता है, उसे अधिकरण कहते हैं। जैसे—'तालाब में कमल खिले हैं'। (कमल कहाँ या किसमें खिले हैं ? उत्तर—तालाब में। अतः खिलने की क्रिया का आधार या आश्रय तालाब है।) अतः 'तालाब' में अधिकरण कारक है।

(८) सम्बोधन (Vocative Case)—जिसके द्वारा किसी को बुलाया या पुकारा जाता है, उसे सम्बोधन कारक कहते हैं। जैसे—'हे राम ! यहाँ आओ' में 'हे राम' शब्द के द्वारा 'राम' को बुलाया गया है; अतः 'राम' सम्बोधन कारक है।

विशेष—(१) कभी-कभी विशदता लाने के लिए अथवा अर्थ को स्पष्ट करने के लिए पास-पास एक ही वस्तु या अर्थ की ओर संकेत करने वाली दो या अधिक संज्ञाएँ एक साथ प्रयुक्त होती हैं। अवस्था में दूसरी संज्ञा को पहली का 'समान कारक' अथवा 'समानाधिकरण' (Case in Apposition) कहते हैं। जैसे—'दशरथ का पुत्र, राम एक वीर पुरुष था', में 'पुत्र' और 'राम' एक ही व्यक्ति की ओर संकेत करते हैं, तथा एक ही 'कर्त्ताकारक' में प्रयुक्त हैं, अतः 'राम' 'पुत्र' का 'समान कारक' अथवा 'समानाधिकरण'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है। यह पास-पास आने वाली संज्ञाओं अथवा सर्वनामों में ही होता है, संज्ञाओं और विशेषण में नहीं।

(२) यदि किसी क्रिया के अर्थ को पूर्ण करने के लिए कोई शब्द आता है, तो वह पूरक (Compliment) कहा जाता है। जैसे—'राम दशरथ का पुत्र था' में 'पुत्र' पूरक है, क्योंकि केवल 'राम था' में कोई पूरा अर्थ समझ में नहीं आता। कुछ अपूर्ण क्रियाएँ अपने पूरकों के साथ नीचे लिखी जाती हैं (इन्हें समझ लेने पर पूरक को जानने में विशेष कठिनाई नहीं होती।)

क्रिया भेद	क्रिया	उदाहरण	पूरक
अकर्मक	होना	राम विद्यार्थी है।	विद्यार्थी
,,	बनना	वह सेनापति बनेगा।	सेनापति
,,	निकलना	तुम तो मूर्ख निकले।	मूर्ख
,,	कहलाना	गाँधी जी बुद्ध कहलाते थे।	बुद्ध
सकर्मक	मानना	मैं तुम्हें विद्वान मानता हूँ।	विद्वान
,,	समझना	तुम उसे धनी समझते हो।	धनी
,,	बनाना	महासमिति ने नेहरू जी को अध्यक्ष बनाया।	अध्यक्ष
,,	करना	तुम पत्र को पूरा करो।	पूरा

किन्तु शब्दों का प्रयोग और अर्थ पर विशेष ध्यान की आवश्यकता है, क्योंकि कभी उक्त क्रियाएँ भी अर्थ भेद से बिना पूरक के अर्थ दे देती हैं। जैसे—निकलना, 'सूर्य निकलना' में 'निकलना' पूर्ण क्रिया है। प्राय: अपूर्ण क्रियाओं से पहले 'क्या' लगाने से उत्तर में पूरक आ जाता है। जैसे—'तुम उसे धनी समझते हो।' क्या समझते हो ? 'धनी' पूरक है।

कारकों में संज्ञाओं के रूप

विभिन्न कारकों में होने वाले परिवर्तन को समझने के लिए निम्न प्रयोगों को ध्यान से देखना चाहिये।

बालक

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्त्ता	बालक ने रोटी खाई।	बालकों ने रोटी खाई।
कर्म	बालक को मत मारो।	बालकों को मत मारो।
करण	मैंने बालक से रोटी मँगाई।	मैंने बालकों से रोटी मँगाई।
सम्प्रदान	बालक के लिए फल लाओ।	बालकों के लिए फल लाओ।
अपादान	बालक से रुपया गिरा।	बालकों से रुपये गिरे।
सम्बन्ध	यह बालक की पुस्तक है।	ये बालकों की पुस्तकें हैं।
अधिकरण	राम बालक पर हाथ रखता है।	राम बालकों पर हाथ रखता है
सम्बोधन	हे बालक ! यहाँ आ।	हे बालको ! यहाँ आओ।

इस प्रकार अन्य शब्दों के रूपों में भी विकार होता है। स्थानाभाव से सम्पूर्ण नहीं दिए गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संज्ञा का पद-परिचय

(शब्द निरुक्ति, पदान्वय अथवा शब्द बोध)

पद-परिचय (Parsing)—किसी शब्द का परिचय देना तथा उसका सम्बन्ध वाक्य गत अन्य शब्दों के साथ बताना ही पद-परिचय कहलाता है।

उदाहरण—

१—लंका में राम ने बाणों से रावण को मारा।

लंका—व्यक्तिवाचक संज्ञा, स्त्रीलिंग, एकवचन, अधिकरण कारक, 'मारा' क्रिया का आधार।

राम—व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, कर्त्ता, कारक 'मारा' क्रिया का कर्त्ता।

बाणों—जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, बहुवचन, करण कारक, 'मारा' क्रिया का कारण।

रावण—व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, कर्म कारक, 'मारा' क्रिया का कर्म।

२—अरे लड़को ! तुम बुधुआ के बुढ़ापे पर क्यों हँसते हो ?

लड़को—जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, बहुवचन, 'सम्बोधन कारक'।

बुधुआ—व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, सम्बन्ध कारक, 'बुढ़ापे' से सम्बन्धित।

बुढ़ापे—भाववाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, अधिकरण कारक 'हँसते हो' क्रिया का आधार।

३—रहीम का पुत्र, अब्दुल्ला एक चतुर बालक है।

अब्दुल्ला—जातिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, 'है' क्रिया के कर्ता कारक में प्रयुक्त 'पुत्र' का 'समान कारक'।

बालक—व्यक्तिवाचक संज्ञा, पुल्लिग, एकवचन, 'है' क्रिया का पूरक।

विशेष—सम्बन्ध तथा सम्बोधन कारकों का क्रिया से सीधा कोई सम्बन्ध नहीं होता, अतः इनके पद परिचय में क्रिया से इनका सम्बन्ध नहीं दिखाया जाता। सम्बन्ध कारक में सम्बद्ध शब्द का उल्लेख होता है तथा सम्बोधन में कुछ नहीं लिखा जाता। अन्य कारकों पूरक और समान कारक में क्रिया का उल्लेख होता है।

सर्वनाम (Pronoun)

सर्वनाम—वे शब्द हैं, जो संज्ञा के स्थान पर प्रयोग में लाये जाते हैं। जैसे—"अध्यापक ने राम से कहा कि तुम अपनी पुस्तक क्यों नहीं पढ़ते।" में 'तुम' और 'अपनी' सर्वनाम हैं, क्योंकि वे 'राम' के स्थान पर प्रयुक्त हुए हैं।

सर्वनाम के ६ भेद हैं

१—पुरुषवाचक, २—निश्चयवाचक, ३—अनिश्चयवाचक, ४—सम्बन्धवाचक, ५—प्रश्नवाचक, ६—निजवाचक।

१—**पुरुषवाचक सर्वनाम**—(Personal Pronoun)—वह सर्वनाम है, जो बात कहने वाले, सुनने वाले तथा उससे सम्बद्ध पुरुष के लिए प्रयोग में लाया गया हो। जैसे—मैं, तुम, वह।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनके तीन भेद हैं, १—उत्तम पुरुष, २—मध्यम पुरुष, ३—अन्य पुरुष।

१—उत्तम पुरुष (First Person)—वह सर्वनाम है, जो बातचीत करने वाले के लिए प्रयोग में लाया जाता है। जैसे—मैं, हम।

(मैं, मुझ, मेरा, मेरी मेरे, एकवचन में तथा हम, हमें, हमारा, हमारी, हमारे बहुवचन में आते हैं।)

२—मध्यम पुरुष (Second Person)—वह सर्वनान है, जो उस पुरुष के बारे में प्रयुक्त हो जिससे कि बातचीत की जाती है, जैसे—तू, तुम, आप।

(तू, तुझ, तेरा, तेरी का प्रयोग एकवचन में तथा तुम, तुम्हें, तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हारे, आपका प्रयोग बहुवचन में होता है।)

अन्य पुरुष (Third Person)—वह सर्वनाम है, जो बातचीत से सम्बन्धित पुरुष के बदले में आता है। जैसे—वह, वे।

(वह, उस, उसका, उसकी, उसके का प्रयोग एकवचन में तथा वे, उस, उसका, उनका, उनके का प्रयोग बहुवचन में होता।)

१—निश्चयवाचक सर्वनाम (Demonstrative Pronoun)—वह सर्वनाम है, जिसके द्वारा कोई निश्चित पदार्थ बताया जाय। जैसे—'यह जाता है' में 'यह' एक निश्चित पुरुष की ओर संकेत करता है। इसी को 'संकेत वाचक' सर्वनाम कहते हैं।

('यह और वह' का प्रयोग एकवचन में तथा 'ये और वे' का प्रयोग बहुवचन में होता है।)

२—अनिश्चयवाचक सर्वनाम (Indefinite Pronoun)—वह सर्वनाम है, जिससे किसी पदार्थ अथवा वस्तु के विषय में निश्चित ज्ञान न हो। जसे—'कुछ खाओ' और 'कोई आया है' में 'कुछ' और 'कोई'।

३—सम्बन्धवाचक सर्वनाम (Relative Pronoun)—जिस 'सर्वनाम' से एक शब्द अथवा वाक्य का सम्बन्ध दूसरे शब्द अथवा वाक्य से जाना जाय उसे सम्बन्धवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे—'जो परिश्रम करेगा, सो पास होगा' में 'जो', 'सो', जैसा करोगे, वैसा भरोगे' में 'जैसा', सम्बन्धवाचक सर्वनाम है।

जो, सो, जैसा, वैसा, जिस, तिस, जिन, तिन सम्बन्धवाचक सर्वनाम हैं।

४—प्रश्नवाचक सर्वनाम (Interrogative Pronoun)—जो सर्वनाम से प्रश्न जाना जाय, उसे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे—'वह कौन है ?' तथा 'वह क्या खाता है ?' में 'कौन' और 'क्या' प्रश्नवाचक सर्वनाम हैं।

५—निजवाचक सर्वनाम (Reflexive Pronoun)—जो सर्वनाम अपने लिए आता है, उसे निजवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे—'वह आप ही बोल उठा—में 'आप' निजवाचक है, क्योंकि उसका प्रयोग 'वह' के लिए हुआ है।

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने के कारण सर्वनामों में भी लिंग, वचन तथा कारक का विचार होता है, किन्तु इनमें लिंग के कारण कोई विकार नहीं होता। हाँ इनमें वचन तथा कारकों के कारण विकार आ जाता है। सर्वनाम में सम्बोधन कारक नहीं होता।

सर्वनाम का पद-परिचय

सर्वनाम के पद परिचय में निम्न बातें लिखी जाती हैं—

भेद, वचन, लिङ्ग के कारक तथा अन्य पदों के साथ सम्बन्ध।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उदाहरणार्थ १—वह तुम्हारा क्या ले गया ?

वह—पुरुषवाचक सर्वनाम, अन्य पुरुष, एकवचन, पुलिङ्ग, कर्त्ता कारक 'ले गया'—क्रिया का कर्त्ता ।

तुम्हारा—पुरुषवाचक सर्वनाम, मध्यम पुरुष, बहुवचन, पुल्लिङ्ग, अथवा स्त्रीलिंग सम्बन्ध कारक 'क्या' से सम्बन्धित ।

क्या—प्रश्नवाचक सर्वनाम, एकवचन, पुलिङ्ग, कर्म कारक, 'ले गया' का कर्म ।

२—अब तो कुछ कहो ।

कुछ—अनिश्चयवाचक सर्वनाम, पुलिङ्ग, एकवचन, कर्म कारक, 'कहो' क्रिया का कर्म ।

विशेषण (Adjective)

विशेषण—जो संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता प्रकट करते हैं, उन्हें विशेषण कहते हैं । जैसे-लाल घोड़ा, मोटा आदमी, चार आम में लाल, मोटा, चार ।

विशेष्य—विशेषण जिन संज्ञाओं या सर्वनामों की विशेषता प्रकट करते हैं उन्हें विशेष्य कहते हैं । जैसे—उक्त उदाहरणों में घोड़ा, आदमी, और आम ।

विशेषण संज्ञा तथा सर्वनाम दोनों ही की विशेषता प्रकट करते हैं । वे संज्ञा के पहले भी आ सकते हैं किन्तु सर्वनामों के बाद ही आते हैं, जैसे—'मोटा आदमी जाता है' में 'मोटा' विशेषण 'आदमी' संज्ञा से पहले है, और 'वह मोटा है' में मोटा 'विशेषण' 'वह' सर्वनाम के बाद है ।

विशेषण के ६ भेद हैं—१—गुणवाचक २—परिमाणवाचक ३—संख्यावाचक ४—संकेतवाचक ५—विभागबोधक ६—व्यक्तिवाचक ।

१—गुणवाचक (Adjective of quality) जो विशेषण संज्ञा या सर्वनाम के गुणों को बतलाते हैं उन्हें गुणवाचक विशेषण कहते हैं । जैसे—'लाल घोड़ा, काला आदमी, अच्छे आम में लाल, काला, अच्छा ।'

इस विशेषण से यह बात ज्ञात होती है कि वर्णनीय वस्तु किस प्रकार की है । गुणों के अन्तर्गत कई बातें आती हैं । जैसे—

१—रंग—	पीला, हरा, लाल आदि ।
२—आकार—	लम्बा, सुन्दर, कुरूप आदि ।
३—दशा—	सूखा, मोटा, गाढ़ा आदि ।
४—स्थान—	बाहरी, भीतरी आदि ।
५—दिशा—	दायां, बायां, पूर्वी, पच्छिमी आदि ।
६—गुण—	अच्छा, बुरा, दयालु आदि ।
७—काल—	नया, पुराना, भूत, भविष्यत्, वर्तमान, आगामी, गत आदि ।

२—परिमाणवाचक (Adjective of quantity)—जो विशेषण संज्ञा या सर्वनाम के परिमाण (तौल, नाप) को बतलाते हैं, उन्हें परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं । जैसे—'थोड़ा दूध पियो, कुछ आम खाओ, बहुत पानी मत फैलाओ, तुम कितने गेहूँ लाये हो, अधिक परिश्रम मत करो, सेर भर चीनी लाओ ।' में 'थोड़ा' दूध का, 'कुछ' आमों का, 'बहुत' पानी का, 'कितने' गेहूँ का, 'अधिक' परिश्रम का, 'सेर भर' चीनी का परिमाण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
बतलाता है, अतः थोड़ा, कुछ, बहुत, कितने, अधिक, सेर भर शब्द परिमाणवाचक विशेषण हैं।

३—संख्यावाचक (Adjective of Number) जो विशेषण संज्ञा या सर्वनाम की संख्या बतलाते हैं उन्हें संख्यावाचक विशेषण कहते हैं। जैसे—कुछ आदमी, एक नोट, चौथा दर्जा, पाँचों घोड़े, तिगुने रुपये, आधी रोटी—में कुछ, एक, चौथा, पाँचों, तिगुने, आधी संख्यावाचक विशेषण हैं; क्योंकि ये अपने विशेष्य की संख्या बतलाते हैं।

विशेष—कुछ, थोड़ा, कम आदि विशेषण 'परिमाणवाचक' एवं 'संख्यावाचक' दोनों ही होते हैं। जहां कुछ आदि से परिमाण (तौल) का ज्ञान होता है वहां वे परिमाण-वाचक, तथा जहाँ उनसे संख्या का ज्ञान होता है, वहाँ वे संख्यावाचक होते हैं। जैसे 'कुछ दूध' में कुछ से तौल ज्ञात होती है। अतः यहाँ 'कुछ' परिमाणवाचक हैं; और 'कुछ आदमी' में 'कुछ' से संख्या ज्ञात होती है अतः यहाँ 'कुछ' संख्यावाचक है।

४—संकेत वाचक (Demonstrative Adjective)—जो विशेषण संज्ञा की ओर संकेत करें, उन्हें संकेतवाचक विशेषण कहते हैं। जैसे—'यह आदमी क्या करता है ? वह लड़का जा रहा है। इस कुत्ते को निकाल दो। उस भिखारी को एक पैसा दो—में 'यह' आदमी की ओर, 'वह' लड़का की ओर, 'इस' कुत्ते की ओर, 'उस' भिखारी की ओर संकेत करता है, अतः 'यह, वह, इस, उस' संकेतवाचक विशेषण हैं।

विशेष—'यह' वह, इस, उस' का प्रयोग निश्चयवाचक सर्वनाम तथा संकेतवाचक विशेषण दोनों ही में होता है। जहाँ इनके बाद कोई संज्ञा आती है; वहाँ ये संकेतवाचक विशेषण होते हैं। जैसे ऊपर के 'यह आदमी क्या करता है ? आदि उदाहरणों में। किन्तु जहाँ पर इनके बाद कोई संज्ञा नहीं आती, वहाँ ये निश्चयवाचक सर्वनाम ही होते हैं। जैसे—'यह क्या करता है ?' में 'यह'।

(५) **विभागबोधक** (Distributive Adjective)—जिस विशेषण से पृथकता (अलहदगी) का ज्ञान हो, उसे विभागबोधक या विभागसूचक विशेषण कहते हैं। जैसे—प्रत्येक लड़के को इनाम दो। में 'प्रत्येक' से पृथकता का ज्ञान होता है; अतः 'प्रत्येक' विभाग बोधक विशेषण है।

विशेष—यदि कोई विशेषण दुहरा दिया जाता है तो वह विभागबोधक विशेषण हो जाता है जैसे—थोड़ा-थोड़ा, पाँच-पाँच, काला-काला आदि।

(६) **व्यक्तिवाचक** (Proper Adjective)—जो विशेषण व्यक्तिवाचक संज्ञा से बनते हैं, उन्हें व्यक्तिवाचक विशेषण कहते हैं। जैसे 'बनारसी साड़ी' कश्मीरी सेव, इलाहाबादी अमरूद में क्रमशः 'बनारसी, कश्मीरी, इलाहाबादी' शब्द क्रमशः 'बनारस, कश्मीर, इलाहाबाद' व्यक्तिवाचक संज्ञाओं से बने हैं' और क्रमशः साड़ी, सेव, अमरूद संज्ञाओं की विशेषता प्रकट करते हैं। अतः ये व्यक्तिवाचक विशेषण हैं। जब अनिश्चय-वाचक, प्रश्न वाचक और सम्बन्धवाचक सर्वनामों के बाद कोई संज्ञा आती है तो ये भी इसी नाम के विशेषण बन जाते हैं। जैसे—अनिश्चय वाचक सर्वनाम 'कोई जाता है।' अनिश्चय वाचक विशेषण—कोई लड़का जाता है। प्रश्नवाचक सर्वनाम—'कौन जाता है ?' प्रश्नवाचक विशेषण—'कौन लड़का जाता है ?' सम्बन्ध वाचक सर्वनाम है 'जो देता है, सो पाता है।' सम्बन्ध वाचक विशेषण 'जो लड़का यहाँ आयेगा, सो इनाम पायेगा।' पुरुष वाचक सर्वनाम संज्ञा से पहले आने पर भी संज्ञा की विशेषता नहीं बतलाते, किन्तु आगे आने वाली संज्ञा सर्वनाम के साथ समान कारक होती है। जैसे—'मैं हरस्वरूप प्रतिज्ञा करता हूँ' 'हरस्वरूप' 'में' के साथ समान कारक है। इसी प्रकार संज्ञा के बाद आने वाला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

निजवाचक सर्वनाम भी संज्ञा के साथ 'समान कारक' होता है। जैसे—'राम आप ही बोल उठा' में 'आप' 'राम' के साथ समान कारक है।

विशेषण की तुलना (Degree)

तुलना के आधार पर विशेषण की तीन अवस्थाएँ होती है—

१—मूलावस्था—वह अवस्था है, जिसमें किसी से तुलना न की गई हो। जैसे—'मोहन एक चतुर पुरुष है।' अँग्रेजी में इसे Positive Degree कहते हैं।

२—उत्तरावस्था—वह अवस्था है, जिसमें दो वस्तुओं की तुलना की जाय। जैसे—'मोहन सोहन से अधिक चतुर है।' में मोहन और सोहन की तुलना करके मोहन को सोहन से अधिक चतुर बताया गया है। अतः यहाँ विशेषण उत्तरावस्था में है। यह अँग्रेजी की Comparative Degree के समान है।

३—उत्तमावस्था—वह अवस्था है, जिसमें दो से अधिक वस्तुओं की तुलना की जाती है जैसे—'मोहन इस नगर का सबसे अधिक चतुर व्यक्ति है।' में मोहन की नगर के सब व्यक्तियों के साथ तुलना करके उसे सबसे अधिक चतुर बताया गया है, अतः यहाँ उत्तरावस्था में है। अंग्रेजी में इसे Superlative Degree का नाम दिया जाता है। जैसे—

विशेष—संस्कृत तत्सम शब्दों में उत्तरावस्था में विशेषण के साथ 'तर' तथा उत्तमावस्था में 'तम' जोड़ दिया जाता है। जैसे—

मूलावस्था	उत्तरावस्था	उत्तमावस्था
मधुर	मधुरतर	मधुरतम
चतुर	चतुरतर	चतुरतम
सुन्दर	सुन्दरतर	सुन्दरतम

विशेष—(१) विशेषण में वही लिङ्ग, वचन और कारक होते हैं, जो उसके विशेष्य में होते हैं। जैसे—

सुन्दर बालक, सुन्दरी बालिका। बस मनुष्य, वे कुत्ते।

२—जब विशेषण संज्ञा की भाँति अकेला आता है, तब उसके वैसे ही रूप बनते हैं, जैसे उसके विशेष्य के। जैसे—चतुरों ने, मूर्खों पर, विद्वानों ने।

विशेषण का पद परिचय

विशेषण के पद-परिचय में निम्न विवरण दिया जाता है—

विशेषण—भेद, लिङ्ग, वचन अवस्था (केवल गुणवाचक में) और विशेष्य जैसे—बुद्धिमान पुरुष दोनों समय स्वच्छ वायु सेवन के लिए जाते हैं।

बुद्धिमान—गुणवाचक विशेषण, पुलिङ्ग, बहुवचन, मूलावस्था, 'पुरुष' विशेष्य का विशेषण।

दोनों—संख्या वाचक विशेषण, पुलिङ्ग, बहुवचन, 'समय' विशेष्य का विशेषण।

स्वच्छ—गुणवाचक विशेषण, पुलिङ्ग, एकवचन, मूलावस्था, 'वायु' विशेष्य का विशेषण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क्रिया (Verb)

क्रिया—वह शब्द है जिससे किसी काम का करना या होना पाया जाय। जैसे—'मैं खेलता हूँ।' 'मोहन पुस्तक पढ़ रहा है।' 'मैं खेलता हूँ' से काम करना, तथा 'पढ़ रहा है' में काम का होना पाया जाता है। अतः 'खेलता हूँ' तथा 'पढ़ रहा है' क्रियाएँ हैं।

सब प्रकार की क्रियाएँ कुछ मूल शब्दों से बनी हैं, जिन्हें धातु कहते हैं। जैसे—'खेलता हूँ' से 'खेल' धातु है और 'ता हूँ' विकार है। इसी धातु में 'ना' जोड़ने से क्रिया का सामान्य रूप बन जाता है। जैसे—'खेल' से 'खेलना'।

क्रियाओं के दो मुख्य भेद हैं—सकर्मक और अकर्मक।

सकर्मक—(Transitive Verb) जब क्रिया के व्यापार का फल कर्त्ता को छोड़कर कर्म पर पड़ता है तब उसे 'सकर्मक' क्रिया कहते हैं, (अर्थात् जब क्रिया का कर्म होता है)। जैसे—'मोहन पुस्तक पढ़ता है' में 'पढ़ता है' क्रिया का फल 'पुस्तक' पर है, 'पुस्तक' कर्म है, अतः 'पढ़ता है' क्रिया सकर्मक है।

अकर्मक—(Intransitive Verb)—जिस क्रिया के व्यापार का फल कर्त्ता ही में रहता है उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं। जैसे—'राम सोता है' में 'सोता है' के कर्त्ता 'राम में' ही सोने का फल व्याप्त है, अतः 'सोता है' क्रिया अकर्मक है।

जो क्रियाएँ दो कर्म रखती हैं, उन्हें द्विकर्मक कहा जाता है। जैसे—'राम मोहन को पढ़ाता है।' में 'पढ़ाता है' द्विकर्मक है, क्योंकि उसके 'मोहन' और 'पुस्तक' दो कर्म हैं।

अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं की पहिचान

जिन क्रियाओं में कर्म होता है, वे सकर्मक होती हैं, और कर्म रहित अकर्मक अर्थात् क्रिया से पहले 'क्या' अथवा 'किसको' लगाने से उत्तर में कोई शब्द आये तो क्रिया सकर्मक होती है, अन्यथा अकर्मक। जैसे—'तुम पुस्तक पढ़ते हो' में 'क्या पढ़ते हो?' 'पुस्तक'। अतः 'पढ़ते हो' क्रिया सकर्मक है। 'राम दौड़ता है।' में 'क्या'? दौड़ता है? कोई उत्तर नहीं मिलता, अतः 'दौड़ता है' क्रिया अकर्मक है।

बहुत सी क्रियाएँ प्रयोग के अनुसार सकर्मक तथा अकर्मक दोनों ही होती हैं। जैसे—'मैंने पानी से घड़ा भरा' (सकर्मक), ज्यों ही घड़ा भरा (अकर्मक) कौआ उस पर आ बैठा।

कुछ अकर्मक क्रियाओं के व्यापार का फल कर्त्ता के अतिरिक्त अन्य पर तो नहीं पड़ता पर उनका अर्थ समझने के लिए कुछ लगाना पड़ता है। जैसे—'राम सुन्दर है' में 'सुन्दर' विशेषण के बिना कुछ अर्थ समझ में नहीं आता है। ऐसी क्रियाओं को 'अपूर्ण अकर्मक' कहते हैं और जो शब्द अर्थ को पूरा करता है, 'पूरक' कहते हैं। जैसे—उक्त उदाहरण में 'है' अपूर्ण अकर्मक और 'सुन्दर' पूरक है।

सकर्मक क्रियाएँ भी अपूर्ण होती हैं। उन्हें 'अपूर्ण सकर्मक' कहा जाता है। जैसे—'मैं तुम्हें विद्वान समझता हूँ' में 'समझता' क्रिया 'तुम्हें' कर्म होने से सकर्मक है, और 'विद्वान' बिना अर्थ पूरा न होने से अपूर्ण' है अतः वह अपूर्ण सकर्मक है, और 'विद्वान' इसका पूरक है। (अपूर्ण क्रियाओं का विशेष विवरण पहिले ही कारक प्रकरण में दिया जा चुका है।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनके अतिरिक्त निम्न प्रकार की क्रियाएँ और होती हैं :—

संयुक्त क्रिया, प्रेरणार्थक क्रिया, पूर्वकालिक क्रिया, नामधातु क्रिया।

संयुक्त क्रिया (Compound Verb)—वह क्रिया है, जो कई भिन्नार्थक क्रियाओं के मिश्रण से बनती है। जैसे—'उसने खाना खा लिया' में 'खा लिया' क्रिया 'खाना' तथा 'लेना' दो भिन्नार्थक क्रियाओं के योग से बनी है, अतः यह संयुक्त क्रिया है। इन दोनों क्रियाओं में पहली को मुख्य क्रिया (Principal Verb) तथा दूसरी को 'सहायक क्रिया' (Auxiliary Verb) कहते हैं। उक्त उदाहरण में 'खा' मुख्य तथा 'लिखा' सहायक क्रिया है।

प्रेरणार्थक क्रिया (Causative Verb)—जिस क्रिया के द्वारा किसी कार्य को करने के लिये प्रेरणा मिलती जान पड़े, उसे प्रेरणार्थक क्रिया कहते हैं। जैसे—'कृष्ण श्याम से पुस्तक पढ़वाता है' में, पढ़ने वाला तो श्याम है, परन्तु वह कृष्ण की प्रेरणा से ऐसा करता है अतः 'पढ़वाना' प्रेरणार्थक क्रिया है।

पूर्वकालिक क्रिया—जिस क्रिया के समाप्त होने के बाद ही मुख्य क्रिया का होना पाया जाय, उसे पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं। जैसे—'मैं नहाकर खाऊँगा' में 'नहाने' के बाद ही 'खाना' कार्य होता है। अतः 'नहाकर' पूर्वकालिक क्रिया है।

मूल धातु के आगे 'के', 'कर', 'करके' आदि लगाने से पूर्वकालिक क्रियाएँ बनती हैं।

नामधातु क्रिया—जब क्रियाओं को छोड़कर अन्य शब्दों में प्रत्यय जोड़ने से धातुएँ बनती हैं अथवा जब नाम (संज्ञा या विशेषण) ही धातु बनकर वाक्य में प्रयुक्त होने लगते हैं, तब उन्हें नाम धातु क्रिया कहते हैं। जैसे—'तू मेरी पुस्तक को ही हथियाता है।' में 'हथियाता' क्रिया 'हाथ' संज्ञा से बनी है। इसी प्रकार 'खट खट' से खट-खटाना, 'बात' से बतियाना आदि क्रियाएँ बनती हैं।

क्रियाओ का रूपान्तर

क्रियाओं में वाच्य, काल, प्रचार, लिंग, वचन, पुरुष के कारण विकार होता है।

वाच्य (Voice)—क्रिया के कथन प्रकार को वाच्य कहा जाता है। इसके तीन भेद हैं—(१) कर्तृ वाच्य (२) कर्म वाच्य (३) भाव वाच्य।

(१) **कर्तृ वाच्य** (Active Voice)—जब वाक्य में कर्त्ता की प्रधानता हो और वही उनका उद्देश्य हो, तो 'कर्तृ वाच्य' होता है। जैसे—'मैं पुस्तक पढ़ता हूँ' में 'मैं' (कर्त्ता की प्रधानता है, और यह उद्देश्य भी है अतः यह कर्तृ वाच्य है।)

(१) **कर्म वाच्य** (Passive Voice)—जब वाक्य में कर्म की प्रधानता हो और वह उद्देश्य के रूप में आये, तो 'कर्म वाच्य' कहते हैं। जैसे—'मुझसे पुस्तक पढ़ी जाती है' में 'पुस्तक' (कर्म) की प्रधानता है, तथा वह उद्देश्य भी है, अतः यह कर्म वाच्य है।

विशेष—कर्म वाच्य में 'कर्त्ता' 'करण' के रूप में और 'कर्म' 'कर्त्ता' के रूप में आता है, अर्थात् 'कर्त्ता' के आगे 'से' या 'के द्वारा' चिह्न लग जाता है, और 'कर्म' के आगे कोई चिह्न नहीं रहता। जैसे—उक्त उदाहरण में कर्त्ता (मुझ) के आगे 'से' चिन्ह है और कर्म बिना किसी चिन्ह के है।

(३) **भाव वाच्य** (Impersonal Voice)—यदि अकर्मक क्रिया युक्त वाक्य का उद्देश्य कर्त्ता न हो, और उसमें केवल भाव की ही प्रधानता हो तो उसे 'भाव वाच्य' कहते हैं। जैसे 'राम से दौड़ा नहीं जाता' में 'जाता' की कोई प्रधानता नहीं है, बल्कि 'दौड़ा नहीं जाता' भाव की प्रधानता है, यहाँ भाव वाच्य है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सकर्मक क्रियाअ से 'कर्म वाच्य' तथा अकर्मक से 'भाव वाच्य' होता है।

काल (Tense)

क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि काम किस समय हुआ है, उसे काल कहते हैं। इनके तीन भेद हैं भूतकाल, वर्तमान काल, भविष्यत काल।

क्रिया का व्यापार यदि समाप्त हो चुका हो, तो भूतकाल, आगे होने वाला हो तो भविष्यतकाल और यदि बराबर चल रहा हो तो वर्तमान काल होता है। जैसे—

१. राम ने पुस्तक पढ़ी। (भूतकाल)
२. राम पुस्तक पढ़ रहा है। (वर्तमान काल)
३. राम पुस्तक पढ़ेगा। (भविष्यत् काल)

भूतकाल के ६ भेद हैं—

१—सामान्य भूत, २—आसन्न भूत, ३—पूर्ण भूत, ४—अपूर्ण भूत, ५—सन्दिग्ध-भूत, ६—हेतु हेतुमद् भूत।

सामान्य भूत—जिस भूतकाल से भूतकाल के किसी विशेष समय का निश्चित नहीं होता, उसे सामान्य भूत कहते हैं। जैसे—'राम ने पुस्तक पढ़ी' में यह ज्ञान नहीं होता कि पढ़ने का काम अभी समाप्त हुआ है या बहुत समय पहले, अतः यहाँ सामान्य भूत है।

(२) **आसन्न भूत**—वह काल है जिसमें क्रिया का व्यापार निकट में ही समाप्त हुआ समझा जाय। जैसे—'राम ने पुस्तक पढ़ी है' अथवा 'राम पुस्तक पढ़ चुका है'।

(३) **पूर्ण भूत**—क्रिया के जिस रूप से यह प्रकट होता है कि उसके व्यापार की समाप्ति को अधिक समय हो चुका है, उसे पूर्ण भूत कहते हैं। जैसे—'राम ने पुस्तक पढ़ी थी'।

(४) **अपूर्ण भूत**—क्रिया का वह रूप है, जिससे कार्य का भूतकाल में होना पाया जाय, किन्तु उसके समाप्त होने का ज्ञान न हो। जैसे—'राम पुस्तक पढ रहा था' अथवा 'राम पुस्तक पढ़ता था।'

(५) **सन्दिग्ध भूत**—क्रिया का वह रूप है, जिससे भूतकाल ज्ञात हो, किन्तु व्यापार के होने में सन्देह रहे। जैसे—राम ने पुस्तक पढ़ी होगी।

(६) **हेतु हेतुमद भूत**—क्रिया के जिस रूप में यह जाना जाय कि उसका भूतकाल में होना सम्भव था, किन्तु हेतु के अभाव में न हुआ, उसे हेतु हेतुमद् भूत कहते हैं। जैसे—'यदि मोहन यहाँ आता, तो राम पुस्तक पढ़ता' में राम का पुस्तक पढ़ना सम्भव था, किन्तु मोहन के न आने से वह रुक गया, अतः यहाँ हेतु हेतुमद् भूत है।

भविष्यत काल

भविष्यत काल के दो भेद हैं—

१—सामान्य भविष्यत् २—साम्भाव्य भविष्यत्।

(१) **सामान्य भविष्यत**—वह काल है, जिससे सामान्य रीति से **क्रिया के** आगे होने की सूचना मिले। जैसे—राम पुस्तक पढ़ेगा।

(२) **सम्भाव्य भविष्यत**—वह काल है जिससे आगामी समय में काम होने की सम्भावना हो। अर्थात् निश्चित रूप से यह न जाना जा सके कि कार्य होगा अथवा नहीं (सामान्य भविष्य को 'गा' गी आदि' के हटा देने पर सम्भाव्य भविष्यत् का रूप बन जाता है) जैसे—मैं पुस्तक पढ़ूं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्तमान काल

वर्तमान काल के तीन भेद होते हैं—

(१) सामान्य वर्तमान, (२) संदिग्ध वर्तमान, (३) अपूर्ण वर्तमान।

सामान्य वर्तमान—क्रिया का वह रूप है, जिससे क्रिया के व्यापार का वर्तमान समय होना पाया जाय। जैसे 'राम पुस्तक पढ़ता है'।

(२) संदिग्ध वर्तमान—क्रिया का वह रूप है, जिससे क्रिया के व्यापार के वर्तमान काल में होने में सन्देह प्रकट होता है। जैसे—'राम पुस्तक पढ़ता होगा।'

(३) अपूर्ण वर्तमान—क्रिया का वह रूप है, जिससे ज्ञात होता है कि क्रिया का व्यापार अभी हो रहा है और समाप्त नहीं हुआ है। जैसे—'राम पुस्तक पढ़ रहा है।'

प्रकार

परिभाषा—क्रिया के जिस रूप से उसके विधान, रीति, आज्ञा आदि का ज्ञान होता हैं, उसे क्रिया का प्रकार कहते हैं।

इसके तीन भेद हैं—

(१) निश्चयार्थ अथवा साधारण, २—सम्भावनार्थ अथवा सम्भाव्य, ३—प्रवर्तनार्थ अथवा विध्यर्थ।

(१) निश्चय अथवा साधारण—क्रिया का वह रूप है, जिससे किसी विधान का निश्चय जाना जाय। जैसे—राम पुस्तक पढ़ता है।

सामान्य वर्तमान अपूर्ण वर्तमान, सामान्य भूत, आसन्न भूत, अपूर्ण भूत, सामान्य, भविष्यत् इसी प्रकार के अन्तर्गत है।

(२) सम्भावनार्थ अथवा सम्भाव्य—क्रिया का वह रूप है, जिससे सम्भावना आदि का ज्ञान हो। जैसे—

अनुमान में—कदाचित राम पुस्तक तो नहीं पढ़ रहा है।

इच्छा में—ईश्वर करे, तुम परीक्षा में पास हो जाओ।

सन्देह—पता नहीं, राम यहाँ आयेगा अथवा नहीं।

हेतु हेतुमद्भूत—यदि तुम परिश्रम करते, तो अवश्य उत्तीर्ण होते। क्रिया के सन्दिग्ध वर्तमान और सम्भाव्य भविष्यत् इसी प्रकार के अन्तर्गत है।

(३) प्रवर्तनार्थ अथवा विध्यर्थ—क्रिया का वह रूप है, जिससे किसी कार्य में प्रवृत्त करना पाया जाय।

यह प्रकार प्रार्थना आज्ञा, प्रश्न, उद्देश्य, अनुमति आदि में होता है।

प्रार्थना—भगवान हमें सद्बुद्धि दो।

आज्ञा—पुस्तक पढ़ो।

प्रश्न—क्या मैं पुस्तक पढ़ूँ ?

उपदेश—सर्वदा सत्य बोलो।

अनुमति—तुम अन्दर आ सकते हो।

इसके दो भेद हैं—सामान्य विधि, परोक्ष विधि।

सामान्य विधि—जिस क्रिया से आज्ञा प्रार्थना आदि का सामान्य ज्ञान हो, उसे सामान्य विधि प्रकार कहते हैं। जैसे—पुस्तक पढ़ो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परोक्ष विधि—जिस क्रिया से यह जाना जाय कि इसके आज्ञा पालन आदि के कार्य आगे आने वाले समय में परोक्ष में होने वाले हैं, उसे परोक्ष विधि प्रकार कहते हैं, जैसे— वहाँ से कुशल समाचार भेजते रहना। तुम शान्तिपूर्वक रहना।

विशेष—विधि क्रियाएँ 'भविष्यत काल' की ही होती हैं।

लिंग, वचन और पुरुष

संज्ञा और सर्वनाम की भाँति क्रिया में भी लिङ्ग, वचन और पुरुष होते हैं तथा इनके भेद भी उसी प्रकार होते हैं ये कभी कर्त्ता के अनुसार तथा कभी कर्म के अनुसार होते हैं।

क्रिया का पद-परिचय

क्रिया के पद-परिचय में निम्न विवरण दिया जाता है—

१—**भेद**—(सकर्मक, अकर्मक) तथा अन्य भेदों में से (यदि कोई हो।)

२—**वाच्य**—(कर्तृ वाच्य, कर्म वाच्य, भाव वाच्य)।

३—**काल**—(भूत, भविष्यत, वर्तमान एवं उनके प्रभेद)।

४—**प्रकार**—(निश्चयार्थ, सम्भावनार्थ, प्रवर्तनार्थ)।

५—**लिंग**—(पुलिङ्ग, स्त्रीलिंग)।

६—**वचन**—(एकवचन, बहुवचन)।

७—**पुरुष**—(उत्तम, मध्यम, अन्य)।

८—**वाक्य**—में क्रिया से सम्बन्धित शब्द कर्त्ता, कर्म (यदि क्रिया सकर्मक हो), पूरक (यदि क्रिया अपूर्ण हो)।

क्रिया के पद-परिचय में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए—

१—पूर्व कालिक क्रिया में काल, प्रकार, लिङ्ग, वचन और पुरुष का विवरण नहीं किया जाता।

२—यदि किसी वाक्य में कर्त्ता विभक्ति रहित अवस्था में आता है, तो क्रिया के लिंग, वचन तथा पुरुष अपने कर्त्ता के अनुसार होते हैं। जैसे—'राम जाता है' में क्रिया 'जाता है' तथा 'कर्त्ता' 'राम' दोनों ही एकवचन, पुलिङ्ग, अन्य पुरुष हैं।

१—जब कर्त्ता विभक्ति युक्त तथा कर्म विभक्ति रहित अवस्था में आये, तो क्रिया के लिंग, वचन तथा पुरुष कर्म के अनुसार होते हैं। १—राम ने पुस्तक पढ़ी। २—राम ने पुस्तकें पढ़ीं। ३—लड़कों ने महाभारत पढ़ा। ४—सीता ने सद्ग्रन्थ पढ़े। में 'पढ़ी,' 'पढ़ा', 'पढ़े' क्रियाओं पर कर्त्ता का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, बल्कि वे अपने कर्मों के अनुसार हैं।

(अ) यदि क्रिया के कई कर्म होते हैं, तो क्रिया अन्तिम कर्म के अनुसार होती है। जैसे—मैंने रुपये और अठन्नियाँ गिनीं।

(आ) यदि क्रिया द्विकर्मक हो तो वह प्रधान कर्म के अनुकूल होगी। जैसे—राम ने लड़के को पुस्तकें पढ़ाई।

५—जब एक ही क्रिया के असमान लिङ्ग वाले अनेक कर्त्ता हों, तब क्रिया बहुवचन की होगी और लिङ्ग अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होगा। जैसे—मोहन सोहन और सुधा पढ़ती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

६—आदि में भिन्न लिंगों के भिन्न-भिन्न कर्त्ता हों और अन्त में कोई समुदाय वाचक पद हो, तो क्रिया प्रायः बहुवचन और पुलिङ्ग में होगी। जैसे—राम, लक्ष्मण और सीता सब वन को गये।

७—यदि बिना चिह्न के अनेक कर्त्ता हों और उनके बीच में कोई विभाजक शब्द 'या', 'अथवा' आदि हों तो क्रिया के लिंग, वचन अन्तिम कर्त्ता के अनुसार होंगे। जैसे—इसी गाड़ी से श्याम, मोहन अथवा सीता आती होगी।

क्रिया के पद परिचय

१—राम ने रोटी खाकर पुस्तक पढ़ी।

खाकर—पूर्व कालिक क्रिया, सकर्मक, कर्तृ वाच्य, इसका कर्म 'रोटी' है।

पढ़ी—सकर्मक क्रिया, कर्तृ वाच्य, सामान्य, भूतकाल, निश्चयार्थ प्रकार स्त्री लिङ्ग, एकवचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'राम' तथा कर्म 'पुस्तक' है।

२—वह चिल्ला उठा।

चिल्ला उठा—संयुक्त क्रिया, (चिल्लाना तथा उठना क्रिया से संयुक्त) अकर्मक, कर्तृ वाच्य, सामान्य भूतकाल, निश्चयार्थ प्रकार, पुलिङ्ग, एकवचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता 'वह' है।

३—चुपचाप बैठो।

बैठो—अकर्मक क्रिया, कर्तृ वाच्य, सामान्य भविष्यत् काल, आज्ञावाचक सामान्य विधि प्रकार, पुलिङ्ग बहुवचन, मध्यम पुरुष, इसका कर्त्ता 'तुम' गुप्त है।

४—राम एक चतुर बालक है।

है—अपूर्ण अकर्मक क्रिया, कर्तृ वाच्य, सामान्य वर्तमान काल, निश्चयार्थ प्रकार, पुलिङ्ग, एक वचन, इसका कर्त्ता 'राम' तथा पूरक 'बालक' है।

५—मैं मोहन से पत्र लिखवा रहा हूँ।

लिखवा रहा हूँ—प्रेरणार्थक क्रिया, सकर्मक, कर्तृ वाच्य, अपूर्ण वर्तमान काल, निश्चयार्थ प्रकार, पुलिङ्ग, एकवचन, उत्तम पुरुष, इसका कर्त्ता 'मैं' तथा कर्म 'पुस्तक' है।

अविकारी शब्द (अव्यय)

जैसा कि पहले कह आये हैं कि अवकारी अथवा अव्यय वे शब्द हैं जिनमें लिंग, वचन कारक आदि के कारण कोई भी परिवर्तन नहीं होता, अर्थात् ये हमेशा एक से रहते हैं। इसके चार भेद हैं—

(१) क्रिया विशेषण, २—सम्बन्ध बोधक, ३—समुच्चय बोधक ४—विस्मयादि बोधक।

जो शब्द किसी क्रिया के अर्थ में विशेषता प्रकट करते हैं, उन्हें क्रिया विशेषण कहते हैं। जैसे—'तेज दौड़ो, कम बोलो' में 'तेज' और 'कम'।

इसके पाँच भेद हैं—

(१) काल वाचक, (२) स्थान वाचक, (३) रीति वाचक, (४) परिमाण वाचक, (५) प्रश्नवाचक।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१—**काल वाचक**—वे क्रिया विशेषण हैं, जिनसे क्रिया के होने के काल का निश्चय हो। जैसे—'सदैव याद रखो' में **'सदैव'**।

अब, जब, कब, तब, आज, कल, परसों, फिर, पीछे, पहले, सदा, अभी, तभी, कभी, लगातार, दिनभर, बार बार, बहुधा, प्रतिदिन, शीघ्र, देर में, निरन्तर, दिनरात, सांझ-सवेरे, वर्ष तक, महीना भर आदि, काल वाचक क्रिया विशेषण हैं। यद्यपि दिन, साँझ, वर्ष, मास आदि समय के नाम होने के कारण विशेषण संज्ञा है किन्तु जब ये क्रिया के साथ आकर उसमें विशेषता उत्पन्न कर देते हैं तो ये क्रिया विशेषण कहे जाते हैं।

कभी-कभी क्रिया विशेषणों में कारक चिह्न भी जुड़े होते हैं। जैसे—मैंने यह काम कल के लिए रख छोड़ा है।

२—**स्थान वाचक**—वे क्रिया विशेषण हैं, जिनसे क्रिया के होने के स्थान का निश्चय हो। जसे—'तुम यहाँ बैठते हो' में यहाँ।

यहाँ, वहाँ, जहाँ, तहाँ, कहाँ, इधर, उधर, किधर, जिधर, तिधर, सर्वत्र, निकट, पास, दूर, ऊपर, नीचे, आगे, पीछे, दाहिने, बाएँ, बाहर, भीतर, आसपास आदि।

२—**रीति वाचक**—वे क्रिया विशेषण हैं जिनसे क्रिया के होने की रीति का ज्ञान हो। जैसे—'तेज' दौड़ो, में 'तेज'।

इनके सात भेद हैं—

अ—निश्चय वाचक—अवश्य, निस्संदेह, ठीक, सचमुच, अलबत्ता, वास्तव में **बेशक**, यथार्थ।

ब—अनिश्चय वाचक—कदाचित्, यथाशक्ति, सम्भवतया, सम्भव, यथासम्भव, शायद।

स—प्रकार वाचक—धीरे-धीरे, अचानक, अनायास, सेत-मेंत, एकाएक, सुखपूर्वक, शांति से हँसता हुआ, मन से धड़ाधड़, झट पट, आप ही आप, शीघ्रता से, इस प्रकार, ऐसे जैसे।

द—स्वीकार वाचक—जी हाँ, हाँ, ठीक, बजा है, सच है।

ह—कारण वाचक—इसलिए, अतएव, क्योंकि, किस लिए।

य—निषेध वाचक—नहीं, मत, न हूँ, ऊँ कदापि न।

र—अवधारण वाचक—तो ही, भी बस, फकतः। जैसे—मैं ही जाऊँगा।

४—**परिमाण वाचक**—वे क्रिया विशेषण हैं जिनसे क्रिया के परिमाण का ज्ञान हो। जैसे—'थोड़ा खाओ' में 'थोड़ा'

अति, अत्यन्त, थोड़ा, बहुत, कम, बहुधा, कुछ, अधिक, तनिक, अतिशय, इतना, उतना, कितना, जितना, तितना, प्रायः निपट, निरा, केवल, एकबेर, दो बार, तीन बार आदि।

५—**प्रश्न वाचक**—प्रश्न करने के लिये जिन क्रिया विशेषणों का प्रयोग होता है, उन्हें प्रश्न वाचक क्रिया विशेषण कहते हैं—तुम कब जाओगे ? वह कहाँ रहता है ? यह पत्र कैसे लिखोगे ? क्या वह रोता है ? में **कब**, कहाँ कैसे, क्या। ये क्रिया विशेषण काल वाचक (कब), स्थान वाचक (कहाँ), रीति वाचक (कैसे) आदि होते हैं पर प्रश्न का बोध कराने पर 'प्रश्न वाचक' हो जाते हैं। 'क्या तुम घर जाते हो' में 'क्या' भी प्रश्न वाचक क्रिया विषेषण हैं; किन्तु 'क्या' वाले वाक्य के उत्तर में 'हाँ' या 'न' आना आवश्यक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
यदि इसके उत्तर में कोई वस्तु आती है, तो वह प्रश्न वाचक सर्वनाम होगा। जैसे मैं क्या खाता हूँ? 'रोटी'। यहाँ 'क्या' सर्वनाम है। 'क्या' का प्रयोग विस्मयादि बोधक की भाँति भी होता है जो आगे लिखा जायगा।

सम्बन्ध बोधक अव्यय (Preposition)

वे अव्यय हैं जिनसे संज्ञा या सर्वनाम का सम्बन्ध वाक्य के दूसरे शब्दों के सम्बन्ध से जाना जाता है। जैसे—राम का मुँह कृष्ण की ओर है, में 'ओर' शब्द से मुँह और कृष्ण का सम्बन्ध जाना जाता है। अतः 'ओर' सम्बन्ध बोधक अव्यय है।

समुच्चय बोधक अव्यय (Conjunction)

दो वाक्यों अथवा शब्दों को मिलाने वाले अव्यय को समुच्चय बोधक अव्यय कहते हैं। जैसे—'मैंने दाल और भात खाया' में 'और' क्योंकि वह दो शब्दों को जोड़ता है।

इनके दो भेद हैं—१—संयोजक २—विभाजक।

१—संयोजक—वे समुच्चय बोधक अव्यय हैं, जो दो शब्दों अथवा वाक्यों को मिलाते हैं। जैसे—उक्त वाक्य में 'और'।

और, यथा, तथा, यदि, जो, तो, तथापि तो भी कि, फिर, पुनः, एवम्, क्योंकि, अतः, अतएव, ताकि, जोकि, अर्थात्, यानी, संयोजक शब्द हैं।

२—विभाजक—वे समुच्चय बोधक अव्यय हैं जो दो शब्दों अथवा वाक्यों को जोड़ते हुए भी उनके अर्थ का विभाग करते हैं। जैसे—'राम या मोहन दौड़े' में 'या'

या, वा, अथवा, पर, परन्तु, लेकिन, वरन्, बल्कि, नहीं, तो चाहे, 'विभाजक' शब्द हैं।

विस्मयादि बोधक अव्यय (Interjection)

विस्मय, हर्ष, शोक, उद्वेग आदि मन के भावों को प्रकट करने वाले शब्दों को विस्मयादि बोधक अव्यय कहते हैं। जैसे—अरे! वह पास हो गया। (विस्मय)। अहा! तुम आ गये। (हर्ष)

वाह, अरे, धिक्, दूर, छि, ओहो, धन्य है, अहा आदि विस्मयादि बोधक अव्यय है। 'क्या' भी विस्मयादि बोधक की भाँति प्रयुक्त होता है। जैसे—क्या? तुम अभी तक वहाँ नहीं गये थे।

अव्यय का पद-परिचय

क्रिया विशेषण, सम्बन्ध बोधक तथा समुच्चय बोधक के पद-परिचय में इनके नाम तथा भेद (यदि कोई हो) लिखकर सम्बन्ध बताया जाता है, और विस्मयादि बोधक में इनका निर्देश करके इससे प्रकट होने वाले भाव को भी लिखना पड़ता है।

१—अरे! अभी राम और मोहन विद्यालय में ही बैठे हैं।

अरे—विस्मयादि बोधक अव्यय, आश्चर्य प्रकट करता है।

अभी—काल वाचक क्रिया विशेषण, 'बैठे हैं' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

और—समुच्चय बोधक अव्यय, संयोजक, 'राम' तथा 'मोहन' को मिलाता है।

में—सम्बन्ध बोधक, 'विद्यालय' से सम्बन्ध रखता है।

२—राम यहाँ नहीं है अतः तुम भी चले जाओ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यहाँ—स्थान वाचक क्रिया विशेषण 'है' क्रिया की विशेषता प्रकट करता है।

नहीं—रीतिवाचक क्रिया विशेषण, निषेधवाचक, 'है' क्रिया की रीति प्रकट करता है।

अतः—समुच्चय बोधक अव्यय, संयोजक, 'राम यहाँ नहीं है' और 'तुम चले जाओ' को मिलाता है।

राम या मोहन दौड़े।

या—समुच्चय बोधक अव्यय, विभाजक, 'राम' और मोहन' को अलग करता है।

एक शब्द के अनेक शब्द भेद

पीछे हम शब्द-भेदों का वर्णन कर चुके हैं तथा स्थान स्थान पर इस बात को दिखला चुके हैं कि एक शब्द प्रयोगवश संज्ञा, विशेषण आदि की भाँति प्रयुक्त हो सकता है। नीचे हम कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग दे रहे हैं, जो विभिन्न प्रकार से प्रयुक्त होते हैं। इन्हें सावधानी से समझ लेना चाहिये जिससे कि पद परिचय में त्रुटि होने की सम्भावना न रहे।

शब्द	शब्द-भेद	उदाहरण
आदि	(इत्यादि) सर्वनाम	मनुष्य को मान, यश, धन आदि प्राप्त करने चाहिए।
	विशेषण	राम, सोहन आदि छात्रों को बुलाओ।
एक	निश्चयवाचक सर्वनाम	उसके पास एक आता था और एक जाता था।
	संख्यावाचक विशेषण	एक विद्वान ने कहा है।
	क्रिया-विशेषण	एक तो गिलोय वैसे ही कड़ुई, दूजे नीम चढ़ी
ऐसा	निश्चयवाचक सर्वनाम	ऐसा मत कहो।
	संकेतवाचक विशेषण	ऐसा काम मत करो, जो तुम्हें लज्जित करे।
	क्रिया-विशेषण	वह ऐसा गिरा कि उसकी टाँग टूट गई।
	सम्बन्ध बोधक	सुदामा को कृष्ण ऐसा मित्र मिला था।
और	सर्वनाम	कुछ और कहो।
	क्रिया-विशेषण	राम को और पानी चाहिए।
	विशेषण	राम और तेज दौड़ेगा।
	समुच्चय बोधक	राम और श्याम गये।
कारण	संज्ञा	क्या कारण है कि तुम यहाँ नहीं आते।
	सम्बन्ध बोधक	रोगी होने के कारण वह स्कूल नहीं छोड़ेगा।
	समुच्चय बोधक	मोहन स्कूल नहीं आया, कारण वह रोगी था।
कुछ	सर्वनाम	कुछ कहो।
	विशेषण	कुछ काम करो।
	क्रिया विशेषण	राम कुछ मोटा है।
	समुच्चय बोधक	कुछ तुम समझे कुछ हम समझे।
कौन	सर्वनाम	कौन जाता है ?
	विशेषण	कौन लड़का जाता है।
	क्रिया विशेषण	तुम्हारे लिये वह काम कौन कठिन है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शब्द	शब्द भेद	उदाहरण
क्या	सर्वनाम	तुम क्या खाते हो ?
	विशेषण	वह क्या काम करता है ?
	क्रिया-विशेषण	तुम क्या जानो कि कविता क्या है ?
	प्रश्नवाचक अव्यय	क्या राम रोटी खाता है ?
	विस्मयादि अव्यय	क्या ही अच्छी बात है ?
	समुच्चय बोधक	क्या धनी क्या निर्धन, सभी गाँधी जी से प्रेम करते थे।
	विस्मयादि बोधक	क्या ! तुम वहाँ नहीं गये।
चाहे	क्रिया	यदि वह चाहे, तो यहाँ आये।
	क्रिया-विशेषण	तुम चाहे जितना कहो, मैं न जाऊँगा।
	समुच्चय बोधक	चाहे तुम जाओ न जाओ, मैं अवश्य जाऊँगा।
जैसा	सर्वनाम	जैसा करोगे, वैसा भरोगे।
	विशेषण	तुम जैसा माल भेजोगे, वैसा ही मूल्य पाओगे।
	क्रिया-विशेषण	मैं जैसा यहाँ पढ़ाता हूँ वैसा ही वहाँ पढ़ाऊँगा।
	सम्बन्ध बोधक	तुम जैसा शिष्य पाकर मैं धन्य हूँ।
जो	सर्वनाम	जो यहाँ आता है, वह तुम्हारी प्रशंसा करता है।
	विशेषण	जो प्रमाण तुमने दिया है, अकाट्य है।
	क्रिया-विशेषण	जो ढक्कन हटाया, उसमें से एक साँप निकल पड़ा।
	समुच्चय बोधक	जो तुम पढ़ो, तो मैं आऊँ।
प्रति	उपसर्ग	वह मेरे प्रतिकूल है।
	संज्ञा	रामायण की एक प्रति भेज दो।
	सम्बन्ध	गुरु के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करो।
भला	संज्ञा	सबका भला करो।
	विशेषण	आप भला तो जग भला।
	क्रिया-विशेषण	आप भले आये।
	समुच्चय बोधक	तुम भले ही पढ़ो, मैं न पढ़ूँगा।
	विस्मयादि बोधक	भला ! तुम क्या करते।
साथ	संज्ञा	मेरा और तुम्हारा बम्बई में साथ रहा था।
	क्रिया-विशेषण	राम, लक्ष्मण और सीता साथ-साथ बन गये।
	सम्बन्ध बोधक	उनके साथ बाजार मत जाओ।
	समुच्चय बोधक	उनसे इस पद्य को पढ़वाना, साथ ही इसका अर्थ भी पूछना।
हाँ	संज्ञा	तुम्हारी तो जैसी हाँ वैसी ना।
	संज्ञा	तुम व्यर्थ ही हाँ में हाँ मिलाते हो।
	क्रिया-विशेषण	सुरेश क्या तुम बाजार जा रहे हो। महेश-हाँ।

शब्द व्युत्पत्ति

यह पहले बताया जा चुका है कि व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द के ३ भेद होते हैं—रूढ़, यौगिक, योगरूढ़। इनमें यौगिक और योगरूढ़ दो या अधिक शब्दों अथवा शब्द और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शब्दाशों के योग से बनते हैं। शब्दों के इसी प्रकार निर्माण को शब्द-व्युत्पत्ति कहा जाता है। शब्द व्युत्पत्ति के तीन प्रकार हैं।

(१) शब्द के पहले शब्दांश लगाने से।
(२) शब्द के पीछे शब्दांश लगाने से।
(३) दो या अधिक शब्दों के मेल से।

शब्द के पहले लगाने वाले शब्दांश को उपसर्ग तथा पीछे लगाने वाले शब्दांश को प्रत्यय कहते हैं। दो या अधिक शब्दों के मेल से बने हुए शब्दों को समस्त (समास द्वारा बनाये हुए शब्द) कहा जाता है।

उपसर्ग (Prefix)

उपसर्ग तथा प्रत्यय दूसरे शब्दों की सहायता के बिना स्वतंत्र रूप से अपना कोई अर्थ नहीं रखते अतः इन्हें शब्दांश कहा जाता है।

जो शब्दांश, जो किसी शब्द के आदि में आकर इसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न कर देते हैं या सर्वथा उसके अर्थ को बदल देते हैं, उपसर्ग कहे जाते हैं। जैसे 'कार' के आगे वि, सम् प्र, प्रति, उपसर्गों को लगाने से [क्रमशः विकार, संस्कार, प्रकार, प्रतिकार शब्द बनते हैं, जो अर्थों में बिल्कुल ही भिन्न हैं।

हिन्दी में प्रायः संस्कृत के ही उपसर्ग प्रयुक्त होते हैं, जो निम्न हैं—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
प्र	अधिक, प्रकर्ष	नाप्र नह, रङ्करसि, प्रभप्र
परा	निषेध, विरोध	पराजय, पराक्रम, पराकाष्ठा।
अप	हीनता, न्यूनता, बुरा	अपकार, अपवाद, अपशब्द।
सम	अच्छा, संयोग	सम्यक, संकल्प, संस्कार।
अनु	पीछे, समान	अनुग, अनुकरण, अनुरूप
अव	हीनता, बुराई	अवतार, अवगुण, अवनति।
नस् निर् (निः)	निषेध	शिणर्मः निरपराधा।
दुस दुर् (दुः)	कठिन, बुरा	दुस्तर, दुश्शासन, दुराचार।
वि	विभिन्न, विशेष, रहित	विज्ञान, विशारद, वियोग।
आङ् (अ)	पर्यन्त विरोध	आजन्म, आदान, आकार।
नि	निषेध, नीचे विशेष	निवारण, निपात।
अधि	अधिकार, ऊपर, श्रेष्ठ	अधिराज, अधिकृत, अधिपति।
अति	अधिक	अतिनिर्धन, अतिसार।
सु	अच्छा	सुकर्म, सुधार।
उत्	ऊपर, ऊंचा	उत्पत्ति, उत्कर्ष, उत्थान।
अभि	चारों ओर, सामने	अभिज्ञान, अभिमुख।
प्रति	विरुद्ध, सामने, हर एक	प्रतिकूल, प्रत्यक्ष, प्रतिमास।
परि	आस-पास, चारों ओर	परितुष्ट, परिताप।
उप	समीप, अमुख्य, छोटा	उपकूल, उपनाम, उपवन।

कुछ शब्द एक से अधिक उपसर्गों के योग से भी बनते हैं। जैसे—
व्यवहार=वि+अव+हार। समन्वय=सम्+अनु+अय।
दुर्व्यवहार=दुर्+वि+अव+हार।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्कृत के कुछ अव्यय और विशेषण भी उपसर्गों की भाँति शब्दों के आदि में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—

शब्द	अर्थ	उदाहरण
अन्तः	भीतर	अन्तः पुर
सत्	अच्छा	सज्जन, सङ्गीत, सत्संग
कु	बुरा	कुमार्ग, कुसङ्ग
चिर	बहुत	चिरकाल

हिन्दी में कुछ स्वतन्त्र उपसर्गों का भी प्रयोग होता है। जैसे—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
अध	आधा	अधकच, अधपका
भर	पूरा	भरपेट, भरसक
स	अच्छा	सपूत

कुछ उर्दू के उपसर्ग भी काम में लाये जाते हैं—

उपसर्ग	अर्थ	उदाहरण
बा	अनुसार	बाकायदा।
दर	में	दर अस्ल
हर	प्रति	हर रोज, हर एक
गैर	अचित	गैरहाजिर।

विशेष—उपसर्गों की संख्या अनन्त है, ऊप छ प्रधान उपसर्गों का ही वर्णन किया गया है।

प्रत्यय (Suffix)

जो शब्दांश शब्द के अन्त में जुड़कर उसमें कुछ परिवर्तन कर देते हैं, प्रत्यय कहे जाते हैं। जैसे—'बुराई' में 'ई'।

प्रत्ययों के दो मुख्य वर्ग हैं—कृत् प्रत्यय और तद्धित प्रत्यय।

कृत-प्रत्यय—वे प्रत्यय हैं जो क्रियाओं के पीछे लगाये जाते हैं। और इस प्रकार के जो शब्द बनते हैं, कृदन्त कहलाते हैं। जंसे—

'सीखना' मे 'हारा' प्रत्यय लगाने से 'सीखनहारा' बनता है। इसमें कृत्प्रत्यय है, और पूरा कृदन्त शब्द है।

कृदन्त शब्दों के पांच भेद हैं—

(१) कर्तृ वाचक। (२) कर्म वाचक शब्द। (३) करण वाचक शब्द (४) भाववाचक शब्द। (५) क्रिया द्योतक शब्द।

(१) कर्त्तवाचक—वह कृदन्त है, जिससे क्रिया करने वाले का ज्ञान हो। जसे—भागने वाला।

इसके मुख्य प्रत्यय निम्न हैं—

(अ) वाला; जैसे भागने वाला, रोने वाला।

(आ) हारा; जैसे—सीखनहारा, तारनहारा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(इ) क; जैसे—गायक ।

(ई) इया; जैसे—जड़िया ।

(उ) वैया; जैसे—गवैया ।

(ऊ) हुआ; [अकर्मक धातुओं से] जैसे—सोया हुआ ।

(ए) त; [संस्कृत की अकर्मक धातुओं से] जैसे—गत, मृत ।

(२) **कर्म वाचक**—वे कृदन्त हैं; जो सकर्मक क्रिया के सामान्य भूत में 'हुआ' या "हुई' लगाने से बनते हैं; जैसे—लिखा हुआ ।

संस्कृत सकर्मक क्रियाओं में 'त' जुड़कर कर्म वाचक कृदन्त बनते हैं । जैसे—कथित ।

३—करण वाचक—वे कृदन्त हैं, जो क्रिया के साधन का बोध करायें । जैसे—चलनी, बेलन, ढकना ।

४—भाव वाचक—वे कृदन्त हैं, जिनसे किसी भाव अथवा क्रिया के व्यापार का ज्ञान हो । जैसे—दौड़, रोक, लिखावट ।

भाव वाचक संज्ञाए इसी भाव वाचक कृदन्त के अन्तर्गत हैं, अर्थात्, क्रियाओं से भाव वाचक संज्ञा बनाने वाले सभी प्रत्यय 'भाव वाचक कृत्प्रत्यय कहे जाते हैं ।

५—क्रिया द्योतक—वे कृदन्त हैं, जो क्रिया के होने का भाव प्रकाशित करें । जैसे—जाता हुआ, पढ़ते हुये ।

(अ) धातु से 'ते हुए' या 'ते' लगाने से । जैसे—पढ़ते हुए, सोते समय ।

(ब) हेतु हेतुमद् भूत के रूप में हुआ जोड़ने से । जैसे—आता हुआ, खाता हुआ ।

स—कभी-कभी क्रिया का सामान्य रूप भी इस कार्य में आता है । जैसे—पढ़ना अच्छा है ।

कृदन्त शब्द संज्ञा तथा विशेषण दोनों ही होते हैं तथा इनके रूप सम्पूर्ण कारकों में चलते हैं । जैसे—

संज्ञा—तैरना एक अच्छा व्यायाम है । (कर्त्ता)

तैरना सीखो । (कर्म)

तैरने से स्वास्थ्य को लाभ होता है । (करण)

मैं तैरने के लिए नहर जाता हूँ । (सम्प्रदान) आदि ।

विशेषण—पढ़ने वाला छात्र कहाँ जा रहा है ? पढ़ने वाले छात्रों को बुलाओ (आदि) ।

तद्धित

तद्धित प्रत्यय—वे प्रत्यय हैं, जो संज्ञा, सर्वनाम अथवा विशेषण के आगे जुड़कर नये शब्द बनाने के काम में आते हैं । जैसे—'धनवान् भवदीय, मुटापा'

इसके ६ भेद हैं—

१—भाव वाचक । २—गुण वाचक । ३—अपत्य वाचक । ४—कर्तृ वाचक । ५—न्यूनता वाचक । ६—स्त्री वाचक ।

भाव वाचक—जिससे भाव आदि का ज्ञान हो । जैसे लघुता, मुटापा (ये भाव वाचक संज्ञाओं के अन्तर्गत हैं) ।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुण वाचक—जिनसे किसी गुण के भाव का ज्ञान हो। जैसे—बुद्धिमान, धनवान, आनन्दित, सुखदायी।

अपत्य वाचक—जिनसे सन्तानत्व आदि का ज्ञान हो। जैसे—दयानन्द से दयानन्दी, वसदेव से वासुदेव, शिव से शैव।

कर्तृ वाचक—जिनसे कर्त्ता का ज्ञान हो। जैसे—लकड़हारा, आढ़तिया ·दूधवाला।

न्यूनता वाचक—जिनसे लघुत्व का ज्ञान हो। जैसे—खाट से खटिया, लाटा से लुटिया।

स्त्री वाचक—जिनसे स्त्रीत्व का ज्ञान हो जैसे—बकरा से बकरी, शिव से शिवा, नर से नारी। (ये पुंलिग स स्त्रीलिङ्ग बनाने के काम आते हैं।)

कृत तथा तद्धित प्रत्ययों में अन्तर

जो प्रत्यय धातुओं से जुड़कर नये शब्दों को बनाते हैं, वे कृत प्रत्यय और जो प्रत्यय संज्ञाओं सर्वनामों अथवा विशेषणों से जुड़कर नये शब्द बनाते हैं, वे तद्धित प्रत्यय कहे जाते हैं।

जैसे 'पढ़ने वाला' में 'पढ़ना' धातु से 'वाला' प्रत्यय हुआ है, अतः 'वाला' 'कृत प्रत्यय' है और 'सुन्दरता' में 'सुन्दर' विशषण से 'ता' 'प्रत्यय' है, अतः 'ता' 'तद्धित प्रत्यय' है।

इसी प्रकार 'गायक' में 'गाय' धातु से 'क' प्रत्यय होने से 'क' प्रत्यय 'कृत प्रत्यय' है और 'शैव' में 'शिव' संज्ञा से 'अ' प्रत्यय होने से 'अ' प्रत्यय 'तद्धित प्रत्यय' है।

उसपर्ग तथा प्रत्ययों में अन्तर

उपसर्ग तथा प्रत्यय दोनों ही शब्दांश हैं, पर उपसर्ग शब्द से पहले तथा प्रत्यय शब्द के बाद में जुड़कर नये शब्द बनाते हैं।

जैसे—'प्र' 'हार' से पहिले जुड़कर 'प्रहार' शब्द को बनाता है, अतः 'प्र' उपसर्ग है और 'ता' 'सुन्दर' के बाद में जुड़कर 'सुन्दरता' शब्द को बनाता है अतः 'ता' प्रत्यय है। इसी प्रकार 'विकार' में वि के 'कार' से पहिले आने से 'वि' उपसर्ग और 'बालकपन' में 'पन' के 'बालक' के बाद में आने से 'पन' प्रत्यय है।

समास (Compound)

यदि दो या दो से अधिक शब्द मिलकर एक नवीन शब्द की रचना करते हैं, तो इस मिलने की क्रिया को समास कहा जाता है।

इस प्रकार जो शब्द बनते हैं, समस्त शब्द अथवा सामासिक शब्द कहा जाता है। इस समास वाले पद के खण्डों को अलग-अलग करने की रीति को विग्रह कहते हैं। समास होने पर विभक्तियों आदि का लोप हो जाता है। जैसे 'राजपुत्र' एक समस्त पद है। 'एक राजा का पुत्र' इसका विग्रह है, और इसमें 'का' विभक्ति का लोप हो गया है। (ऊपर पद शब्द का प्रयोग किया गया है वह 'शब्द' का ही दूसरा नाम है।)

समस्त शब्द दो या अधिक शब्दों के योग से ही बनते हैं। उपसर्ग अथवा प्रत्यय के योग से नहीं। समास में दो या दो से अधिक पदों का होना आवश्यक है।

इसके ६ भेद हैं—अव्ययी—भाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, बहुव्रीहि, द्वन्द्व।

(1) अव्ययी भाव

परिभाषा—इस समास में पहला पद प्रधान होता है और सम्पूर्ण समस्त पद क्रिया की विशेषता को बतलाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यह तीन रूपों में होता है। अव्यय के साथ (इसमें पहला पद अव्यय होता है), किसी अव्यय को दुहराने में और किसी संज्ञा को दुहराने में।

अव्ययी भाव समास वाले शब्दों का प्रयोग क्रिया विशेषण के रूप में अवश्य ही होता है। यदि पूरे शब्द का प्रयोग क्रिया विशेषण के रूप में नहीं होता, तो वह अव्ययी भाव समास नहीं होता है।

कहने का भाव यह है कि पूरे वाक्य की क्रिया से पहले 'कब, कहाँ, क्यों, कैसे' आदि लगा कर प्रश्न के उत्तर में 'समास वाले शब्द' का आना आवश्यक है जैसे—'वह प्रतिदिन स्कूल जाता है' वाक्य की क्रिया 'जाता है' से पहले 'कब' लगाकर 'कब जाता है ?' के उत्तर में 'प्रतिदिन' जाता है, इसका पहला पद 'प्रति' अव्यय है और प्रधान भी है अतः 'प्रतिदिन' में अव्ययी भाव समास है।

उदाहरण—

समस्त पद	विग्रह	समास नाम	योग
यथाशक्ति	शक्ति के अनुसार	अव्ययी भाव (अव्यय के साथ)	वह यथाशक्ति दान देता है।
आजन्म	जन्म पर्यन्त	,,	राम आजन्म सत्यपालक रहे
धीरे-धीरे	धीरे से धीरे से	अव्ययी भाव (अव्यय के दुहराने में)	वह धीरे-धीरे चलता है।
दिन-दिन	दिनों में दिनों में	अव्ययी भाव (संज्ञा को दुहराने में)	वह दिन-दिन दुबला होता चला गया।

हिन्दी में संस्कृत पद्धति के अतिरिक्त अव्ययी भाव कम मिलते हैं। जो ३ प्रकार के हैं—

(१) हिन्दी—निडर, निधड़क, भरपेट, अनजाने। (२) विदेशी-हर रोज, बखूबी, बेशक (३) मिश्रित (हिन्दी+विदेशी)—हर घड़ी, हर दिन, बेकाम, बेखटके।

कभी-कभी द्विरुक्त शब्दों के बीच में 'ही' 'आ' आदि प्रयोग भी होता है। जैसे—मन ही मन, एकाएक।

(2) तत्पुरुष

जिस समास में प्रथम पद कर्त्ता तथा सम्बोधन को छोड़कर अन्य किसी कारक का हो, तथा जिनमें अन्तिम पद प्रधान हो, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं—जैसे—'हिमालय' का विग्रह 'हिम का आलय' है, इसमें पहला पद सम्बन्ध कारक है, तथा दूसरा पद प्रधान है।

(१) कारक के अनुसार तत्पुरुष के ६ भेद होते हैं—

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) **कर्म तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द कर्मकारक होता है। जैसे स्वर्ग प्राप्त (स्वर्ग को प्राप्त)।

(२) **करण तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द करण कारक का होता है। जैसे तुलसी-कृत (तुलसी द्वारा कृत)।

(३) **सम्प्रदान तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द सम्प्रदान कारक का होता है। जैसे—रसोई घर (रसोई के लिए घर)।

(४) **अपादान तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द अपादान कारक का होता है। जैसे—स्थान-च्युत (स्थान से च्युत)।

(५) **सम्बन्ध तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द सम्बन्ध कारक का होता है। जैसे—हिमालय (हिम का आलय)

(६) **अधिकरण तत्पुरुष**—इसमें पहला शब्द अधिकरण कारक का होता है। जैसे—रथारूढ़ (रथ में आरूढ़)

इसके अतिरिक्त तत्पुरुष का एक भेद और है जिसे नञ तत्पुरुष या निषेध वाचक तत्पुरुष कहते हैं।

(७) **नञ तत्पुरुष**—जब 'न' अथवा 'अन्' का प्रयोग शब्द के आदि में निषेध अर्थ में हो तो नञ तत्पुरुष होता है।

जैसे—अब्राह्मण (जो ब्राह्मण न हो) अनश्व (जो अश्व न हो)।

विशेष—जिन शब्दों के आदि में कोई स्वर होता है, उनमें, 'अन' तथा शेष में 'अ' जुड़ता है।

(3) कर्मधारय

जो समास विशेष्य और विशेषण, विशेषण और विशेषण के योग से बनता है, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इसमें भी दूसरा पद प्रधान होता है। यह समास उपमा तथा रूपक के प्रयोग में भी होता है।

विशेष्य और विशेषण का समास होने पर विग्रह में 'है जो' या 'हैं जो' शब्द बीच में आता है। इसमें कभी पहला शब्द विशेषण होता है। जैसे—नीला कमल (नीला है जो कमल) और कभी दूसरा शब्द विशेषण होता है, जैसे—नराधम (नर है जो अधम)।

जब दो विशेषण पदों के योग से समास बनता है, तब विग्रह में 'हैं जो' या 'है जो' शब्दों का प्रयोग होता है। जैसे—परम सुन्दर (परम है जो सुन्दर)।

उपमा तथा रूपक कर्मधारय—यदि समास में उपमा अलंकार के वाचक 'समान, तुल्य' आदि शब्दों का लोप हो, तो उपमा कर्मधारय और रूपक अलंकार के वाचक 'रूपी' ही, आदि शब्दों का लोप हो, तो रूपक कर्मधारय होते हैं। जैसे—

उपमा कर्मधारय—घनश्याम, घन के समान श्याम। कमल नयन, कमल के समान नयन।

रूपक कर्मधारय—कमल नयन, कमल रूपी नयन।

मध्यम पद लोपी कर्मधारय—कुछ शब्दों में समास होने पर मध्यम पद का लोप भी हो जाता है, इनमें 'मध्यम पद लोपी समास' होता है; जैसे—'शाक-पार्थिव', शाक से प्रेम करने वाला पार्थिव, दही बरा (दही से युक्त बरा)।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(4) द्विगु

जिस समास में पहला पद संख्या वाचक हो और दूसरा पद प्रधान हो, उसे द्विगु समास कहते हैं। यह सम्पूर्ण समास एक समूह का वाचक होता है। इसके विग्रह में समाहार' शब्द का प्रयोग होता है। जैसे—त्रिलोकी (तीनों लोकों का समाहार), चतुर्युग (चार युगों का समाहार), पंच पात्र (पांचों पात्रों का समाहार)।

(5) बहुब्रीहि

जिस समास का अपना कोई पद प्रधान न होकर कोई अन्य पद प्रधान हो और विग्रह करने पर अपनी तरफ से कुछ जोड़ने पर अर्थ पूरा हो, उसे बहुब्रीहि समास कहते हैं जैसे—दशानन (दश हैं आनन जिसके, अर्थात् रावण) लम्बोदर (लम्बा है उदर जिसका; अर्थात गणेश)।

(6) द्वन्द्व

जिस समास में सभी पद प्रधान हों, और विग्रह करने पर जिसके पद 'और' 'अथवा' आदि संयोजक अव्ययों से जुड़े हों, उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। जैसे—रात-दिन (रात और दिन), भाई-बहिन (भाई और बहिन) राजा-रङ्क (राजा अथवा रङ्क)।

विशेष १—यदि एक समस्त पद में दो से अधिक पद हों तो सम्पूर्ण समास का नाम अन्त में होने वाले समास के अनुसार होता है। जैसे—'देव-दानव-युद्ध' में 'देव और दानवों का युद्ध' विग्रह होने से तत्पुरुष समास है, द्वन्द्व नहीं।

२—'एक समस्त पद' में अर्थ पद में कई समास हो जाते हैं, अतः प्रसंग प्राप्त अर्थ पर विशेष ध्यान देना चाहिए। जैसे—

लम्बोदर—लम्बा है उदर जिसका, अर्थात—गणेश, बहुब्रीहि।

लम्बोदर—लम्बा जो उदर कर्मधारय।

त्रिवेणी—तीन हैं वेणी जिसकी, अर्थात्—कोई स्त्री, बहुब्रीहि।

त्रिवेणी—तीनों बेड़ियों का समूह, द्विगु।

२—कुछ ऐसे भी संस्कृत शब्द हैं जिनमें विभक्ति का लोप नहीं होता है। जैसे—युधिष्ठिर, सरसिज। (इनमें सप्तमी की विभक्ति 'इ' का लोप नहीं हुआ है।)

अभ्यास

निम्न शब्दों के सविग्रह समास के नाम लिखो—

१—प्रत्येक, २—राज-पुरुष, ३—महेश, ४—सदुपदेश, ५—महा विद्यालय, ६—त्रिभुज, ७—महर्षि, ८—राम-निवास, ९—पीताम्बर, १०—सुन्दर मुख, ११—दुष्ट-मति, १२—अकारण, १३—ब्रह्मा-विष्णु-महेश, १४—प्रतिदिन, १५—सद्गुण, १६—नीलकण्ठ, १७—यथाशक्ति, १८—नवं वर्षारम्भ, १९—चतुरानन, २०—गोपीनाथ, २१—शरणागत, २२—क्षितिपाल, २३—नरेश, २४—जीवनदाता, २५—आजन्म, २६—धीरे-धीरे, २७—रात-दिन, २८—पथ-भ्रष्ट, २९—चरण चिन्ह, ३०—सर्वोदय, ३१—दुरवस्था, ३२—सकुमार, ३३—विद्यालय, ३४—कवि-सम्मेलन, ३५—स्वागत गान, ३६—आलस्य अघासुर, ३७—अनासक्त, ३८—शिष्टाचार, ३९—जीवन पयोधि, ४०—विनय-शून्य, ४१—दही-बूरा, ४२—युधिष्ठिर, ४३—सुरसरित, ४४—गण्य मान्य, ४५—गण मान्य।

उत्तर—१—एक एक, अव्ययी० २—राजा का पुरुष, तत्पु० ३—महान् जो ईश,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कर्म० ४—सत् जो उपदेश, कर्म० ५—महान जो विद्यालय, कर्म० ६—त्रि हैं भुजाएँ जिसकी, बहु० ७—महान् जो ऋषि, कर्म० ८—राम का निवास, तत्पु० ९—पीत हैं अम्बर जिसके, बहु० अथवा पीत जो अम्बर, कर्म० १०—सुन्दर है मुख जिसका, बहु० अथवा सुन्दर जो मुख, कर्म० ११—दुष्ट है मति जिसकी, बहु० अथवा दुष्ट जो मति, कर्म० १२—न कारण, नञ्, तत्पु० १३—ब्रह्मा, विष्णु और महेश, द्वन्द्व १४—दिन दिन, अव्ययी० १५—सत् गुण, कर्म० १६—नीलकण्ठ जिसका, बहु० अथवा नील जो कण्ठ, कर्म० १७—शक्ति के अनुसार, अव्ययी० १८—नव वर्ष का आरम्भ, तत्पु० १९—चतुर हैं आनन जिसके, बहु० २०—गोपीनाथ, तत्पु०, २१—शरण में आगत, तत्पु० २१—क्षिति का पाल, तत्पु० २३—नरों का ईश तत्पु० २४—जीवन का दाता, तत्पु० २५—जन्म पर्यन्त, अव्य० २६—धीरे-धीरे, अव्य० २७-रात और दिन, द्वन्द्व, २८—पथ से भ्रष्ट, तत्पु० २९—चरणों के चिह्न, तत्पु० ३०—सर्व का उदय, तत्पु० ३१—दूर जो अवस्था, कर्म० ३२—सुन्दर जो कुमार, कर्म० ३३—विद्या के लिए आलय, तत्पु० ३४—कवियों का सम्मेलन, तत्पु०, ३५—स्वागत के लिये गान, तत्पु० ३६—आलय रूपी अघासुर, कर्म० ३७—न आसक्त, नञ् तत्पु०—३८—शिष्ट जो आचार, कर्म० ३९—जीवनरूपी पयोधि कर्म० ४०—विनय से शून्य, तत्पु० ४१—दही से युक्त बूरा, कर्म० ४२—युद्ध में स्थिर है जो, बहु० ४३—सुरों की सरित्, तत्पु० ४४—गण्य और मान्य, द्वद्व, ४५—गणों के द्वारा मान्य, तत्पु० ।

वाक्य-विभाग

वाक्य रचना—जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि 'वाक्य' ध्वनियों के उस समूह का नाम है, जिससे कोई पूरी बात समझ में आ जाय। जैसे—राम रोटी खाता है। कभी-कभी वाक्य में केवल एक ही 'ध्वनि' होती है। जैसे—दौड़ो। ऐसे स्थानों पर कुछ छिपा रहता है। जैसे—'दौड़ो' में 'तुम'।

प्रत्येक वाक्य में किसी के बारे में कुछ बात कही जाती है। जैसे—ऊपर के वाक्य में 'राम' के बारे में कहा गया है कि वह 'रोटी' खाता है, इस प्रकार वाक्य के दो खन्ड हो जाते हैं, जिन्हें उद्देश्य और विधेय कहते हैं।

उद्देश्य (Subject)—वाक्य का वह भाग है, जिसके बारे में कुछ कहा जाय। जैसे उक्त वाक्य में 'राम'।

विधेय (Predicate)—वाक्य का वह भाग है, जो उद्देश्य के बारे में कहा जाय जसे उक्त वाक्य में 'रोटी' खाता है।

उद्दश्य का मुख्य अग कर्ता है। जैसे—उक्त वाक्य में 'राम'। किसी उद्दश्य में केवल कर्ता ही होता है; और किसी उद्देश्य में कर्ता के साथ एक या अधिक 'कर्तृ विशेषण' भी होते हैं, जिन्हें उद्देश्य अथवा कर्त्ता का विस्तार कहते हैं।

निम्नलिखित शब्द कर्त्ता हो सकते हैं—

(१) **संज्ञा**—जैसे, राम रोटी खाता है।

(२) **सर्वनाम**—जैसे, वह घर जाता है।

(३) **विशेषण**—जैसे, बुद्धिमान सदा सच बोलते हैं।

(४) **क्रियार्थक संज्ञा**—(क्रिया का सामान्य रूप) जैसे—तैरना एक अच्छा व्यायाम है।

(५) **वाक्यांश**—जैसे, मेरे सामने झूठ बोलना ठीक नहीं।

(६) **कृदन्त**—जैसे, लकड़हारा लकड़ी बेचता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(७) ऐसे शब्द, जो रूप में तो कर्म कारक से लगते हैं, किन्तु वास्तव में क्रिया के कर्त्ता ही हैं। जैसे—राम को घर जाना चाहिए।

(८) कर्म वाच्य में कर्त्ता की भाँति प्रयुक्त कर्म—जैसे, फिर भी पत्र न लिखा गया।

(९) भाव वाच्य में करण कारक के रूप में (से, के द्वारा, से युक्त) आए हुए शब्द—जैसे, मुझ से बोला नहीं जाता।

(१०) सम्प्रदान कारक के रूप में ('के लिए' से युक्त) कर्त्ता-जैसे, 'हमारे' लिए उसे पकड़ना ठीक नहीं।

कर्तृ विशेषण अथवा उद्देश्य का विस्तार

ये शब्द जो कर्त्ता की विशेषता प्रकट करते हैं, कर्तृ विशेषण अथवा उद्देश्य का विस्तार कहते हैं।

निम्न प्रकार के शब्द कर्तृ विशेषण हो सकते हैं—

(१) **कर्त्ता का विशेषण**—जैसे, दुष्ट लड़के ऊधम मचाते हैं।

(२) कर्त्ता के साथ सम्बन्ध कारक के द्वारा जुड़े हुए संज्ञा या सर्वनाम। जैसे—उसका पुत्र बीमार है।

(३) समान कारकीय शब्द (ऐसी संज्ञा जो कर्त्ता कारक के साथ कर्त्ता कारक की अवस्था में ही प्रयुक्त हो)। जैसे—**दशरथ का पुत्र**, राम बन को गया।

(४) कर्त्ता के साथ उसकी विशेषता प्रकट करने वाला वाक्यांश-जैसे—छत से गिरा हुआ बालक रोता है।

(५) **कृदन्त**—हँसने वाले लड़के सबको प्यारे लगते हैं।

(६) **सम्बोधन**—हे राम ! तुम क्या कर रहे हो ?

विशेष—सम्बोधन का प्रयोग ऐसे वाक्य में भी होता है, जहाँ कि वाक्य का कर्त्ता और सम्बोधित व्यक्ति भिन्न-भिन्न होते हैं। जैसे—'हे गरुड़ ! राम की माया ही ऐसी है' में गरुड़ तथा वाक्य का कर्त्ता 'माया' भिन्न-भिन्न है। ऐसे वाक्यों में सम्बोधन के बाद 'तुम सुनो' आदि छिपा रहता है, और ये सम्बोधन 'तू', 'तुम' अथवा 'आप' के विस्तार होते हैं।

विधेय—विधेय का मुख्य शब्द क्रिया है। कभी अकेली क्रिया ही विधेय का काम पूर्ण रूप से कर देती है (जैसे—बैठ जाओ)। कभी उसके अर्थ को पूर्ण रूप से प्रकट करने के लिये अन्य शब्दों की आवश्यकता होती है। ये सम्पूर्ण शब्द विधेय के ही अन्तर्गत होते हैं। ये निम्न हैं—

(१) यदि क्रिया सकर्मक हो तो उसका कर्म,

(२) अपूर्ण क्रिया का पूरक,

(३) स्थान, समय, प्रयोजन आदि बताने के लिए कुछ शब्द, क्रिया विशेषण अथवा क्रिया का विस्तार।

इस प्रकार विधेय के चार भाग हो जाते हैं।

१—क्रिया २—कर्म (अपने विस्तार सहित) ३—पूरक (अपने विस्तार सहित) ४—क्रिया विशेषण अथवा क्रिया का विस्तार।

क्रिया—प्रत्येक वाक्य में क्रिया अवश्य होती है। वह विधेय का प्रधान भाग है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कभी तो अकेली क्रिया से ही विधेय का कार्य पूरा हो जाता है। जैसे—राम सोता है, में 'सोता है' क्रिया अकेली ही विधेय है।

कर्म—सकर्मक क्रिया का कर्म होता है। यदि क्रिया का द्विकर्मक होता है, तो दो कर्म होते हैं जैसे—मैंने उसे खाना 'खिलाया' में 'उसे' और 'खाना' दो कर्म हैं।

ये सब शब्द जो कर्त्ता होते हैं, कर्म भी हो सकते हैं, अर्थात्

१—संज्ञा—राम ने पुस्तक पढ़ी।

२—सर्वनाम—मैंने तुम्हें बुलाया।

३—विशेषण—प्यासे को पानी पिलाओ।

४—क्रियार्थक-संज्ञा—उसे भागना पसन्द है।

५—वाक्यांश—मैं झूठ बोलना पसन्द नहीं करता हूँ।

६—कृदन्त—लकड़हारे को बुलाओ।

कर्म का विस्तार—जो शब्द कर्त्ता का विस्तार करते हैं, वे ही कर्म का भी विस्तार करते हैं। जैसे—'चतुर बालक को बुलाओ' में 'चतुर' बालक का विस्तार करता है।

३—पूरक—अपूर्ण क्रिया का पूरक अवश्य होता है। यह कभी संज्ञा होता है, कभी विशेषण और कभी सर्वनाम जैसे—

संज्ञा—पं० जवाहरलाल नेहरू स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधान मंत्री थे।

(२) विशेषण—कृष्ण तो दुबला पतला है।

(३) सर्वनाम—मैं भी कुछ हूँ।

कर्त्ता तथा कर्म की भाँति पूरक का भी विस्तार होता है। जैसे—उपर्युक्त संख्या '१' के वाक्य में 'प्रथम'।

क्रिया विशेषण अथवा क्रिया का विस्तार

निम्न शब्द अपने भेदों तथा विशेषण सहित (यदि कोई हो) क्रिया विशेषण हो सकते हैं—

क्रिया विशेषण—तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?

विशेषण—यह अच्छा बोलता है।

कृदन्त—लड़के हँसते हुए बातचीत करते हैं।

क्रिया की विशेषता प्रकट करने वाला वाक्यांश—मैं बहुत जल्दी में ही यहाँ आया हूँ।

कारण, सम्प्रदान, अपादान तथा अधिकरण कारक में प्रयुक्त शब्द—

कारण—मैंने मोटी कलम से पत्र लिखा।

सम्प्रदान—बालक के लिए मिठाई लाओ।

अपादान—आम के पेड़ से पत्ता गिरा।

अधिकरण—मैं छत पर बैठा हूँ।

पूर्व कालिक क्रिया (अपने कर्म तथा क्रिया विशेषण सहित)—वह पुस्तक पढ़कर यहाँ आया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वाक्य विश्लेषण [Analysis]

साधारणतया प्रत्येक वाक्य के 'उद्देश्य' तथा 'विधेय' नामक दो भाग किये जाते हैं, किन्तु रचना के अनुसार वाक्य के तीन भेद होते हैं ।

१—सरल अथवा साधारण वाक्य (Simple)

२—मिश्रित अथवा मिश्र वाक्य (Complex)

३—संयुक्त अथवा संसृष्ट वाक्य (Compound)

सरल अथवा साधारण वाक्य में केवल एक ही मुख्य क्रिया होती है, तथा मिश्रित और संयुक्त वाक्य में एक से अधिक क्रियाएँ होती हैं ।

साधारण वाक्य [Simple Sentence]

वह वाक्य जिसमें केवल एक ही प्रधान क्रिया हो, साधारण वाक्य कहा जाता है । **जैसे**—राम जाता है, सोहन दौड़ता है ।

वाक्य के विभागों का ऊपर कहे भागों के अनुसार अलग अलग करके लिखना वाक्य **विश्लेषण** अथवा वाक्य विग्रह कहा जाता है ।

साधारण वाक्य के ऊपर कहे अनुसार दो भाग होते हैं—

१—उद्देश्य, २—विधेय ।

उद्देश्य के दो भाग होते हैं—(१) कर्त्ता, (२) कर्त्ता का विस्तार या कर्म **विशेषण** ।

विधेय के चार भाग हैं—

१—क्रिया । २—कर्म और उसका विस्तार । ३—पूरक और उसका विस्तार । ४—क्रिया विशेषण अथवा क्रिया का विस्तार ।

साधारण वाक्यों का वाक्य—विश्लेषण निम्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जायगा ।

'पद्य' का विश्लेषण करने से पहले उसका अन्वय कर लिया जाता है । अर्थ पूर्ति के लिए आवश्यक शब्दों को वाक्य में अपनी तरफ से मिलाकर उन्हें कोष्टक में रख दिया जाता है ।

१—दशरथ के पुत्र राम ने लंका में वहाँ के राजा रावण को वाणों से मारा । २—प्रताप एक वीर योद्धा था । ३—जल्दी ही भाग जाओ । ४—मैं पुस्तक पढ़कर सो गया । ६—उसकी उन्नति परिश्रम पर ही निर्भर है । ५—भाषण की स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है । ७—सोहन ! तुम कुछ नहीं जानते । ८—क्षणभर में था डर गया देख रूप विकराल । अन्वय (मैं) विकराल रूप देख क्षणभर में डर गया था ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साधारण वाक्य विश्लेषण पत्र

वाक्य	उद्देश्य		विधेय			
संख्या	कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	कर्म और उसका विस्तार	पूरक और इसका विस्तार	क्रिया का विस्तार
१	राम ने	दशरथ के पुत्र	मारा	वहाँ के राजा रावण को		(१) लङ्का में (२) वाणों से
२	प्रताप		था		एक वीर योद्धा	
३	(तुम)		भाग जाओ			जल्दी ही
४	मैं		सो गया			पुस्तक पढ़कर
५	उन्नति	उसकी	है		निर्भर	परिश्रम पर ही
६	स्वतन्त्रता	भाषण की	है		हमारा जन्म सिद्ध अधिकार	
७	तुम	सोहन	जानते			नहीं
८	(मैं)		डर गया			(१) विकराल रूप देख (२) क्षण भर में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मिश्रित अथवा मिश्र वाक्य (Complex Sentence)

जैसा कि हम पहले कह आये हैं प्रत्येक वाक्य से एक पूरी बात समझ में आ जाती है। कभी यह बात ऐसे वाक्य के द्वारा समझ में आती है, जिसमें केवल एक ही मुख्य क्रिया होती है, कभी ऐसे वाक्य द्वारा जिसमें केवल एक से अधिक क्रियायें होती हैं, तथा उनसे सम्बन्धित उद्देश्य भी होते हैं। दूसरे कुछ वाक्य ऐसे भी होते हैं जो अन्य कई वाक्यों से मिलकर बनते हैं। ऐसे वाक्य जो मिलकर एक पूरा वाक्य बनाते हैं, उपवाक्य कहे जाते हैं। जैसे—'यदि मैं परिश्रम करता, तो उत्तीर्ण हो जाता' एक पूरा वाक्य है, जो 'यदि मैं परिश्रम करता, तो उत्तीर्ण हो जाता' दो उपवाक्यों से मिलकर बना है।

प्रत्येक मिश्र वाक्य में एक ऐसा उपवाक्य अवश्य होता है, जो मुख्य होता है। अन्य उपवाक्य इसकी व्याख्या मात्र होते हैं ऐसे मुख्य उपवाक्य को 'प्रधान उपवाक्य तथा अन्य उपवाक्यों को अधीन उपवाक्य' कहते हैं जैसे—उक्त वाक्य में 'उत्तीर्ण' हो जाता 'प्रधान उपवाक्य' तथा यदि मैं 'परिश्रम करता' अधीन उपवाक्य है।

ऐसे वाक्य जिनमें एक प्रधान उपवाक्य तथा एक या अधिक अधीन उपवाक्य होते हैं। मिश्रित वाक्य कहे जाते हैं। जैसे—उक्त वाक्य।

ये अधीन उपवाक्य कभी संज्ञा का काम नहीं करते हैं। कभी विशेषण का तथा कभी क्रिया विशेषण का, अतः इनके ३ भेद हैं।

१—संज्ञा उपवाक्य (Noun Clause)

२—विशेषण उपवाक्य (Adjective Clause)

३—क्रिया विशेषण उपवाक्य (Adverbial Clause)

संज्ञा उपवाक्य—यह उपवाक्य है, जो प्रधान उपवाक्य की संज्ञा अथवा कारक के रूप में सहायता करे। यह संज्ञा का कार्य करता है। अर्थात्—

१—किसी क्रिया का कर्त्ता—'गाँधी जी सच्चे अहिंसावादी थे,' अक्षरशः सत्य है। यहाँ 'गांधी जी सच्चे अहिंसावादी थे' उपवाक्य दूसरे उपवाक्य में आई हुई 'है' क्रिया का कर्त्ता है।

२—किसी क्रिया का कर्म—'सब कोई जानता है कि पं० नेहरू एक आदर्श नेता थे' यहाँ पं० नेहरू एक 'आदर्श नेता थे' उपवाक्य 'जानता है' क्रिया का कर्म है।

३—किसी अपूर्ण क्रिया का पूरक—'विद्वानों का मत है कि सत्य की सर्वदा विजय होती है।' यहाँ 'सत्य की सर्वदा विजय होती है' उपवाक्य 'है' क्रिया का पूरक है।

४—किसी संज्ञा अथवा सर्वनाम का समान कारक—'यह कथन कि धीर भी आपत्ति में धर्म से विचलित हो जाते हैं, विश्वसनीय नहीं है' यहाँ धीर भी आपत्ति में धर्म से विचलित हो जाते हैं' उपवाक्य 'कथन' का 'समान कारक' है, क्योंकि 'यह कथन' के स्थान पर इस वाक्य को रखने से भावार्थ पूरा हो जाता है।

विशेष—१—अधिकतर संज्ञा उपवाक्य 'कि' से आरम्भ होते हैं किन्तु यदि 'कि' वाले उपवाक्य से सम्बन्धित उपवाक्य में इतना का प्रयोग होता है तो 'कि' से आरम्भ होने वाला उपवाक्य संज्ञा उपवाक्य न होकर क्रिया—विशेषण उपवाक्य होता है। जैसे 'तुमने उसे इतना पीटा कि उसके मुँह से रक्त बह निकला' में द्वितीय उपवाक्य क्रिया विशेषण उपवाक्य नहीं है।

२—कभी कभी 'कि' शब्द 'अथवा' के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है, अतः ऐसे स्थान

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर 'कि' वाला उपवाक्य 'समानपदी' होता है, संज्ञा उपवाक्य नहीं जैसे—'तुम रोटी खाते हो, कि नहीं' में 'कि नहीं' का अर्थ 'अथवा' नहीं खाते हो, अतः वह समानपदी है।

३—यदि संज्ञा उपवाक्य कर्त्ता कारक के रूप में सम्बन्ध क्रिया से पूर्व प्रयुक्त होता है, तो 'कि' का प्रयोग नहीं होता। जसे—गाँधी जी सच्चे अहिंसावादी थे, अक्षरशः सत्य है।

४—कभी कभी 'कि' प्रश्न आदि में छिपा भी रहता है। जैसे—मैंने कहा 'चुप रहो' (आज्ञा)। राम ने पूछा, 'तुम कहां जाते हो'? (प्रश्न)

विशेषण उपवाक्य—जो उपवाक्य किसी दूसरे उपवाक्य में आये संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता प्रकट करता है वह विशेषण उपवाक्य होता है। पूरे वाक्य में इसका वही काम होता है, जो साधारण वाक्य में किसी विशेषण का होता है। जैसे—'वह विद्यार्थी, जो कल कक्षा में अनुपस्थित था, बीमार है' यहाँ 'वह विद्यार्थी बीमार है' उपवाक्य में वह विद्यार्थी का भावार्थ तब तक समझ में नहीं आता, जब तक कि जो कल कक्षा में अनुपस्थित था, न कहा जाय। इस प्रकार 'जो कल कक्षा में अनुपस्थित था' विशेषण उपवाक्य है क्योंकि यह 'वह विद्यार्थी' की विशेषता प्रकट करता है।

यह आवश्यक नहीं है कि विशेषण उपवाक्य प्रधान उपवाक्य में आये हुए ही किसी शब्द की विशेषता प्रकट करे। आवश्यकतानुसार यह अन्य उपवाक्यों में आये हुए शब्दों की भी विशेषता प्रकट करता है। जैसे—मैंने कहा कि तुमने उस विद्यार्थी को पीटा है जो कक्षा में सदैव शाँत रहता है। यहाँ 'जो कक्षा में सर्वदा शान्त रहता है' विशेषण उपवाक्य 'तुमने उस विद्यार्थी को पीटा है' में आये हुए विद्यार्थी शब्द की विशेषता प्रकट करता है।

विशेषण उपवाक्य के आरम्भ में 'जो' सम्बन्ध वाचक सर्वनाम आता है। कभी कभी 'जो' के स्थान पर 'जैसे' 'जितना' भी आ जाते हैं।

क्रिया विशेषण उपवाक्य—जो उपवाक्य किसी क्रिया की विशेषता बताते हैं उन्हें क्रिया विशेषण उपवाक्य कहते हैं। ये उपवाक्य क्रिया का समय स्थान, कारण, प्रयोजन, परिमाण आदि बताते हैं। इनका आरम्भ 'जब जहाँ' क्योंकि जिससे, अतः यदि, अगर, यद्यपि, चाहें, जो, त्यों त्यों मानो आदि' से होता है। जैसे—

जब पानी बरसे, तुम खेत जोत डालना। **समय**

जहाँ सज्जनों का आदर होता है, वहाँ लक्ष्मी निवास करती है। **स्थान**

मैं स्कूल नहीं जाऊँगा, क्योंकि मुझे ज्वर आ गया है। **कारण**

मुझे मेरे रुपये दे दो, जिससे कि मैं व्यापार कर सकूँ। **प्रयोजन**

उसने कठिन परिश्रम न किया, अतः वह परीक्षा में उत्तीर्ण न हो सका। **परिणाम**

यदि राम यहाँ आयेगा, तो मैं अवश्य जाऊँगा। **शर्त**

राम ऐसा ही चतुर है, जैसे कि तुम हो। **तुलना**

जितना-जितना वह धनवान होता जाता है, उतना-उतना वह कृपण होता जाता है। **मर्यादा**

जैसे—जैसे मैं बोलू, वैसे वैसे तुम लिखो। **प्रकार**

विशेष—अधिकतर दो उपवाक्य 'कि' सो' आदि शब्दों से आपस के जुड़े रहते हैं। दो उपवाक्यों को मिलाने वाले इन्हीं शब्दों को संयोजक कहा जाता है। जैसे—मैं जानता हूँ कि तुम एक चतुर बालक हो में 'कि'।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१—ऐसा उपवाक्य, जो आवश्यक होते हुए भी अपने साथ आये हुये उपवाक्यों से किसी प्रकार भी सम्बन्ध नहीं होता 'गर्भित उपवाक्य' कहा जाता है। जैसे—'मोहन ने कहा अधिकतर मनुष्य कहा करते हैं कि आजकल तो सत्य के उपासकों की सर्वथा अवनति होती है, यद्यपि उनका ऐसा कहना असत्य ही है, और असत्य के भक्त सर्वाङ्गीण उन्नति करते हैं।' में 'यद्यपि उनका ऐसा कहना असत्य ही है,' गर्भित उपवाक्य है।

मिश्रित-वाक्य का वाक्य-विश्लेषण

मिश्रित वाक्य का वाक्य—विश्लेषण दो प्रकार से होता है—

१—**विस्तृत वाक्य विश्लेषण**—वह विश्लेषण है, जिसमें प्रत्येक उपवाक्य का साधारण वाक्यों की भाँति उद्देश्य तथा विधेय आदि विभागों में विभाजन किया जाता है। तथा उपवाक्यों के पारस्परिक सम्बन्ध का विवरण दिया जाता है।

२—**संक्षिप्त वाक्य विश्लेषण**—वह विश्लेषण है, जिसमें केवल उपवाक्य का पारस्परिक सम्बन्ध ही दिखाया जाता है।

विशेष १—साधारण वाक्य की तरह अन्य वाक्य के वाक्य-विश्लेषण में भी पद्य का अन्वय कर लेना चाहिए।

२—वाक्य विश्लेषण करते समय अर्थ पूर्ति के लिए आवश्यक शब्दों को अपनी तरफ से मिलाकर वाक्य को पूरा कर लेना चाहिये, तथा ऐसे शब्दों को कोष्टक में लिख लेना चाहिए।

जैसे—'न मैं समझता हूँ न तुम' को 'न मैं समझता हूँ (और) न तुम (समझते हो।)' लिखा जायगा।

३—वाक्य-विश्लेषण करते समय ' ' का प्रयोग कर वाक्य को अधूरा न लिखकर पूरा ही रखना चाहिए। अर्थात 'राम रोटी खाता है'-वाक्यों को 'राम खाता है' न लिखकर 'राम रोटी खाता है' ही लिखना उचित है।

मिश्रित वाक्य का विस्तृत वाक्य विश्लेषण करने की रीति पृष्ठ ५२, ५३ के चित्र से स्पष्ट हो जायगी।

संक्षिप्त-वाक्य विश्लेषण (मिश्रित वाक्य)

१—समता ही वह भूमि है जिससे दयालुता, उदारता, विश्व बन्धुता, सर्वात्मीयता आदि दिव्य लताएँ उत्पन्न होती हैं।

(क) समता ही वह भूमि है—प्रधान उपवाक्य।

(ख) जिससे दयालुता, उदारता, विश्वबन्धुता, सर्वात्मीयता आदि दिव्य लताएँ उत्पन्न होती हैं विशेषण उपवाक्य 'क' में आगत 'भूमि' की विशेषता प्रकट करता है।

सम्पूर्ण मिश्रित वाक्य है।

२—**जब हम सुनते हैं कि अनुशासन हीनता के कारण छात्रों को दण्ड दिया गया है, तब हमारा हृदय अनन्त वेदनाओं से भर जाता है।**

(क) तब हमारा हृदय अनन्त वेदनाओं से भर जाता है,—प्रधान उपवाक्य

(ख) जब हम सुनते हैं—**क्रिया-विशषण** उपवाक्य, 'क' में आगत भर जाता है, **क्रिया का समय प्रकट करता है।**

(ग) कि **अनुशासन-हीनता के कारण छात्र को दण्ड दिया गया है,—संज्ञा उपवाक्य 'ख' में आगत 'सुनते हैं' क्रिया का कर्म।**

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विस्तृत वाक्य-विश्लेषण

सम्पूर्ण-वाक्य	उपवाक्य	उपवाक्य का नाम
१—मैं जानता हूँ कि राम का पुत्र एक परिश्रम बालक है।	क—मैं जानता हूँ। ख—कि राम का पुत्र एक परिश्रमी बालक है।	प्रधान उपवाक्य संज्ञा उप०, कर्म कारक 'क' में आगत जानता हूँ, का कर्म।
२—मैं अभी उस मकान को देखकर आया हूँ, जिसे तुमने कल पांच सौ रुपये में खरीदा है।	क—मैं अभी उस मकान को देखकर आया हूँ ख—जिसे तुमने कल पांच सौ रुपयों में खरीदा है।	प्रधान उपवाक्य विशेषण उप०,, 'क' में आगत 'मकान' की विशेषता प्रकट करता है।
३—जब सुरेश यहाँ आयेगा, तुम उसे अपनी पुस्तक दोगे।	क—(तब) तुम उसे अपनी पुस्तक दोगे। ख—जब सुरेश यहाँ आयेगा।	प्रधान उपवाक्य क्रिया विशेषण उप० 'क' में आगत 'दोगे' क्रिया का समय बतलाता है।
४—वह आज नहीं पढ़ेगा, क्योंकि उसका मित्र जारहा है।	क—वह आज नहीं पढ़ेगा। ख—क्योंकि उसका मित्र जा रहा है।	प्रधान उपवाक्य क्रिया विशेषण उप० क-उपवाक्य में आगत नहीं पढ़ेगा क्रि० का कारण दिखाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मिश्रित वाक्य

संयोजक	उद्देश्य		विधेय				सम्पूर्ण वाक्य का नाम
	कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	कर्म और उसका विस्तार	पूरक और उसका विस्तार	क्रिया विशेषण	
	मैं		जानता हूँ				मिश्रित वाक्य
कि	पुत्र	राम का	है		एक परिश्रमी बालक		
	मैं		आया हूँ			अभी उस मकान को देख कर	मिश्रित वाक्य
	तुमने		खरीदा है	जिसे		कुल पांच सौ रुपये में	
	तुम		दो	१—उसे २—अपनी पुस्तक		(तब)	मिश्रित वाक्य
	सुरेश		आयेगा			१—जब २—यहाँ	
	वह		पढ़ेगा			आज नहीं	मिश्रित वाक्य
क्योंकि	मित्र	उसका	जा रहा है				

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सम्पूर्ण मिश्रित वाक्य है।

३—अगम सनेह भरत रघुवर को, जहँ न जाय मन विधि हरि हर को। (अन्वय) भरत रघुवर को सनेह-अगम (है) तहँ विधि हरि हर को मन न जाय।

(क) भरत रघुवर को सनेह-अगम है—प्रधान उपवाक्य।

(ख) जहँ विधि हरि हर को मन न जाय—क्रिया विशेषण उपवाक्य 'क' में आता 'है' क्रिया का स्थान प्रकट करता है। सम्पूर्ण मिश्रित वाक्य है।

३—संयुक्त अथवा संसृष्ट वाक्य (Compound Sentence)

संयुक्त या संसृष्ट वाक्य—वह वाक्य है; जो दो या अधिक ऐसे प्रधान उपवाक्यों से बनता, जो स्वतन्त्र रूप से अपना अलग अलग अर्थ रखते हैं। जैसे—'राम आया और मैं गया।' में दोनों उपवाक्य अपना अपना स्वतन्त्र अर्थ रखते हैं। और वे एक दूसरे के अधीन नहीं हैं, अतः यह संयुक्त वाक्य है।

संयुक्त उपवाक्यों का प्रथम उपवाक्य प्रधान उपवाक्य तथा अन्य समान स्वतंत्र उपवाक्य अथवा समानपदी उपवाक्य कहलाते हैं।

संयुक्त वाक्य साधारण तौर से अर्ध विराम (;) तथा निम्न समुच्चय बोधक अव्ययों से जुड़े रहते हैं।

(१) संयोजक—और, तथा, एवम्, पुनः, फिर।

(२) विभाजक—या, अथवा, किंवा, चाहे, न, नकि, नहीं तो।

(३) विरोध दर्शक—अपितु, पर, प्रत्युत, परन्तु, किन्तु, लेकिन, मगर, वरन्, बल्कि।

(४) परिणाम दर्शक – इसलिये, सो, अतः, अतएव, अस्तु।

संकेतवाचक में आने वाले—जो, तो, यद्यपि, चाहें, तथापि और व्याख्या वाचक अर्थात्, जैसे, मनु मानो, जिमि, आदि भी संयुक्त वाक्यों को जोड़ते हैं।

संयुक्त वाक्य का प्रधान उपवाक्य तथा समानपदी उपवाक्य भी अपने अपने आधीन उपवाक्य रखते हैं। ऐसे वाक्यों का वाक्य-विश्लेषण करते समय 'वाक्य-भेद' निर्धारण करने में विशेष सावधानी रखनी चाहिए। सार यह है कि यदि किसी वाक्य में 'प्रधान उपवाक्य' का एक भी समानपदी हो, तो वह वाक्य 'संयुक्त वाक्य' ही होता है, आश्रित उपवाक्यों की एक बड़ी संख्या भी उसमें कोई अन्तर नहीं डाल सकती। जैसे 'राम ने वह पुस्तक उठा ली, जो मैंने कल बाजार से लाया था; और उसे उस लड़के को दे दिया, जिसने देहली वाक् प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया था, क्योंकि वह एक निर्धन बालक है और उसे उसकी आवश्यकता थी।' में प्रधान उपवाक्य 'राम ने वह पुस्तक उठाली' का और 'उसे उस लड़के को दे दिया' उपवाक्य एक समानपदी उपवाक्य है। इसी वाक्य में चार अन्य ऐसे उपवाक्य भी हैं जो या तो प्रधान उपवाक्य के आश्रित हैं या उसके समानपदी के। किन्तु प्रधान उपवाक्य का एक समानपदी उपवाक्यी होने के कारण यह वाक्य एक संयुक्त वाक्य ही है।

समानपदी उपवाक्य को पहचानने के बाद यह भी जानना आवश्यक है कि वह किस उपवाक्य का समानपदी है, क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि वह प्रधान उपवाक्य का ही समानपदी हो। अधीन या आश्रित उपवाक्यों के भी समान पदी हुआ करते हैं, तथा वे भी इन्हीं 'संयोजकों' द्वारा जुड़े रहते हैं, जिनसे कि प्रधान उपवाक्य का समानपदी जुड़ता है। ये उपवाक्य उसी प्रकार के होते हैं। जिस प्रकार का कि वह उपवाक्य होता है, जिनके कि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ये समानपदी हैं। 'जैसे—'पिता जी ने कहा कि चुप रहो, और बैठ जाओ' में 'बैठ जाओ' 'चुप रहो' का समानपदी है। 'चुप रहो' संज्ञा उपवाक्य है, अतः 'बैठ जाओ' भी संज्ञा उपवाक्य होगा। किन्तु यह निर्णय करना कि 'समानपदी उपवाक्य' किसका समानपदी है कभी कभी अत्यन्त कठिन हो जाता है क्योंकि समानपदी कभी कभी अपना सम्बन्ध उपवाक्य से दूर भी पड़ जाता है। जैसे—ऊपर आये हुए 'राम ने वह पुस्तक उठाली' वाक्य में प्रधान उपवाक्य से उसका समानपदी दूर पर है, ऐसे स्थान पर 'समानपदी उपवाक्य' को अपने संयोजक सहित अपने से ठीक पहले आने वाले उपवाक्य के अतिरिक्त उन अन्य उपवाक्यों में से एक के साथ-लगाकर पढ़ते हैं, जो उससे पहले आये हैं। यदि अर्थ बिल्कुल ठीक रहता है और उनमें कोई भ्रमपूर्ण बात उत्पन्न नहीं होती, तो वह वाक्य इस प्रकार जोड़े हुये उपवाक्य का ही समानपदी होता है, अन्यथा।

विस्तृत वाक्य-विश्लेषण

सम्पूर्ण वाक्य	उपवाक्य	उपवाक्य का नाम और सम्बन्ध
१—आइए, बैठिए	क-(आप आइये, ख-(और आप) बैठिए।	प्रधान उपवाक्य 'क' का समानपदी
२—आज लिखो चाहे कल, पर तुम्हें उस पत्र का उत्तर अवश्य लिखना पड़ेगा, जो परसों काशी से आया है।	क-(तुम) आज लिखो। ख-चाहे (तुम) कल लिखो। ग-पर तुम्हें उस पत्र का उत्तर अवश्य लिखना पड़ेगा। घ-जोपरसों काश ग आया है।	प्रधान उपवाक्य 'क' का समानपदी 'क' का समानपदी विशेषण उप० 'ग' आगत 'पत्र' की विशेषता प्रकट करता है।
३—कलकत्ते की पुलिस ने चोरों को पकड़ा और उसने कहा कि तुमने बहुत सी चोरियाँ की हैं और सदा गरीबों को सताया है।	क-कलकत्ते की पुलिस ने चोरों को पकड़ा। ख-और (उसने) उनसे कहा। ग-कि तुमने बहुत सी चोरियाँ की हैं। घ-और (तुमने) सदा गरीबों को सताया है।	प्रधान उपवाक्य 'क' का समानपदी संज्ञा उपवाक्य 'ख' में आगत 'कह' का कर्म ' ' का समानपदी
४—मैं बूढ़ा हो गया हूँ, तथापि उस गाड़ी को सरलता से खींच सकता हूँ, जिसके खींचने में तुम हाँफ गए हो।	क-मैं बूढ़ा हो गया हूँ। ख-तथापि मैं उस गाड़ी को सरलता से खींच सकता हूँ। ग-जिसके खींचने में तुम हाँफ गए हो।	प्रधान उपवाक्य 'क' का समानपदी विशेषण उप० 'ख' में आगत गाड़ी की विशेषता प्रकट करता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संयुक्त वाक्य

संयोजक	उद्देश्य		विधेय				सम्पूर्ण वाक्य का नाम
	कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	कर्म और उसका विस्तार	पूरक और उसका विस्तार	क्रिया विशेषण	
और	(आप) (आप)		आइए बैठिए				संयुक्त वाक्य
चाहे पर	(तुम) (तुम) तुम्हें जो		लिखो लिखो लिखना पड़ेगा आया है	उस पत्र का उत्तर		आज-कल अवश्य परसों काशी से	संयुक्त वाक्य
और कि (और)	पुलिस ने उसने तुमने (तुमने)	कलकत्ते की	पकड़ा कहा की हैं सताया है	चोरों को उनसे बहुत सी चोरियाँ गरीबों को		सदा	संयुक्त वाक्य
तथापि	मैं (मैं) तुम		हो गया हूँ खींच सकता हूँ हाँफ गये हो	उस गाड़ी को	बूढ़ा जिसके खींचने में	सरलता	संयुक्त वाक्य

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वह उसी उपवाक्य का समानपदी होता है, जिसके बाद वह आता है। जैसे—

'यद्यपि मैंने निषेध किया, तथापि राम ने वह पुस्तक उठाली, जो मैं कल बाजार से लाया था और उसे मोहन को दे दिया' में 'और उसे मोहन को दे दिया' निश्चय ही एक समानपदी उपवाक्य है, क्योंकि यह 'और' से जुड़ा है। इसमें ठीक पहले आने वाले उपवाक्यों के अतिरिक्त दो अन्य उपवाक्य भी हैं। अब विचार करना है कि यह किसका समानपदी है ? हमने उक्त नियमानुसार उपवाक्यों से जोड़ा 'यद्यपि मैंने निषेध किया और उसे मोहन को दे दिया' 'क्या दे दिया ?' कुछ नहीं, बिल्कुल असंगत। कोई भी अर्थ समझ में नहीं आता, अतः यह इसका समानपदी नहीं है।

अब हमने इस उपवाक्य को 'जो मैं कल बाजार से लाया था' में जोड़ा और पढ़ा 'जो मैं कल बाजार से लाया था और मोहन को दे दिया' अर्थ फिर भी स्पष्ट नहीं हुआ। अब हमने राम ने वह पुस्तक उठाली और उसे मोहन को दे दिया' पढ़ा। अर्थ एक दम स्पष्ट है और हमारा हृदय कहता है कि यह इसी का समानपदी है, अन्य किसी का नहीं।

संयुक्त वाक्य का वाक्य विश्लेषण भी मिश्रित वाक्यों की भांति विस्तृत रूप तथा संक्षिप्त रूपों दोनों प्रकार से होता है।

संयुक्त वाक्य का विस्तृत विश्लेषण करने की विधि अग्रिम विश्लेषण से स्पष्ट हो जायगी।

संक्षिप्त वाक्य विश्लेषण (संयुक्त वाक्य)

१—जगदीश आया, किन्तु वह उस टोपी को न लाया, जिसे मैंने मँगाया था।

क—जगदीश आया-प्रधान उपवाक्य।

ख—किन्तु वह उस टोपी को न लाया—'क' का समानपदी।

ग—जिसे मैंने मंगाया था—विशेषण उपवाक्य 'ख' में आगत 'टोपी' की विशेषता प्रकट करता है। संपूर्ण संयुक्त वाक्य है।

२—जब पानी जोर से बरस रहा था, बिजली कड़की और उस पेड़ पर गिर पड़ी।

(क)—बिजली कड़की—प्रधान उपवाक्य।

ख—जब पानी जोर से बरस रहा था—क्रिया विशेषण उपवाक्य, 'क' में आगत 'कड़की' क्रिया का समय प्रकट करता है।

(ग) और उस पेड़ पर गिर पड़ी—'क' का समानपदी।

सम्पूर्ण संयुक्त वाक्य है।

३—श्याम दौड़ता हुआ आया और बोला कि क्या पिताजी यहाँ आये हैं।

(क) श्याम दौड़ता हुआ आया—प्रधान उपवाक्य।

(ख) और (वह) बोला—'क' का समानपदी।

(ग) कि क्या पिता जी यहाँ आये हैं—सँज्ञा उपवाक्य, कर्म कारक, 'ख' में आगत 'बोला' क्रिया का कर्म।

सम्पूर्ण संयुक्त वाक्य है।

४—भज्यो नहिं मूरख रे भगवान।
करयो नहिं ईश्वर को गुण गान।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्वय—रे मूरख ! (तूने) भगवान नहिं **भज्यौ** (और) (तूने) ईश्वर को गुणगान नहिं करयौ।

(क) रे मूरख ! (तूने) भगवान को नहिं भज्यौ—प्रधान उपवाक्य।

(ख) और तूने ईश्वर को गुणगान नहिं करयौ, 'क' का समानपदी। सम्पूर्ण संयुक्त वाक्य है।

५—इस तथ्य को न मैं जानता था, न तुम।

क—इस तथ्य को न मैं जानता था—प्रधान उपवाक्य।

ख—और न तुम इस तथ्य को जानते थे—'क' का समानपदी।

सम्पूर्ण संयुक्त वाक्य है।

अभ्यास

निम्न वाक्यों का विश्लेषण करो।

१—राम अभी रोटी खा रहा है।

२—कृष्ण चतुर ज्ञात होता है।

३—तुमने उसे रामायण पढ़ाई।

४—इस नगर के निवासी उत्सव के लिए चन्दा इकट्ठा कर रहे हैं।

५—इस स्कूल के प्रधानाध्यापक महोदय इस सभा में एक सुमधुर भाषण देंगे।

६—करीम का पुत्र अब्दुल्ला अत्यन्त चतुर बालक है।

७—श्री गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरित मानस को पढ़कर प्रत्येक सहृदय पुरुष स्वयं ही राममय हो जाता है।

८—सुमधुर कण्ठ से गाती हुई बालिका की मृदुध्वनि ने आनन्द कन्द श्रीकृष्णचन्द्र के ध्यान में लगे हुए भक्त का ध्यान भी अपनी ओर आकृष्ट कर लिया।

९—वाक्य विच्छेद, पदान्वय और समास विग्रह का पूर्ण ज्ञान कराने के लिए उपयुक्त पुस्तक न होने के कारण, मैंने व्याकरण की उत्तमोत्तम पुस्तकों से तथा योग्य अध्यापकों के परामर्श से प्रस्तुत पुस्तक की रचना की है।

१०—इस असार संसार में दैहिक, दैविक, भौतिक तापों से सतत् सन्तप्त पुरुषों के लिए भवभीति विमोचन, घनश्याम के चरण ही पीयूषवर्षी घनश्याम हैं।

११—जो मनुष्य अपना समय व्यर्थ नहीं खोते, सफलता उनका वरण करती है।

१२—जीवन एक संग्राम है और हमें वीरता से लड़ना है।

१३—यदि मुझे ज्ञात होता कि तुम ऐसा सुन्दर लेख लिख सकते हो तो तुम्हें इस पत्र का सम्पादक बना देता।

१४—यद्यपि कृष्ण ने महाभारत संग्राम में शस्त्र ग्रहण न करने की प्रतिज्ञा की थी, तथापि अर्जुन ने उनको ही चुना और उस वीर सेना को न लिया, जो सर्व प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित थी।

१५—अर्जुन ने कहा कि मैं उस जयद्रथ को कल सूर्य छिपने से पहले ही मार डालूंगा, जो अभिमन्यु वध का प्रधान कारण है।

१६—बलिहारी, तुम्हारे चरणों पर, मैं अपनी लालसा के फूल चढ़े देख रहा हूँ,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुम्हारे पाद-पद्मों पर अपनी कटोरियों का मधु भी छिड़का हुआ पाता हूँ और तुम्हारी अँगूठी में मेरा वह चुराया हुआ मन मानिक भी जुड़ा हुआ है।

१७—मैंने कहा, इस नाले का प्रयास वैसा ही है, जैसे मेरी साँस का, जो सारे शरीर में उग्र रूप से प्रवाहित है।

१८—प्यास के मारे कण्ठ चिपक रहा है, जीभ तालु से सट गई; घर में कुँए का ठण्डा जल था, उसे छोड़ अमृत के लोभ में निकला, तो प्यास पल्ले पड़ी।

१९— मूर्ति जो थी बीच में लटकी हुई।
देखकर महमूद संशय से भरा॥
दृश्य है या और कुछ ही जाल है।
है न क्यों अब खींचती इसको धरा॥

२०— जो सम्पत्ति शिव रावनहिं दीन्ह दिए दशमाथ।
सो सम्पदा विभीषणहिं, सकुचि दीन्ह रघुनाथ॥

२१—भगवद्गीता में लिखा है कि आरम्भ में जो विष तुल्य और अन्त में अमृत के समान है, वही सात्विक सुख है। (वर्नाक्यूलर फाइनल परीक्षा उत्तर प्रदेश, १९४२)

२२—यह मेरा सौभाग्य है कि ऐसे गाढ़े समय में, जबकि लोग पास नहीं फटकते, आपने मेरी बड़ी सहायता की है। (उक्त, १९४३)

२३—सच तो यह है कि यदि पापों की उपेक्षा की जाय, तो समाज में अनाचार फैल जाय और लोग स्वेच्छाचारी हो जांय। (उक्त, १९४४)

२४—अपने मित्र को सूचना दे दीजिए और समझा दीजिए कि मेरे घर आतिथ्य स्वीकार करने में उन्हें कोई आपत्ति न होनी चाहिए। (उक्त, १९४५)

२५—मैं थोड़ी ही देर में आपका रथ एक ऐसे स्थान पर पहुँचाये देता हूँ, जहाँ से आप उन पर सुगमतापूर्वक अस्त्र वर्षा कर सकेंगे। (उक्त, (१९४६)

२६—बरसों उसने छान बीन और परिश्रम किया, तब पता लगा कि केंचुआ वास्तव में मनुष्य का उपकारक और सहायक है। (उक्त, १९४७)

२७—आग से निकलने के बाद जी यही चाहता है कि बस कपड़े चीर फाड़कर फेंक दें परन्तु ऐसा करने से शरीर की गर्मी जो इस समय बहुत-अधिक है, शीघ्र कम हो जावेगी और मृत्यु का रोकना कठिन हो जावेगा। (उक्त, १९४८)

२८—हमारे यहाँ बिजली का प्रयोग बहुत कम होता है, फिर भी बिजली की रोशनी जलती है, परन्तु बहुत कम विद्युत शक्ति के स्वरूप को समझते हैं। (उक्त, १९४९)

२९—मेरा मित्र कमलकुमार कल मेरे पास आया और बोला, आज स्वतन्त्रता दिवस का उत्सव मनाया जा रहा है। (उक्त, १९५०)

३०—पुरुषार्थ ही सफलता की कुंजी है, जिसके सहारे मनुष्य असाधारण कार्य कर सकता है; और सदा यह विश्वास रखता है कि वह ही अपने भाग्य का विधाता है। (उक्त, १९५१ पूरक)

३१—तुमको निःसन्देह भलाई की आशा रखनी चाहिए, क्यों क तुमने ऐसी निर्दयी मां को मारा और ऐसे घोर कष्ट से बच्चों को छुड़ाया।
(हाई स्कूल परीक्षा, उत्तर प्रदेश १९३९)

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३२—सच तो यह है कि जो ऐसे अपराध क्षमा किये जाँय, तो संसार के सारे काम बिगड़ जाँय और लोग ईश्वर से न डरा करें। (उक्त १९४०)

३३—प्राय: देखने में आता है कि गाँव से जो लोग नगरों में जीविका आदि के लिए आते हैं उनका जी बहुत दिन तक संगी साथी न रहने से बहुत घबराता है और कभी उन्हें ऐसे लोगों का साथ कर लेना पड़ता है, जो उनकी रुचि के अनुकूल नहीं होते हैं। (उक्त, १९४१)

३४—जिस कवि के जीवन ने हमारे दिलों में अपना घर कर लिया हो, उसकी स्मृति बनाये रखना हमारा परम कर्त्तव्य है। (उक्त, १९४२)

३५—यह प्राय: देखा जाता है कि बहुत से युवक जीवन संग्राम में पुस्तकों का बोझ लादे बिना प्रवेश करते हैं और अपनी व्यावहारिक कार्यशीलता के कारण अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करते हैं। (उक्त, १९४३)

३६—यदि वे युवक जो अपनी जीवन-यात्रा सफल बनाने के इच्छुक हों-उद्योग और संयम का व्रत ले लें, तो साधारण कठिनाइयाँ उनके मार्ग में विशेष बाधा नहीं डाल सकतीं। (उक्त, १९४४)

३७—यद्यपि विशाल मन्दिर ही भगवान की पूजा के स्थान माने जाते हैं, परन्तु वास्तव में भगवान दीन के हृदय में ही निवास करते हैं। (उक्त, १९४५)

३८—सुन्दर पदार्थ अपनी सुन्दरता पर चाहे जितना मान करे, किन्तु असुन्दर पदार्थों की स्थिति में ही वह सुन्दर कहलाता है। (उक्त, १९५०)

३९—वस्तुत: यथार्थ मनुष्य वही है जो मानवता का आदर करना जानता है, और कर सकता है। (उक्त, १९५३)

४०—इस पदार्थ चिन्तन में मनुष्य का कल्याण है, अतएव यदि यह कहा जाय कि पदार्थ चिन्ता हमारी उच्च कोटि की स्वार्थ चिन्ता ही है, तो यह सर्वथा उचित है। (उक्त, १९५४)

४१—जो परिश्रम से कार्य करते हैं, वे परीक्षा में अवश्य उत्तीर्ण होते हैं। (उक्त, १९५६)

४२—जो लोग क्षणभंगुर शरीर और चंचल लक्ष्मी का मोह नहीं रखते, वे देवत्व प्राप्त करके अमर कीर्ति के अधिकारी होते हैं। (बिहार १९६०)

४३—मैंने इस कार्य में बहुत उद्योग किया है, इसलिए मुझे सफलता की पूरी आशा है, किन्तु अन्तिम निर्णय ईश्वर के हाथ में है। (बिहार १९६२S)

सांकेतिक उत्तर (११—४३)

११—क—सफलता—वरण करती है—प्रधान उपवाक्य। ख—जो—खोते—विशेषण उपवाक्य। मिश्रित वाक्य।

१२—क—जीवन···है-प्रधान उप०। ख—और हमें लड़ना है—समान पदी। संयुक्त वाक्य।

१३—क—तो तुम्हें ही···बना देता—प्रधान उप०। ख—यदि···ज्ञात होता—क्रिया—विशेषण उप०। ग—कि···सकते हो, संज्ञा उप० 'ख' में आगत 'ज्ञात होता' का कर्म। मिश्रित वाक्य।

१४—क—अर्जुन····चुना—प्रधान उप०। ख—यद्यपि प्रतिज्ञा···की थी क्रिया-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विशेषण उप० । ग—और···न लिया—प्रधान उप० का समान पदी । घ—जो···थी—विशेषण उप०, 'ग' में आगत 'सेना' का विशेषण । संयुक्त वाक्य ।

१५—क—अर्जुन ने कहा—प्रधान उप० । ख—कि···मार डालूँगा—संज्ञा प०, 'क' में आगत 'कहा का' कर्म । ग—जो कारण है—विशेषण उप०, 'ख' में आगत 'जयद्रथ' का विशेषण । मिश्रित-वाक्य ।

१६—क—(मैं तुम पर) बलिहारी (हूँ)—प्रधान उप० । ख—क्योंकि मैं····देख रहा हूँ क्रिया-विशेषण उप०, 'क' के अधीन । ग—(और) तुम्हारे पाता हूं—'ख' का समान-पदी । घ—और···जुड़ा हुआ—'ख' का समानपदी । मिश्रित वाक्य ।

१७—क—मैंने कहा—प्रधान उप० । ख—इस···वैसा ही—संज्ञा उप० 'क' के आधीन । ग—जैसा···साँस का है-विशेषण उप० 'ख' में आगत 'प्रयास' का विशेषण । घ—जो चल रही है विशेषण उप० 'ग' में आगत 'सांस' का विशेषण । मिश्रित वाक्य ।

१८—क—प्यास···चिपक गया है-प्रधान उप० । ख—जीभ तालू से सट गई है—'क' का समानपदी । ग—घर में कुएँ का ठंडा जल था, 'क' का समानपदी । घ—उसे···निकला—विशेषण उप० 'ग' में आगत 'जल' का विशेषण । ङ—तो प्यास····पड़ी—क्रिया-विशेषण उप०, परिणाम-दर्शक, 'घ' के अधीन । संयुक्त वाक्य ।

१९—(अन्वय) जो मूर्ति बीच में लटकी हुई थी (उसे) देखकर महमूद संशय से भरा (कि) यह दृश्य है या और कुछ ही जाल है, इसको धरा अब क्यों न खींचती है । क—उसे देखकर महमूद······भरा—प्रधान उप० । ख—जो···थी विशेषण उप०, 'क' में आगत 'उसे' का विशेषण । ग—यह दृश्य है—'ख' में आगत संशय का कारक । घ—या·······जाल है—'ग' का समानपदी । ङ—इसको···खींचती है—'ग' का समानपदी । मिश्रित वाक्य ।

२०—(अन्वय) जो सम्पति शिव रावनहिं दशमाथ दिए, दीन्ह सो सम्पदा रघुनाथ विभीषणहिं दीन्ह सकुचि रघुनाथ । क—सो सम्पदा सकुचि दीन्ह-प्रधान उप० । ख—जो दिए—विशे० उप० । 'क' में आगत 'सम्पदा' की विशेषता बताता है । मिश्रित वाक्य ।

२१—भगवद्गीता में लिखा है—प्रधान उप० । ख—कि वही सात्विक सुख है—संज्ञा उप०, 'क' की 'लिखा है' का कर्म । ग—आरम्भ में·········समान है वि० उप०—'ख' के 'सुख' का विशे० । घ—और·······समान है—'ग' का समान पदी । मिश्रित वाक्य ।

२२—क—यह सौभाग्य है—प्रधान० उप० । ख—कि ऐसे गाढ़े समय में आपने मेरी बड़ी सहायता की है—संज्ञा उप०, 'क' के अधीन । ग—जबकि लोग पास नहीं फटकते—विशे० उप०, 'ख' में आगत 'समय' का विशे० । मिश्रित वाक्य ।

२३—क—सच तो यह है—प्रधान उप० । ख—तो···फैल जाय—संज्ञा उप०, 'क' में आगत 'यह' का समान कारक । ग—और·········हो जाँय—'ख' का समानपदी । घ—यदि······की जाय—क्रिया वि० उप० 'ख' 'ग' के अधीन । मिश्रित वाक्य ।

२४—क—अपने ··· ··· दीजिये—प्रधान उप० । ख—और······दीजिए 'क' का समानपदी । ग—कि··········होनी चाहिए संज्ञा उप० 'ख' में आगत 'यह' का समान कारक । संयुक्त वाक्य ।

२५—क—मैं·······पहुँचाये देता हूँ प्रधान उप० । ख—जहाँ·····सकोगे—विशे० उप० । मिश्रित वाक्य ।

२६—क— बरसों······परिश्रम किया —प्रधान उप० । ख—तब······लगा—

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'क' का समानपदी । ग—कि केंचुआ............सहायक है—संज्ञा उप० 'ख' के अधीन । संयुक्त वाक्य ।

२७—क—आग से.......चाहता है—प्रधान उप० । ख—कि सब......फेंक दें—संज्ञा उप०, 'क' में आगत 'यही' का समान कारक । ग—परन्तु ऐसा करने से शरीर की गर्मी शीघ्र कम हो जावेगी 'क' का समान पदी । घ—जो.......अधिक है—विशे० उप० 'ग' में आगत गर्मी का विशेषण । ङ—और कठिन हो जावेगा—'ग' का समानपदी । संयुक्त वाक्य ।

२८—क—हमारे.....होता है—प्रधान उप० । ख—फिर भी......जलती है—क्रिया विशे० उप० 'क' के अधीन । ग—परन्तु......समझते हैं—'क' का समानपदी । संयुक्त वाक्य ।

२९—क—मेरा मित्र.......आया-प्रधान उप० । ख—और बोला 'क' का समान-पदी । ग—(क) आज स्वतन्त्रता......मनाया जा रहा है—संज्ञा उप०,' ख' में आगत 'बोला' कर्म । संयुक्त वाक्य ।

३०—क—पुरुषार्थ......है—प्रधान उप० । ख—जिसके-सकता है—विशे० उप०, 'क' में आगत 'पुरुषार्थ' का विशे० । ग—और......रखता है—'विश्वास' का समान कारक । मिश्रित वाक्य ।

३१—क—तुमको......चाहिए—प्रधान उप० । ख—क्योंकि......मारा—क्रिया वि० उप०, 'क' के अधीन । ग—और......छुड़ाया—'ख' का समानपदी-मिश्रित वाक्य ।

३२—क—सच......है- प्रधान उप० । ख—तो संसार......जाँय-संज्ञा उप० 'क' में आगत 'यह' का समान कारक । ग—और...डरा करें—'ख' का समानपदी । घ—जो.........किये जाँय—क्रिया वि० उप०, 'ख' तथा 'ग' के अधीन । मिश्रित वाक्य ।

३३—क—प्राय: आता है—प्रधान उप० । ख—उनका जी.......घबराता है—संज्ञा उप०, 'क' में आगत 'आता है' का कर्त्ता । ग—और कभी......पड़ता है—'ख' का समानपदी । घ—गाँवों से....आते हैं—विशे० उप० 'ख' तथा 'ग' के अधीन । ङ—जो नहीं होते—विशे० उप० 'ग' में आगत लोगों का विशे० । मिश्रित वाक्य ।

३४—क—उनकी.......कर्त्तव्य है—प्रधान उप० । ख—जिस......लिया हो विशे० उप० 'क' में आगत 'उसकी' का विशे० । मिश्रित वाक्य ।

३५—क—यह......जाता है—प्रधान उप० । ख—कि.......करते हैं—संज्ञा उप०, 'क' में आगत यह का समान कारक । ग—और......लेते हैं—'ख' का समानपदी । मिश्रित वाक्य ।

३६—क—तो......डाल सकती-प्रधान उप० । ख—यदि वे युवक उद्योग और संयम का व्रत ले लें—क्रिया वि० उप० 'क' के अधीन । ग—जो अपनी..... इच्छुक हों विशे० उप०, 'ख' में आगत 'युवक' का विशे० । मिश्रित वाक्य ।

३७—क—परन्तु....करते हैं—प्रधान उप० । ख—यद्यपि....जाते हैं—क्रिया वि० उप० । मिश्रित वाक्य ।

३८—क—सुन्दर......करे—प्रधान उप० । ख—किंतु.......कहलाता है—'क' का समानपदी । संयुक्त वाक्य ।

३९—क—वस्तुत.......वही है—प्रधान उप० । ख—जो.......जानता है—विशे० उप० 'क' में आगत 'मनुष्य' का विशे० । ग—कर सकता है—'ख' का समानपदी । मिश्रित वाक्य ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

४०—क—इस……कल्याण है—प्रधान उप० । ख—अतएव……तो यह सर्वथा उचित है—'क' का समानपदी । ग—यदि यह कहा जाय—क्रिया वि० उप०, 'ख' के अधीन । घ—कि पदार्थ—चिन्ता ही है—संज्ञा उप०, 'ग' में आगत 'यह' का समानपदी । संयुक्त वाक्य ।

४१—क—वे…होते हैं—प्रधान उप । (ख) जो...करते हैं—विशे० उप०, 'क' में आगत 'वे' का विशे० । मिश्रित वाक्य ।

४२—क—वे देवत्व प्राप्त….हैं—प्रधान उप० ।

ख—जो लोग……नहीं रखते—विशेषण उप० 'क' में आगत 'वे' का विशेष्य । मिश्रित वाक्य ।

४३—क—मैंने इस कार्य…किया है—प्रधान उप० ।

ख—इसलिए…आशा है 'कि'—का समानपदी ।

ग—किन्तु…हाथ में है 'ख' का समानपदी । संयुक्त वाक्य ।

विशेष—ऊपर स्थान संकोच के कारण'….' का प्रयोग किया गया है, पर छात्रों को पूरा वाक्य ही लिखना चाहिए ।

विराम-चिन्ह

बोलते या बातचीत करते समय हम शब्दों को एक ही गति से नहीं बोलते बल्कि बीच-बीच में कुछ रुकते जाते हैं । कहीं एक क्षण को रुकते हैं, तो कहीं आधे-क्षण को । इसी रुकने को 'विराम' कहा जाता है । 'विराम' का शाब्दिक अर्थ है, रुकावट, ठहराव, अथवा विश्राम । लिखते समय इन रुकने की जगह पर कुछ चिह्नों को लगाते हैं । इन्हीं चिह्नों को 'विराम चिह्न' कहा जाता है ।

विराम चिह्नों के प्रयोग से लेखक के विचार सरलता से और ठीक-ठीक समझ में आ जाते हैं । इनके प्रयोग से भाषा में वाक्य, वाक्यांश अथवा शब्द सुगठित से प्रतीत होते हैं । अत्यन्त बड़े मिश्रित अथवा संयुक्त वाक्य भी विराम चिह्नों के प्रयोग से सरलता से समझ में आ जाते हैं । इनके प्रयोग से ही अर्थ के ज्ञान में संशय नहीं रहता । अतः वाक्य रचना में विराम-चिह्नों के प्रयोग की अति आवश्यकता रहती है और इसलिए 'विराम चिह्नों' का विचार वाक्य-विचार के ही अन्तर्गत होता है ।

विराम-चिह्नों के प्रयोग में अति सावधानी रखनी चाहिये, क्योंकि इनके प्रयोग भेद से अर्थ में महान् अन्तर आ जाता है । जैसे—

१—पराधीन जो जन, नहीं स्वर्ग, नरक ता हेतु,

२—पराधीन जो जन नहीं, स्वर्ग नरक ता हेतु,

प्रथम वाक्य का अर्थ है कि 'जो मनुष्य पराधीन है उसके लिए स्वर्ग भी नरक है' और दूसरे का अर्थ है 'कि जो मनुष्य पराधीन नहीं उसके लिए नरक (भी) स्वर्ग है ।' यह सब अर्थ भेद केवल 'अल्प विराम' के भिन्न प्रयोग से ही है । यह है विराम चिह्न के प्रयोग की अद्भुत शक्ति ।

मुख्य विराम चिन्ह निम्न प्रकार हैं—

१—अल्प-विराम, २—अर्द्ध-विराम;

३—पूर्ण विराम । ४—प्रश्न-चिह्न ?

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

५—विस्मयादि बोधक चिह्न ! ६—योजक अथवा विभाजन—

७—निर्देशक— ८—कोष्ठक ( )

९—उद्धरण अथवा अवतरण चिह्न ' ' ' '

१०—लोप निर्देशक चिह्न × × × —

११—विवरण चिह्न :— १२—पुनरुक्ति बोधक चिह्न „

१३—हँस पद ∧ १४—तुल्यता सूचक चिह्न =

१५—लाघव-चिह्न ० १६—समाप्ति सूचक चिह्न—:०:—

१—अल्प विराम (,)

अल्प विरामों का प्रयोग निम्न स्थानों पर होता है।

१—यदि एक वाक्य में दो से अधिक शब्द, वाक्यांश, उपवाक्य आदि का प्रयोग समान रूप से होता है तो उनके बीच में अल्प विराम का प्रयोग होता है। कभी-कभी अन्तिम अल्प विराम के स्थान पर 'और' का प्रयोग भी किया जाता है। जैसे—

१—राम, श्याम, मोहन और कृष्ण ने इस चोर कोर पकड़ा। (शब्द)

२—सर्वदा सत्य बोलना, दीनों की सहायता करना, आपत्ति में धैर्य को न त्यागना सज्जनों के प्रधान गुण हैं (वाक्यांश)

३—राम ने मोहन से कहा कि घर जाओ, रोटी खाओ और सो जाओ। (उपवाक्य)

४—यदि सम्बोधन कारक से युक्त शब्द वाक्य के आदि में हो, तो अल्प-विराम उस शब्द के बाद में, और यदि वह वाक्य के मध्य में हो तो अल्प—विराम उसके पहले और बाद में लगता है। जैसे—

१—लड़को, यहाँ आओ।

२—आओ, मोहन, हम तुम्हें समझायें कि वर्षा क्या है ?

३—समान कारक शब्द, समानपदी वाक्य अथवा वाक्यांश को पृथक करने के लिए अल्प-विराम का प्रयोग होता है। जैसे—

१—दशरथ के पुत्र, राम को कौन नहीं जानता।

२—तुम्हारा यह कथन, कि राम असत्य वक्ता है, समझ में नहीं आता।

३—ऐसे उपवाक्य को किसी अन्य वाक्य के मध्य में आना आवश्यक है।

४—कई-क्रिया विशेषण वाक्यांशों के आने पर अल्प विराम का प्रयोग होता है। जैसे—कैकेयी, राजकीय वस्त्राभूषणों को उतार, मलिन वस्त्रों को पहन, कोप भवन में जा लेटी।

५—संज्ञा-उपवाक्य को छोड़ मिश्रित वाक्य के शेष बड़े उपवाक्यों के मध्य में अल्प-विराम का प्रयोग होता है जैसे—राम आज स्कूल में आने में पूर्णतया असमर्थ है, क्योंकि उसे कल रात से जोर का बुखार आ गया है।

६—यदि संज्ञा उपवाक्य मुख्य उपवाक्य से किसी संयोजक के द्वारा नहीं जोड़ा जाता, तो अल्प विराम का प्रयोग होता है। जैसे सत्य की सदा विजय होती है, यह अक्षरशः सत्य है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

७—किसी वाक्य के मध्यगत विशेषण अथवा क्रिया विशेषण उपवाक्य के अन्त और आदि में अल्प विराम का प्रयोग होता है। जैसे—

१—मैंने उस लड़के को, जो रुपये चुरा रहा था, पकड़ लिया।

२—राम ने, जितना वह पढ़ना चाहता था, उसे पढ़ा दिया।

३—वाक्य के जिस स्थान पर किसी शब्द का लोप हो, वहाँ भी अल्प-विराम का प्रयोग होता है। जैसे—मैं गीता पढ़ता हूँ, तुम रामायण और वह महाभारत।

१—अर्ध विराम (;)

अर्ध विराम का प्रयोग अल्प विराम से कुछ अधिक देर रुकने के लिए होता है। यह निम्न स्थानों पर प्रयुक्त होता है—

१—संयुक्त वाक्य के ऐसे उपवाक्यों को जोड़ते समय, जब उनमें कोई विशेष सम्बन्ध न हो जैसे तुमने अति कठिन परिश्रम किया; किन्तु परीक्षा में अनुत्तीर्ण ही रहे।

२—उन पूरे वाक्यों के बीच में, जो विकल्प से अन्तिम वाक्य के साथ आये हुए समुच्चय बोधक के द्वारा जोड़े जा सकते हैं। जैसे—राम उठा, उसने पुस्तकें इकठ्टी कीं, उन्हें झोले में रखा और स्कूल चल दिया।

३—उन कई आश्रित उपवाक्यों के बीच में, जो एक ही प्रधान वाक्य पर अवलम्बित रहते हैं। जैसे—मैंने देखा कि चोर आया, उससे मिट्टी हटाई; दीवाल खोदी और अन्दर घुस गया।

३—पूर्ण विराम (।)

इसका प्रयोग निम्न स्थानों में होता है।

१—प्रत्येक पूर्ण वाक्य के अन्त में। जैसे राम घर जाता है। मोहन आता है।

२—शीर्षक और ऐसे शब्द के बाद जो किसी वस्तु का केवल नाम ही बताये। जैसे—शूर्पणखा रावण सम्वाद, रोटी।

३—चौपाई और प्राचीन छन्दों के अर्ध भाग के बाद। जैसे—तेहि समाज बठे पुनि जाई। हृदय रूप अहमति अधिकाई।

५—प्रश्न चिन्ह (?)

१—यह चिह्न प्रश्नात्मक वाक्य के अन्त में लगाया जाता है, जैसे—तुम क्या करते हो?

१—अनिश्चयात्मक भाव को बताने वाले वाक्य के अन्त में प्रश्न चिह्न लगता है। जैसे—सम्भवतः आप चिकित्सक हैं?

२—यदि वाक्य के मध्य में कहीं सांकेतिक, सन्देहास्पद अथवा व्यङ्ग्यात्मक भाव का प्रदर्शन होता है, तो भाव के सूचक शब्द के आगे कोष्ठक में प्रश्न-चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—श्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र का कथन है कि पं० नेहरू यवनों के पक्षपाती (?) हैं।

१—अपवाद, प्रार्थना, आज्ञा आदि रूप में आने वाले प्रश्न वाचक वाक्यों के आगे प्रश्न चिह्न नहीं लगता। जैसे—संज्ञा के भेद बताओ। क्या आप मुझे स्टेशन जाने का मार्ग बता देंगे।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२—जिन वाक्यों में प्रश्न वाचक शब्द का अर्थ सम्बन्ध वाचक शब्दों का होता है, उनमें प्रश्न चिह्न नहीं लगता । जैसे—तुम नहीं जानते कि वह क्या चाहता है ।

५—विस्मयादि बोधक चिन्ह (!)

१—यह चिन्ह विस्मयादि बोधक 'अव्ययों, मनोविकार सूचक शब्दों, वाक्यांशों तथा वाक्यों के अन्त में लगाया जाता है । जैसे—अरे ! तुम कैसे गिर पड़े । हरे हरे ! वह भी चोरी करता है ।

२—सम्बोधन कारक में भी इसका प्रयोग होता है । जैसे—हे राम आओ ।

६—योजक अथवा विभाजक (-)

१—समासों के ऐसे पदों के बीच में जो संधि के कारण एक नहीं हो पाते, योजक का प्रयोग होता है । जैसे—धन-रहित । जन-रहित । कही कहीं पर इसका प्रयोग नहीं भी होता । जैसे—सीताराम ।

२—यदि कोई शब्द दो बार अथवा अपने से सम्बद्ध अन्य शब्द के साथ आता है, तो उन दोनों शब्दों के बीच में भी इसका प्रयोग होता है । जैसे—सोते-सोते, दौड़-धूप, पानी-फानी ।

३—पंक्ति के अन्त में यदि कोई शब्द अधूरा रहता है, तो शब्द के आधे भाग के सामने इसे लगाकर आधे को दूसरी पंक्ति में लिखते हैं । जैसे—रात दिन । (पर यह अर्ध भाग ऐसे हों जिन पर वह चिन्ह लगाया जा सके । जैसे—रात-दिन) में 'रा' के बाद चिन्ह लगाना अशुद्ध होगा ।

४—मध्य तथा तक के अर्थ में भी इसका प्रयोग होता है । जैसे—राम, सुग्रीव-मैत्री । देहली-हावड़ा-ट्रेन ।

७—निर्देशक (—)

१—कथोपकथन, वार्त्तालाप, संवाद में नाम के बाद इस चिन्ह का प्रयोग होता है । जैसे—

राम—पता नहीं चलता कि सीता किधर गई है ।

लक्ष्मण—मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि वे इधर ही हैं ।

२—किसी विषय के साथ उसमें सम्बन्धित अन्य बातों की सूचना देने के लिए भी इसका प्रयोग होता है । जैसे-धर्म के दस लक्षण हैं—धृति, यामा, क्षमा, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य तथा अक्रोध ।

३—वाक्य में सहसा विचार की गति रुक जाने पर इस चिन्ह का प्रयोग होता है । जैसे-नल ने सोचा—वह मेरे सुख-दुख की सह धर्मिणी थी, हृत्तन्त्री को मुखरित करने वाली रागिनी थी—पर हाय ! अब क्या करूँ ।

४—कोष्ठक के मध्य में लिखे जाने वाले शब्दों को भी दो निर्देशकों के बीच में लिखा जा सकता है । जैसे-रामायण की एक हस्तलिखित पुस्तक—(सं० १२२० में लिखित में वह वर्णन पाया जाता है ।)

५—किसी अवतरण को लिखकर उसके अन्त में उसके लेखक के नाम से पहले भी यह चिन्ह लगता है । जैसे—

"पराधीन सपनेहूँ सुख नाहीं ।"—तुलसी

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

६—किसी के वचनों को उद्धृत करने से पूर्व तथा उदाहरण देने से पूर्व जैसे आदि के शब्दों के बाद भी इसी चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे—

(१) तुलसी ने कहा—

जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी ।।

(२) किसी के नाम को संज्ञा कहते हैं। जैसे—राम, बालक।

(३) विषय विभाग में क्रम सूचक अक्षरों अथवा अङ्कों के बाद भी इसका प्रयोग होता है। जैसे—जाति वाचक, ख-व्यक्ति वाचक, ग-भाव वाचक, १—स्त्री लिंग २—पुलिंग।

(८) कोष्ठक ( )

(१) विषय विभाग में क्रम सूचक अक्षरों अथवा अङ्कों के साथ ( ) का प्रयोग होता है। जैसे-(क) एक वचन (ख) बहुवचन, (१) स्त्रीलिंग (२) पुलिंग।

(२) अर्थ स्पष्ट करने के लिए समानार्थक शब्द या वाक्यांश के साथ भी ( ) का प्रयोग होता है जैसे-प्रत्येक प्रघटक (अनुच्छेद या पैराग्राफ) में एक ही भाव का विवेचन होना चाहिए।

(३) ऐसे वाक्य के साथ जो मूल रचना से अपना कोई सम्बन्ध नहीं रखता पर जिसका लिखना आवश्यक है ( ) का प्रयोग होता है; जैसे-दशरथ ने अपने प्राण त्याग दिये, (क्योंकि वे राम-वियोग सहन करने में असमर्थ थे) पर अपने वचनों को न त्यागा।

४—नाटकों में अभिनय को प्रकट करने के लिये इसका प्रयोग होता है। जैसे—दुष्यन्त (लम्बी सांस लेकर) न जाने, वह अब कहाँ होगी।

(९) उद्धरण अथवा अवतरण चिन्ह [' '] [' ']

इसका प्रयोग निम्न स्थानों में किया जाता है—

१—किसी व्यक्ति द्वारा कहे हुए शब्दों को उसी प्रकार रखने में जैसे—राम ने कहा, "तुम कहाँ जा रहे हो ?"

२—किसी लेखक आदि के महत्वपूर्ण वचन उद्धृत करने में, उदाहरणों अथवा कहावतों में जैसे—तुलसी ने कहा है, 'जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।' "राम घर आया" एक साधारण वाक्य है। सरस्वती की विद्वता ने "यथा नाम तथा गुण:" को सिद्ध कर दिया है।

३—संज्ञा उप० के साथ जब वह प्रधान उपवाक्य से पहले आये। जैसे-"वह एक ईमानदार व्यक्ति है", की बात अक्षरशः सत्य है।

४—पुस्तक समाचार-पत्र, लेख, चित्र, मूर्ति, पदवी आदि के नाम में इकहरे उद्धरण चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे—मैंने 'राम चरित मानस' पढ़ी है। 'भारत' इलाहाबाद से प्रकाशित है।

यदि किसी वाक्य में दो उदाहरण आते हैं, तो प्रथम के लिये दुहरे तथा दूसरे के लिए इकहरे उद्धरण-चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे—राम—

"उस समय सुग्रीव कहता था," 'में सीता की खोज कराऊँगा', "पर उसे अब कुछ भी याद नहीं ।।"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१०) लोप निर्देशक चिन्ह [× × × ×]

(१) लेखक स्वयं लिखते समय अथवा किसी का उद्धरण देते समय जब कुछ छोड़ना चाहता है, तब इन चिह्नों का प्रयोग होता है। यदि लेख के मध्य में एक लम्बा विवरण छोड़कर उसके बाद का कथानक अथवा वर्णन लिखा जाता है, तो बीच की पक्ति में चार पांच × × × चिह्न लगा देते हैं और यदि कुछ शब्द अथवा वाक्य छोड़े जाते हैं, तो··········का प्रयोग होता है जैसे—

(१) मनुष्यों ने बहुत प्रयत्न किया। पर वे उस अग्नि को न बुझा सके।

× × × × ×

गाँव में भगदड़ थी कोई खेत में छिपता था, तो कोई बाग में।

(२) 'मैं घर······जाऊँगा"—वाक्य का विश्लेषण करो।

(३) यदि कोई वक्ता रुक-रुक कर बोलता है, तो उसके इस अभिनय को प्रकट करने के लिए अथवा वाक्य-पूर्ति को पाठक पर छोड़के के लिये भी '·······' का प्रयोग होता है। जैसे—

(१) तुमने ······हूँ·······तुमने चोरी की है।

(२) वह अपने रङ्ग में मस्त था, पर संसार········

(३) कुछ अङ्क अथवा वर्ण छोड़ने के लिये (') का प्रयोग होता है।

जैसे '१६५१' के स्थान पर '५१' लिखा जाता है तथा कविता आदि में और के लिए 'औ' का प्रयोग होता है।

(११) विवरण चिन्ह (:—)

किसी विषय अथवा बात को समझने के लिये इस चिन्ह का प्रयोग होता है। जैसे—

(१) वचन के दो भेद है :—
एक वचन, बहुवचन।

(२) किसी नाम को संज्ञा कहते हैं। जैसे :—
राम, बालक, भावुकता।

विशेष :—इसके स्थान पर निर्देशक (—) का भी प्रयोग होता है।

(१२) पुनरुक्ति बोधक चिन्ह (,,)

यदि किसी ऊपर कही हुई बात अथवा शब्द आदि को उसके ठीक नीचे दूसरी पंक्ति में दुहराया जाता है, तो दूसरी पंक्ति में इस चिह्न को लगाते हैं।

जैसे—

∵ १०० रु० का १ साल का ब्याज ५ रु० है।

∴ १ रु० का ,, ,, $\frac{1}{100}$ रु०

(१३) हँस पद (∧)

यदि किसी वाक्य में भूल से रहा हुआ कोई शब्द जोड़ना होता है, तो नीचे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उस भूले हुए शब्द के स्थान पर इस चिह्न को लगाकर पंक्ति के ऊपर उस शब्द को लिख देते हैं। जैसे—

अपने
राम ∧ घर गया।

(१४) तुल्यता सूचक चिन्ह (=)

समानता दिखाने के लिये दो बराबर वस्तुओं के बीच में इस चिह्न का प्रयोग होता है। जैसे—विद्या+अर्थी=विद्यार्थी।

(१५) लाघव चिन्ह (०)

किसी प्रसिद्ध शब्द को पूरा न लिखकर उसके प्रथम अक्षर के बाद इस चिन्ह को लगा देते हैं जैसे—

हि० सा० स० (हिन्दी साहित्य सम्मेलन)

(१६) समाप्ति सूचक चिन्ह (—:+:—) अथवा—०—०—)

किसी लेख, अध्याय, परिच्छेद पुस्तक आदि की समाप्ति पर इसका प्रयोग होता है। जैसे—

इस प्रकार राम राज्य में सर्वाङ्गीण उन्नति हुई।

—:०+:—

विशेष—विभिन्न लेखक इस चिह्न को अलग-अलग रूपों में लगाते हैं।

जैसे—

—०—०—

हिन्दी भाषा का शब्द भन्डार

प्रत्येक भाषा में शब्दों का अत्यधिक महत्व है। शब्दों से ही भाषा बनती है; और इसके ही माध्यम से भाव प्रकट होते हैं। अतः प्रत्येक विद्यार्थी के पास एक अच्छे शब्द भण्डार का होना अच्छा है। इस खण्ड में हम विविध प्रकार से शब्दों का परिचय देंगे। इसके अध्ययन से छात्रों के शब्द कोष में वृद्धि होगी और वे शब्द सम्बन्धी अशुद्धियों से बच सकेंगे।

पर्यायवाची शब्द (Synonym)

किसी शब्द के समानार्थक शब्दों को पर्यायवाची शब्द कहा जाता है। इसके ज्ञान से भाव तथा अर्थ को समझने और व्यक्त करने में सुविधा रहती है। साधारणतः इन शब्दों का अर्थ एक ही होता है पर उनके भाव में अन्तर रहता है। वास्तव में प्रत्येक शब्द से किसी विशेष भाव का प्रकाशन होता है और उसके साथ बहुत से अन्य सहचर भाव भी जुड़े रहते हैं। अतः लिखते समय प्रसंग के अनुकूल तथा प्रस्तुत भाव के पोषक शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिए। जैसे 'कपाली' तथा 'पिनकी' दोनों ही 'महादेव' के पर्यायवाची हैं किन्तु उन दोनों के भाव में अन्तर है। कपाली का भाव है—कपाल को धारण करने वाला और पिनकी का भाव है—धनुष को धारण करने वाला। अतः कपाली ने एक वाण से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

त्रिपुर का नाश कर दिया, में 'कपाल' के स्थान पर 'पिनकी' का प्रयोग अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि युद्ध के प्रकरण में 'धनुषधारी, ही उपयुक्त है, कपालधारी नहीं।

नीचे कुछ शब्दों के पर्यायवाची शब्द लिखे जाते हैं:—

अग्नि—आग, वह्नि, पावक, अनल, वैश्वानर, जातवेद, वायुसख, दहन, हव्यवाहन, हुताशन, दव, धूम्रकेतु, ज्वलन, कृशानु।

अनुपम—अपूर्व, अनोखा, अद्भुत, अनूठा, अद्वितीय, अतुल।

अमृत—पीयूष, सुधा, अमिय, अमी, सोम।

अरण्य—कानन, जङ्गल, विपिन, वन।

अश्व—वाजी, हय, घोटक, घोड़ा, वाह, सैन्धव, तुरंग, रविपुत्र।

असुर—दनुज, दानव, दैत्य, राक्षस, निशिचर, निशाचर, रजनीचर, तमीचर, मनुजाद।

आकाश—द्यो, व्योम, गगन, अभ्र, अम्बर, नभ, अन्तरिक्ष, ख, आसमान, अनन्त, पुष्कर, शून्य, अनंग दिव, वियत्।

आंख—अक्षि, नेत्र, चक्षु, चख, लोचन, नयन, दीदा।

आनन्द—मोद, प्रमोद, हर्ष, आमोद, सुख, बिहार, चैन, प्रसन्नता, आल्हाद।

आम—आम्र, सहकार, रसाल, पिकबन्धु, मन्मथालय।

इच्छा—आकांक्षा, ईप्सा, उत्कण्ठा अभिलाषा, चाह, कामना, मनोरथ, लालसा, स्पृहा, ईहा, वाञ्छा लिप्सा, काम।

इन्द्र—सुरपति, शचीपति, मघवा, पाकशासन, शक्र, पुरन्दर, वासव, पुरहूत, मेघवाहन, पाकरिपु, जिष्णु, महेन्द्र, देवराज।

इन्द्राणी—शची, पुलोमजा, इन्द्रवधू, ऐन्द्री, शतावरी, जयवाहिनी, महेन्द्री।

कपड़ा—वस्त्र, वसन, चीर, दुकूल, पट, अम्बर।

कंजूस—कृपण, सूम, कदर्य, मितम्पच, किम्पच, कीणाण।

कमल—सरसिज, सरोज, जलज, अम्भोज, अब्ज, अङ्कज, अरविन्द, उत्पल, पद्म, राजीव, शतदल, अम्बुज, कोकनद, इन्दीवर, अम्भोरुह, कुबलय, पुण्डरीक, पङ्करुह, नलिन, तामरस, वारिज, नीरज।

कामदेव—कुसुमेषु, मदन, मन्मथ, मार, कन्दर्प अनंग, पञ्चशर, शम्बरारि मनसिज, पुष्पधन्वा, स्मर, काम, कुसुमवाण, मीनकेतु रति·पति, विश्वकेतु, मनोज, मयन।

किरण—मरीचि, मयूख, अंशु, कर, रश्मि, दीधित।

कुबेर—किन्नरेश, यक्षराज, धनद, धनाधिप, राजराज।

क्रोध—कोप, अमर्ष, रोष, गुस्सा।

खल—दुष्ट, अधम, पामर, नीच, शठ, दुर्जन, कुटिल, धूर्त।

गङ्गा—जाह्नवी, देवनदी, सुरसरि, भागीरथी, मन्दाकिनी, देवापगा, ध्रुवनन्दा, त्रिपथगा, सुरापगा, नदीश्वरी, विष्णुपदी।

गणेश—लम्बोदर, एकदन्त, मूषकवाहन, गजबदन, विनायक, गणपति, विघ्नाशक, विघ्नराज, धूम्रकेतु मोदक-प्रिय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

घर—गेह, गृह, निकेतन, भवन, सदन, आगार, मन्दिर, अयन, आयतन, आवास, शाला, निलय, धाम, आलय, ओक, निकेत ।

चतुर—विज्ञ, दक्ष, प्रवीण, निपुण, पटु, नागर, सयाना, कुशल, योग्य ।

चन्द्र—चांद, चन्द्रमा, औषधीश, हिमांशु, सुधांशु, राकापति, द्विजराज, विधु, सुधाकर, सुधाधर, राकेश, शशि, निशाकर, तारापति, मयंक, निशापति, रजनीपति, सोम, मृगांक, कलानिधि, शशांक ।

चांदनी—चन्द्रिका, कौमुदी, ज्योत्सना, चन्दमरीची, अमृततरंगिणी ।

चाँदी—रजत, जातरूप, कलधौत, रूपा ।

जमुना—सूयसुता, सूर्यतनया, कालिन्दी, अर्कजा, तरणिजा, कृष्णा, रविसुता, यमुना, रवितनया रविनन्दिनी ।

जल—नीर, सलिल, उदक, पानी, अम्बु, तोय, जीवन, वारि, पय, अमृत, घनरस, मेघपुष्प, सर्वमुख, रस, अप, पानीय, वन ।

जीभ—जिह्वा, रसज्ञा, रसना, रसला ।

तन—अङ्ग, विग्रह, शरीर, मूर्ति, अवयव, देह, कलेवर, गात्र, तनु, काय, वपु, गात, जिस्म ।

तलवार—असि, खड्ग, कृपाण, करवाल, चन्द्रहास ।

तालाब—तड़ाग, सर, जलाशय, कासार, ताल, सरसी ।

दाँत—दन्त, दर्शन, द्विज, दन्त, मुखक्षुर ।

दास—अनुचर, चाकर, सेवक, नौकर, भृत्य, किंकर, परिचारक ।

दिन—वासर, दिवस, दिवा, अहन् ।

दुख—पीड़ा, व्यथा, कष्ट, संकट, शोक, क्लेश, वेदना, यातना, यन्त्रणा, खेद, क्षोभ, विषाद, सन्ताप, उत्पीड़न ।

देवता—सुर, अमर, देव, निर्जर, विबुध, त्रिदश, आदित्य, गीर्वाण ।

द्रव्य—धन, वित्त, सम्पदा, विभूति, दौलत, सम्पत्ति ।

नदी—सरिता, तटिनी, आपगा, निम्नगा, निर्झरिणी, कूलङ्कषा, जलमाला नद, तरंगिणी ।

नौका—नाव, तरिणी जलयान, जलपात्र, तरी, बेड़ा, जलवाहन ।

पति—भर्त्ता, वल्लभ, स्वामी, बालम, अधिपति, भरतार, अधिईश ।

पण्डित—सुधी, विद्वान, कोविद्, बुध, धीर, मनीषी, प्राज्ञ, विलक्षण ।

पत्थर—प्रस्तर, पाषाण, उपल, अश्म, पाहन ।

पत्नी—भार्या, दारा, सहधर्मिणी, गृहिणी, बधू, बहू, कलत्र, प्राणप्रिया, वल्लभ, तिय, वामा, वामांगी, तिया, अर्धाङ्गिनी ।

पर्वत—भूधर, शैल, अचल, महावीर, गिरि, नग, भूमिधर, महीधर, मेरु, तुंग, अद्रि, पहाड़ ।

पवन—हवा, वायु, समीर, मारुत, बात, बयार, अनिल, प्रकम्पन, समीरण, जगत-प्राण, पवमान, प्रभंजन, नभप्राण, मृगवाहन ।

पक्षी—विहंग, विहगम, खग, पखेरू, परिन्द, चिड़िया, शकुन्त, अण्डज, पतंग, द्विज, शकुनि ।

पार्वती—उमा, गौरी, ईश्वरी, शिवा, भवानी, रुद्राणी, अम्बिका, आर्या, दुर्गा, अपर्णा सर्वमंगला, गिरिजा, सती, शैलसुता, अभया ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पुत्र—तनय, सूनु, सुत, बेटा, लड़का, आत्मज, नन्द, पूत, लाल।

पुत्री—तनया, सुता, बेटी, लड़की, आत्मजा, दुहिता, नन्दिनी, तनुजा।

पुस्तक—किताब, पुस्तिका, ग्रन्थ।

पृथ्वी—भू, ला, भूमि, पुहुमि, धरा, रत्नावनी, उर्वी, वसुमती, धरती, धरित्री, धरिणी, वसुधा, वसुन्धरा, अवनि, मेदिनी, क्षोणी, क्षिति, जगती।

प्रकाश—प्रभा, छवि, द्युति, ज्योति, चमक, विकास।

फूल—पुष्प, सुमन, कुसुम, प्रसून, मञ्जरी, लतान्त।

बाल—कच, केश, चिकुर, शिरोरुह।

बिजली—चञ्चला, चपला, विद्युत, सौदामिनी, दामिनी, घननाद, तड़ित, जटा, बीजुरी, क्षणप्रभा, काँचनवल्ली, सम्पा।

ब्रह्मा—आत्मभू, स्वयंभू, चतुरानन, पितामह, हिरण्यगर्भ, लोकेश, विधि, विधाता, सृष्टा, प्रजापति, अब्जयोनि, कमलासन, अज, विरञ्चि।

बालू—बालुका, सिकता, प्रवाही, सूक्ष्मशर्करा।

भौंरा—मधुकर, भ्रमर, भृंग, षट्पद, अलि, द्विरेफ, भंवर, मधुप।

मछली—मत्स्य, शकुली झख, मीन, मकर, जलजीवन।

मनुष्य—नर, जन, मर्त्य, मानव, मनुज, आदमी, पुरुष।

महादेव—शम्भू, ईश, पशुपति, शिव, शंकर, भव, महेश्वरी, चन्द्रशेखर, भूतेश, गिरीश, हर, पिनाकी, मदनारि, कपर्दी, वामदेव, त्रिलोचन, कैलाशनाथ, भूतनाथ, नीलकण्ठ, गिरजापति।

मेघ—अभ्र, धाराधर, बलाहक, घन, जलधर, वारिद, जीमूत, बादल, नीरद, वारिधर, पयोद, अम्बुद, पयोधर।

मोक्ष—मुक्ति, कैवल्य, निवारण, अपवर्ग, परमधाम, परमपद, निर्वाण।

यम—सूर्यपुत्र, जीवनपति, अन्तक, धर्मराज, शमन, कीनाश, कृतान्त, जीवतेश, वमना, भ्राता।

राजा—नृप, भूप, महीप, नरेश, भूपति, राव, नरेन्द्र।

रात—शवरी, कादम्बरी, निशा, रैन, रात्रि, रजनी, यामिनी, निशीथ, त्रियामा, विभावरी, तमिस्रा, तमसा।

राह—रास्ता, मार्ग, मग, पथ।

लक्ष्मी—कमला, पद्मा, पद्मासना, हरिप्रिया, इन्दिरा, लोकमाता, क्षीरोदतनया, समुद्रजा, भार्गवी, श्री।

बाण—वीर, शर, विशख, आशुग, शिलीमुख, नाराच।

वानर—बन्दर, मर्कट, कपि, कीश, शाखामृग।

विष्णु—गरुड़ध्वज, अच्युत, जनार्दन, चक्रपाणि, विश्वम्भर, मुकुन्द, नारायण, हृषीकेश, दामोदर, केशव, माधव, गोविन्द, लक्ष्मीपति, विश्वरूप, जलशायी, वनमाली, उपेन्द्र, पीताम्बर, चतुर्भुज।

सब—सर्व, समस्त, निखिल, सकल, समग्र, पूर्ण, सम्पूर्ण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

समुद्र—सागर, जलधि, पारावार, सिन्धु, नीरनिधि, उदधि, नदीश, पयोधि, अर्णव, पयोनिधि, रत्नाकर, अब्धि, वारिधि, जलधाम।

समूह—समुदाय, निकर, वृन्द, गण, संघ, पुञ्ज, राशि, समुच्चय, कलाप यूथ, दल, झुण्ड, मण्डली, टोली, जत्था।

सरस्वती—ब्राह्मी, भारती, भाषा, वाचा, गिरा, वाणी, शारदा, इडा, वीणा, पाणि, वागीश, महाश्वेता, विधात्री, श्री, ईश्वरी, वागेश्वरी।

सर्प—अहि, भुजंग, विषधर, व्याल, फणी, उरग, पन्नग, नाग, साँप।

सिंह—शार्दूल, व्याघ्र, पंचमुख मृगराज, वनस्पति, मृगेन्द्र, केशरी, केहरि, नाहर, मृगारि, शेर, पुण्डरीक।

सुन्दर—रुचिर, चारु, सुहावना, मोहक, रमणीक, चित्ताकर्षक, ललित कमनीय, उत्कृष्टा, ललाम, रम्या, ललित, मंजुल, मनोज्ञ, मनभावन।

सूर्य—मार्तण्ड, दिनकर, रवि, छायानाथ, भास्कर मरीची, प्रभाकर, कमलबन्धु, सविता, पतंग, दिवाकर, हंस, आदित्य, अर्क, भानु, अंशुमाली, ग्रहपति, सहस्त्राँशु, तरणि।

सोना—स्वर्ण, कञ्चन, हाटक, कनक, हिरण्य, हेम, जातरूप, चामीकर।

स्त्री—अबला, नारी, वनिता, महिला, ललना, कान्ता, रमणी, अंगना, कामिनी, प्रभदा।

स्वर्ग—द्यो, देवलोक, नाक, दिव।

हाथी—गज, हस्ती, द्विप, बारण, सिन्धुर, करी, कुञ्जर, दन्ती, कुम्भी, वितुण्ड, मतंग, नाग, द्विरद।

विपरीतार्थक-शब्द

एक दूसरे के विरुद्ध अर्थ रखने वाले शब्दों को विपरीतार्थक-शब्द कहते हैं। ये कभी कभी साथ-साथ भी आते हैं। नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं—

(१) **भिन्न शब्द द्वारा**—अन्धकार—प्रकाश। अर्थ—इति। अन्त-आदि। अपना—पराया। अमृत—विष। अस्त—उदय। आकाश—पाताल। आय—व्यय। आवाहन—विसर्जन। उदार—कृपण। उच्च (ऊँचा)—नीच। उत्थान—पतन। कृतज्ञ—कृतघ्न। कोमल—कठोर। गुण—दोष। थोड़ा—बहुत। धनी—दरिद्र। ज्येष्ठ कनिष्ठ। जड़—चेतन। जीवन—मरण। निद्रा—जागरण। नूतन—पुराण। पण्डित—मूर्ख। परकीय स्वकीय प्राचीन—नवीन, अर्वाचीन। पाश्चात्य—पौर्वात्य। बन्धन—मोक्ष। बद्ध—मुक्त। योगी—भोगी। विधि—निषेध। सृष्टि—प्रलय। स्थूल—सूक्ष्म। स्तुति—निन्दा। स्थावर—जंगम। स्वार्थ—परमार्थ। शीत—उष्ण।

(२) **उपसर्ग द्वारा**—आशा—निराशा। क्रम—व्यतिक्रम। क्रय—विक्रय कीर्ति—अपकीर्ति। घात—प्रतिघात। जय—पराजय। धनी—निर्धन। मान, सम्मान—अपमान। यश—अपयश। राग—विराग। लोक—परलोक। वाद—प्रतिवाद। विवाद—निर्विवाद। श्वास—प्रश्वास। सम—विषम।

(३) **उपसर्ग परिवर्तन द्वारा**—अतिवृष्टि-अनावृष्टि। अनागत—विगत। अनुकूल—प्रतिकूल। अनुग्रह—विग्रह। अनुरक्ति—विरक्ति। अनुराग—विराग अपमान—सम्मान।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आकर्षण—विकर्षण। आदान—प्रदान। उत्कर्ष—अपकर्ष। उत्कृष्ट—निकृष्ट। उन्नति—अवनति। उपकार—अपकार। निर्गुण—सगुण। निर्जीव—सजीव। नीरस—सरस। विभव—पराभव। विरक्त—आसक्ति। सज्जन—दुर्जन। सधवा—विधवा। साकार—निराकार। सुगन्ध दुर्गन्ध। सुमति—कुमति।

(४) 'अ' अथवा 'अन' के योग द्वारा—आगत—अनागत। प्रकृष्ट—निकृष्ट। प्रतिलोभ—अनुलोभ। आचार—अनाचार। आदि—अनादि। ईश—अनीश। उचित—अनुचित। उत्तीर्ण—अनुत्तीर्ण। एक—अनेक। ऐश्वर्य—अनैश्वर्य। कल्याण—अकल्याण। चर—अचर। ज्ञान—अज्ञान। न्याय—अन्याय। मंगल—अमंगल। शान्ति—अशान्ति।

विशेष—'स्वर' से आरम्भ होने वाले शब्द से पहले 'अन' तथा व्यंजन से आरम्भ होने वाले शब्दों से पहले 'अ' जुड़ता है।

(५) लिंग द्वारा परिवर्तन—अज—अजा। चाचा—चाची। नर—नारी पुरुष—स्त्री। राजा—रानी। बालक—बालिका।

एक साथ आने वाले विपरीतार्थक शब्द—आय—व्यय। कुपुत्र—सुपुत्र। गुण—दोष। धर्म—अधर्म। न्यून—अधिक। न्याय—अन्याय। मरना—जीना। शीतोष्ण। सन्त—असन्त। हर्ष—विषाद। मानापमान। जय—पराजय। सुख—दुःख।

तद्भव तत्सम शब्द

पुस्तक के आदि में हम बता आये हैं कि हिन्दी में कुछ परिवर्तित रूप में प्रयुक्त संस्कृत शब्द 'तद्भव' कहे जाते हैं। तथा बिना किसी परिवर्तन के, जैसे के तैसे रूप में प्रयुक्त संस्कृत शब्द 'तत्सम सामने शब्द' कहे जाते हैं।

नीचे कुछ प्रचलित शब्द तथा उनके तत्सम शब्द दिये जाते हैं—

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम		
अकाज	अकार्य	अगम	अगम्य		
अंगुरी	अंगुली	अंगूठा	अंगुष्ठ	अच्छर, अछर	अक्षर
अटारी	अट्टालिका	अमिय	अमृत	अमोल	अमूल्य
असीस	आशिष	अस्तुति	स्तुति	आस	आशा
आँख	अक्षि	आग	अग्नि	आज	अद्य
आधा	अर्ध	आम	आम्र	आलस	आलस्य
आंक	अङ्क	इमली	अमलीका	इलायची	एला
ईख	इक्षु	ईर्षा	ईर्ष्या	ईंधन	इन्धन
उछाह	उत्साह	उल्लू	उलूक	उलाहना	उपालम्भ
ऊन	ऊर्णा	ऊंचा	उच्च	ऊँट	उष्ट्र
एतवार	आदित्यवार	ओखली	उलूखल	ओझा	उपाध्याय
ओठ	ओष्ठ	ओसर।	अवसर	औगुन	अवगुण
औघट	अवघट्ट	औतार	अवतार	कंगन	कङ्कण
कछुआ	कच्छप	कंचन	काञ्चन	कड़ाह	कटाह
कडुआ	कटु	करोड़	कोटि	कतरना	कर्त्तन
कतरनी	कर्तरी	कपास	कार्पास	कपूर	कर्पूर
कपूत	कुपुत्र	करतब	कर्त्तव्य	कलेऊ	कल्याहार
कलोल	कल्लोल	कसेरा	कास्यकार	कहावत	कथावत, कथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कंधा	स्कन्ध	काठ	काष्ठ	कान	कर्ण
कुंआ	कूप	केवट	कैवर्त्त	कुछ	किंचित
कुंवर	कुमार	कुटनी	कुट्टनी	कुटुम	कुटुम्ब
कुत्ता	कुक्कर	कुम्हार	कुम्भकार	कूर	क्रूर
कोख	कुक्षि	कोढ़	कुष्ट	कोढ़ी	कुष्टी
कोयल	कोकिल	कोस	क्रोश	कौड़ी	कपर्दिका
कौर	कवल	कौवा	काक	खत्री	क्षत्रिय
खम्भा	स्तम्भ	खाँसी	कास	खाट	खट्वा
खान	खनि	खार	क्षार	खीर	क्षीर
गवाँर	ग्राम्य	गगरी गागर	गर्गर	गड्ढा	गर्त्त
गधा	गर्दभ	गवैया	गायक	गजा	गञ्ज
गाँव, गाम	ग्राम	गाना	गायन	गाय	गो
गाहक	ग्राहक	सिद्ध	गृध्र	गुन	गुण
गुफा	गुहा	गुसांई, गोसाई	गोस्वामी	गूंजना	गुञ्जन
गूंथना	गुम्फन	गेहूँ	गोधूम	गोबर	गोमय
गोरा	गौर	ग्वाल	गोपाल	घड़ा	घट
घर	गृह	घाम	घर्म्म	घिन	घृणा
घी	घृत	घोड़ा	घोटक	चख	चक्षु
चना	चणक	चबाना	चर्वण	चमड़ा	चर्म
चमार	चर्मकार	चाँदनी	चान्द्री, चन्द्रिका	चाक	चक्र
चिकना	चिक्कण	चिकनाई	चिक्कणता	चिड़िया	चटक
चितेरा	चित्रकार	चीता	चित्रक	चूल्हा	चूल्हि
चूना	चूण	चूमना	चुम्बन	चोंच	चञ्चु
चोर	चौर	चोरी	चौर्य	चौपाया	चतुष्पद
छः	षट्	छकड़ा	शकट	छाँह	छाया
छाता	छत्र	छति	क्षति	छिन	क्षण
छिमा	क्षमा	छेद	छिद्र	जत्था	यूथ
जनवासा	जनवास	जनेऊ	यज्ञोपवीत	जमाई	जामाता
जमुना	यमुना	जव, जौ	यव	जांघ	जङ्घा
जाड़ा	जड़	जीभ	जिह्वा	जीरा	जीरक
जुआ	द्यूतु	जै	जय	झरना	निर्झर
झूठा	उच्छिष्ट	टकसाल	टङ्कशाला	टीका	तिलक
टुक	स्तोक	टूडी	तुन्दि	ठाँव	स्थान
डंक	दंश	डंड, डांड, डंडा,	दण्ड	डसना	दंशन
डाढ	दष्ट्रा	डाह	दाह	दीठ	दृष्टि
ढिठाई	धृष्टता	तत्ता	तप्त	तपसी	तपस्वी
तमोली	तम्बोली	तुरन्त	त्वरित	तेल	तैल
तोंद, थोंद	तुन्द	थन	स्तन	दई	दव
दच्छ	दक्ष	दही	दधि	दाँत	दन्त
दाद	दद्रु	दाहिना	दक्षिण	दिया	दीप

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दिवाली	दीपावलि, दीपावली	दुपट्टा	द्विपट	दुबला	दुर्बल
दूव	दुग्ध	दूब	दूर्वा	धन्नासेठ	धनश्रेष्ठि
धरती	धरित्री	धूर, धूल	धूलि	नंगा, नागा	नग्न
नन्हा	न्यून	नया	नव	नाई	नापित
नाक	नासिका	नाच	नृत्य	नाती	नप्ता
निठुर	निष्ठुर	नींद	निद्रा	नौता	निमंत्रण
नौन	लवण	पंख	पक्ष	पंगत	पंक्ति
पकवान	पक्वान्न	पक्का	पक्व	पग	पद
पटरा	पट्ट	पड़ौस	प्रतिवास	पतोहू	पुत्र बधू
पत्ता	पत्र	पत्थर	प्रस्तर	परख	परीक्षा
परछाई	प्रतिच्छाया	पलंग	पर्यङ्क	पहर	प्रहर
पानी	पानीय	पापड़	पर्पट	पालागन	पादलग्न
पाहन	पाषाण	पियास	पिपासा	पीठ	पृष्ठ
पीतल	पित्तल	पुआ	पूप, अपूप	पूरा	पूर्ण
पेसाब	प्रसाव	पैदल	पदादति	पोखर	पुष्कर
पोता	पौत्र	पोती	पुस्तिका	फन्दा	पाश
फूर्ती	स्फूर्ति	फोड़ा	स्फोटक	बगुला	बक्र
बच्चा	वत्स	बजरंग	वज्रांग	बनिया	वणिक
बन्दर	वानर	बरस गाँठ	वर्ष ग्रन्थि	बहिन	भगिनी
बहिरा	बधिर	बाँझ	बन्ध्या	बाँध	बन्ध
बाँस	वश	बिच्छू	वृश्चिक	बुड्ढा	वृद्ध
बैयर वानी	वीर-वनिता	भला	भद्र	भाप	वाष्प
भाभी	भ्रातृ बधू	भावज	भ्रातृजाया	भीख	भिक्षा
मक्खी	मक्षिका	माथा	मस्तक	मेह	मेघ
मैल	मल	मोती	मुक्ता	मोर	मयूर
राखी	रक्षिका	राजपूत	राजपुत्र	रात	रात्रि
लाज	लज्जा	लोहा	लोह	श्राप	शाप
सतसई	सप्तशती	सरसों	सर्षप	सलूनों	श्रावणी
सास	श्वश्रु	हथनी	हस्तिनी	हाथ	हस्ती
हाथी	हस्त	हिरन	हरिण	हींग	हिंगु
हुलास	उल्लास				

अनेकार्थक शब्द

प्रत्येक भाषा में ऐसे बहुत से शब्द आते हैं जिनके कई अर्थ होते हैं। ऐसे शब्दों को नानार्थक या अनेकार्थक शब्द कहा जाता है। इनका अर्थ प्रसंग के अनुसार लगाया जाता है। नीचे कुछ अनेकार्थक शब्द दिये जाते हैं।

अंक—संख्या के अङ्क, नाटक के अङ्ग, परिच्छेद, गोद, चिह्न।

अर्क—सूर्य, अकौआ का पौधा, औषधियों से निकाला जाने वाला रस।

अक्ष—धुरी, पहिया, रथ, चौसर का पाँसा, ज्ञान, मण्डल, सूर्य, आँख, एक बांट, आतमा, रावण का पुत्र।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अक्षर—अ, इ, उ आदि वर्ण, मोक्ष, ब्रह्म, गगन, धर्म, नाशरहित, सत्य, ।
अग्र—आगे, पहले, अगुआ, मुख्य, सिरा, श्रेष्ठ ।
अज—ब्रह्मा, दशरथ के पिता, बकरा, ब्रह्म ।
अनन्त—विष्णु, सर्पों का राजा ब्रह्मा आकाश, अन्तरहित ।
अनन्तर—आकाश मध्य, छिद्र, अवसर, अवधि, अन्तर्द्धान, व्यवधान ।
अम्बर—वस्त्र, आकाश ।
अरुण—सूर्य, सूर्य का सारथी, लाल रंग ।
अर्थ—धन, मतलब, कारण ।
चन्द्र—कपूर, चन्द्रमा ।
उत्तर—जबाब, उत्तर दिया ।
कनक—सोना, धतूरा, गेहूँ का आटा ।
कर—किरण, हाथ, सूँड, टैक्स ।
कर्ण—कान, कुन्ती का पुत्र, समकोण त्रिभुज में समकोण के सामने की भुजा ।
कल—श्रेष्ठ, अस्फुट, मधुर, ध्वनि, मशीन, आराम, सुन्दर, आज से अगला और पहला दिन (Tomorrow and yesterday)
काल—समय, मृत्यु, यमराज, अकाल ।
गुण—स्वभाव, कौशल शील, रस्सी, धनुष की डोरी ।
गुरु—बड़ा, भारी विद्या तथा कला का शिक्षक, कान फूँकने का मन्त्र देने वाला गुरु, माता पिता आदि पूज्य, दो मात्राओं वाला वर्ण, बृहस्पति ।
गो—गाय, बैल, इन्द्रिय, भूमि, दिक, बाण, वाणी, स्वर्ग ।
घन—बादल, घना, भारी, हथोड़ा, गणित में किसी संख्या को उसी से दो बार गुणा करना ।
चपला—लक्ष्मी, बिजली, चंचल, स्त्री ।
जलज—कमल, मोती, चन्द्रमा, मछली, शंख सिवार ।
जीव—प्राणी, आत्मा, बृहस्पति, जीविका ।
जीवन—जल, प्राण ।
ज्येष्ठ—श्रेष्ठ, बड़ा, जेठ का मास, पति का बड़ा भाई ।
तात—पिता, भाई, मित्र, बड़ा, गरम, पूज्य, प्यारा ।
तारा—नक्षत्र, आँख की पुतली, बालि की स्त्री, बृहस्पति की स्त्री, देवी विशेष ।
दण्ड—डंडा, सजा, समय का एक भाग, यमराज का अस्त्र, ढाक की बनी लकड़ी (जिसे दण्डी स्वामी या ब्रह्मचारी धारण करते हैं ।) व्यायाम विशेष, राजनीति का तीसरा अङ्ग ।
दल—समूह, पत्ता, चिट्ठी, पक्ष ।
दक्ष—चतुर, ब्रह्मा के पुत्र का नाम ।
दाम—माल, रस्सी, मूल्य, नीति का दूसरा अङ्ग, ध्वजा ।
द्विज—दांत, पक्षी, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य ।
धात्री—माता, आँवला, पृथ्वी, वायु ।
नाग—सर्प, हाथी, नाग-केशर ।
नग—पर्वत, वृक्ष, नगीना, अदद ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नायक—नाटक का प्रधान पात्र, मुखिया, सेनापति, प्रेमाभिलाषी।

पक्ष—तरफ, पंख, पखवाड़ा (पन्द्रह दिन का समय)।

पत्र—पत्ता, चिट्ठी, पख।

पद—ओहदा, पैर, छन्द का एक चरण, गीत, (शब्द व्याकरण में प्रयुक्त)

पय—दूध, पानी।

पयोधर—बादल, स्तन, पर्वत, गन्ना।

फल—मेवा (fruit), सन्तान, लाभ, नतीजा, लब्धि, ४ पदार्थ, भाले आदि की नोंक।

बल—शक्ति, सेना, बलराम।

बलि—राजा बलि, बलिदान, उपहार, टैक्स।

भव—संसार, जन्म, महादेव, कुशल, क्षेत्र।

मधु—शहद, शराब, पराग, चैत का महीना, बसन्त ऋतु।

माधव—श्रीकृष्ण, वसन्त ऋतु, बैसाख, महुआ।

मान—सम्मान, अभिमान, तौलनाप, रूठना।

मित्र—सूर्य, दोस्त।

मुद्रा—रुपया, अंगूठी, छाप, आकृति।

रक्त—अनुराग में लगा हुआ, लाल, रुधिर।

रस—आनन्द, सार स्वाद, जल, साहित्य से उत्पन्न आनन्द, किसी औषधि का अर्क।

राग—प्रेम, रंग गाने का राग।

राशि—समूह, ज्योतिष में प्रयुक्त मेष आदि राशियाँ।

वन—जंगल, पानी।

वर—दूल्हा, श्रेष्ठ, वरदान।

वर्ण—अक्षर, रंग, ब्राह्मण आदि जातियाँ।

विग्रह—शरीर, लड़ाई, समास के अर्थ को प्रकट करने वाला वाक्य।

विधि—ब्रह्मा, ईश्वर भाग्य, रीति।

विहंगम—पक्षी चन्द्र, सूर्य, बादल, वाण।

सारङ्ग—राम, विशेष, मोर, सर्प, मेघ हरिण, पानी, पपीहा, हाथी, राजसिंह कोयल, कामदेव, वर्ण, धनुष, भौंरा, मधु-मक्खी, कपूर, कमल, भूषण, फूल, छत्र, शोभा, रात, दीपक, स्त्री, शंख, वस्त्र।

हरि—विष्णु, इन्द्र, सिंह, घोड़ा, सूर्य, वानर, कामदेव, चन्द्र।

क्षेत्र—तीर्थ, शरीर, खेत, सदाव्रत देने का स्थान।

समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द

हिन्दी में कुछ ऐसे भी शब्द हैं जिनका उच्चारण लगभग एक सा होता है किन्तु रूप में थोड़ा सा अन्तर होता है। इनके अर्थ में तो कोई भी सम्बन्ध नहीं होता है। ऐसे कुछ शब्द नीचे दिये जाते हैं—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
अन्त	समाप्त,	अंस	कन्धा	अन्त्य	नीचे, अन्तका
	आखीर	अंश	भाग	अर्घ	जलदान, मूल्य
अनल	आग	अर्घ्य	पूज्यनीय	अनिल	वायु
			पूजाद्रव्य	अनिष्ट	बुराई
अनु	पीछे	अनिष्ठ	निष्ठा रहित	अणु	छोटा
अभिराम	मनोहर	अभिहित	कहा हुआ	अविराम	लगातार
अविहित	न किया हुआ	अवलम्ब	सहारा	अशित	श्वेत, खोया
अविलम्ब	शीघ्र	असित	काला		हुआ
आसक्त	मोहित	आकर	खान, खजाना	अशक्त	शक्ति रहित
आकार	सूरत	आदि	वगैरह,आरम्भ	आहुत	यज्ञ
आधि	मानसिक पीड़ा	आहूत	बुलाया गया	इत	इस ओर
उद्धत	उद्दण्ड	इति	अन्त	उद्यत	तैयार
ईति	आपदा	केसर	अयाल (घोड़ा		
कुल	वंश		सिंह आदि के		
कूल	किनारा		कंधे के बाल)		
गढ़ना	चुभना				
गर्व	घमण्ड	गणना	गिनती	गर्भ	पेट
ग्रह	सूर्य, चन्द्र आदि	चिर	दीर्घ	गृह	घर
चीर	वस्त्र	छत्र	छाता	छात्र	विद्यार्थी
क्षत्र	क्षत्रिय	छात्र	क्षत्रिय सम्बन्धी	जरा	बुढ़ापा
तरणी	नौका	जरा	थोड़ा	तरणि	सूर्य
तरुणी	जवान स्त्री	दार	पत्नी	दारा	पत्नी
द्वार	दरवाजा	द्वारा	माध्यम से	दिन	दिवस
द्विप	हाथी	दीन	निर्धन	द्वीप	टापू
द्युति	कान्ति, छवि	दुरति	पाप	द्रुत	शीघ्र
दुरव	छिपना	दूत	सम्वाददाता	देश	राज्य
द्यूत	जुआ	द्वेष	शत्रुता	नग	पहाड़, वृक्ष,
निर्धन	मृत्यु	नाग	हाथी, सर्प		नगीना
विर्धन	गरीब	नीर	पानी	नारी	स्त्री
नीड़	घोंसला	नाड़ी	नब्ज	परुष	कठोर
प्रकार	रीति	पुरुष	आदमी	प्राकार	किले में पर-
प्रथा	रीति	प्रमाण	सबूत		कोटा
पृथा	कुन्ती	प्रणाम	नमस्कार	परिमाण	मात्रा
प्रसाद	मन्दिरों आदि	परमाणु	कणमात्र	परिणाम	नतीजा
	में बटने वाला	प्रासाद	महल		
	प्रसाद, प्रसन्नता				
प्रवाह	बहाव	प्रकृत	यथार्थ, प्रस्तुत	परवाह	चिन्ता
प्रकृति	स्वभाव, कुदरत	पाणि	हाथ	भवन	घर
पानी	जल	भुवन	संसार	मूल	जड़

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मात्र	केवल	मूल्य	कीमत	मातृ	माता
लक्ष	लाख	वसन	कपड़ा	लक्ष्य	निशाना
व्यसन	बुरी आदत	वारिद	बादल	विधि	ब्रह्मा
वारिधि	समुद्र	विधु	चन्द्रमा	विलक्षण	अद्भुत
विवरण	ब्यौरा, व्याख्या	विचक्षण	चतुर, पण्डित	विवर्ण	लज्जित, रूपरहित
विष	जहर	शंकर	महादेव	विस	कमल की डण्डी
संकर	मिला हुआ	शूर	वीर	शुल्क	फीस
सूर	सूर्य	शुक्ल	सफेद	सर	तालाब
सकृत्	एक बार	शर	वाण	शकृत्	विष्ठा
सकल	मुख की	शर्मा	ब्राह्मण	सकल	सम्पूर्ण
टुकड़ा,	बनावट	सरमा	कुतिया	स्वपच्च	खुदपचने वाला
हाथ	शरीर का ग (कर)		शवपच	भङ्गी, चाण्डाल	
				हाथी	एक पशु (गज)।

विभिन्न भाषाओं के समोच्चारित भिन्नार्थक शब्द

विभिन्न भाषाओं में आये हुये कुछ ऐसे शब्द हैं, जो प्रायः एक ही रूप में प्रयुक्त होते हैं। भाषा-भेद के कारण उनके अर्थों में भेद का रहना स्वाभाविक ही है। ऐसे कुछ शब्द नीचे लिखे जाते हैं।

आगा (हि०)	अगवाड़ा	आम (हि०)	फल विशेष (mango)
आगा	सरदार	आम (अ०)	साधारण
		आम (अं०) Alm	भीख
आराम (सं०)	बाग	एतवार (हि०)	रविवार
आराम (फा०)	विश्राम	एतवार (फा०)	विश्वास
कन्द (सं०)	मूल	कफ (सं०)	वलगम
कन्द (फा०)	मिसरी	कफ (फ०)	फेन
		कफ (अं० Cuff)	कफ
कुन्द (सं०)	एक फूल	कुल (सं०)	वंश
कुन्द (अ०)	मंद	कुल (अ०)	सब
कै (हि०)	कितना	खैर (हि०)	कत्था
कै (फा०)	वमन	खैर (फा०)	कुशल
गौर (सं०)	गोरा	चारा (हि०)	घास
गौर (अ०)	ध्यान	चारा (फा०)	उपाय
जरा (सं०)	बुढ़ापा	झख (सं०)	मछली
जरा (फा०)	थोड़ा	झक (हि०)	खीजना
तूल (सं०)	रुई		
तूल (हि०)	तुलना	देव (सं०)	देवता
तूल (अ०)	लम्बाई	देव (फा०)	राक्षस
नाक (सं०)	स्वर्ग	नाज (फा०)	नखरा
नाक (हि०)	नासिका	नाज (हि०)	अन्न
नाना (सं०)	विविध	नाला (हि०)	जल निकालने का मार्ग

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाना (हि०)	माता के पिता	नाला (फा०)	रोना
नाना (अ०)	पोदीना		
पट (सं०)	परदा, कपड़ा	रास (सं०)	नाच
पट (हि०)	किवाड़, उल्टा	रास (फा०)	बागडोर
		रास (सं०)	अन्तरीप
शकल (फा०)	चेहरा	सर (सं०)	तालाब
सकल (सं०)	टुकड़ा	सर (फा०)	सिर
सकल (हि०)	सम्पूर्ण	सर (अं०) Sir पदवी	श्रीमान्
संग (सं०)	साथ	सन (हि०)	एक पौधा
संग (सं०)	पत्थर	सन (ग्रं० Sun, Son)	सूर्य, पुत्र
संग (ग्रं० Sung)	गाया	सन् (फा०)	सम्वत्
हाल (हि०)	पहिये की हाल	हार (सं०)	माला
हाल (ग्रं०)	विवरण	हार (हि०)	पराजय
हाल (अं० Hall)	बड़ा कमरा		

विशेष—शब्दों के आगे कोष्ठक में शब्दों से सम्बन्धित भाषाओं के नाम दिए गये हैं, जिनका विवरण निम्न है—

सं०—संस्कृत । हि०—हिन्दी । ग्रं०—ग्रंग्रेजी । अ०—अरबी । फा०—फारसी ।

विभिन्न उपसर्गों द्वारा धातुओं में बने शब्द

एक ही धातु से पूर्व विभिन्न उपसर्गों के जोड़ने से बने हुये शब्दों के अर्थों में महान अन्तर होता है । इस प्रकार बने हुए शब्द और उनके अर्थों को समझ लेने से इनके प्रयोग में सुविधा होती है । इस प्रकार के कुछ शब्द नीचे लिखे जाते हैं—

ईक्ष धातु से बने शब्द—अपेक्षा—बनिस्वत । उपेक्षा अनादर । निरीक्षण—देख-भाल । परीक्षा—जाँच । प्रतीक्षा—राह देखना ।

कृ धातु के बने शब्द—अनुकरण—नकल । उपकरण—सामान । प्रतिकार—बदला । संस्कार—जीर्णोद्धार । विकार—परिवर्तन । अधिकार—स्वामित्व उपकार—भलाई । अपकार—बुराई । प्रकार—ढंग । आकार—रूप । आकृति शकल । दुष्कर—असाध्य । आविष्कार—ईजाद ।

गम धातु से बने शब्द—अनुगमन—पीछे चलना । निर्गमन—निकलना । आगमन—आना । उद्गमन—उत्पन्न होना । संगम, संगमन—मिलना ।

ग्रह धातु से बने शब्द—अनुग्रह—दया । आग्रह-हठ । निग्रह—शासन । प्रतिग्रह—ग्रहण । परिग्रह—दान देना । संग्रह—सञ्चय । विग्रह—लड़ाई बैर ।

चर धातु से बने शब्द—अनुचर—पीछे चलने वाले (नौकर, साथी) । प्रचार—फैलाव । सञ्चार—विस्तार । परिचारक—भृत्य । सहचर—साथी । विचार—अभिप्राय ।

चि धातु से बने शब्द—अपचय—क्षति । उपचय—वृद्धि । निश्चय—निर्णय । परिचय—पहचान । सञ्चय—संग्रह । चयन—चुनना, इकट्ठा करना ।

दा धातु से बने शब्द—आदान—ग्रहण । उपादान—सामग्री । प्रदान—अर्पण । प्रतिदान—विनिमय । विदान—मूल्य कारण । सम्प्रदान—देना, कारक विशेष ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दिश् धातु से बने शब्द—आदेश—आज्ञा । अध्यादेश—आर्डीनेन्स । उपदेश—शिक्षा । निर्देश—सुझाव । प्रदेश—छोटा देश । सन्देश—सूचना, खबर । प्रत्यादेश—खण्डन । विदेश—परदेश ।

धा धातु से बने शब्द—अनुसन्धान—खोज । अभिधान—शब्द-कोष नाम । उपधान—तकिया । परिधान—वस्तु । प्रधान—खास, अध्यक्ष । निधान—खजाना । विधान—विधि, कानून । व्यवधान—अन्तर ।

संविधान—वह मूल 'विधान' जिसके अनुसार किसी देश का शासन बनता है ।

नी धातु से बने शब्द—अपनीत—हटाया हुआ । आनीत—लाया हुआ । अभिनीति—खेला हुआ । अनुनय—विनय-प्रार्थना । उपनीत—लाया हुआ । परिणीत—विवाहित । प्रणीत—रचित । विनीत—नम्र ।

पत् धातु से बने शब्द—उत्पात—उपद्रव । प्रपात—झरना । निपात, सम्पात—गिरना । विपत, विपत्ति, आपत्त, आपत्ति—आफत । सम्पत्—सम्पति । सम्पदा—ऐश्वर्य ।

भू धातु से बने शब्द—अनुभूत—जाना हुआ । अभिभूत—पराजित, तिरस्कृत । उद्भूत, सम्भूत—निकला हुआ । पराभूत—पराजित । प्रभूत—प्रचुर । विभूति—ऐश्वर्य । अनुभव—ज्ञान ।

युज धातु से बने शब्द—अनुयोग—प्रश्न, खोज । अभियोग—मुकद्दमा । अपयोग—बुरा व्यवहार । उद्योग—चेष्टा, धन्धा । उपयोग—व्यवहार । नियोग—आदेश । दुर्योग—षडयन्त्र । प्रयोग—व्यवहार । प्रतियोग—बाधा । वियोग—विरह । संयोग—मिलाप । योग—जोड़, अवसर ।

वद् धातु से बने शब्द—अभिवादन, वन्दना । अपवाद—अपयश । अनुवाद—उल्था । दुर्वाद—बुरे शब्द । परिवाद—निन्दा । प्रतिवाद—विरोध प्रवाद—अफवाह । विवाद—झगड़ा । संवाद—खबर ।

वृत धातु से बने शब्द—अनुवर्तन—अनुसार चलना । आवर्तन—घूमना । निवृत—विरत । प्रवृत—काम में लगा हुआ । विवृत—खुला हुआ ।

स्था धातु से बने शब्द—अवस्था—स्थिति, आयु । अधिष्ठान—स्थिति । अनुष्ठान—सम्पादन । अवस्था—हालत । उत्थान—उठाना । व्यवस्था—प्रबन्ध । संस्था—योजना ।

हृ धातु से बने शब्द—प्रहर—चोट । संहार—विनाश । आहार—भोजन । विहार—भ्रमण, भोग । व्यवहार—आचरण । परिहार—परित्याग । उपहार—भेंट । अपहरण—चोरी । प्रतिहार—द्वारपाल । प्रत्याहार— निवारण ।

ज्ञा धातु से बने शब्द—अवज्ञा—अनादर । अनुज्ञा—अनुमति । अभिज्ञान—स्मारक । परिज्ञान—सम्यक ज्ञान । प्रतिज्ञा—वायदा । विज्ञान—विशेष ज्ञान ।

एकार्थक शब्दों में सूक्ष्म अन्तर

हिन्दी भाषा में ऐसे बहुत से शब्द प्रयोग में आते हैं जो साधारणतया पर्यायवाची से ज्ञात होते हैं, किन्तु जिनके अर्थ में कुछ न कुछ अन्तर अवश्य रहता है । छात्रों को ऐसे शब्दों के प्रयोग में सावधानी रखनी चाहिए । इस प्रकार के कुछ प्रचलित शब्द नीचे लिखे जाते हैं ।

अज्ञ, मूर्ख—जिसे कुछ ज्ञान नहीं होता उसे अज्ञ और जड़ बुद्धि वाले को मूर्ख कहते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अमूल्य, दुर्मूल्य, बहुमूल्य—जिस वस्तु का कोई मूल्य निश्चित न किया जा सके, उसे अमूल्य, उचित मूल्य से अत्यन्त अधिक मूल्य वाली वस्तुओं को दुर्मूल्य और उचित मूल्य तथा अधिक मूल्य वाली वस्तु को बहुमूल्य कहते हैं। विद्या अमूल्य है, काले बाजार में कपड़ा दुर्मूल्य है और सोना एक बहुमूल्य धातु है।

अस्त्र, शस्त्र—फेंक कर प्रहार करने वाला अस्त्र और हाथ में रखकर प्रहार करने वाले को शस्त्र कहते हैं। वाण अस्त्र और तलवार शस्त्र है।

आचार, व्यवहार—साधारण वर्ताव को आचार, और कभी विशेष व्यक्ति के प्रति होने वाले वर्ताव को व्यवहार कहते हैं। जैसे—रावण का आचार अति निन्दनीय था। तुम्हारे साथ राम का व्यवहार ठीक नहीं है।

आयु, अवस्था—सम्पूर्ण जीवन आयु और जन्म से वर्षों की गणना अवस्था कही जाती है। जैसे—राम की सम्पूर्ण आयु कष्टों में ही बीती। इस समय मेरी अवस्था ३० वर्ष है।

प्रेम, स्नेह, भक्ति, प्रणय, श्रद्धा—एक अवस्था वालों का प्रेम, बड़ों की छोटों पर प्रीत स्नेह, छोटों की बड़ों पर प्रीति भक्ति, पति-पत्नी अथवा प्रेमी प्रेयसी की प्रीति प्रणय, और अच्छे गुणों पर होने वाली निष्ठा श्रद्धा कही जाती है।

भ्रान्ति, सन्देह—असत्य धारण को भ्रान्ति कहते हैं और मन के अस्थिर विचारों को सन्देह। जब मनुष्य भ्रान्ति की अवस्था में होता है, तब उसे अपना वह अवस्था ज्ञान सत्य होता है। किन्तु संदेह में मनमें कई प्रकार के विचार आते हैं और उस समय मनुष्य किसी भी निश्चय पर नहीं पहुँच पाता जैसे—तुमने भ्रांति से सीपी को चाँदी समझ लिया। राम के यहाँ आने में सन्देह है।

उद्योग, उद्यम—भरसक प्रयत्न को उद्योग और व्यवसाय (पेशा) को उद्यम कहा जाता है। जैसे—उद्योग करो, तुम्हें सफलता प्राप्त होगी, सुखी जीवन बिताने के लिए कोई न कोई उद्यम करना ही चाहिए।

मुनि, ऋषि—धर्म और तत्व पर विचार करने वाले को मुनि और वेद मन्त्रों की व्याख्या करने वाले को ऋषि कहते हैं। पाणिनि मुनि और विश्वामित्र ऋषि थे।

अर्पण, प्रदान—छोटों का बड़ों को देना-अर्पण, और बड़ों का छोटों को देना, प्रदान कहा जाता है जैसे—एकलव्य ने द्रोणचार्य को अगूठा अर्पित किया। शिव ने अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्रदान किया।

उत्साह, साहस—भय न होने पर काम को करने की प्रेरणा उत्साह और भय उत्पन्न होने पर हिम्मत को न हार कर काम करने की प्रेरणा को साहस कहा जाता है। जैसे-महात्मा गाँधी में अहिंसा पर चलने का उत्साह था। फुसकारते हुये सर्प को सामने देखकर भी उसने साहस से एक लाठी मारी और उसका काम तमाम कर दिया।

स्त्री, पत्नी, महिला—स्त्री जाति मात्र अथवा अपनी पत्नी को स्त्री, केवल अपनी बधू को पत्नी और किसी अच्छे घर की स्त्री को महिला कहते हैं। जैसे—हमें स्त्रियों के प्रति उदार होना चाहिए, राम की स्त्री का नाम सीता था। सुदामा की पत्नी ने उसे कृष्ण के पास भेज दिया। बहुत सी महिलाएँ भी हिन्दू कोड विल के विरुद्ध हैं।

अज्ञान, अनभिज्ञ—स्वाभाविक बुद्धि से रहित अज्ञान और अनुभव शून्य अनभिज्ञ कहा जाता है। जैसे—पाँच वर्ष की अवस्था तक बालक अज्ञान रहता है। राम नृत्य कला से अनभिज्ञ है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

त्रुटि, ह्रास—किये जाने वाले कार्य में किसी भी प्रकार की कमी रह जाना त्रुटि और कार्य के पूर्ण हो जाने के बाद उसके किसी अंग का बिगड़ना ह्रास होता है जैसे—इस निबन्ध में अनेक त्रुटियाँ हैं। वृद्धावस्था में शारीरिक शक्तियों का ह्रास होने लगता है।

अभिज्ञता, बहुदर्शिता, वेदना, ज्ञान—किसी विषय को साधारण तौर से जानना अभिज्ञता, विषय के अंग प्रत्यंग को समझना बहुदर्शिता, किसी पदार्थ के सम्बन्ध में इन्द्रियों द्वारा होने वाला अनुभव वेदना, इन्द्रिय जन्य अनुभव का हृदय द्वारा पूर्ण रूप से ग्रहण ज्ञान होता है।

बन्धु, सुहृद, मित्र, सखा—अपने प्रिय का वियोग सहने में असमर्थ पुरुष को बन्धु, प्रिय की राय से सहमत रहने वालों को सुहृद, समान क्रिया वालों को मित्र और एक प्राण दो तन वालों को सखा कहा जाता है।

अलौकिक असाधारण, अस्वाभाविक—संसार में कठिनता से प्राप्त होने वाले पदार्थ को अलौकिक, साधारण से किसी विशेष गुण रखने वाले को असाधारण और स्वभाव के विरुद्ध को अस्वाभाविक कहते हैं।

सेवा, शुश्रूषा, परिचर्या—बड़ों की परिचर्या को सेवा, दीन दुखी अथवा रोगी की परिचर्या को शुश्रूषा कहते हैं और साधारण तौर से उक्त दोनों अर्थों में परिचर्या का प्रयोग होता है।

मन, चित्त, बुद्धि—सुख आदि की उपलब्धि के साधन और संकल्प तथा विकल्प के करने वाले को मन, स्मरण तथा विस्मरण करने वाले को चित्त कर्त्तव्यादि का निश्चय करने वाली को बुद्धि कहते हैं।

अहङ्कार, अभिमान, दर्प, गौरव, दम्भ, मान—अपने गुणों को वास्तविकता से अधिक समझना अहंकार, प्रतिष्ठा में अपने को बड़ा तथा दूसरों को छोटा समझना अभिमान, किसी बन्धन, नियमादि की परवाह न करना दर्प, विद्या कुल धन आदि के कारण अभिमान करना गर्व, अपनी विशेषताओं का वास्तविक ज्ञान गौरव, गुण रहित, पुरुष का बाहरी दिखावा दम्भ, अपने आपको पूज्य समझना मान है।

निन्दा अपवाद, कलङ्क, अपयश—सत्य दोषारोपण निन्दा और असत्य दोषारोपण अपवाद होता है। निन्दा तथा अपवाद के कारण कलङ्क लगता है। निन्दा तथा अपवाद क्षणिक होता है और अपयश स्थायी होता है।

आधि, व्याधि—मानसिक पीड़ा को आधि और शारीरिक पीड़ा को व्याधि कहा जाता है।

सन्तोष, तृप्ति, शान्ति—प्राप्त वस्तु को ही बहुत कुछ मान लेना सन्तोष और इच्छा के सन्तुष्ट होने को तृप्ति कहते हैं। शान्ति इच्छाओं के निवृत्त होने से होती है, अतः तृप्ति क्षणिक और शान्ति स्थायी होती है। तृप्ति इन्द्रियों का विषय है और मन को तृप्ति थोड़े से ही प्रयत्न से प्राप्त हो जाती है किन्तु शान्ति के लिए अभ्यास तथा साधना की आवश्यकता होती है।

आनन्द, आह्लाद, आमोद उल्लास—आनन्द—स्थायी तथा गम्भीर और आह्लाद क्षणिक तथा तीव्र होता है। धर्म तथा कलाओं के अनशीलन से आनन्द होता है। इन्द्रियों की तृप्ति से आमोद होता है। आह्लाद मानसिक कारण से और आमोद मानसिक

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा शारीरिक दोनों कारणों में उत्पन्न होता है। किसी कार्य में सफलता प्राप्त होने के बाद अथवा प्राप्त होने की पूर्ण आशा होने पर ही उल्लास होता है।

मन्त्रणा, परामर्श, युक्ति—गुप्त रीति से किसी विश्वस्त के कर्तव्य का निर्धारण मन्त्रणा, परिणाम का पूर्ण रीति से विचार कर किसी एक पुरुष द्वारा प्रकट किया हुआ मत परामर्श और बहुत मनुष्यों का परामर्श युक्ति कही जाती है।

आशङ्का, शंका, भय, आतङ्क, त्रास—भविष्य के विषय में अमंगल की सम्भावना से मन में उत्पन्न होने वाले क्लेशजनक भाव को आशङ्का और उसी अमंगल सूचना को शङ्का कहते हैं। किसी अमंगल की आशङ्का से होने वाले मन के सङ्कोच को भय तथा उसके कारण शरीर में उत्पन्न होने वाले विकार को आतङ्क कहते हैं। भय के कारण होने वाली वेदना को त्रास कहा जाता है।

विलाप, प्रलाप, अवसाद—शोक के कारण होने वाली वाणी के उद्गार को विलाप, विभिन्न कारणों से टूटे-फूटे शब्दों में कहे हुए वाक्यों को प्रलाप, विषाद-ग्रस्त मन की अस्वाभाविक अवस्था को अवसाद कहते हैं। 'विलाप' शोक का, 'अवसाद' विषाद का परिणाम होता है।

अनुकम्पा, दया, करुणा, कृपा, अनुग्रह, सहानुभूति, समवेदना—दूसरों के दुःख को देखकर अपने को उत्पन्न होने वाला दुःख अनुकम्पा, दूसरों के दुःख को दूर करने की इच्छा दया, दूसरों के दुःख को दूर करने की आकुलता, करुणा, दूसरों के दुःख को दूर करने की चेष्टा कृपा, दूसरों के कष्ट सम्पादन की अनुग्रह, दुखः तथा सुख का समान रूप से अनुभव सहानुभूति और दूसरे की वेदना को समान रूप से अनुभव समवेदना होता है।

पुलकित रोमांचित—आनन्द तथा आह्लाद होने से मनुष्य रोमाँचित होकर पुलकित होते हैं। भय आदि में रोमांचित तो हुआ जाता है; पर पुलकित नहीं हुआ जाता।

स्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेष—किसी दूसरे से अधिक उन्नति करने की इच्छा को स्पर्धा, दूसरे की उन्नति को देखकर होने वाली जलन को ईर्ष्या और किसी कारण से दूसरे से होने वाली शत्रुता तथा घृणा को द्वेष कहते हैं।

कष्ट, क्लेश दुःख वेदना, व्यथा यातना, यन्त्रणा—शरीर तथा मन को समान रूप से ज्ञात होने वाली असुविधा कष्ट कही जाती है—शारीरिक कष्ट को क्लेश तथा मानसिक को दुःख कहते हैं। वेदना भी एक प्रकार का कष्टकारक अनुभव है। किसी चोट आदि से उत्पन्न पीड़ा व्यथा होती है। तीव्र व्यथा ही यातना है। दुःख भार ज्ञात होने पर यन्त्रणा होती है।

विशेषार्थक संख्यावाचक शब्द

हिन्दी में कुछ ऐसे संख्यावाचक शब्द भी प्रयोग में आते हैं, जो अपना विशेष अर्थ रखते हैं। किसी अवतरण की व्याख्या करते समय उसमें आये हुए ऐसे शब्दों का विवेचन आवश्यक होता है। अतः हम नीचे इस प्रकार के कुछ शब्दों को लिख रहे हैं—

एक—ईश्वर, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, गणेश का दाँत, शुक्राचार्य की आँख।

दो पक्ष—कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष।

दो मार्ग—प्रवृत्ति, निवृत्ति।

दो आयण—उत्तरायण, दक्षिणायण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दो उपासना—सगुण, निर्गुण ।
तीन विद्या—परा, अपरा ।
तीन लोक—आकाश, पाताल, मृत्यु लोक ।
तीन देव—ब्रह्मा, विष्णु, महेश ।
तीन गुण—सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण ।
तीन ऋण—पितृऋण, ऋषिऋण, देवऋण ।
तीन काल—भूत, वर्तमान, भविष्य ।
तीन अग्नि—जठराग्नि, दावाग्नि, बड़वाग्नि ।
तीन दोष—(शारीरिक)—वात, पित्त, कफ ।
तीन दुःख—दैहिक, दैविक, भौतिक ।
तीन शरीर—सूक्ष्म, स्थूल, कारण ।
तीन शारीरिक अवस्था—बालपन, यौवन, वृद्धावस्था ।
तीन कर्म—संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण ।
तीन नित्य पदार्थ—जीव, ब्रह्म, प्रकृति ।
तीन प्रकार की वायु—शीतल, मन्द, सुगन्ध ।
तीन जीव—थलचर, जलचर, नभचर ।
तीन वेद के काण्ड —ज्ञान, कर्म, उपासना ।
तीन राम—परशुराम, रामचन्द्र, बलराम ।
तीन बल—तन, मन, धन ।
तीन श्रोता—मुक्त, मुमुक्ष, विषयी ।
चार वेद—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ।
चार उपवेद—आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, स्थापत्यवेद ।
चार ब्राह्मण—शतपथ, गोपथ, ऐतरेय, सात ।
चार वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।
चार आश्रम—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास ।
चार अवस्था—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय ।
चार अङ्ग—(नीति के)—साम, दाम, दण्ड, भेद ।
चार युग—सत युग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ।
चार फल—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ।
चार दिशा—पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण ।
चार प्रकार की सृष्टि—स्वेज, अण्डज, जरायुज, उद्भिज ।
चार धाम—जगन्नाथ, रामेश्वर, द्वारिका, बद्रीनाथ ।
चार शत्रु—काम, क्रोध, लोभ, मोह ।
चतुरंगिणी सेना—हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पंच देव—विष्णु, शिव, गणेश, दुर्गा, सूर्य ।

पंच गव्य—दुग्ध, दधि, घृत, गोबर, मूत्र ।

पंच तत्व—पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, अग्नि ।

पंच कर्मेन्द्रिय—हाथ, पाँव, मुख, लिंग, गुदा ।

पंच ज्ञानेन्द्रिय—कान, नाक, आँख, जीभ, त्वचा (खाल) ।

पंचामृत—दूध, दही, घी, शहद, शक्कर ।

पंच कन्या—अहिल्या, द्रोपदी, सीता, तारा, मन्दोदरी ।

पंच रत्न—सुवर्ण, मोती, हीरा, लाल, नीलम ।

पंच यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, इन्द्रिय-निग्रह ।

पाँच नियम—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, प्रणिधान ।

पंच यज्ञ—महायज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ ।

पंच कोष—प्रयोमय, मनोमय, प्राणमय, आनन्दमय, विज्ञानमय ।

पांच कामदेव के शर—मोहित, मस्त, तपन, शुष्क, शिथिल ।

पांच विद्यार्थी लक्षण—काक, चेष्टा, बकध्यान, श्वाननिन्द्रा, अल्पाहार, गृहत्याग ।

पाँच पिता—जनक, उपनेता, ससुर, अन्नदाता, भयत्राता ।

पाँच माता—जननी, आचार्य-पत्नी, सास, राजपत्नी, जन्मभूमि ।

पांच प्राण—प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान ।

छः वेदांग—शिक्षा, निरुक्ति, कला, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष ।

छः शास्त्र—मीमांसा, न्याय, वैशेषिक, योग, साख्य, वेदान्त ।

छः रस—कड़आ, कषला, खट्टा, खारी, मीठा, चरपरा ।

छः ऋतु—बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर ।

छः जीव के गुण—इच्छा, द्वेष, ज्ञान, प्रयत्न, सुख, दुःख ।

छः घोर दुःख—गर्भ-दुःख, जन्म-दुःख, रोग-दुःख, जरा-दुःख, क्षुधा-दुख, मरण-दुःख ।

सात स्वर—षडज, ऋषभ, गाँधार, मध्यम, धैवत, निषाद, प्रकृत (सा, रे, गा, म, प, ध, नि ।)

सात वार—सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, रवि ।

सात द्वीप—जम्बू, प्रलक्ष, कुश, शाल्मी, क्रौंच, शाक, पुष्कर ।

सप्त सागर—क्षीर, दधि, घृत, इक्षु, मधु, मदिरा, लवण ।

सप्त ऋषि—गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि ।

सात दोष—(विद्यार्थी के)—आलस, निद्रा, स्वाद, मन्द-बुद्धि, हठ, काम, क्रीड़ा, महाचिन्ता ।

अष्ट सिद्धि—अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्त, प्राकम्य, ईशित्व, वशित्व ।

आठ मूर्ख स्त्रियों के लक्षण—अविवेक, माया, भय, साहस, चपलता, झूठ, अशौच, निर्दयता ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आठ अङ्ग—(योग के)—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ।

अष्ट धातु —सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल, लोहा, सीसा, काँसा, राँग ।

अष्ठ छाप के कवि —सूरदास, कृष्णदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास, चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, गोविन्ददास, नन्ददास ।

आठ विवाह—ब्राह्म, देव, आर्य, प्राजापत्य, असुर, गन्धर्व, पैशाच, स्वयंवर ।

आठ वसु—सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ।

नवधाभक्ति—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, संख्य, दास, आत्म-निवेदन ।

नवदुर्गा—शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कुष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायिनी, कालरात्री, महागौरी, सिद्धदात्री ।

नवरत्न—हीरा, मणिक, पन्ना, मोती, गोमेद, मूँगा, लहसुनियाँ, पुखराज, नीलम ।

नवरत्न (हिन्दी के)—तुलसी, सूर, देव, बिहारी, कबीर, भूषण, मतिराम, चन्द-बरदाई, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ।

नवग्रह—सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुद्ध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु ।

नवरस —शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत, शान्त ।

नवनिधि—पद्म, महापद्म, शङ्ख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील, खर्व ।

नवगुण (ब्राह्मणों के)—शुचि, तपस्वी, सन्तुष्ट, सत्यवक्ता, शीलवान, दृढ़-प्रतिज्ञ, दाता, धर्मात्मा, दयालु ।

दस धर्म लक्षण—धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य, क्रोध-त्याग ।

दस दिग्पाल—गरुडध्वज, गोविन्द, अग्नि, पवन, ईश, राक्षस, यम, सुरपति, धनद, वरुण ।

दश दिशा—पूर्व, पश्चिमी, उत्तर, दक्षिण, ईशान, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ऊपर, नीचे ।

ग्यारह रुद्र—प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय, आत्मा ।

बारह राशि—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन ।

बारह आदित्य—दिव, बृहदभानु, रवि, चक्षु, ऋचीक, भानु, विभावसु, अर्क, आज्ञा, वह, सविता, आत्मा, सद्य ।

बारह भूषण—नूपुर, किंकिणी, हार, नथ, चूड़ी, अंगूठी, शीशफूल, बेंदी, कङ्कण, कण्ठश्री, बाजूबन्द, टीका ।

चौदह लोक—तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, पाताल, भूलोक, भुवलोक, स्वर्गलोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चौदह विद्या—ब्रह्म, ज्ञान, रसायन, श्रुति, वैदिक, ज्योतिष, व्याकरण, धनुर्विद्या, जलतरंग, सङ्गीत, नाटक, घुड़सवारी, कोकशास्त्र, चोरी, चातुर्य ।

चौदह रत्न—श्री, रम्भा, बिष, वारुणी, अमृत, शङ्ख, ऐरावत, धनुष, धन्वन्तरि, कामधेनु, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, उच्चैःश्रवा, कौस्तभमणि ।

चौदह तिथि—प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा अथवा अमावस्या तक ।

सोलह संस्कार—गर्भादान, पूंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामाकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, विवाह, समावतन, वानप्रस्थ, सन्यास, अन्त्येष्टि ।

सोलह शृङ्गार—अङ्गशौच, मज्जन, दिव्य वस्त्र, महावर, केश, माँग, ठोढ़ी, माथा, मेंदी, उबटन, भूषण, सुगन्ध, मुखराग, दन्तराग, अधरराग, काजल ।

षोडशोपचार—पूजाविधि—आवाहन, स्थापन, पाद्य, सिंहासन, अर्घ्य आचमन, स्नान, चन्दन, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, प्रदक्षिणा, नमस्कार, आरती ।

अठारह पुराण—ब्रह्म, विष्णु, शिव, पद्म, श्रीभागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवर्त, लिङ्ग, बराह-स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़, ब्रह्माण्ड ।

चौबीस अवतार—सनत्कुमार, बाराह, नारद, नरनारायण, कपिल, दत्तात्रेय, यज्ञपुरुष, ऋषभ, पृथु, मत्स्य, कर्म धन्वन्तिर, मोहिनी, नृसिंह, बामन, परशुराम, व्यास, हस, राम, कृष्ण, हयग्रीव, हरि, बुद्धि, कल्कि ।

सत्ताईस नक्षत्र—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वा, फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती ।

अक्षोहिणी सेना—चतुरंगिनी सेना जिसमें १०९३५० पैदल, ६५६१० घोड़े, ३१८७० रथ और ११८७० हाथी होते हैं ।

८४ लाख योनी—४ लाख मनुष्य+९ लाख जलचर + १० लाख नभचर (पक्षी)+११ लाख कृमि+२३ लाख पशु+२७ लाख स्थावर हैं ।

पदवी-वाचक शब्द

नित्यप्रति की बातचीत तथा लिखने में हम प्रायः पदवी-वाचक शब्दों का प्रयोग करते हैं । इनके प्रयोग से शिष्टता तथा सभ्यता का भाव प्रकट होता है और भाषा में सुन्दरता आती है । नीचे ऐसे कुछ शब्द लिखे जाते हैं ।

उस्ताद—किसी कला अथवा विद्या में चतुर पुरुष के लिए आता है ।

कुमारी—अविवाहित स्त्रियों के नाम के पहले आता है ।

कुंवर—क्षत्रियों तथा जमींदारों तथा राजपूतों के नाम के पहिले आता है ।

कुंवरि—क्षत्रियों तथा राजाओं की पुत्रियों के नाम से पहले आता है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौधरी—अहीरों आदि के नाम के पहले आता है।
ठाकुर—क्षत्रियों के नाम के पहिले आता है।
पण्डित—ब्राह्मणों अथवा जैन धर्म के पुरोहितों के नाम के पहले आता है।
प्रजापति—कुम्हारों के लिए आता है।
बाबा—पितामह अथवा साधुओं के लिए आता है।
बाबू—शिक्षित अथवा फैसनपरस्त पुरुषों के लिए आता है।
बाल्मीकि—भंगियों के लिए आता है।
बौहरे—ब्याज पर रुपया देने वाले पुरुषों के लिए आता है।
मेहतर—भंगियों के लिए आता है।
महन्त—धनी साधुओं अथवा उनके अखाड़ों के प्रमुखों के नाम से पहले आता है।
महरा—कहारों के लिए आता है।
महामहिम—गवर्नरों अथवा राजपूतों के नाम से पहले आता है।
मास्टर—किसी कला के ज्ञाता अथवा शिक्षकों के लिए आता है।
मिर्जा—मुगलों के नाम से पहले आता है।
मिस्त्री—बढ़ई अथवा कारीगरों के लिए आता है।
मुंशी—ब्रह्मणेतर शिक्षकों, कायस्थों अथवा मुहर्रिरों के लिए आता है।
मौलवी—मुसलमान अध्यापकों के लिए आता है।
रैदास—चमारों के लिए आता है।
लाला—व्यापारी, वैश्यों अथवा सेठों के नाम से पहले आता है। पटवारियों तथा कायस्थों के लिए भी प्रयुक्त होता है।
वर्मा—क्षत्रियों के नाम के पीछे प्रयुक्त होता है।
शर्मा—ब्राह्मणों के नाम के पीछे आता है।
शाह—व्यापारियों के नाम के पहले आता है।
श्रद्धेय—आदरणीय पुरुषों के लिए आता है।
श्री, सुश्री—अपराधी तथा कुत्सित पुरुषों के अतिरिक्त सभी प्रकार के पुरुषों के नाम के पहले आता है।
श्रीमती—विवाहित स्त्रियों के नाम के पहले आता है।
श्रीमान् श्रीयुत—आदरणीय पुरुषों के नाम के पहले आता है।
शेख—कसाइयों के नाम के पहले आता है।
सरदार—सिक्खों के नाम के पहले आता है।
स्वामी—साधुओं के लिए आता है। स्त्रियाँ अपने पति के लिए तथा नौकर अपने मालिक के लिए भी प्रयोग करते हैं।
हरिजन—प्राचीन काल में इसका प्रयोग भगवान के भक्तों के लिए होता था, किन्तु आधुनिक काल में यह महतरों के लिए प्रयुक्त होता है।
हाजीजी—हज करके लौटे हुये मुसलमान के लिए प्रयोग होता है।
हाफिजजी—कुरान को कंठस्थ रखने वाले मुसलमान के लिए प्रयुक्त होता है।

विशेष भाव वाचक शब्द

प्रत्येक भाषा में कुछ ऐसे शब्द होते हैं, जिनमें एक लम्बा विशेष भाव छिपा रहता है। हिन्दी में भी इनकी कमी नहीं है। छात्र प्रायः इनके प्रयोग में अशुद्धि कर जाते हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अतः छात्रों को इनके अर्थ का ध्यान पूर्वक मनन करके इनका प्रयोग करना चाहिये। नीचे इस प्रकार के कुछ शब्द लिखे जाते हैं।

जिस बच्चे के माँ बाप न हो—अनाथ।
जिस स्त्री का पति मर गया हो—विधवा, राँड।
जिस पुरुष की पत्नी मर गई हो—विधुर, रंडुआ।
जिस पुरुष का विवाह न हुआ हो—कुआरा, कुमार।
जिस स्त्री के सन्तान पैदा न होती हो—बाँझ, बन्ध्या।
जिसके पुत्र पैदा न होता हो—निपूती।
जिस स्त्री के पति पुत्र न हों—अनीरा।
पति, पुत्रवती स्त्री—पुरन्ध्री, कुटुम्बिनी। दुराचारणी स्त्री—कुलटा।
क्रोध करने वाली स्त्री—भामिनी।
मान करने वाली स्त्री—मानिनी।
राजा के साथ अभिषेक की हुई रानी—महिषी, पटरानी।
छोटा भाई—अनुज। बड़ा भाई—अग्रज।
छोटे कद का आदमी—वामन, बौना।
सारी पृथ्वी का राजा—सार्वभौम, चक्रवर्ती।
शिवजी के गण—प्रमथ।
शिवजी का धनुष—पिनाक।
शिवजी का निवास स्थान—कैलाश।
इन्द्र की नगरी—अमरावती। इन्द्र का घोड़ा—उच्चैश्रवा।
इन्द्र का सारथी—मातिल। इन्द्र का पुत्र—जयन्त।
इन्द्र का बाग—नन्दन वन। इन्द्र का हाथी—ऐरावत।
इन्द्र का अस्त्र—वज्र। भगवान का भन्डारी—कुबेर।
कुबेर की नगरी—अलकापुरी। कुबेर का बिमान—पुष्पक।
देवलोक की नर्त्तकियाँ—अप्सरायें। देव लोक के गायक—गन्धर्व।
दो दिशाओं के बीच की दिशा—अपदिशा, उपदिशा, विदिशा।
दोपहर का समय—मध्याह्न।
दोपहर बाद का समय—अपराह्न।
रात्रि के पर्व भाग का समय—प्रदोष।
मध्य रात्रि का समय—निशीथ।
सूर्य उदय होने का पर्वत—उदयाचल।
सूर्यास्त होने का पर्वत—अस्ताचल।
सूर्योदय से पूर्व का समय—अरुणोदय।
अरुणोदय के पूर्व का समय—उषाकाल।
दिन भर का कार्य—दिन क्रम, दिनचर्या।
वृक्षों और बेलों से ढका हुआ सुरम्य स्थान—कुञ्ज, निकुँज।
वृक्षों और वेलों, पत्तों आदि से बनाया हुआ कृत्रिम घिरा हुआ।
सुरम्य स्थान—मण्डप।
चारों युग—चतुर्युगी। चतुर्युगी—मन्वन्तर।
सहस्त्र चतुर्युगी—कल्प। हिन्दूकानूनी ग्रन्थ—स्मृति।
नरक की नदी—वैतरणी। नरक का राजा—यम।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नरक का नौकर—पुण्डरीक।
सफेद कमल—पुण्डरीक। नील कमल—इन्दीवर।
श्वेत कमल—कोकनन्द। कमल की डंडी—मृणाल।
फूलों का मधु—मकरन्द फूलों का रज—पराग।
कमल रज—किंजल्क, केसर।
ऋषियों का निवास स्थान—तपोवन, कुटी।
आचार्य ऋषियों के स्कूल—आश्रम।
पहाड़ के ऊपर की सम भूमि —अधित्यका।
पहाड़ के नीचे की सम भूमि—उपत्यका, घाटी।
बना खिला फूल—कली। किंचित खिली हुई कली—मुकूल।
मदमाता हाथी—मदकल। हाथी का बच्चा—कलभ।
हाथी का सिर—कुम्भ।
हाथी का हांकने का हथियार—अंकुश।
जो दुनिया में प्रसिद्ध हो—विश्व—विश्रुत।
अत्यन्त लोभ लालसा—लोलुप, लालायित।
भय भूख प्यास आदि से घबड़ाया हुआ— कातर, अधीर।
मारकर खाने वाला—हिंसक, हिंस्र। महामूर्ख—जड़।
भय शोकादि से कर्त्तव्याकर्त्तव्य ज्ञान रहित—किंकर्त्तव्य-बिमूढ़।
गुरु परम्परा द्वारा एक मत तथा उपदेश को मानने वाला जन समूह—सम्प्रदाय।
सीपी, बाँसी, सूकरी, करौ, धरी, और मरसाल से बनी माला— बैजयन्ती माला।

बिबिध-शब्दावली

हिन्दी राष्ट्रभाषा पद पर आसीन होने के साथ-साथ यह अनुभव होने लगा है कि प्रचलित अंग्रेजी तथा उर्दू शब्दों के स्थान पर हिन्दी के शब्दों का प्रयोग किया जाय। विद्वानों ने इस कार्य को अपने हाथों में लिया और उन्होंने संस्कृत व्याकरण की सहायता से इस कार्य को पूरा किया। प्रत्येक हिन्दी सेवक को इन शब्दों का ज्ञान आवश्यक है। छात्रों की सुविधा के लिये हम विभिन्न प्रकार से इन शब्दों का परिचय देंगे।

संविधान में प्रयुक्त हिन्दी शब्द (अंग्रेजी अर्थों सहित)

अग्रिम धन—Advance
अतिक्रमण—Violation
अधिकार—Right
अधिपत्र—Warrant
अधिष्ठाता—Presiding Officer
अधिसूचना—Notification
अधीक्षक— Superintendent
अधीन—Subject
अधीन अधिकारी—Subordinate-officer
अध्यक्ष—Speaker
अध्यादेश—Ordinance
अन्तर्राष्ट्रीय—International
अंतःकरण—Conscience
अपराध—Crime
अपराध—Offence
अपील—Appeal
अभिकरण—Agency
अभिकर्त्ता—Agent
अभिप्राय— Opinion
अभियाचना—Demand
अभियुक्त—Accused
अभिलेख— Record
अभ्यर्थी—Candidate

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनर्हता—Disquality
अनुज्ञाप्ति—Licence
अनुज्ञा—V. permit
N. permission
अनुयान—Grant
अनुदेश—Instruction
अनुपूरक—Supplimentary
अनुशासन—Discipline
अनुशासन सम्बन्धी—Discipli—nary
अनुसन्धान—V. Investigation
N. Investigation
अनुस्मारक—Reminder
असैनिक—Civil
अंग—Unit
आजीविका—Calling
अज्ञाप्ति—Decree
आदेश—Order
आपराधिक—Criminal
आपात—Emergency
आभार—Obligation
आय कर—Income-tax
आयात शुल्क—Import duty
आयुक्त—Commissioner
आयोग—Commission
आरक्षक—Police
आरक्षक बल—Police Force
आह्वान—Summon
इच्छा पत्र—Will
उत्तराधिकारी— Succession
उत्तराधिकारी—Successor
कर—Tax
करार—Agreement
कर्त्तव्य—Duty
कर्मचारी वृन्द—Staff
कानून सम्बन्ध—Legal
कारखाना—Factory
कारोबार—Business
कारागार—Prison
कारा-वन्दी (कैद)—Prisoner
कारावास (कैदी)—Imprisonment
कार्य—Business
अर्जी—Petition
अर्थ दण्ड—Fine
अर्हता—Qualification
अल्प संख्या वर्ग—Minority
अवयस्क—Minor
अविभक्त कुटुम्ब—Joint family
अविश्वास प्रस्ताव—Motion of No confidence
अवैध—Illegal
अवैधाचरण—Illegal practice
उत्पादन—Production
उत्पादन शुल्क— Excise duty
उद्योग—Industry
उधार—Loan
उधार ग्रहण—Borrowing
उपचार—Remedy
उपजीविका—Occupation
उपलब्धि—Provision
उपराज्यपाल—Lieutenant Governor
उपाध्यक्ष—Deputy Speaker
उपायुक्त—Deputy Commissioner
उम्मेदवार—Candidate
उल्लंघन—Contravention
ऋण—Debt
ऋण ग्रस्तता—Indebtedness
एकक—Unit
एकस्व—Patent
कणकु—Acount
कदाचार—Misbehavior
कब्जा—Possession
कम्पनी—Company
गजट—Gazette
गणना—Account
गणना परीक्षा—Audit
गणपूर्ति—Quorum
गवेषणा—Research
घोषणा—Declaration
छावनी—Cantonment
दण्डादेश—Sentence
दातव्य—Charities

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कार्यकारी—Acting
कार्यपालिका शक्ति—Executive-Power
कांजी हौज—Cattle Pound
काश्तकार किरायेदार—Tenant
कृतिस्वाम्य—Copyright
कृत्वा—Function
केन्द्रीय गुप्तवार्त्ता विभाग—Central Intelligence Bureau
क्षति—Injury
क्षमताशील— Competent
क्षमा—Pardon
क्षेत्र—Area
खनिज—Mineral
खण्ड—Clause
निर्यात शुल्क—Export duty
निर्वाचन—Election

निर्वाचन क्षेत्र—Constituency
निवृत होना—Retire
निवृत—Retirement
निवृत वेतन—Pension
निषेध—Forbid
नौपरिवहन—Navigation
नौसेना सम्बन्ध—Naval
पक्ष—Party
पदच्युत करना—Dismiss
पदाधिकारी—Officer
परामर्श—Consultation
परिषद्—Council
पर्यवेक्षण—Inspection
पंजी—Register
पंजीबद्ध—Registered
पंजीबन्धन-पंजोयन—Registration
पार-पत्र—Pass Port
पारण—Pass
पारितोषिक—Reward
पावती—Receipt (paper)
पुनरीक्षण—Revision
भारग्रस्त सम्पदा—Encumbered Estates
भू अभिलेख—Land Records
महाजनी—Banking

दावा—Claim
दोषारोप—Charge
नगरपालिका—Municipality
नागरिकता—Citizenship
निकाय—Body
नियन्त्रण—Control
निर्णय—Judgement
निर्णायक मत—Casting Vote
निर्माण—Manufacture
निर्यात—Export
निर्यात कर—Export tax
प्रतिलिपि, प्रतिकृति—Copy
प्रतिनिधि—Representation
प्रतिलिप्यधिकार—Copyright
प्रतिवेदन—Report
प्रत्याभूति—Guarantee
प्रधान मन्त्री— Prime Minister
प्रपत्र—Form
प्रमाण पत्र—Certificate
प्रव्रजन—Migration
प्रशिक्षण—Training
भविष्यनिधि—Provident fund
भर्ती—Recruitment
मुख्य मंत्री—Chief Minister
मूलधन—Capital
मूलधन मूल्य—Capital value
यन्त्रशास्त्र—Engineering
यातायात—Traffic
राजस्व—Revenue
राशि—Amount
राष्ट्र—Nation
रिक्तता, रिक्तस्थान, रिक्त—Vacancy
रूप—Form
रूपांकन—Design
लेखा परीक्षा—Audit
लोग—People
लोक अधिसूचना—Public Notification
वयस्क—Major
वसीयत—Will
वस्तु भाड़ा—Freight
वायु पथ—Airways
विकृत चित्त—Unsound mind

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महाधिवक्ता—Advocate General
महान्यायवादी—Attorny General
महाप्रशासक—Administrator General
महालेखा परीक्षक—Auditor General
श्रद्धा—Faith
मुख्य आयुक्त—Chief Commissioner
मुख्य न्यायाधीश—Chief Judge
मुख्य न्यायाधिपति—Chief Justice
विचारार्थ-प्रस्ताव—Motion for Consideration
वित्तविधेयक—Finance Bill
विधान—Legislation
विधान परिषद्—Legislative- Council
विधान सभा—Legislative Assembly
विधेयक—Bill
विनयोग—Appropriation
विभाग—Section
विभाजन—Distribution
विवाह-विच्छेद—Divorce
विशेषाधिकार—Privilege
विश्वास-प्रस्ताव—Motion of Confidence
वृत्ति—Profession
व्यापार चिह्न—Trade Mark
शाश्वत उत्तराधिकार—Perpetual Succession
शासक—Ruler
संशोधन—Amendment
संसद—Parliament
संस्था—Institution
संस्थापन—Establishment

शिक्षा—Education Instruction
शिल्प प्रशिक्षण—Technical-Training
शिविर—Camp
शिशु—Infant
श्रम—Labour
श्रमिक संघ—Labour Union
सत्र—Session
सदन—House
समर्पण—Dedicate
समवाक्य—Company
समिति—Committee
सम्पूर्ण प्रभुता सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य—Sovereign Democratic Republic
सम्बोधित—Addressed
सम्पत्ति—Property
संरक्षक—Guardian
संविधान—Constitution
सूत्र—Formula
सेवा नियोजन—Employment
सौंपना—Assign, Entrust
स्थायी आदेश—Standing Orders
स्मारक—Memorial
स्वामिलभ्य—Royalties
स्वामी—Owner
हस्तान्तरण—Transfer
हिदायतें—Instructions
सामाजिक रूढ़ि—Social Custom
सामाजिक सेवा—Social Service
सार्वजनिक अभियाचना—Public Demand
सांक्रमिक—Infections
सूची—List

कुछ प्रचलित अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी रूपान्तर

Acknowledgement—प्राप्ति-स्वीकृति
Acquire—प्राप्त करना
Address—अभिनन्दन, पता
Adjourn—स्थगित करना (मुल्तवी करना)
Adjustment—समायोजन

Amendment—संशोधन
Ancillary powers—पूरक अधिकार
Appropriate—समुचित
Appeal—पुनर्विचार की प्रार्थना
Arbitrator—पन्च
Arbitration—पंचायत, निर्णय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Admission card—प्रवेशपत्र
Adopt—अभिग्रहण, (मंजूर करना)
Advisor—परामर्शदाता
Agenda—कार्यावली
Agreement—समझौता
Affirmation—वचन भरना
Boiler—वाष्पाधार
Bond—प्रतिज्ञा लेख
Boycott—बहिष्कार
Byelaw, Sub Rule—उपनियम
Cabinet—मंत्रिमण्डल
Casting Vote—निर्णायक मत
Charge sheet—प्रारोप-पत्र, अपराध-पत्र
Commission—आयोग
Compensation—क्षति पूर्ति
Competition—प्रतियोगिता
Conduct of business—कार्य संचालन
Contract—प्रसंविदा, ठेका
Copy right—मुद्रणाधिकार
Counterfoil—प्रतिपत्र
Custodian—रक्षक
Guarantee—प्रत्याभूत (गारंटी)
Illalbred, Indecent, Immodest—अशिष्ट
Illegality—अवैधता
Impeachment—प्राभियोग प्रारोप
Indecency—अशिष्टता
Introduction—परिचय
Judge—न्यायाधीश
Jury—न्याय समिति
Journalism—पत्रकार कला
Journalist, publicist—पत्रकार
Linguist—बहुभाषाविद्
Loud speaker—ध्वनि वर्द्धक यन्त्र
Loyal—राज भक्त
Mayor—नगराध्यक्ष
Medium—माध्यम
Metaphysics—अध्यात्म शास्त्र
Materialism—भौतिकवाद
Assent—सम्पति
Assessor—न्याय सहकारी
Banquet—भोजनोत्सव
Basis—आधार भूत
Bill—विधेयक (बिल) देय पत्र
Decency—भलमनसाहत
Declaration—प्रख्यापन
Definition—परिभाषा
Deputation—प्रतिनिधि मण्डल, शिष्ट मण्डल
Dictator—अधिनायक, एकाधिपति (तानाशाह)
Diplomacy—कूटनीति
Dismissal—पद-च्युति
Dissolution—विलयन, भंग करना
Draft—प्रारूप, पाँडुलिपि (मसौदा)
Election—चुनाव
Emergency—आकस्मिक आवश्यकता, अचानक संकट
Estimate—प्रागणन (तखमीना)
Ethics—आचार शास्त्र
Expire—अवसान, (बीत जाना) मृत्यु होना
Exposure opening—उद्घाटन
Forestry—जंगल विज्ञान
Foul—अश्लील
Foundry—धातु-निर्माणशाला
Geology—भूगर्भ शास्त्र
Non-intervention—निर्हस्तक्षेप
Ordinance—अध्यादेश
Orphanage—अनाथालय
Pamphlet—पुस्तिका
Physics—भौतिक विज्ञान
Post graduate—अनुस्तनिक
Priviledge—विशेष अधिकार
Platform—मंच
Policy—नीति
Quorum—गणपूरक (कौरम)
Quota—निर्धारित भाग, प्रदत्तांश (कोटा)
Radio Transmitter—दूर ध्वनि प्रेषक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

Minimum—न्यूनतम
Mythology—पुराण कथा
Non Co-operation—असहयोग
Sanatorium—आरोग्य भवन
Script—लिपि
Solution—समाधान
Stationary—लेखन सामिग्री
Stenography—आशु-लिपि-विज्ञान
Superintendent—अधीक्षक
Surrender—आत्म समर्पण
System—पद्धति
Tent—पट-कुटीर (तम्बू)
Testimonial—प्रमाण पत्र
Verification—प्रमाणीकरण
Veto—प्रतिषेधाधिकार
Vitamin—खाद्योज
Waiting Room—प्रतीक्षा गृह

Recommendation—पक्ष समर्थन
Recruit—नव सैनिक
Rectification—परिशोधन
Registrar—पंजीकार
Refree—निर्णय कर्त्ता
Rehearsal—पूर्वाभिनय
Revenue—राजस्व कर (माल-गुजारी)
Right of Veto—विशेषाधिकार
Rumour—किवदन्ती
Torpedo—पोत ध्वंसक
Tradition—परम्परा
Trustee—न्याय रक्षक
Unlawful—अवैध
Vacancy—रिक्त पद
Valuation—मूल्यांक, मूल्य निर्धारण
Zoology—पशु शास्त्र

साधारण रूप से प्रचिलित विभिन्न भाषाओं के शब्दों का हिन्दी रूपान्तर

अदालती दीवानी—नागरिक न्यायालय।
अफसर इन्चार्ज—प्रबन्धक पदाधिकारी।
इकरारनामा—स्वीकृत पत्र।
इकबाल—अंगीकरण।
इजरा, बसूली—निष्पादन।
इस्तकरार—अधिकार घोषणा।
हस्तगासा—अभियोग पत्र।
एहतियात—पूर्वोपाय।
कब्जा सौगन्ध—आधिपत्य।
कसम—सौगन्ध, शपथ।
कानून—विधान।
गवर्नर—राज्यपाल।
गवाह—साक्षी।
गैर कानून—अवैधानिक।
घूस, रिश्वत—उत्कोच।
चैक—(Cheque)—धनादेश।
चोट—आघात।
जज—न्यायाधीश।
जमानतदार—प्रतिभू।
जमीदार—भू स्वामी।

कानून—विधान।
काला पानी—आजन्म देश निर्वासन
कांजी हौज—मवेशीखाना, पशु निरीक्षालय।
कुर्की—आसेध।
खतौनी—कृषकों की पंजी।
खरीदार—क्रेता।
खीज—उद्वेग।
खेवट—भू स्वामी।
खोज—जाँच अन्वेषण।
गन्दा—अश्लील।
नाबालिग—अवयस्क।
पागल—विक्षिप्त।
पासपोर्ट—पारपत्र।
पैमाइश—भू मापन।
बजट—आय व्यय।
बधिया आत्ता—छिन्नमुष्क।
बयान—कथन, वक्तव्य।
बालिग—वयस्क।
बिल—विधेयक।
मालगुजारी—राजस्व कर।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाल—षड्यन्त्र, दुरभिसन्धि ।
जिरह—प्रत्यनुयोग ।
जुर्माना—आर्थिक दण्ड, अर्थ दण्ड ।
जेलखाना—कारावास ।
झूठी गवाही—मिथ्या साक्ष्य ।
डायरी—दैनन्दिनी ।
ड्राइवर—चालक ।
डिक्री—धन निर्णय ।
डिक्रीदार—ग्रहीता ।
तशखीश—निर्धारण ।
तस्दीक किया हुआ—प्रमाणीकृत ।
तहरीर—लिपिवद्ध ।
ताम्मोल—सिद्ध पूर्ति ।
तितर बितर—विच्छिन्न ।
दखीलकार काश्तकार—सतत कृषक ।
धोखा—प्रतारण ।
नकल—प्रतिलिपि ।
मियाद—अवधि ।
मुआविजा—क्षतिपूरक धन ।
मुकद्दमा—अभियोग ।
मुख्तार—प्रतिनिधि ।
मुचलका—प्रतिज्ञा लेख ।
मुद्दई—वादी ।
मुद्दालय—प्रतिवादी ।
मुलजिम—अभियुक्त ।
मुस्तगीस फरियादी—अभियोगी ।
मुर्हरिर क्लर्क—लिपिक ।
म्युनिसिपल्टी—नगरपालिका ।
रजिस्टर—पंजी, पंजिका ।
रहन—बन्धक ।
वाक आउट—बहिर्गमन ।
शिकमी—उपकृषक ।
शिकायत—प्रतिकूल अभियोग ।

मुहावरे और कहावतें

'मुहावरा' अरबी भाषा का शब्द है। साधारण रूप से उनका अर्थ है अभ्यास, बातचीत। किन्तु हिन्दी में अब यह एक ऐसे वाक्यांश के लिए प्रयुक्त होता है जो अपने शब्दार्थं के स्थान पर एक विचित्र अर्थ प्रगट करता है। जैसे—

'मुँह में पानी भर आना' एक मुहावरा है। इसका शब्दार्थ है 'मुख में पानी भर जाना'। किन्तु यह पानी सम्बन्धी अर्थ प्रगट न करके 'लालच करना अर्थ को प्रगट करता है। इसे 'वाग्धारा' अथवा 'वागरीचि' भी कहते हैं।

मुहावरों का सम्बन्ध अधिकतर जनता की भाषा से होता है और जनता ही उन्हें बनाती है। ये जन साधारण की सम्पत्ति होते हैं। इन्हें पाकर भाषा फलती फूलती है। ये अति संक्षिप्त रूप में होते हुए भी एक बड़े भाव अथवा विचार को प्रकट करने वाले होते हैं। इनके प्रयोग से भाषा में लालित्य, ओज और प्रवाह आता है किन्तु इनके प्रयोग में विशेष सावधानी रखनी चाहिए नहीं तो अर्थ का अनर्थ हो जाता है। मुहावरे की पदावली में भी परिवर्तन नहीं करना चाहिए।

मुहावरों की तरह ही कहावतों का प्रयोग होता है। मुहावरों तथा कहावतों में केवल इतना ही अन्तर है कि मुहावरे केवल वाक्यांश होते हैं और उसका अर्थ किसी वाक्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में प्रयुक्त होने पर ही स्पष्ट होता है। कहावतें वाक्य होती हैं और स्वतन्त्र रूप से प्रयोग में आ सकती हैं।

जैसे—'आँखों का तारा' एक मुहावरा है, इस रूप में इसका कोई विशेष अर्थ नहीं, यह केवल एक वाक्यांश है, किन्तु 'राम दशरथ की आँखों का तारा था' में यह 'अत्यन्त प्यारा' रूप विशेष अर्थ को बतलाता है। 'अब पछताए होता का चिड़िया चुग गई खेत' एक कहावत है। यह एक पूरा वाक्य है। इसका प्रयोग इस प्रकार होगा, परिश्रम न करने के कारण मोहन परीक्षा में अनुत्तीर्ण होगया। वह पछताने लगा। तब सोहन ने कहा—अब पछताये होत का चिड़िया चुग गई खेत। कहावतों को ही लोकोक्ति कहा जाता है किसी कवि, लेखक अथवा महापुरुष के ऐसे शब्द जो कहावतों की तरह प्रयोग में आते हैं, कहावत ही कहे जाते हैं जैसे—

'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं'। —(तुलसी)।

१—मुहावरे तथा कहावतें

अच्छे घर बयाना देना—बलवान से बैर करना। शेरसिंह अत्यन्त क्रोधी तथा वीर योद्धा है। तुमने उसका अपमान कर अच्छे घर बयाना दिया है। तुम्हें अब अपने किये का फल भोगने को तैयार रहना चाहिये।

अन्धे की लकड़ी—एक मात्र सहारा। मुझे संसार में अपना कोई नहीं दीखता। मेरे लिए तो भगवान ही अन्धे की लकड़ी हैं और वे ही मुझे इस संकट से उबारेंगे।

अक्ल का दुश्मन—मूर्ख। चोर घर में घुसे थे और मोहन बाहर खड़ा चिल्ला रहा था। वह निरा अक्ल का दुश्मन ही रहा। उस पर यह न हुआ कि चट दरवाजा बन्द कर कुण्डी लगा देता।

अक्ल के घोड़े दौड़ाना—अनेक युक्तियाँ सोचना। सब दरबारी अपनी २ अक्ल के घोड़े दौड़ाते ही रहे किन्तु कोई अकबर द्वारा खींची उस रेखा को छोटा न कर सका।

अक्ल के पीछे लट्ठ लिए फिरना—मूर्खतापूर्ण काम करना। मैंने तुम से कहा था कि युद्ध की सम्भावना है, चाँदी तेज होगी। अतः तुम केवल खरीदना बेचना नहीं; किन्तु तुम तो अक्ल के पीछे लट्ठ लिये फिरते हो, रोकते-रोकते एक सिल बेच ही आये।

अक्ल पर पत्थर पड़ना—बुद्धि नष्ट हो जाना। परीक्षा भवन में घुसते ही मेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गये और मैंने दो और दो जोड़कर पाँच रख दिए।

अगर मगर करना—बहाना करना। तुम अगर मगर क्यों करते हो ? जो कुछ देना हो, दे दो।

अन्धे की लकड़ी—दीन दुःखी का परम सहायक। मैं तुम्हारे सहारे ही अपना जीवन काट रहा हूँ। इस वृद्धावस्था में तुम्हीं मुझे अन्धे की लकड़ी हो।

अपना उल्लू सीधा करना—स्वार्थ साधन करना। अवसर आने पर सब अपना उल्लू सीधा करते हैं। कोई भी दूसरों की चिन्ता नहीं करता।

अपनी करनी पार उतरनी—अपने किये हुए कर्मों का फल भोगना। नकल करने के कारण यदि सुरेश को परीक्षा से निकाल दिया गया तो आश्चर्य ही क्या है—अपनी करनी पार उतरनी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपने पाँव आप कुल्हाड़ी मारना—अपने आप ही अपनी हानि करना। जयचन्द ने मुसलमानों को बुलाकर अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मारी।

अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना—अपने आप अपनी प्रशंसा करना। अपने मुँह मियाँ मिट्ठू क्यों बनते हो। मैं तुम्हारी सारी वास्तविकता जानता हूँ।

अरमान निकालना—हौसले पूरे करना। व्यर्थ की बकवाद क्यों करते हो? हाथ में लाठी लो और अपने अरमान निकाल लो। मैं तैयार हूँ।

अरमान दिल में रहना या रह जाना—इच्छा पूरी न होना। मेरी इच्छा थी कि मैं राम को उच्च शिक्षा दिलवाऊँ, किन्तु उसकी दृष्टि के अत्यन्त क्षीण हो जाने से मेरे सारे अरमान दिल में ही रह गये, और उसे दूकान पर बैठाना पड़ा।

अरहर की टट्टी गुजराती ताला—अल्प मूल्य की वस्तु के साथ बहुमूल्य वस्तु का योग। तुम्हारी इस फटी वास्कट में सोने के बटन देखकर तो यह कहना पड़ता है कि अरहर की टट्टी गुजराती ताला।

आटा गीला होना—विपत्ति पड़ना। कंगाली में आटा गीला।

आटे दाल का भाव मालूम होना—वास्तविकता का पता चलाना। अभी तो बेटा घर से मनीआर्डर आ जाता है और चैन की छनती है, पर जब पैदा करके खर्च करोगे, तब आटे दाल का भाव मालूम हो जायगा।

आड़े हाथों लेना—खूब खबर लेना। क्लर्क साहब दफ्तर में बैठे बातें कर रहे थे, इतने में इन्सपेक्टर साहब आ गए। उन्होंने क्लर्क साहब को आड़े हाथों लिया और भविष्य में भी सचेत रहने के लिए कहा।

आकाश और पाताल का अन्तर होना—बहुत फर्क होना। काश्मीर के विषय में भारत और पाकिस्तान के राजनीतिज्ञों के मत में आकाश और पाताल का अन्तर है।

आधी तज सारी को धावे आधी रहे न सारी पावे—अधिक लालच करने से गांठ की भी हानि होती है। मोहन ने अच्छी खासी कपड़े की दूकान छोड़कर लखपती बनने की इच्छा से सट्टे का काम कर लिया। थोड़े ही दिनों में उसकी सारी जायदाद नीलाम हो गई। ठीक है—आधी तज सारी को धावे आधी रहे, न सारी पावे।

आम खाने या पेड़ गिनने—अपने काम से काम, व्यर्थ की बातों से क्या मतलब। पिताजी ने रमेश के लिए कोट बनवाया। रमेश ने पूछा कि यह कपड़ा कहाँ से लाये और इसे कहाँ सिलवाया? पिता ने कहा—आम खाने या पेड़ गिनने। कोट लो और पहिनो। व्यर्थ की बातों में क्या रखा है।

आसमान टूट पड़ना—बड़ी विपत्ति का आना। पिता जी की आकस्मिक मृत्यु से मेरे ऊपर तो आसमान टूट पड़ा, समझ में नहीं आता कि क्या करूँ और क्या न करूँ।

आसमान पर चढ़ना—अत्यधिक अभिमान करना। हाईस्कूल पास करके तुमने ऐसा कौनसा महान् कार्य किया है, जो व्यर्थ में ही आसमान पर चढ़े फिरते हो।

आसमान पर चढ़ा देना—अत्यधिक प्रशंसा करना। कवि लोग जब किसी की प्रशंसा करने बैठते हैं, तब उसे आसमान पर ही चढ़ा देते हैं।

आसमान पर थूकना—किसी महान् पुरुष को असत्यता का आश्रय लेकर कलंकित करना। महात्मा गांधी को मुसलमानों का पक्षपाती कहना आसमान पर थूकना है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आसमान सिर पर उठाना—बहुत ऊधम मचाना। चुनाव के दिनों में उम्मीदवारों ने आसमान को सिर पर उठा लिया। वे रात दिन लाउडस्पीकरों पर बोलते फिरते हैं

आस्तीन का सांप—हानि पहुँचाने वाला मित्र अथवा सम्बन्धी। इसे मित्र मत समझो, यह तो आस्तीन का साँप है। यहाँ से सारे भेद ले जाता है और शत्रुओं को बतला देता है।

आंख का अन्धा नाम नैनसुख—नाम के अनुरूप गुणों का न होना। नाम तो है बृहस्पति पर हैं पूरा घोंघा बसन्त। सच है—आँखों का अन्धा नाम नैनसुख।

आख खुलना—होश में आना, वास्तविकता का ज्ञान होना। जब ऊँट पहाड़ के तले आता है, तभी उसकी आँख खुलती है। तब तक वह अपने आपको सबसे ऊँचा समझता है।

आंख मारना—किसी रहस्य को लेकर आँख से इशारा करना। राम पाँच सौ रुपये लेकर अपना मकान बेचने को तैयार सा हो गया था। पर उसके मित्र श्याम ने आँख मार दी और वह तुरन्त ही बात पलट गया।

आंखें चार होना—देखा-देखी होना। "जब आंखे चार होती हैं, मुहब्बत आ ही जाती है"।

आँखें दिखाना—क्रोधपूर्ण दृष्टि से धमकाना। आँखें क्यों दिखाते हो, जो कुछ तुम्हारा निकलता हो, मुझ से पाई पाई ले लो।

आँखें नीली पीली करना—बहुत क्रोध करना। मैंने तो तुम्हारी पुस्तक ली नहीं जो मुझ पर आँख नीली-पीली करते हो।

आंखें बदल जाना—प्रेम में अन्तर आ जाना। तुम तो मुझसे बढ़-चढ़ कर बातें मारते थे, पर सौ रुपये माँगने पर ही आंखें बदल गईं और आज सामने आने में भी सकुचाते हो।

आँखें फेर लेना—नाता तोड़ना। अपना मतलब निकलते ही दुर्जन आँखें फेर लेते हैं।

आँखों से गिरना—मान तथा प्रतिष्ठा से हीन हो जाना। सब कोई पण्डित जी पर श्रद्धा रखते थे, पर उनके जुआ खेलने ने उन्हें सबकी आँखों से गिरा दिया।

आंखों का तारा—अत्यन्त प्यारा। राम दशरथ की आंखों के तारे थे।

आँखों के आगे अन्धेरा हो जाना—(१) संसार सूना सा प्रतीत होना, (२) बेहोश हो जाना।

(१) जब केकैई ने दशरथ से वरदान माँगे, तो उनकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया। (२) जेठ की तेज धूप में चलते-चलते मेरी आँखों के आगे अँधेरा छा गया और मैं गिर पड़ा।

आँखों पर परदा पड़ना—धोखा खा जाना। तुम्हारी आँखों पर ऐसा परदा पड़ गया कि तुम इस जाली नोट को भी न पहचान सके।

आँखों में खटकना—बुरा लगना। तुम अपनी बुरी आदतें नहीं छोड़ते, अतः मेरी आँखों में खटकते हो।

 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आँखों में धूल झोंकना—धोका देकर ठग लेना। देखते ही देखते वह आँखों में धूल झौंक गया और सेर की जगह दो सेर चीनी ले गया।

आँखों पे बैठना—बहुत आदर सत्कार करना। आप मेरे घर आइए। मैं अपनी आँखों पर बैठाऊँगा।

इधर गिरे तो कूआ उधर गिरे तो खाई—चारों तरफ आपत्तियों में घिर जाना। डाकू घिर गये। सामने गाँव के किसान थे और पीछे पुलिस। वे आफत में थे। इधर गिरे तो कुआ, उधर गिरे तो खाई।

इन्द्रासन का फल—देखने में अच्छा, पर गुणों में खराब। परशुराम ने कहा, हे राम! तुम्हारा भाई तो इन्द्रासन का फल है।

ईंट से ईंट बजाना—लड़ाई करना, सर्वनाश करना। यदि उन दोनों ने मेरे मामले में दखल दिया, तो मैं भी अपनी चतुराई से उन दोनों की ईंट से ईंट बजाकर ही चैन लूँगा।

ईद का चाँद होना—बहुत समय बाद दिखाई देना। छुट्टियाँ क्या हुई, तुम ईद के चाँद हो गये, दिखाई भी नहीं देते।

उँगली पर नाचना—तत्परता पूर्वक काम करना। तंग रहना। इस मिल के कर्मचारी अपने मैनेजर की उँगली पर नाचते हैं।

उँगली पकड़कर पहुँचा पकड़ना—थोड़ा सा सहारा पाकर और अधिक पाना या पाने की इच्छा करना। उँगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ लिया है। तुमने। एक कोठरी ही तो ली थी, पर सारे मकान पर कब्जा कर बैठे।

उल्टा चोर कोतवाल को डाटे—अपराधी के अन्वेषक अथवा अपराध के कारण हानि प्राप्त करने वाले को बुरा भला कहना। एक तो मेरा सारा तेल फैला दिया, दूसरे मुझसे ही अकड़ता है। ठीक है उल्टा चोर कोतवाल को डाटे।

उल्टी गंगा बहाना—उल्टा काम करना, प्रचलित परम्परा के विरुद्ध काम करना। राजनीतिज्ञों ने सदा अध्यापकों का आदर किया है, पर आजकल के राजनीतिज्ञ उनसे अपना आदर करवा कर उल्टी गंगा बहा रहे हैं।

उल्लू फँसाना—किसी को पूरी तौर से अपने जाल में फँसा लेना। अरे! तुमने खूब उल्लू फंसाया है, चाहे जो करवाये जाओ।

उल्लू बनाना—मूर्ख बनाना। मुझे उल्लू बनाना सरल नहीं है, मैं तुम्हारी सारी चालाकियों को समझता हूँ।

उल्लू बोलना—उजाड़ होना। जयचन्द के उन शानदार महलों में अब तो उल्लू बोला करते हैं।

उल्लू सीधा करना—काम बनाना। भाई! तुम बड़े ही चतुर हो। अपना उल्लू सीधा किया और खिसके। फिर पल भर भी नहीं ठहरते।

ऊँट किस करवट बैठे—परिणाम न जाने क्या हो। सम्मा और झुम्मन दोनों ही पक्के मुकद्दमे बाज हैं। सम्मा ने झुम्मन पर नालिस कर रखी है। झुम्मन भी पूरी तरह तैयार है। देखें! ऊँट किस करवट बठता है।

ऊँट की चोरी निहुरे निहुरे—किसी निन्दित किन्तु बड़े कार्य को गुप्त रीति से करने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का चेष्टा करना। तुम शराब पीते हो और चाहते हो कि कोई भी इसे जान न पाये। पर भाई ! ऊँट की चोरी निहुरे निहुरे नहीं होती, वह खुल ही जाती है।

ऊँट रे ऊँट तेरी कौन सी कल सीधी—प्रत्येक प्रकार से धूर्त होना। कितना भी प्रयत्न किया जाय, तुम अपनी आदतें नहीं छोड़ते। आठो गाँठ कुम्मैत हो। ठीक है ऊँट रे ऊँट तेरी कौन सी कल सीधी।

एक अनार सौ बीमार—वस्तु थोड़ी और माँग अधिक। मेरे पास केवल एक ही पुस्तक है और तुम सब विद्यार्थी इसे चाहते हो। जब एक अनार सौ बीमार हों, तब काम कैसे चल सकता है।

एक पन्थ दो काज—एक प्रयत्न से दो कार्यों का सफल होना। गर्मियों में ऋषिकेश जाने से धनार्जन भी हो जायगा और स्वास्थ्य सुधार भी होगा। सच है एक पंथ दो काज।

ओठ चबाना—क्रोध आ जाना। निरपराध ताँगे वाले को पुलिस द्वारा पिटता देखकर मैं ओठ चबाने लगा।

ओखली में सिर डालना—अपने आप को कष्टों में डालना। मैंने राम की सहायता करके ओखली में सिर दिया है। फिर मुझे चोटों से क्या डरना है।

ओठ चिपकना—खूब मीठा होना। ये खरबूजे इतने मीठे हैं कि यदि खाओगे तो ओठ चिपकने लगेंगे।

कच्चा खा जाना या चबा जाना—पूरी तरह नष्ट कर देने की धमकी। यदि तुमने ज्यादा बक बक की, तो मैं तुम्हें कच्चा ही खा जाऊँगा।

कलेजा फटना—असह्य वेदना होना। गाँधी जी की मृत्यु का समाचार सुनकर नेहरू का कलेजा फटने लगा।

कलेजा धड़कना—डर के कारण हृदय काँपने लगा। अंधेरे में डाकुओं को सामने देखकर मेरा कलेजा धड़कने लगा।

कलेजा मुँह को आना—(१) व्याकुल होना, (२) दुखी होना।

(१) भूख के मारे कलेजा मुँह को आ गया।

(२) नौआखाली के हत्याकाण्ड को सुनकर मेरा कलेजा मुँह को आ गया।

काठ मार जाना—स्तब्ध रह जाना। शेर को सामने देखकर मुझे काठ मार गया।

कान न हिलाना—बिना विरोध के बात मान लेना। गाँधी जी की आज्ञा को सुनकर उसने कान भी न हिलाया और चुपचाप अपने आपको पुलिस को सौंप दिया।

कान पकड़ना—(१) भूल स्वीकार करना, (२) जबरदस्ती। (१) मैं कान पकड़ता हूँ कि अब कभी चोरी न करूँगा। (२) राम तो मेरा मित्र है उससे मैं यह काम कान पकड़ कर करा लूँगा।

कुंए में बांस डालना—बहुत खोज करना। तुम्हारे लिए कुँए में बाँस डाल दिए फिर भी तुम्हारा पता न मिला। आखिर तुम थे कहाँ ?

कुंए में से बोलना—बहुत धीरे बोलना। तुम्हारी कोई भी बात सुनाई नहीं देती। क्या तुम कुँए में से बोल रहे हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कुम्हड़ की बतियां—अशक्त निर्बल नुष्य। यहाँ कुम्हड़ बतियाँ कोउ नाहीं, जो तर्जनी देख मर जाहीं।

कोरम कोर चवाल सौ—बिल्कुल बुद्धू। तुम तो कोरम कोर चवाल सौ हो, इस प्रश्न का क्या उत्तर दोगे।

कोल्हू का बैल होना—(१) निरन्तर काम में लगे रहना।
(२) काला चश्मा लगाना।

(१) तुम तो निरे कोल्हू के बैल हो। यदि सुबह काम में जुट गये, तो शाम को ही उसका पिण्ड छोड़ते हो।

(२) क्यों कोल्हू के बैल बने फिरते हो। इस चश्मे से कोई लाभ नहीं, सीधे डाक्टर के यहाँ जाओ और औषधि लाओ।

खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है—एक का प्रभाव दूसरे पर पड़ता है। यदि तुम इसी प्रकार ऊधम मचाते रहे और तुम्हें न रोका गया तो कक्षा में सारे लड़के ऊधम मचाने लगेंगे क्योंकि खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है।

खाड़ खने जो आन को ताको कूप तय्यार—जो दूसरों को हानि करना चाहता है, उसकी हानि स्वयं ही हो जाती है। तुम पुलिस में झूठी रिपोर्ट लिखवा कर मुझे फँसाने चले थे, पर स्वयं ही कानूनी शिकंजे में फंस गये। ठीक है, खाड़ खने जो आन को ताको कूप तय्यार।

खटाई में पड़ना—झमेले में पड़ना। तुमने मेरा हिसाब खटाई में डाल रखा है। एक साल हो गया, एक पैसा भी नहीं दिया।

खाक छानना—भटकना। आजकल के नवयुवक नौकरी के लिए दर-दर की खाक छान डालते हैं। यह नहीं होता कि कुछ उद्योग कर अपने पैरों पर खड़े हों।

खून खौलना—क्रोध आना। तुम्हारे इन आक्षेपों को सुनकर मेरा खून खौल रहा है।

खाने दौड़ना—एक दम क्रुद्ध हो जाना। मैंने तुमसे क्या कहा है, जो खाने को दौड़ते हो।

खेत हाथ रहना—युद्ध में जीतना। महाभारत के युद्ध में खेत पाण्डवों के ही हाथ में रहा।

खेत रहना—मारे जाना। हल्दीघाटी के युद्ध में प्रताप के बाइस सहस्र वीर खेत रहे।

गंगा गये गंगादास जमुना गये जमुनादास—मुँह देखी बात कहना। इस मनुष्य की बात का क्या विश्वास। इसका कोई अपना सिद्धांत तो है नहीं। गंगा गये गंगादास, जमुना गये जमुनादास।

गढ़े मुर्दे उखाड़ना—पुरानी बातों को कहना। अरे भाई! गढ़े मुर्दे उखाड़ने से कोई लाभ नहीं है। केवल कटुता ही बढ़ती है। अब तो शान्ति की बात करो।

गागर में सागर भरना—थोड़े से शब्दों में गम्भीर से गम्भीर बात का वर्णन करना। बिहारी ने दोहा जैसे छोटे छन्द में विशद भावों का चित्रण कर गागर में सागर भर दिया है।

गुदड़ी का लाल—गरीब होते हुए भी श्रेष्ठ होना। उसके फटे कपड़ों को देखकर मत हंसो, वह गुदड़ी का लाल है, उस जैसे सज्जन इस नगर में कम ही हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुड़ गोबर करना—बने बनाये काम को नष्ट कर देना। राम की मूर्खता ने सारा गुड़ गोबर कर दिया।

गूलर का फूल—दुर्लभ वस्तु। इस बेईमानी के जमाने में शुद्ध घी गूलर का फूल हो गया है।

घर की खेती—अपने यहाँ उत्पन्न होने वाली वस्तु। बाल कट जाने से क्यों रोते हो ? ये तो घर की खेती है, थोड़े दिनों में फिर बढ़ जायेंगे।

घर फूंक तमाशा देखना—अपनी सम्पति बरबाद करके मनोरंजन करना ऐसी क्या यार बाजी जो घर फूंक तमाशा देखते हो। यदि पैसा पास रहेगा तो जीवन भर मौज उड़ाओ।

घाट घाट का पानी पीना—घूम फिर कर तजुर्बा प्राप्त करना। मैंने घाट घाट का पानी पिया है। तुम बेचारे मुझे क्या धोका दोगे।

घाव हरा हो जाना—दबा हुआ दुःख फिर उमड़ आना। जब कभी मैं अपने भाई का फोटो देखता हूँ तो मेरा घाव हरा हो जाता है।

घी के दिये जलाना—प्रसन्न होना। मेरे भाई के मारने वालों को फाँसी लगेगी तो मैं घी के दिये जलाऊँगा।

चंगुल में फँसना—काबू में आना। यदि तुम मेरे चंगुल में फंस गये तो अपनी सारी कोर-कसर पूरी कर लूंगा।

चकमा देना—धोका देना। सोने की जगह पीतल देकर उसने तुम्हें ऐसा चकमा दिया कि जन्म भर याद रहेगा।

चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात—सुख थोड़े ही दिन रहता है। मनुष्य को अपने रूप और ऐश्वर्य पर अभिमान न करना चाहिये, क्योंकि चार दिन की चांदनी फिर अँधेरी रात।

चिकना घड़ा—बेशरम आदमी। जिस पर किसी बात का असर न पड़े। उस निर्लज्ज से कुछ भी कहना बेकार है। वह तो चिकना घड़ा है।

चिराग तले अंधेरा—रोक के स्थान में भी वह काम होना जिसकी अन्य स्थान पर रोक है। आज थानेदार के घर चोरी हो गई है। वाह ! चिराग तले अन्धेरा।

चलती गाड़ी में रोड़े अटकाना—होते हुए कार्य में विघ्न डालना। क्यों चलती गाड़ी में रोड़े अटकाते हो, उसे इस मकान को बना लेने दो।

चांद पर थूकना—निर्दोष पर आक्षेप लगाना। पं० जवाहरलाल नेहरू को साम्प्रदायिकता का पक्षपाती कहना, चांद पर थूकना है।

चुल्लू भर पानी में डूबना—लज्जित होना। तीन बार चोरी में जेल जा चुके, फिर भी अपनी ईमानदारी की डींग मारते हो। अगर कोई भला मानस होता तो चुल्लू भर पानी में डूब मरता।

चोली दामन का साथ—घनिष्टता होना। राम और मोहन का चोली दामन का साथ है। एक को दूसरे के बिना चन नहीं पड़ता।

चार चांद लगाना—अत्यधिक सुन्दर तथा उपादेय बनाना। तुलसी का रामचरित मानस वैसे ही सुन्दर है इस पर भी दीन जी की व्याख्या ने उसमें चार चांद लगा दिये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छक्के छूटना—हिम्मत टूटना। जिस समय अर्जुन वाणों की वर्षा करता था, बड़े-बड़े वीरों के छक्के छूट जाते थे।

छटी का दूध याद आना—हेकड़ी को भूल कर अपनी वास्तविक दशा का ज्ञान होना। बहुत बक बक कर रहे हो, एक घूँसे में ही तुम्हें छटी का दूध याद आ जायेगा।

छाती की मूँग दलना—किसी के सामने उसे जलाने का काम करना। मैं स्वयं ही मरा जा रहा हूँ। तुम दूसरों से मेरी बुराई करके मेरी छाती पर क्यों मूँग दल रहे हो।

छटा हुआ—धूर्त, चालाक। उससे रुपया ठगना सरल नहीं है क्योंकि वह पूरा छटा हुआ है।

छोटे मुंह बड़ी बात—अपनी योग्यता से अधिक बातें करना। तुमने वेद देखे भी नहीं हैं, पर उदाहरण देते हो वेदों का और शास्त्रार्थ करते हो वेदाचार्यों से। चुप रहो, छोटे मुँह बड़ी बात ठीक नहीं।

जुबाँ शीरी तो मुल्क गीरी—मीठे वचनों से सब कोई वश में हो जाता है। कटु वचनों को छोड़ दो, तो सब तुम्हारे मित्र हो जायें। अरे भाई! जुबाँ शीरी मुल्क गीरी।

जहाँ मुर्गा नहीं होता, क्या वहाँ भोर नहीं होता है—कोई कार्य किसी एक ही व्यक्ति के ऊपर निर्भर नहीं होता। प्रमेश कुमार समझते थे कि मेरे चले जाने से मिल बन्द हो जायेगी, पर मिल वैसी ही चल रही है। सच तो है—जहाँ मुर्गा नहीं होता, क्या वहाँ भोर नहीं होता।

जमीन पर पैर न पड़ना—अधिक घमण्ड करना। तुम्हें सट्टे में रुपया क्या मिला, तुम्हारा पैर जमीन पर नहीं पड़ता।

जी उचटना—तबियत न लगना। पढ़ने से तो मेरा जी उचट गया है, अब नौकरी करूँगा।

जी को मारना—मन की इच्छाओं को रोकना। अपने जी को मारो, तभी सुख पा सकते हो, क्योंकि तुम्हारे पास इतना रुपया तो है नहीं, जो मन चाहा खर्च कर सको।

जी चुराना—काम से भागना। वह पढ़ने से जी चुराता है।

जूतियाँ चटकाते फिरना—व्यर्थ में इधर उधर घूमना। क्यों जूतियाँ चटकाते फिर रहे हो, दूकान पर बैठो और अपना काम करो।

जोखिम में पड़ना—खतरे में पड़ना। झूँठी गवाही देकर मैं जोखिम में नहीं पड़ना चाहता।

झख मारना—(१) समय खराब करना, (२) लाचार होना, (१) तुम दोपहर के बैठे झख मार रहे हो, कुछ करा धरा भी है। (२) तुम्हें झख मार कर यह काम करना ही पड़ेगा।

झाड़ फेरना—नष्ट कर देना। तुमने एक मूर्खता पूर्ण शब्द कह कर ही मेरे सारे किये कराये पर झाड़ फेर दी।

टस से मस न होना—अपनी बात या जगह पर डटे रहना। दशरथ बात के धनी थे। प्रतिज्ञा करके टस से मस न हुए।

टक्कर का—तुलना का। हिन्दी साहित्य में तुलसी की टक्कर का कोई दूसरा कवि नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

टट्टी की ओट शिकार खेलना—छिपकर किसी के विरुद्ध कार्य करना। टट्टी की ओट शिकार क्यों खेलते हो? सामने आओ, तो आटे दाल का भाव बता दूँ।

टांग अड़ाना—व्यर्थ में ही दखल देना। यदि तुम्हें कोई पूछता नहीं है तो क्यों टांग अड़ाते फिरते हो।

टेढ़ी खीर—कठिन काम। कम्यूनिष्टों की चालों को समझना जरा टेढ़ी खीर है।

ठोकरें खाना—भटकना। आजकल के ग्रेजुएट दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं फिर भी नौकरी नहीं मिलती।

ठण्डा लोहा गरम लोहे को काट देता है—शान्ति प्रकृति का मनुष्य क्रोधी को हरा देता है। यदि मोहन क्रोध करता है तो तुम्हें शान्ति से काम लेना चाहिए क्योंकि ठण्डा लोहा गरम लोहे को काट देता है।

डकार जाना—हजम कर जाना। श्याम इतना बेईमान है कि मेरा सारा रुपया डकार गया और एक पैसा भी न लौटाया।

डूबते को तिनके का सहारा—दुःख में पड़े हुए को थोड़ा सा सहारा बहुत होता है। इस कठिनाई के समय में यह तुम्हारी थोडी सी सहायता मुझ डूबते को तिनके का सहारा होगी।

डोरी ढीली करना—देखभाल कर काम न करना। यदि तुमने डोरी ढीली की, तो काम बिगड़ जायगा।

ढपोल शंख होना—बड़ी बड़ी बात मारना, किन्तु करके कुछ न देना। तुम तो निरे ढपोल शंख हो। वायदे तो बहुत करते हो, पर करके कुछ भी नहीं देते।

ढाक के तीन पात होना—सदा निर्धनता की हालत में रहना। यहाँ तो ढाक के तीन पात हैं। कितना ही पैदा करें, कुछ पास नहीं रहता।

ढिंढोरा पीटना—(१) मुनादी करना, (२) इधर उधर कहते फिरना। (१) सारे शहर में ढिंढोरा पिट गया है कि कल बाजार बन्द रहेगा। (२) तुम तो मेरी असफलता का ढिंढोरा पीटते फिरते हो।

तलवे चाटना—खुशामद करना। घमण्डियों के तलवे चाटना मैं पसन्द नहीं करता, तुम चाहो तो चाटो।

तिनके की ओट पहाड़ होना—छोटी सी बात में बहुत बड़ी बात का छिपा होना। अरे भाई। तिनके की ओट पहाड़ होता है। चतुर्भुज के एक कर्ण को खींच दो। अब तुम आसानी से सिद्ध कर सकते हो कि चतुर्भुज के चारों कोणों का योग चार समकोण होता है।

तिलाँजलि देना—छोड़ देना। छुट्टियाँ क्या हुई हैं, तुमने तो पढ़ने लिखने को तिलाँजलि दे दी है।

तीन तेरह होना—तितर-बितर होना। पिताजी के मरते ही हम सब भाई तीन तेरह हो गये। कोई कहीं गया तो कोई कहीं।

तीन तेरह में न होना—किसी के झगड़े में न होना। मुझे क्यों सानते हो, मैं तो तीन तेरह में नहीं हूँ।

तीन पाँच करना—घुमाव फिराव की बातें करना। जो कुछ देना हो, दे दो, तीन पाँच करना ठीक नहीं है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुझे पराई क्या पड़ी अपनी तो निरवेर—दूसरों के कामों में पड़ने से क्या लाभ, पहले अपने कामों को करना चाहिए। सोहन ने मोहन से कहा, तुझे पराई क्या पड़ी, अपनी तो निरवेर। अपने झगड़े तो तय नहीं होते, दूसरों के तय करते फिरते हो।

तू डाल डाल मैं पात पात—चालाक से भी बढ़कर चालाक। तुम कितनी ही चालाकी करो, मैं तुम्हारी सारी चालाकी समझ जाता हूँ। क्या तुम नहीं जानते कि यदि तुम डाल डाल हो तो मैं पात पात हूँ।

थूक कर चाटना—वचन देकर फिरना। मैं थूक कर नहीं चाटता, जो कुछ कह दिया, करूँगा।

थूक से सत्तू नहीं सनते—कम सामान से बड़ा काम नहीं होता। १००० से मील खोलने चले हो। कहीं थूक से सत्तू नहीं सनते हैं। घर बैठो और कुछ काम देखो।

थोथा चना बाजे घना—सार रहित पुरुष आडम्बर से रहता है। गिरीश रहता तो ठाठ से है, पर उसे आता जाता कुछ नहीं। ठीक है थोथा चना बाजे घना।

दम घोंटना—गला दबाकर मार डालना। बहुत टर-टर लगाई है। चुप रहो। अब बोले तो यहीं दम घोंट दूंगा।

दांत खट्टे करना—हवा बिगाड़ देना, बहुत परेशान कर डालना। राणा प्रताप ने हल्दी घाटी की लड़ाई में मुगलों के दाँत खट्टे कर दिये।

दम फूलना—परिश्रम के कारण साँस का जल्दी चलना। दौड़ते दौड़ते मेरा तो दम फूल गया।

दम साधना—चुप रहना। ज्योंही मैंने सेठजी से रुपये माँगे, वे दम साध गये।

दाई से पेट छिपाना—जानकारों से कोई बात छिपाना। मैं तुम्हारी नस नस जानता हूँ, फिर भी तुम मुझसे वास्तविकता को छिपाते हो। याद रखना कहीं दाई से पेट नहीं छिपता।

दाल न गलना—वस न चलना। उसने बहुत बातें बनाई, पर मुझसे उसकी दाल न गली।

दिन काटना—जैसे तैसे समय बिताना। सौ रुपल्ली से होता क्या है, दिन काट रहे हैं।

दूध का जला छाछ को फूंक फूंक कर पीता है—जो एक बार धोखा खा जाता है, वह फिर सावधानी से काम करता है। तुम कितना ही कहो, मैं बीमा नहीं कराऊँगा। पहले जिस कम्पनी में बीमा कराया था, उसका दिवाला निकल गया, अतः मुझे अब बीमा कम्पनियों पर विश्वास नहीं है। तुम भी जानते हो कि दूध का जला छाछ भी फूंक फूंक कर पीता है।

दो दिन का मेहमान—शीघ्र मरने वाला। संसार में मनुष्य दो दिन का मेहमान है।

दो नावों पर पैर रखना—दोनों तरफ होना। तुम दो नाव पर पैर नहीं रख सकते, या तो हमारी ही तरफ रहो या उनकी तरफ।

धता बताना—फटकार देना। वह रुपया माँगने आया था। पर मैंने उसे ऐसी धता बताई कि वह दुबारा न आया।

धाक जमाना—प्रभाव स्थापित करना। ईमानदारी के कारण उसकी ऐसी धाक जम गई कि सब कोई उसे उधार दे देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धूप में बाल सफेद न होना—बिना अनुभव के ज्ञान पाना। मैंने धूप में बाल सफेद नहीं किये हैं। मैं तुम्हारी सारी चालाकियों को समझता हूँ।

धोके की टट्टी—तत्व रहित वस्तु। यह अनाथालय वाचनालय कुछ नहीं है, निरी धोके की टट्टी है।

नजर करना—भेंट करना। ज्योंही राम ने अपने गुरूजी को देखा, उसने पाँच रुपये नजर किये।

नजर दौड़ाना—चारों तरफ देखना। जरा नजर दौड़ाकर देखो, चोर यहीं कहीं न छिपे हों।

नदी नाव संयोग—थोड़े समय के लिए आकस्मिक मिलन। इस संसार में हमारा तुम्हारा मिलन, नदी, नाव संयोग है, अतः प्रेम से रहो।

नमक मिर्च लगाना—किसी बात की वास्तविकता में इधर-उधर की जोड़ना। मुझे वास्तविकता बताओ, नमक मिर्च लगाना बेकार है।

नमक खाना—किसी का दिया हुआ खाना। मैंने तुम्हारा नमक खाया है, तुम्हारे लिए जान की बाजी लगा दूँगा।

नस नस में—सारे शरीर में। उसकी नस नस में शरारत भरी है।

नाक कटाना—बेइज्जती होना। तुमने चोरी करके अपने बाप दादों की नाक कटा डाली।

नाक का बाल होना—अति प्यारा होना। इस समय तो तुम मोहन की नाक के बाल हो, पर मतलब निकल जाने पर वह तुमसे बात भी नहीं करेगा।

नाक में दम होना—परेशान होना। तुम्हारी शरारत के कारण मेरा तो नाक में दम आ गया है।

नाक रख लेना—इज्जत रख लेना। तुमने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होकर कालेज की नाक रख ली।

नाक रगड़ना—दीनतापूर्वक प्रार्थना करना। पेट की खातिर वह दर-दर नाक रगड़ता फिरता है।

नाम कमाना—प्रसिद्ध हो जाना। रमेश ने अपनी विद्वता से खूब नाम कमाया है।

नीचा दिखाना—घमण्ड नष्ट करना। इस मामले से मैंने उसे ऐसा नीचा दिखाया है कि वह कभी मेरे सामने आँख ऊँची न करेगा।

नीला पीला होना—गुस्सा होना। नीले-पीले क्यों होते हो, अपने रुपये लो और घर बैठो।

नेकी और पूछ पूछ—उपकार में पूछने की क्या आवश्यकता है। मोहन यदि तुम्हें रुपयों की आवश्यकता हो, तो ले जाओ। सोहन—वाह! भाई, लाओ नेकी और पूछ-पूछ।

नौ दो ग्यारह होना—भाग जाना। सिपाहियों को देखकर चोर नौ दो ग्यारह हो गये।

पट्टी पढ़ाना—बहकाना। तुम उसे कितनी ही पट्टी पढ़ाओ, पर वह अपनी बात से न हटेगा।

पत्थर की लकीर—दृढ़। मेरी बात पत्थर की लकीर है। मैं इससे कभी न हटूँगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पसीना पसीना होना—अधिक थक जाना। इसी गर्मी में सुबह से भागते-भागते मैं पसीना-पसीना हो गया हूँ।

पसीने की जगह लोहू बहाना—किसी के थोड़े से कष्ट में जान की बाजी लगा देना। चिन्ता मत करो। तुम्हारे पसीने की जगह मैं अपना लोहू बहा दूँगा।

पानी भर आना (मुँह में)—अच्छी अच्छी मिठाइयों को देखकर मेरे मुँह में पानी भर आया।

पानी उतर जाना—शर्म न रहना। तुम्हारा तो पानी उतर गया है। कोई कितना ही कहे, तुम पर कोई असर नहीं होता।

पानी का बुलबुला—क्षण भंगुर। मनुष्य-जीवन पानी का बुलबुला है। न जाने कब नष्ट हो जाय।

पानी ढलना—लावण्य का नष्ट होना। इस सुन्दरता पर अभिमान मत करो, बुढ़ापे में सारा पानी ढल जायगा।

घड़ों पानी पड़ना—लज्जित होना। मेरे यह कहते ही, उन पर घड़ों पानी पड़ गया।

पानी पानी होना—बहुत लज्जित होना। यह सुन कर वह पानी पानी हो गया।

पानी फेरना—काम बिगाड़ना। तुम्हारे इन कटु वचनों ने सब किये कराये पर पानी फेर दिया

पानी रखना—इज्जत बचाना। पानी रखो, नहीं तो कोई तुम्हें न पूछेगा।

पाला पड़ना—काम पड़ना। अभी क्या है, जब किसी तगड़े से पाला पड़ गया तब आटे दाल का भाव मालूम होगा।

पिण्ड छुड़ाना—पीछा छुड़ाना। किसी प्रकार पाँच रुपये देकर पिण्ड छुड़ा लिया है।

पेट में दाढ़ी होना—चालाक होना। उसे सीधा मत समझो, उसके पेट में दाढ़ी है।

पौ बारह होना—अत्यन्त लाभ होना। तुम्हारे तो आजकल पौ बारह हैं। जहाँ जाते हो, माल पैदा करते हो।

फलना फूलना—धनवान तथा भाग्यवान होना। परमात्मा करे, तुम फलो फूलो, तुमने मेरी बहुत सेवा की है।

फूला न समाना—अति प्रसन्न होना। प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने की खबर सुनकर मैं फूला न समाया।

फूट निकलना—प्रकट होना। कितना छिपाओ, बुराइयाँ स्वयं फूट निकलती हैं।

फटे फटे से रहना—नाराज से रहना। न मालूम तुम्हें क्या हो गया है। अब हमेशा फटे फटे से रहते हो।

बट्टा लगाना—कलङ्क लगाना। बाप-दादों के नाम में बट्टा क्यों लगाते हो शराब पीना छोड़ दो।

बगल झाँकना—बचने की कोशिश करना। उस समय तो तुम १००) चन्दा देने को कह बैठे, अब बगलें झाँक रहे हो और कुछ नहीं दे रहे हो।

बन्दर घुड़की—प्रभावहीन धमकी। मैं तुम्हारी बन्दर घुड़कियों से नहीं डर सकता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बाग बाग हो जाना—आनन्दित होना। शेरसिंह को सकुशल युद्ध से लौटा हुआ देखकर उसकी माँ का हृदय बाग बाग हो गया।

बाघ और बकरी एक घाट पानी पीना—राज्य में उत्तम प्रबन्ध का होना। (जिससे बलवान निर्बल को न सता सके) राम राज्य में बाघ और बकरी एक घाट पानी पीते थे।

बाजार गर्म होना—अधिकता होना। आजकल चोर बाजारी का बाजार गर्म है। कोई भी चीज लेने जाओ, ड्योढ़े या दूने पैसे देने पड़ते हैं।

बाजी मारना—जीतना। शाबाश पट्ठे। कुश्ती में खूब बाजी मारी।

बात की बात में—थोड़ा सी देर में। आँधी चल रही थी, बात की बात में सारा नगर जल कर भस्म हो गया।

बात बिगड़ना—इज्जत जाना। बाजार में उसकी बात बिगड़ गयी उसे कोई उधार नहीं देता।

बायें हाथ का खेल—अति सरल काम। १ घण्टे में १० श्लोकों का अर्थ करना तो मेरे बायें हाथ का खेल है।

बाल बांका न कर सकना—नुकसान न पहुँचा सकना। कर्ण ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु अर्जुन का बाल बाँका न कर सका।

अक्ल की टांग तोड़ना—बुद्धि से काम लेना। तुमने तो अक्ल की टाँग ही तोड़ डाली है। जो इस लड़ाई के जमाने में सरसों खरीदने की जगह बेच डाली।

बूँद बूँद से घट भरता है—थोड़ा थोड़ा इकट्ठा करने से बहुत इकट्ठा हो जाता है, थोड़ा २ काम करने से बहुत सा काम हो जाता है। यदि तुम थोड़ा थोड़ा भी बचाना शुरू कर दो, तो मालदार बन सकते हो। बूँद बूँद से घट भर जाता है।

भण्डा फूटना—भेद खुलना। पाप छिपाये नहीं छिपता, किसी दिन भण्डा फूट ही जाता है।

भाड़ झोंकना—व्यर्थ में ही समय बिताना। मैं अच्छी तरह मिठाइयाँ बना सकता हूँ। मैंने दिल्ली में रहकर भाड़ थोड़े ही झोंका है।

भीगी बिल्ली बनना—भय आदि से संकुचित होना। अभी तो ऊधम मचा रहे थे, मास्टर साहब के आते ही भीगी बिल्ली बन गए।

भूखे भजन न होय गुपाला—भूखे पेट कुछ भी कार्य नहीं होता। पहले खाना खा लूँ तब पत्र लिखूंगा। सच है भूखे भजन न होय गुपाला।

मक्खियां मारना—बेकार रहना। क्या बैठे मक्खियाँ मारते रहते हो, कुछ काम कर लिया करो।

मरे को मारना—दरिद्र अथवा निर्बल को सताना। उसके पास खाने को भी नहीं और तुम उसकी कुर्की करा रहे हो। अरे मरे को मारना ठीक नहीं है।

मिट्टी के मोल बिकना—बहुत कम दामों में बिकना। किसानों का नाज फसल के समय मिट्टी के मोल बिक जाता है और उन्हें वही नाज आवश्यकता पड़ने पर तेज खरीदना पड़ता है।

मैदान मार लेना—कठिनाइयों को पार करके कार्य को पूरा कर लेना। कुम्भकर्ण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा मेघनाथ के मारे जाने पर सुग्रीव ने कहा अब तो मैदान मार लिया रावण भी जल्दी मारा जायगा।

माल मारना—अच्छी वस्तु, धन आदि की प्राप्ति होना। चाँदी ही चाँदी। भाई! आजकल तुम खूब माल मार रहे हो।

मुँह की खाना—पराजित होना। असत्य का पक्ष लेकर तुमने मुँह की खाई।

मुँह में कालिख लगाना—कलंक लगाना। तुम्हें क्या उत्तर दूँ। इस बेटे ने तो मेरे मुँह में कालिख लगादी है।

मुँह मोड़ना पीछे हटना। धर्म से मुँह मत मोड़ो। आपत्ति में वही तुम्हारी रक्षा करेगा।

यह मुँह और मसूर की दाल—हैसियत से अधिक की बात करना। लिखना तो आता नहीं, फाउन्टेनपेन लेंगे। यह मुँह और मसूर की दाल।

रङ्ग उड़ना या उतरना—डर या शर्म के मारे मुख पर कान्ति का न रहना। जब पुलिस ने उसे चोरी करते पकड़ लिया, तो उसके चेहरे का रङ्ग उतर गया।

रङ्ग जमाना—धाक जमाना। इस कवि सम्मेलन में भास्कर जी का रंग जम गया।

रंग में भंग होना—आनन्द या उत्सव में बिघ्न होना। इस वर्षा ने दावत के रंग में भंग कर दिया।

रफूचक्कर होना—भाग जाना। पुलिस को देखकर चोर रफूचक्कर हो गये।

राम राम जपना पराया माल अपना—बगुला भगत होना। किसी का चन्दन टीका और भजन कीर्तन देखकर ही उसे सज्जन मत समझ लो, क्योंकि बहुत सों का तो यही सिद्धान्त है कि राम राम जपना, पराया माल अपना।

लकीर का फकीर होना—पुरानी प्रथा पर चलना। तुम भी लकीर के फकीर हो। अरे मंगल को हजामत बनवा लेने से क्या हो जायेगा?

लाल पीला होना—गुस्सा होना। लाल पीले क्यों होते हो। जो तुम्हारा चाहिये, ले लो।

लोहे के चने चबाना—काम का अति कठिन होना। सिंह को लाठी से मारना लोहे के चने चबाना है।

वक्त पर काम आना—आपत्ति में सहायता करना। सच्चा मित्र वही है, जो वक्त पर काम आये।

वाह वाह होना—प्रशंसा होना। पं० नेहरू की विदेश नीति की चारों तरफ वाह वाह हो रही है।

विष उगलना—बुरे बचन कहना। जब कभी वह मुझे देखता है, विष उगलने लगता है।

शैतान के कान कतरना—अधिक चालाक होना। गिरीश को सीधा मत समझो वह तो शैतान के भी कान कतरता है।

सफेद झूँठ—बिल्कुल झूँठ। यह सफेद झूँठ कि राम ने श्याम को मारा है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समझ पर पत्थर पड़ना—बुद्धि ठीक न रहना। क्या तुम्हारी समझ पर पत्थर पड़ गये हैं, जो इस बेईमान को अपने यहाँ नौकर रखा है।

सिर खाना—व्यर्थ की बातों से तंग करना। तुम मेरा सिर मत खाओ। मैंने हजार बार कह दिया कि मैं इस मामले में कुछ नहीं समझता।

सिर पर पाँव रखना—बहुत जल्द भागना। शेर को सामने आता हुआ देखकर मैं सिर पर पाँव रख कर भागा।

सिर मारना—बहुत प्रयत्न करना। मैंने बहुतेरा सिर मारा पर इस प्रश्न को हल न कर सका।

सीधी उंगली से घी नहीं निकलता—सीधेपन से काम नहीं चलता। कहीं सीधी उँगली से घी भी निकलता है। अभी चार जूते मारूँगा और सारे रुपये वसूल कर लूंगा।

सूर्य को दीपक दिखाना—अति प्रसिद्ध व्यक्ति का वर्णन करना। नेहरू जी की प्रशंसा करना सूर्य को दीपक दिखाना है।

सोने में सुगन्ध होना—अच्छी वस्तु में एक और गुण आ जाना। वह हिन्दी और अंग्रेजी अच्छी तरह जानता है। यदि वह संस्कृत और पढ़ले, तो सोने में सुगन्ध आ जाय।

हक्का बक्का हो जाना—भौंचक्का हो जाना। तुम्हारी अनुत्तीर्णता को सुनकर मैं हक्का बक्का रह गया।

हवा हो जाना—भाग जाना। पुलिस को देखकर चोर हवा हो गये।

हंसी उड़ाना—उपहास करना। भाई तुम भी हँसी उड़ालो, मेरे दिन ही खराब हैं।

हाथ का मैल—छोटी चीज। रुपये पैसे के लिए चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है। वह तो हाथ का मैल है।

हाथ खाली न होना—अवकाश न होना। आगे देखो मेरा हाथ खाली नहीं है।

हाथ धोना—खो देना। यदि तुम्हें अपनी पुस्तक से हाथ धोना हो, तो इन महाशय को दे दो।

हाथ पसारना—भीख माँगना। तुम हट्टे कट्ठे आदमी हो, तुम्हें हाथ पसारते लज्जा नहीं आती।

हाथ पांव फूल जाना—डर के मारे काँप जाना। शेर को सामने देख, श्याम के हाथ पाँव फूल गये और वह वहीं खड़ा रह गया।

हाथों हाथ बिकना—शीघ्र बिकना। शिकोहाबाद के लक्ष्मण के पेड़े इतने अच्छे बनते हैं कि वे हाथों हाथ बिक जाते हैं।

२—अन्तर्कथा-सम्बन्धी मुहावरे

हिन्दी में बहुत से ऐसे मुहावरे प्रयुक्त होते हैं जिनका सम्बन्ध प्राचीन पौराणिक अथवा ऐतिहासिक गाथाओं से है। इन मुहावरों को अन्तर्कथा सम्बन्धी मुहावरा कहा जाता है। किसी गाथा में आये हुये प्रधान पात्र के प्रधान गुण अथवा घटना के आधार पर इनकी रचना हुई है। नीचे इस प्रकार के कुछ मुहावरे लिखे जाते हैं।

अगस्त्य का समुद्र पान—अधिक पीना। तुम्हारा पानी पीना क्या हुआ अगस्त्य का समुद्र पान है; लोटे पर लोटे पीते ही चले जाते हो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अंग्रेजी नीति—फूट डाल कर अपना काम बनाने की रीति। तुम भी पूरे गुरू हो जब कोई वश न चला, तब अंग्रेजी की नीति का आश्रय लेकर मोहन और सोहन में चलवा दी और अपना काम बना लिया।

अंगद का पैर होना—दृढ़ता से जम जाना। वह अलमारी भी अंगद का पैर हो गई है, जो दस आदमियों के उठाने पर भी नहीं उठती है।

कर्ण होना—महान दानी होना। सेठ घनश्याम दास तो साक्षात कर्ण हैं किसी भी माँगने वाले को विमुख नहीं लौटाते।

कुम्भकर्ण होना—अधिक देर तक सोने वाला होना। तुम भी कुम्भकर्ण हो, जब मैं आता हूँ सोते ही मिलते हो।

गालिव मुनि का हठ—अधिक हठ। तुम्हारे हठ ने तो गालिव मुनि के हठ को भी मात कर दिया। कई तरह से समझाया पर तुम उसे नहीं छोड़ते।

गीता का ज्ञान—गहरा ज्ञान। तुम इन गँवारों को गीता का ज्ञान सुना रहे हो। ये वेचारे इसे क्या समझें।

चन्द्रमा का कलंक—किसी सुन्दर वस्तु में थोड़ा सा दोष होना। यदि रमण जैसे विद्वान को सिगरेट पीने की आदत पड़ गई है तो क्या हुआ। चन्द्रमा में कलङ्क होता है।

जयचन्द होना—अपनों को छोड़कर विदेशी का साथ देना। सन् १९४२ ई० के स्वतन्त्रता युद्ध में सेठ ताराचन्द जयचन्द बन गये और अपने मुहल्ले वालों को पकड़वा दिया।

दधीचि होना—परोपकार में प्राणों तक को दान करने वाला होना। महात्मा गान्धी आधुनिक युग के दधीचि थे।

दशरथ वचन—अटल प्रतिज्ञा। मेरे इस कथन को दशरथ वचन ही समझो। मैं इसे प्राण प्रण से पूरा करूँगा।

दुर्वासा होना—अत्यन्त क्रोधी होना। आज मजिस्ट्रेट साहब पूरे दुर्वासा हो गये हैं। बात-बात पर बिगड़ जाते हैं।

द्रौपदी का चीर होना—(१) अन्त न होना। (२) अत्यन्त लम्बा होना। (१) तुम्हारी बात भी द्रौपदी का चीर हो गई है कभी पूरी ही नहीं होती। (२) यह रस्सी तो द्रौपदी का चीर है पचास गज तो नापली, फिर भी समाप्त नहीं हुई।

ध्रुव होना—किसी बात या काम पर अटल भाव से डटा रहना। तुम तो पूरे ध्रुव हो जिस काम पर डट गये, डट गये।

नारद का हरि गुणगान—हर समय भगवान का भजन। तुम्हारा कीर्तन तो नारद का हरि गुणगान हो गया है, जब देखो तब 'हरे राम' होती ही रहती है।

नारद होना—(१) घुमक्कड़ होना, (२) इधर उधर भिड़ाने वाला होना। (१) तुम भी पक्के नारद हो, दिन भर घूमते ही रहते हो। (२) श्याम और मोहन को बातों ही बातों में भिड़ाकर तुमने अपने नारदपने का पक्का परिचय दिया है।

परशुराम का रूप धारण करना—अत्यन्त क्रुद्ध होना। किशोरी को देख कर तुमने परशुराम का रूप धारण कर लिया और उसे हजारों गालियाँ दे डालीं।

बलि बन्धन—कठोर बन्धन। प्रेम का बन्धन ऐसा मधुर बलि बन्धन है जो एक बार बधने पर कभी नहीं छूटता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बाल्मीकि की भक्ति—सच्ची भक्ति। उसकी भक्ति बगुला भक्ति नहीं, बाल्मीकि की भक्ति है।

भागीरथ प्रयास—अधिक तथा अनवरत प्रयास। यदि तुम इसी प्रकार भागीरथ प्रयास करते रहे तो तुम अवश्य ही प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होगे।

भीष्म प्रतिज्ञा—अटल प्रतिज्ञा। मेरी प्रतिज्ञा भीष्म प्रतिज्ञा है, मैं इसे अवश्य ही पूरा करूँगा।

राम राज्य—सब प्रकार से सुख तथा समृद्धि युक्त राज्य। महात्मा गांधी भारत में राम राज्य स्थापित करना चाहते थे।

रुस्तम होना—शक्तिशाली होना। क्या तुम रुस्तम हो गये हो, जो पेड़ को उखाड़ने का दम भरते हो।

विभीषण होना—अपना पक्ष छोड़कर शत्रु के पक्ष में मिल जाना। जयचन्द्र विभीषण बन गया और उसने भारत को दासता की जंजीरों में जकड़वा दिया।

विदुर की झोंपड़ी—अतिथि सेवा करने में तत्पर मनुष्य का साधारण घर। मेरे पास तो विदुर की झोंपड़ी है। अब जब कभी आयें, मेरे यहाँ ठहरें। मैं आपकी पान फूल से सेवा करूँगा।

श्री गणेश करना—आरम्भ करना। तुम लोगों के कहने से मैंने पुस्तक लिखने का श्री गणेश कर दिया है।

सुदामा के तन्दुल, शबरी के बेर—साधारण भेंट। हे प्रभो! इन सुदामा के तन्दुलों को स्वीकार करो।

हम्मीर हठ—अटल हठ। तुम्हारा हठ तो हम्मीर हठ है जिस पर डट गये, डट गये।

हरिश्चन्द्र होना—सत्य पर दृढ़ होना। आप तो हरिश्चन्द्र हैं। आपत्ति के समय भी सत्य से नहीं हटते।

हातिम होना—उपकारी होना। मोहन तो हातिम हो गया है। दूसरे के लिए यह सर्वस्व बलिदान कर देता है।

३—कहावतों की भांति प्रयुक्त अनूठी उक्तियाँ

हम पहले कह आये हैं कि कवियों के कुछ कथन जनता में कहावतों की भाँति प्रयुक्त होते हैं। इनमें कविता तथा जन सम्पर्क से प्रादुर्भूत कवि की भावनाओं का मेल होने के कारण अद्भुत माधुर्य होता है। इस प्रकार की हिन्दी कवियों की कुछ उक्तियाँ नीचे लिखी जाती हैं।

भीति ही नहीं तो क्या छातें रहि जाँयगी।
ऊधौं कहिबे को बस बातें रहि जाँयगी।
सूरदास खल कारी कामरि चढ़ै न दूजो रंग।
ऊधौं मन नाहीं दस बीस।
दुविधा में दोऊ गये माया मिली न राम।
परो अपावन ठौर में कंचन तजत न कोय।
जो जस करै सो तस फल चाखा।
रहिमन रहिला की भली, जो परसै चितलाय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

परसत मन मैला करै, सो मैदा जरि जाय।
आपको न चाहै ताके बाप को न चाहिए।
काँटो बुरो करील को अरु बदरी की घाम।
सौत बुरी है चून की, अरु साझे का काम।
इक नागिन अरु पंख लगाई।
उपजहि एक संग जलमाहीं, जलज जोंक जिमि गुन बिलगाही।
उत्तम खेती मध्यम बान निकृष्ट चाकरी भाख निदान।
ऊँच निवास नीच कस्तूरी, देख न सकहिं पराई विभूति।
का वर्षा जब कृषी सुखाने, समय चूकि पुनि का पछताने।
कूक करूँ तो जग जाने, चुपके लागे घाव।
चोर नारि जिमि प्रकट न रोई।
विष रस भरा कनक घट जैसे।
चन्दन विष व्यापत नहीं लपटे रहत भुजंग।
कौला होय न ऊजरो सौ मन साबुन धोय।
काजल की कोठरी में कैसा हू सयानो जाय, एक रेख काजल की लागि है पै लागि है।
खर को गंग न्हाइए तऊ न छाँड़े छार।
चन्दन की चुकटी भली, गाड़ी भरा न काठ।
जब दाँत न थे तब दूध पिया, जब दाँत दिये क्या अन्न न द है।
जस दूल्हा तस बनी बराता।
जहँ जहँ चरण परै सन्तन के, तहँ तहँ होवे बंटा ढार।
धीरज धर्म, मित्र अरु नारी, आपत काल परखिये चारी।
बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेय।
भौंर न छाँड़े केतकी तीखे कण्टक जान।
भई गति सांप छछूँदर केरी।
मन मोदक नहिं भूख बुताई।
विष निकल्यो अति मथन से रत्नाकरि हूँ माँहि।
सबै दिन नाहिं बराबर जात।
होनहार विरवान के होत चीकने पात।
बाँध कुदारी खुरपी हाथ, हँसिया लाठी राखै साथ।
काटे बास निरावे खेत, वही किसान करे निज हेत।
सांई घोड़न के अछत गदहन पायो राज।
खरी मजूरी चोखा काम।
नर की अरु नल-नीर की, एकै गति करि जोय।
जे तो नीचो ह्वै चलै, ते तौ उँचो होय।
सदा दिवाली संत घर जो गुड़ गेहूँ होय।
जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाही, कहहु तूल केहि लेखे माँही।
कोउ नृप होउ हमें का हानी, चेरि छाँड़ि नहिं होउब रानी।
पियै रुधिर पय ना पियै लगी पयोधर जोंक।
काम जो आवे कामरी का लै करै कमांच।
अन्धेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाँजी टके सेर खाजा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करम गति टारे नाहिं टरी।
जिसका ऊँचा बैठना, जिसका खेत निचान।
जिसका बैरी क्या करे, जिसका मीत दिवान।
खाल ओढ़यो सिंह की स्यार सिंह नहिं होय।
समरथ को नहिं दोष गुसाई।
शुक्कर वाली बादली रही शनीचर छाय।
कहे भड्डरी जोइसी, बिन बरसै नहिं जाय।
जग में देखत का ही नाता।
दिनन के फेर से सुमेर होत माटी को।

४—संस्कृत की कहावतें

प्राचीन काल में एक लम्बे समय तक बोलचाल तथा साहित्य की भाषा रहने के कारण संस्कृत में भी कहावतों का प्रचलन रहा है। आधुनिक काल में संस्कृत की कुछ कहावतें भी हिन्दी में प्रयुक्त होती हैं। नीचे कुछ प्रचलित कहावतें लिखी जाती हैं—

अनभ्यासे विषं शास्त्रम्—अभ्यास न करने पर शास्त्र विष के समान होता है।

अति सर्वत्र वर्जयेत्—प्रत्येक वस्तु की अधिकता छोड़ देनी चाहिये।

अव्यस्थितचित्ताना प्रसादोऽपि भयङ्कर—अस्थिर चित्त वालों की प्रसन्नता भी भयङ्कर होती है।

अंगीकृत सुकृतिनः परिपालयन्ति—सज्जन अंगीकार किये हुये का पालन करते है।

अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता सुदुर्लभः—अप्रिय, हितकारी बात कहने वाला तथा सुनने वाला दुर्लभ है।

आत्मार्थे पृथ्वी त्यजेत्—अपने लिये पृथ्वी को भी छोड़ दे।

आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत्—आहार तथा व्यवहार में लज्जा रहित होकर सुखी होवे।

इष्टं धर्मेण योजयेत—मित्र को धर्म में मिला दे।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्—उदार चरित्र वालों का तो सारा संसार ही कुटुम्ब होता है।

एका क्रिया द्वयर्थकरी प्रसिद्धा—एक पन्थ दो काज।

क्रिया सिद्धिः सत्वे वसति महतां नोपकरणे—महान पुरुषों के कार्य की सफलता उनके पौरुष में होती हैं, उपकरण में नहीं।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाताँ न भवति—पुत्र-कुपुत्र भले ही हो जाय, पर माता कुमाता नहीं होती।

गुणाः पूजास्थानं गुणिषु लिंग न च वयः—गुणियों की पूजा गुणों के ही कारण होती है। उसके लिंग और अवस्था इसमें कोई कारण नहीं होते।

घनाम्बुना राज पथे हि पिच्छिले क्वचिद् बुधैरप्यपथेन गम्यते—वर्षा के जल से सड़क कीचड़ युक्त होने पर कहीं-कहीं विद्वान भी रास्ता छोड़कर चलता है। धर्म तथा नीति के मार्ग में अति उच्छङ्खलता को देखकर विद्वान भी कभी कभी उसे छोड़ देते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जामाता दशमोग्रहः—जमाई दसवाँ ग्रह होता है।

द्रव्येण सर्वेवशाः—सब कोई धन से वश में हो जाता है।

दूरस्थाः पर्वता रम्या—पहाड़ दूर से अच्छे लगते हैं।

देवोदुर्बल घातका—देव भी दुर्बल को ही मारता है।

दैवी विचित्रा गति—दैवगति विचित्र होती है।

धिगस्तु परवश्यतम्—परवशता को धिक्कार है।

न स्त्री स्वतन्त्र्यमर्हति—स्त्री के लिये स्वतन्त्रता की आवश्यकता होती है।

नहि कस्तूरिका मोदः शपथेन निवार्यते—शपथ खाकर कस्तूरी की सुगन्धि का निवारण नहीं किया जाता है। (सद्‌गुणों के प्रसार को किसी प्रकार भी नहीं रोका जा सकता।)

नानृ तात् पातकं महत्—झूँठ से बढ़कर कोई पाप नहीं है।
नास्ति क्रोधसमो रिपुः—क्रोध के समान कोई शत्रु नहीं है।
निस्पृहस्य तृणं जगत्—निस्पृह के लिये संसार तिनके के समान है।
न कत्र सर्वो गुणसंनिपात—ये दोनों कहँ पाइये सोना और सुगन्ध।
परोपदेश पाडित्यंसर्वेषामेव सुकरं नृणाम्—परोपदेश कुशल बहुतेरे।
परोपकारायसतां विभूतयः—सज्जनों की सम्पत्ति परोपकार के लिये होती है।
बलीयसी केवलमीश्वरेच्छा—ईश्वर की इच्छा ही बलवान होती है।
भिन्नरुचिर्हिलोक—मनुष्यों की रुचि भिन्न-भिन्न हुआ करती है।

महाजनो येन गतः स पन्था—महान पुरुषों ने जिस मार्ग का अनुसरण किया है, वही श्रेष्ठ मार्ग है।

मोनोहिमहता धनम्—मान ही महान पुरुषों का धन है।

मा ब्रू हि दीनं वचः—दीन वचन मत कहो।

यत्ने कृते यदि न सिध्यतिकोऽत्र दोषः—यदि यत्न करने पर भी काम पूरा नहीं होता, तो इसमें क्या दोष है।

बचने का दरिद्रता—मीठे बचन कहने में क्या दरिद्रता है।

विक्रीते करिणि किमंकुशे विवादः—हाथी के बेच देने पर अंकुश के बारे में विवाद करना व्यर्थ है।

विनाश काले विपरीत बुद्धिः—विनाश काल के आने पर बुद्धि विपरीत हो जाती है।

विद्वान सर्वत्र पूज्यते—विद्वान की हर जगह पूजा होती है।
विषस्य विषमोषधम्—विष की औषधि विष ही है।
शत्रोरपि गुणा वाच्याः—शत्रु के सभी गुणों को कहना चाहिए।
शठ शाठ्य समाचरेत—शठ के साथ शठता का व्यवहार करना चाहिऐ।
श्रीमतामापदः कुतः—धन वालों पर आपत्ति कहाँ से आती है।
षट्कर्णो भिद्यते मन्त्र—गुप्त बात कानों में पड़ने पर भेद को प्राप्त हो जाती है।
समानशीलव्यसनेषु सख्यम—समान शील और व्यसन वालों में मित्रता होती है।
सर्वेगुणाः कान्चनमाश्रयन्ते—सारे गुण सोने में रहते हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सर्वस्यापि विनाश काल समये अर्धंत्यजेत् पंडितः---विद्वान को सारी वस्तु के नाश होने के समय उसका आधा भाग छोड़ देना चाहिये।

क्षणे क्षणे यन्नवतमुपैति तेव रूप रमणीयातायाः—जो प्रत्येक क्षण में नवीन दीखे, वही रमणीय है।

क्षणे प्रहारा निपतन्ति भीषणाः—घाव पर ही भयङ्कर प्रहार होते हैं।

क्षीणा नरा निष्करुणाभवन्ति—क्षीण पुरुष करुणा रहित होते हैं।

अंतर्कथाएँ

अपठित तथा पठित अवतरणों में प्राचीन तथा अर्वाचीन काल से सम्बद्ध बहुत से पुरुषों और घटनाओं का विवरण आता है। उन्हें अच्छी प्रकार से न जानने से अवतरणों का भावार्थ पूरी रीति से समझ में नहीं आता। व्याख्या करते समय इन कथाओं को टिप्पणी में संक्षेप में लिखा जाता है। नीचे कुछ प्रसिद्ध अन्तर्कथाएँ लिखी जाती हैं :—

अगस्त्य मुनि—एक बार मित्रावरुण नाम के ऋषि वन में तपस्या कर रहे थे। उन्होंने 'उर्वसी' नाम की अप्सरा को जाते हुये देखा। उसी क्षण उनका वीर्य स्खलित हो गया। जिसे उन्होंने एक घड़े में रख लिया। कालान्तर में इसी घड़े से अगस्त्य की उत्पत्ति हुई। घड़े से उत्पन्न होने के कारण ही इनका नाम कुम्भज अथवा घटज पड़ा।

कहा जाता है कि एक बार समुद्र टिटहरी के अण्डों को बहा ले गया। जिससे क्षुब्ध हो यह समुद्र को पी गये। देवताओं द्वारा प्रार्थना करने पर इन्होंने इसे मूत्र द्वारा निकाल दिया जिससे यह खारी हो गया।

अजामिल—यह एक बड़ा ही पापी ब्राह्मण था। इसकी अनुपस्थित में उसकी स्त्री ने कुछ साधुओं को अच्छे प्रकार से अतिथिसत्कार किया। प्रसन्न हो साधुओं ने उसे पुत्र होने का आशीर्वाद दे उसका नाम नारायण रखने को कहा। सारे कार्य तदनुसार ही हुये। अजामिल अपने पुत्र को बड़ा ही प्यार करता था।

मृत्यु समय यमदूतों से संत्रस्त वह 'नारायण' कह कर अपने पुत्र को पुकारने लगा। 'नारायण' नाम सुनकर विष्णु के दूतों ने उसे यमदूतों से छुड़ाया और सुन्दर गति दी।

अम्बरीष—विष्णु भक्त राजा अम्बरीष एकादशी को व्रत कर द्वादशी को ब्राह्मणों को भोजन करा स्वयं भोजन करते थे। एक द्वादशी को उन्होंने दुर्वासा नाम के एक क्रोधी मुनि को निमंत्रण दिया। मुनि स्नान करने के लिये चले गये। स्नान में उन्हें देर हो गई। इधर द्वादशी होने के भय से राजा ने ब्राह्मणों की आज्ञा से विष्णु का चरणामृत ले लिया। लौटने पर दुर्वासा क्रुद्ध हो कृत्या राक्षसी को उत्पन्न किया। वह राजा को मारने के लिये दौड़ी राजा बेहोश हो पृथ्वी पर गिर पड़ा और विष्णु का चक्र कृत्या को मार कर मुनि के पीछे हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिया। मुनि उसके डर से तीनों लोकों में भागे पर कोई भी उनकी रक्षा न कर सका। अन्त में विष्णु के कहने से वह राजा की ही शरण में आये। राजा ने चक्र का निवारण कर मुनि को भोजन करा विदा किया।

अहल्या—यह ब्रह्मा की पुत्री तथा गौतम ऋषि की पत्नी थी। एक दिन जब ऋषि स्नान करने को गये थे। इन्द्र ऋषि का वेष बनाकर अहल्या के पास आया। इतने में ऋषि भी आ पहुँचे। अहल्या इन्द्र को छिपाकर दरवाजा खोलने आई। ऋषि ने योग बल से सम्पूर्ण हाल जान लिया। उन्होंने इन्द्र को शाप दिया कि 'तुम्हारे सहस्त्र भग हो जाँय और अहल्या से कहा—'हे अहल्ये ! तू शिला हो जा'। तपस्या करने से इन्द्र के भग नेत्र के रूप में परिणित हो गये, और अहल्या भी भगवान राम की चरणों की धूलि का स्पर्श कर मुक्ति को प्राप्त हुई।

ककुत्स्थ—सतयुग में देव दानव युद्ध में पराजित हो देवता राजा इक्ष्वाकु के पुत्र पुरञ्जय से सहायता माँगने आये। पुरञ्जय ने कहा कि यदि इन्द्र मेरा वाहन बने तो मैं युद्ध कर सकता हूँ। विष्णु के समझाने पर इन्द्र ने एक बड़े बैल का रूप धारण कर लिया। राजा पुरञ्जय ने उसके ककुद (बैल के पट्ठे) पर बैठ दानवों को युद्ध में हरा दिया। बैल के ककुद पर बैठने के कारण पुरञ्जय का नाम 'ककुस्थ' और उनके वंशधरों का नाम 'ककुत्स्थ' पड़ा।

कच्छावतार—समुद्र मन्थन के समय मंदराचल को रई और शेषनाग को उसे चलाने की नेति बनाया गया। उचित आधार के न होने से मन्दराचल समुद्र में धँसने लगा। देवताओं द्वारा प्रार्थना किये जाने पर विष्णु ने कच्छप का रूप धारण कर मदराचल को अपनी पीठ पर धारण कर लिया। तदनन्तर ही समुद्र में से लक्ष्मी आदि चौदह रत्न निकले।

कद्रू वनिता—ये दोनों कश्यप ऋषि की पत्नियाँ थीं। इसमें कद्रु सर्पों की तथा वनिता गरुण की माता थी। एक बार वनिता ने सूर्य के घोड़ों की पूँछ को श्वेत तथा कद्रू ने श्याम बतलाया। विवाद बढ़ता ही चला गया और निश्चय हुआ कि चलकर देखना चाहिए और जिसकी बात झूठी निकले, वह दूसरी की जीवन भर दासी रहे। कद्रू ने अपने सर्पों को घोड़ों की पूँछ से लिपटने की आज्ञा दे दी जिससे श्वेद पूँछ श्याम दिखलाई देने लगी। पूर्व निश्चयानुसार वनता दासी कर्म करने लगी। जब गरुण को यह बात ज्ञात हुई तो उसने सर्पों के लिए अमृत लाने की प्रतिज्ञा कर अपनी माता को दासी कर्म से मुक्त करा दिया।

कबन्ध—एक बार दुर्वासा ऋषि के शाप से एक गन्धर्व राक्षस हो गया। इसके उपद्रवों से क्षुब्ध हो इन्द्र ने ऐसा बज्र मारा कि उसका सिर उसके पेट में घुस गया, पर शाप वश उसकी मृत्यु न हुई। मुख पेट में घुस जाने से इसका नाम कबन्ध पड़ा। भोजन के लिए प्रार्थना करने पर इन्द्र ने इसकी भुजाएँ एक योजन की लम्बी कर दीं। इसकी भुजाओं की चपेट में जो कोई आ जाता उसे यह चट कर जाता था। जब श्री रामजी जटायु की अन्तिम क्रिया कर वन में जा रहे थे, तब इसने उन्हें पकड़ लिया, किन्तु राम ने इसकी भुजाओं को काट डाला, जिससे इसकी मुक्ति हो गई।

करन घंट अथवा घण्टाकरन—काशी में एक ब्राह्मण रहता था। वह शिव का अनन्य भक्त था। शिव के अतिरिक्त अन्य किसी देवता का नाम सुनने के लिए उसने अपने कानों में घण्टा लटका लिये थे। यदि कोई मनुष्य उसके सामने अन्य किसी देवता का नाम लेता तो वह घन्टों को बजाता हुआ दूर भाग जाता था। इसी कारण उसका नाम करन-घण्ट पड़ा था। जिस घाट पर यह रहता था, वह घाट आज भी 'कर्ण-घण्ट' के नाम से प्रसिद्ध है।

कर्ण—दुर्वासा मुनि ने कुन्ती की सेवा से प्रसन्न हो उसे देवताओं के आवाहन मन्त्र सिखा दिये। परीक्षा करने के लिये उसने कुमारी अवस्था में ही सूर्य का आवाहन कर लिया

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिसके द्वारा कुन्ती के एक पुत्र उत्पन्न हुआ। लोक लज्जा के कारण कुन्ती ने उसे एक पिटारी में बन्द कर गंगा में बहा दिया। दुर्योधन के सारथी अधिरथ ने उसे पाकर उसका पुत्रवत् पालन किया। जिससे यह सूतपुत्र के नाम से विख्यात हुआ।

बड़ा होने पर कर्ण अद्वितीय वीर तथा योद्धा सिद्ध हुआ। धनुर्विद्या में भी वह अर्जुन से कम न था। दुर्योधन ने इसे अंग देश का राज्य देकर राजा बना दिया। महाभारत के संग्राम में द्रोणाचार्य की मृत्यु के बाद दुर्योधन ने इसे ही अपना सेनापति बनाया। यह बड़ा दानी था। अतः कपट वेषधारी इन्द्र के द्वारा माँगने पर इसने अपने शरीर के अंगभूत कवच और कुण्डलों को (जिनके रहते हुए यह अजेय था) भी दे दिया। अर्जुन के हाथ इसकी मृत्यु हुई।

कालनेमि—वह रावण के पक्ष का महाधूर्त राक्षस था। जब हनूमान जी संजीवनी बूटी लेने जा रहे थे, तब मार्ग में इसने साधु का वेश रख कर उनको छलना चाहा। हनूमान जी को इसकी माया ज्ञात हो गई और उन्होंने उसे शीघ्र ही परलोक भेज दिया।

कुब्जा—यह कंस की चन्दन घिसने वाली दासी थी। इसका कूबड़ निकला हुआ था। जब कृष्ण बलदेव कंस का वध करने के लिए मथुरा गये, उन्होंने इसे मार्ग में देखा। इसने कृष्ण बलदेव के चन्दन लगाया। कृष्ण उसका यह प्रेम देखकर बहुत प्रसन्न हुये। उन्होंने इसके पैर पर पैर रखकर तथा ठोड़ी के नीचे दो अँगुली लगाकर इसका कुब्जापन दूर कर दिया। वह एक सुन्दर स्त्री बन गई। कहा जाता है, बाद में कृष्ण इससे प्रेम करने लगे और यह उनकी प्रेयसी बन गई।

कुबलयाश्व धुंधुमार—यह वृहदश्व का पुत्र था। वृहदस्व के वानप्रस्थ स्वीकार करने के बाद यह उनका उत्तराधिकारी हुआ। उसी समय मधुराक्षस का पुत्र धुन्धु संसार को नष्ट करने की इच्छा से मरुस्थल में बालू के नीचे बैठकर तप करने लगा। उसकी श्वास से धुआँ निकलता था, अग्नि उठने लगती थी, पृथ्वी काँप जाती थी और पर्वत हिलने लगते थे। जब महर्षि उतुंग ने वृहदश्व से उसे मारने के लिए कहा, तब वृहदश्व ने इस कार्य को वानप्रस्थ आश्रम के नियमों के विरुद्ध बताकर अपनी असमर्थता प्रकट की और कुबलयाश्व से इस काय को करवाने के लिए कहा। कुवलयाश्व अपने सौ पुत्रों को साथ लेकर धुन्धु को मारने चला। विष्णु भगवान ने भी संसार के हित के लिए कुबलयाश्व के शरीर में प्रवेश किया। धुन्धु की फुसकार से कुवलयाश्व के ९७ पुत्र मर गये। अन्त में कुबलयाश्व ने उसे मार डाला। इससे कुबलयाश्व का नाम धुन्धुमार पड़ गया।

कैकेयी—यह कैकेय देश के राजा की पुत्री दशरथ की सबसे छोटी रानी और भरत की माँ थी। एक समय देवासुर संग्राम में दशरथ इन्द्र की सहायता के लिए गए। कैकेयी भी उनके साथ गई। युद्ध स्थल में रथ के पहिये की धुरी निकल जाने पर कैकेयी ने अपनी ऊँगली से रथ के पहिये को रोक लिया। इसके इस साहस पर प्रसन्न होकर दशरथ ने उससे दो वरदान माँगने के लिये कहा। उस समय इसने इन वरदानों को न माँगकर भविष्य के लिये सुरक्षित रखा। राम के राज्याभिषेक के समय वही दो वरदान कैकेयी ने इस प्रकार माँगे—राम को चौदह साल का बनवास और भरत को राजतिलक।

गज-ग्राह—एक मदमत्त गज एक तालाब में पानी पीने आया करता था। उसी तालाब में एक बलवान ग्राह (मगर) रहा करता था। एक दिन ग्राह ने गज को पकड़ लिया। दोनों में घमासान युद्ध हुआ। अन्त में ग्राह गज को गहरे जल में खींचकर ले गया। निराश होकर गज ने भगवान को पुकारा। उसकी पुकार सुनकर भगवान गरुड़ को छोड़कर दौड़े आये और गज को ग्राह से छुड़ा दिया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गणिका—काशी में एक गणिका रहती थी। उसके यहाँ एक तोता पला था। वह तोते को 'राम नाम' पढ़ाया करती थी। उसके दुराचारिणी होने के कारण मृत्यु के समय यमदूत तथा 'राम नाम' लेने के कारण विष्णु दूत दोनों ही उसे लेने आये। 'राम नाम' की अद्भुत शक्ति के कारण विष्णु दूत उसे स्वर्ग ले गये।

पिङ्गला नामक एक वैश्या की कथा भी पुराणों में आई है। एक बार वह शृङ्गार कर किसी प्रेमी की प्रतीक्षा में सारे दिन बैठी रही, किन्तु कोई उसके यहाँ न आया। इससे उसे घृणा हुई और भगवान के भजन में लग गई। भजन के प्रताप से उसके पाप नष्ट हो गये और सद्गति को प्राप्त हुई।

गालव मुनि—यह विश्वामित्र के शिष्य थे। विद्या प्राप्त करने के उपरान्त इन्होंने अपने गुरू से गुरू-दक्षिणा माँगने के लिये कहा। गुरू ने इनकी भक्ति को ही श्रेष्ठ दक्षिणा मानकर कुछ न लेने को कहा। गालव के अधिक हठ पर गुरु ने क्रुद्ध होकर १००० श्यामकर्ण घोड़े माँगे। गालव को अति कठिनता से जिस किसी प्रकार ६०० घोड़े मिले। शेष के बदले इन्होंने गुरुजी को ययाति की एक कन्या भेंट करदी। (श्यामकर्ण घोड़े काले मुख, लाल पूँछ और गौर वर्ण के होते हैं।)

गुण निधि—यह एक ब्राह्मण था। कुसंस्कारों के कारण चोरी किया करता था। एक रात्रि को यह एक घन्टा चुराने के लिए एक शिव मन्दिर में घुसा। घन्टा इतना ऊँचा टँगा था कि गुणनिधि का हाथ उस तक न पहुँच सकता था। अतः शिव लिङ्ग के ऊपर चढ़कर वह उस घन्टे को उतारने लगा। शिव न यह समझ कर कि इसने सारे शरीर को मेरे ऊपर चढ़ा दिया है, उसे शिव लोक भेज दिया।

जयन्त—यह इन्द्र का पुत्र था। जब वनवास के समय राम सीताजी की गोद में सो रहे थे, उसने कौए का रूप धारण कर सीताजी के स्तनों में चोंच मार दी, जिससे स्तनों में खून निकलने लगा। रामचन्द्रजी जाग गये और उन्होंने उसके एक वाण मारा। जयन्त तीनों लोकों में भागा-भागा फिरा, परन्तु राम की कृपा से बाण ने उसकी केवल एक आँख फोड़ दी। उस समय से ही कौए के एक आँख होती है।

जरासन्ध—यह मगध के राजा बृहद्रथ का पुत्र और कंस का स्वसुर था। उत्पन्न होते समय इसका शरीर दो फांकों में था। जरा नाम की दासी ने इन्हें जोड़ दिया जिससे इसका नाम जरासन्ध पड़ा। यह बड़ा ही पराक्रमी और वीर था। कंस की मृत्यु के बाद इसने मथुरा पर १८ बार चढ़ाई की। कृष्ण इसके ही भय से मथुरा छोड़कर द्वारिका चले गये। जब युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया, तब चारों दिशाओं को जीतते हुए कृष्ण, भीम, अर्जुन आदि इसकी राजधानी गिरिव्रज में पहुँचे। भीम जरासन्ध से २७ दिन तक मल्ल युद्ध करता रहा, पर इसे परास्त न कर सका। अन्त में कृष्ण ने एक तिनके को चीरकर भीम को इशारा किया कि वह इसे बीच में से चीर दे। भीम ने इसकी टाँग को अपने पैर से दबा बीच से चीर दिया और वह मर गया।

तुलसी—तुलसी नाम की एक गोपी गोलोक में राधा की सखी थी। एक दिन राधा ने तुलसी को कृष्ण के साथ विहार करते देख शाप दिया कि तू मनुष्य योनि में जन्म लेकर अपने दुष्कर्म का फल भोग। शाप के अनुसार यह धर्मध्वज नामक राजा के यहाँ उत्पन्न हुई। उसके रूप की तुलना किसी से नहीं हो सकती थी, अतः उसका नाम तुलसी पड़ा। तुलसी ने वन में जाकर तप किया और ब्रह्माजी से कृष्ण को पतिरूप में पाने का वरदान माँगा। ब्रह्माजी ने इसकी शादी शंखचूड़ से करवा दी। जिसको वरदान था कि जब तक उसकी पत्नी का सतीत्व नष्ट न होगा, उसे कोई मार न सकेगा। शंखचूड़ ने सब देवताओं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

को हरा दिया, तब विष्णु ने शङ्खचूड़ को नष्ट करने की इच्छा से उसका रूप धारण कर तुलसी का सतीत्व नष्ट कर दिया। इस पर क्रुद्ध होकर तुलसी ने विष्णु को पत्थर होने का शाप दिया। बाद में जब तुलसी को यह पता चला कि उसने भगवान् को ही शाप दिया है, यह विष्णु के चरणों में गिर पड़ी। विष्णु ने प्रसन्न होकर इससे कहा—'तुम लक्ष्मी समान मेरी प्रिया हो ही। तुम्हारे शरीर से गंडकी नदी और केश से तुलसी वृक्ष होगा।' उसी समय से संसार में सालिग्राम की पूजा होने लगी और तुलसी के पत्ते उनके मस्तक पर चढ़ाये जाने लगे।

दधीचि (वृत्रासुर वध)—वृत्रासुर एक बली राक्षस था। उसने देवताओं को युद्ध में पराजित करके उनके सारे अस्त्र-शस्त्र निगल लिये। इन्द्र आदि सारे देवता भयभीत होकर विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने कहा कि दधीचि की हड्डियों से विश्वकर्मा द्वारा बनाये हुए वज्र से ही वृत्रासुर का वध हो सकता है। देवता लोग दधीचि के पास गये। दधीचि ने योगाभ्यास द्वारा सहर्ष अपने प्राण दे दिये। इन्द्र ने उनकी हड्डी से बज्र बनवाकर वृत्रासुर का वध किया।

दक्ष यज्ञ—दक्ष प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र थे। इनकी पुत्री सती का विवाह महादेव जी के साथ हुआ था। एक बार जब दक्ष ब्रह्मा जी की सभा में गये, तब ब्रह्मा तथा विष्णु की तरह महादेव जी भी उनके सम्मान में खड़े नहीं हुए। दक्ष को यह बात बुरी लगी। उन्होंने यज्ञ किया और उसमें महादेव को न बुलाया। सती पिता के प्रेम से बिना बुलाए ही यज्ञ में जा पहुँची; किन्तु यज्ञ में अपने पति का भाग न देखकर क्षुब्ध हो यज्ञ-कुण्ड में कूद पड़ी और मर गई। शिव के गणों ने क्रुद्ध होकर यज्ञ का विध्वंश कर दिया और दक्ष का सिर काट डाला। बाद में प्रसन्न होकर महादेव ने उसके धड़ पर बकरे का सिर जोड़कर उसे जीवित कर दिया। सती अगले जन्म में पार्वती के रूप में महादेव की पत्नी हुई।

नमुचि—यह एक महा प्रतापी दैत्य था। उसने तपस्या करके ब्रह्माजी से यह वर प्राप्त किया था—'मैं न किसी अस्त्र-शस्त्र से मरूँ और न किसी शुष्क आर्द्र पदार्थ से मरूँ'। देवासुर संग्राम में देवता लोग इसके आगे त्राहि त्राहि करने लगे तब आकाश वाणी हुई कि, "यह अस्त्र शस्त्र से नहीं मरेगा, इसे समुद्र के फेन से मारो।" पीछे समुद्र फेन से इसकी मृत्यु हुई।

नहुष—यह एक प्रतापी राजा था। वृत्रासुर के भय से इन्द्र के मानसरोवर में छिप जाने पर बृहस्पति ने इसे अस्थायी रूप से स्वर्ग का राजा बना दिया। राजमद से अन्धे होकर नहुष ने इन्द्राणी के साथ रमण करने की इच्छा की। इन्द्राणी ने कहा कि यदि नहुष सप्त ऋषियों द्वारा धारण की हुई पालकी पर बैठकर मेरे पास आये, तो मैं उनकी इच्छा पूर्ण कर सकती हूँ। कामान्ध हो नहुष सप्त ऋषियों द्वारा धारण की गई पालकी पर बैठकर चल दिया। ऋषि धीरे-धीरे चल रहे थे, नहुष अधीर हो—सर्प, सर्प (जल्दी चलो, जल्दी चलो) कहा। ऋषियों ने क्रुद्ध हो पालकी को फेंक दिया और शाप दिया कि 'तू सर्प हो जा' शापवश नहुष अजगर बनकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। बाद में युधिष्ठर के दर्शन से उसकी मुक्ति हुई।

नारद—यह पहले जन्म में एक दासी-पुत्र थे। उस गृहस्वामी के यहाँ जहाँ इनकी माता सेवा-कार्य किया करती थी, साधुओं का महान सत्कार होता था। ये साधुओं की भूँठन खाया करते, जिससे इनकी बुद्धि पवित्र हो गई। माता की मृत्यु के पश्चात् ये तप करने वन में चले गये। तप के प्रभाव से यह दूसरे जन्म में ब्रह्माजी के पुत्र कहलाए। कहः

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जाता है कि यह सर्वदा भगवन्नाम का कीर्तन करते हुए तीनों लोकों में इधर-उधर घुमा करते हैं।

निमि—यह एक प्रतापी राजा थे। एक बार इन्होंने यज्ञ करने के लिए वशिष्ठ को बुलाया। वशिष्ठ इस समय यज्ञ कराने के लिए इन्द्र के यहाँ गये हुए थे। राजा ने दूसरे ऋषि को अपना पुरोहित बनाकर यज्ञ करा लिया। जब वशिष्ठ इन्द्र के यहाँ से लौटे, तब राजा तथा वशिष्ठ में वाद-विवाद हुआ दोनों ने एक दूसरे को शाप दिया कि उनके शरीर न रहे। वशिष्ठ ने योग शक्ति से एक शरीर को छोड़कर दूसरा शरीर धारण कर लिया। निमि के पुरोहित ने भी निमि से ऐसा ही करने को कहा, पर निमि ने पुनः शरीर धारण करने की अनिच्छा प्रकट कर मनुष्यों के पलकों पर रहने की इच्छा प्रकट की। पुरोहित के तप के प्रभाव से ऐसा ही हुआ। तब से निमि मनुष्यों के पलकों पर निवास करते हैं। अतएव पलकों और पलों को क्रमशः निमिष और निमेष कहा जाता है।

नीलकण्ठ—यह शिव का ही नाम है। जब देव और दानवों द्वारा समुद्र मंथन किया गया, तब उसमें से सबसे पहले कालकूट विष निकला। विष की भयङ्कर ज्वालाओं से पीड़ित होकर देव-दानवों ने शिव से इसे पीने की प्रार्थना की। शिव ने लोक हित के लिये विष को पी लिया, जिससे इनका कण्ठ नीला हो गया। उसी समय से उनका नाम नीलकण्ठ पड़ गया।

नृग—यह एक दानी राजा था। यह प्रति दिन एक करोड़ गायों का दान किया करता था। एक दिन दान में जाने वाली गायों में भूल से पहले दिन दान में दी हुई गाय भी आ मिली। राजा ने उसे दूसरे ब्राह्मण को दे दिया। पहले ब्राह्मण ने अपनी गाय को पहचान कर उसे दूसरे ब्राह्मण से माँगा। दोनों ब्राह्मणों में झगड़ा हो गया। वे न्याय के लिए राजा के पास आये राजा ने उनको धन आदि द्वारा सन्तुष्ट करने की चेष्टा की, पर वे न माने। उन्होंने क्रुद्ध होकर राजा को गिरिगिट योनि को प्राप्त करने का शाप दे दिया। तदनुसार राजा ने गिरगिट योनि में एक हजार वर्ष तक द्वारिका के एक कुए में निवास किया।

नृसिंह—यह भगवान विष्णु के एक अवतार का नाम है। इसे भगवान ने अपने भक्त प्रल्हाद की रक्षा के लिये धारण किया। नृसिंह अवतार में भगवान का सिर सिंह के समान तथा शेष शरीर मनुष्य से समान था। इस अवतार में भगवान ने अपने नखों से प्रल्हाद के पिता हिरण्यकशिपु का पेट फाड़ कर प्रल्हाद की रक्षा की थी।

परशुराम—यह यमदग्नि तथा रेणुका के सबसे छोटे पुत्र थे। यह स्वभाव से ही क्रोधी तथा उग्र थे। एक बार महिष्मती के राजा सहस्त्र-बाहु ने इनके पिता के आश्रम से कामधेनु को बलपूर्वक हर लिया। इस पर क्रुद्ध हो इन्होंने राजा का बध कर कामधेनु को पिता को दे दिया। इस पर पिता ने कहा कि तुमने ब्राह्मण होकर राजा का वध किया है अतः प्रायश्चित करो। इस पर इन्होंने एक वर्ष में सारी पृथ्वी की परिक्रमा की। इनकी अनुपस्थिति में राजा के पुत्रों ने यमदग्नि को मार डाला। इनके लौटने पर इनकी माता ने २१ बार छाती पीटकर विलाप किया, अतः इन्होंने राजवंश का नाश कर, पृथ्वी को २१ बार क्षत्रियों से रहित कर के ब्राह्मणों को दान कर दिया।

एक बार इन्होंने अपने पिता की आज्ञा से अपनी माता का सिर काट लिया था। जब पिता ने प्रसन्न होकर वर माँगने के लिए कहा, तब इन्होंने अपनी माता को जीवित करने का वरदान माँगा।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

प्रियव्रत—यह मनु के पुत्र थे। लनु ने इन्हें अल्प आयु में ही सम्पूर्ण नीति शास्त्र तथा घन शास्त्र पढ़ा दिए। जब यह समर्थ हुये, तब मनु ने इन्हें राजगद्दी देनी चाही। किन्तु इन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि इन्हें नारद के उपदेश से ज्ञान हो गया था। एक समय जब किसी पर्वत की गुफा में नारद इन्हें ज्ञान का उपदेश दे रहे थे, मनु इन्हें बुलाने के लिये वहाँ आये। ब्रह्माजी भी वहाँ आ पहुँचे। ब्रह्मा के समझाने से प्रियव्रत ने राजगद्दी स्वीकार करली। कुछ दिनों बाद इन्होंने विश्वकर्मा की महिष्मती नामक कन्या से विवाह कर लिया और योग्यता तथा नीतिपूर्वक प्रजा का पालन करते हुये परमधाम को सिधारे।

बलि—राजा बलि बड़े दानी थे। इनके दान से भयभीत होकर इन्द्र ने विष्णु से इनकी परीक्षा लेने के लिए कहा। विष्णु ब्राह्मण के वेष में ५२ अँगुल के बोने का रूप धारण कर बलि के यहाँ दान माँगने गये। बलि ने ब्राह्मण को इच्छा के अनुसार दान देने की प्रतिज्ञा की। भगवान ने राजा से साढ़े तीन डग पृथ्वी माँगी। राजा ने इसे स्वीकार कर लिया। बलि के गुरु शुक्राचार्य भगवान के इस छल को समझ गये। उन्होंने बलि से दान देने के लिये निषेध किया। बलि के न मानने पर वे सूक्ष्म रूप धारण कर करवे (गंगासागर अथवा झारी) के छेद में बैठ गए। संकल्प करने के लिये जब बलि उस करवे से पानी लेने लगे, तब शुक्राचार्य के बैठे होने के कारण उसमें से पानी न निकला। भगवान ने उसके छेद में कुश की जड़ डालकर उसे खोलने का प्रयत्न किया जिससे शुक्राचार्य की एक आंख फूट गई और ये काने हो गये भगवान ने अपनी तीन डगों से सारी पृथ्वी नाप ली। आधे डग के लिए बलि ने अपना शरीर भगवान के सामने उपस्थित कर दिया। इस पर भगवान बहुत प्रसन्न हुये और बलि से वरदान माँगने के लिए कहा। बलि ने कहा—'यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो मुझे आप नित्य ही दर्शन दिया करें।' भगवान ने 'तथास्तु' कह कर इन्हें पाताल का राज्य दे दिया और स्वयं बलि के दरवाजे पर रहने लगे।

विशेष—कहीं कहीं पर तीन डग पृथ्वी नापने का वर्णन है।

बाल्मीकि—आरम्भ में यह रत्नाकर नाम के व्याध थे और पथिकों को लूट कर अपने कुटुम्ब का पालन करते थे। एक बार इन्होंने लूटने के लिए सप्त ऋषियों को रोका। सप्त ऋषियों ने इनसे पूछा कि तुम अपने कुटुम्बियों से पूछो कि वे केवल खाने के साथी हैं या उन पाप कर्मों के फल के भी जो तुमने किये हैं। व्याध ने कुटुम्बियों से यही प्रश्न पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि हमें तो खाने पीने से ही मतलब है। कहीं से लाओ। हमें पाप कर्मों के फल से क्या। व्याध ने लौटकर ऋषियों से सारा हाल कह दिया। ऋषियों ने कहा यदि कोई तुम्हारे पाप कर्मों में शामिल नहीं है, तो केवल अपने पेट के लिए पाप करते क्यों हो। व्याध के ज्ञान चक्षु खुल गये। ऋषियों ने इनसे 'राम राम' जपने के लिये कहा। यह मरा मरा' जपने लगे। भजन करने में यह इतने लीन हो गये कि चींटियों ने इनके चारों तरफ 'बाल्मीक' (बाबी) बनाली। बाद में उसमें से निकलने के कारण इनका नाम 'बाल्मीक' पड़ा। आगे चलकर इन्होंने संस्कृत का आदि महाकाव्य 'रामायण' लिखा और 'आदि कवि' कहलाये।

वेनु मृत्यु तथा पृथु जन्म—ध्रुव वंश में राजा अंग की पत्नी सुनीता के गर्भ से इसकी उत्पत्ति हुई थी। इसकी दुष्टता से पीड़ित होकर इसका पिता राजा अंग राज्य छोड़कर वन को चला गया। राज्य सिंहासन पर बैठते ही यह अपने आपको सर्व शक्तिशाली समझने लगा। इसके अत्याचारों से पीड़ित होकर ऋषियों ने शाप दिया, जिससे इसकी मृत्यु हो गई देश में राजा के न होने से चोर डाकुओं के उत्पात बढ़ गये और प्रजा को बड़ा कष्ट होने

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगा। तब ऋषियों ने वेनु की दाहिनी भुजा का मन्थन किया, जिससे विष्णु के अंशावतार पृथु का जन्म हुआ। इनके राज्य में सारी प्रजा सुख से रहने लगी।

भस्मासुर—वृकासुर नाम का दैत्य था। इसने शिव की तपस्या करके यह वरदान पाया कि वह जिसके सिर पर हाथ रख देगा, यह भस्म हो जायगा किन्तु जैसे ही उसने पार्वती को देखा। यह उनके रूप से मोहित होकर शिव को ही भस्म करने के लिए चल दिया। शिव भागे। विष्णु ने यह देखकर वटु रूप धारण करके छल पूर्वक उसके सिर पर उसका हाथ रखवा दिया जिससे वह स्वयं भस्म हो गया।

भस्म करने का वरदान प्राप्त करने के कारण ही वृकासुर का नाम भस्मासुर पड़ गया।

भृगु—यह ब्रह्मा के पुत्र थे। एक बार देवताओं में यह विवाद उठा कि देवताओं में कौन बड़ा है। कोई ब्रह्मा को, कोई विष्णु को और कोई शिव को बड़ा बताता था। इस बात का निर्णय करने के लिए भृगु को चुना गया। भृगु सबसे पहले अपने पिता ब्रह्मा जी के यहाँ गये, किन्तु इन्होंने वहाँ जाकर उन्हें प्रणाम नहीं किया, जिससे ब्रह्मा जी को खिन्नता हुई। भृगु ने यह देखकर उन्हें रजोगुणी कहा। इसके बाद यह शिव के यहाँ गये और उनको भी प्रणाम न किया। शिव इस पर क्रुद्ध हो गये। इसी कारश भृगु ने शिव को तमोगुणी कहा। अन्त में यह विष्णु के यहाँ पहुँचे। विष्णु उस समय सो रहे थे। जाते ही इन्होंने उनकी छाती में लात मारी। विष्णु जग गये और इनके चरणों को पकड़ कर कहने लगे—'हे भगवान। मेरी कठोर छाती में लगने के कारण आपके पाँव में चोट लग गई होगी। आप मेरा अपराध क्षमा कीजिये।' इस पर इन्होंने विष्णु को सतोगुणी कह कर उन्हें ही सबसे बड़ा देवता बतलाया।

मत्स्यावतार—वैवस्वत मनु नाम के एक प्रसिद्ध राजा हो गए हैं। एक बार एक छोटी सी मछली ने आकर मनु से प्रार्थना की कि मुझे बड़ी मछलियाँ सताती है। आप मेरी रक्षा कीजिए। मनु ने उसे एक घड़े में रख दिया अधिक बड़ी होने पर कुँए में तदन्तर उसे समुद्र में छोड़ दिया। समुद्र में पहुँचने पर मछली ने राजा से कहा कि प्रलय काल आने वाला है, अतः तुम एक दृढ़ नौका बनवाओ और सम्पूर्ण बनस्पितियों के बीज अपने पास रखकर सप्तर्षियों सहित उस पर सवार हो जाओ। प्रलयकाल में उस नौका को मेरे सींग में बाँध देना। राजा ने वैसा ही किया। वह मछली राजा की नौका को खींचकर हिमालय के सर्वोच्चि शिखर पर ले गई। मछली रहने से मनु तथा सप्तर्षियों ने उस नौका को हिमालय के उस शिखर से बाँध दिया। मछली ने कहा—मैं प्रजापति ब्रह्मा हूँ, मैंने तुम लोगों की रक्षा करने और संसार की सृष्टि करने के लिए यह मत्स्यावतार धारण किया था। अब तुम लोग संसार की सृष्टि करो। यह कह वह अन्तर्ध्यान हो गई।

मार्कण्डेय—ये एक ऋषि थे। इन्होंने तप करके भगवान को प्रसन्न कर लिया और उनसे प्रलय का दृश्य दिखाने को कहा। भगवान ने ऐसा ही किया।

उस समय सारी पृथ्वी पर जल ही जल था। केवल भगवान एक बालक के रूप में वट वृक्ष पर खेल रहे थे। कहा जाता है कि प्रयाग संगम पर किले में वही वट वृक्ष आज तक स्थिति है।

ययाति—एक बार नदी में स्नान करते समय राजा वृष पर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा ने भूल से शुक्राचार्य की पुत्री देवयानि के वस्त्र पहन लिये। फलस्वरूप शर्मिष्ठा को देवयानि की दासी बनना पड़ा। देवयानि का विवाह राजा ययाति के साथ हुआ। शर्मिष्ठा उसके साथ गई। राजा तथा शर्मिष्ठा का प्रेम हो गया। जब शर्मिष्ठा के पुत्र हुआ, तब शुक्राचार्य

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ने क्रुद्ध होकर ययाति को वृद्ध होने का शाप दे दिया, राजा के प्रार्थना करने पर शुक्राचार्य ने कहा यदि तुम्हारा कोई पुत्र तुम्हें अपना यौवन देकर स्वयं वृद्ध हो जाय तो तुम युवा हो सकते हो। राजा के माँगने पर देवयानि के किसी पुत्र ने राजा को यौवन न दिया, किन्तु शर्मिष्ठा के पुत्र पुरु ने अपना यौवन दे दिया। प्रसन्न होकर ययाति ने उसे ही राज्य दे दिया। बाद में ययाति ने पुरु का यौवन लौटाकर अपनी वृद्धावस्था वापस ले ली।

रन्तिदेव—एक बार सकुटुम्ब बन में निवास करते समय राजा रन्तिदेव को ४८ दिनों तक निराहार रहना पड़ा। जब ४९ वें दिन कुछ भोजन मिला तब एक भूखा अतिथि वहाँ आ पहुँचा। राजा ने उसे भोजन दे दिया। उसके और माँगने पर राजा ने अपनी पत्नी और पुत्र का भी भाग दे दिया। उससे मन में इसके कोई क्षोभ न हुआ। इस पर उनसे भगवान प्रसन्न हो गये और उनके सारे कुटुम्ब को दर्शन दिया।

राहु केतु—देवताओं और राक्षसों द्वारा समुद्र का मन्थन होने पर अमृत निकला। जब अमृत देवताओं को बाँटा जा रहा था, तब राहु नामक दैत्य देवता का रूप धारण कर उसे पी गया। सूर्य और चन्द्र को यह बात ज्ञात थी। उनके संकेत से विष्णु ने अपने चक्र से राहु का सिर काट दिया, परन्तु अमृत के प्रभाव से इसकी मृत्यु न हुई। राहु का शिरो भाग 'राहु' और धड़ 'केतु' कहलाया। उसी क्षत्रुता के कारण केतु सूर्य को और राहु चन्द्र को ग्रसता है जिसे ग्रहण कहते हैं।

वराह अवतार—हिरण्याक्ष नाम का एक अत्यन्त बलशाली राक्षक्ष था इसने पृथ्वी को उठाकर पाताल लोक में विष्णु की दीवार लगाकर रख दिया था। देवों द्वारा प्रार्थना करने पर विष्णु ने वराह का रूप धारण कर हिरण्याक्ष को मार डाला और पृथ्वी का उद्धार किया।

विदुर—यह दासी के पुत्र थे, परन्तु भगवान कृष्ण में इसकी प्रगाढ़ भक्ति थी, अतएव हस्तिनापुर जाने पर कृष्ण दुर्योधन के घर जाकर विदुर के यहाँ ही गये। जब कृष्ण विदुर के घर पहुँचे, वह घर पर न थे। उनकी पत्नी ने भगवान का स्वागत किया। वह केले खिलाने के लिए बैठी, परन्तु प्रेम विह्वल होने के कारण केले तो फेंकती गई और छिलके भगवान को खिलाती रही। भगवान प्रेमवश उन्हें रुचि से खाते रहे। इस प्रकार भगवान ने विदुर के कुल का विचार न कर उनकी भक्ति को प्रधानता दी।

विन्ध्याचल—प्राचीन काल में जब एक बार सूर्य के तीव्र तेज से विन्ध्याचल के वृक्ष लता आदि जलने लगे तब विन्ध्याचल ने अपना शरीर बढ़ाकर सूर्य के मार्ग को रोक लिया, देवताओं ने घबड़ाकर अगस्त्य को उसके पास भेजा। अगस्त्य को देखते ही विन्ध्याचल ने उन्हें दण्डवत की। ऋषि ने कहा, 'जब तक मैं न लौटूँ, तब तक इसी प्रकार पड़े रहना' कहकर चले गये। पर्वत तभी से उसी प्रकार पड़ा हुआ है।

शबरी—यह जाति की भीलिनी थी। मतंग ऋषि की सेवा से इसे भगवद्भक्ति की प्राप्ति हो गई थी। सीताहरण के बाद सीता की खोज में घूमते समय राम को शबरी का आश्रम मिला। शबरी ने राम का बड़ा सत्कार किया तथा प्रेम में बेसुध होकर राम को पहले चखकर मीठें बेर खिलाये। राम ने उन्हें सराह-सराह कर बड़े प्रेम से खाया और इसे नवधा भक्ति का उपदेश दिया।

शिबि—उशीनगर देश में शिवि नामक राजा राज्य करता था। वह बड़ा धार्मिक और दानी था। उसकी परीक्षा के लिए इन्द्र बाज तथा अग्नि कबूतर बने। बाज से डरे हुये कबूतर ने राजा से अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की। राजा ने उसे अभयदान दिया। बाज ने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहा—'हे राजन ! मैं भूखा हूँ । मेरा भोजन मुझे दे दो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा।' राजा ने कबूतर के बदले अपना माँस देने को कहा । बाज राजी हो गया । राजा ने तराजू मँगाई और उसके एक पले में कबूतर रखकर दूसरे में अपना माँस काट काट कर रखने लगा । जब राजा का सारा माँस भी कबूतर के बराबर न हो सका, तब वह स्वयं ही तराजू में बैठ गया । इस पर प्रसन्न होकर भगवान से उसे दर्शन देकर मुक्ति प्रदान की ।

शिशुपाल—यह चेदि देश का राजा और कृष्ण की बुआ का लड़का था । इसकी माता ने ज्योतिषियों से जानकर कि इसकी मृत्यु कृष्ण के द्वारा होगी कृष्ण से इसके सौ अपराध क्षमा करने का वचन ले लिया । यह बड़ा ही पराक्रमी और दुष्ट था । युधिष्ठिर के यज्ञ में शिशुपाल ने कृष्ण को गालियाँ देना आरम्भ कर दिया । कृष्ण उनकी गालियों को गिनते रहे और अपनी पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार सौ गालियों तक उन्होंने कुछ न कहा । किन्तु ज्यों ही वह सौ से आगे बढ़ा, कृष्ण ने अपने चक्र से उसका सिर काट डाला ।

सहस्त्रबाहु—यह एक राजा था । एक बार यह अपनी सेना समेत शिकार खेलने के प्रसङ्ग में यपदग्नि के आश्रम पर जा पहुँचा । ऋषि ने कामधेनु के प्रताप से राजा और उसकी सारी सेना का सब प्रकार से स्वागत किया । राजा ने ऋषि से कामधेनु माँगी, ऋषि के न देने पर राजा ने उसे छीन लिया । कामधेनु राजा से छूटकर स्वर्ग को चली गई । जब यमदग्नि के छोटे पुत्र परशुराम आये, तब इन्होंने यह सारा हाल देखा । क्रुद्ध हो इन्होंने सहस्त्रबाहु को मार डाला ।

हरिश्चन्द्र—यह अयोध्या के राजा और बड़े ही सत्यवादी थे । इन्द्र के कहने से दान माँगने को आये हुए विश्वामित्र को इन्होंने अपना सारा राज्य दे दिया, और दक्षिणा के लिए काशी में अपनी पत्नी को बेचकर स्वयं भी डोम के यहाँ बिक गये । डोम ने इन्हें मरघट पर कर लेने के लिए नियुक्त किया । विश्वामित्र ने सर्प बनकर इनके पुत्र को डस लिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई । इनकी पत्नी कफन के अभाव में अपनी धोती के अर्द्ध भाग में उसे लपेट कर मरघट पर लाई । इन्होंने उससे भी कर माँगा। जब रानी कर देने के लिए अपनी आधी धोती में से भी कपड़ा फाड़ने लगी, तब भगवान ने प्रसन्न होकर दर्शन दिये, और पुत्र को जीवित कर राजा रानी को मुक्ति दी ।

हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष—जय और विजय स्वर्ग के द्वार रक्षक थे । एक बार इन्होंने सनकादि ऋषियों को स्वर्ग में जाने से रोक दिया । ऋषियों ने क्रुद्ध होकर इन्हें तीन जन्म तक असुर योनि में जन्म लेने का शाप दिया । शाप वश ही जय और बिजय कश्यप की पत्नी दिति के गर्भ से हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष के रूप में उत्पन्न हुये । हिरण्यकशिपु का बध भगवान ने नृसिंह रूप से और हिरण्याक्ष का बाराह रूप से किया ।

त्रिपुर बध—तारक नामक असुर के तीन पुत्र हुये—ताराकाश, विद्युन्माली और कमल लोचन । इन तीनों ने ब्रह्मा तथा शिव की आराधना करके अन्तरिक्ष के तीन पुरों का अधिकार प्राप्त कर लिया । अधिकार प्राप्त कर के उन्मत्त हो गये । उन्होंने सारे संसार को कंपा दिया । देवताओं द्वारा प्रार्थना करने पर शिव ने एक बाण से तीनों पुरों का विध्वंस कर तीनों राक्षसों का नाश कर दिया । उसी समय से शिव का नाम त्रिपुरारि पड़ गया ।

त्रिशंकु—यह एक राजा था । सदेह स्वर्ग जाने की कामना से एक बार यज्ञ कराने के लिए अपने गुरु वशिष्ठ के पास गया । वशिष्ठ ने शास्त्र विरुद्ध यज्ञ करने में अपनी असमर्थता प्रकट की । उसके बाद यह वशिष्ठ पुत्रों के पास गया, उन्होंने गुरु और शास्त्रों में श्रद्धा न होने के कारण इसे चाण्डाल होने का शाप दे दिया । तब यह विश्वामित्र के पास गया । विश्वामित्र ने यज्ञ करा-कर अपने तपोबल से इसे सदेह स्वर्ग भेज दिया,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किन्तु इन्द्र ने इसे नियम विरुद्ध समझकर उसे वहाँ से ढकेल दिया। यह देखकर विश्वामित्र ने उसे अपने योग बल से आकाश में ही स्थित कर दिया।

कहा जाता है कि वह आज तक आकाश में नीचा मुख करके लटका हुआ है और कर्मनाशा नदी उसके मुख की लार से बनी है।

विशेष—आधुनिक काल के महापुरुष गान्धी, टैगोर, तिलक आदि का नाम भी अन्तर्कथाओं के नाम की भाँति प्रयुक्त होता है किन्तु इनकी जीवनियों के अति प्रसिद्ध होने के कारण इनका विवरण नहीं दिया है।

रस

साधारण रूप में 'रस' का अर्थ 'आनन्द' है। किसी काव्य को पढ़कर या सुनकर अथवा किसी नाटकादि को देखकर हमारे चित्त में अलौकिक आनन्द की तरंगें उठने लगती हैं और एक अवर्णनीय भाव का संचार होता है। थोड़े समय के लिए हम मन्त्र पढ़कर मुग्ध हो जाते हैं और आनन्द में झूमने लगते हैं। चित्त के इसी अवर्णनीय भाव अथवा अलौकिक आनन्द को रस कहा गया है।

यदि हम शास्त्रीय शब्दों का सहारा लें, तो यह कह सकते हैं कि विभाव अनुभाव और संचारी भावों के संयोग से अभिव्यक्त रति आदि स्थायी भाव रस होते हैं। (विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद् रस निष्पत्तिः, भरत)

इस लक्षण में कहे गये विभाव, अनुभाव सञ्चारी भाव और स्थायीभाव 'रस' की कारण सामिग्री है। ये चारों मिलकर रस की निष्पत्ति करते हैं अलग-अलग रहकर नहीं।

विभावादि क्या है ?

संसार में हम प्रतिदिन अनेक भावों का अनुभव करते हैं। वे किसी कारण से उत्पन्न होते हैं, किसी कारण से वे उद्दीप्त होते हैं और साथ-साथ कुछ अन्य मनोभाव बीच-बीच में प्रकट हो उन भावों की तीव्र अनुमति में सहायता पहुँचाते रहते हैं। उदाहरण के लिए हमारे सामने एक मोटा थोंद वाला बौना आता है, जिसके दो दाँत आगे को निकले हुये हैं, आँखें गड्ढे में धंसी हुई हैं और एक पैर दाहिनी ओर को मुड़ा हुआ है, उसे देखकर हमारे ओठों पर मुस्कराहट आ जाती है। वह आते ही कुछ अटपटी चटपटी बातें करने लगता है। हमारे ओठ खिल जाते हैं; आँखों में कुछ-कुछ पानी आ जाता है। इस सारे व्यापार के बीच-बीच में हमें हर्ष होता है और चपलता भी आती है।

इस दशा में क्या-क्या बातें हैं और कौन-कौन से मनोभाव काम कर रहे हैं? विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि 'हास' का भाव जागरित हुआ है। उसका कारण है—मोटा, थोंद वाला बौना, जिसे देखकर 'हास' जागरित हुआ है। 'बोने की अटपटी-चटपटी बाते 'हास' का उद्दीपन कारण है। 'ओठों का खिल जाना, आँखों में पानी का आना कार्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

है, क्योंकि हास के कारण ही ये हुए हैं। इस सारे व्यापार के बीच-बीच में हर्ष चपलता आदि मनोवृत्तियाँ भी प्रकट हुई हैं अतः ये सहकारी कारण हैं।'

यह हुई संसार की बात, पर यदि इसी 'हास' का काव्य में वर्णन किया जाय अथवा नाटकादि में इसका अभिनय किया जाय, तो उन्हें वहाँ कार्य कारण और सहकारी कारण न कहकर विभाव, अनुभाव और संचारी भाव कहेंगे और स्वयं 'हास' को स्थायी भाव और इस सारे व्यापार के सुनने अथवा देखने से निष्पन्न आनन्द को हास्य-रस कहा जायगा।

यद्यपि संसार में ये कार्य कारण और सहकारी कारण हैं, पर काव्य में 'विभावादि' रस के कारण ही होते हैं।

अब हम रस के इन चारों अंगों का अलग-अलग विवेचन करेंगे।

(१) **स्थायी भाव**—जो भाव मानव हृदय में सदा ही अज्ञात दशा में रहते हैं और अनुकूल वातावरण उपस्थित होने पर सहसा जाग्रत हो जाते हैं, वे स्थायी कहे जाते हैं। उन्हें विरुद्ध अथवा अविरुद्ध भाव नहीं दबा पाते; तथा ये ही अभिव्यक्त होकर रस रूप में परिणत हो जाते हैं। ये नौ हैं तथा इनके अनुसार ही रसों की संख्या भी नौ ही है—

स्थायी भाव	रस	स्थायी भाव	रस	स्थायीभाव	रस
रति	शृंगार	हास	हास्य	शोक	करुण
क्रोध	रौद्र	उत्साह	वीर	भय	भयानक
जुगुप्सा	वीभत्स	विस्मय	अद्भुत	निर्वेद	शान्त

बहुत से विद्वान 'वात्सल्य' को भी दसवाँ स्थायीभाव और 'वत्सल' को दसवाँ रस मानते हैं।

(१) **विभाव**—स्थायी भावों को जगा देने के जो कारण हैं, उन्हें विभाव कहा जाता है। ये दो प्रकार के होते हैं—

(क) **आलम्बन विभाव**—स्थायी भाव जिसके विषय में होता है, उसे आलम्बन विभाव कहते हैं।

'बौने' के उक्त वर्णन में बौने को देखकर ही 'हास' हुआ है, अतः 'बौना' ही आलम्बन विभाव है।

उद्दीपन विभाव—आलम्बन विभाव के द्वारा जाग्रत स्थायी भाव को जो उद्दीप्त करते हैं, उन्हें उद्दीपन विभाव कहा जाता है। जैसे बौने का उक्त वर्णन में 'बौने की अटपटी-चटपटी' बातें करना उद्दीपन विभाव है, क्योंकि इन्हीं बातों से हमें पहले से अनुभव होने वाले 'हास' में तीव्रता आई थी।

(१) **अनुभाव**—आलम्बन विभाव के द्वारा जाग्रत और उद्दीपन विभाव के द्वारा उद्दीप्त होने पर स्थायीभाव में जो चेष्टाएँ होती हैं, उन्हें अनुभव कहा जाता है।

यहाँ यह समझ लेना चाहिये कि भाव के दो पक्ष होते हैं—आलम्बन और आश्रय। जिसके हृदय में 'भाव' उत्पन्न होता है उसको आश्रय और जिसको देखकर या जिसके विषय में भाव उत्पन्न होता है उसे आलम्बन कहते हैं। बौने के उक्त वर्णन से 'बौना' 'आलम्बन' और 'हम' 'आश्रय' है। 'आश्रय'की चेष्टाओं को ही 'अनुभव' कहा जाता है। 'आलम्बन' की चेष्टाएँ 'उद्दीपन विभाव' के ही अन्तर्गत होती हैं। अतः बौने के उक्त वर्णन में हमारे होठों का खिल जाना और हमारी आँखों में पानी आ जाना' अनुभव है। इसके दो भाग किये जा सकते है—सात्विक और कायिक। इनको ही क्रमशः 'अयत्नज' और यत्नज' कहा जाता है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandig

(क) सात्विक अथवा अयत्नज—ये अनुभाव अपने आप ही उत्पन्न हो जाते हैं। आश्रय को इनके लिए कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। ये आठ हैं। (१) स्तम्भ। शरीर की गति का कुछ समय के लिए रुक जाना, (२) स्वेद (पसीना) (३) रोमाञ्च, (४) स्वर भंग, (५) कम्पन, (६) वैवर्ण्य (चेहरे के रंग का फीका पड़ जाना), (७) अश्रु (८) प्रलय, (इन्द्रियों की चेतना—शून्य होना।)

(ख) कायिक अथवा यत्नत—शरीर के अंगों के व्यापार के रूप में प्रकट होने वाली चेष्टाओं को कायिक अनुभाव कहा जाता है। जैसे—क्रोध में कटुवचन कहना या शस्त्र का उठाना। इसकी संख्या निश्चित नहीं है।

(४) संचारी भाव—स्थायी भावों के साथ साथ बीच बीच में प्रकट होने वाले मनोभावों को सञ्चारी भाव कहते हैं। जैसे—बौने के उक्त वर्णन में बीच बीच में हमें होने वाले 'हर्ष' और 'चपलता'।

ये सञ्चारी इसलिए कहे जाते हैं क्योंकि ये स्थिर नहीं रहते और बीच-बीच में प्रकट होकर विलीन हो जाते हैं। इनसे स्थायी भावों की पुष्टि होती है। इनको व्यभिचारी भाव भी कहते हैं। ये ३३ हैं।

(१) निर्वेद (तत्व ज्ञान अथवा अपने अपमान से उत्पन्न दुःखात्मक भाव), (२) ग्लानि, (३) शंका, (४) असूया (अन्य की वृद्धि से उसकी निन्दा) (५) मद (नशा के सेवन से उत्पन्न), (६) श्रम, (७) आलस्य, (८) दैन्य (९) चिन्ता, (१०) मोह, (११) स्मृति, (१२) धृति, (धैर्य) (१३) व्रीड़ा (लज्जा), (१४) चपलता (१५) आवेग (अनर्थ में घबराहट), (१६) हर्ष, (१७) जड़ता, (१८) गर्व, (१९) विषाद, (२०) औत्सुक्य, (२१) निद्रा, (२२) अपस्मार (मृगी रोग), (२३) स्वप्न, (२४) विबोध (चैतन्य), (२५) अमर्ष (क्रोध), (२६) अवहित्था (भावों का छिपाना), (२७) उग्रता, (२८) मति, (२९) व्याधि (मानसिक दुःख), (३०) उन्माद, (३१) मरण, (३२) त्रास, (३३) वितर्क (सन्देशपूर्ण विचारों की उत्पत्ति)।

विशेष—यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक स्थान पर रस के इन चारों अङ्गों का वर्णन शब्दों द्वारा पूरा किया जाय। कहीं-कहीं तो इनमें से एक या दो का ही वर्णन रहता है। ऐसे स्थान पर रस के अन्य अंगों का समावेश अपनी तरफ से कर लिया जाता है। भाव यह है कि रस की प्रतीति प्रधान वस्तु है। उसके अंग शब्दों से भी कहे जा सकते हैं और आवश्यकतानुसार उनका आक्षेप भी किया जा सकता है।

रस, स्थायीभाव, विभाव आदि का उदाहरण

बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजैं।
तब ये लता लगत अति शीतल अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं।
वृथा बहत जमुना खग बोलत वृथा कमल फूलैं अलि गुंजैं।।
पवन, पानि, घनसार सजीवन दधि सुत किरन भानु भई भुंजैं।
हे ऊधौ, कहियो माधव सों विरह विरद कर मारत लुंजैं।।
'सूरदास' प्रभु को मग जोवत अंखियां भईं वरन ज्यों गुंजैं।।

स्थायीभाव—इन पंक्तियों में गोपियों के हृदय में सदा से स्थित गोपाल के प्रति 'रति' व्यक्त हो रही है, अतः 'रति' स्थायी भाव है।

आश्रय—इस 'रति' का गोपियाँ आश्रय हैं।

विभाव—गोपाल और 'कुजों' और लताओं के कारण ही 'रति इस अवसर पर व्यक्त हुई है, अतः गोपाल और 'कुंजें तथा लताएँ' विभाव है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनमें गोपाल के विषय में 'रति' स्थायी भाव हुआ है, अतः 'गोपाल' आलम्बन विभाव है और 'कुजों तथा लताओं ने 'रति' स्थायी भाव को जगाया है, अतः 'कुंजें और लताएँ' उद्दीपन विभाव है।

अनुभाव—उक्त पद में 'अंखियाँ भई वरन ज्यौं गुंजैं' के द्वारा प्रकट आश्रय गोपियों की आँखों का लाल होना और गोपियों का विलाप 'अनुभाव' है। इनमें आँखों का लाल होना 'सात्विक अथवा अयत्नज' और 'विलाप करना' 'कायिक अथवा यत्नज' अनुभाव है।

व्यभिचारी भाव—इसमें गोपाल की 'स्मृति' होने से 'स्मृति' व्यभिचारा भाव है।

रस—इस प्रकार इस पद में शृंगार रस है। वियोग का वर्णन होने से इसमें विप्रलम्भ शृंगार है।

रस के भेद लक्षण और उदाहरण

(१) शृंगार रस—इसके स्त्री-पुरुष के प्रेम का वर्णन होता है। जब स्त्री पुरुषों में वियोग नहीं होता और दोनों बातचीत आदि के द्वारा आनन्द का अनुभव करते हैं, तब सम्भोग शृंगार और जब दोनों में वियोग होता है तो विप्रलम्भ शृंगार होता है। जैसे—

सम्भोग शृंगार—बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहन हँसै, देन कहै नटि जाय।।

विप्रलम्भ शृंगार—बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजें।
तब यें लता लगति अति शीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं।
वृथा बहुत जमुना खग बोलत, वृथा कमल फूलें अलि गुंजैं।।
पवन, पानि, घनसार, संजीवनि, दधिसुत किरन भानु भई भुंजैं।
हे ऊधौ कहियो, माधव सों, विरह विरद कर मारत लुंजैं।।
'सूरदास' प्रभु को मग जोवत, अंखियाँ भई वरन ज्यौं गुंजैं।।

इस रस के स्थायी—भावादि निम्न हैं—

स्थायी भाव—रति।

आलम्बन विभाव—नायक और नायिका।

उद्दीपन विभाव—वसन्त ऋतु, चन्द्रमा, एकान्त स्थान, केलि कुंज भृकुटिभंग, कटाक्ष तथा आलम्बन की अन्य सानुकूल चेष्टाएँ आदि।

अनुभाव—सम्भोग शृंगार में आश्रय का प्रेम से देखना, मुस्कराना आदि तथा विप्रलम्भ शृंगार में विवर्णता, अश्रु प्रलय स्तम्भ आदि।

संचारी भाव—सम्भोग शृंगार में, औत्सुक्य, हर्ष, लज्जा आदि। विप्रलम्भ शृंगार में जड़ता, ग्लानि, निर्वेद आदि।

२—हास्य रस—विकृत चेष्टाओं, वचनों अथवा हँसी उत्पन्न करने वाले कार्यों का वर्णन 'हास्य रस' कहा जाता है। जैसे—

पौर के किवार देत धरै सबै गारि देत;
साधुन को दोष देत, प्रीति न चहत हैं।।
मांगने को ज्वाब देत, बात कहे रोय देत;
लेत-देत भाँज देत, ऐसे निबहत हैं।।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बागेहु के बन्द देत, वारन की गाँठी देत;
मर्दन की कांछ देत देतई रहत हैं ।।
एते पै सबैई कहैं, दाऊ कछु देत नाहीं,
दाऊ जू तो आठों जाम देतई रहत हैं ।।

किसी कवि का प्रसिद्ध रचना में भी कुछ परिवर्तन कर 'हास परिहास' विषयक जो कविताएँ बनाई जाती हैं, वे भी इसी रस के अन्तर्गत हैं । जैसे—

खद्दर कुरता भकभकौ, नेता जैसी चाल ।
यह बानक मो मन बसौ सदा बिहारीलाल ।।

इस रस के स्थायी भावादि निम्न हैं—

स्थायी भाव—हास ।

आलम्बन—विकृत आकृति या वेष-भूषा वाला या विकृत वाणी बोलने वाला व्यक्ति तथा विकृत रूप वाली वस्तु ।

उद्दीपन—आलम्बन का विचित्र वेष, बातें और चेष्टाएँ आदि ।

अनुभाव—आँखों का खिलना, ओठों का हिलना, दाँतों का दीखना, आँख में पानी आना, हाथ पैर पटकना आदि ।

सचारी भाव—चपलता, हर्ष, अवहित्था, आदि ।

(३) **करुण रस**—शोक अथवा दुःख की दशाओं के वर्णन से करुण रस होता है । जैसे—

दुलारो में नित पाली हुई, प्रेम की प्रतिमा वह प्यारी ।
खिलौना इस घर की वह हाय, कहाँ है सरला सुकुमारी ।।
अरे ! मेरी यह दीन पुकार, कहीं यदि सुनता हो कोई ।
मुझे दिखादे मेरा प्राण, जगादे फिर किस्मत सोई ।।

इस रस के स्थायी भावादि निम्न हैं—

स्थायी भाव—शोक ।

आलम्बन—मृत प्रियजन और नाश को प्राप्त ऐश्वर्य, गृह आदि ।

उद्दीपन—प्रिय के शव का दर्शन, चिता जलना, उससे सम्बन्धित वस्तुओं का दर्शन, अन्य रोते हुए बान्धवों का दर्शन, अत्याचार अन्याय आदि ।

अनुभाव—विलाप, रोदन, भाग्य की निन्दा, स्तम्भ, प्रलाप आदि ।

संचारी भाव—निर्वेद, मोह, असस्मार, व्याधि, ग्लानि, चिन्ता, स्मृति, विषाद, जड़ता आदि ।

(४) **रौद्र रस**—क्रोध की मुद्रा में रौद्र रस होता है । जैसे—

गर्भ के अर्भक काटक को पटु धार कुठारु कराल है जाको ।
सोई हौं बूझत राज सभा 'धनु' को दल्यौं' है दलि हौं बलु ताको ।
लघु आनन उत्तर देत बड़ो लरिहै मरिहै करिहैं कजु साको ।
गोरो गरूर गुमान भर्‌यो कहो कौसिक छोटो सो ढोटा है काको ।

इस रस के स्थायी भावादि निम्न हैं —

स्थायीभाव—क्रोध ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आलम्बन—अपराधी, दोषी अथवा निन्दक।

उद्दीपन—अपराधी के लिए हुए अपराध और उसकी चेष्टाएँ।

अनुभाव—आश्रम की आँखों का लाल होना, ओठों का फड़कना, दाँत चबाना, भौंहों का तन जाना अपने बल का वर्णन, शस्त्रों का उठना, गर्जन व तर्जन आदि।

संचारीभाव—अमर्ष, गर्व, आवेग, उग्रता, स्मृति, चपलता आदि।

(५) **वीर रस**—उत्साह की दशा में वीर रस होता है। यह उत्साह कभी युद्ध के लिए, कभी दान के लिए, कभी दया के लिए और कभी धर्म के लिए होता हैं। इसी के अनुसार इसके युद्धवीर, दानवीर, दयावीर और धर्मवीर राम से चार भेद होते हैं। जैसे—

युद्धवीर—रजनीचर मत्त गयंद घटा विघटै मृगराज के साज लरैं।
झपटैं भट कोटि मही पटकैं, गरजैं रघुवीर की सौंह घरैं।।
तुलसी उत हाँक दसानन देत, अचेत भे वीर, को धीर धरैं।
विरुझो रन मारुत को विरुदैंत, जो कालहु काजु सो बूझि परैं।

दानवीर- जो सम्पति शिव रावनहिं, दीन्ह दिये दशमाथ।
सो सम्पदा विभीषणहि, सकुच दीन्ह रघुनाथ।।

दयावीर—लखि याचक अति दीन को, दीन्यो वस्त्र उतार।
ऊपर ते मृदु बात कहि कैसो बन्यो उदार।।

धर्मवीर—तीय सिरोमनि सीय तजी, जेहि पावक की कलुषाई दही है।
धम धुरन्धर बन्धु तज्यौ पर लोगनि की विधि बोलि कसी है।
कीस निशाचर की करनी न सुनी न विलोकी न चित्त रही है।
राम सदा सरनागत की अनखौंहो, अनैसी सुभाय सही है।

इसके स्थायी भावादि निम्न हैं—

(१) **युद्धवीर**—

स्थायी भाव—युद्ध-विषयक उत्साह।

आलम्बन—विजेतव्य शत्रु।

उद्दीपन—शत्रु का युद्ध के लिये ललकारना, युद्ध के बाजे, विपक्षी, उत्कर्ष और प्रताप का श्रवण आदि।

अनुभाव—आश्रय के अंगों का फड़कना, अपने पराक्रम का कथन, आक्रमण, अस्त्र-शस्त्रों का प्रहार आदि।

संचारीभाव—अमर्ष, घृति, गर्व, स्मृति, हर्ष आदि।

(२) **दानवीर**—

स्थायीभाव—दान, विषयक, उत्साह।

आलम्बन—दानपात्र, याचक आदि।

उद्दीपन—तीर्थस्थान, पर्व, दिन, दान-महिमा, श्रवण आदि।

अनुभाव—दानपात्र, याचक का सम्मान, दान देना आदि।

संचारीभाव—हर्ष, स्मरण, मति, धैर्य आदि।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(३) **दयावीर—**

स्थायीभाव—दया विषयक-उत्साह ।

आलम्बन—दीन, दुखी, संकट में पड़ा हुआ ।

उद्दीपन—दुःखी का कराहना, विलाप, दुष्टों का उनके साथ दुर्व्यवहार आदि ।

अनुभाव—दुःखी के प्रति कोमल वचन बोलना और उसके दुख को दूर करने का प्रयत्न करना ।

संचारीभाव—धैर्य, चपलता, मत आदि ।

(४) **धर्मवीर—**

स्थायीभाव—धर्म-विषयक उत्साह ।

आलम्बन—धर्म-ग्रन्थों में प्रतिपादित धर्म के प्रति निष्ठा ।

उद्दीपन—धर्म ग्रन्थों का पठन या श्रवण, गुरु-उपदेश धर्म कार्य में प्राप्त प्रशंसा आदि ।

अनुभाव—धर्म का आचरण आदि ।

संचारीभाव—धैर्य, क्षमा, हर्ष, मति, आदि ।

(६) **भयानक रस**—भय की अवस्था में भयानक रस होता है । जैसे—

भरे भुवन घोर कठोर रव, रवि-बाजि तजि मारग चले ।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ।।

इसके स्थायी विभवादि निम्न हैं—

स्थायीभाव—भय ।

आलम्बन—भय उत्पन्न करने वाली वस्तु (साँप, सिंह, अग्नि का लगना, नदी की बाढ़ आदि ।)

उद्दीपन—आलम्बन की चेष्टाएं तथा अपनी असहाय अवस्था ।

अनुभाव—कम्प, स्वर-भंग, स्वेद, भागना, मूर्छा आदि ।

संचारी भाव—त्रास, शंका, ग्लानि, दैन्य, आवेग, चिन्ता, मोह, मरण, आदि ।

वीभत्स रस—घृणा की अवस्था में वीभत्स रस होता है ।

जैसे—आझरी की झोरी काँधे, आंतिन की सेल्ही बाँधे,
मूँड़ के कमण्डल खपर किएँ कौरिफ ।
जोगिनी झुटुंग झुण्ड बनी तापसी-सी,
तीर तीर बैठी सो समर सारि खोरिकें ।।
नित सो सानि-सानि गूदा खात सतुआ से,
प्रेत एक पिअत बहोरि घोरि-घोरि के ।
'तुलसी' बैताल—भूत स [ए भूतनाथ,
हेरि—हेरि हँसत है हाथ जोरि—जोरि कै ।।

इसके स्थायी भावादि निम्न हैं—

स्थायी भाव—घृणा (जुगुप्सा)

आलम्बन—घृणाजनक वस्तु, श्मशान आदि ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्दीपन—दुर्गन्ध आना, कीड़े पड़ जाना, मक्खियों का भिनभिनाना आदि ।

अनुभाव—नाक-मुँह सिकोड़ना, थूकना, छी-छी करना, रोमांच होना आदि ।

संचारीभाव—त्रास, शंका, ग्लानि, दैन्य आदि ।

(८) **अद्‌भुत रस**—आश्चर्य उत्पन्न करने वाली वस्तु के वर्णन में अद्‌भुत रस होता है । जैसे—

अखिल भुवन चर अचर सब, हरि मुख में लखि मातु ।
चकित भई गद गद वचन, विकसित दृग पुलकातु ।।

इसके स्थायी भावादि निम्न हैं—

स्थायी भाव—विस्मय ।

आलम्बन—विस्मयजनक वस्तु ।

उद्दीपन—उस वस्तु की विचित्रता तथा विशेषता ।

अनुभाव—रोमांच, स्तम्भ, स्वेद, दाँतों तले अँगुली दबाना, मुँह खुला रहना आदि ।

संचारी भाव—हर्ष, वितर्क, त्रास, मोह, आदि ।

(९) **शान्त रस**—चित्त की शान्ति की दशा में शान्त रस होता है । जैसे—

सुत, दार, अगारु, सखा, परिवारु विलोक महा कुसमजाहिं रे ।
सबकी ममता तजि के समता सजि, संत समाज विराजहि रे ।
नर देह कहा, करि देखु विचारु, विगारु गवार न काजहिं रे ।
जन डोलहिं लोलुप कूकरु ज्यों, तुलसी भजि कौसलराजहिं रे ।।

इसके स्थायी भावादि निम्न हैं—

स्थायीभाव—निर्वेद, शम ।

आलम्बन—सृष्टि की निस्सारता ।

उद्दीपन—वेदान्त श्रवण, धर्मोपदेश श्रवण, पवित्र वस्तु के दर्शन आदि ।

अनुभाव—रोमांच विषयों में अरुचि, सम-दर्शन-शीलता, गृह-त्याग आदि ।

संचारीभाव—हर्ष, धैर्य, स्मृति, निर्वेद, विबोध आदि ।

(१०) बहुत से विद्वान पुत्र, शिष्य आदि के प्रति स्नेह को प्रकट करने की दशा में वत्सल रस को मानते हैं । संयोग तथा वियोग भेद से यह भी दो प्रकार का होता है । जैसे—

संयोग वत्सल—जसोदा हरि पालने झुलावै ।
हलरावै दुलरावै मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै ।।
मेरे लाल को आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै ।
तू काहे न बेगि सों आवै तोको कान्ह बुलावै ।।

× × × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वियोग वत्सल—माई री ! मोहि कोऊ न समुझाव ।
राम गवन साँचो किधौं सपनों मन परतीत न आवै ।
लगेइ रहत मेरे नैननि आगे, राम, लषन अरु सीता ।
तदपि न मिटत दाह या उर को, विधि जो भयो विपरीता ।
दुख न रहे रघुपतिहिं विलोकत, तनु न रहे बिनु देखे ।
करत न प्रान पयान सुनहु सखि ! अरुझि परी यहि लेखे ।

इसके विभावादि निम्न हैं—

स्थायीभाव—वात्सल्य ।

आलम्बन—शिष्य, बालक, शिशु आदि ।

उद्दीपन—आलम्बन की चेष्टाएँ (तोतली बोली, खेलना आदि) और उसके गुण (विद्या, शूरता आदि ।)

अनुभाव—संयोग में—हँसना, पुलकित होना, चूमना, पालने में झुलाना आदि ।

वियोग में—अश्रु, प्रलय, स्तम्भ आदि ।

संचारीभाव—संयोग में हर्ष, औत्सुक्य आदि ।

वियोग में—चिन्ता, शङ्का, जड़ता, मोह आदि ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रस चक्र

सं०	रस का नाम	स्थायी भाव	आश्रय	आलम्बन	उद्दीपन	अनुभाव	संचारी भाव
१	श्रृंगार (संभोग)	(रति, प्रेम)	प्रेमी (नायक या नायिका)	प्रिय (नायिका या नायक)	बसंत ऋतु, चंद्रमा प्रिय की चेष्टाएँ एकान्त गान प्रिय की चेष्टाओं आदि का स्मरण।	आश्रय का प्रेम से देखना, मुसकराना आदि विवर्धता, अश्रु प्रलय आदि।	औत्सुक्य, लज्जा, हर्ष आदि सभी जड़ता, ग्लानि निर्वेद आदि।
	श्रृगार (विप्रलम्भ)	,,	,,	,,			
२	हास्य	हास (सी)	जिसके हृदय में हास का भाव जागृत हो।	जिसे देख-सुन कर हँसी आये।	आलम्बन का विचित्र वेश बातें चेष्टाएँ, आदि।	आंखों का खिलना, ओठों का हिलना, दांतों का दीखना, आंखो में पानी भर आना आदि।	हर्ष चपलता अवहित्थ।
३	करुण	शोक	जिसके हृदय में शोक का भाव जागृत हो।	मृत प्रियजन और नाश को प्राप्त ऐश्वर्य गृह आदि।	प्रिय के शव दर्शन, चिता जलना प्रिय से सम्बन्धित वस्तुओं का दर्शन आदि।	रुदन, विलाप प्रलाप आदि	निर्वेद, मोह, अपस्मार आदि।
४	रौद्र	क्रोध	जिसके हृदय में क्रोध जागृत हो	अपराधी दोषी या निन्दक	अपराधी के किये हुए अपराध और उसकी चेष्टाएँ	आश्रय का भृकुटी चढ़ाना, नेत्र लाल होना नथुने फूलना होठ फड़कना आदि।	अमर्ष, गर्व, आवेग आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सं०	रस का नाम	स्थायी भाव	आश्रय	आलम्बन	उद्दीपन	अनुभाव	संचारी भाव
५	(अ) युद्ध वीर	युद्ध विषयक उत्साह	वीर पुरुष	शत्रु, शत्रु सेना	शत्रु का ललकारना युद्ध के बाजे, शत्रु के उत्सर्ष प्रताप का वर्णन।	संयोग में हँसना पुलकित होना, पालने में झूलना, वियोग में अश्रु प्रलय स्तम्भ	अमर्ष, धृति, गर्व, स्मृति, हर्ष आदि।
	(ब) दान वीर	दान विषयक उत्साह	दानी पुरुष	दानपात्र, याचक आदि।	दानी की प्रशंसा तीर्थ स्थान पर्व दिन आदि।	दान पात्र याचक का सम्मान दान देना आदि।	हर्ष, स्मरण मति, धैर्य आदि।
	(स) दया वीर	दया विषयक उत्साह	दयालु पुरुष	दुःखी दीन आदि	दुःखी का कराहना, विलाप आदि।	दुःखी के प्रति कोमल वचन बोलना और उसके दुःख दूर करने का प्रयत्न।	धैर्य, चपलता मति आदि।
	(द) धर्म वीर	धर्म विषयक उत्साह	धर्मी पुरुष	धर्म के प्रति निष्ठा।	धर्म ग्रन्थों का पठन आदि।	धर्म का आचरण आदि।	धैर्य क्षमा, हर्ष, मति आदि।
६	भयानक	भय	भयभीत पुरुष	जिसको देखकर भय हो, साँप, सिंह आदि।	आलम्बन की चेष्टाएँ तथा अपनी असहाय अवस्था	स्वरभंग, स्वेद रोमांच, कंप मूर्च्छा, भागना आदि।	त्रास, ग्लानि, शंका, अपस्मार उन्माद आदि।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

७	बीभत्स	घृणा	जिसके मन में घृणा हो।	घृणाजनक वस्तु श्मशान आदि।	दुर्गन्ध आना, कीड़ों का पड़ जाना आदि।	नाक मुंह सिकोड़ना, छी-छी करना आदि।	त्रास, शंका, ग्लानि, दैन्य आदि।
८	अद्भुत	विस्मय	विस्मित पुरुष	विस्मयजनक वस्तु।	आलम्बन विचित्रता तथा विशेषता।	स्तंभ, स्वेद, रोमांच आदि।	हर्ष, वितर्क, त्रास, मोह आदि
९	शान्त	निर्वेद (वैराग्य) शम	जिसके मन में निर्वेद हो।	सृष्टि, निस्सारता	वेदान्त तथा धर्मोपदेश का श्रवण, पवित्र वस्तु के दर्शन	रोमांच, विषय की अरुचि आदि	निर्वेद (विरक्ति) हर्ष, धैर्य, स्मृति, मति, विबोध।
१०	वत्सल	वात्सल्य	माता, पिता, गुरु आदि।	शिष्य, बाल शिशु आदि।	आलम्बन की चेष्टाएँ तथा गुण।	संयोग में हंसना पुलकित होना पालने में झुलाना आदि। वियोग में अश्रु प्रलय, स्तम्भ आदि।	संयोग में हर्ष औत्सुक्य आदि वियोग में चिन्ता शंका मोह आदि।

विशेष—इनके उदाहरण तथा पूर्ण विवरण पुस्तक में अलग देखिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अलंकार

परिभाषा तथा उपयोगिता—जो भाषा की शोभा बढ़ाये, उसे अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार का अर्थ है, आभूषण (गहना)। जिस प्रकार आभूषणों से शरीर की शोभा बढ़ जाती है, उसी प्रकार अलङ्कारों से भाषा में लालित्य आ जाता है। साधारण वाक्यों के अलङ्कार युक्त वाक्यों में अधिक चमत्कार होता है। तलवार मनुष्य को मार रही है, यह एक साधारण वाक्य है और 'तलवार रुधिर से अपनी प्यास बुझाने के लिये नागिन की भांति लपक रही है' एक अलंकारिक वाक्य है। भाव दोनों का एक ही है, किन्तु पहले की अपेक्षा दूसरे में अधिक सुन्दरता है। यह चमत्कार अथवा शोभा कभी शब्दों में होती है और कभी अर्थों में इसलिए अलंकारों के दो प्रधान भेद हैं:—

१—शब्दालङ्कार २—अर्थालङ्कार।

शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार का अन्तर

यदि शब्दों द्वारा भाषा में सुन्दरता आती है तो शब्दालंकार, और यदि अर्थ के द्वारा भाषा में सुन्दरता आती है तो अर्थालंकार होता है। शब्दालंकार और अर्थालंकारों में यही प्रधान भेद है। शब्दालंकार में यदि चमत्कार युक्त शब्द के स्थान पर उसी के अर्थ वाला कोई दूसरा शब्द रख दिया जाय तो उसकी सुन्दरता नष्ट हो जाती है, और इसके विपरीत अर्थालंकार में चमत्कार युक्त शब्द के स्थान पर उसी के अर्थ का दूसरा शब्द रखने से चमत्कार में कोई अन्तर नहीं आता। जैसे 'सूर सूर तुलसी ससी' में दूसरे 'सूर' के स्थान पर उसी के अर्थ वाला 'रवि' रख देने से सौन्दर्य नष्ट हो जाता है, अतः यहाँ शब्दालंकार है, किन्तु 'उसका मुख चन्द्रमा के समान है' में चन्द्रमा के स्थान पर विधु अथवा चन्द्र रख देने से शोभा में कोई भी अन्तर नहीं आता, अतः यहाँ अर्थालंकार है। सार यह है कि शब्दालंकारों में केवल शब्दों की सुन्दरता और अर्थालंकारों में अर्थों की सुन्दरता होती है। इस प्रकार शब्दालंकार यदि ऊपरी तड़क-भड़क है, तो अर्थालंकार अतः सौन्दर्य है। एक यदि आँखों या कानों को तृप्त करता है तो दूसरा हृदय को।

शब्दालङ्कार

इसके कई भेद हैं पर मुख्य निम्न हैं :—

(१) अनुप्रास, (२) यमक, (३) श्लेष,

(१) अनुप्रास—जहाँ व्यंजना की समानता हो चाहे स्वर मिलें या न मिले, वहाँ अनुप्रास होता है। (एक ही व्यंजन कई बार आये, चाहे मात्रा उस पर किसी की भी हो) जैसे—

'सान्त, सरल सुखदायक बैना' में 'स' कई बार आया है (यहाँ मात्राएँ अलग अलग हैं।)

'चारु चामर चारों ओर दिखाई दे रहे हैं' में 'च' कई बार आया है (यहाँ मात्राएँ एक सी ही हैं।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'राम रमा पति कर धनु लेऊ' में 'र' और 'म' की आवृत्ति है (यहाँ मात्राओं में अन्तर है। पहले उदाहरणों में केवल एक ही व्यंजन की आवृत्ति है और इसमें दो व्यंजनों की।

अनुप्रास का अर्थ है—रस के अनुकूल वर्णों का प्रकृष्ट विन्यास ; अर्थात् योजना। (रसाद्यनुगतः प्रकृष्टों न्यासः अनुप्रास,) यदि वर्ण योजना रस के प्रतिकूल होगी, तो वहाँ अलङ्कार नहीं, प्रत्युत दोष होगा। अतएव श्रृंगार रस में कर्णकटु टकारादि वर्णों की आवृत्ति होने पर दोष ही होता है।

वह ५ प्रकार का होता है—(१) छेकानुप्रास, (२) वृत्यनुप्रास, (३) श्रुत्यनुप्रास, (४) अन्त्यानुप्रास, (५) लाटानुप्रास।

(१) छेकानुप्रास—जहाँ अनेक व्यंजनों की एक बार, स्वरूप और क्रम से आवृत्ति हो ; वहाँ छेकानुप्रास होता है जैसे—'राम रमा पति कर धनु लेऊ' में 'राम' और 'रमा' में रकार और मकार की स्वर भिन्न होते हुये भी क्रमपूर्वक आवृत्ति हुई है, अतः यहाँ छेकानुप्रास है।

ऊपर के उदाहरणों में वर्णों की आवृति स्वरूप और क्रम से हुई है। यदि दोनों प्रकार से आवृति न होगी, तो छेकानुप्रास न होगा। अतएव 'चोर रचते विचित्र माया' में 'चकार' तथा 'रकार' की स्वरूप से आवृति होने पर भी क्रम से आवृति नहीं है, क्योंकि 'चोर' में पहले 'च' है और 'रचते' में पहले 'र' है अतः वहाँ छेकानुप्रास नहीं है।

(२) वृत्यनुप्रास—यदि अनेक वर्णों की स्वरूप मात्रा से (क्रम से नहीं) एक बार या अनेक बार आवृति हो।

अथवा

अनेक वर्णों की स्वरूप और क्रम में कई बार (एक बार नहीं) आवृति हो।

अथवा

केवल एक वण की एक बार या अनेक बार आवृति हो, तो वृत्युनुप्रास होता है। जैसे—(१) 'चोर रचते विचित्र माया' में च और 'र' की स्वरूप मात्रा से एक बार आवृति है। (ब) 'चकित चकत्ता चौंकि उठै बार बार' में 'च' और 'क' के स्वरूप तथा क्रम से कई बार आवृत्ति हुई है। (३) 'सान्त सरल सुखदायक बैना' में केवल 'स' की कई बार आवृति हुई है। अतः उक्त उदाहरणों में वृत्युनुप्रास' है।

(३) श्रुत्युनुप्रास—यदि एक ही उच्चारण स्थान से बोले जाने वाले वर्णों की आवृति होती है, तो 'श्रुत्यनुप्रास होता है। जैसे—'सुनत स्याम जसुमति बचन बदन कीन विस्तार' के सुनत में 'स', 'न', 'त' और 'स' दन्त स्थान से बोले जाते हैं। अतः यहाँ श्रुत्यनुप्रास है।

(४) अन्त्यानुप्रास—यदि आदि के स्वर के साथ किसी व्यंजन की आवृति हो, तो अन्त्यानुप्रास होता है। जैसे—'लोचन जल रह लोचन कोना, जैसे—परम कृपन करि सोना' के 'कोना' और 'सोना' में 'ओना' की आवृति होने से अन्त्यनुप्रास है इसे 'तुक' भी कहते हैं।

(५) लाटानुप्रास—जहाँ समानार्थक शब्दों की आवृति हो परन्तु तात्पर्य में भेद हो वहाँ लाटानुप्रास होता है। (पदों का अनुप्रास होने से इसे पदानुप्रास भी कहा जाता है।) जैसे—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पराधीन जो जन, नहीं स्वर्ग नरकता हेत ।
पराधीन जो जन नहीं, स्वर्ग नरकता हेत ।।

जहाँ पूर्वार्ध और उत्तरार्ध में एक ही अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग हुआ है, किन्तु पूर्वार्ध और उत्तरार्ध के तात्पर्य में अन्तर है । पूर्वार्ध का अर्थ है कि जो मनुष्य पराधीन है उसके लिये स्वर्ग नहीं, उसके लिये नरक है, और उत्तरार्ध का अर्थ है कि जो मनुष्य पराधीन नहीं, उसके लिए नरक भी स्वर्ग है । अतः यहाँ लाटानुप्रास है ।

छेक, वृत्ति और लाटानुप्रास का अन्तर

छेक और वृत्ति अनुप्रास में वर्णों की आवृति होती है, परन्तु लाटानुप्रास में शब्दों की । स्वरूप और क्रम के अनुसार छेकानुप्रास में एक बार आवृति होती है और वृत्यनुप्रास में कई बार । छेकानुप्रास में स्वरूप और क्रम से आवृति का होना आवश्यक है, पर वृत्यनुप्रास में क्रम का होना आवश्यक नहीं है । छेकानुप्रास वर्णों के समूह की आवृति ही में होता है, पर वृत्यनुप्रास एक वर्ण की आवृति में भी हो जाता है ।

२—**यमक**—जहाँ एक शब्द कई बार आये, किन्तु उसका अर्थ अलग हो, वहाँ यमक अलङ्कार होता है । इसमें शब्द से तात्पर्य केवल व्यंजनों के समूह से है, सार्थक व्यंजन समूह से नहीं, अतः उनमें से कोई भी निरर्थक हो सकता है । कभी कभी तो सब के सब ही निरर्थक हो जाते हैं । जैसे—

क—'सूर सूर तुलसी ससी' में सूर दो बार आया है और इसमें पहले का अर्थ सूरदास तथा दूसरे का सूर्य है, अतः यहाँ 'यमक' है । (यहाँ दोनों 'सूर' सार्थक हैं ।)

ख—'लोक में फैला सूर्यालोक' में लोक की आवृति है । यहाँ पहला लोक (संसार) सार्थक तथा दूसरा 'लोक' निरर्थक है क्योंकि 'सूर्यालोक' (सूर्य+आलोक) में केवल लोक कोई अर्थ नहीं रखता, अतः यहाँ यमक है ।

ग—'विमलता मलताप हटा रही' में 'मलता' की आवृति है । यहाँ 'मलता' दोनों ही जगह निरर्थक है, (क्योंकि यह दोनों स्थानों पर पूर्ण शब्द न होकर शब्दांश है ।) अतः यहाँ यमक है ।

लाटानुप्रास और यमक का अन्तर—लाटानुप्रास में दुहराये हुये शब्दों के अर्थों में कोई अन्तर नहीं होता, परन्तु यमक में या तो वे निरर्थक होते हैं या भिन्नार्थक ।

३—**श्लेष**—जहाँ एक ही शब्द की आवृति हुए बिना ही कई अर्थ निकलें, वहाँ श्लेष अलकार होता है ।

(यमक में शब्दों की आवृति होती है, पर श्लेष में बिना आवृति के ही कई अर्थ निकलते हैं ।) जैसे—

सुबरन को खोजत फिरत कवि व्यभिचारी चोर ।

यहाँ 'सुबरन' के सुन्दर अक्षर, सुन्दर रंग और सोना तीन अर्थ होने से श्लेषालंकार है ।

विशेष—श्लेष में व और ब, श, ष और स तथा र और ल में कोई भेद नहीं माना जाता है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्थालंकार

इसके बहुत से भेद हैं जिनमें से मुख्य नीचे लिखे जाते हैं :—

(१) **उपमा**—जहाँ दो वस्तुओं में समानता का वर्णन किया जाता है, वहाँ उपमा अलंकार होता है। जैसे—उसका मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर है। यहां मुख की चन्द्रमा से समता बतलाई गई है, अतः उपमा अलंकार है। इसी प्रकार 'पीपर पात सरिस मन डोला', में 'मन' तथा 'पीपर पात' में समानता बतलाने से उपमा अलंकार है।

उपमा के चार अंग होते हैं—

१—उपमेय, २—उपमान, ३—साधारण धर्म, ४—वाचक शब्द।

(१) **उपमेय**—वह वर्णनीय वस्तु, जिसकी उपमा (समानता), दी जाती है, उपमेय कही जाती है। जैसे—ऊपर के प्रथम उदाहरण में 'मुख' की उपमा 'चन्द्रमा' से दी गई है अतः 'मुख' उपमेय है। इसे ही 'प्रकृत' या 'प्रस्तुत' कहा जाता है।

(२) **उपमान**—जिससे उपमेय की उपमा दी जाती है, उसे उपमान कहते हैं। जैसे—ऊपर के प्रथम उदाहरण में उपमेय 'मुख' की उपमा चन्द्रमा से दी गई है, अतः 'चन्द्रमा' उपमान है! इसे ही 'अप्रकृत' या 'अप्रस्तुत' कहा जाता है।

(३) **साधारण धर्म**—जिस गुण के लिए उपमा दी जाती है, उसे साधारण धर्म कहते हैं। जैसे—ऊपर के उदाहरणों में सुन्दरता के लिए ही उपमा दी गई है। अतः सुन्दर साधारण धर्म है। इसे 'समान धर्म' भी कहा जाता है।

(४) **वाचक शब्द**—जिस शब्द के द्वारा उपमा दी जाती है, उसे वाचक शब्द कहते हैं जैसे—ऊपर के प्रथम उदाहरण में 'समान' (समान, सम, सरिस, इव, तुल्य आदि शब्द 'उपमा वाचक' होते हैं)।

जहाँ ऊपर के कहे हुए उपमा के चारों अग शब्दों द्वारा कहे जाते हैं, वहाँ पूर्णोपमा और जहाँ इनमें से एक या एक से अधिक का लोप होता है, वहाँ लुप्तोपमा होती है। जैसे—ऊपर के उसका मुख चन्द्रमा के समान है' उदाहरण में पूर्णोपमा तथा 'उसका मुख चन्द्रमा के समान है' में लुप्तोपमा है। (क्योंकि यहां साधारण धर्म सुन्दर को नहीं कहा गया है।)

(२) **रूपक**—जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप किया जाय, (अर्थात् जहाँ उपमेय और उपमान को एक रूप ही दिया जाय) वहाँ रूपक अलंकार होता है। जसे—'बदहु गुरुपद कंज' यहाँ 'गुरुपद कंज, में 'गुरुपद' (उपमेय) में 'कंज' (उपमान) का आरोप है, अतः रूपक अलंकार है।

विशेष—(१) रूपक में उपमा के साधारण धर्म और वाचक शब्दों का लोप होता है।

(२) साधारण तौर से अर्थ करने पर 'रूपी' शब्द का प्रयोग करना पड़ता है। जैसे—उक्त उदाहरण में 'गुरुपद कंज' का अर्थ होगा—'गुरुपद रूपी कंज'।

(३) उपमा में उपमेय तथा उपमान में भेद रहता है और रूपक में इन दोनों में अभेद होता है।

यह तीन प्रकार का होता है—(१) साँग, (२) निरंग, (३) पारम्परित।

(३) **साँग**—जहाँ प्रधान उपमेय और उसके अन्य अङ्गों में भी आरोप किया गया हो, वहां सांग रूपक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यहां अंग से तात्पर्य हस्त आदि के समान अङ्गों से ही नहीं, अपितु एक दूसरे से सम्बन्ध रखने वाले पदार्थों से भी है। निम्न उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

उदाहरण—उदित उदय गिरि मंच पर, रघुवर बाल पतंग।
विकसे सन्त सरोज सब, हरषे लोचन भृंग।

यहाँ मंच में उदय गिरि, रघुवर में बाल-पतंग, सन्तों में सरोज और लोचनों में भृगों का आरोप किया गया है। धनुष-यज्ञ का वर्णन प्रस्तुत है उसमें मंच, रघुवर सन्तों और लोचनों का वर्णन आवश्यक है। ये एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं, और इनमें ही आरोप किया गया है। ये आरोप भी एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं, अतः यहाँ साँग रूपक है।

(२) **निरंग**—जहाँ केवल उपमेय में अन्य अङ्गों के बिना केवल उपमान का ही आरोप हो वहाँ निरंग रूपक होता है। पूर्वोक्त 'बंदहुँ गुरुपद कंज' में यही निरंग रूपक है क्योंकि यहाँ गुरु-पद में ही कंज का आरोप है। 'पद' (उपमेय) के अंग में 'कज' (उपमान) के अंगों का आरोप नहीं।

(३) **पारस्परित**—जहाँ एक आरोप दूसरे आरोप का कारण हो, वहाँ पारम्परित रूपक होता है। जैसे—'दुख है जीवन तरु के फूलों' में—दुखों में फूलों का आरोप किया गया है, उसके लिए ही 'जीवन में 'तरु का आरोप करना पड़ा, अतः 'जीवन' में 'तरु' का आरोप 'दुखों' में 'फूलों' के आरोप का कारण है। अतः यहां पारम्परित रूपक है।

४—**अनन्वय**—यदि उपमा में एक ही वस्तु उपमेय भी हो और उपमान भी, तो अनन्वय अलंकार होता है।

एक ही वस्तु को उपमेय और उपमान इस अभिप्राय से कहा जाता है कि दूसरी ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो उसकी समानता कर सके। जैसे 'उपमा विहीन रचा विधि ने बस भारत के सम भारत है।' में 'भारत' ही उपमेय है और उपमान भी। अतः यहाँ अनन्वय अलंकार है।

(५) **व्यतिरेक**—जहाँ उपमान से उपमेय में श्रेष्ठता दिखलाई जाय, वहाँ व्यतिरेक अलंकार होता है। जैसे—

सिय मुख सरद कमल किमि कहि जाय।
निसि मलीन वह, निस-दिन यह विगसाय॥

यहाँ उपमेय (सिय मुख) को उपमान 'सरद कमल' से श्रेष्ठ बतलाया गया है, क्योंकि 'सिय मुख' रात दिन विकसित रहता है और 'सरद कमल' रात में मुर्झा जाता है, अतः यहाँ व्यतिरेक अलंकार है।

६—**स्मरण**—जहाँ सदृश वस्तु को देखकर पहले अनुभव की हुई वस्तु के स्मरण होने का वर्णन हो, वहाँ स्मरण अलंकार होता है। जैसे—'मकरालय मरजाद लखि सुधि आवत श्रीराम।' समुद्र की मर्यादा को देखकर तद्रूप ही मर्यादा को धारण करने वाले श्रीराम का स्मरण होने का वर्णन है, अतः यहाँ स्मरण अलंकार है।

विशेष—यह अलंकार सदृश वस्तु को देखकर ही उत्पन्न हुए स्मरण के स्थल में ही होता है अन्य स्थानों पर नहीं। अतः किसी भूली बात के स्मरण आने के प्रसंग में यह अलंकार नहीं होगा, क्यों ऐसे स्थलों में कोई चमत्कार नहीं होता जो अलंकार का प्रधान मूल है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

७—उल्लेख—इसके दो भेद हैं—

(क) प्रथम उल्लेख—यदि एक ही वस्तु को अनेक पुरुष अनेक प्रकार से देखें, तो 'प्रथम उल्लेख' नामक अलंकार होता है।

जैसे—जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखा तिन तैसी।
देखहिं भूप महारन धीरा। मनहुं वीररस धरे शरीरा॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी॥

यहां अकेले रामचन्द्रजी को अनेक पुरुषों ने अनेक प्रकार से देखा है, अतः 'प्रथम उल्लेख' अलंकार है।

(ख) द्वितीय उल्लेख—यदि एक पुरुष एक ही वस्तु को अनेक प्रकार से देखे तो 'द्वितीय उल्लेख' नामक अलंकार होता है।

जैसे—तू रूप है किरन में, सौन्दर्य है सुमन में।
तू प्राण है पवन में, विस्तार है गगन में॥

यहाँ कवि ने ईश्वर को अनेक रूपों में देखा है, अतः 'द्वितीय उल्लेख' अलंकार है।

प्रथम उल्लेख में ग्रहण करने वाले अनेक व्यक्ति होते हैं, पर दूसरे में एक ही व्यक्ति होता है। यही इनमें भेद है।

(८) अपह्नुति—जहाँ उपमेय में निषेधपूर्वक उपमान के अभेद का आरोप किया जाय, (अर्थात् जहाँ उपमेय को स्वीकार न करके अन्य उपमान को स्वीकार कर लिया जाय) वहां अपह्नुति अलंकार होता है। जैसे—मुख को देखकर यह कहना कि 'यह मुख नहीं चन्द्रमा है।' यहाँ उपमेय 'मुख' का निषेध कर उसमें उपमान 'चन्द्रमा' का आरोप किया है, अतः यहाँ 'अपन्हुति' है। इसके ५ भेद हैं।

(१) शुद्धापन्हुति, (२) हेत्वपन्हुति, (३) पर्यस्तापन्हुति (४) छेकापन्हुति (५) कैतवापह्नुति।

१—शुद्धापन्हुति—ऊपर लिखे हुए अपह्नुति के लक्षण और उदाहरण शुद्धापन्हुति के ही हैं।

(२) हेत्वपह्नुति—जब शुद्धापह्नुति में हेतु को भी कह दिया जाय, तब हेत्वपन्हुति होती है। जैसे—यह मुख नहीं चन्द्रमा है, क्योंकि नयन चकोर इसकी ओर खिंचे चले आ रहे हैं। यहाँ शुद्धापन्हुति कहने के बाद 'क्योंकि नयन चकोर '......' के द्वारा हेतु को भी कह दिया है, अतः यहाँ हेत्वपन्हुति है।

(३) पर्यस्तापन्हुति—जहाँ किसी वस्तु के धर्म का उसमें होने का निषेध कर अन्य किसी वस्तु में उसी धर्म को बताया जाय, वहाँ पर्यस्तापन्हुति होती है। जैसे—'यह चन्द्रमा नहीं, चन्द्रमा तो मुख है।' में वास्तविक चन्द्रमा में चन्द्रत्व धर्म का निषेध कर अन्य वस्तु 'मुख' में उसको बताया गया है, अतः यहाँ पर्यस्तापन्हुति है।

(४) छेकापन्हुति—जहाँ किसी छिपाने योग्य बात को किसी प्रकार प्रकट हो जाने पर अन्य बात कहकर छिपाया जाय, वहाँ छेकापह्नुति होती है।

जैसे—'वह आवे तब शादी होय, उस बिन दूजा और न कोय।
मीठे लागें वाके बोल, 'ए सखि! साजन', 'नासखि! ढोल'॥

यहाँ एक स्त्री द्वारा अपनी सखी से 'पति' के वर्णन किये जाने पर, किसी दूसरी सखी ने उसका अभिप्राय समझकर कहा कि, "क्या तुम 'साजन' का वर्णन कर रही हो?"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहस्य को प्रकट हुआ देखकर वह स्त्री झट उत्तर देती है—नहीं सखी ! मैं तो ढोल की बातें करती हूँ। ढोल के बारे में भी ये सभी बातें सत्य हैं। कहकर मुकर जाने से इसका नाम 'मुकरी' भी है। अमीर खुसरो की मुकरियाँ अति प्रसिद्ध हैं।

वास्तव में यहाँ न कोई बात छिपाने योग्य होती है और न छिपाने के लिए प्रयत्न ही किया जाता है अपितु इस प्रकार कथन में चमत्कार लाया जाता है।

(५) कैतवापह्नुति—यदि कैतव, मिस, कपट, व्याज, बहाना आदि 'छल' के वाचक शब्द के द्वारा निषेध किया जाय, तो कैतवापह्नुति होती है। जैसे—'मुख के बहाने से चन्द्रमा चमक रहा है'। यहाँ 'मुख' का निषेध छल के वाचक 'बहाना' शब्द से किया गया है, यहाँ 'कैतवापन्हुति' है। इसी प्रकार 'लखी नरेश बात यह साँची, तियमिस मीचु सीस पर नाची, में 'तिय' का निषेध 'मिस' के द्वारा होने से कैतवापह्नुति है।

(६) सन्देह—यदि किसी वस्तु के विषय में संशय हो और वह संशय कवि कल्पित तथा चमत्कार पूर्ण हो तो सन्देह अलंकार होता है। जैसे—'यह मुख है अथवा चन्द्र है' में मुख के विषय में सन्देह है, अतः सन्देह अलंकार है। इसी प्रकार—

"किधौं" रौद्ररस ? रुद्र कै? किधौं ओज अवतार ?
साहू-सुवन सिवराज तैं, किधौं प्रलय साकार !"

में शिवाजी के विषय में सन्देह है कि यहाँ रौद्र रस है अथवा रुद्र है अथवा तेज के अवतार हैं अथवा साकार प्रलय हैं, अतः सन्देह अलंकार है।

चमत्कार के अभाव में अलंकार नहीं होता। अतएव 'यह रस्सी है अथवा सांप है' में अलंकार नहीं है।

किधौं, कै, या अथवा आदि शब्द इसके वाचक होते हैं।

(७) भ्रम अथवा भ्रान्तिमान—यदि समानता के कारण किसी वस्तु में दूसरी वस्तु का भ्रम हो और वह भ्रम कवि-कल्पित तथा चमत्कार पूर्ण हो तो भ्रम अलंकार होता है। जैसे—'मुख' को चन्द्रमा समझ कर चकोर चले आ रहे हैं, में मुख और चन्द्रमा में समानता होने के कारण चकोरों ने मुख को चन्द्रमा समझ लिया है, अतः यहाँ 'भ्रम' अलंकार है। इसी प्रकार—

'बादल से काले काले, केशों को देख निराले।
नाचा करते हैं हरदम, पालतू मोर मतवाले ।।

यहाँ मोरों ने केशों को बादल समझ लिया है, अतः भ्रम अलंकार है। चमत्कार के अभाव में अलंकार नहीं होता। अतएव धूप में पड़ी सीपी को चाँदी समझ कर ग्रहण करने के वर्णन में अलंकार नहीं होगा

सन्देह और भ्रम का अन्तर

'सन्देह' में कोई निश्चय नहीं हो पाता; और उसमें अनेक पक्ष होते हैं; परन्तु 'भ्रम' में एक निश्चय हो जाता है। (यद्यपि वह निश्चय असत्य ही होता है) और इसमें एक ही पक्ष होता है। 'यह मुख है अथवा चन्द्र है' में कोई निश्चय नहीं है और दो पक्ष हैं; अतः 'सन्देह' है और 'मुख को चन्द्र समझ कर चकोर चले आ रहे हैं, में चकोरों को मुख का ज्ञान नहीं है। वे उसे निश्चित रूप से चन्द्रमा समझते हैं तथा इनमें 'चन्द्रमा' का एक ही पक्ष है, अतः वहाँ भ्रम है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(८) उत्प्रेक्षा—यदि उपमान में उपमेय की सम्भावना अथवा कल्पना की जाय, तो उत्प्रेक्षा अलंकार होता है (यह अलंकार मानो, मनु, जनु, जानो, इव आदि वाचक शब्दों से प्रकट किया जाता है। कभी-कभी ये नहीं भी रहते) जैसे—'उसका मुख मानो चन्द्रमा है' यहाँ उपमान 'चन्द्र' में उपमेय 'मुख' की कल्पना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा है।

इसके मुख्य तीन भेद होते हैं—(१) वस्तूत्प्रेक्षा, (२) हेतूत्प्रेक्षा, (३) फलोत्प्रेक्षा।

(१) **वस्तूत्प्रेक्षा**—जहाँ एक वस्तु में दूसरी वस्तु की सम्भावना की जाय, वहां वस्तूत्प्रेक्षा होती है। जैसे—उसका मुख मानो चन्द्रमा है। यहाँ 'चन्द्रमा' में मुख' की सम्भावना की गई है। चन्द्रमा और मुख दोनों ही वस्तुयें हैं, अतः यहाँ वस्तूत्प्रेक्षा है।

(२) **हेतूत्प्रेक्षा**—यदि अयथार्थ कारण को कारण मान लिया जाय, तो हेतूत्प्रेक्षा होती है। जैसे—सुन्दरता में चन्द्रमा को हरा देने के कारण मुख हँस रहा है।

यहाँ मुख का हँसना स्वाभाविक है, उसका कारण 'चन्द्रमा को हराना' नहीं है, पर उसे कारण मान लिया गया है। अतः अयथार्थ कारण को कारण मान लेने के कारण वहाँ हेतूत्प्रेक्षा है।

(३) **फलोत्प्रेक्षा**—यदि यथार्थ में जो फल न हो, उसे फल मान लिया जाय, तो फलोत्प्रेक्षा होता है। जैसे—'नायिका के चरणों की समानता प्राप्त करने के लिए कमल जल में तप कर रहा है' यहाँ कमल का जल में रहना स्वाभाविक है। वह चरणों की समानता प्राप्त करता' रूपी फल के लिए तप नहीं कर रहा, अतः चरणों को समानता प्राप्त करना यथार्थ 'फल' नहीं है पर उसे फल मान लिया गया है अतः यह फलोत्प्रेक्षा है।

उत्प्रेक्षा के अन्य उदाहरण—

वस्तूत्प्रेक्षा—डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी, मनहुँ भयानक मूरति भारी।

हेतूत्प्रेक्षा—बिनत शुक नासा का कर ध्यान, बन गये पुष्प पलाश अराल।

फलोत्प्रेक्षा—निश्चय ही पिनाक ने स्वपाप नष्ट करने को,
राम-कर तीर्थ पर शरीर निज छोड़ा है।

हेतूत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा का अन्तर

इनके अन्तर को समझाने के लिये 'हेतु' तथा 'फल' के भेद को समझ लेना चाहिए। हेतु 'कारण या निमित्त' को कहते हैं और फल 'उद्देश्य' को। यदि क्रिया किसी कारण से की जा रही है, तो वह कारण 'हेतु' होगा, और यदि क्रिया किसी उद्देश्य से की जा रही है, तो वह उद्देश्य 'फल' होगा। 'मैं आपके कहने से आगरा जा रहा हूँ' में जाने की क्रिया 'आपके कहने' के कारण हो रही है, अतः 'आपका कहना' हेतु है; और 'मैं पढ़ने के लिये आगरा जा रहा हूँ' में जाने की क्रिया 'पढ़ने' के उद्देश्य से हो रही है, अतः 'पढ़ना' फल रहा। भाव यह है कि 'हेतु' क्रिया के होने से पहले ही वर्तमान होता है और 'फल' क्रिया के होने के बाद में होता है।

हेतु और फल के इस अन्तर को अच्छी तरह समझ कर उत्प्रेक्षा के स्थल में उक्त रीति से सोच विचार कर निर्णय करना चाहिये। 'सुन्दरता में चन्द्रमा को हरा देने के कारण मुख हंस रहा है।' में हंसना क्रिया का कारण 'चन्द्रमा' को हरा देना है, क्योंकि वह 'हंसने' से पहले ही वर्तमान है, अतः यहाँ हेतूत्प्रेक्षा है; और 'नायिका के चरणों की समानता प्राप्त करने के लिए कमल जल मे तप रहा है।' में 'तप करने की क्रिया' का उद्देश्य 'नायिका

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के चरण की समानता प्राप्त करना' है, जो तप करने के बाद ही सम्भव है, अतः यहाँ फलोत्प्रेक्षा है।

(१६) **अतिशयोक्ति**—जहाँ किसी वस्तु का वर्णन अत्यन्त ही बढ़ा-चढ़ा कर किया जाय, वहां अतिशयोक्ति होती है।

अतिशयोक्ति शब्द का अर्थ है अतिशयित; अर्थात् अधिकता में उक्ति, अर्थात् कथन। इसमें जो बात जितनी होती है, उसका उससे बढ़ाकर वर्णन किया जाता है। जैसे—'यह घोड़ा मन से भी तेज दौड़ता है।' यहाँ घोड़े का मन से भी तेज दौड़ाना बताया है, पर वास्तव में ऐसा नहीं होता। वास्तविकता तो केवल इतनी है कि 'घोड़ा बहुत तेज दौड़ता है' और उसकी दौड़ की तीव्रता को बतलाने के लिए ही यहाँ अतिशयोक्ति का आश्रय लिया गया है।

फबि फहरें अति उच्च निसाना, जिन मँह अटकहिं विबुध विमाना'

'यहाँ निसानों (झंडों) की ऊँचाई को बहुत बढ़ा चढ़ा कर कहा गया है, अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है।

यह वर्णन कई प्रकार से हो सकता है, अतः इसके ७ भेद होते हैं—

१—रूपकातिशयोक्ति, २—भेदकातिशयोक्ति, ३—सम्बन्धातिशयोक्ति ४—असम्बन्धातिशयोक्ति ५—अक्रमातिशयोक्ति, ६—चपलातिशयोक्ति, ७—अत्यन्तातिमयोक्ति।

(१) **रूपकातिशयोक्ति**—जहाँ उपमेय का वर्णन न करके केवल उपमान का ही वर्णन किया जाय और उससे ही उपमेय का भी ज्ञान हो जाय, वहाँ रूपकातिशयोक्ति होती है। जैसे—'भंवर छपान, हँस परगटा।' यहाँ यौवन के बीतने और वृद्धावस्था को आने का वर्णन है। 'यौवन को केशों की कृष्णता के कारण' 'भंवर' (भौंरा) और 'वृद्धावस्था' को केशों की स्वेतता के कारण 'हँस' कहा गया है। यहाँ उपमेय (यौवन और वृद्धावस्था) का वर्णन न होने से यहाँ रूपकातिशयोक्ति है।

(२) **भेदकातिशयोक्ति**—जहाँ भेद न होने पर भी 'अन्य' 'और' आदि शब्दों द्वारा भेद बताया जाय, वहाँ भेदकातिशयोक्ति होती है। जैसे—'वह चितवनि और कछु जिहि बस होत सुजान।' यहाँ सुन्दरी दृष्टि में कोई भेद न होते हुए भी 'और' शब्द के द्वारा भेद बतलाया गया है, अतः भेदकातिशयोक्ति है।

(३) **सम्बन्धातिशयोक्ति**—जहाँ वास्तव में कोई सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध दिखलाया जाय, वहाँ सम्बन्धातिशयोक्ति होती है जैसे—

'फबि फहरें अति उच्च निसाना, जिन मँह अटकहिं विबुध विमाना।'

यहाँ निशानों झण्डों में देवताओं के विमानों के अटकने का सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध दिखलाया गया है, अतः सम्बन्धातिशयोक्ति है।

(४) **असम्बन्धातिशयोक्ति**—जहाँ वास्तव में सम्बन्ध होने पर भी सम्बन्ध न दिखलाया जाय, वहाँ असम्बन्धातिशयोक्ति होती है। जैसे—'अति सुन्दर लखि मुख सिय! तेरो, आदर करत न हम ससि केरो।' यहाँ चन्द्रमा के साथ आदर का सम्बन्ध है—अर्थात् यह बात नहीं कि सचमुच चन्द्रमा का आदर न हो—तथापि आदर के असम्बन्ध का वर्णन किया गया है, अतः असम्बन्धातिशयोक्ति है।

(५) **अक्रमातिशयोक्ति**—जहाँ कारण और कार्य के एक साथ होने का वर्णन हो, वहाँ अक्रमातिशयोक्ति होती है। जैसे—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'रण मध्य राम ऐसो कौतुक करत आज,
बाणन के संग छूटें प्राण दनुजन के।'

यहाँ कारण (बाणों का छूटना) और कार्य (दनुजों के प्राणों का छूटना) के एक साथ होने का वर्णन है, अतः अक्रमातिशयोक्ति है।

(६) चपलातिशयोक्ति—जहाँ कारण के ज्ञान से ही कार्य हो जाय, वहाँ चपलातिशयोक्ति होती है। जैसे—

'आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नाँव।
बैरि नारि दृग जलन सों, बूढ़ि जाति अरि गाँव ॥

यहाँ कारण (शिवजी के आगमन की खबर) के सुनने से ही कार्य शत्रुओं की स्त्रियों के आँसुओं से शत्रुओं के गांवों का डूबना) का होना बताया गया है, अतः चपलातिशयोक्ति है।

(७) अत्यन्तातिशयोक्ति—जहाँ कारण से पहले ही कार्य हो जाय, वहाँ अत्यन्तातिशयोक्ति होती है। जैसे—प्रान छूटे प्रथम रिपु के, रघुनायक सायक छूट न पाये।' यहाँ कारण (रघुनायक सायकों का छूटना) से पहले ही कार्य (रिपु के प्राणों का छूटना) हो गया है, अतः अत्यन्तातिशयोक्ति है।

(८) अन्योक्ति—जहाँ किसी प्रस्तुत वस्तु का वर्णन न करके उसके समान किसी दूसरी वस्तु का वर्णन किया जाय, वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है। (अर्थात् दूसरे के सिर पर डाल कर दूसरे से बात कही जाय)

जैसे— केला तबहिं न चेतिया, जब ढिग लागी बेरि।
अबके चेते का भया, काँटन्ह लीन्हा घेरि ॥

वास्तव में यहाँ कवि एक सज्जन से कह रहा है कि 'तू उस समय नहीं चेता था, जब दुष्ट तेरे समीप आया था। अब चेतने से क्या लाभ है जब कि तू उस दुष्ट के जाल में बुरी तरह से फस गया है।' किन्तु यहाँ 'सज्जन' और 'दुष्ट' के इस वृतान्त का वर्णन न करके 'केला और बेरिया' के वृतान्त का वर्णन किया गया है, अतः अन्योक्ति अलंकार है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अलङ्कार चक्र

अलंकार	लक्षण	उदाहरण
१—अनुप्रास	जहाँ व्यंजनों की समता हो, चाहे स्वर मिलें या न मिलें।	सान्त, सरल सुखदायक बैना।
(i) छेकानुप्रास	जहाँ अनेक व्यंजनों की एक बार स्वरूप और क्रम से आवृति हो।	राम रमापति कर धन लेहू।
(ii) वृत्यनुप्रास	जहाँ अनेक वर्णो की स्वरूप मात्र से (क्रम से नहीं) एक बार या अनेक बार आवृति हो।	चोर रचते विचित्र माया।
	अथवा अनेक वर्णो की स्वरूप और क्रम से कई बार (एक बार नहीं) आवृति हो।	चकित चकता चौंक उठे बार बार।
	अथवा केवल एक वर्ण की एक बार या अनेक बार आवृत्ति हो।	सान्त सरल सुखदायक बैना।
(iii) श्रुत्यनुप्रास	जहाँ एक ही उच्चारण स्थान से बोले जाने वाले वर्णों की आवृत्ति हो।	सुनत स्याम जसुमति वचन बदन कीन विस्तार।
(iv) अन्त्यानुप्रास	जहाँ आदि के स्वर के साथ व्यंजन की आवृति हो।	लोचन जल रह लोचन कोना, जैसे परम कृपन करि सोना।
(v) लाटानुप्रास	जहाँ समानार्थक शब्दों की आवृत्ति हो, परन्तु तात्पर्य में भेद हो।	पराधीन जो जन, नहीं स्वर्ग नरक ता हेतु, पराधीन, जो जन नहीं, स्वर्ग नरक ता हेतु
२—यमक	जहाँ एक शब्द कई बार आए, किन्तु उसका अर्थ अलग हो।	सूर सूर तुलसी ससी।
३—श्लेष	जहाँ एक ही शब्द के कई अर्थ निकलें।	सुबरन को खोजत फिरत कवि, व्यभिचारी चोर।
४—उपमा	जहाँ दो वस्तुओं में समानता का वर्णन किया जाय	पीपर पात सरिस मन डोला।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अलंकार	लक्षण	उदाहरण
५—रूपक	जहां उपमेय में उपमान का आरोप किया जाय अर्थात् जहां उपमेय और उपमान को एक रूप कह दिया जाय	बन्दहु गुरु पद कंज।
६—अनन्वय	जहां उपमा एक ही वस्तु उपमेय भी हो और उपमान भी।	उपमा विहीन रचा विधि ने बस भारत के सम भारत है।
७—व्यतिरेक	जहां उपमान से उपमेय की श्रेष्ठता दिखाई जाय।	सिय मुख सरद कमल जिमि किमि कह जाय। निस मलीन वह, दिसदिन यह विकसाय।।
८—स्मरण	जहां सदृश वस्तु को देखकर पहले अनुभव की हुई वस्तु के स्मरण का वर्णन हो।	मकरालय मरजाद लखि सुधि आवत श्रीराम
९—प्रथमउल्लेख	जहां एक ही वस्तु को अनेक पुरुष अनेक प्रकार से देखें।	देखहिं भूप महा रनधीरा, मनहुँ वीर रस धरे सरीरा। डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी, मनहुँ भयानक मूरति भारी।।
द्वितीय उल्लेख	जहां एक पुरुष एक ही वस्तु को अनेक प्रकार से देखे	तू रूप है किरन में, सौन्दर्य है सुमन में।
१०—अपह्नुति	जहां उपमेय में निषेध पूर्वक उपमान के अभेद का आरोप हो। अर्थात् जहां उपमेय को स्वीकार न करके अन्य उपमान को स्वीकार कर लिया जाय।	मुख नहीं चन्द्रमा है।
११—सन्देह	जहाँ किसी वस्तु के विषय में कवि कल्पित चमत्कार पूर्ण सन्देह हो।	किधौं रौद्र रस रुद्र कै किधौं ओज अवतार। साहु सुवन सिवराज तें किधौं प्रलय साकार।।
१२—भ्रम (भ्रान्तिमान)	जहां समानता के कारण किसी वस्तु में दूसरी वस्तु का कवि कल्पित तथा चमत्कार पूर्ण भ्रम हो।	बादल से काले काले, केशों को देख निराले। नाचा करते हैं हरदम, पालतू मोर मतवाले।।
१३—उत्प्रेक्षा	जहां उपमान में उपमेय की सम्भावना अथवा कल्पना की जाय।	डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी मनहुँ भयानक मूरति भारी।
१४—अतिशयोक्ति	जहां किसी वस्तु का वर्णन अत्यन्त बढ़ा चढ़ाकर किया जाय।	वह घोड़ा मन से भी तेज दौड़ता है।
१५—अन्योक्ति	जहां किसी प्रस्तुत वस्तु का वर्णन न करके उसके समान किसी दूसरी वस्तु का वर्णन किया जाय।	केला तबहिं न चेतियि, जब ढिंग लागो बेरि। अब के चेते का भया, काटन्ह लोना घेरि।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काव्य के भेद

काव्य क्या है ?—प्रत्येक पुरुष का सौन्दर्य से स्वाभाविक प्रेम होता है। जहाँ-जहाँ मनुष्य को सौन्दर्य के दर्शन होते हैं, वहाँ वहाँ वह स्वतः ही खिचा चला जाता है। वह उसे बार बार देखना चाहता है। उसे इसमें आनन्द मिलता है। इसी सौन्दर्य प्रेम के कारण वह अपनी उपयोग की वस्तुओं में भी सौन्दर्य के दर्शन करना चाहता है, अतएव वह उसमें सौन्दर्य लाने का प्रयत्न करता है। सौन्दर्य-प्रेम की इस प्रवृति का परिणाम हुआ है—ललित कलाओं का जन्म। ये पाँच हैं—वस्तु, मूर्ति, चित्र, संगीत और काव्य। इसमे काव्य सर्वोत्तम है। इसके द्वारा उक्ति में सौन्दर्य आ जाता है। साधारण से साधारण उक्ति भी काव्य कला के सम्पर्क से सुन्दर बन जाती है।

सौन्दर्य स्वयं ही विभिन्न आनन्दात्मक गुणों की समष्टि है। उसमें रमणीयता तथा मनोरञ्जकता का रहना आवश्यक है। अतएव काव्य का लक्षण करते हुए पण्डितराज जगन्नाथ ने 'रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्' कहकर रमणीय—अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द समूह को काव्य बतलाया है।

मनुष्य में एक यह भी प्रवृत्ति है कि वह अपने कथन का दूसरों पर प्रभाव डालना चाहता है। काव्य में प्रभावोत्पादन की शक्ति प्रबल मात्रा में है। जिन बातों को साधारण रूप से कहने में कोई प्रभाव नहीं पड़ता, उनको काव्य के रूप में प्रकट करने से पूर्ण प्रभाव पड़ता है। काव्य हृदय की वस्तु है। हृदय की भावनाओं का मूर्त रूप काव्य है, अतएव वह हृदय पर प्रभाव डालता है। भावनाओं के इसी प्राधान्य को ध्यान में रखकर साहित्य दर्पण-कार विश्वनाथ ने 'वाक्य रसात्मकम् काव्यम' कहकर रसात्मक वाक्य (अर्थात् हृदय की मञ्जुल भावनाओं के सूचक वाक्य) को काव्य बतलाया है।

ध्यान देने से ज्ञात होता है कि बात दोनों ने एक ही कही है, केवल शब्दों का भेद है क्योंकि रमणीय अर्थ का प्रतिपालन भी उन्हीं वाक्यों से होता है, जिनमें रस होता है। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल भी इसी बात को कहते हैं।

जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस-दशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं। उक्त वर्णन से काव्य का स्वरूप स्पष्ट हो गया। अब हम भेदों का वर्णन करेंगे।

काव्य के भेद

काव्य के मुख्य दो भेद हैं—दृश्य और श्रव्य।

दृश्य काव्य—जिसका अभिनय किया जा सके, उसे दृश्य काव्य कहते हैं। नाटक आदि इसी के अन्तर्गत हैं।

श्रव्य काव्य—जो काव्य केवल पढ़े या सुने जा सकते हैं, और जिनका अभिनय नहीं हो सकता, उन्हें श्रव्य-काव्य कहते हैं।

श्रव्य काव्य के शैली के विचार से तीन भेद होते हैं—गद्य, पद्य और चम्पू। छन्द रहित रचना 'गद्य', छन्दोबद्ध रचना 'पद्य' और 'गद्य' तथा 'पद्य' में लिखी हुई रचना 'चम्पू' कही जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गद्य-काव्य के निबन्ध, समालोचना, उपन्यास, कहानी, जीवन चरित्र, पत्र आदि अनेक भेद हैं ।

पद्य काव्य के दो भेद हैं—(१) प्रबन्ध, (२) मुक्तक ।

प्रबन्ध काव्य—धारावाहिक कथानिक से युक्त पद्यमय काव्य को प्रबन्ध काव्य कहा जाता है ।

प्रबन्ध काव्य के दो भेद हैं—(१) महाकाव्य, (२) खण्ड काव्य ।

मुक्तक काव्य—किसी दूसरे की सहायता के बिना अपने आप ही एक पूरे अर्थ को प्रकट करने वाले पद्यमय-काव्य को मुक्तक काव्य कहा जाता है । इनमें कुछ कविताएँ विशेष रूप से गेय होती हैं और कुछ पाठ्य । अतः मुक्तक काव्य के भी दो भेद होते हैं—(१) प्रगीत, (२) पाठ्य ।

निम्न चक्र से यह विभाजन स्पष्ट हो जायगा—

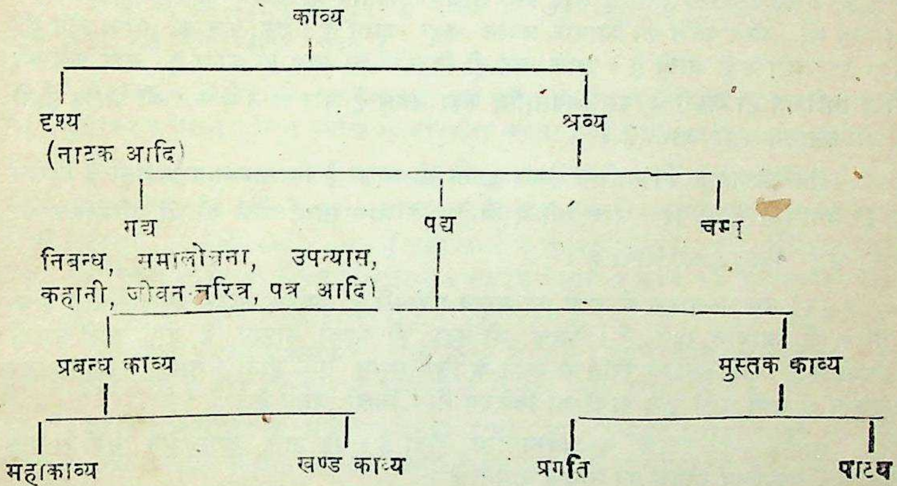

दृश्य काव्य

भारतीय आचार्यों ने दृश्य काव्यों के बहुत से भेद किये हैं, पर आधुनिक काल में इसकी 'नाटक' और 'एकांकी नाटक' नामक दो विधाओं का ही अधिक प्रचलन है । अतः हम इनका ही वर्णन करेंगे ।

नाटक

नाटक के छः तत्व होते हैं—

(१) वस्तु, (२) पात्र, (३) कथोपकथन, (४) देशकाल, (५) शैली, (६) उद्देश्य ।

(१) वस्तु—वस्तु से तात्पर्य नाटक की कथावस्तु अथवा कथानक से है । नाटक रंग-मंच पर खेलने के लिए लिखा जाता है, अतः इसका कथानक इतना अधिक लम्बा नहीं होता कि दर्शक उसे देखते देखते ऊब जाँय । एक अच्छा नाटककार उन्हीं घटनाओं का वर्णन करता है, जो नाटक के लिये अत्यावश्यक होती हैं । कथा का तारतम्य रखने के लिये तथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अरोचक बातों से बचने के लिए नाटककार कुछ बातों की सूचनामात्र दे देता है। इस प्रकार कथावस्तु दो प्रकार की होती है। (१) दृश्य (२) सूच्य। जिस वस्तु का अभिनय रंग-मंच पर दिखाया जाता है, वह 'दृश्य' और जिसकी सूचनामात्र दी जाती है, वह 'सूच्य' होता है।

घटना के अनुसार भी वस्तु दो प्रकार की होती है—(१) आधिकारिक, (२) प्रासंगिक मुख्य कथा-वस्तु को आधिकारिक और गौण को प्रासंगिक कहते हैं। रामायण में राम की कथा आधिकारिक और सुग्रीव की प्रासंगिक है।

पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार नाटक में दो विरोधी भाव, पक्ष, सिद्धान्त दल आदि को दिखाया जाता है। विरोध के साथ साथ ही कथा वस्तु का विकास होता चलता है और विरोध की समाप्ति पर ही नाटक समाप्त हो जाता है। पर हमारे यहाँ के प्राचीन नाटक धर्म, अर्थ और काम की सिद्धि के लिये लिखे जाते थे, अतः हमारे यहाँ विरोध को प्रधानता नहीं दी गई है। भारतीय आचार्यों ने कथावस्तु के 'आरम्भ प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम नाम से पाँच विभाग किये गये हैं। इस विभाग के अनुसार किसी फल को प्राप्त करने की उत्कण्ठा होती है और इसी उत्कण्ठा के साथ ही नाटक का आरम्भ होता है। उस फल को प्राप्त करने का व्यापार प्रयत्न कहा जाता है। उस फल के प्राप्त होने की आशा प्रप्त्याशा कही जाती है। इसके बाद ही विघ्नों का नाश हो जाता है और फल की प्राप्ति निश्चित हो जाती है, इसे नियताप्ति कहा जाता है और अन्त में फल की प्राप्ति होती है, जो फलागम कही जाती है।

दोनों प्रकार के विभागों में केवल इतना ही अन्तर है कि पाश्चात्य विद्वानों ने विरोध को ही प्रधानता दी है पर भारतीयों ने विरोध के साथ साथ अन्यों को भी सम्मिलित कर अपना क्षेत्र विस्तृत कर लिया है।

(२) **पात्र**—नाटक में पात्रों का महत्व सर्वोपरि है, क्योंकि नाटक के सारे तत्व प्रायः पात्रों के ही आधीन रहते हैं। लेखक जो कुछ भी कहना चाहता है, वह पात्रों से ही कहलवाता है। उसे स्वतन्त्र रीति से कहने के लिये स्थान नहीं होता। नाटक में प्रधान रूप से प्रयोग में आने वाले कुछ पात्रों का विवेचन नीचे लिखा जाता है।

नायक—यह नाटक का प्रधान पात्र होता है। यह उच्च तथा श्रेष्ठ गुणों से युक्त होता है। शकुन्तला नाटक का नायक दुष्यन्त है।

प्रतिनायक—वह नाटक का प्रतिद्वन्द्वी होता है।

पीठ मर्द—प्रासंगिक कथावस्तु का नायक तथा नाटक के नायक का सहायक पीठमर्द कहा जाता है।

विदूषक—नाटक में हास्य को उत्पन्न करने वाले पात्र को विदूषक कहते हैं।

नायिका—भारतीय विद्वानों के अनुसार नायक की प्रिय स्त्री को नायिका कहा जाता है, पर पाश्चात्य विद्वान नाटक की कथा में प्रधान रूप से कार्य करने वाली स्त्री को ही नायिका मानते हैं, चाहे वह नायक की प्रिय स्त्री हो या अन्य कोई।

नाटक में पात्रों का चरित्र-चित्रण प्रत्यक्ष रूप से नहीं होता। उपन्यासकार अथवा कहानीकार तो पात्रों के चरित्र के बारे में कुछ अपनी तरफ से भी कह देता है, पर नाटक में इसके लिए बिल्कुल गुन्जाइश नहीं होती। नाटक में तो इसे अभिनय अथवा कथोपकथन के द्वारा ही प्रकट किया जाता है। प्रायः या तो नाटक के पात्र एक दूसरे के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं या पात्र स्वयं ही अपने क्रिया कलाप से अपने चरित्र का उद्घाटन करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कभी कभी पात्र स्वागत रूप से या अपने घनिष्ट मित्र में भी अपने चरित्र के बारे में कुछ कह देते हैं।

(१) कथोपकथन—पात्रों का एक दूसरे से बातचीत करना कथोपकथन कहलाता है। नाटक की सारी घटनाएँ तथा चरित्र-चित्रण आदि इसी पर आधारित होते हैं। अतएव नाटक में कथोपकथन का विशेष महत्व है। यह दर्शकों के लिए तो श्राव्य होता है, पर कुछ बातें नाटक के प्रत्येक पात्र के सुनने के लिए नहीं होती, अतएव, कथोपकथन के तीन भेद होते हैं—(१) श्राव्य (२) अश्राव्य (३) नियत-श्राव्य।

श्राव्य—जो बात सब पात्रों के सुनने के उद्देश्य से कही जाती है, उसे श्राव्य, सर्व-श्राव्य, प्रकट अथवा प्रकाश कहते हैं।

अश्राव्य—जो बात दूसरे पात्रों के न सुनने के उद्देश्य से कही जाती है उसे अश्राव्य कहते हैं। इसी को स्वागत अथवा आत्मगत भी कहा जाता है।

नियत श्राव्य—जो कुछ पात्रों के सुनने के लिये हो और कुछ पात्रों के सुनने के लिये न हो, उसे नियत श्राव्य कहते हैं।

आकाश—भाषित भी कथोपकथन का ही भेद है। इसमें कोई पात्र आकाश की ओर मुँह करके किसी कल्पित व्यक्ति से बातचीत करता हुआ सा दिखाया जाता है।

(४) देशकाल—देश काल से तात्पर्य नाटक में वर्णित आचार विचार रीति रिवाज, रहन-सहन, परिस्थिति आदि से है। भाव यह है कि नाटक में जिस देश और काल से सम्बन्धित घटनाओं का वर्णन किया जाता है उसी काल के आचार विचार, रीति रिवाज, रहन-सहन, परिस्थिति आदि का विवरण रहता है। अतएव नाटक में कृष्ण को 'पायजामा' पहने हुए दिखलाना 'देश-काल' के विरुद्ध होगा।

(५) शैली—प्रत्येक लेखक की शैली भिन्न होती है। इसमें दर्शकों के मनोरंजन की पूरी सामग्री होती है और रंग-मंच की परिस्थिति का भी ध्यान रखा जाता है।

भारतीय परम्परा के अनुसार इनमें हत्या, युद्ध, विप्लव आदि दृश्यों को नहीं दिखाया जाता। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि नाटक में लोकप्रसादन का पूरा ध्यान रखा जाता है और उसकी शैली भी तदनुकूल ही होती है।

(६) उद्देश्य—जैसा कि यह पहले लिख चुके हैं, पाश्चात्य विद्वान विरोध का प्रदर्शन ही नाटक का उद्देश्य मानते हैं और भारतीय विद्वात धर्म अर्थ और काम की सिद्धि को। इसी कारण भारतीयों ने नाटक में जीवन 'रस' को अत्यधिक महत्व दिया है। कुछ भी हो दोनों नाटक में जीवन की व्याख्या करते हैं। भारतीयों की यह व्याख्या आदर्शवाद की ओर और पाश्चात्यों की यथार्थवाद की ओर झुकी रहती है। अतएव भारत में दुखान्त नाटकों का अभाव रहा है।

एकांकी नाटक

जैसा कि इसके नाम से विदित है, इसमें केवल एक ही अंक होता है। हाँ, इसमें दृश्य कई हो सकते हैं। नाटक की भाँति इसमें जीवन का पूरा चित्र नहीं दिखलाया जाता, जीवन के किसी अंग पर ही प्रकाश डाला जाता है। पर यह प्रकाश इतना तीव्र होता है कि अपने वर्ण्य-विषय का पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर देता है। समय की कमी से इसमें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चरित्र का विकास और परिवर्तन का दिखाना असम्भव सा होता है, अतः इसमें बने बनाये चरित्रों पर ही प्रकाश डाला जाता है। पर आधुनिक काल के कुछ लेखकों ने चरित्र के परिवर्तन को दिखाकर उक्त नियम को निर्मूल सा सिद्ध कर दिया है।

निबन्ध

बाबू गुलाबराय के मतानुसार 'निबन्ध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगीत और सम्बद्धता के साथ किया गया हो।'

निबन्ध का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है। लेखकों के दृष्टिकोण के अनुसार निबन्धों में भी विविध रूपता रहती है। किन्तु विद्वानों ने सुविधा के लिए निम्न भेद किये हैं—

१—वर्णनात्मक निबन्ध।

२—विवरणात्मक निबन्ध।

३—व्याख्यात्मक अथवा विचारात्मक निबन्ध।

४—तार्किक निबन्ध।

(१) **वर्णनात्मक निबन्ध**—इन निबन्धों में ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त विचारों अथवा भावों का वर्णन रहता है। इनमें प्राकृतिक (वन, नदी, पर्वत, आदि) तथा अप्राकृतिक (रेडियो, मोटर, नगर आदि) पदार्थों का वर्णन किया जाता है।

(२) **विवरणात्मक निबन्ध**—इन निबन्धों में कथाओं, घटनाओं, युद्धों, यात्राओं आदि का वर्णन रहता है। इन्हें ही कथात्मक अथवा अख्यानात्मक निबन्ध भी कहते हैं। ये कथाएँ आदि वास्तविक भी हो सकती हैं और काल्पनिक भी।

(३) **व्याख्यात्मक अथवा विचारात्मक निबन्ध**—इनमें अमूर्त विषयों (करुणा, श्रद्धा, सज्जनता, देश प्रेम आदि) पर विचार प्रकट किए जाते हैं।

(४) **तार्किक निबन्ध**—इनमें किसी विषय पर तर्क-वितर्क पूर्ण विवेचन किया जाता है। इनमें लेखक दूसरों के मतों का खण्डन या मण्डन करते हुए अपने मत की स्थापना करता है।

प्रत्येक प्रकार के निबन्ध में आरम्भ, मध्य भाग और उपसंहार होता है। निबन्ध से सम्बन्धित अन्य आवश्यक बातें निबन्ध रचना के प्रकरण में दी जायेगी।

समालोचना

बाबू श्यामसुन्दरदास के मतानुसार 'साहित्य क्षेत्र में ग्रन्थ को पढ़कर उसके गुणों और दोषों का विवेचन करना और उसके सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करना' समालोचना कहलाता है। यदि साहित्य जीवन की व्याख्या है तो समालोचना उस व्याख्या की व्याख्या है।

उपन्यास

बाबू श्यामसुन्दरदास के शब्दों में 'उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।' नाटक की भाँति उपन्यास के भी ६ तत्व होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(१) कथा वस्तु, (२) पात्र, (३) कथोपकथन (४) देशकाल, (५) शैली (६) उद्देश्य ।

(१) **कथा वस्तु**—वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा होने के कारण उपन्यास में कथा-वस्तु का विशेष महत्व है। वह रोचक होनी चाहिए। काल्पनिक होने पर भी वह सत्य से दूर न होनी चाहिये। कहने का भाव यह है कि उसमें किसी ऐसी बात का वर्णन होना चाहिये, जो वास्तविक जीवन में घटित ही न हो सके।

उसमें परस्पर विरोधी बातों का वर्णन न होना चाहिये।

कथानक के सारे अंग समान और समीचन होने चाहिए। ऐसा न हो कि कोई वर्णन कई पृष्ठों में किया गया हो और कोई दो चार पंक्तियों में।

सम्पूर्ण घटनाएँ अपने मूल स्त्रोत से स्वाभाविक रीति से निकलनी चाहिए।

घटनाओं का क्रम स्वाभाविक तथा नियमानुकूल होना चाहिए।

कथानक का परिणाम वर्णित घटनाओं के अनुकूल होना चाहिए।

(२) **पात्र**—नाटक की भाँति उपन्यास में भी प्रधान पुरुष पात्र को नायक और प्रधान स्त्री पात्र को नायिका कहते हैं। उपन्यासकार अपनी इच्छा के अनुसार पात्रों की संख्या में न्यूनता तथा अधिकता कर सकता है, पर उसे ऐसा करने में अपनी आवश्यकता तथा उद्देश्य का ध्यान रखना पड़ता है। वह कथानक के विस्तार में अनुपयोगी तथा उद्देश्य के प्रतिकूल पात्रों की सृष्टि नहीं करता है।

उपन्यास के पात्र इस प्रकार के होने चाहिए कि वे हमारे वास्तविक जीवन से हिल-मिल जाये और छाया की भाँति कही दूर कल्पनालोक में उखड़े पुखड़े से न दीख पड़े।

पात्रों के चरित्र चित्रण में उपन्यासकार दो शैलियों का प्रयोग करता है-विश्लेषात्मक या साक्षात् और अभिनयात्मक या परोक्ष।

विश्लेषात्मक या साक्षात्—वह शैली है, जिसके द्वारा उपन्यासकार स्वयं ही पात्रों के चरित्रों पर प्रकाश डालता है।

अभिनयात्मक या परोक्ष—वह शैली है, जिसके द्वारा उपन्यासकार स्वयं तो कुछ नहीं कहता, पर पात्रों के वार्तालाप अथवा कार्यों द्वारा उनके चरित्र को प्रकाशित कर देता है।

चरित्रों का विकास स्वाभाविक रीति से दिखाना चाहिये।

(३) **कथोपकथन**—कथोपकथन से तात्पर्य पात्रों की पारस्परिक बातचीत से होता है। इसके द्वारा पात्रों के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है तथा कथा आगे बढ़ती है। इसके द्वारा उपन्यास में रोचकता, सजीवता तथा आकर्षण आ जाता है। इससे ही उपन्यास में नाटकीय सौन्दर्य आ जाता है और पाठक पात्रों स विशेष रूप से परिचित हो जाता है।

(४) **देश काल**—नाटक की भाँति उपन्यास में भी देश काल से तात्पर्य उपन्यास में आचार-विचार रीति-रिवाज, रहन-सहन परिस्थिति आदि से होता है। भाव यह है कि उपन्यास में जिस देश अथवा काल का चित्रण किया गया हो, रीति रिवाज, रहन-सहन परिस्थिति आदि भी उसी काल से सम्बन्धित होना चाहिए।

(५) **शैली**—लेखन प्रसार को शैली कहते हैं। प्रत्येक लेखन की अपनी शैली होती है। सफल लेखक प्रत्येक प्रकार की शैली में उपन्यास को लिखकर ख्याति प्राप्त कर सकता है। पर मनोविनोद की सामिग्री होने के कारण उपन्यास की शैली सरल तथा सुबोध होनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

चाहिए। यदि पात्रों के अनुसार भाषा में थोड़ा सा परिवर्तन कर दिया जाय तो और भी अच्छा है। स्थान स्थान पर मुहावरों और कहावतों का प्रयोग उपन्यास में चार चाँद लगा देता है।

(६) उद्देश्य—उपन्यासकार का उद्देश्य जीवन की व्याख्या अथवा आलोचना करना होता है। वह अपनी लेखनी के द्वारा समाज, जाति अथवा देश का चित्र खींचकर उनके दोषों को दूर करने का प्रयत्न करता है।

काव्य का ही अंग होने के कारण इसमें रस, अलङ्कारादि का प्रयोग स्वाभाविक रीति से हो जाता है।

कहानी

बाबू गुलाबराय जी के मतानुसार 'छोटी कहानी एक स्वत: पूर्ण रचना है जिसमें एक तथ्य या प्रभाव को अग्रसर करने वाली व्यक्ति केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक उत्थान पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला बर्णन हो।'

कथा—साहित्य के अन्तर्गत होने के कारण कहानी के भी नाटक और उपन्यास की भाँति ६ तत्व होते हैं।

१—कथावस्तु, २—पात्र, ३—कथोपकथन, ४—देश काल, ५—शैली, ६—उद्देश्य।

१—कथावस्तु—कहानी की कथा वस्तु संक्षिप्त होती है। उपन्यास अथवा नाटक की भाँति कहानी में सम्पूर्ण जीवन की व्याख्या नहीं होती अपितु जीवन की किसी एक घटना का चित्रण होता है। किन्तु यह चित्रण अत्यन्त तीव्र होता है। यदि उपन्यास एक चन्द्रमा के प्रकाश के समान है, तो कहानी सर्चलाइट है। जिस प्रकार चन्द्रमा का प्रकाश एक विस्तृत क्षेत्र पर पड़ता है पर वह कुछ धूमिल होती है, उससे बहुत सी सूक्ष्म वस्तुएँ दिखलाई नहीं देती, उस प्रकार उपन्यास जीवन के विस्तृत क्षेत्र को अपना वर्ण्य विषय बनाता है, पर वह उस क्षेत्र को पूरी तौर से नहीं चमका पाता। जिस प्रकार 'सर्चलाइट' एक छोटे से क्षेत्र को प्रकाशित करती है, पर वह प्रकाश अत्यन्त तीव्र होता है और उसमें छोटी से छोटी वस्तु भी दिखलाई दे जाती है, उसी प्रकार कहानी में जीवन के एक बिन्दु का वर्णन रहता है पर यह बिन्दु कहानी में पूरी तौर से चमक जाता है।

कहानी में इधर उधर की कहने का स्थान नहीं होता, अतः इसकी कथा-वस्तु सीधे सादे ढङ्ग से अपने लक्ष्य की ओर तीव्रता से बढ़ती है।

कहानी के प्रारम्भ में ही उसके अन्त का संकेत रहता है।

२—पात्र—कहानी में पात्रों की संख्या जहाँ तक हो सकता है, कम रखी जाती है। इसमें पात्रों के चरित्र का विकास नहीं दिखाया जाता, अपितु बने बनाये चरित्रों के उन्हीं अङ्गों पर प्रकाश डाला जाता है, जिनका वर्णन करना अत्यावश्यक होता है।

उपन्यास की भाँति कहानी में भी चरित्र-चित्रण के दोनों ढङ्ग-विश्लेषात्मक और अभिनयात्मक अपनाये जा सकते हैं।

३—कथोपकथन—कहानी में निरर्थक बातचीत के लिए स्थान नहीं होता। कहानी में कथोपकथन का तिहरा काम होता है। १—इनके द्वारा पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। २—कथानक आगे बढ़ता है। ३—कहानी में सजीवता तथा रोचकता आती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४—देश काल—उपन्यास की भांति कहानी में इसके अधिक चित्रण की आवश्यकता तो नहीं रहती, पर स्थान स्थान पर इनका चित्रण कहानी में रोचकता उत्पन्न कर देता है। नाटक और उपन्यास की भाँति कहानी में भी देश काल के विरुद्ध वर्णन छोड़ देना चाहिए।

शैली—वैसे तो कुशल कहानीकार प्रत्येक शैली में अच्छी कहानी लिख सकते हैं, पर कहानी की शैली सरल तथा सुबोध होनी चाहिए। कहानी मनोविनोद का साधन है, अतः इसमें दार्शनिक विचारों का विशद विवेचन त्याज्य है। कहानीकार को थोड़े से स्थान में बहुत कुछ कहना पड़ता है, अतः कुशल कहानीकार व्यंजनात्मक शैली का आश्रय लेते हैं। कहानी में संगति तथा क्रम का ध्यान रखना भी आवश्यक होता है। यथास्थान मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग भी कहानी में सरसता उत्पन्न कर देता है।

६—उद्देश्य—कहानी का उद्देश्य मनोरंजन के साथ जीवन के किसी एक दृष्टिकोण, बिन्दु अथवा घटना का चित्रण करना होता है।

महाकाव्य

साहित्य दर्पण के लेखक श्री विश्वनाथ के अनुसार महाकाव्य में निम्न गुण होते हैं—

१—यह सर्गों (परिच्छेदों, काण्डों आदि) में बँटा हुआ होता है।

२—इसका नायक देवता अथवा धीरोदात्त गुणों से युक्त क्षत्रिय (आधुनिक काल में अन्य जाति का भी श्रेष्ठ पुरुष) होता है। एक वंश के बहुत से राजा भी इसके नायक हो सकते हैं। (जैसे—रघुवंश)

३—इसमें शृंगार, वीर और शान्ति रसों में से कोई एक रस प्रधान रूप से रहता है। अन्य रस इसके सहायक होकर आते हैं।

४—सम्पूर्ण नाटक में सन्धियों का प्रयोग भी यथा स्थान होता है।

५—इसका कथानक इतिहास अथवा किसी सज्जन से सम्बन्धित होता है।

६—इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का वर्णन होता है और इनमें कोई एक इसका फल होता है।

७—आरम्भ में नमस्कारात्मक, आशीर्वादात्मक और वस्तु निर्देशात्मक मंगलों में से कोई एक मंगल किया जाता है।

८—इसमें कहीं कहीं सज्जनों की स्तुति और दुष्टों की निन्दा रहती है।

९—इसमें न अत्यन्त छोटे और न अत्यन्त बड़े आठ या आठ से अधिक सर्ग होते हैं। एक सर्ग में प्रायः एक ही छन्द का प्रयोग होता है। सर्ग के अन्त में छन्द बदल जाता है। (किसी किसी महाकाव्य के सर्गों में विभिन्न छन्दों का भी प्रयोग होता है।)

१०—सर्ग के अन्त में आगामी सर्ग की कथा की सूचना रहती है।

११—इसमें प्रातः मध्याह्न, सायं, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, ऋतु, मृगया, वन, पर्वत आदि विषयों का वर्णन रहता है।

१२—कवि, कथानक, नायक अथवा अन्य किसी प्रधान वस्तु के नाम के अनुसार इसका नाम होता है।

उक्त विवेचन से महाकाव्य के लक्षण समझ में आ जाते हैं। प्रत्येक महाकाव्य में ये सम्पूर्ण गुण तो नहीं मिलते, पर 'सींग टूट जाने से बछड़ा गदहा नहीं हो जाता', के नियमा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नुसार इससे उसके महाकाव्यत्व में कोई कमी नहीं आती। हिन्दी में पृथ्वीराज रासो, रामचरित मानस, प्रियप्रवास, कामायनी, साकेत आदि महाकाव्य हैं।

खण्ड काव्य

साहित्य दर्पणाकार के मतानुसार महाकाव्य के एक देश या भाग के अनुसरण करने वाले काव्य को खण्ड काव्य कहा जाता है। (खण्ड काव्य भवेत्वकाव्यस्यैक देशानुसारिच)

कहने का भाव यह है कि इसमें महाकाव्यों के सारे गुण संक्षिप्त रूप में रहते हैं, अर्थात् इसमें कहानी और एकाङ्की नाटक की भाँति जीवन के एक चित्र पर ही प्रकाश डाला जाता है। चरित्र का विकास न दिखाकर उसे बने बनाये रूप में दिखाया जाता है सर्गों की संख्या कम रहती है। पात्र भी आवश्यकतानुसार कम दिखाये जाते हैं।

मुक्तक काव्य

वे सम्पूर्ण रचनाएँ, जो अपने अर्थ को पूर्ण रूप से प्रकट करने के लिए किसी दूसरे छन्द या पद की अपेक्षा नहीं रखती, मुक्तक काव्य के अन्तर्गत आती है। मुक्तक काव्य के प्रत्येक छन्द का पद में एक भाव पूरी तौर से वर्णित रहता है। उसके लिए पहले या बाद वाले किसी छन्द या पद की आवश्यकता नहीं होती। इसके दो भेद हैं—

१—प्रगीत, २—पाठ्य।

१—प्रगीत—इसमें संगीत की प्रधानता रहती है। इसका वर्ण्य विषय कवि की आत्मानुभूति से पुष्ट रहता है। सूरदास, मीराबाई, पन्त, महादेवी वर्मा के गीत इसी कोटि में आते हैं।

२—पाठ्य—ये प्रायः सूक्तियों के रूप में होते हैं। इसमें कवि साधारण नियमों की ओर निरपेक्ष भाव से संकेत सा करता है। भक्ति, नीति, शृंगार और वीरता विषयक मुक्तक इसी कोटि में आते हैं।

छन्द

क—प्रभात कैसा सुन्दर है! वृक्ष के पात-पात हिल रहे (हैं)।

ख— है कैसा सुन्दर यह प्रभात,
हिल रहे वृक्ष के पात-पात।

ऊपर 'क' तथा 'ख' भागों में एक ही बात कही गई है और शब्द भी एक से हैं, केवल कहने के प्रकार में अन्तर है। 'क' में वाक्यों में उद्देश्य पहले है और विधेय बाद में किन्तु 'ख' के वाक्यों में ऐसा कोई नियम नहीं है। 'क' के वाक्यों को सीधे-सादे ढङ्ग से कहा गया है। उन्हें हम गाकर नहीं पढ़ सकते। 'ख' के वाक्यों को गाकर पढ़ा जा सकता है। इसी अन्तर के कारण 'क' के वाक्यों को 'गद्य' और 'ख' को 'पद्य' कहा जाता है। इस प्रकार गद्य वह रचना है जिसमें उद्देश्य तथा विधेय क्रमपूर्वक होते हैं और जिन्हें गाया नहीं जा सकता, (जैसे 'क' के वाक्य) तथा पद्य वह रचना है जिसमें उद्देश्य तथा विधेय का कोई क्रम निश्चित नहीं होता और जिसे गाया जा सकता है (जैसे 'ख' के वाक्य)। पद्य में प्रधान रूप से रहने वाले गाने के इसी गुण को 'गति' या 'लय' कहा जाता है। इस प्रकार गति वह गुण है जिसके कारण कोई वाक्य गाने योग्य हो जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

क—उदति उदय-गिरि मंच पर, रघुवर बाल पतंग।
विकसे सन्त सरोज सब, हरषे लोचन भृङ्ग॥

ख—नृपन्ह केरि आसा-निसि नासी, बचन नषत अवली न प्रकासी।

ऊपर 'क' तथा 'ख' दोनों ही भाग गाकर पढ़े जाते हैं अतः उनमें गति है, किन्तु उनके गाने का ढंग अलग-अलग है। यह अन्तर उनमें प्रयुक्त अक्षरों की अधिकता तथा न्यूनता, और क्रम की भिन्नता आदि के कारण आया है। भाव यह है कि 'गति' युक्त होने पर भी वे अलग-अलग से हैं। यदि हम पारिभाषिक शब्द का सहारा लें, तो कह सकते हैं कि यह अन्तर छन्द के कारण ही है। अब हम छन्द शास्त्र में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों का विवेचन करेंगे।

छन्द—जिस रचना में वर्ण, मात्रा, गति, तुक आदि का ध्यान रखा जाता है, उसे छन्द कहते हैं।

वर्ण—अक्षर का ही दूसरा नाम है। जैसे—इ, क, ट। इसके दो भेद हैं—लघु और गुरु (ह्रस्व और दीर्घ)।

लघु—वे वर्ण हैं, जिनके बोलने में अपेक्षाकृत कम समय लगता है। इनको ही ह्रस्व कहा जाता है। अ, इ, उ, ऋ, चन्द्र बिन्दु (ँ) तथा ह्रस्व स्वरों की मात्राओं से युक्त सभी व्यंजन लघु होते हैं। जैसे—कु, ति, तृ।

गुरु—वे वर्ण हैं, जो बोलने में लघु की अपेक्षा अधिक समय लेते हैं। इनको दीर्घ कहा जाता है। आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अनुस्वार (ं), विसर्ग (:) और इनसे युक्त सभी व्यंजन गुरु कहे जाते हैं जैसे—का, तो, दुः।

छन्द शास्त्रों में लघु का चिह्न 'ा' और गुरु का चिह्न 'ऽ' है किसी वर्ण की लघुता अथवा गुरुता बताने के लिए ये चिह्न उसके ऊपर लगा देते हैं।

। ऽ ऽ ऽ।
जैसे—'इलाहाबाद' (इसमें दो लघु और तीन गुरु हैं)।

मात्रा—वर्णों को कहने में जो समय लगता है, उसे मात्रा कहते हैं। लघु वर्णों की एक मात्रा और गुरु वर्णों की दो मात्राएँ होती हैं। वर्णों के ऊपर लघु गुरु के चिह्न लगाने के बाद ही मात्राओं की गिनती की जाती है जैसे—

। ऽ ऽ ऽ। = १+२+२+२+१=८
जैसे—'इलाहाबाद' में ८ मात्राएँ हैं।

विशेष—(१) मात्रा का सम्बन्ध स्वरों से होने के कारण स्वर रहित व्यंजन की

ऽ । ऽ
कोई मात्रा नहीं होती। जैसे—'भास्कर' में 'स' की कोई मात्रा नहीं है।

(१) जब दो व्यंजन मिलते हैं तो उनसे पहले लघु वर्ण भी दीर्घ मा[ना जाता है] और उसकी दो मात्राएँ होती हैं। जैसे—'आविष्कार' में 'वि' 'ष्क' के पहले आने के कारण दीर्घ है और उसकी दो मात्राएँ हैं।

वास्तव में लघु गुरु का निर्णय उच्चारण के अनुसार होता है यदि संयुक्ताक्षर से पहले के वर्ण पर उच्चारण के समय संयुक्ताक्षर के कारण कोई भार नहीं पड़ता, तो पहले वाला लघु ही रहता है दीर्घ नहीं होता जैसे 'तुम्हें' में 'तुम' लघु ही है दीर्घ नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसी प्रकार उच्चारण के अनुसार दीर्घ वर्णों को भी लघु माना जाता है जैसे—'मम जनि कहि तोहि रही मिताई, तब हित कारन आयेउ भाई।' में 'तोहि' और 'आयेउ' के 'तो' और 'ये' गुरु होने पर भी उच्चारण के कारण लघु ही माने जायेंगे।

पद के अन्त का लघु वर्ण भी जब बल देकर पढ़ा जाता है तब गुरु हो जाता है जैसे—'गाया चरित इसका उसने ललामा' में अन्त का 'म' लघु होते हुये भी गुरु ही है।

पद—प्रत्येक छन्द के कम से कम चार भाग हुआ करते हैं। इनमें प्रत्येक भाग को पद, पाद अथवा चरण कहते हैं, जैसे—

मूक होंइ वाचाल, पंगु चढ़इ गिरवर गहन।
जासु कृपा सुदयाल, द्रवउ सकल कलि मल दहन॥

यहाँ 'मूक होंइ वाचाल' 'पंगु चढ़इ गिरवर गहन' 'जासु कृपा सुदयाल' औ 'द्रवहु सकल कलि मल दहन' ये चार पाद हैं।

विशेष—'छप्पय' आदि में चार से अधिक पद होते हैं।

यति—छन्दों को पढ़ते समय बीच बीच में कुछ 'रुकना पड़ता है। इसी रुकने के स्थान को यति अथवा विराम कहते हैं। यति के चिह्न (,) (।) और (॥) हैं। पद में आये हुए भाव को स्पष्ट करने के लिए कभी कभी प्रश्न वाचक (?) विस्मयादि बोधक (!) चिह्नों का प्रयोग भी यति के स्थान पर हो जाता है।

तुक—छन्द में पदों के अन्त के अक्षरों की समानता को तुक कहते हैं। अन्त्यानुप्रास भी इसी का नाम है। जैसे—ऊपर के छन्द में 'गहन' और 'दहन' में तुक है।

तुक के लिए पद के अन्त में आदि के स्वर सहित व्यंजन की समानता आवश्यक है। केवल व्यंजन की समानता पर्याप्त नहीं होती। जैसे—'मारा और पजारा' 'कानी और पानी' में से तो क्रमशः 'आरा' और 'आनी' की समानता के कारण तुक है, किन्तु 'खाया और गया' में 'या' व्यजन की समानता होने पर भी उनके पहले के 'आ' तथा 'अ' स्वरों की समानता न होने से तुक नहीं है।

किन्हीं छन्दों में तुक होती है और किन्हीं में नहीं होती। तुक वाले छन्दों को 'तुकान्त' और तुक रहित छन्दों को 'अतुकान्त' कहते हैं। जैसे—

तुकान्त—

मूक होंइ वाचाल, पंगु चढ़इ गिरवर गहन।
जासु कृपा सुदयाल, द्रवउ सकल कलिमल दहन॥

अतुकान्त—

रोता होता विकल अति ही एक अभीर बूढ़ा,
दीनों के से बचन कहता अक्रूर आया।

गण—तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। ये आठ हैं—

(१) यगण, (२) मगण, (३) तगण, (४) रगण, (५) जगण, (६) भगण (७) नगण, (८) सगण। इन गणों के नाम और रूप 'यमाताराजभानसलगा। सूत्र से सरलता से ज्ञात हो जाता है। इसमें आदि के ८ वर्ण गणों के नाम हैं। हमें जिस गण का रूप जानना हो उस वर्ण को और उसके बाद के दो वर्णों को मिलाकर लिख लेना चाहिये। इन्हीं वर्णों के ऊपर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नियमानुसार गुरु, लघु चिन्ह लगाने से उस गण का रूप ज्ञात हो जाता है। जैसे—तगण का रूप जाना है। 'ता' के आगे के दो वर्ण 'रा' और 'ज' को लिखकर गुरु लघु चिन्ह लगाने से 'ताराज' 'ऽऽ।' हुआ अतः तगण का रूप 'ऽऽ।' है। सम्पूर्ण गुणों का स्वरूप निम्न प्रकार है—

नाम	स्वरूप	उदाहरण
यगण	।ऽऽ	यशोदा, यमाता
मगण	ऽऽऽ	नानाजी, मातारा
तगण	ऽऽ।	राकेश, ताराज
रगण	ऽ।ऽ	भानजा, राजभा
जगण	।ऽ।	सुरेश, जभान
भगण	ऽ।।	मानस, भानस
नगण	।।।	नगर, नसस
सगण	।।ऽ	सजला, सलगा

वर्ण और मात्रा की दृष्टि से छन्द दो प्रकार के होते हैं—(१) वर्णिक (२) मात्रिक।

वर्णिक:—वे छन्द हैं, जिनमें वर्णों की संख्या और नियम का ध्यान रखा जाता है।

मात्रिक—वे छन्द हैं, जिनमें मात्राओं की संख्या और नियम का ध्यान रखा जाता है।

छन्दों की संख्या अगणित है। कुछ मुख्य-मुख्य छन्द नीचे लिखे जाते हैं।

वर्णिक छन्द

(१) इन्द्रवज्रा—(चार चरण, त, त, ज, ग, ग,) इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, जगण, और अन्त में दो गुरु होते हैं। यति पादान्त में होती है।

जैसे—

त त ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

तू मंगला मंगल कारिणी है, सद्भक्त के धाम विहारिणी है।
माता ! सदा पूर्ण पिता समेता, कीजै हमारे चित में निकेता ॥

(२) द्रुतविलम्बित—(चार चरण, न, भ, भ, र) इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, और रगण होते हैं। यति पादान्त में होती है।

इस लक्षण को इस प्रकार से भी कहा जा सकता है—

१२ वर्ण वाले इसके प्रत्येक चरण में ४, ७, १०, १२ वर्ण गुरु तथा शेष लघु होते हैं। यति पादान्त में होती है। जैसे—इसका लक्षण और उदाहरण इस सूत्र में इस प्रकार है—

न भ भ र

। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ।

द्रुतविलम्बित है जुनभा भरा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्य उदाहरण—

न भ भ र

। । । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ

सरसता-सरिता जयिनी जहाँ, नवनबां नवनीत पदावली।
तदपि हा वह भाग्य विहीन की, सुकविता कवि-ताप करी हुई ॥

(३) **बसन्ततिलका**—(चार चरण, त, भ, ज, ज, ग, ग) इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण और अन्त में दो गुरु होते हैं। यदि पादान्त में होती है।

इस लक्षण को इस प्रकार भी कहा जा सकता है।

इसके १४ वर्ण वाले प्रत्येक चरण में १, २, ४, ८, ११, १३, १४, वर्ण गुरु तथा शेष लघु होते हैं। यदि पदान्त में होती है।

इसका लक्षण और उदाहरण इस सूत्र में देखिए—

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ ऽ

गाओ बसन्त तिलकात भजा ज गागा

अन्य उदाहरण—

त भ ज ज ग ग

ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ

फूले हुए कुमुद देखो सरोवरों में, माधों सु उक्ति यह थे सबको सुनाते।
उत्कर्ष देख निज गोदपले शशी का, है वारि-राशि मिस कैरव हृष्ट होता ॥

(४) **मालिनी**—(चार चरण, न, न, म, य, य) इसके १५ वर्णों के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, नगण, मगण, यगण यगण, होते हैं, और प्रत्येक चरण के आठवें वर्ण तथा पदान्त में यति होती है।

इस लक्षण को इस प्रकार भी लिखा जा सकता है—इसके १५ वर्ण वाले प्रत्येक चरण में ७, ८, ९, ११, १२, १४, १५, वर्ण गुरु तथा शेष लघु होते हैं। यति आठवें वर्ण तथान्त में होती है।

न न म य य

। । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ

सहृदय धन के जो, कंठ का हार होता,
मुदित मधुकरी का, जीवनाधार होता।
वह कुसुम रंगीली, धूप में जा पड़ा है,
नियति नियम तेरा भी बड़ा ही कड़ा है ॥

इसका लक्षण और उदाहरण इस सूत्र में देखिए—

न न म य य

। । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ

न न म य य जुटा के मालिनी शुभ्र गाओ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(५) **मन्दाक्रान्ता**—(चार चरण, म, भ, न, त, त, ग, ग) इसमें १७ वर्णों के प्रत्येक चरण में क्रमशः मगण, भगण, नगण, दो तगण तथा दो गुरु होते हैं। यति ४, १० तथा १७ वर्णों पर होती है। जैसे—

इसके लक्षण को इस प्रकार भी लिख सकते हैं—इसके १७ वर्णों के प्रत्येक चरण में १, २, ३, ४, १०, ११, १३, १४, १६, १७, वर्ण गुरु तथा शेष लघु होते हैं। यति चौथे, दसवें तथा सत्रहवें वर्ण पर होती है। जैसे—

म भ न त त ग ग

S S S S । । । । । S S । S S । S S

जो मैं कोई, विहग, उड़ता, देखती व्योम में हूँ,
तो उत्कंठा, वश विवश हो, चित्त में सोचती हूँ।
होते मेरे, निबल तन में, पक्ष जो पँछियों से।
तो यों ही में, समुद उड़ती, श्याम के पास जाती।

इसका लक्षण और उदाहरण इस सूत्र में देखिये—

म भ न त त ग ग

S S S S । । । । । S S । S S । S S

मन्दाक्रान्ता म भ न त त गा गा श्रुती ४ राग ६ बाजी ७।

(६) शिखरणी—(चार चरण, य, म, न, स, भ, ल, ग) १७ वर्णों के इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, तथा अन्त में लघु और गुरु होते हैं। छठे वर्ण तथा पदान्त में यति होती हैं।

इसके लक्षण को इस प्रकार से भी लिखा जा सकता है—

इसके १७ वर्णों के प्रत्येक चरण में २, ३, ४, ५, ६, १२, १३, १७ वर्ण गुरु तथा शेष लघु होते हैं। यति छठे वर्ण तथा पादान्त में होती है। जैसे—

य म न स भ ल ग

। S S S S S । । । । । S । । । । S

छटा कैसी प्यारी, प्रकृति तिय के चन्द्र मुख की,
नया नीला ओढ़े, बसन चटकीला गगन का।
जारी सल्मा रूपी, जिस पर सितारे सब पड़े,
गले में स्वर्गगा, अतिललित माला सम पड़ी।

इसका लक्षण तथा उदाहरण इस सूत्र में देखिए—

य म न स भ ल ग

। S S S S S । । । । । S S । । । S

रस ६ स्थाण ११ युक्ता य म न सम लागा शिखरिणी।

(७) **सवैया**—(चार चरण, २१ से २६ वर्ण) यह २१ वर्णों से लेकर २६ वर्णों तक कई प्रकार की होती है। इसमें चार चरण होते हैं जिसमें तुक अवश्य मिलती है। यदि अन्त के दो एक वर्णों को छोड़कर सबमें दो लघु और एक गुरु की आवृत्तियाँ अवश्य होती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसमें गुरु लघु का निर्णय उच्चारण के अनुसार ही होता है। लिखने के अनुसार नहीं। यहाँ हम कुछ प्रमुख सवैया के लक्षण तथा उदाहरण लिख रहे हैं—

मदिरा—(चार चरण, सात भगण (ऽ।।) अन्त में एक गुरु) २० वर्णों के प्रत्येक चरण में सात भगण (ऽ।।) तथा अन्त में एक गुरु आने से मदिरा सवैया, होती है, जैसे—

भ भ भ भ भ भ भ ग
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ
सिन्धु तरो उनको बनरा तुम पै धनु रेख गई न तरी।
बानर बाँधत सो न बध्यौ उन वारिधि बाँध कै बाट करी।
श्री रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हें दस कंठ न जानि परी।
तेलहु तूलहु पूँछ जरी, न जरी जरि लंक जराइ जरी॥

अथवा

भ भ भ भ भ भ भ ग
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ
माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुख दायक है।

मत्तगयन्द—सवैया—(चार चरण, सात, भगण (ऽ ।) अन्त में दो गुरु। २३ वर्णों के प्रत्येक चरण में ७ भगण (ऽ । ।) अन्त में दो गुरु आने से मत्तगयन्द सवैया होती है जैसे—

भ भ भ भ भ भ भ ग ग
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ =२३ वर्ण
या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारों।
आठहुँ सिद्धि नवौं निधि को सुख नन्द की गाय चराय बिसारों।
खान कहै इन नैनन तें ब्रज के वन बाग तड़ाग निहारों।
कोटिन हूँ कल धौत के धाम करील की कुञ्जन ऊपर वारों॥

अथवा

भ भ भ भ भ भ भ ग ग=२३ वर्ण
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ
भा रख सात रखो गुरु दो कह लो तुम मत्तगयन्त सवैया।

अथवा

भ भ भ भ भ भ भ ग ग=२३ वर्ण
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ
माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुख दायक हैं जू।

विशेष—मदिरा के चरण के अन्त में एक गुरु बढ़ा देने से मत्तगयन्द सवैया हो जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुमुखी—(चार चरण, सात जगण (।ऽ।) अन्त में एक लघु तथा एक गुरु, २३ वर्णों के प्रत्येक चरण में ६ जगण (।ऽ।) तथा अन्त में एक लघु तथा एक गुरु आने से सुमुखी सवैया होती है। जैसे—

ज ज ज ज ज ज ज ल ग

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ =२३ वर्ण

हिय वन माल रसाल धरे सिर मौर किरीट महा लसिबौ ।
कसे कटि पीत पटी लकुटी कर आनन पै मुरली वसिबौ ।।
कलिन्दिनि तीर खड़े बलबीर सुबालन की गहि बाँह सबौ।
सदा हमरे हिय मन्दिर में यहि बानक सों करिये बसिबौ ।।

अथवा

ज ज ज ज ज ज ज ल ग=२३ वर्ण

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ

ज सात लघू गुरु हैं सुमुखी मनमोद करी अति ही सुखदा ।

अथवा

ज ज ज ज ज ज ज ल ग= २३ वर्ण

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ

उ माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुख दायक है।

विशेष—मदिरा के चरण से पहले एक लघु जोड़ने से सुमुखी सवैया बनती है।

सुन्दरी—(चार चरण, आठ सगण (। । ऽ) अन्त में एक गुरु) २५ वर्णों के प्रत्येक चरण मे आठ सगण (। । ऽ) तथा अन्त में एक गुरु आने से सुन्दरी सवैया होती है। जैसे—

स स स स स स स स ग=२५ वर्ण

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

हम दीन दरिद्र हुताशन में, दिन रात पड़े दहते रहते हैं।
बिन मेल विरोध महानद में, मन वोहित से बहते रहते हैं ।।
कवि शंकर काल कुशासन की फटकार कड़ी सहते रहते हैं।
पर भारत के गत गौरव की अनुभूत कथा कहते रहते रहते हैं ।।

अथवा

स स स स स स स स ग=२५ वर्ण

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

स रखो तुम आठ मिला गुरु एक तभी शुभ सुन्दरि छन्द बनाओ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अथवा

स स स स स स स स ग=२५ वर्ण

। । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

प्रिय माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुख दायक है जू ।

विशेष—मदिरा के चरण से पूर्व दो लघु तथा अन्त में एक गुरु जोड़ने से सुमुखी सवया बनती है ।

(८) **कविता या मनहर**—(चार चरण ३१ वर्ण, अन्त में गुरु) इसमें ३१ वर्णों के चार चरण होते हैं । चरण के अन्त में एक गुरु (ऽ) अवश्य होता है । १६ और १५ पर यति होती है । ८, ८, ८ और ७ पर यति होने से यह छन्द अधिक मनोहर होता है । जैसे—

बरन बरन तरु फूले उप बन बन,
सोई चतुरङ्ग संगदल लहियत है ।
बन्दी जिमि बोलत बिरद वीर कोकिल हैं,
गुँजत मधुप गान गुन गहियत है ॥
आवे आस पास पुहुपन की सुबास सोई,
सौंधे के सुगन्ध माँझ सने रहियत है ।
सोभा कौं समाज सेनापति सुख साज आज,
आवत बसन्त रितुराज कहियत है ॥

अथवा

श्याम को यहाँ निरख, श्याम को वहाँ निरख,
श्याम को निरख अरी, श्याम को निरखरी । ८+८+८+७=३१ वर्ण

मात्रिक छन्द

(१) **बरवै**—(चार चरण, १२, ७, १२, ७ मात्राएँ) इसके पहले और तीसरे चरणों में १२ मात्राएँ और दूसरे तथा चौथे चरणों में ७ मात्राएँ होती हैं । दूसरे और चौथे चरणों के अन्त में जगण (। ऽ ।) आने से इसकी सुन्दरता बढ़ जाती है ।

। । । । ऽ ऽ । । । ।
अवधि शिला का उर पर=१२ मात्रायें
ऽ । । ऽ ।
था गुरु भार=७ मात्राएँ (अन्त में जगण)
। । । । ऽ । । ऽ ऽ
तिल तिल काट रही थी=१२ मात्राएँ
। । । । ऽ ।
दृग जल धार ।=७ मात्राएँ (अन्त में जगण)
। । ऽ । । ऽ ऽ । ।
अथवा बरवै पहिले बारह=१२ मात्राएँ
ऽ । । ऽ ।
दूसर सात=७ मात्राएँ (अन्त में जगण)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

S S S S S I I
तीजे में हो बारह=१२ मात्राएँ
S I I S I
चौथहु सात=७ मात्राएँ (अन्त में जगण)

(२) दोहा—(चार चरण, १३, ११, १३, ११ मात्राएँ)। इसके पहले और तीसरे चरणों में १३, १३ मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे चरणों में ११, ११ मात्राएँ होती हैं। पहले और तीसरे चरणों के आदि में जगण (I S I) नहीं होता। दूसरे और चौथे चरण के अन्त में लघु होता है और तुक भी होती है। जैसे—

I I I I I I I I S I I I
कहि न सकत रघुबीर डर,=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ISI नहीं है)
I S I I I I I S I
लगे वचन जनु बान।=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)
S I S I I I I I I I I
नाइ राम पद कमल सिरु=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ISI नहीं है।)
S S I S I S I
बोले गिरा प्रमान॥=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)
S S I I I S S I I
अथवा-दोहा प्रथमहिं तेरह=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ISI नहीं है)
S S S I S I I
दूजे में गयारह।=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)
S S S I I S I S
तीजे तेरह ही रहें,=१३ मात्राएँ (आदि में जगण नहीं है)
S S S I S I I
चौथे में गयारह॥=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक हैं)

(३) सोरठा—(चार चरण, ११, १३, ११, १३ मात्राएँ) यह दोहे का उल्टा होता है। इसके पहले और तीसरे चरणों में ११, ११ मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे चरणों में १३, १३ मात्राएँ होती हैं। दूसरे और चौथे चरणों के आदि में जगण (ISI) नहीं होता। पहले और तीसरी चरणों के अन्त में लघु होता है और तुक भी होती है, जैसे—

S I I I I I I S I
वंदउँ गुरु पद कंज=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)
I S S I I I S I I I
कृपा सिंधु नर रूप हरि=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ISI नहीं है।)
I S S I I I S I
महा मोहतम पुंज=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)
S I I I I I I I I I I I
जासु वचन रवि कर निकर=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ISI नहीं है)
I I S S I S I I
अथावा-पहले में गयारह=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऽ। ऽ ऽ ऽ ऽ । ।
सोरठा दूजे तेरह=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ।ऽ। नहीं है)

ऽ ऽ ऽ । ऽ । ।
तीजे में गयारह=११ मात्राएँ (अन्त में लघु और तुक है)

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । ऽ
चौथे तेरह ही रहें=१३ मात्राएँ (आदि में जगण ।ऽ। नहीं है)

(४) **उल्लाल**—(चार चरण, १३ मात्राएँ) इसके प्रत्येक चरण में १३ मात्राएँ होती हैं। यति आठवी तथा पाँचवी मात्राओं पर होती है। जैसे—

। । ऽ ऽ । । ऽ । । ।
यदि चाहो सुख, को करन,=८+५=१३ मात्राएँ
तो भज लो हरि, के चरन ८ ,, ,, ,,
वे ही हैं सब, की सरन, ,, ,, ,,
सरना () गत के, दुख हरन ।। ,, ,,

अथवा

ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ।
उल्लाला आ, ठरु पाँच=८+५=१३ मात्राएँ

(५) **चौपाई**—(चार चरण, १६ मात्राएं, अन्त में ऽ। न हो)

इसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ, होती हैं। चरण के अन्त में लघु गुरु ऽ। नहीं होता। जैसे—

। । । । । । । । ऽ । । ऽ ऽ=१६ मात्राएँ।
खल वधि तुरत फिरे रघुवीरा, सोहे चाप कर कटि तूनीरा।
आरत गिरा सुनी जब सीता, कह लछिमन सन परम सभीता।।
ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ=१६ मात्राएँ
सोलह मात्रा की चौपाई, सब बुध काव्य पुरानन गाई।

(६) **रोला**—(चार चरण, ११+१३=२४ मात्राएँ) इसके प्रत्येक चरण में २४ मात्राएँ होती हैं। ११ और १३ मात्राओं पर यति होती है।

। । । । ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ । ।=११+१३=२४ मात्राएँ
पर सहसा यह रूप, देख होता है विस्मय,
आर्य लोग क्या एक समय थे ऐसे निर्भय।
क्या हम सब जो आज बने हैं निर्बल कामी,
रहते थे स्वाधीन समर में होकर नामी।।

अथवा

। ऽ । । ऽ । । । । । । ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ=११+१३=२४ मात्राएँ
गयारह तेरह यति, कला चौबिस रोला में।

७—**कुण्डलियाँ**—(छः चरण २४ मात्राएँ) इसमें छः चरण होते हैं। आदि में एक दोहा और बाद में रोला जोड़ने से यह छन्द बन जाता है। दोहा का अन्तिम चरण रोला

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के प्रथम चरण के आदि में आता है। अधिकाँश में जो शब्द इसके आदि में होता है, वही इसके अन्त में आता है, जैसे—

नाहीं भली गुलाब तू गुनि मधुकर गुन्जार ॥
यह बहार दिन चार की, बहुरि कटीली डार ॥ } यह
बहुरि कटीली डार होहिगी ग्रीषम आये ।
लुवैं चलेंगीं संग, अंग सब जै है ताये ॥
बरनै 'दीन दयाल' फूल जौलों तो पाही ।
रहे घेरि चहुँ ओरि, फेरि अलि ऐहैं नाहीं ॥ } रोला

(८) छप्पय—इसमें ६ चरण होते हैं। ये दो प्रकार का होता है :—

प्रथम प्रकार का छप्पय—(२४, २४, २४, २४, २८ मात्राएँ)

इसमें प्रथम चार चरण रोला (अर्थात् ११, १३ की यति से युक्त २४ मात्राओं) के और अन्तिम दो चरण प्रथम प्रकार के उल्लाल (अर्थात् १५, १३ की यति से २८ मात्राओं) के होते हैं। जैसे—

S S । । । । S । । । । । । । । S । । S
नीलाम्बर परिधान, हरित पट पर सुन्दर है ।=१३+११=२४ मात्राएँ
S । S । । । । । । S । S S S । । S
सूर्य चन्द्र युग मुकट, मेखला रत्नाकर है ॥=२४ मात्राएँ
। । S S । । S । S । S S S । । S
नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मंडल हैं ।=२४ मात्राएँ } रोला
S S । । । । S । S । । S S । । S
बन्दीजन खग वृन्द, शेष फल सिंहासन है ।=२४ मात्राएँ
। । S । । S । । S । S । । S S । । S । S
करते अभिषेक पयोद में बलिहारी इस देश की ।=१५+१३=२८मा०
S S । S । S S । S । । । S । । S । S
है मातृभूमि तू सत्य ही, सगुण मूर्ति सर्वेश की ।=२८ मात्राएँ } उल्लाल

दूसरे प्रकार का छप्पय—(२०, २४, २४, २४, २६, २६) इसमें पहले चार चरण रोला (अर्थात् ११, १३ की यति से युक्त २४ मात्राओं) के और अन्तिम दो दूसरे प्रकार के उल्लाल (अर्थात् १३, १३ की यति से युक्त २६ मात्राओं) के होते हैं। जैसे—

। । S । । । । S । । S । । । । । । S S
२—जिहि मुच्छन धरि हाथ कछु जग सुजस न लीनों=१३+११=२४ मात्रायें } रोला
जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू पर काज न कीनों।
जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू पर पीर न जानी,
जिहि मुच्छन धरि हाथ, दीन लखि यार न आनी ॥
S । S । S S । । । । । । । । S । । S । S
मुच्छ नाँहि तें पुच्छ सम कवि भर पी उर आनि ए=१३+१३=२६ मात्राएँ } उल्लाल
"वचन लाज नहीं दान गति, तिहि मुख मुच्छ न मानिए ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अथवा

ऽ । ऽ ऽ ऽ । । । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ=१४+१२=२६

गीतिका में रत्न १४ रवि १२ योत, 'लगअन्त में है भला'। मात्राएँ (अन्त में ।ऽ)

अथवा

ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ=१४+१२=२६ मात्राएँ (अन्त

दुर्जनों से तुम अचानक मेल को करना नहीं में ।ऽ)

(९) रूप माला—इसमें चौबीस मात्राएँ होती हैं। अन्त में नियम से क्रमशः एक गुरु और एक लघु होता है। चौदह और दस पर यति होती है। जैसे—

ऽ । ऽ ऽ ऽ । । । ऽ ऽ । । । ऽ ऽ ।

घूमता था भूमि तल को अर्ध विधु सा भाल ।=१४+१०=२४ मात्राएँ

खिल रहे थे प्रेम के दृग, जाल बन कर वाल ॥ (अन्त में ऽ।)

छत्र सा सिर पर उठा था, प्राणपति का हाथ।

हो रही थी प्रकृति अपने, आप पूर्ण सनाथ ॥

अथवा

ऽ । ऽ ऽ ऽ । । । । । । ऽ । ऽ ऽ ऽ ।=२४ मात्राएँ।

रूपमाला रत्न दिशि यति अन्ते सोहै गाल (अन्त में ऽ।) अथवा

ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ ।=१४+१०=२४ मात्राएँ

दुर्जनों से तुम अचानक मेल को करना नहीं। (अन्त में ।ऽ)

(१०) गीतिका—इसमें छब्बीस मात्राएँ होती हैं। अन्त में क्रमशः लघु गुरु होता है चौदह और बारह पर यति होती है। इनकी तीसरी, दसवीं और चौबीसवीं मात्राएँ लघु रहती हैं। जैसे—

ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ=१४+१२=२६ मात्राएँ

साधु भक्तों में सुयोगी संयमी बढ़ने लगे।

सभ्यता की सीढ़ियों पै सूरमा चढ़ने लगे ॥

वेद मन्त्रों को विवेकी, प्रेम से पढ़ने लगे।

वंचकों की छातियों में शूल से गढ़ने लगे ॥

(११) हरिगीतिका—इसमें १६ और १२ के विराम से प्रत्येक चरण में २८ मात्राएँ होती हैं। चरण के अन्त में एक लघु और एक गुरु वर्ण अवश्य होता है। इसकी गति ठीक रखने के लिए प्रत्येक चरण की पाँचवी, बारहवीं उन्नीसवीं और छब्बीसवीं मात्राओं को लघु रक्खा जाता है, जैसे—

। । ऽ । ऽ ऽ । । । । ऽ । । । । । ऽ । । ऽ । ऽ

मन जाहि राचेउ मिलहि सो वरु सहज सुन्दर साँवरो=१६+१२=२८ मात्राएँ।

करुनानिधानु सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो ॥

इहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हरषित अली ॥

तुलसी भवानिहि पूजि पुनि-पुनि मुदित मन मन्दिर चली। अथवा

। । ऽ । ऽ ऽ ऽ । । । । । ऽ । । । । । ऽ । ऽ=१६+१२=२८ मात्राएँ

हरि गीतिका शृंगार रवि यति, अन्त में लग गाइये अथवा

। । ऽ । ऽ ऽ । । । ऽ । । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ=१६+१२=२८ मात्राएँ

प्रिय दुर्जनों से तुम अचानक मेल को करना नहीं। (अन्त में ।ऽ)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्णिक छन्दों का चक्र

छन्द का नाम	पदों की संख्या	प्रत्येक पाद में वर्णों की संख्या	लक्षण	उदाहरण	यति
१—इन्द्रवज्रा	४	११	ता ता ज गा गा कह इन्द्रवज्रा (३, ६ ७, ९ लघु वर्ण अन्य गुरु)	राम सदा ही शुचि कान्ति शाली।	पादान्त
२—द्रुतविलम्बित	४	१२	द्रुत विलम्बित है जु न भा भरा (४ ७, १०, १२, वर्ण गुरु अन्य लघु)	यही उदाहरण भी है	पादान्त
३—वसन्ततिलका	४	१४	गाओ बसन्ततिलका त भ जा ज गागा ३, ५, ६, ७, ९, १०, १२ वर्ण लघु (अन्य गुरु)	यही उदाहरण है	„
४—मालिनी	४	१५	न न म य य जुड़ा के मालिनी शुभ्र गाओ।	यही उदाहरण है	पादान्त
५—मन्दाक्रान्ता	४	१७	मन्दाक्रान्ता मभन तत गा गा श्रुती राग बाजी	„	४ १०, १७वें वर्ण
६—शिखरिणी	४	१७	रस स्थाण युक्त यमनसम लागा शिखरिणी	„	६, १७ वें वर्ण

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छन्द का नाम	पदों की संख्या	प्रत्येक पाद में वर्णों की संख्या	लक्षण	उदाहरण
७—मदिरा सवैया	४	२२	७ भगण (ऽ । ऽ)+१ गुरु भा रख सात रखो गुरु एक रचो मदिरा शुभ मोद मयी	माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुख दायक है
८—मत्तगयन्द सवैया	४	२३	७ म ग ण+२ गुरु भा रख सात रखो गुरु दो कहलो तुम मत्त गयन्द सवैया	माधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुखदायक जू
९—सुमुखी	४	२३	७ ज ग ण (। ऽ ।)+। ऽ ज सात लघु गुरु है सुमुखी, मनमोद करी अति ही सुखदा।	उमाधव नाम महा शुभ है सब भाँति सदा सुखदायक है।
१०—सुन्दरी	४	२५	आठ सगण (। ऽ ।)+ऽ, स रखो तुम आठ मिला गुरु एक तभी शुभ सुन्दरि छन्द बनाओ।	प्रिय माधव नाम महा शुभ है, सब भाँति सुखदायक है जू।
११—कवित्त या मनहर	४	३१	३१ वर्ण के चरण में १६, १५ पर या!, ८, ८, ८, ७ पर यति होती है (अन्त में एक गुरु अवश्य होता है।)	श्याम को यहाँ निरख श्याम को वहाँ निरख श्याम को निरख अरी श्याम को निरखरी

विशेष;—उक्त लक्षणों का विवरण तथा उदाहरणों का स्पष्टीकरण पुस्तक में देखिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मात्रिक छन्दों का चक्र

छन्द-नाम	पदों की संख्या	प्रत्येक पाद में मात्राओं की संख्या	लक्षण	उदाहरण	प्रत्येक पाद में यदि वाली मात्राओं की संख्या
१—बरवै	४	विषय में १२ सम में ७	बरवै पहिले बारह दूजे सात । तीजे में हों बारह, चौथउ सात ॥	यही उदाहरण भी है ।	पादान्त
२—दोहा	४	विषम में १३ सम में ११	दोहा-प्रथमहि तेरह, दूज में गयारह । तीजे तेरह ही रहें चौथे ग्यारह ॥ विषम चरणों के आदि में जगण (।ऽ।) नहीं होता सम चरणों के अन्त में लघु तथा तुक होती है ।	यही दाहरण भी है ।	पादान्त
३—सोरठा	४	विषम में ११ सम में १३	पहले में गयारह, सोरठा दूजे तेरह । तीजे में गयारह, चौथे तेरह की रहें ॥ सम चरणों के आदि में जगण (।ऽ।) नहीं होता, विषम चरणों के अन्त में लघु तथा तुक होती है ।	यही उदाहरण भी है ।	पादान्त
४—उल्लाला	४	१३	उल्लाला आठ रु पांच	,,	८ तथा १३
५—चौपाई	४	१६	सोलह मात्रा की चौपाई, सब बुध काव्य पुरानन गाई । चरण के अन्त में गुरु लघु (ऽ।) नहीं होता ।	यही उदाहरण भी है ।	पादान्त

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छन्द-नाम	पदों की संख्या	प्रत्येक पाद में मात्राओं की संख्या	लक्षण	उदाहरण	प्रत्येक पाद में यति वाली मात्राओं की संख्या
६—रोला	४	२४	ग्यारह तेरह, यति, कला चौबीस रोला में।	यही उदाहरण भी है।	११, १३ वीं
७-कुण्डली	६	२४	दोहा तथा रोला को जोड़ने से यह छन्द बनता है दोहा का अन्त और रोला का आदि तथा दोहा का आदि और रोला का अन्त मिलता है।	उदाहरण पुस्तक में देखिए	दोहा तथा रोला के अनुसार
८-छप्पय	६	२४,२४,१४ २४,२८,२८	इतनी मात्राएं होनी चाहिए	"	पहले चार में १३, ११ अन्तिम दो १५, १३
"	६	२४,२४,२४ २४,२६,२६		"	पहले चार में १३, ११ अन्तिम दो में १३, १३
९-रूपमाला	४	२४	रूप माला रतन दिसि अन्त सोहै गाल।	दुर्जनों से तुम अचानक, मेल को करना न।	१४, १०
१०-गीतिका	४	२६	गीतिका में रत्न रवि यति, लघ अन्त में है भला।	दुर्जनों से तुम अचानक मेल को करना नहीं।	१४, १२
११-हरिगीतिका	४	२८	हरि गीतिका शृङ्गार रवि यति अन्त में लग गाइये।	प्रिय दुर्जनों से तुम अचानक मेल को करना नहीं।	१६, १२

विशेष :—इन लक्षणों तथा उदाहरणों का विवेचन पुस्तक में देखिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अशुद्ध संशोधन विचार

शुद्ध लिखना 'रचना' का एक प्रधान तथा आवश्यक अंग है। यदि हम अपने उच्चारण को ठीक करलें और उसके अनुसार लिखने लगें, तो हम इन अशुद्धियों से बच सकते हैं। इसके लिए हमें पुस्तकें आदि पढ़ते समय उनके उच्चारण पर विशेष, ध्यान देना चाहिए, और लिखते समय इस प्रकार अभ्यस्त उच्चारण के अनुसार ही लिखना चाहिये। हमारी देवनागरी लिपि इस विषय में अत्यन्त ही पूर्ण तथा वैज्ञानिक है, क्योंकि इसमें उच्चारण के अनुसार लिखा जा सकता है, परन्तु असावधानी तथा अज्ञानता से निम्न प्रकार की अशुद्धियाँ हो जाया करती हैं।

१—संज्ञा सम्बन्धी, २—सर्वनाम सम्बन्धी, ३—विशेषण तथा क्रियाविशेषण सम्बन्धी, ४—क्रिया सम्बन्धी, ५—अव्यय सम्बन्धी, ६—वर्ण और मात्रा सम्बन्धी, ७—समास सबन्धी, ८—प्रत्यय सम्बन्धी, ९—पुनरुक्ति सम्बन्धी, १०—लिंग सम्बन्धी ११—वचन सम्बन्धी, १२—विभक्ति सम्बन्धी।

संज्ञा सम्बन्धी अशुद्धियाँ

भाषा में एक संज्ञा की बहुत सी समानार्थक संज्ञायें प्रयुक्त होता हैं। अर्थ की दृष्टि से उनमें समानता होने पर भी भाव की दृष्टि से उनमें भिन्नता रहती है, अतः प्रयोग करते समय प्रसंग के अनुकूल भाव वाली संज्ञाओं का ही प्रयोग करना चाहिये। प्रसंग के विरुद्ध भाव वाली संज्ञाओं के प्रयोग से भाषा में दोष आ जाता है। साधारण तौर से 'समीर' और 'प्रभञ्जन' वायु के 'पर्याय' वाचक हैं, किन्तु 'मन्द वायु' के लिए समीर का और आंधी के लिए प्रभञ्जन का प्रयोग ही ठीक होगा। कुछ तद्भव शब्द भी अपने मूल शब्द से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। 'गाभिन' शब्द 'गर्भिणी' से बना है, किन्तु 'गाभिन' का प्रयोग पशु जाति के लिए और 'गर्भिणी' का मानव जाति के लिए होता है। एक ही अर्थ वाले शब्दों से बनी दो संज्ञाएँ भी भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होती हैं। चारपाई 'चौपाई' और 'चौपाया' का भेद कौन नहीं जानता। कहने का तात्पर्य है कि संज्ञाओं का प्रयोग करने से पहले उनके भाव पर विचार कर लेना चाहिए।

कुछ वस्तुओं और कार्यों के लिए भाषा में कुछ नियम होते हैं, जैसे—शंका समाधान, समाचार पत्र का सम्पादन, दीपक का टिमटिमाना, आँखों का चौंधियाना, नाव का डगमगाना, साँप का रेंगना आदि। ये शब्द नित्य सम्बन्धी हैं, अतः इनके लिए अपने विशिष्ट शब्दों का ही प्रयोग होता है अन्यों का नहीं। 'मृत-प्रायः साँप का चलना देखकर मैं स्तब्ध रह गया' में 'चलना' के स्थान पर 'रेंगना' होना चाहिए। इसी प्रकार पशु-पक्षियों की बोलियों के लिये भी कुछ शब्द नियत हैं। जैसे मेंढक का टर्राना, सिंह का दहाड़ना, कुत्ते का भौंकना आदि।

२—सर्वनाम सम्बन्धी अशुद्धियाँ

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने के कारण सर्वनाम का प्रयोग ऐसी संज्ञा के स्थान पर उचित होता है, जिसका प्रयोग 'सर्वनाम' से पहले हो गया है। बाद में आने वाली, संज्ञा के स्थान पर उससे सम्बन्धित 'सर्वनाम' का प्रयोग अशुद्ध होता है। 'राम ने उसे पकड़ कर मोहन की पीठ पर चार घूँसे जमाये।' अशुद्ध है, क्योंकि 'उसे' का प्रयोग 'मोहन' के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्थान पर हुआ है, जो वाक्य में आगे आया है। इसे पढ़कर तो यह भ्रम होता है कि राम ने पकड़ा तो किसी अन्य को है और घूँसे मोहन की पीठ में जमाये हैं। उक्त वाक्य के स्थान पर 'राम ने मोहन को पकड़ कर उसकी पीठ पर घूँसे जमाये' शुद्ध वाक्य होगा।

सर्वनाम के स्थान पर संज्ञा का प्रयोग भी अशुद्ध होता है। जैसे—'जेठ की दुपहरी में सोहन को इधर-उधर घूमता देखकर मैंने सोहन को फटकारा।' में 'सोहन को फटकारा' के स्थान पर 'उसको फटकारा' होना चाहिए।

सर्वनाम का वचन अपने से सम्बन्धित संज्ञा के वचन के अनुसार होता है। अतः 'मैं जो पुस्तकें लिख रहा हूँ, उसे पढ़कर तुम प्रसन्न होगे'। में 'उसे' का बहुवचन का रूप 'उन्हें' ही शुद्ध होगा।

एक ही व्यक्ति या वस्तु के लिये किसी एक ही प्रकरण में कहीं 'आप' कहीं 'तुम' और कही 'तू' कहीं 'यह' और कहीं 'वह' कहीं 'इनका' और कहीं 'इसका' आदि अशुद्ध हैं। भाव यह है कि प्रकरण के आरम्भ में जिन शब्दों का प्रयोग किया जाय आगे चलकर उस शब्द के उसी लिंग और वचन के रूप प्रयोग में लाये जाँय। अतः वे एक वृक्ष की छाया में बैठे थे। 'इतने में एक कोआ आया और इनके ऊपर बीट कर दी।' 'इनके ऊपर' की जगह 'उनके ऊपर' होना चाहिए।

'मेरा-मेरी' अथवा **'हमारा-हमारे'**—के स्थान पर 'अपना अपने' के प्रयोग के विषय में विशेष सावधानी रखने की आवश्यकता है। नियम यह है कि जहाँ वर्णनीय वस्तु या व्यक्ति के साथ वक्ता का आत्मीय भाव रहता है। वहाँ 'अपना अपने' आदि का प्रयोग होता है और जहाँ थोड़ा भी परकीय भाव होता है, वहाँ 'मेरा मेरी' आदि का प्रयोग होता है। इस प्रकार 'मैंने अपने मन में सोचा' ठीक है और 'मेरा मन मेरे वश में न था' भी ठीक है। प्रथम वाक्य में 'मन' के साथ पूर्ण स्वकीयता है अतः 'अपने मन में' शुद्ध है और दूसरे वाक्य में 'वश में न रहने' के कारण कुछ परकीयता आ गई है। अतः 'मेरा मन' ठीक है।

३—विशेषण तथा क्रिया-विशेषण सम्बन्धी अशुद्धियाँ

विशेषण संज्ञा या सर्वनाम की तथा क्रिया-विशेषण क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं। जब विशेषण अथवा क्रिया-विशेषण अपने अभीष्ट अर्थ को प्रकट न करके किसी भ्रामक अथवा विरोधी अर्थ को प्रकट करने लगते हैं तभी उनका प्रयोग अशुद्ध कहा जाता है। जैसे—विवाह के निमन्त्रण-पत्र में कन्या के नाम के आगे 'सौभाग्यवती' का प्रयोग, क्योंकि कोई कन्या 'सौभाग्य-वती' तभी होती है, जब उसका विवाह हो जाता है, विवाह से पूर्व तो उसके लिये स्वस्तिमती कल्याणी आदि का प्रयोग ही युक्त संगत होगा। इसी प्रकार 'आप पठित घराने में उत्पन्न हुए हैं।' में 'पठित' शब्द का प्रयोग भी अशुद्ध है क्योंकि 'पठित' (पढ़ा हुआ) वही हो सकता है, जिसे हम पढ़ सकें। इस प्रकार पुस्तक तो पठित हो सकती है, पर कोई 'घराना' नहीं। हाँ, पठित के स्थान पर 'शिक्षित' ठीक है, क्योंकि घराना शिक्षित हो सकता है।

विशेषणों अथवा क्रिया विशेषणों के स्थान पर संज्ञाओं का प्रयोग भी अशुद्ध होता है। जैसे—'मैं निश्चय रूप से नहीं कह सकता कि वह कब आयेगा, में 'निश्चय' के स्थान पर 'निश्चित' होना चाहिए, क्योंकि 'रूप' संज्ञा की विशेषता 'निश्चित' (विशेषण) ही प्रकट कर सकता है, 'निश्चय' (संज्ञा) नहीं। इस प्रकार 'संतोषचित्त, आश्चर्य-दृश्य, गोपन कथा के स्थान पर क्रमशः 'संतुष्ट-चित्त, आश्चर्यजनक दृश्य, गोपनीय कथा' होनी चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसी प्रकार 'मैं निश्चय ही आगरा जाऊँगा।' में 'निश्चय ही' के स्थान पर 'निश्चित रूप से' अथवा 'अवश्य ही' होना चाहिये।

जिस प्रकार विशेषण के स्थान पर संज्ञा का प्रयोग त्याज्य है, उसी प्रकार संज्ञा के स्थान पर विशेषण का प्रयोग भी हेय है। 'जैसे—'लाचार वश' में 'लाचार' के स्थान पर 'लाचारी' का प्रयोग ही शुद्ध है, क्योंकि 'लाचार' विशेषण है और उसके वश में होना असम्भव ही है। 'अधिकाँश' और 'अधिकतर' के प्रयोग में उक्त नियमों का ध्यान रखना चाहिए 'अधिकाँश' (अधिक+अंश) संज्ञा है और 'अधिकतर' ('अधिक' की उत्तरावस्था) विशेषण, अतः 'अधिकाँश आम खट्टे निकले' में अधिकाँश आम' अशुद्ध है। इसके स्थान पर 'आमों का अधिकांश' अथवा 'अधिकतर आम' शुद्ध है, क्योंकि 'अधिकाँश' संज्ञा है और वह 'आम' संज्ञा की विशेषता प्रकट नहीं कर सकती।

प्रायः छात्र संस्कृत विशेषणों के शुद्ध रूप न जानने के कारण उन्हें अशुद्ध रीति से लिखते हैं। इस प्रकार के कुछ विशेषण उनके शुद्ध रूपों सहित नीचे लिखे जाते हैं।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अनुवादित	अनुदित	अनुमानित	अनुमित
क्रोधित	क्रुद्ध	गार्हस्थिक	गार्हस्थ्य
गौरवित	गौरवान्वित	त्रसित	त्रस्त
निरापराधी	निरपराध	निर्दयी	निर्दय
परिप्लावित	परिप्लुत	राजनैतिक	राजनीतिक
वैद्युतिक	वैद्युत	व्यवहारित	व्यवहृत
व्यापित	व्याप्त	सशकित	शंकित, सशङ्क

नित्य सम्बन्धी क्रिया विशेषणों के प्रयोग में सावधानी रखनी चाहिये। 'यद्यपि तथापि' 'यदि-तो' 'जितना उतना' 'जैसे-वैसा' चाहे पर या 'परन्तु' ऐसे क्रिया-विशेषण हैं कि इनमें से एक के प्रयुक्त होने पर दूसरे का प्रयुक्त होना आवश्यक होता है। प्रायः छात्र 'जब' 'अ' अथवा 'आ' के बाद 'इ' या 'ई' आये, तो इन दोनों के स्थान पर 'ए' हो जाता है। लिखते हैं। वहां उक्त नियमानुसार 'जब' के स्थान पर 'यदि' का प्रयोग होना चाहिए।

४—क्रिया सम्बन्धी अशुद्धियाँ

क्रिया वाक्य का सबसे प्रमुख अंग है। उसके दूषित प्रयोग से सारा वाक्य ही भद्दा लगता है। प्रायः छात्र किसी संज्ञा के साथ ऐसी क्रिया का प्रयोग कर देते हैं, जो वहाँ पर प्रयुक्त न होनी चाहिये। जैसे-'मैंने उसे स्मरण दिलाया कि उसे आज पत्र लिखना है।' में, 'दिलाया' का प्रयोग। यहाँ 'दिलाया' के स्थान पर 'कराया' होना चाहिये, क्योंकि 'स्मरण' कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जिसे किसी दूसरे से दिलाया जा सके। इसी प्रकार सन्तोष दिलाया के स्थान पर 'सन्तोष कराया' होना चाहिए।

नीचे हम कुछ संज्ञाओं के साथ नियमित रूप से प्रयुक्त होने वाली क्रियाओं को लिखते हैं—

शूली पर चढ़ाया जाता है।
फाँसी पर लटकाया जाता है।
तकलीफ उठाई जाती है।
कष्ट भोगा जाता है।

मुकद्दमा चलाया जाता है।
भाँग छानी जाती है।
शराब ढाली जाती है।
गीत गाया जाता है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लड़ाई लड़ी जाती है । राग बजाया जाता है ।
युद्ध किया जाता है । तूफान आता है ।
अभियोग लगाया जाता है । वायु चलती है ।

यदि एक वाक्य में कई क्रियाएँ हों तो उनके काल आदि में संगति का ध्यान रखना चाहिये । एक ही वाक्य में विभिन्न कालों की क्रियाओं का प्रयोग अशुद्ध होता है । जैसे—'जिसे अपने कुल की मर्यादा का तनिक भी ध्यान है, वह ऐसा निन्दित कर्म नहीं करेगा ।' में 'है' वर्तमान काल की तथा 'करेगा' भविष्यत काल की क्रियाएँ हैं, अतः इनका प्रयोग अशुद्ध है । यहाँ या तो 'ध्यान है' के स्थान पर 'ध्यान होगा' या 'करेगा' के स्थान पर 'करता' होना चाहिये । इसी प्रकार 'भोजन कीजिये देर न करें, नहीं तो गाड़ी न मिलेगी' में 'करें' के स्थान पर 'कीजिये' होना चाहिये ।

अव्यय सम्बन्धी अशुद्धियाँ

'केवल,' 'मात्र,' 'भर', और 'ही'

इन अव्ययों के अर्थों में बहुत कुछ समानता है, अतः इनमें से किन्हीं दो शब्दों का प्रयोग न करना चाहिये । अतएव 'उसने केवल दस रुपये ही पाकर सन्तोष कर लिया ।' 'केवल वचनमात्र में क्या दरिद्रता है ।' आदि वाक्य अशुद्ध हैं । इनके स्थान पर क्रमशः 'उसने दस रुपये ही पाकर सन्तोष कर लिया' और 'वचनमात्र में क्या दरिद्रता है ।' शुद्ध है ।

ये शब्द किसी बात या व्यक्ति पर जोर देने के लिये प्रयुक्त होते हैं, अतः इनका प्रयोग किसी ऐसे शब्द के साथ नहीं होता जो पहले से ही उसी बात या व्यक्ति पर जोर दे रहा है । जैसे—मैं अवश्य ही आऊँगा ।' 'सीता अत्यन्त ही सुन्दर थीं । (यहाँ 'अवश्य' और 'अत्यन्त' का प्रयोग ही पर्याप्त है ।)

'यही' 'वही,' 'नहीं' और 'इसी' में 'ही' का अन्तर्भाव होने के कारण इनके बाद में उक्त शब्द का प्रयोग अशुद्ध है । अतः 'केलव यही बात ठीक है ।' में 'केवल' का प्रयोग अशुद्ध है ।

'भी'

'किसी,' 'कोई,' 'कहीं' 'अभी,' 'कभी,' 'जभी,' 'सभी,' में पहले से ही भी का अर्थ सम्मिलित होने के कारण इन शब्दों के साथ 'भी' का प्रयोग अशुद्ध है । अतः 'तुम कभी भी आओ, मैं तुम्हें पुस्तक दे दूँगा ।' में केवल 'कभी' ही ठीक है । इसी प्रकार 'जितना भी' 'कितना भी' की जगह 'चाहे जितना' 'कितना ही' ठीक है ।

'मैं बिल्कुल भी नहीं जानता कि वह कहाँ गया ।' जैसे—वाक्यों में 'भी' का अनावश्यक प्रयोग भी त्याज्य है ।

७ वर्ण और मात्रा सम्बन्धी अशुद्धियाँ

१—'न' और 'ण' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—व्रजभाषा और अवधी में 'ण' के स्थान पर 'न' का प्रयोग होता है, किन्तु खड़ी बोली में तत्सम शब्दों के प्रयोग होने के कारण 'न' और 'ण' के शुद्ध प्रयोग को ध्यान में रखना चाहिये ।

ष, र ऋ के बाद 'न' का 'ण' हो जाता है चाहे यह 'न' ठीक इनके बाद हो अथवा इन वर्णों और 'न' के बीच में कोई स्वर कवर्ग, पवर्ग, य, ब, ह में से कोई एक वर्ण अथवा कई वर्ण हों ।

जैसे—चरण, हरण ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संस्कृत की जिन मूल धातुओं में 'ण' होता है, उनसे बने शब्दों में भी 'ण' रहता है, जैसे—गुण, निपुण।

नीचे 'ण' सम्बन्धी कुछ शुद्ध शब्द दिये जाते हैं—

प्रमाण, उत्तरायण, आकर्षण, राक्षसगण, गुण, दुर्गुण, सगुण, परिणाम, परिमाण, रमणीक, सम्मिश्रण, वैष्णव, विष्णु, रामायण, राणा, शिरोमणि, प्रणाली, ऋण, मरण, करण।

२—'श' और 'ष' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—इनका उच्चारण क्रमशः तालू और मूर्धा से होता है, अतः इनका नाम भी क्रमशः तालव्य तथा मूर्धन्य है। संस्कृत 'ष' वाले थोड़े ही शब्द हिन्दी में आते हैं, जिनमें मुख्य निम्न हैं—

अषाढ़ दोष अभिषेक, वेष, (वेश) भूषण, मनुष्य, सन्तोष, कष्ट, पृष्ठ, षष्ठी, भीषसा, भीष्म, मेष, वृषभ, तृषा, मृषा, वृष, शिष्य, शेष, विशेष, पौष, शिष्ट, पुष्टि, पौष्य, पोषण, विषम, निष्पाप।

सन्धियुक्त शब्दों में क, ख, ट, ठ, प, फ, से पहले 'ष' आता है जैसे—निष्कपट, निष्फल, निष्ठ, निष्पाप।

संस्कृत शब्दों में च, छ से पहले श आता है। जैसे—निश्चल, निश्छल, निश्चित, दुश्चरित।

विशेष—ध्यान रखना चाहिये कि शृ का अर्थ श+ऋ और श्र का अर्थ है श्+र्+आ। छात्र इन दोनों का अन्तर न समझ कर अधिक अशुद्धियाँ करते हैं, अतः इनसे युक्त शब्दों का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

३—'छ' और 'क्ष' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—'क्ष' क और ष के योग से बनता है। इसका अधिक प्रयोग तत्सम शब्दों में ही होता है। उच्चारण की अशुद्धि के कारण इनमें प्रायः अशुद्धियाँ होती रहती हैं। इनसे युक्त अधिक प्रचलित शब्द नीचे दिये जाते हैं।

'छ' वाले शब्द—छिद्र, छात्र, स्वच्छ, अच्छा, छिन्न, छेदन, तुच्छ, इच्छा छल।

'क्ष' वाले शब्द—कक्षा, प्रत्यक्ष, नक्षत्र, क्षत्रिय, अक्ष, समक्ष, क्षमा, क्षोभ क्षण, क्षय, क्षार, क्षिति (पृथ्वी), क्षीर, क्षुधा, क्षेत्र, क्षेम।

४—'ब' और 'व' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—इनके विषय में कोई विशेष नियम नहीं है। पढ़ते तथा बोलते समय उच्चारण पर ध्यान देने से ये दूर हो सकती हैं।

५—'ऋ' और 'रि' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—संस्कृत शब्दों के अतिरिक्त, 'ऋ' का प्रयोग नहीं होता। ऋषि, ऋक्ष, ऋतु, ऋण, कृपाण, तृण, गृह में 'ऋ' ही है। यद्यपि मातृ, भ्रातृ, पितृ आदि ऋकारान्त हैं, पर अधिकतर हिन्दी में ये माता, भ्राता आदि की तरह व्यवहार में आते हैं। इस विषय में गृह (घर), ग्रह (सूर्य आदि), मातृ (माता), मात्र (केवल), पृथा (कुन्ती), प्रथा (रीति), आदि को अर्थ तथा उच्चारण सहित समझ लेना चाहिए।

६—'ये' और 'ए' सम्बन्धी अशुद्धियाँ—हिन्दी में कुछ शब्दों के दो रूप व्यवहार में आते हैं जैसे—रुपये और रुपए, लिये और लिए, संज्ञायें और संज्ञाएँ आदि। इनके निर्णय करते समय इनके मूल रूप पर ध्यान देना चाहिए। यदि 'अव्यय' है तो 'लिए' ही शुद्ध है। इसी प्रकार 'चाहिए' में 'ये' का उच्चारण स्पष्ट रूप से न होने के कारण 'ए' ही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

लिखना चाहिए। 'गया' का बहुवचन 'गये' और 'हुआ' का बहुवचन 'हुये' अधिक उपयुक्त है। नीचे इस प्रकार के कुछ शब्दों को लिखा जाता है।

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
गए	गये, (गया का बहुवचन)	रुपए	रुपये (रुपया का बहुवचन)
चाहिये	चाहिए	लिखिये	लिखिए
जाँचिये	जाँचिए	लिए	लिये (लिया का बहुवचन)
संज्ञायें	संज्ञाएँ	लिये	लिए (अव्यय)
पूजिये	पूछिए	पढ़िये	पढ़िए

७—**'यी' और 'ई' सम्बन्धी अशुद्धियाँ**—हिन्दी में गयी, गई, आयी, आई आदि दोनों ही लिखे जाते हैं यद्यपि गया से गयी, और आया से आयी लिखना अधिक युक्तियुक्त है पर विद्वानों ने दोनों प्रकार से प्रयोग किया है, अतः दोनों ही प्रकार ठीक हैं।

८—**'वा' और 'आ' सम्बन्धी अशुद्धियाँ**—हुवा, खावेगा, जावो आदि अशुद्ध हैं। इनके स्थान पर क्रमशः हुआ, खायेगा, जाओ लिखना चाहिए।

९—**विदेशी शब्द सम्बन्धी अशुद्धियाँ**—विदेशी शब्दों को तत्सम रूप में न लिखकर तद्भव रूप में लिखना चाहिये, तथा उसमें अपनी भाषा के प्रत्यय लगाने चाहिये। 'लैंनटर्न' को लालटेन ही लिखना ठीक है तथा 'रेल' का बहुवचन हिन्दी में 'रेलों' ही उचित है 'रेल्स' नहीं।

१०—**अनुस्वार सम्बन्धी अशुद्धियाँ**—जब अनुस्वार के बाद किसी भी वर्ग का कोई भी वर्ण आता है तो अनुस्वार के स्थान में विकल्प के सामने वाले वर्ण को वर्ग का पाँचवाँ वर्ण हो जाता है। अतः गङ्गा को उक्त नियमानुसार गंगा भी लिख सकते हैं। इस प्रकार गंगा और गङ्गा दोनों ही शुद्ध हैं। 'गन्ना' अशुद्ध है। इस प्रकार पंचम पञ्चम, दंड दण्ड, मंद मन्द, अंबु अम्बु, सभी शुद्ध हैं।

उक्त नियमानुसार यदि अनुस्वार के बाद म य, र, ल, व, श ष, क्ष, ह, में से कोई वर्ण आता है, तो अनुस्वार नहीं बदलता। जैसे—संयम, संयोजक संसर्ग आदि।

११—**अनुस्वार और चन्द्र बिन्दु सम्बन्धी अशुद्धियाँ**—यदि उच्चारण खींचकर किया जाता है तो अनुस्वार, तथा यदि उच्चारण हलका होता है तो चन्द्र-बिन्दु का प्रयोग होता है। अनुस्वार लगाने से वर्ण गुरु हो जाते हैं पर चन्द्र-बिन्दु लगाने से उनकी मात्राओं में कोई अन्तर नहीं होता। अंक, बंक, दंत में अनुस्वार है आँख, गेहूँ, हँसना में चन्द्र-बिन्दु है।

७—समास तथा सन्धि सम्बन्धी अशुद्धियाँ

यहाँ असावधानी से प्रचलित कुछ शब्दों के शुद्ध रूप दिये जाते हैं :—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
दुरावस्था	दुरवस्था	उपरोक्त	उपर्युक्त
कृतघ्नी	कृतघ्न	पक्षीगण	पक्षिगण
गुणीगण	गुणिगण	शशीभूषण	शशिभूषण
शिरभूषण	शिरोभूषण	निर्धनी	निर्धन
भ्रातागण	भ्रातृगण	पिताभक्ति	पितृभक्ति
महाराजा	महाराज	दिवारात्री	दिवारात्रि
श्राप	शाप	प्रत्योपकार	प्रत्युपकार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

८—प्रत्यय सम्बन्धी अशुद्धियाँ

इन अशुद्धियों से बचने के लिये निम्न नियमों को ध्यान से देखना चाहिये।

१—भाववाचक संज्ञा बनाने वाले त्व, ता आदि प्रत्ययों के बाद इसी प्रकार के प्रत्ययों को लगाना अशुद्ध है। अतः सौन्दर्य या सुन्दरता तो शुद्ध है, किन्तु सौन्दर्यता अशुद्ध है, इसी प्रकार दुष्टता के बाद 'ई' लगातार 'दुष्टताई' बनाना भी अशुद्ध है। इसी नियम के अनुसार लाघवता के स्थान पर लघुत्व अथवा लघुता, अधिक्यता के स्थान पर आधिक्य अथवा अधिकता, आलस्यता के स्थान पर आलस्य, ऐक्यता के स्थान पर ऐक्य अथवा एकता, गौरवत्व के स्थान पर गुरुत्व अथवा गौरव, शैशवत्व के स्थान पर शैशव अथवा शिशुत्व, अज्ञानता के स्थान पर अज्ञान होना चाहिये।

२—किसी विशेषण के बाद विशेषण बना देने वाला प्रत्यय नहीं लगाना चाहिये। जैसे—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अभीष्टित	अभीष्ट	आवश्यकीय	आवश्यक
एकत्रित	एकत्र	पूज्यनीय	पूजनीय, पूज्य
प्रफुल्लित	प्रफुल्ल	ग्रहणीय	ग्राह्य

९—पुनरुक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ

बहुत से शब्द विशेषण सहित पूरे विशेष्य का अर्थ बतलाते ,हैं किन्तु अज्ञान से उनको विशेषण बनाकर उनके आगे विशेष्य लगा देते हैं। इस प्रकार एक अर्थ की पुनरुक्ति हो जाती है। जैसे—अश्रु का अर्थ है आँखों से निकलने वाला पानी किन्तु बहुत से छात्र अश्रु-जल लिखते हैं जो अशुद्ध है। इसी प्रकार सज्जन पुरुष का सज्जन, यौवनावस्था का यौवन अथवा युवावस्था, समतुल्य का सम अथवा तुल्य, आकृष्ट पर्यन्त का कष्टपर्यन्त या आकृष्ट, स्वत्वाधिकार का स्वत्व अथवा अधिकार शुद्ध रूप हैं।

१०—लिंग सम्बन्धी अशुद्धियाँ

नियमानुसार विशेषण और विशेष्य में एक ही लिंग होना चाहिए। प्रचलित अशुद्ध शब्द नीचे दिये जाते हैं—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
विद्वान् रानी	विदुषी रानी	श्रीमान् अध्यापिका	श्रीमती अध्यापिका
गुणवान् रानी	गुणवती स्त्री	बुद्धिमान बालिका	बुद्धिमती बालिका
मूर्तिमय करुणा	मूर्तिमयी करुणा	वस्त्रधारी स्त्री	वस्त्रधारिणी स्त्री

समास होने पर 'समस्त पद' का लिङ्ग अन्तिम पद के अनुसार होता है। अतः अपने 'पुत्र-पुत्रियों' और 'इस जिले के नदी तालाबों' जैसे प्रयोग अशुद्ध हैं। इनके स्थान पर क्रमशः 'अपनी पुत्र-पुत्रियों, और 'इस जिले के नदी तालाबों' होने चाहिए।

वाक्य में क्रिया का लिंग अन्तिम संज्ञा के अनुसार होता है। अतः 'मैंने गाय, भैंस, घोड़ा, बैल और बकरियाँ देखे।' में 'देखे' अशुद्ध है, यहाँ 'देखी' होनी चाहिए।

अव्ययों में लिंग और वचन के कारण कोई परिवर्तन नहीं होता, अतः 'आदि' का 'आदियों' बनाना अशुद्ध है। 'आदि' से युक्त वाक्य में क्रिया का एक वचन में प्रयोग करना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भी अशुद्ध होता है। अतः 'रामायण, कुत्ता, कोट आदि जल गया।' में 'गया' के स्थान पर 'गये' होना चाहिए।

विशेषण की तरह प्रयुक्त होने पर 'अनेक' का 'अनेकों' नहीं बनता पर सर्वनाम के रूप में 'अनेकों' ही बनता है अतः 'मैंने इस विषय पर अनेक पुस्तकें पढ़ी हैं।' तथा 'अनेकों न मुझे टोका' शुद्ध है। इसके विपरीत अशुद्ध है।

बहुवचन बनाते समय निम्न नियमों का ध्यान रखना चाहिए—

१—आकारान्त शब्दों के बहुवचन में स्वर लगते हैं, जैसे—संज्ञाओं, क्रियाएँ, महिलाएँ आदि।

२—इकारान्त तथा ईकारान्त के बहुवचन में 'य' लगाते हैं। जैसे—मुनियों, कवियों, नदियों आदि।

३—उकारान्त तथा ऊकारान्त के बहुवचन में अधिकतर स्वर लगते हैं। जैसे—भालुओं, गुरुओं आदि।

११—विभक्ति सम्बन्धी अशुद्धियाँ

हिन्दी में विभक्तियों (कारक चिह्न) को मूल शब्दों से मिलाकर लिखना चाहिए अथवा नहीं। इस विषय में विद्वानों में मतभेद है। अधिकतर विभक्तियों को अलग ही लिखते हैं, किन्तु सर्वनामों में विभक्तियों को मूल शब्दों से मिलाकर ही लिखना चाहिए, अतः 'उसने' शुद्ध है और 'उस ने' अशुद्ध।

'ने'

'ने' कर्त्ता कारक का चिह्न है, किन्तु इसका प्रयोग सब जगह नहीं होता है। इसके प्रयोग के अनुसार 'कर्त्ता कारक' के भी दो भेद हो जाते हैं—

१—सप्रत्यय कर्त्ता कारक—यदि कर्त्ता के साथ 'ने' चिह्न का प्रयोग होता है, तो उसे सप्रत्यय कर्त्ता कारक कहते हैं। जैसे—१—उसने रोटी खाई। २—उसने फल खाया ३—उसने फल खाये।

इसे अप्रधान कर्त्ता कारक भी कहते हैं, क्योंकि इसमें क्रिया के लिङ्ग और वचन कर्त्ता के लिङ्ग और वचन के अनुसार नहीं होते, अतः ऊपर के तीनों उदाहरणों में कर्त्ता 'उसने' में कोई भी परिवर्तन न होने पर भी 'क्रिया' के लिंग और वचनों में अपने कर्मों (रोटी और-फल) के अनुसार परिवर्तन हो गया है।

२—अप्रत्यय कर्त्ता कारक—यदि कर्त्ता के साथ 'ने' चिह्न का प्रयोग नहीं होता है, तो उसे अप्रत्यय कर्त्ता कारक कहते हैं। इसमें क्रिया के लिंग और वचन अपने कर्त्ता के अनुसार बदलते रहते हैं, अतएव इसे 'प्रधान कर्त्ता कारक' भी कहते हैं। जैसे: १—लड़का गया। २—लड़की गयी। ३—लड़के गये। यहाँ 'गया, गयी और गये' क्रियाएँ अपने कर्त्ताओं के लिगों और वचनों के अनुसार बदलती रही हैं।

अतः सप्रत्यय कर्त्ता कारक में क्रिया के लिङ्ग और वचन को कर्त्ता के अनुसार लिखना अशुद्ध होता है। इसीलिए 'राम ने पुस्तक पढ़ी' में राम के पुंलिंग होने पर भी 'पढ़ा' क्रिया का पुंलिग होना अशुद्ध है। वह अपने कर्म 'पुस्तक' के स्त्रीलिंग होने से क्रिया भी स्त्रीलिंग की होगी और उक्त वाक्य 'राम ने पुस्तक पढ़ी' होगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपवाद—किन्तु जहाँ कर्म में 'को' चिह्न जुड़ जाता है, वहाँ क्रिया के लिंग और वचन न तो कर्त्ता के अनुसार होते हैं और न कर्म के अनुसार, वहाँ क्रिया सदा पुलिंग एक वचन की होती है। जैसे—

१—लड़के ने पुस्तक को पढ़ा। २—लड़कों ने पुस्तक को पढ़ा। ३—लड़की ने पुस्तक को पढ़ा। ४—लड़कियों ने पुस्तक को पढ़ा। ५—लड़के ने पुस्तकों को पढ़ा। ६—लड़कियों ने पुस्तकों को पढ़ा।

ऊपर के सभी वाक्यों में क्रिया 'पढ़ा' सदा पुंलिग एकवचन की रही है, वह अपने कर्त्ताओं और कर्मों के लिंगों और वचनों में परिवर्तन आने पर भी नहीं बदली है।

प्रायः विद्यार्थी 'ने' के प्रयोग में गड़बड़ करते हैं, अतः निम्न नियमों को ध्यान से देख लेना चाहिए।

'ने' का प्रयोग निम्न जगहों पर होता है

'ने' का प्रयोग केवल "सकर्मक धातुओं" के साथ 'अपूर्ण' भूतकाल को छोड़कर शेष पाँचों भूतकालों में निम्न प्रकार से प्रयोग होता है—

१—**सामान्य भूतकाल में**—जैसे क—उसने पत्र लिखा। ख—राम ने कहानी सुनी। ग—लड़कियों ने गीत गाये।

२—**आसन्न भूतकाल में**—(जब काम का पूरा होना वर्तमान काल के अति निकट में पाया जाता है) जैसे—क—उसने गीत गाया है। ख—तुमने कहानी सुनी है। ग—लड़कों ने पत्र लिखे हैं।

३—**पूर्ण भूतकाल में**—(जब क्रिया का निश्चित रूप से पूरा होना भूतकाल में पाया जाता है) जैसे—क—उसने गीत गाया था। ख—तुमने कहानी कही थी। ग—लड़कों ने पत्र लिखे थे।

४—**संदिग्ध भूत में**—(जब काम का होना तो भूतकाल में पाया जाय, पर उसके पूरा होने में सन्देह हो) जैसे—क—उसने गीत गाया होगा। ख—तुमने कहानी कही होगी। ग—लड़कों ने पत्र लिखे होगे।

५—**हेतु हेतु मद् भूत में**—(भूत काल के शर्त से युक्त अर्थात् 'यदि वाले' वाक्यों में) जैसे—क—यदि उसने मुझे बुलाया होता, तो मैं अवश्य जाता। ख—यदि रावण ने सीता को न चुराया होता, तो राम उसे न मारते।

साराँश

१—वर्तमान तथा भविष्यत काल में 'ने' कभी नहीं आता। सकर्मक क्रिया के भूतकाल में केवल 'अपूर्ण भूत' में 'ने' नहीं आता है, अर्थात् भूतकाल में जहाँ क्रिया के साथ 'रहा था, रहे थे, रही थी, रहीं थी' लगा रहता है, वहाँ तो 'ने' नहीं आता और सब जगह 'ने' आता है। जैसे—

'राम पुस्तक पढ़ रहा था' यहाँ 'ने' नहीं आया है।

अपवाद—१—निम्न सकर्मक क्रियाओं के कर्त्ता भी अपने साथ 'ने' नहीं लगाते—

१—**बोलना**— रावण मन्दोदरी से यह बोला।

२—**भूलना**— तुम रास्ता भूल गये।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

३—**बकना**— तू गाली बकता था।
४—**लाना**— नौकर दूध लाया, आदि—

२—नहाना, छींकना, थूकना आदि सकर्मक क्रियाओं के कर्त्ता भी कभी कभी अपने साथ 'ने' लगाते हैं, जैसे—

नहाना—राम ने नहाया।

छींकना—राम ने छींका था।

खाँसना—उसने खाँसा।

३—यदि संयुक्त क्रिया के दोनों भाग सकर्मक होते हैं, तो कर्त्ता के साथ 'ने' आता है। जैसे—

क-देख लेना—उसने राम को देख लिया।

ख-दे देना—राम ने मोहन को पुस्तक दे दी।

४—जब यदि अकर्मक क्रियाएँ सकर्मक हो जाती हैं, तो उनके कर्त्ता के साथ 'ने' का प्रयोग इच्छानुसार होता है—

क-दौड़ना—उसने दौड़ दौड़ी। अथवा—वह दौड़ दौड़ा।

ख-लड़ना—राम ने लड़ाई लड़ी। अथवा—राम लड़ाई लड़ा।

५—क्रिया में 'चाहिए' जुड़ा होता है, तब कर्त्ता का चिह्न 'ने' न होकर 'को' होता है। जैसे—राम को घर जाना चाहिए।

'को'

मुख्यतः यह कर्म कारक का चिह्न है। इसके विषय में निम्न नियम देखना चाहिए—

१—बुलाना, पुकारना, कोसना, आदि के कर्मों के साथ 'को' का प्रयोग आवश्यक होता है। जैसे—

क-बुलाना—राम सीता को बुलाते हैं।

ख-पुकारना—मैं मोहन को पुकारता हूँ।

ग-कोसना—दुष्ट सज्जनों को कोसते हैं।

२—प्रेरणार्थक क्रियाओं के कर्म के साथ 'को' का प्रयोग अवश्य होता है। जैसे—

क-सुलाना—('सोना' का प्रेरणार्थक रूप) माता पुत्र को सुलाती है।

ख-जगाना—('जागना' का प्रेरणार्थक रूप) मोहन श्याम को जगाता है।

ग-भगाना—('भागना' का प्रेरणार्थक रूप) वीर शत्रुओं को भगाता है।

३—वास्तव में 'को' के प्रयोग के कोई विशेष नियम नहीं, पर प्रायः जहाँ कर्त्ता में विशेष कर्तृत्व शक्ति का ज्ञान कराना होता है, वहाँ कर्म के साथ 'को' आता है। साधारण कर्तृत्व शक्ति के ज्ञान के लिए 'को' नहीं आता जैसे—'राम ने पुस्तक को पढ़ा' का तात्पर्य पुस्तक को विशेष ध्यान से पढ़ने से है और 'राम ने पुस्तक पढ़ी' का तात्पर्य साधारण तौर से पुस्तक को पढ़ने से है। इसीलिए जहाँ कोई विशेषता नहीं होती, वहाँ 'को' का प्रयोग न करना ही अच्छा है। अतएव 'राम ने फलों को खाया' से 'राम ने फल खाये' अधिक ठीक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपवाद—१—'चाहिए' से युक्त क्रियाओं के कर्त्ता भी 'को' चिह्न रखते हैं, अतः उन्हें भूल से कर्म नहीं समझना चाहिए। जैसे—राम को जाना चाहिए। यहाँ 'राम को' कर्त्ता ही है।

२—सम्प्रदान कारक का चिह्न भी 'को' है, पर वह किसी चीज के देने के अर्थ को प्रकट करता है। जैसे—गुरूजी ने राम को पुस्तक दी। में 'राम को' सम्प्रदान है।

३—जब कोई चीज सदा के लिये किसी को दे दी जाती है और देने वाले का अधिकार उस पर से समाप्त हो जाता है, तभी 'को' चिह्न सम्प्रदान कारक को बतलाता हैं, अन्यथा वह सम्बन्ध कारक का चिह्न हो जाता है। जैसे—राम धोने के लिये धोबी को कपड़े देता है। यहाँ धोबी को कपड़े सदा के लिये नहीं दिये जा रहे हैं, अतः 'धोबी को' सम्बन्ध कारक है। उसका सम्बन्ध 'कपड़े' से है।

'से'

१—यह करण कारक तथा अपादान कारक दोनों का ही चिह्न है, पर जहाँ सहायता से कार्य होता है और कार्य के समय दोनों वस्तुएँ समीप रहती हैं, वहाँ 'करण कारक' और दोनों वस्तुओं में पृथकता पाई जाती है और दोनों वस्तुएँ दूर रहती हैं, वहाँ अपादान कारक होता है। जैसे—

क—राम 'डंडे' से कुत्ते को पीटता है।

यहाँ 'डंडे' से पीटने का काम हो रहा है और पीटते समय 'डंडा' तथा 'कुत्ता' पास रहते हैं, अतः 'डंडे से' में 'करण कारक' है।

ख—'पेड़ से फल गिरा' में 'पेड़' से फल का अलग होना पाया जाता है, अतः पेड़ 'से' में अपादान कारक है।

२—जिससे 'पढ़ा जाता है', द्वारा जाता है, या किसी चीज को निकाला जाता है, उसमें भी 'से' अपादान कारक का चिह्न होता है। जैसे—

क—पढ़ना—राम गुरूजी से पुस्तक पढ़ता है।

ख—डरना—हिरन शेर से डरता है।

ग—निकालना या हटाना—किसान गाय को खेत से निकालता है।

३—जब दो चीजों में तुलना की जाती है, तब भी 'से' अपादान कारक का ही चिह्न होता है।

जैसे—'राम मोहन से चतुर है।' में 'मोहन से' के प्रयोग में निम्न बातें भी ध्यान में रखनी चाहिए—

अन्य विभक्तियों के स्थान पर 'से' का प्रयोग भी त्याज्य है। जैसे—

१—मैं लिखकर पढ़ने से (में) लगूंगा।

२—मेरे मत से (के अनुसार) विभक्तियाँ सर्वनाम के साथ मिलाकर लिखनी चाहिए।

३—तुम इस मूल्य से (पर) यह पुस्तक खरीद सकते हो।

कुछ स्थानों पर 'से' का प्रयोग न करके अन्य विभक्तियों का प्रयोग करना अशुद्ध है। जैसे—

१—उसने मुझे (मुझ से) घर जाने के लिये कहा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२—तुम्हारी चतुरता तो इसी कार्य में (से) प्रकट हो गई।

'पढ़ने के बहाने से राम यहाँ आता है।' जैसे—वाक्यों में 'से' का अनावश्यक प्रयोग भी त्याज्य होता है।

'पर' तथा 'के ऊपर'

'पर' तथा 'के ऊपर' को समानार्थक समझ कर इनके प्रयोग में अशुद्धि हो जाया करती है। वास्तव में इनके अर्थ में अन्तर है। 'पर' का अर्थ साधारण तौर से 'ऊपर' हुआ करता है किन्तु 'के ऊपर' का अर्थ ऊपरी तल या भाग से होता है। अतः राम को अपने पिता के बचनों के ऊपर श्रद्धा थी। में 'के ऊपर' के स्थान में 'पर' का प्रयोग होना चाहिए। इसी प्रकार निम्न वाक्यों में भी 'के ऊपर' के स्थान में 'पर' होना चाहिए।

१—यह बात तुम लोगों के ऊपर निर्भर है।

२—कल लोक सभा में 'बजट' के ऊपर बहस हुई।

३—उन्होंने राम के ऊपर हमला कर दिया।

'को' 'की भाँति' 'के सम्बन्ध में, के विषय में' आदि के स्थान पर 'पर' का प्रयोग त्याज्य है। जैसे—

१—हिन्दू कोड बिल पर (के सम्बन्ध में) श्री के० एम० मुन्शी की तटस्थता।

२—बगीचे पर (में) मनुष्यों की भीड़ थी।

३—सर्प-दंश पर (के विषय में) विचार-विमर्श।

अभ्यास

निम्न वाक्यों को शुद्ध करो—

१—राम ने बात कहता है। २—श्याम मनोहर को पीटा। ३—सीता ने पुस्तकों को पढ़ी। ४—गुरूजी डंडे से शिष्य पीटे। ५—यदि राम पुस्तक पढ़ली होती, तो उसने पास हो जाता। ६—भ्रष्टाचार की समस्या पर मैंने भाषण दिया। ७—तुम्हारे मत से कौन मूर्ख है।

अपठित गद्यांश तथा पद्यांश

अपठित का अर्थ है, 'बिना पढ़ा हुआ'। पढ़े हुए गद्यांशों तथा पद्यांशों की व्याख्या आदि को तो छात्र सरलता से लिख सकता है, किन्तु अपठित की व्याख्या आदि लिखना कुछ कठिन कार्य होता है। वास्तव में अपठितांशों की व्याख्या ही छात्र की मेधा शक्ति का परिचय देती है। अपठितांशों की व्याख्या आदि करने के अभ्यास से बुद्धि का विकास होता है।

अपठितांशों से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर लिखने में दक्षता प्राप्त करने के लिए निम्न नियमों को ध्यान से पढ़कर तदनुसार आचरण करना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१—पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों, साप्ताहिक तथा दैनिक समाचार पत्रों के अध्ययन से छात्रों की बुद्धि का विकास होता हैं जिनसे उन्हें अपठितांशों की व्याख्या में सहायता मिलती है।

२—अवतरण के सामने आते ही उसे विचारपूर्वक कई बार पढ़ना चाहिए। पढ़ते समय 'अवतरण किस विषय पर लिखा गया है' का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। जब तक अवतरण का भाव पूरी तौर से समझ में न आ जाय, अवतरण पर ही विचार करना चाहिए। जब तक अवतरण का भाव समझ में नहीं आता, उससे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर में एक शब्द भी लिखना कठिन हो जाता है।

३—यदि अवतरण के रेखाँकित अंशों का भावार्थ लिखना है तो पूरे अवतरण के भाव को पूरी तौर से समझ लेने के बाद ही रेखाँकित अंशों पर विचार करना चाहिए। तदान्तर ही उनका भावार्थ लिखना चाहिए।

४—भावार्थ आदि पूछे हुए अंश का ही लिखना चाहिए। उसके अधिक या कम का नहीं।

५—अवतरण, शब्द परिवर्तन तथा कठिन शब्दार्थ लिखने से ही किसी अवतरण का भावार्थ नहीं हो जाता। अपितु अवतरण का पूरा ढाँचा ही बदलना पड़ता है। भाव तो अवतरण के ही होते हैं, पर शब्द तथा शैली अपनी ही होती है।

६—अवतरण से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर अधिकाँश में अवतरण में ही होता है। अतः प्रश्न को समझ कर और उसे ध्यान में रखकर अवतरणों को ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिए। कुछ सोचने के उपरान्त प्रश्न का उत्तर समझ में आ जायगा। उसे सरल भाषा में लिख देना चाहिए।

७—अवतरण में लेखक के प्रधान सन्देश को शीर्षक कहते हैं। पाठ्य-पुस्तकों में प्रत्येक पाठ के आरम्भ में (उसी पाठ से सम्बन्धित) शीर्षक लिखा रहता है। यह संक्षिप्त होना चाहिए। यह भी अवतरण को ध्यानपूर्वक पढ़ने से ज्ञात हो जाता है। कभी तो यह जैसा का तैसा ही लिखा जाता है और कभी अवतरण में कही हुई प्रधान बात के आधार पर अपनी ओर से सोचकर लिखना पड़ता है।

८—यदि अवतरणों में आई हुई अन्तर्कथाओं को पूछा गया है तो उन्हें संक्षेप में ही लिखना चाहिए।

विशेष—अपठितांश के सम्बद्ध प्रश्नों को पूरी तरह से जानने के लिए अन्वय, व्याख्या, अर्थ, भावार्थ, संक्षेपण आदि शब्दों के तात्पर्य, को समझ लेना चाहिए; अतः इन शब्दों का तात्पर्य नीचे लिखा जाता है।

अन्वय—(यह पद्यांश का ही होता है।) किसी पद्य के शब्दों को क्रम बदल कर उन्हें गद्य के नियमों (पहले कर्त्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रिया) के अनुसार रखना अन्वय करना कहलाता है। जैसे—

उदित उदय-गिरि मन्च पर रघुबर बाल पतङ्ग।
विकसे सन्त सरोज सब हरषे लोचन भृंग॥

अन्वय—उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग उदित (हुए) सब संत सरोज विकसे (और) लोचन भृंग हरषे।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विशेष—अन्वय करते समय वाक्य को पूरा करने के लिए पद्यांश में न आये हुए शब्दों को अपनी तरफ से लिखकर उन्हें कोष्ठक में बन्द कर देते हैं।

व्याख्या—विस्तृत, अर्थ जिसमें पूर्वापर प्रसंग की सम्पूर्ण बातों का वर्णन तथा अवतरण में आये हुए सम्पूर्ण रहस्यों का पूर्ण विवेचन होता है, व्याख्या कहलाती है। व्याख्या में विस्तृत अर्थ के अतिरिक्त उद्धरण, प्रसंग, अन्तर्कथा रस, अलङ्कार, छन्द, अपने तथा अन्य विद्वानों के मत का विवरण आदि लिखे जाते हैं।

उक्त दोहे की व्याख्या निम्न प्रकार से होगी।

उद्धरण—प्रस्तुत दोहा श्री तुलसीदास जी द्वारा रचित 'रामचरित मानस' के 'बालकाण्ड' से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग—जनक के यहाँ 'धनुष यज्ञ' होने की सूचना पाकर विश्वामित्र, दशरथ के पुत्र, राम और लक्ष्मण के साथ जनकपुर आये। जनक ने उनका उचित आदर सत्कार किया। नियत समय पर विश्वामित्र दोनों राजकुमारों के साथ यज्ञ मण्डप में आ पहुँचे। बहुत से राजाओं ने धनुष को उठाने का निष्फल प्रयत्न किया। उचित अवसर जानकर विश्वामित्र ने राम को धनुष उठाने की आज्ञा दी। राम अपनी स्वाभाविक गति से मंच पर जा पहुँचे।

व्याख्या—जिस प्रकार प्रभात की बेला से सूर्य शिशु के उदयाचल के मस्तक पर पहुँचते ही कमल खिल जाते हैं, और भौंरे प्रसन्न हो जाते हैं, उसी प्रकार राम के मंच पर आते ही सज्जन आनन्दित हो गये और उनके नेत्र हर्षोत्फुल्लित हो उठे।

टिप्पणी—१—इस अवतरण में 'दोहा' छन्द है जिसके प्रथम और तृतीय चरणों में १३ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरणों में ११ मात्राएँ होती हैं।

२—(क) इसमें मंच की उदयाचल के साथ रघुबर की बाल पतंग के साथ, सन्तों को सरोजों के साथ और लोचनों की भृंगों के साथ एकरूपता दिखाई गई है, अतः रूपक अलंकार है। यह सांग वर्णन है, अतः यह सांग रूपक है।

(ख) 'उदति उदय' में 'उ' और 'द' की आवृत्ति होने से 'छेकानुप्रास' अलंकार है।

(ग) 'सन्त स' में 'स', 'न', 'त', और 'स' के एक ही स्थान (दाँत) से बोले जाने के कारण 'श्रुत्यनुप्रास' अलंकार है।

(घ) 'हरषे' में भी 'र' और 'ष' के एक ही स्थान (मूर्धा) से बोले जाने के कारण 'श्रुत्यनुप्रास' है।

(ङ) 'पतंग' और 'भृंग' में 'अन्त्यानुप्रास' है।

३—'राम' को 'बाल पतंग' बनाकर तुलसीदास जी ने 'राम' की भावी उन्नति की सूचना दी है।

४—**उदयगिरि**—पुराणों के अनुसार सूर्य उदयाचल (पहाड़) से निकलता है और 'अस्ताचल' पर अस्त हो जाता है।

अर्थ—लेखक के विचारों और भावों को अपने शब्दों में प्रकट करना अर्थ कहलाता है। वाच्यार्थ भी इसी का दूसरा नाम है। उक्त दोहे का अर्थ निम्न होगा—

मंच रूपी उदयाचल पर राम रूपी प्रातःकालीन सूर्य का उदय हो गया जिससे सज्जन रूपी कमल खिल गये और उनके नेत्र रूपी भौंरे प्रसन्न हो गये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भावार्थ—शब्दों के आडम्बर को छोड़कर लेखक के भाव को अपने शब्दों में व्यक्त करना भावार्थ कहा जाता है दोहे का भावार्थ निम्न होगा—

ज्यों ही रामचन्द्र जी धनुष को तोड़ने के लिए मंच पर आये, सज्जन आनन्दित हुए और उनके नेत्र हर्षोत्फुल्ल हो गये।

तात्पर्य (सारांश)—विस्तृत अथवा संक्षिप्त वाक्यों को अधिक न बढ़ाकर संक्षिप्त रूप में वर्णन करना तात्पर्य कहा जाता है। 'आशय', 'सार', 'सारांश' भी इसी के दूसरे नाम हैं। उक्त दोहे का तात्पर्य होगा:—

रामचन्द्र जी धनुष को तोड़ने के लिए मंच पर आ गए।

भावार्थ के गुण तथा उसके लिखने का प्रसार—इस विषय में निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

१—**पूर्णता**—भावार्थ का अपने में पूरा होना आवश्यक है। उसे पढ़कर यह ज्ञात न हो कि इसमें से कोई बात निकाल दी गई है और उसके लिए कुछ और कहना बाकी है।

इसके लिए अवतरण को तीन चार बार पढ़कर उसके मूल भाव को समझ लेना चाहिये और उसमें से नमक-मिर्च को निकालकर सीधे-सादे शब्दों में संक्षेप में लिख देना चाहिए।

आरम्भ में इसमें कठिनाई होती है, पर अभ्यास होने पर यह कार्य सरल हो जाता है।

२—**आवश्यक बातों का ग्रहण**—संक्षिप्त करने की धुन में आवश्यक बातों या भावों को नहीं छोड़ना चाहिए, चाहे ऐसा करने में भावार्थ कुछ लम्बा ही क्यों न हो जाय।

३—**छोड़ने योग्य विवरण या तत्व**—भावार्थ के लिए समासों तथा प्रचलित संक्षिप्त शब्दों का व्यवहार करना चाहिये। विशेषणों, क्रिया विशेषणों उद्धरणों, कहावतों, दृष्टान्तों, उद्धाहरणों, अलंकार आदि को छोड़ देना चाहिए।

भावार्थ में अपनी ओर से कुछ भी नहीं मिलाना चाहिए। अवतरण की व्याख्या, आलोचना आदि त्याज्य हैं।

४—**आकार**—यद्यपि भावार्थ आकार में मूल अवतरण का इक तिहाई होना चाहिए पर आवश्यकतानुसार इसमें थोड़ा बहुत परिवर्तन हो सकता है, पर यह हर दशा में आधे से कम ही होना चाहिए। यदि प्रश्न पत्र में शब्दों की संख्या निश्चित हो, तो उतने में ही लिखना चाहिए। पद्यांश का भावार्थ गद्यांश के भावार्थ से कुछ बड़ा हो सकता है।

५—**विशदता तथा स्पष्टता**—पाठक के सामने केवल मूल अवतरण का संक्षिप्त रूप ही रहता है, मूल अवतरण नहीं। अतः भावार्थ का स्पष्ट तथा विशद होना आवश्यक है जिससे मूल अवतरण का भाव सरलता से समझ में आ जाय। इसे अन्य पुरुष में ही लिखना चाहिए। संवादों को संवाद रूप में न लिखकर अपनी तरफ से ही लिखना चाहिए।

भाषा—भावार्थ की भाषा सरल तथा स्पष्ट होनी चाहिए। इसमें अलंकारों, उदाहरणों तथा मुहावरों का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

शैली—भावार्थ को समास शैली में लिखना चाहिए। इसके लिए पर्याप्त वाचक शब्दों के साथ आने पर एक शब्द तथा पूरे वाक्य या वाक्यांश के लिए एक शब्द का प्रयोग करना चाहिए। जैसे—'माता-पिता-हीन' के लिए 'अनाथ' शब्द को लिखना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

८—**क्रम बद्धता**—भावार्थ भाव क्रम पूर्वक होने चाहिए। भावों को स्पष्ट तथा क्रम बद्ध करने के लिए 'विराम-चिह्न' तथा अतएव, तथापि, क्योंकि, इसलिए आदि संयोजकों' का भी यथा-स्थान प्रयोग होना चाहिए। इसमें विचारों तथा भावों का तार्किक रूप में क्रम पूर्वक आना अत्यावश्यक है, नहीं तो भावार्थ एक 'तार के समाचार' की भाँति उखड़ा-पुखड़ा तथा असम्बद्ध सा प्रतीत होने लगेगा।

भावार्थ में भावों का उसी क्रम में आना आवश्यक नहीं है, जिस क्रम से वे मूल अवतरण में आये हैं। लेखक अपनी सुविधा के अनुसार उसमें परिवर्तन कर सकता है। पर सभी भाव एक सूत्र में पिरोये से प्रतीत होने चाहिए।

९—**रेखीकरण**—भावार्थ लिखने से पहले अवतरण में मूल भावों को रेखांकित कर लेना चाहिए, फिर उन्हें अपने शब्दों में लिख देना चाहिए।

१०—**अनुच्छेद** (पैराग्राफ)—आवश्यकता के अनुसार अनुच्छेदों का भी निर्माण करना चाहिए। एक अनुच्छेद में एक ही मूल भाव लिखना चाहिए।

भावार्थ को स्पष्ट करना

इसके लिए भावार्थ लिखने के सम्पूर्ण नियमों का पालन करना चाहिए। जब भावार्थ समझ में आ जावे, तब उसी को समझाकर और कुछ बढ़ाकर लिख देना चाहिए। इसके लिए अवतरण में आये हुए उदाहरणों आदि का भावार्थ की तरह छोड़ देना पड़ता है। यदि अवतरण में किसी बात से कई उदाहरण हों, तो उनमें से एक दो को संक्षेप में दे देना चाहिए।

इसका आकार आवश्यकतानुसार हो सकता है पर यह अवतरण अधिक बड़ा न होना चाहिए।

वास्तव में यह भावार्थ और व्याख्या के बीच की वस्तु है, अतः इसमें अवतरण के मुख्य भाव की ही व्याख्या करदी जाती है।

साराँश सार अथवा तात्पर्य लिखना

इसमें भी भावार्थ के सभी नियम प्रयोग में लाये जाते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि भावार्थ में आकार में आधे के लगभग होता है और साराँश 'एक तिहाई' से अधिक नहीं होता। इसलिए भावार्थ में कुछ गौण बातें भी लिख दी जाती हैं, पर साराँश में एक भी गौण बात नहीं लिखी जाती।

(१)

वीरों के बनाने के कारखाने कायम नहीं हो सकते। वे तो देवदार के दरख्तों की तरह जीवन के अरण्य में खुद ब खुद पैदा होते हैं और बिना किसी के दूध पिलाये, बिना किसी के हाथ लगाये तैयार होते हैं। दुनियाँ के मैदान में अचानक ही सामने आकर के खड़े हो जाते हैं। उनका सारा जीवन भीतर ही भीतर होता है। बाहर तो जवाहिरात की खानों की ऊपरी जमीन की तरह कुछ दृष्टि में नहीं आता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न

१—उक्त गद्यांश का सारांश लिखो।

२—रेखांकित की व्याख्या करो।

३—अवतरण का उचित 'शीर्षक' लिखो।

४—वीरों के जीवन को 'जवाहिरात की खानों की ऊपरी जमीन' क्यों कहा गया है।

उत्तर

१—**सारांश**—वीर किसी के बनाये से नहीं बनते, वे स्वयं ही उत्पन्न होते हैं। उनके निर्माण में बाहरी उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती है। वे दिखावे से दूर रहते हैं किन्तु उनके अन्दर सम्पूर्ण सद्‌गुण पूर्ण मात्रा में विद्यमान रहते हैं।

२—वीरों को बनाने के कारखाने कायम नहीं हो सकते—कारखानों में उन्हीं वस्तुओं का निर्माण होता है, जो कृत्रिम होती हैं। 'वीर' कृत्रिम नहीं होते, वे तो स्वाभाविक होते हैं। कहने का भाव यह है कि 'वीर' किसी के द्वारा बनाये नहीं जा सकते क्योंकि 'वीरता' एक स्वाभाविक गुण है। वह मनुष्य में जन्म जात होती है। किसी दूसरे के द्वारा उसको उत्पन्न नहीं किया जा सकता।

वे तो देवदार······पैदा होते हैं—यहाँ आलंकारिक भाषा का प्रयोग हुआ है। लेखक ने वीरों को 'देवदार मानकर' उपमा अलंकार का प्रयोग किया है। कहने का भाव यह है कि जिस प्रकार वन में देवदार के वृक्षों को न कोई बोता है न कोई उनका पालन-पोषण करता है, वे तो स्वयं बढ़कर पूरे वृक्ष बन जाते हैं, उसी प्रकार वीरों को न कोई बनाता है और न कोई बाहरी उपकरण उनके निर्माण में किसी प्रकार की सहायता देता है। वे तो एकान्त जीवन में स्वयं ही प्राकृतिक रीति से बढ़कर 'वीर' के रूप में हमारे सामने आ जाते हैं।

३—इस गद्यांश का उचित शीर्षक है 'वीर'।

४—जवाहिरात की खानों की ऊपरी जमीन' को देखकर साधारण पुरुष यह नहीं कह सकता कि इस जमीन के अन्दर जवाहिरात भरे पड़े हैं। इसी प्रकार किसी वीर के वाह्य जीवन को देखकर यह नहीं कहा जा सकता कि वह 'वीर' है। अतः वीर के जीवन को जवाहिरात की खानों की ऊपरी जमीन कहा गया है।

(२)

आजकल समता का सिद्धान्त जो प्रचलित हो रहा है उसका आधार प्रेम नहीं, सम्पत्ति और प्रभुत्व है। वैज्ञानिकों के ज्ञान और नीतिज्ञों की नीति दोनों का लक्ष्य इसी सम्पत्ति और प्रभुत्व की वृद्धि है। उसी के कारण जीवन में संघर्ष है और देश में युद्ध है। यन्त्रों की वृद्धि हो रही है उद्योगों की उन्नति हो रही है, व्यवसायों का विस्तार हो रहा है; पर उन्हीं के साथ राष्ट्रों में संघर्ष भी बढ़ रहा है, देश के भीतर अशान्ति भी फैल रही है। यदि सचमुच में हममें समता और बन्धुत्व का भाव आ जाय, तो यही संसार स्वर्ग हो जाय।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न

१—उक्त अवतरण का भावार्थ अपनी हिन्दी में लिखो।
२—रेखांकित वाक्यांशों की व्याख्या करो।

उत्तर

१—वास्तव में आज समता का प्रचार आपसी प्रेम को बढ़ाने के लिए नहीं हो रहा है, किन्तु प्रभुता को प्राप्त करने के लिए हो रहा है। आज मनुष्य विज्ञान, नीति, यन्त्र, उद्योगों तथा व्यवसायों की वृद्धि के द्वारा इन्हीं सम्पत्ति और प्रभुता को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। इससे विभिन्न देशों में सर्वत्र ही संघर्ष की वृद्धि होने के कारण अशान्ति फैलती जा रही है। यदि किसी भी प्रकार मनुष्यों में समता और भाई चारे की भावनाएं आ जायेंगी तो यह संसार सब प्रकार से सुखी हो सकेगा।

२—**समता का सिद्धान्त**—'संसार के सम्पूर्ण मनुष्य एक समान हैं।' जाति वर्ण, देश, धन, सम्पत्ति आदि के कारण उनमें कोई अन्तर नहीं है। अतः सब मनुष्यों को दूसरों को अपना भाई समझ कर प्रेम से रहना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर हमें एक दूसरे की सहायता करनी चाहिए आदि भावनाओं का समता के सिद्धान्त के नाम से पुकारा जाता है।

टिप्पणी—समता के सिद्धान्त का प्रचलन हमारे देश में बहुत पुराने समय से है। 'आत्मवत्सर्वभूतेषु' विद्या विनय सम्पने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चवश्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः आदि में इसी समता का वर्णन है। पुराने समय में इसका प्रचलन धर्म के क्षेत्र में ही था किन्तु आजकल यह अर्थ, राजनीति और समाज के क्षेत्र में अपना प्रसार कर रहा है, आधुनिक काल के समाजवाद और साम्यवाद इसी समता के सिद्धान्त पर आधारित हैं।

संसार स्वर्ग हो गया—पुराणों के अनुसार स्वर्ग उस लोक को कहते हैं, जहाँ दुःख और शोक का नाम नहीं है, न जहाँ बुढ़ापा है और न रोग। संसार दुःख, शोक और भय का क्रीड़ा स्थल है। अतः दुःख, शोक, भय आदि से रहित संसार की भावना को प्रकट करने के लिये प्रस्तुत अवतरण में संसार को स्वर्ग बनाने की कल्पना की गई है।

टिप्पणी—स्वर्ग ऐसे लोक का नाम है, जो इस संसार से ऊपर की दिशा में स्थित है। यह सम्भव हो सकता है कि संसार में स्वर्ग के सुख आजायें पर यह संसार किसी भी प्रकार स्वर्ग नहीं बन सकता। क्योंकि वहाँ ऐसी किसी वैज्ञानिक प्रक्रिया के लिए अवकाश नहीं है, जो तत्व परिवर्तन के समान संसार का परिवर्तन कर सके। अथवा जिस प्रकार कुम्हार गीली मिट्टी के खिलौने को बिगाड़ कर मन चाहा खिलौना बना लेता है, उसी प्रकार संसार को बिगाड़ कर स्वर्ग नहीं बनाया जा सकता, अतः वहाँ वाक्यार्थ के सिद्ध न होने से लक्षण शक्ति के द्वारा 'स्वर्ग' अपना लाक्षणिक अर्थ (सुख समृद्धि से युक्त लोक) प्रकट कर रहा है और इसके द्वारा उत्पन्न समृद्ध तथा सुखी देश का प्रकट करना प्रयोजन है। अतः यहाँ प्रयोजनवती लक्षणा शक्ति है।

(३)

खेल शिशु जीवन का प्राण कहा जा सकता है। खेलों के द्वारा हमें बच्चों के वास्तविक स्वभाव का पता लगता है। खेल को समय नष्ट करने के अर्थ में प्रयुक्त करना एक भूल है। खेल में बालक जो कुछ भी व्यक्त करता है वह प्राकृतिक होता है, कृत्रिम नहीं। बच्चों के हाथ में जो भी वस्तु पड़ जाती है उसे वे अपना खिलौना बना लेते हैं। शैशवावस्था से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लेकर किशोरावस्था तक बच्चों के जीवन में खिलौने विशेष महत्व के होते हैं। उनसे बच्चों को केवल आनन्द ही नहीं मिलता है, वरन् वे उनके मानसिक विकास में भी बहुत सहायक होते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने बच्चों की मानसिक कठिनाइयों के निदान तथा उनकी उचित चिकित्सा के लिए खिलौनों का प्रयोग अन्य प्रकार की चिकित्सा से श्रेष्ठ माना है। बालक अपने भावानुरूप खिलौनों की सहायता से वह अपने चारों ओर जिस संसार की रचना करता है, उसी के आधार पर हम भावात्मक कठिनाइयों का पता लगा सकते हैं।

प्रश्न

१—उक्त अवतरण का शीर्षक लिखो।

२—अवतरण का साराँश लिखो।

उत्तर

१—खेल का महत्व।

२—**साराँश**—खेल से शिशुओं, बच्चों को आनन्द मिलता है। खेल में व्यक्त भाव प्राकृतिक होता है। अतः खेलते समय खिलौनों के द्वारा बच्चों की भावात्मक कठिनाइयों का ज्ञान हो जाता है। मनोवैज्ञानिक इन कठिनाइयों की उचित चिकित्सा करके बच्चों का मानसिक विकास का मार्ग खोज देते हैं, अतः खेल शिशु जीवन का प्राण है।

(४)

ऊपर से धरती देखने में समतल मालूम होती है। लेकिन उसके नीचे ऊबड़ खाबड़ शिलाएँ जब अच्छी तरह बैठी नहीं रहतीं, तो समय पाकर वे बैठने की कोशिश करती हैं। शिलाएँ चल हो जाती हैं, उस समय धरती से गुनगुनाहट सुनाई देती है, और फिर छोटे बड़े भूकम्प शुरू हो जाते हैं हमारे समाज की भी यही अवस्था है। काल पाकर भिन्न रुचि के भिन्न-भिन्न स्थितियों के व्यक्ति समूह आकर इकट्ठे होते हैं। उन्हें एक रस करने की आवश्यकता होती है। काल में एक रूपता को उत्पादन करने का काम संस्कृति का है। वहाँ 'कुछ लेना और देना का' सिद्धान्त बरता जाता है। शताब्दियों से एक जगह विकसित होती जाती संस्कृति एकताबद्ध और शक्तिशाली हों अपने को भरसक अछूता रखने की कोशिश करती हैं किन्तु यह संसार अछूतापन के लिए नहीं है। समझौता करना ही पड़ता है। काल की भाँति देश में देर तक विस्तृत संस्कृतियों का भी यातायात की सुविधा के अनुसार सम्मिलन होता है। उस वक्त फिर वही परिस्थिति उत्पन्न होती है, जो कि ठीक से न बैठी धरातल के नीचे चट्टानों के सम्बन्ध में होती है।

उक्त अवतरण का भाव स्पष्ट करो

उत्तर

सामान्य दृष्टि से समतल दिखलाई देने वाली पृथ्वी के नीचे कुछ शिलाएँ ऊबड़ खाबड़ पड़ी रहती हैं समय आने पर वे एक रस होने का प्रयत्न करती हैं और इन्हीं प्रयत्नों के फलस्वरूप पृथ्वी में कम्पन होता है। अनेक छोटे बड़े भूकम्प आने लगते हैं, जिनसे वे शिलाएँ मिलकर ठीक प्रकार एकसी बैठ जाती हैं। ठीक इसी प्रकार सामान्य दृष्टि से एक रस दिखलाई देने वाले, किसी समाज में इकट्ठे होने वाले भिन्न रुचियों तथा स्थितियों के व्यक्ति अपनी अपनी भिन्नता को रखने का प्रयत्न करते हैं, पर बहुत काल तक साथ रहने से संस्कृति के द्वारा समरसता का विकास होता है, जिसमें प्रत्येक इकाई अपनी कुछ विशे-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

षताओं को छोड़ती है, कुछ को दूसरों को देती हैं और दूसरों की कुछ विशेषताओं को ग्रहण करती है । इसी प्रकार किसी एक देश में बाहर से आने वाली भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ भी मिलकर एक हो जाती हैं ।

(५)

यथार्थवादी चरित्र को पाठकों के सामने यथार्थ नग्न रूप में रख देता है । उसे इससे कुछ मतलब नहीं कि उच्चरित्रता का परिणाम बुरा होता है या कुचरित्रता का परिणाम अच्छा । उसके चरित्र अपनी कमजोरियाँ या खूबियाँ, दिखाते, अपनी जीवन लीला समाप्त करते हैं । संसार में सदैव नेकी का फल नेक और बदी का फल बदी नहीं होता, बल्कि इसके विपरीत हुआ करता है नेक आदमी धक्के खाते हैं, यातनायें सहते हैं मुसीबतें झेलते हैं, अपमानित होते हैं, उनकी नेकी का फल उल्टा मिलता है । बुरे आदमी चैन करते हैं, नामवर होते हैं, यशस्वी बनते हैं—उनको बदी का फल उल्टा मिलता है । (प्रकृति का नियम विचित्र है) यथार्थ अनुभव की बेड़ियों में जकड़ा होता है और चूँकि संसार में बुरे चरित्रों की ही प्रधानता है । यहाँ तक कि उज्जवल से उज्जवल चरित्र में कुछ न कुछ दाग-धब्बे रहते हैं, इसलिए यथार्थवाद हमारी दुर्बलताओं, हमारी विषमताओं और क्रूरताओं का नग्न चित्र होता है, और इस तरह यथार्थवाद हमको निराशावादी बना देता है, मानव चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है, हमको अपने चारों तरफ बुराई ही बुराई नजर आने लगती है ।

प्रश्न

१—उक्त अवतरण का शीर्षक लिखो ।

२—उक्त अवतरण का सारांश अपनी हिन्दी में लिखो ।

उत्तर

१—यथार्थवाद

सारांश—यथार्थवादी चरित्रों तथा घटनाओं को उनकी बुराइयों और अच्छाइयों सहित चित्रित करता है । संसार में अधिकतर भले आदमी दुःखी और बुरे आदमी सुखी रहते है । ससार में भले आदमियों की कमी है भले से भले आदमी में भी कुछ दोष रहते ही हैं, अतः यथार्थवाद अधिकांश में बुराइयों और दुर्बलता का चित्र खींचता है, जिससे हमारा मानव चरित्र से विश्वास हट जाता है और हम निराशावादी हो जाते हैं ।

(६)

'हमारे समाज के मूल उद्देश्य क्या हैं, इसका सार इधर उधर समाजवादी ढंग की समाज 'अवस्था' के वाक्यांश द्वारा प्रस्तुत किया गया है । मोटे तौर पर इसके माने यह है कि आगे बढ़ने का रास्ता चुनते समय हम सारे समाज के हित की बात सोचेंगे, किसी खास वर्ग या व्यक्ति के लाभ की नहीं, और विकास पद्धति और सामाजिक आर्थिक सम्बन्धों का विधान कुछ इस तरह निर्धारित करेंगे कि न सिर्फ राष्ट्रीय आय और रोजगार के अवसर में वृद्धि हो बल्कि लोगों की आय और सम्पत्ति में विषमता घटती ही चली जाये, आर्थिक उन्नति से समाज के वह वर्ग विशेष रूप से लाभान्वित हों, जो अपेक्षाकृत कम सम्पन्न हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न

१—उचित शीर्षक लिखो।
२—अवतरण का तात्पर्य लिखो।

उत्तर

१—समाजवादी व्यवस्था।

तात्पर्य—'समाजवादी ढंग की समाज व्यवस्था' को प्राप्त करने के लिए हमें समाज के सम्पूर्ण वर्गों के हित के लिए कार्य करना चाहिए। इसमें राष्ट्रीय आय और रोजगार के अवसर की वृद्धि के साथ साथ मनुष्यों का धन और सम्पति की विषमता को दूर करने का प्रयत्न भी आवश्यक है।

उदारता का अभिप्राय केवल निःसंकोच भाव से किसी को धन दे डालना ही नहीं, वरन् दूसरों के प्रति उदार भाव रखना भी है। उदार पुरुष सदा दूसरों के विचारों का आदर करता है और समाज में सेवक भाव से रहता है। यह न समझो कि केवल धन से उदारता हो सकती है। सच्ची उदारता इस बात में है कि मनुष्य को मनुष्य समझा जाय। धन की उदारता के साथ सबसे बड़ी एक और उदारता की आवश्यकता है। वह यह है कि उपकृत के प्रति किसी प्रकार का अहसान न जताया जाय। अहसान दिखाना उपकृत को नीचा दिखाना है। अहसान जताकर उपकार करना अनुपकार है।

प्रश्न—उक्त अवतरण का भाव स्पष्ट करो।

(८)

<u>शिर देकर सौदा लेते हैं जिन्हें प्रेम का रंग चढ़ा।</u>
फीका रङ्ग रहता तो घर तज, क्या गैरिक परिधान करे?
<u>उस की पदवी जंजीर गूँजती, हो नीरख सूनसान जहाँ,</u>
सुनाता हो तो तज बसन्त, निज को पहले वीरान करे।

प्रश्न

१—उक्त पद्यांश का भावार्थ लिखो।

२—उक्त पद्याँश के रेखाँकितों की व्याख्या करो।

३—उक्त पद्याँश का उचित शीर्षक लिखो।

४—निम्न का अपने वाक्यों में प्रयोग करो—

शिर देकर सौदा लेना, प्रेम का रंग चढ़ना, रङ्ग फीका रहना, वीरान करना।

किसी देश की संस्कृति जानने के लिए वहाँ के साहित्य का पूरा अध्ययन नितांत आवश्यक ह। साहित्य किसी देश तथा जाति के बिकास का चिह्न है। साहित्य से उस जाति के धार्मिक विचारों, सामाजिक, संगठन, ऐतिहासिक घटनाचक्र तथा राजनीतिक परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब मिल जाता है। भारतीय संस्कृत के मूल आधार हमारे साहित्य के अमूल्य ग्रन्थ-रत्न हैं, जिनके विचारों से भारत की आन्तरिक एकता का ज्ञान हो जाता है। हमारे देश की बाहरी विविधता भारतीय बाङ्मय के रूप में बहने वाली विचार और

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

संस्कृति की एकता को ढँक लेती है। वाङ्मय की आत्मा एक है, पर वह अनेक भाषाओं, रूपों तथा परिस्थितियों में हमारे सामने आती है।

प्रश्न

१—शीर्षक लिखो।
२—अवतरण के मूल भाव को स्पष्ट करो।

(१०)

धारा प्रेम सागर की लाई शिशु को है वहाँ,
विधि ने बनाया क्या खिलौना एक न्यारा है।
न्यारा सब जग से है उसका अनूप रूप,
विकसित कंज के समान अति प्यारा है।
प्यारा वह मञ्जुता की मूर्ति सा किसे है नहीं
व्योम से गिरा हुआ क्या कोई लघु तारा है।
तारालोक लोचनों का सबका दुलारा मानो,
माता के सनेह ने सगुण रूप धारा है।

प्रश्न

१—उक्त का सारांश लिखो।
२—उक्त पद्यांश के रेखांकितों की व्याख्या करो।
३—उक्त पद्य में कौन कौन से अलंकार हैं।
४—उचित शीर्षक लिखो।

(११)

देशभक्त अपनी मातृभूमि को सच्चे हृदय से प्रेम करता है। यदि एक ओर उसे अपने अतीत के गौरव पर गर्व है तो दूसरी ओर वह अपने भविष्य को भी उज्वल बनाना चाहता है। वह सदैव समाज में क्रान्ति चाहता है किन्तु वह क्रान्ति न विशृंखल कही जा सकती है न नागरिकता के प्रतिकूल समाज में प्रचलित रूढ़ियों एवं अन्धविश्वास, तथा उन परम्पराओं एवं परिपाटियों के विरुद्ध वह क्रान्ति करता है जो देश की उन्नति के पथ की बाधाएँ। लोगों में एकता, प्रम और सहानुभूति उत्पन्न करना उनकी राष्ट्रीय, सामाजिक एवं नैतिक चेतना जाग्रत करना, उन्हें कर्त्तव्यपरायण और अध्यवसायी बने रहने के लिए प्रोत्साहन देना ही देशभक्ति है।

प्रश्न

उक्त अवतरण का भाव स्पष्ट करो।

(१२)

सर के कपोल के उजाले में दिवस, रात,
केशों के अन्धेरे में निकल भागी पास से।
संध्या बालपन की युवापन की आधी रात,
मैंने काट डाली क्षण भंगुरविलास से।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्वेत केश झलके प्रभात की किरन से तो,
आँख खुली काल के कुटिल मन्द हास से ।
मेरे करुणानिधि का आसन गरम होगा,
कौन जाने कब मेरे शीतल उसास से ।

प्रश्न

१—उक्त कविता का भाव स्पष्ट करो ।

२—कवि को पश्चाताप कब और क्यों हो रहा है ?

३—उक्त पद्य के मोटे वाक्यों की व्याक्या करो ।

४—उक्त पद्य में कौन सा रस है ?

५—उक्त पद की अन्तिम दो पंक्तियों में कौन कौन से अलंकार हैं ?

६—निम्न को अपने वाक्यों में प्रयोग करो—

क्षण भंगुर, आँखें मलना, कुटिल मन्द हास, शीतल उसास ।

(१३)

आधुनिक मनोविज्ञान मनुष्यों के विचारों के मन को नहीं छू सका ह । उसने केवल हमारे भावनाओं के मन में हलचल-भर पदा की है । पिछली दुनियाँ की नैतिकता अभी मनुष्य के मोहग्रस्त चरणों में उसी चाँदी के भारी भद्दे संकीर्ण कड़े की तरह पड़ी हैं । जिससे मानव चेतना का सौन्दर्य बोध तथा उसकी राग-भावना का गति-पग-पग-कुंठित होकर स्त्रियों के अधिकार आन्दोलनों के रूप में, आगे बढ़ाने का निष्फल प्रयत्न कर रही है किन्तु मानव चेतना की नैतिक लँगड़ाहट को दूर करना शायद कल का काम है, उससे पहले मानव जाति के दृष्टिकोण का व्यापक अध्यात्मिक* रूपान्तर हो जाना अत्यन्त* आवश्यक है । अतः अध्यात्म-वाद का मानव के अन्तरतम के शुभ्र शिखरों पर सदैव के लिए वैसा ही अक्षुण्णु बना हुआ है और रहेगा जैसा कि वह शायद पहले भी न था ।

प्रश्न

१—उक्त अवतरण का तात्पर्य लिखो ।

२—आधुनिक काल में भी अध्यात्मवाद की क्या आवश्यकता है ।

३—उक्त पद्याँश के मोटे वाक्यों की व्याख्या करो ।

४—उक्त गद्याँश के पुष्पाङ्कितों का सन्धि-विच्छेद कर सन्धि का नाम लिखो—

(१४)

दुःख की पहली रजनी बीच, विकसता सुख का नवल प्रभात ।
एक परदा वह* झीना नील, छिपाये है जिसमें सुख गात ।।
जिसे तुम समझे हो अभिशाप, जगत की ज्वालाओं का मूल ।
ईश का वह रहस्य बरदान, कभी मत जाओ इनको भूल ।।
विषमता की पीड़ा से व्यस्त, हो रहा स्पन्दित विश्व महान ।
यही दुख सुख विकास का सत्य, यही भूमा का मधुमय दान ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न

१—उक्त पद्य का सारांश लिखो।

२—दु.ख सुख विकाश का सत्य क्या है ?

३—पद्य का उचित शीर्षक लिखो।

४—मोटे वाक्यों की व्याख्या करो।

५—पुष्पांकितों का पद-परिचय करो।

(१५)

बीसवीं* शताब्दी का काल भारत के लिए ही नहीं, समस्त विश्व के लिए महान् **उथल** पुथल, परिवर्तन तथा उत्थान पतन का काल रहा है। शदी के पूर्वार्ध से ही देश में जाग्रति चेतना दौड़ अवश्य गई थी, किन्तु देशवासियों की आँखों में अभी सुषुप्ति का नशा **या** आँखों में नींद की खुमारी थी। इधर पश्चिम में प्रथम महायुद्ध का ज्वालामुखी फटने **ही वाला** था, समस्त विश्व सर्वनाश के कगार पर खड़ा था। सर्वग्रासी महायुद्ध न मालूम **कब*** अपने कराल देशों और लपलपाती जिह्वा से मानवता का सर्वनाश करने पर तुल **जाय**। ऐसी संकटपूर्ण परिस्थिति में विश्वकवि ने संगीत और लय की मधुर तान छेड़कर **स्वदेश**वासियों को कर्तव्यनिष्ठा और कर्म-तत्परता की ओर प्रेरित किया तथा प्राची के इस **सतर्क** प्रहरी ने भौतिकवादी वैज्ञानिक सभ्यता के अनुगामी पश्चिम को भी कठोर **चेता**वनी दी।

प्रश्न

१—उक्त गद्यांश का साराँश लिखो।

२—उक्त गद्यांश के अनुआर बीसवीं शदी के पूर्वार्ध की दशा का चित्रण करो—

३—गद्यांश के मोटे वाक्यों की व्याख्या करो।

४—पुष्पांकितों की पद व्याख्या करो।

(१६)

कंज कलिका में नहीं सुषुमा मयंक की है,
कोमलता कंज की यङ्क ने न पाई है।
चम्पकली में •नहीं स्वर्ण की सुवर्णता है,
चम्पक की चारुता सुवर्ण में न आई है।।
रत्न की रुचिरता में मणि की मनोज्ञता में,
एक दूसरे की प्रभा देती न दिखाई है।
सब की निकाई ·**सुघराई मोदमयी** महा;
ललित लुनोई उस छवि में समाई है।।

प्रश्न

१—उक्त पद्य में कवि ने किस छवि का वर्णन किया है ?

२—उक्त पद्यानुसार उस छवि का वर्णन अपने शब्दों में करो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—उक्त पद्य में प्रयुक्त अलङ्कारों को लिखो।
४—उक्त पद्य में प्रयुक्त अलङ्कारों को लिखो।
५—उक्त पद्य में मोटे वाक्यों की व्याख्या करो।

(१७)

वक्ताओं के पास स्मृति का बड़ा महत्व है। वे संख्याओं और अवतरणों का खेल रचाकर श्रोताओं को चमत्कृत कर देते हैं। उनकी मेधा उनके पाँडित्य की घोषणा करती है। करतल ध्वनि का घोष लोगों को अवाक कर देता है पर यह सारा पांण्डित्य एक निचली श्रेणी का अस्त्र है। संख्याओं की आवृत्ति और अवतरणों का ताँता उमड़ते हुये विद्यार्थी का शृंगार हो सकता है अथवा अपने व्यवसाय में प्रवेश करने वाले तरुण अध्यापक का गौरव हो सकता है। परन्तु अपनी प्रतिभा के सहारे अपनी बात अपने ढंग से कहने वाला विचारक लड़खड़ाती हुई बोली में भी मौलिकता की ही सृष्टि करेगा और यह तभी सम्भव होता है जब वह सारी संख्याएं और सारे अवतरण भूल जाय। यही विस्मृति की स्मृति पर विजय है।

प्रश्न

१—उक्त अवतरण का भाव स्पष्ट करो।

(१८)

अन्तरिक्ष में तभी सो रही है ऊषा मधुबाला
अरे खुली भी नहीं अभी तो शाची की मधुबाला ॥
सोता तारक किरन पुलक रोमावलि, मलयज बात।
लेते अंगड़ाई नीड़ों में अलस विहग मृतुगात ॥
रजनी की बिखरी है म्लान कुसुम की माला।
अरे भिखारी* तू चल पड़ता ले निज टूटा प्याला ॥
गूंज उठी तेरी पुकार, कुछ मुझको भी दे देना।
कन कन बिखरा विभव दान कर अपना यश ले लेना ॥
दुख, सुख के दोनों डग भरता वहन कर रहा गात।
जीवन का दिन पथ चलने में कर देगा* तू रात ॥

प्रश्न

१—उक्त पद्यांश का साराँश अपने शब्दों में लिखो।
२—अन्तिम चार पंक्तियों में कवि ने हमें क्या सन्देश दिया है ?
३—उक्त गद्यांश का उचित शीर्षक लिखो।
४—उक्त पद्यांश के पुष्पांकितों की व्याख्या करो।

(१९)

मार्क्स से पहले भी कुछ सद्विचारक राष्ट्रसत्ता (सरकार) के संघर्ष में आये बिना समाजवादी आदर्श के गठन और प्रयोग में लाये थे पर उस आदर्श को अपना शक्ल देने की जितनी उनकी कोशिश थी उतनी उसको शास्त्रीय वैज्ञानिक और व्यापक रूप देने की नहीं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

थी। वे लोग सामाजिकता को यथा सम्भव अपने व्यवहार में उतारने की चेष्टा में रहे। उसे एक वाद, एक जीवन-शास्त्र का रूप देने में नहीं लगे। मार्क्स ने यही किया। स्वयं मार्क्स सामाजिक नहीं बने, कर्म कुशल और मिठ बोल नहीं बने, संस्था नहीं बने, नेता नहीं बने। एकाकी, एकाग्र और स्वयं असामाजिक रह कर भी समाजवादी—शास्त्र और स्वप्न का ढांचा पूरा करने में वे लगे रहे।

प्रश्न

१—उक्त गद्याँश के अनुसार मार्क्स से पहले के सद्विचारकों ने क्या किया और क्या न किया ?

२—मार्क्स ने क्या किया।

३—उक्त गद्यांक के प्रथम वाक्य (मार्क्स से पहले……नहीं थी) का विश्लेषण करो।

(२०)

दिन की है अन्तिम अवधि रात,
तम प्रकाश की अन्तिम रेखा।
है अश्रु हास्य की अन्तिम इति,
यह आज बेच भर-भर देखा॥

पुष्पों का खिल खिल मुरझाना।
दीपक जल-जल बुझना ही।
मेघों का बन बन मिट जाना।
है सत्य यही, बस इतना ही॥

इस जग की शीतल छाया में,
मानव यदि सुख की खोज करे।
श्रृंगार दहकते छिपे हुए,
पायेगा उनमें जले मरे॥

प्रश्न

१—उक्त पद्याँश का साराँश लिखो।

२—मोटे अक्षरों की व्याख्या करो।

३—मनुष्य का संसार में सुख की खोज करने पर क्या मिलने की सम्भावना है ?

(२१)

सेवा ही वह सीमेन्ट है जो दम्पति को जीवन पर्यन्त स्नेह और साहचर्य में जोड़े रखता है, जिस पर बड़े-बड़े आघातों का भी कोई असर नहीं होता। जहाँ सेवा का अभाव है, वहीं विवाह विच्छेद है, परित्याग हैं अविश्वास हैं और आप देवियों के ऊपर पुरुष जीवन की नौका का कर्णधार होने के कारण जिम्मेदारी ज्यादा है। आप चाहें तो नौका को आंधी और तूफानों में पार लगा सकती हैं और आपने असावधानी की तो नौका डूब जायेगी और उसके साथ आप भी डूब जायेंगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न

१—उक्त अवतरण के भाव को शीर्षक लिखते हुए स्पष्ट करो।

(२२)

बन जाता सिद्धान्त प्रथम फिर, पुष्टि हुआ करती है;
बुद्धि उसी ऋण को सबसे ले सदा भरा करती है।
मन जब निश्चत सा कर लेता, कोई मत है अपना;
बुद्धि दैव बल से प्रमाण का सतत निरखता सपना।
पवन वही हिलकोर उठाता, वही तरलता जल में;
वही प्रतिध्वनि अन्तरतम की, छा जाती नभ तल में;
सदा समर्थन करती उसकी, तर्क शास्त्र की पीढ़ी;
"ठीक यही है, सत्य यही है, उन्नति सुख की सीढ़ी।"
और सत्य! यह एक शब्द तू, कितना गहन हुआ है;
मेधा के क्रीड़ा पंजर का पाला हुआ सुआ है।
सब बातों में खोज तुम्हारी, रट सी लगी हुई है;
किन्तु स्पर्श से तर्क करो के, बनता छुई-मुई है।

प्रश्न

१—उक्त पद्यांश के मोटे अक्षरों की व्याख्या करो।

२—उक्त पद्य के भाव को स्पष्ट करो।

३—कवि द्वारा व्यक्त मत के पक्ष अथवा विपक्ष में प्रमाण देते हुए अपना मत लिखो।

'सपना निरखना', 'पाला हुआ सुआ' और 'छुई मुई होना' को अपने वाक्यों में प्रयोग करो।

(२३)

'समाज के लिये परोपकार के समान हित साधक अन्य वस्तु नहीं। यह वह गुण है जिससे समाज की स्थिति बनी है। यह परोपकार न हो तो समाज कायम न रह सके। समाज की रक्षा के लिए, उसकी दशा सुधारने के लिये उसमें सुख तथा शांति स्थापित करने के लिए, परोपकार की महत्ता को कौन स्वीकार न करेगा। हमें चाहिए कि हमें व्यक्तिगत संकुचित घेरे से निकल कर अपने सुख दुख की चिन्ता न करके जीवधारियों का हित करें। जो प्यासे हों उन्हें पानी पिलायें, जो भूखे हों उन्हें भोजन करायें, जो नंगे हों उन्हें वस्त्र पहिनायें, जो दुःखी हों उनके दुःख को दूर करें और जो अनाथ हों उनकी सहायता करें। कहने की आवश्यकता नहीं कि परोपकारी के समान उत्कृष्ट काम दूसरा नहीं।"

—उक्त १९५५ ई०।

अ—ऊपर लिखे अवतरण के आधार पर परोपकार का महत्व अपनी भाषा में लिखिये।

अ—निम्नलिखित शब्दों के शुद्ध रूप लिखिए।

श्राप, वादाविवाद, दुरावस्था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(२४)

नीचे लिखे अवतरण के भावों को अपने शब्दों में लिखिये—

किस लिए निरन्तर जलते रहते हो मेरे दीपक।
क्यों यह कठोर व्रत तुमने पाला है प्यारे दीपक ॥
तुम हो मिट्टी के पुतले, मानव भी मिट्टी का रे।
पर दोनों के जीवन में कितना महान अन्तर रे ॥

पर-हित के लिए सदा तुम तिल-तिल जल जल मरते हो।
जग को ज्योतित करने में कब कोर कसर रखते हो ॥
पर मानव, रे उसकी यह प्रज्वलित स्वार्थ की ज्वाला।
पग को नित जला जला कर करती उसका मुँह काला ॥

प्रातः रवि के आने पर तुम मन्द मन्द जलते हो।
अपने से जो तेजस्वी उसका आदर करते हो ॥
पर मानव वह अपने से तेजस्वी का भी वैभव।
क्या कभी देख सकता है होकर प्रशान्त औ, नीरव।

—उक्त, १९५६ ई०

(२५)

हिंसा से मनुष्यत्व मर जाता है। लाखों वर्षों में मनुष्य पशुता से मनुष्यता की ओर आया है। हम उसे फिर पशुता में गिराना नहीं चाहते। हिंसा भी दो प्रकार की होती है। एक संगठित हिंसा और दूसरी व्यक्तिगत हिंसा। संगठित हिंसा के द्वारा जब हम किसी समस्या को हल करना चाहते हैं तो उसमें भी नियमों का पालन करना पड़ता है। पर असंगठित हिंसा में तो कोई नियम नहीं रहता। आदमी गिर जाता है और पशु समान व्यवहार करता है। —उक्त १९५७ ई०

ऊपर लिखे अवतरण के भाव अपनी भाषा में लिखिए—

(२६)

निम्नांकित अवतरण को अपने शब्दों में लिखिए—

निज विनाश रत उद्धत, मति-हत योगभ्रष्ट यह वामन मानव,
अहङ्कार-मज्जित निर्लज्जित बना रहा है निज को दानव,
अहंकार कर्दम-निमग्न यह नग्न बन रहा हैं अति दानव,
उन्नति, बुद्धि, अधीनत निष्ठा, तब इसका हो क्यों न पराभव ?
तुम मंगलमय इस जगती पर करो अवतरित नन्दन कानन,
हे ज्योतिर्मय निज आभा से चमका दो धरती का आँगन।

—उक्त १९५७ ई०

(२७)

'हमारे समाज के मूल उद्देश्य क्या हैं, इसका सार इधर उधर 'समाजवादी ढंग की समाज अवस्था' के वाक्यांश द्वारा प्रस्तुत किया गया है। मोटे तौर पर इसके माने यह हैं कि आगे बढ़ने का रास्ता चुनते समय हम सारे समाज के हित की बात सोचेंगे, किसी खास

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्ग या व्यक्ति के लाभ की नहीं, और विकास-पद्धति और सामाजिक आर्थिक सम्बन्धों का विधान कुछ इस तरह निर्धारित करेंगे कि न सिर्फ राष्ट्रीय आय और रोजगार के अवसर में वृद्धि हो बल्कि लोगों की आय और सम्पत्ति में विषमता घटती ही चली जाये, आर्थिक उन्नति से समाज के वह वर्ग विशेष रूप से लाभान्वित हों जो अपेक्षाकृत कम सम्पन्न हैं।

ऊपर लिखे गद्यांश का सारांश अपनी सरल भाषा में लिखिए। —उक्त, १९५८ ई०
(प्राचीन पाठ्य क्रम से)

(२८)

"हमें स्वराज्य मिल गया, परन्तु सुराज्य अभी हमारे लिए एक सुखद स्वप्न ही है। इसका प्रधान कारण यह है कि देश को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से कठोर परिश्रम करना हमने अब तक नहीं सीखा। श्रम का महत्व और मूल्य हम जानते ही नहीं। हम अब भी आराम तलब हैं। हमें हाथों से यथेष्ट काम करना रुचता ही नहीं। हाथों से काम करने का हम हीन लक्षण समझते हैं। हम कम से कम काम द्वारा जीविका चाहते हैं। हम यहां सोचते रहते हैं कि किस तरह काम से बचा जाय। यह दूषित मनोवृत्ति राष्ट्र की आत्मा में जा बैठी है और वहाँ से हटती नहीं। यदि हम इससे मुक्त नहीं होते और आज समाज से हम जितना पा रहे हैं या लेना चाहते हैं उससे कई गुना अधिक उसे अपने कठोर श्रम से नहीं देते हैं, तो देश आगे नहीं बढ़ सकता और स्वराज्य सुराज्य में नहीं परिणत हो सकता।

उक्त अवतरण का भावार्थ अपनी भाषा में लिखिए—

—उक्त, १९५८ (नवीन पाठ्य क्रम में)

(२९)

निम्नांकित अवतरण के भावों को अपने शब्दों में लिखो—

न अपना ही न जगत का ज्ञान,
न परिचित है निज नयन का कान
दीखता है जग कैसा तात।
नाम गुण, रूप अजान ?
तुम्हीं सा हूँ मैं भी अज्ञात,
वत्स, जग है अज्ञेय महान ?

—उक्त, १९५८ (प्राचीन पाठ्य-क्रम से)

(३०)

निम्नांकित अवतरण का भाव अपने शब्दों में लिखिए—

जो मङ्गल उपकरण कहाते वे मनुजों के पाप हुए क्यों।
विस्मय है, विज्ञान विचारे के वर ही अभिशाप हुए क्यों।
धरणी चीख कराह रही है, दुर्बल शस्त्रों के भारों से।
सभ्य जगत को तृप्ति नहीं अब, युग व्यापी संहारों से।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दलित हुये निर्बल सबलों से, मिटे राष्ट्र उमड़ा दरिद्रपन ।
आह ! सभ्यता आज कर रही असहायों का शोणित शोषण ।
कर्ति धात्रि कविते ! जाग उठ आडम्बर में आग लगादे ।
पतन, पाप, पाखण्ड जलें जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे ॥

—उक्त, १९५८ (नवीन पाठ्य-क्रम)

(३१)

लोभ चाहे जिस वस्तु का हो जब बहुत बढ़ जाता है तब उस वस्तु की प्राप्ति, सामीप्य या उपयोग से भी तृप्ति नहीं मिलती । मनुष्य चाहता है कि वह बराबर मिले या बराबर मिलती रहे । धन का लोभ जब रोग होकर चित्त में घर कर लेती है, तब प्राप्त होने पर भी और की इच्छा बराबर जारी रहती है, जिससे मनुष्य सदा आतुर और प्राप्ति के आनन्द से विमुख रहता है । जितना नहीं है उतने के पीछे, जितना ही उतने से प्रसन्न होने का उसे कभी अवसर नहीं मिलता । उसका सारा अतःकरण सदा अभावमय रहता है । उसके लिए जो है, वह भी नहीं है । असन्तोष अभाव कल्पना से उत्पन्न दुख है । अतः जिस किसी में यह अभाव-कल्पना स्वाभाविक हो जाती है सुख से उसका नाता सब दिन के लिए टूट जाता है । न किसी को देखकर वह प्रसन्न होता है और न उसे ही देखकर कोई प्रसन्न होता है । इसी से सन्तोष सात्विक जीवन का अंग बतलाया गया है ।

—उक्त १९५० ई०

उपर्युक्त गद्यांश का भावार्थ समझाकर लिखिए ।

(३२)

निम्नांकित अवतरणों का भाव अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए—

नाल गगन के शुचि प्रांगण में, थिरक-थिरक कर इठलाते ।
ऊषा के लख लाल नयन तुम, क्षीण-मालिन मुख हा जाते ।
होकर सदृश चमकते हो तुम, और फूल सा सुन्दर गात ।
मोती से उज्जल हो प्यारे, भोले बालक से अज्ञात ॥
रजनी के सुनसान राज्य में खेला करते हैं सुकुमार ॥
हमें दिखाते आकुल मन से, अपना झिलमिल सा संसार ॥
रजनी में यदि तुम न विचरते, क्या दुखियों का होता आज ?
गिनने क्या फिर अर्ध निशा में, अरुण नयन करते क्या काज ?
हे तारक-शिशु वृन्द सलोने कहदो कहदो अपना हाल,
बतलाते सब लोग यही हैं, तुम हो जग से अधिक विशाल ॥

—उक्त, १९५९ ई० ।

(३३)

निम्नलिखित अवतरण का भावार्थ अपनी भाषा में लिखिए—

उदारता का अभिप्राय केवल निःसंकोच भाव से किसी को धन दे डालना ही नहीं, वरन् दूसरों के प्रति उदार भाव रखना भी है । उदार पुरुष सदा दूसरों के विचारों का आदर करता है और समाज में सेवक भाव से रहता है । यह न समझो कि केवल धन से उदारता हो सकती है । सच्ची उदारता इस बात में है कि मनुष्य को मनुष्य समझा जाय ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धन की के उदारता साथ सबसे बड़ी एक और उदारता की आवश्यकता है। वह यह कि उपकृत के प्रति किसी प्रकार का एहसान न जताया जाय। एहसान दिखाना उपकृत को नीचा दिखाना है। एहसान जताकर उपकार करना अनुपकार है।

—उक्त, १९६०।

(३४)

निम्नांकित अवतरण का भाव अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए—

वर्णन करें किस भाँति हम हे ईश ! तव लीला महा,
वाणी न सकती देख, जाता है न आँखों से कहा।
जिस द्रव्य को हैं देखते पाते उसे अचरज भरा,
सर्वेश ! तव कारीगरी से है भरी सारी धरा॥

काली घटा में घोर गर्जन—युक्त बिजली की छटा।
जल उथल वर्षण नियम से, सुरचाप की छवि अट पटा।
ग्रह, चन्द्र, तारे, सूर्य इनकी मोहनी शोभा बड़ी,
है हे प्रभु ! सबमें तुम्हारी शक्ति नैसर्गिक जड़ी॥

करते हुए "झरझर" मधुर रव झर रहे झरने कहीं,
द्रुम विटप-शाखा चूमती तटनी कहीं हैं बह. रहीं।
कल्लोलमय सागर कहीं, स्थिर कमल विकसित सर कहीं,
किस वस्तु में आभा तुम्हारी ईश है छिटकी नहीं॥

—उक्त, १९६०

(३५)

निम्नलिखित का भावार्थ अपनी भाषा में लिखिये—

आलोचना का अंकुश लोगों को मनमाने रास्ते पर चलने से रोकता और उन्हें ठीक मार्ग पर चलने के लिये बाध्य करता है। कुछ दिनों तक लोग आलोचकों के बताये हु मार्ग पर चलते हैं, पर आगे चलकर उस मार्ग से उकता जाते हैं और आलोचक के शासन से निकल कर नये नये मार्ग ढूँढ़ने लगते हैं। जब वे कोई नया मार्ग ढूँढ़ लेते हैं तब आलोचक उस मार्ग के कंटक आदि दूर करके उसे परिष्कृत करने लगते हैं और लोगों को गड्ढे में गिरने से बचाने का उद्योग करते हैं।

—उक्त, १९६१

(३६)

निम्नलिखित अवतरण का भाव अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए—

उसको विलोक लोक सुध-बुध खोता सदा,
होता उसे ऐसा मोद मन में महान है।
ज्यों-ज्यों हम देखते हैं उसका अनूप रूप
त्यों-त्यों वह होता ज्ञात और रूपवान है।
जग में अनेक उपमान हैं प्रसिद्ध किन्तु,
कोई भी न छविमान उसके समान है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

होता चूर उसकी निराली चारु-छवि देख,
लाखों अंशु माली की प्रभाली का गुमान है।
उसको निहार छवि ने भी हार मानली है,
कमनीय कंज कलियाँ हैं कुम्हलाई सी।
क्षण क्षण ज्योति क्षण ज्योति की विलीन होती,
मानो उसे देख छिपाती है शरमाई सी।
आँख सदा दौड़ जाती है उसी के पास,
उसके सुरूप-सुधा-सिंधु में शरमाई सी।
शरद जुन्हाई मन भाई है अवश्य किन्तु,
पाई है लुनाई नहीं, उसकी लुनाई सी।

—उक्त, १६६१

(३७)

निम्नलिखित अवतरण का भावार्थ अपनी भाषा में लिखिए—

सर्वोत्तम कविता की यह पहचान है कि उसके पढ़ने या सुनने से पाठक या श्रोता का मन कवि के भाव में लीन हो जाता है। कवि के हृदय का भाव पाठक या श्रोता के हृदय का भाव बन जाता है। जिस कवि में अपने हृदय के भाव को यथार्थ रूप में पाठक या श्रोता के हृदय में पहुँचाने की अधिक से अधिक प्रतिभा होती है, उसकी कविता उतनी ही अधिक प्रभावपूर्ण तथा रुसग्ना करने वाली होती है। ऐसे ही कवियों की कविता का सदैव आदर होता है।

—उक्त, १६६२

(३८)

निम्नलिखित अवतरण का भाव अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए—

बहु विज्ञ तत्वज्ञानियों ने बात यह मुझ से कही
माधव ! तुम्हें जो इष्ट होता सर्वदा होता वही।
अज्ञानता से मूर्ख जन मानव तुम्हें हैं मानते,
ज्ञावी, विवेकी, विज्ञवर, विश्वेश तुम को जानते।।

—उक्त, १६६३

(३९)

नीचे उद्धृत अवतरण का आशय लिखिए जो इसके तृतीयांश से अधिक न हो—

साँस्कृतिक एकता की स्थापना में भारत के धर्मों एवं सम्प्रदायों का महत्वपूर्ण योग है। अन्य देशों के धर्मों में जो असहिष्णुता देखी जाती है वह उनमें छू तक नहीं गई। भारत में किसी धर्म या जाति को बल-प्रयोग से मिटाने की कल्पना तक नहीं हुई। वहाँ आने वाली प्रत्येक जाति का अस्तित्व बना है। प्रत्येक जाति को अपने-अपने विश्वास के अनुसार इस विश्व के स्रष्टा को देखने, समझने तथा मानने कहने की स्वतन्त्रता सदैव रही है। इसी धार्मिक सहिष्णुता के कारण यहाँ का साधारण किसान मजदूर तक यह समझता है कि उपासना के सभी मार्ग अन्त में एक ही ईश्वर के समीप पहुँचते हैं। इसी से ऊपर से अलग-अलग प्रतीत हो रहे ग्रन्थों के होते हुए भी भारत के सामान्य धार्मिक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जीवन में आज भी प्राचीन काल से कोई परिवर्तन नहीं दिखलाई पड़ता। इसी सहिष्णुता के फलस्वरूप यहाँ के निवासी एक-दूसरे से विचारों को समझने के लिए प्रयत्नशील रहे। उन्होंने निरन्तर एक-दूसरे से बहुत कुछ लिया दिया। इसी ने विशाल देश को एक राष्ट्र का रूप प्रदान किया। आज देश को इसी समन्वय की ओर प्रवृत्त करने वाली सहिष्ता की सबसे अधिक आवश्यकता है जिससे प्रदेश भाषा और जाति के भेदों के कारण उत्पन्न हो रहे बिलगाव के भाव दबाये जा सकें और देश की राष्ट्रीय एकता अखण्ड रहे।

—उक्त, १९६३

(४०)

निम्नलिखित अवतरण का भाव सरल शब्दों में व्यक्त कीजिए—

शिशु, तेरी अनुपम छवि निहार,
मिल जाता हमको स्वर्ग-द्वार।
नभ में मयंक लगता रुचिकर,
सरवर में विकसित कमल सुघर,
उपवन में है गुलाब सुन्दर,
पर माँ की गोदी में इनसे
बढ़कर तेरी छवि है अपार॥

झलमल झलमल करती शबनम,
मोती में होती चमक न कम
बिजली के दीप बड़े चमचम
पर ये सब हैं लगते धुँधले
तेरे दाँतों की द्युति निहार

—उक्त, १९६३

(४१)

प्रथम पत्र—निम्न अवतरण का आशय चार पाँच पंक्तियों में लिखिए और उसका एक उपयुक्त शीर्षक बताइए—

पुस्तकों का हम सबको बहुत ऋणी होना चाहिए। मनुष्य जाति ने आज तक जितना भी ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त किया है, जो भी अन्वेषण और आविष्कार किये हैं। वे सब इनमें संचित हैं। इनसे हम हर प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ये अध्यापक हमको बिना दन्ड प्रहार के, बिना कुटिल शब्द कहे अथवा क्रोध किये और बिना शुल्क लिये ही शिक्षा दे सकते हैं। यदि हम इनके सन्निकट जावे, तो ये सोते अथवा अन्य किसी कार्य में संलग्न न मिलेंगे। यदि हम जिज्ञासु हैं और इनसे प्रश्न करते हैं, तो ये हम से कुछ परोक्ष न रखेंगे। यदि हम इनके यथार्थ रूप को न समझें, तो ये भुन भुनायेंगे नहीं और यदि हम अज्ञानी हैं, तो हमारी मूर्खता पर हँसेंगे नहीं। इसलिए बुद्धि तथा ज्ञान से पूर्ण पुस्तकालय संसार की बहुमूल्य वस्तु है। इससे अन्य किसी वस्तु की तुलना नहीं की जा सकती। जो कोई भी सत्य, आनन्द धर्म, राजनीति और विज्ञान का जानना चाहता है. उसे पुस्तकों का सहारा लेना चाहिए।

—उक्त, १९६४

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(४२)

द्वितीय पत्र—नीचे लिखे अवतरण का भाव सरल भाषा में स्पष्ट कीजिए—

पिसती कराहती जगती के प्राणों में भरते अभयदान।
अघ मरे देखते हैं तुमको किसने आकर यह किया त्राण ?॥
कँपता असत्य, कँपती मिथ्या, बर्बरता कपती है थर-थर।
कँपते सिंहासन राजमुकुट, कँपते खिसके आते भूँधर॥
हैं अस्त्र शस्त्र कुंठित लुँठित सेनाएँ करती ग्रह प्रयाण।
रण मेरी तेरी बजती है उड़ता है तेरा ध्वज निशान॥
हे युग द्रष्टा, हे युग-स्रष्टा! पढ़ते कैसा यह मोक्ष मन्त्र।
इस राज तन्त्र के खंडहर में जगता अभिनव भारत स्वतन्त्र॥

—उक्त, १९६४

(४३)

निम्नस्थ अवतरण का आशय पाँच छः पंक्तियों में लिखिए और उसका एक उपयुक्त शीर्षक बताइये—

यह प्रायः देखा जाता है कि बहुत से युवक जो जीवन-संग्राम में पुस्तकों का बोझ लादे बिना प्रवेश करते हैं, अपनी व्यावहारिक कार्य शीलता के कारण अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करते चले जाते हैं। उन्हें कोई शिक्षित मनुष्य अपनी भाषा में अपढ़ भले ही कहले परन्तु ऐसे ही मनुष्य अपने साहस और अपनी स्वाभाविक समझ तथा कार्य-संलग्नता के कारण डिग्री-प्राप्त किन्तु अकर्मण्य युवकों से बाजी मार ले जाते हैं। ऐसे मनुष्य फूंक-फूंक कर पैर रखते हैं, परन्तु उनमें आत्म-विश्वास रहता है, वे अपने उद्देश्य से विचलित नहीं होते और सफलता उन्हें मदान्ध नहीं करती। इनके विपरीत ऐसे मनुष्य, चाहे वे बहुत कुछ पढ़े लिखे कुशाग्र-बुद्धि ही क्यों न हों, जो अपना उद्देश्य स्थिर नहीं कर सकते और धैर्यपूर्वक उसमें तत्पर नहीं रह सकते, प्राय; जीवन-संग्राम में विफल रहते हैं।

—उक्त, १९६५

(४४)

नीचे लिखे अवतरण का भाव सरल भाषा में स्पष्ट कीजिए—

पूर्वज छोड़ गये हैं सम्मुख उच्चादर्शों के पद अङ्क,
हो पथभ्रष्ट भला अपने सिर लेगा कायर कौन कलंक ?
इस संसार-समर-प्रांगण में जीवन है क्या ? इक संग्राम
रग मंच पर नायक बनकर दिखलावें हम अपना काम।
हम मनुष्य हैं, क्यों निराश हो बैठे धरे हाथ पर हाथ,
यहाँ नहीं तो और देश में परखें भाग्य धैर्य के साथ।

—उक्त, १९६५

(४५)

निम्नलिखित अवतरण का भावार्थ अपनी भाषा में लिखिये—

हमें स्वराज्य मिल गया, परन्तु स्वराज्य हमारे लिए एक सुखद स्वप्न ही है। इसका प्रधान कारण यह है कि देश को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से कठोर परिश्रम करना हमने अब

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तक नहीं सीखा। श्रम का महत्व और मूल्य हम जानते ही नहीं। हम अब भी आराम तलब हैं। हमें हाथों से यथेष्ट काम करना रुचता ही नहीं। हाथों से काम करने को हम हीन लक्षण समझते हैं। हम कम से कम काम द्वारा जीविका चाहते हैं। हम यही सोचते रहते हैं कि किस तरह काम से बचा जाय। यह दूषित मनोवृत्ति राष्ट्र की आत्मा में जा बैठी है और वहाँ से हटती नहीं। यदि हम इससे मुक्त नहीं होते तो देश आगे बढ़ नहीं सकता और स्वराज्य सुराज्स में नहीं परिणित हो सकता।

—उक्त, १९६७

(४६)

नीचे लिखे पद्यांश का भाव सरल भाषा में स्पष्ट कीजिए—

संसृति सुख सोती होती क्या सतत सवेरा होता,
मानव मानव कहलाता क्या जीवन जीवन होता ?
मोती समान सुमनों को बिखरे क्यारी-क्यारी से,
यदि हाथ बढ़ा चुन लेते अम्बर की फुलवारी से।
होतीं न शिथिल शरमानें, होता न अनभिमत पाना,
क्या होता यह न जगत् की निधियों का मान घटाना ?

—उक्त, १९६७

संस्कृत

महत्व—हिन्दी का ही नहीं, भारत की सम्पूर्ण आर्य भाषाओं का मूल स्रोत संस्कृत है। उसके शब्द आज भी इन विभिन्न भाषाओं में तत्सम रूप में प्रयुक्त होते हैं। भारत के अधिकतर धर्मों के धर्म ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। प्रायः इस देश के निवासियों के नाम भी संस्कृतमय है। आधुनिक काल में विज्ञान राजनीति आदि में प्रयुक्त होने वाले अँग्रेजी शब्दों के स्थान पर हिन्दी शब्द भी संस्कृत व्याकरण की सहायता से बनाये गये हैं। साहित्य की दृष्टि से भी संस्कृत का साहित्य सर्वांगपूर्ण है। दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, काम शास्त्र, आदि विविध विषयों के उच्चकोटि के ग्रन्थ इसमें पाये जाते हैं। प्रस्तुत प्रकरण में हम संस्कृत की सामान्य विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे।

वचन, पुरुष और लिंग

संस्कृत के तीन वचन (एक वचन, द्विवचन और बहुवचन), तीन पुरुष (प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष) और तीन लिंग (पुंलिंग, स्त्री-लिंग और नपुंसक लिंग होते हैं) वचन तथा लिंग नीचे की तालिका से स्पष्ट हो जायेंगे।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष (पुंलिंग)	सः	तौ	ते
(स्त्रीलिंग)	सा	ते	ताः
(नपु० लिंग)	तत्	ते	तानि
	(वह)	(वे दोनों)	(वे)
(पुंलिंग)	भवान्	भवन्तौ	भवतः
(स्त्रीलिंग)	भवती	भवत्यो	भवत्यः
	(आप)	(आप दोनों)	(आप सब)
मध्यम-पुरुष	त्वम्	युवाम्	यूयम्
	(तू)	(तुम दोनों)	(तुम सब)
उत्तम पुरुष	अहम्	आवाम्	वयम्
	(मैं)	(हम दोनों)	(हम सब)

विशेष—हिन्दी का 'अन्य पुरुष' संस्कृत में 'प्रथम पुरुष' कहा जाता है। अतः प्राणी, स्थान, वस्तु आदि के नाम 'प्रथम पुरुष' होते हैं।

२—मध्यम पुरुष तथा उत्तम पुरुष में तीनों लिंग एक से होते हैं।

सन्धि

निकटवर्ती दो वर्णों के मेल के जो विकार होते हैं, उसे सन्धि कहते हैं। जैसे—विद्यार्थी विद्या+अर्थी) में आ और अ मिलकर 'आ' हो गया है।

सन्धि तीन प्रकार की होती है।

१—स्वर सन्धि, २—व्यंजन सन्धि, ३—विसर्ग सन्धि।

यहाँ हाई स्कूल परीक्षोपयोगी स्वर सन्धि का ही वर्णन करेंगे।

स्वर सन्धि

स्वर के साथ स्वर के मिलने से जो विकार होता है, उसे स्वर सन्धि कहते हैं। जैसे 'विद्या+अर्थी=विद्यार्थी में, विद्या के अन्त के 'आ' और 'अर्थी' के आदि के 'अ' को मिलाकर 'आ' बन गया है। 'आ' तथा 'अ' दोनों ही स्वर हैं; अतः यह स्वर सन्धि है। यह प्रधानतः ६ प्रकार की होती है—

(१) दीर्घ, (२) गुण, (३) वृद्धि, (४) यण, (५) अयादि, (६) पूर्व रूप।

(१) दीर्घ स्वर सन्धि—(अकः सवर्णेदीर्घः) यदि ह्रस्व अथवा दीर्घ अ, इ, उ, ऋ, के बाद क्रमशः ह्रस्व या दीर्घ अ, इ, उ, ऋ, लृ आये, तो उन दोनों के स्थान पर क्रमशः आ, ई, ऊ ॠ हो जाते हैं। जैसे—

अ +अ=आ,	दैत्य+अरिः=दैत्यारिः।
आ+अ=आ,	विद्या+अर्थी=विद्यार्थी।
इ+इ=ई,	कवि+इन्द्र =कवीन्द्रः।
ई+ई=ई,	नदी+ईशः=नदीशः।
उ+उ=ऊ,	भानु+उदयः=भानूदयः।
ऊ+उ=ऊ,	वधू+उदयः=वधूदयः।
ऋ+ऋ=ॠ,	पितृ+ऋणम्=पितॄणम्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ऋ + लृ = ऋ, होतृ + लृकारः = होतृ् कार,

(२) **गुण स्वर सन्धि**—(आद् गुणः) यदि 'अ' अथवा 'आ' के बाद ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ, लृ, आये, तो अ + इ = ए, अ + उ = ओ, अ + ऋ = अर् और अ + लृ = अल् हो जाते हैं। जैसे—

अ + इ = ए, देव + इन्द्रः = देवेन्द्रः।
आ + इ = ए, महा + इन्द्रः = महेन्द्र।
अ + उ = ओ, पर + उपकारः = परोपकारः।
आ + उ = ओ, गंगा + उद्कम् = गंगोद्कम्।
आ + ऋ = अर् महा + ऋषि = महर्षिः।
अ + लृ = अल् तव + लृकारः = तवल्कारः।

(३) **वृद्धि स्वर संधि**—(वृद्धि रेचि)—यदि 'अ' अथवा 'आ' के बाद ए, ऐ, ओ, औ आये, तो अ अथवा आ + ए अथवा ऐ = ऐ और अ अथवा आ + औ अथवा ओ = औ हो जाते हैं। जैसे—

आ + ए = ऐ सदा + एव = सदैव।
आ + ऐ = ऐ महा + ऐश्वर्यम् = महश्वर्यम्।
अ + ओ = औ उष्ण + ओदनम = उष्णोदनम्।
अ + औ = औ महा + औषधम् = महौषधम्।

(४) **यण स्वर सन्धि**—(इको यणचि) यदि ह्रस्व अथवा दीर्घ इ, उ, ऋ, लृ, के बाद कोई असयान स्वर आये 'तो इ का य्, उ का व ऋ का र् और लृ का ल हो जाते हैं। जैसे—

इ + अ = य + आ = या इति + आदि; = इत् + य् + आदिः = इत्यादिः।
उ + आ = व् + आ = वा, सु + आगतम् = स् + व् + आगतम् = स्वागतम्।
ऋ + आ = र् + आ = रा, पितृ + आज्ञा = पित् + र् + आज्ञा = पित्राज्ञा।
लृ + आ = ल् + आ = ला, लृ + आकृतिः = ल् + आकृतिः = आकृतिः।

(५) **अयादि स्वर सन्धि**—(एचोयवायावः) यदि ए, ऐ, ओ, औ के बाद कोई स्वर आये, तो उनके स्थान पर क्रमशः अय्, आय्, अव्, आव्, हो जाते हैं—जैसे—

ए + अ = अय् + अ = अय, चे + अनम् = च + अय् + अनम् = चयनम्।
ऐ + अ = आय् + आय् नै + अक; = न् + आय् + अकः = नायकः।
आ + इ = अव् + इ = अवि, पो + इत्रः = प् + अव् + इत्रः = पवित्रः।
आ + अ = आव् + = आव्, पौ + बकः = प् + आव् + अकः = पावकः।

(६) **पूर्व रूप स्वर सन्धि**—(एङ पदान्तादति) यदि पदान्त के ए अथवा ओ के बाद 'अ' आये, तो अ' का पूर्व रूप (ऽ) हो जाता है। जैसे—

ए + अ = ऽ, हरेअव = हरेऽव।
ओ + अ = ओऽ, विष्णो + अव = विष्णोऽव।

संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण (रूप)

संस्कृत में संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण का रूप परिवर्तन कारकों के कारण होता है। प्रायः हिन्दी और संस्कृत के कारक एक ही हैं, हर संस्कृत वाले सम्बन्ध और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
सम्बोधन को क्रिया के साथ सम्बन्ध होने के कारण कारक नहीं मानते। कारकों को ही विभक्ति कहा जाता है। सम्बोधन को प्रथमा कर्त्ता कारक का ही रूप होने के कारण अलग विभक्ति नहीं माना जाता, अतः विभक्तियाँ सात ही होती हैं।

कारक	विभक्ति	हिन्दी में अर्थ
कर्त्ता	प्रथमा	ने।
कर्म	द्वितीया	को।
करण	तृतीया	के द्वारा, से (with)
सम्प्रदान	चतुर्थी	के लिए, को (देने के अर्थ में)
अपादन	पंचमी	से (from)
सम्बन्ध	षष्ठी	का, की, के, ना, नी, ने, रा, री रे।
अधिकरण	सप्तमी	में, पर।
सम्बोधन		हे, अरे,

संस्कृत में विभक्तियाँ शब्दों से मिलाकर ही लिखी जाती हैं। शब्द के लिङ्ग तथा अन्तिम स्वर अथवा व्यंजन के अनुसार शब्दों के रूप चलते हैं। यद्यपि वे सम्पूर्ण रूप निश्चित नियमों के अनुसार ही चलते हैं, पर वे नियम इतने अधिक हैं कि साधारण छात्रों के उन नियमों के बिना ही रूपों को जान लेना ही सरल होता है। कुछ साधारण नियम नीचे लिखे जाते हैं।

नपुंसक लिंग के केवल अकारान्त तथा पुंलिग और स्त्रीलिंग के सम्पूर्ण शब्दों के द्वितीया एकवचन के अन्त में 'म्' आता है।

सर्वनाम संख्या वाचक विशेषण और अकारान्त तथा पुंलिग शब्दों को छोड़कर अन्य शब्दों के पंचमी और षष्ठी के एक वचन एक से होते हैं।

नपुंसक लिंग में प्रथमा और द्वितीया विभक्ति सी होती है।

प्रायः प्रथमा और द्वितीया के द्विवचन, तृतीया, चतुर्थी और पंचमी के द्विवचन तथा षष्ठी और सप्तमी के द्विवचन एक से होते हैं।

सम्बोधन के द्विवचन और बहुवचन प्रायः प्रथमा के द्विवचन और बहुवचन के अनुकूल होते हैं।

प्रायः चतुर्थी और पंचमी के बहुवचन एक से होते हैं। षष्ठी के बहुबचन के अन्त में अधिकतर 'नाम' या 'णाम्' आता है। सप्तमी के बहुबचन के अन्त में 'सु' अथवा 'षु' का प्रयोग होता है।

अकारान्त पुंलिग शब्दों के प्रथमा एकवचन में, अकारान्त शब्दों को छोड़कर अन्य शब्दों के पंचमी और षष्ठी के एकवचन तथा द्वितीया बहुबचन में सम्पूर्ण शब्दों के षष्ठी तथा सप्तमी के द्विवचन में और इन्हीं के तृतीया बहुबचन में विसर्ग का प्रयोग होता है। विसर्ग इन शब्दों के अन्त में लगती है।

प्रायः सभी सर्वनामों के रूप एक ही चलते हैं।

विशेष—१—ऊपर लिखे नियमों के अपवाद भी होते हैं, अतः किसी शब्दों के रूपों को एक बार ध्यान से देखकर उन अपवादों को समझ लेना चाहिए।

२—रूपों को स्मरण करने का सरल तरीका भी यही है कि पहले किसी एक शब्द

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

या धातु को अच्छी प्रकार से समझ कर कण्ठस्थ कर लिया जाय। फिर अन्य शब्दों और धातुओं के रूपों को समझते समय पहले वाले रूपों से मिलाकर उनके अन्तर को खूब समझ लिया जाय।

३—नये शब्दों के रूपों को बनाने से पहले यह जान लेना चाहिये कि शब्दों का क्या लिंग है और उनके अन्त में कौनसा स्वर अथवा व्यंजन है। फिर उसी लिंग के इसी स्वर या व्यंजन को अन्त में रखने वाले शब्द के अनुसार उसके रूप चला लेने चाहिए। जैसे, हमें 'बालक' शब्द का 'षष्ठी' के एकवचन का रूप ज्ञात करना है। 'बालक' का पुंलिग है और इसके अन्त में 'अ' है अतः पुंलिग में 'अ' अन्त में रखने वाले 'राम' का षष्ठी का एकवचन 'रामस्य' को ध्यान में रखकर हमने बालक का 'बालकस्य' रूप ज्ञात कर लिया।

अब हम हाईस्कूल परीक्षा में निर्धारित शब्दों के रूप लिखेंगे तथा उसके नीचे उसके ही समान चलने वाले अनुवाद के लिए उपयोगी शब्दों को लिखेंगे

अकारान्त पुंलिग शब्द (राम)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पंचमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु
सम्बोधन	राम !	रामौ !	रामाः !

नीचे लिखे शब्दों के रूप भी 'राम' के समान ही चलेंगे। (केवल 'र' और 'ष' न रखने वाले शब्दों के 'तृतीया एकवचन' और 'षष्ठी बहुवचन' में 'ण' की जगह 'न' ही रहेगा। अतएव 'बालक' का तृतीया एकवचन और 'षष्ठी बहुवचन' में क्रमशः 'बालकेन और 'बालकानाम्' बनेगा।

मनुष्य—आदमी। बालकः—लड़का। पुत्रः—पुत्र। जनकः—पिता पितृव्यः—चाचा। मातुलः—मामा। पितामहः—बाबा। मातामहः—दादी। नृपः—राजा। छात्रः—विद्यार्थी। मूर्खः—मूर्ख। चतुरः—चतुर। आदेशः—आज्ञा। चोरः—चोर। गजः—हाथी। अश्वः—घोड़ा। खरः—गदहा। कुक्कुरः—कुत्ता। बानरः—बन्दर। सिंहः—शेर। व्याघ्रः—बाघ। हिरणः—हिरन। सर्पः—साँप। मार्जारः—बिल्ली। मूषकः—चूहा। शुकः तोता। पिकः—कोयल। खगः—पक्षी। मयूरः—मोर। श्येनः—बाज। काकः—कौआ। बकः—बगुला। कपोतः कबूतर। सूर्यः—सूर्य। चन्द्रः—चन्द्रमा। पवनः—वायु। मेघः—मेघ, बादल। ईश्वरः—ईश्वर। देवः—देवता। कर—हाथ। नखः—नाखून। कण्ठः—गला। समुद्रः—समुद्र। पर्वतः—पहाड़। पाषाणः—पत्थर। ग्रामः—गाँव। अलङ्कारः—गहना। विद्यालयः—स्कूल। भ्रमरः—भौंरा। आम्रः—आम। निम्बः—नीम। दीपकः—दीपक।

इकारान्त पुंलिङ्ग शब्द (हरि-भगवान)

प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
द्वितीया	हरिम्	हरी	हरीन्

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तृतीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
चतुर्थी	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पंचमी	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
षष्ठी	हरेः	हर्योः	हरिणाम्
सप्तमी	हरौ	हर्योः	हरिषु
सम्बोधन	हरे !	हरी !	हरयः !

अग्निः—आग, असिः—तलवार, अरिः—शत्रु, कविः—कवि, ऋषिः—ऋषि के रूप भी प्रकार चलते हैं।

उकारान्त पुंलिङ्ग शब्द (भानु-सूर्य)

प्र०	भानुः	भानू	भानवः
द्वि०	भानुम्	भानू	भानुम्
तृ०	भानुना	भानुभ्याम्	भानुभयः
च०	भानवे	भानुभ्याम्	भानुभ्यः
पं०	भानोः	भानुभ्याम्	भानुभ्यः
ष०	भानोः	भान्वोः	भानूनाम्
स०	भानौ	भान्वोः	भानुषु
सं०	भानो	भानू	भानवः

गुरुः=गुरु, बाहु=बाँहु, तरुः=वृक्ष, शिशुः=बच्चा आदि के रूप भी इसी प्रकार चलेंगे।

अकारान्त नपुंसक लिंग शब्द (पुस्तक)

प्र०	पुस्तकम्	पुस्तके	पुस्तकानि
द्वि०	पुस्तकम्	पुस्तके	पुस्तकानि
तृ०	पुस्तकेन	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकैः
च०	पुस्तकाय	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकेभ्यः
पं०	पुस्तकात्	पुस्तकाभ्याम्	पुस्तकेभ्यः
ष०	पुस्तकस्य	पुस्तकयोः	पुस्तकानाम्
स०	पुस्तके	पुस्तकयोः	पुस्तकेषु
सं०	पुस्तक !	पुस्तके!	पुस्तकानि !

निम्न शब्दों के रूप भी 'पुस्तक' के समान ही चलते हैं।

बेत्रम्—बाँस। पुष्पम्—फूल। वनम्—वन। घनम्—घन। सुखम्—सुख। दुःखम्—दुःख। उद्यानम्—बगीचा। वस्त्रम्—कपड़ा। नगरम्—नगर। कार्यम्—काम। फलम्—फल। सुवर्णम्—सोना। कमलम्—कमल। मित्रम्—मित्र। उदरम्—पेट। गीतम्—गीत। दिनम्—दिन। वर्षम्—वर्ष। मुखम्—मुख। गृहम्—घर।

इकरान्त नपुंसकलिंग शब्द (वारि-जल)

प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	"	"	"
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	"	वारिभ्यः
पंचमी	वारिणः	"	"

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

षष्ठी	,,	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	,,	वारिषु
सम्बोधन	वारे वारि	हे वारिणी	हे वारीणि

उकारान्त नपुंसक लिंग शब्द (मधु-शहद)

प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वितीया	मधु	मधुनी	मधूनि
तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पंचमी	मधुनेः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम
सप्तमी	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सम्बोधन	मधु, हे मधो	मधुनी	मधुनि

अकारान्त स्त्रीलिंग शब्द (गङ्गा)

प्र०	गङ्गा	गङ्गे	गङ्गाः
दि०	गङ्गाम्	,,	गङ्गाः
तृ०	गङ्गया	गङ्गाभ्याम्	गङ्गाभिः
च०	गङ्गा	गङ्गाभ्याम्	गङ्गाम्यः
पं०	गङ्गायाः	गङ्गाभ्याम्	गङ्गाम्यः
ष०	गङ्गायाः	गङ्गयोः	गङ्गानाम्
स०	गङ्गायाम्	गङ्गयो	गङ्गासु
सं०	गङ्गे	गङ्गे	गङ्गा

निम्न शब्दों के रूप भी 'गंगा' के समान ही चलते हैं।

माला—माला। भार्या—पत्नी। रमा—लक्ष्मी। प्रजा—प्रजा। कथा—कहानी। निशा—रात। नासिका—नाक। जिह्वा—जीभ। आज्ञा—आज्ञा। लता—बेल। तुला—तराजू। क्रीड़ा—खेल। सेना—सेना। दिशा—दिशा। सेवा—सेवा।

इकारान्त स्त्रीलिंग शब्द (मति-बुद्धि)

प्र०	मतिः	मति	मतयः
द्वि०	मतिम्	,,	मतीः
तृ०	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
च०	मत्यै, मतये	,,	मतिभ्यः
पं०	मत्याः, मतेः	,,	,,
ष०	,, ,,	मत्योः	मतीनाम्
स०	मत्याम्, मत्यौ	,,	मतिषु
सं०	मत्या	मती !	मतयः

रीतिः—तरीका, कीर्तिः—यश, विपत्तिः—आपत्ति, भूमिः—पृथ्वी, नीतिः—नीति, प्रीतिः—प्रेम, प्रकृतिः—स्वभाव आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार चलते हैं।

सर्वनाम तद्-वह (पुंलिंग)

प्र०	सः	तौ	ते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

द्वि०	तम्	,,	तान्
तृ०	तेन	ताभ्याम्	तैः
च०	तस्मै	,,	तेभ्यः
पं०	तस्माद्	ताभ्याम्	तेभ्यः
ष०	तस्य	तयोः	तेषाम्
स०	तस्मिन्	,,	तेषु

तद्-वह (स्त्रीलिंग)

प्र०	सा	ते	ताः
द्वि०	ताम्	,,	ताः
तृ०	तया	ताभ्याम्	ताभिः
च०	तस्य	,,	ताभ्यः
पं०	तस्याः	,,	,,
ष०	,,	तयोः	तासाम्
स०	तस्याम्	तयोः	तासु

तद्=वह (नपुंसक लिंग)

प्र०	तत्	ते	तानि
द्वि०	,,	,,	,,

शेष पुंलिंग की तरह

यद् (=जो) और किम् (=क्या, कौन) के रूप भी तद् की तरह ही चलते हैं, अर्थात् तद् के रूपों में सब स्थानों पर आदि के 'स' अथवा 'त' की जगह पर 'यद्' के रूप बनाने के लिए 'य' कर देने से 'यद्' के रूप और 'किम्' के रूप बनाने के लिए 'क' कर देने से 'किम्' के रूप बन जाते हैं किन्तु 'किम्' का नपुंसकलिंग में प्रथमा और द्वितीया के एक-वचन में 'किम्' ही बनता है।

एतद् (=यह) के रूप भी 'तद्' की तरह बनते हैं। अर्थात् 'तद्' के रूपों के आगे 'ए' और जोड़ देने से एतद् के रूप बन जाते हैं। सः और 'सा' से पहले 'ए' लगाने से 'एष' और 'एषा' बनता है।

युष्मद्=तू

प्र०	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वि०	त्वाम्, त्वा	युवाम्, वाम्	युष्मान्, वः
तृ०	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
च०	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः
पं०	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
ष०	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
स०	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

अस्मद्=मैं

प्र०	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वि०	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तृ०	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
च०	मह्यम्, मे	आवाभ्याम् नौ	अस्मभ्याम्, नः
पं०	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
ष०	मम, म	अवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
स०	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् और अस्मद के रूप तीनों लिगों में एक से चलते हैं।

क्रिया धातु रूप

संस्कृत की क्रियाएँ जिन मूलों से बनती हैं, उन्हें 'धातु' कहते हैं। जैसे—'पठत' क्रिया 'पठ्' धातु से बनी है।

कुछ धातुएँ परस्मैपदी, कुछ आत्मनेपदी और कुछ उभयपदी होती हैं। इनमें भी तीन बचन (एक वचन, द्विवचन और बहुवचन) और तीन पुरुष (प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष) होते हैं!

संस्कृत में काल (Tense) और कथन प्रकार (Moods) के लिए 'लकार' शब्द प्रचलित है, ये दश होते हैं। विद्यार्थियों का काम निम्न लकारों में ही चल जाता है।

१—लट्—वर्तमान काल में। २—लृट—भविष्यत् काल में। ३—लङ्—भूतकाल में। ४—लोट्—आज्ञा तथा आशीर्वाद में। ५—विधिलिङ्—विधि, प्रार्थना, आदि में (चाहिए के अर्थ में)। अब हम अनुवादोपयोगी कुछ धातुओं के रूप लिखेंगे—

पठ्-पढ़ना

लट् लकार वर्तमान काल

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	पठति	पठतः	पठन्ति
मध्यम पु०	पठसि	पठथः	पठथ
उत्तम पु०	पठामि	पठावः	पठामः

लोट् लकार (आज्ञा तथा आशीर्वाद)

प्र० पु०	पठतु, पठतात्	पठताम्	पठन्तु
म० पु०	पठ, पठतात्	पठतम्	पठत
उ० पु०	पठानि	पठाव	पठाम

विधिलिङ् लकार (विधि, प्रार्थना आदि)

प्र० पु०	पठेत्	पठेताम्	पठेयुः
म० पु०	पठेः	पठेतम्	पठेत
उ० पु०	पठेयम्	पठेव	पठेम

लङ् लकार (भूतकाल)

प्र० पु०	अपठत्	अपठताम	अपठन्
म० पु०	अपठः	अपठतम्	अपठत
उ० पु०	अपठम्	अपठाव	अपठाम

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धातु	अर्थ	लट् (वर्तमान)	लोट् (आज्ञा)	विधिलिङ	लङ् (भूत)	लृट् (भविष्य)
गम् (गच्छ)	जाना	गच्छति	गच्छतु	गच्छेत्	अगच्छत	गमिष्यति
प्रच्छ	पूछना	पृच्छति	पृच्छतु	पृच्छेत्	अपृच्छत्	प्रक्ष्यति
पा (पिव्)	पीना	पिवति	पिवतु	पिवेत्	अपिवत्	पास्यति
भू (भव्)	होना	भवति	भवतु	भवेत्	अभवत्	भविष्यति
आकार्	पुकारना	आकारयति	आकारयतु	आकारयेत्	आकारयत्	आकारयिष्यति
खाद्	खाना	खादति	खादतु	खादेत्	अखादत्	खादिष्यति
धाव्	दौड़ना	धावति	धावतु	धावेत्	अधावत्	धाविष्यति
पत्	गिरना	पतति	पततु	पतेत्	अपतत्	पतिष्यति
नृत्	नाचना	नृत्यति	नृत्यतु	नृत्येत्	अनृत्यत्	नर्तिष्यति, नर्त्स्यति
गै (गाय्)	गान	गायति	गायतु	गायेत्	अगायत्	गास्यति
हस्	हँसना	हसति	हसतु	हसेत	अहसत्	हसिष्यति
दृश् (पश्य)	देखना	पश्यति	पश्यतु	पश्येत्	अपश्यत्	द्रक्ष्यति
क्रीड्	खेलना	क्रीडति	क्रीडतु	क्रीडेत्	अक्रीडत्	क्रीडिष्यति
उप+दिश्	उपदेश देना	उपदिशति	उपदिशतु	उपदिशेत्	उपादिशत्	उपदेक्ष्यति
आ+दिश्	आज्ञा देना	आदिशति	आदिशतु	आदिशेत	आदिशत्	आदेक्ष्यति
प्र+विश्	प्रवेश करना	प्रविशति	प्रविशतु	प्रविशेत्	प्राविशत्	प्रवेक्ष्यति
उप+विश्	बैठना	उपविशति	उपविशतु	उपविशेत	उपाविशत्	उपवेक्ष्यति
वद्	बोलना	वदति	वदतु	वदेत्	अवदत्	वदिष्यति
चर्	चरना	चरति	चरतु	चरेत्	अचरत्	चरिष्यति
स्मृ	याद करना	स्मरति	स्मरतु	स्मरेत्	अस्मरत्	स्मरिष्यति
भज्	भजन करना	भजति	भजतु	भजेत्	अभजत्	भजिष्यति
नम्	प्रणाम करना	नमति	नमतु	नमेत्	अनमत्	नस्यति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शुच्	सोच करना	शोचति	शोचतु	शोचेत्	अशाचत्	शोचिष्यति
दह	जलाना	दहति	दहतु	दहेत्	अदहत्	अक्ष्यति
आ+कर्ण	सुनना	आकर्णयति	आकर्णयतु	आकर्णयेत्	आकर्णयत्	आकर्णयिष्यति
वस्	रहना	बसति	वसतु	वसत्	अवसत्	वत्स्यति
चुर्	चुराना	चोरयति	चोरयतु	चोरयेत्	अचोरयत्	चोरयिष्यति
कूज्	चहचहाना	कूजति	कूजतु	कूजेत्	अकूजत्	कूजिष्यति
वर्ष	बरसना	वर्षति	वर्षत्	वर्षत्	अवर्षत्	वर्षिष्यति
दा (यच्छ)	देना	यच्छति	यच्छतु	यच्छेत्	अयच्छत्	दास्यति
घ्रा (जिघ्र)	सूंघना	जिघ्रति	जिघ्रतु	जिघ्रेत्	अजिघ्रत्	घ्रस्यति
स्था (तिष्ठ्)	स्थित होना	तिष्ठति	तिष्ठेतु	तिष्ठत्	अतिष्ठत	स्थास्यति
प्र+क्षाल्	धोना	प्रक्षालयति	प्रक्षालयतु	प्रक्षालयेत्	प्राक्षालयत्	प्रक्षलयिष्यति
नश्	नष्ट होना	नश्यति	नश्यतु	नश्येत्	अनश्यत्	नशिष्यति
चिन्त	चिन्ता करना	चिन्तयति	चिन्तयतु	चिन्तयेत्	अचिन्तयत्	चिन्तयिष्यति
भ्रम्	घूमना	भ्रमति	भ्रमतु	भ्रमेत्	अभ्रमत्	भ्रमिष्यति
रक्ष्	रक्षाकरना	रक्षति	रक्षतु	रक्षेत्	अरक्षत्	रक्षिष्यति
रच्	बनाना	रचयति	रचयतु	रचयेत्	अरचयत्	रचयिष्यति
स्पृश्	छूना	स्पृशति	स्पृशतु	स्पृशेत्	अस्पृशत्	स्प्रक्ष्यति
तड (ताड्)	पीटना	ताडयति	ताडयतु	ताडयेत्	अताडयेत्	ताडयिष्यति
ना (नय्)	ले जाना	नयति	नयतु	नयेत्	अनयत्	नेष्यति
आ+नी	लाना	आनयति	आनयतु	आनयेत्	आनयत्	आनेष्यति
लिख	लिखना	लिखति	लिखेतु	लिखत्	अलिखत्	लेखिष्यति
वि+आ+पद	मारना (Kill)	व्यापादयतु	व्यापादयत्	व्यापादयेत्	व्यापादयत्	व्यापादयिष्यति
कथ	कहना	कथयति	कथयतु	कथयेत्	अकथयत्	कथयिष्यति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लृङ् लकार (भविष्यत् काल)

प्र० पु०	पठिष्यति	पठिष्यतः	पठिष्यन्ति
म० पु०	पठिष्यसि	पठिष्यथः	पठिष्याथ
उ० पु०	पठिष्यामि	पठिष्यावः	पठिष्यामः

हाई स्कूल परीक्षा में निर्धारित गम् (गच्छ,) प्रच्छ, पा (पिब) और भू (भव) धातुओं के रूप भी 'पठ्' की तरह ही चलते हैं। छात्रों की सुविधा के लिए हम इन धातुओं के तथा अन्य अनुवादोपयोगी धातुओं के प्रत्येक लकार का पहला रूप नीचे लिख रहे हैं। आगे के रूप 'पठ्' के समान ही बना लेना चाहिए।

अस्-होना

लट् लकार

प्र० पु०	अस्ति	स्तः	सन्ति
म० पु०	असि	स्थः	स्थ
उ० पु०	अस्मि	स्वः	स्मः

लोट

प्र० पु०	अस्तु, स्तात्	स्ताम्	सन्तु
म० पु०	एधि, स्तात्	स्तम्	स्मः
उ० पु०	असानि	असाव	असाम

विधिलिङ्

प्र० पु०	स्यात्	स्याताम्	स्युः
म० पु०	स्याः	स्यातम्	स्यात
उ० पु०	स्याम्	स्याव	स्याम

लङ्

प्र० पु०	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
म० पु०	आसीः	आस्तम्	आस्त
उ० पु०	आसम्	आस्व	आस्म

लृट्

प्र० पु०	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
म० पु०	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उ० पु०	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

कृ—होना

परस्मैपद लट्

प्र० पु०	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
म० पु०	कुरोषि	कुरुथः	कुरुथ
उ० पु०	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लोट्

प्र० पु०	करोतु, कुरुतात्	कुरुताम्	कुर्वन्तु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

म० पु०	कुरु, कुरुतात्	कुरुतम्	कुरुथ
उ० पु०	करवाणि	करवाव	करवाम

लङ्

प्र० पु०	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
म० पु०	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उ० पु०	अकरोम्	अकुर्व	अकुर्म

विधिलिङ्

प्र० पु०	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
म० पु०	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उ० पु०	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

लृट्

प्र० पु०	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
म० पु०	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उ० पु०	करिष्यामिः	करिष्यामः	करिष्यामः

आत्मने पद, लट्

प्र० पु०	कुरुते	कुर्वात्	कुर्वते
म० पु०	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उ० पु०	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लोट्

प्र० पु०	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम
म० पु०	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उ० पु०	करवै	करवावहे	करमावहै

लङ्

प्र० पु०	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
म० पु०	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उ० पु०	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

विधिलिङ्

प्र० पु०	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
म० पु०	कुर्वीथा	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उ० पु०	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

लृट्

प्र० पु०	करिष्यते	करिष्यते	करिष्यन्ते
म० पु०	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उ० पु०	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

अव्यय

जिन शब्दों में लिंग, वचन आदि किसी भी कारण से कोई परिवर्तन नहीं होता, वे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शब्द अव्यय कहे जाते हैं। अतएव अनुवाद करते समय इनके रूप नहीं चलाने पड़ते। ये वाक्य में ज्यों के त्यों रख दिये जाते हैं। कुछ प्रसिद्ध अव्यय आगे लिखे जाते हैं

अत्र=यहाँ	तत्र=वहाँ	क्व, कुत्र=कहाँ
यत्र=जहाँ	सर्वत्र=सब जगह	कदा=कब
तदा=तब	यदा=जब	सर्वदा=हमेशा
अधना=अब	अतः=इसलिए	यतः=क्योंकि
एवम्=इस प्रकार	एव=ही	अपि=भी
अद्य=आज	श्वः=कल (आने वाला)	ह्यः=कल (बीता हुआ)
प्रातः=प्रभात	Tomorrow	Yesterday
सायम्=शाम	कथम्=क्यों, कैसे	शीघ्रता=जल्दी
न=नहीं	यथा=जिस प्रकार	तथा=उस प्रकार
दवा=दिन	नक्तम्=रात	पुरा=पहले
पुनः=फिर	कुतः=क्यों, कहाँ से	ततः=इसके बाद

एक ध्यान देने योग्य नियम

प्रायः छात्र 'म्' के स्थान पर सब जगह अनुस्वार लगा देते हैं। अनुस्वार सर्वथा: किसी व्यंजन से पहले ही लगाया जा सकता है। अतः ऐसे शब्द के अन्त में, जिसके आगे कोई स्वर है अथवा कोई भी वर्ण नहीं है अनुस्वार नहीं लगाना चाहिए। ऐसे स्थान पर 'म्' ही लिखना ठीक होगा। यदि इस 'म्' को आगे वाले स्वर से मिला दिया जाय, तो और भी अच्छा है। अतः 'पुस्तक आनय' और 'देहि भोजन' अशुद्ध है। इनके ध्यान पर 'पुस्तकम्' आनय' अथवा 'पुस्तकमानय' और 'देहि भोजनम्' शुद्ध हैं।

अनुवाद प्रकरण

संस्कृत में तीन वचन (एक वचन, द्विवचन और बहुवचन) तथा तीन पुरुष (प्रथम मध्यम तथा उत्तम) होते हैं। एक के लिए एक वचन, दो के लिए द्विवचन और दो से अधिक के लिए बहुवचन आते हैं।

जिसके बारे में बात कही जाय, उसमें (सः=वह, तौ=वे दोनों, ते=वे सब, भवान्=आप, भवन्तौ=आप दोनों, भवन्तः=आप सब अथवा (किसी का नाम) प्रथम पुरुष, जिससे बात कही जाय, उसमें (त्वम्=तू, युवाम्=तुम दोनों, यूयम्=तुम सब) मध्यम पुरुष और जो बात कहे, उसमें (अहम्=मैं, आवाम्=हम दोनों, वयम्=हम सब) उत्तम पुरुष होते हैं।

क्रियाओं में भी यही तीन वचन और तीन पुरुष होते हैं। कर्तृवाच्य में क्रिया का वही वचन और पुरुष होता है जो उनके कर्त्ता का हो।

अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखना परमावश्यक है। नीचे लिखे चक्र से यह बात स्पष्ट हो जायेगी।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	सः पठति	तौ पठतः।	ते पठन्ति
	वह पढ़ता है।	वे दोनों पढ़ते हैं।	वे पढ़ते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
अथवा	बालकः पठति ।	बालकौ पठतः ।	बालकाः पठन्ति
	बालक पढ़ता है ।	दो बालक पढ़ते हैं ।	बालक पढ़ते हैं ।
मध्यम पुरुष	त्वं पठसि ।	युवां पठथः ।	यूयं पठथ ।
	तू पढ़ता है ।	तुम दोनों पढ़ते हो ।	तुम पढ़ते हो ।
उत्तम पुरुष	अहं पठामि ।	आवां पठावः ।	वयं पठामः
	मैं पढ़ता हूँ ।	हम दोनों पढ़ते हैं ।	हम पढ़ते हैं ।

संस्कृत शब्दों के उलट फेर करने से वाक्य के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता । जैसे—पिता पुत्रं ताडयति (पिता पुत्र को पीटता है) के शब्दों के क्रम में परिवर्तन करने से 'पुत्र ताडयति पिता' अथवा ताडयति पुत्रं पिता, होते हैं किन्तु इनका अर्थ जैसा का तैसा ही रहता है । उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता ।

अनुवाद करते समय सबसे पहले हमें वाक्य का कर्त्ता ढूंढना चाहिए । क्रिया से पहले 'कौन' लगाने से उत्तर में आने वाली वस्तु कर्त्ता होती है । फिर 'कर्त्ता यदि एकवचन हो, तो 'प्रथमा' का एक वचन का रूप, द्विवचन हो, तो 'प्रथमा का द्विवचन का रूप और बहुवचन हो तो बहुवचन का रूप लिख देना चाहिए । इसके बाद कर्त्ता के पुरुष पर ध्यान देना चाहिए । कर्त्ता के पुरुष और वचन जान लेने पर क्रिया के काल का निश्चय करना चाहिए । इसके बाद क्रिया के उस काल के रूपों में से कर्त्ता के पुरुष तथा वचन वाला एक रूप छाँटकर लिख देना चाहिए । इसके वाक्य के अन्य शब्दों के कारक तथा वचनों के अनुसार रूप भी यथा स्थान लिख देना चाहिए । जैसे—हम दोनों गुरूजी से पुस्तक पढ़ते हैं ।' वाक्य का संस्कृत में अनुवाद करना है । क्रिया से पहले 'कौन ?' लगाने से उत्तर में हम दोनों' आता है, अतः कर्त्ता है हम दोनों । इसकी संस्कृत 'आवाम्' लिख ली । कर्त्ता उत्तम पुरुष 'द्विवचन' का है और इसमें वर्तमान काल' है । अतः हमने 'पठ्' क्रिया वर्तमान काल उत्तम पुरुष द्विवचन का रूप पठावः लिख लिया । 'गुरूजी से' में अपादान कारक' या 'पंचमी विभक्ति का एक वचन है, अतः गुरु शब्द का पंचमी का 'एक वचन' 'गुरोः' और इसी प्रकार पुस्तक को' की संस्कृत कर्मकारक या द्वितीया विभक्ति का एक वचन का रूप, पुस्तकम् पठावः' हुई ।

अभ्यास के लिए नीचे कुछ वाक्य लिखे जाते हैं छात्रों को इनकी संस्कृत लिखकर पुस्तक के अन्त में लिखी हुई संस्कृत से मिलाकर शुद्ध करलें ।

अभ्यास १—(लट् लकार, वर्तमान काल, कर्त्ता कारक, प्रथम पुरुष)

पुंलिग—सः पटति ।	तौ पठतः	ते पठन्ति ।
वह पढ़ता है ।	वे दोनों पढ़ते हैं	वे पढ़ते हैं ।
स्त्रीलिंग—सा पठति	ते पठतः ।	ताः पठन्तिः
वह पढ़ती है ।	वह दोनों पढ़ती हैं ।	वे पढ़ती हैं ।
नपुं० लिङ्ग—फल पतति	फले पततः	फलाः पतन्तिः
फल गिरता है ।	दो फल गिरते हैं ।	फल गिरते हैं ।
पुंलिग—भवान् पठति	भवन्तौ पठतः ।	भवन्त पठन्ति ।
आप पढ़ते हैं ।	आप दोनों पढ़ते हैं ।	आप सब पढ़ते हैं ।
स्त्रीलिंग—भवती पठति ।	भवत्यौ पठतः ।	भवत्यः पठन्ति ।
आप पढ़ती हैं ।	आप दोनों पढ़ती हैं ।	आप पढ़ती हैं ।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

१—वह पढ़ता है। २—वे दोनों जाती हैं। ३—वे खा रही हैं। ४—राम दौड़ता है। ५—दो फल गिरते हैं। ६—मोर नाचते हैं। ७—सीता गाती है। ८—दो लड़कियाँ हँसती हैं। ९—लड़के देखते हैं। १०—लड़के खेल रहे हैं। ११—दो आदमी उपदेश देते हैं। १२—वे बोलते हैं। १३—सूर्य निकलता है। १४—दो बन्दर कूदते हैं। १५—पशु चरते हैं। १६—आप याद करते हैं। १७—आप दोनों भजन करते हैं। १८—आप सब नमस्कार करते हैं। १९—वह शोक करती है। २०—वे पीते हैं। २१—अग्नि जलती है। २२—आप बैठती हैं। २३—आप दोनों बुलाती हैं।

अभ्यास २ (अव्ययों का प्रयोग)

विशेष—१—अव्ययों की सूची और अर्थ पहले दिये जा चुके हैं। २—अव्ययों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता, अतः उन्हें जैसा का तैसा ही लिखा जाता है। 'च' (और) का प्रयोग हिन्दी 'और' की भाँति दोनों मिलाये जाने वाले शब्दों के बीच में नहीं होता बल्कि दूसरे शब्द के बाद में होता है। अतएव 'राम और मोहन जाते हैं' की संस्कृत 'रामः च मोहनः गच्छतः' न होकर 'रामः मोहनः च गच्छतः' होगी। 'वा' (अथवा) का प्रयोग भी 'च' की भाँति ही होता है।

१—सूर्य प्रातः निकलता है। २—आज वे दोनों नहीं सुनते। ३—लड़के शाम को खेलते हैं। ४—बन्दर दिन में नाचते हैं। ५—राम और मोहन तेज दौड़ते हैं। ६—अब लड़के सब जगह नहीं सोते। ७—शाम होती है। ८—गुरूजी रात को उपदेश देते हैं। ९—राम कहाँ रहता है। १०—आप यहाँ क्यों आते हैं? ११—श्याम अथवा कृष्ण चोरी करता है। १२—ईश्वर सब जगह है। १३—यहाँ कौन बैठता है? १४—यहाँ मेह क्यों नहीं बरसता ?

अभ्यास—३—(लट् लकार, वर्तमान काल कर्त्ता कारक, मध्यम पुरुष)

त्वं पठति।	युवां पठथः	यूयं पठथ।
तू पढ़ता है।	तुम दोनों पढ़ते हो।	तुम पढ़ते हो।
या तू पढ़ती है।	या तुम दोनों पढ़ती हो।	या तुम पढ़ती हो।

१—तू देता है। २—तुम दोनों चलते हो। ३—तुम गिरते हो। ४—तू प्रसन्न होता है। ५—तुम सोते हो। ६—तुम दोनों पूछते हो। ७—तू फेंकती है। ८—तुम दोनों तेज दौड़ते हो। ९—तुम आते हो। १०—तू नाचता है। ११—तुम गाती हो। १२—तू सुनता है। १३—तुम दोनों नमस्कार करते हो। १४—तुम धोते हो। १५—तू खाता है।

विशेष—मध्यम पुरुष में लिंग भेद के कारण संस्कृत बनाने में कोई अन्तर नहीं पड़ता है।

अभ्यास—४—(लट् लकार, वर्तमान काल, कर्त्ता कारक, उत्तम पुरुष)

अहं पठामि।	आवाम पठावः।	वयं पठामः।
मैं पढ़ता हूँ।	हम दोनों पढ़ते हैं।	हम पढ़ते हैं।
या मैं पढ़ती हूँ।	या हम दोनों पढ़ती हैं।	या हम पढ़ती हैं।

१—मैं हंसता हूँ। २—हम दोनों दौड़ रहे हैं। ३—हम गिरते हैं। ४—हम दोनों कहते हैं। ५—हम देती हैं। ६—मैं पूछता हूँ। ७—हम सुनते हैं। ८—हम दोनों आते हैं। ९—मैं नमस्कार करता हूँ। १०—हम याद करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशेष—उत्तम पुरुष में लिङ्ग भेद के कारण संस्कृत बनाने में कोई अन्तर नहीं होता ।

अभ्यास ५ (दुहराना)

१—वह सूंघता है । २—सर्प काटता है । ३—मेघ बरसते हैं । ४—हम कहते हैं । ५—तुम क्या खाते हो ? ६—वह प्रातः भजन करता है । ७—घर नहीं गिरता । ८—तुम दोनों कब दौड़ते हो ? ९—तुम दोनों कहाँ रहते हो ? १०—ईश्वर सृष्टि करता है । ११—शत्रु नष्ट होते हैं ।

अभ्यास—६—(लृट् लकार, भविष्यत् काल, प्रथम पुरुष)

सः पठिष्यति	तौ पठिष्यतः	ते पठिष्यन्ति ।
वह पढ़ेगा ।	वे दोनों पढ़ेंगे ।	वे पढ़ेंगे ।

१—मनोहर, श्याम और कृष्ण पढ़ेंगे । २—वे जायेंगे । ३—राम और सोहन खायेंगे । ४—वह दौड़ेगा । ५—राम गिरेगा । ६—बन्दर नाचेंगे । ८—लड़के कल गायेंगे । ८—वह हँसेगी । ९—शाम को चन्द्रमा निकलेगा । १०—आप खेलेंगे ।

अभ्यास—७—(लृट् लकार भविष्यत् काल मध्यम पुरुष)

त्वं पठिष्यसि ।	युवां पठिष्यथः ।	यूयं पठिष्यथ ।
तू पढ़ेगा ।	तुम दोनों पढ़ोगे ।	तुम पढ़ोगे ।

१—तू उपदेश देगा । २—तुम बोलोगे । ३—तू हंसेगा । ४—तुम दोनों देखोगे । ५—तू कूदेगा । ६—तुम दोनों याद करोगे । ७—तुम भजन करोगे । ८—तू नमस्कार करेगा । ९—तुम शोक करोगे । १०—तुम दोनों पियोगे ।

अभ्यास—८—(लृट् लकार भविष्यत काल उत्तम पुरुष)

अहं पठिष्यामि ।	आवां पठिष्यावः	वयं पठिष्यामः
मैं पढ़ूँगा ।	हम दोनों पढ़ेंगे	हम पढ़ेंगे ।

१—मैं सूँघूंगा । २—हम दोनों सोयेंगे । ३—कल हम यहाँ रहेंगे । ४—हम दोनों यहाँ कब आयेंगे ? ५—मैं कहाँ बैठूँगा ? ६—हम दोनों देंगे । ७—हम खायेंगे । ८—हम चलेंगे । ९—मैं पूछूँगा । १०—हम दोनों जायेंगे ।

अभ्यास ९ (दुहराना)

१—हम आते हैं । २—मैं खाऊँगा । ३—तुम जाओगी । ४—सूर्य प्रातः निकलेगा । ५—चिड़ियाँ चहचहायेंगी । ६—मोर नाचेगा । ७—तुम दोनों गाते हो ८—वह यहां आयेगी । ९—तुम देखोगे । १०—वे दोनों पूछेंगी ।

अभ्यास १० (लङ् लकार, भूतकाल, प्रथम पुरुष)

सः अपठत् ।	तौ अपठताम्	ते अपठन्
उसने पढ़ा ।	उन दोनों ने पढ़ा ।	उन्होंने पढ़ा ।

१—उन्होंने पढ़ा । २—वह गई । ३—आपने खाया । ४—उन दोनों ने खेला । ५—वे दौड़े । ६—वह गिरा । ७—मोर नाचा । ८—लड़कियों ने गाया । ९—राम हँसा । १०—सूय निकला ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास ११ (लङ् लकार, भूतकाल, मध्यम पुरुष)

त्वम् अपठः ।	युवाम् अपठतम् ।	युयम् अपठत ।
तूने पढ़ा ।	तुम दोनों ने पढ़ा ।	तुमने पढ़ा ।

१—तुमने उपदेश दिया । २—तू बोला । ३—तुम दोनों ने देखा । ४—तू कूदा । ५—तुमने याद किया । ३—तुम दोनों हँसे । ७—तूने भजन किया । ८—तुमने नमस्कार किया । ९—तूने शोक किया । १०—तुम दोनों ने पिया ।

अभ्यास १२ (लङ् लकार, भूतकाल, उत्तम पुरुष)

अहम् अपठम्	आवाम् अपठाव ।	वयम् अपठाम् ।
मैंने पढ़ा ।	हम दोनों ने पढ़ा ।	हमने पढ़ा ।

१—हमने सूँघा । २—मैं सोया । ३—हम दोनों कल यहाँ रहे । ४—मैं यहाँ कब आया ? ५—हम बैठे । ६—हम दोनों ने दिया । ७—मैंने खाया । ८—हम दोनों चले । ९—हमने पूछा । १०—मैं गया ।

अभ्यास १३ (दुहराना)

१—तू पूछेगा । २—हम दोनों बठे । ३—वह कहाँ रहता है ? ४—उन दोनों ने देखा । ५—तुम सुनोगे । ६—हम जायेंगे । ७—राम ने लिखा । ८—हम हँसे । ९—आप चलेंगे । १०—शाम होती है ।

अभ्यास १४—(लोट् लकार, आज्ञा तथा आर्शीवाद, प्रथम पुरुष)

सः पठतु ।	तौ पठताम् ।	ते पठन्तु ।
वह पढ़े ।	वे दोनों पढ़े ।	वे पढ़ें ।

१—वे पढ़ें । २—वे दोनों जाँय । ३—वह खाये । ४—आप दौड़ें । ५—फल गिरें । ६—वह चिरंजीव रहे । ७—मोर नाचें । ८—वे गायें । ९—बालक हँसे । १०—अब मनुष्य खेलें ।

अभ्यास १५—(लोट् लकार, आज्ञा-आर्शीवाद, मध्यम पुरुष)

त्वं पठ ।	युवां पठताम्	यूयं पठत ।
तू पढ़ ।	तुम दोनों पढ़ो ।	तुम पढ़ो ।

१—तू जा । २—यहाँ बैठो । ३—तुम दोनों यहाँ आओ । ४—बेटा । तू बहुत समय तक जीवित रहे । ५—तू दौड़ । ६—तुम दोनों तेज चलो । ७—तुम भजन करो । ८—तुम दोनों नमस्कार करो । ९—तू शोक मत कर । १०—तुम पियो ।

अभ्यास १६ (लोट् लकार, आज्ञा तथा आर्शीवाद, उत्तम पुरुष)

अहं पठानि ।	आवां पठाव ।	वयं पठाम ।
मैं पढ़ूँ ।	हम दोनों पढ़ें ।	हम पढ़ें ।

१—मैं याद करूँ । २—हम दोनों चिन्ता करें । ३—हम सूँघे । ४—मैं सुनूँ । ५—हम कहें । ६—हम दोनों यहाँ बैठें । ७—हम चलें । ८—मैं कूदूँ । ९—हम लिखें । १०—हम दोनों यहाँ आयें ।

अभ्यास १७ (दुहराना)

१—मछलियाँ तैरती हैं । २—हिरण चरते थे । ३—सिंह दौड़ेगा । ४—कल पानी बरसता था । ५—हम देखें । ६—तुम कल जाओगे । ७—बादल गरजते हैं । ८—लड़कियाँ देखेंगी । ९—आप खायेंगे १०—माता रक्षा करे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास १८ (विधिलिङ्, निमन्त्रण, प्रार्थना, आज्ञा आदि, प्रथम पुरुष)

सः पठेत्	तौ पठेताम्	ते पठेयुः ।
वह पढ़े अथवा	वे दोनों पढ़ें अथवा	वे पढ़ें अथवा
उसे पढ़ना चाहिये ।	उन दोनों को पढ़ना चाहिये ।	उन्हें पढ़ना चाहिए ।

१—वह जाये । २—लड़के और लड़कियाँ पढ़ें । ३—इन दोनों को खाना चाहिये । ४—आपको नहीं दौड़ना चाहिए । ५—वे गिरें । ६—नटों को नाचना चाहिए । ७—तोता गायें । ८—उसे हँसना चाहिये । ९—सूर्य निकले । २०—उन्हें खेलना चाहिये ।

अभ्यास १९ (विधिलिङ्, निमन्त्रण, प्रार्थना, आज्ञा आदि मध्यम पुरुष)

त्वं पठेः ।	युवाँ पठेतम्	यूयं पठत ।
तू पढ़े, अथवा ।	तुम दोनो पढ़ो, अथवा	तुम पढ़ो, अथवा
तुझे पढ़ना चाहिए ।	तुम दोनों को पढ़ना चाहिए ।	तुमको पढ़ना चाहिए ।

१—तुझे उपदेश देना चाहिए । २—तुम दोनों बोलो । ३—आज तुम्हें नहीं हँसना चाहिए । ४—तुम देखो । ५—तुम दोनों को कूदना चाहिए । ६—तुम याद करो । ७—तुझे भजन करना चाहिए । ८—तुम्हें नमस्कार करना चाहिए । ९—तुम दोनों सोच न करो । १०—तुम पियो ।

अभ्यास २० (विधिलिङ निमन्त्रण, प्रार्थना, आज्ञा आदि उत्तम पुरुष)

अहं पठेयम् ।	आवां पठेव	वयं पठेम ।
मैं पढ़ूँ, अथवा	हम दोनों पढ़ें, अथवा	हम पढ़ें, अथवा
मुझे पढ़ना चाहिए ।	हम दोनों को पढ़ना चाहिये ।	हमें पढ़ना चाहिये ।

१—अब हमें सोना चाहिये । २—मुझे सूँघना चाहिये । ३—हमें यहाँ रहना चाहिये । ४—हम दोनो आयें । ५—मैं बैठूँ । ६—मुझे देना चाहिये । ७—हम खायें । ८—हम दोनों चलें । ९—हम पूछें १०—हम चलें ।

अभ्यास २१ (दुहराना)

१—हम जा रहे हैं । २—वे दौड़ें । ३—मैं खाऊँगी । ४—तुम दोनों ने देखा । ५—हम नमस्कार करते हैं । ६—अग्नि जलायेगी । ७—वे हँस रहे थे । ८—वह खाती थी । ९—राम और मोहन ले जाते थे । १०—तुम सब बोलोगे । ११—मनुष्य प्रसन्न रहें । १२—मेह बरसे ।

अभ्यास २२ (दुहराना)

१—वे नष्ट होते है । २—ईश्वर ने सृष्टि -ै । ३—वे नाच रहे थे । ४—लड़कियाँ गायेंगी । ५—तुम लिखोगे । ६—शेर यहाँ रहते है । ७—हम प्रसन्न होते थे । ८—मनुष्य चिन्ता क्यो करते हैं । ९—पक्षी चहचहाते है । १०—मेह बरसा था । ११—यहीं बैठ जाओ । १२—मेह बरसे ।

अभ्यास २३ दुहराना

१—तुम क्या चाहते हो ? २—हम देखेंगे । ३—आप सुनेंगे । ४—हम दोनों को नमस्कार करना चाहिये । ५—घोड़े दौड़ें । ६—मछलियाँ तैरेंगी । ७—वे खावगी । ८—तुम कब नही बोलोगे । ९—शीघ्र पढ़ो । १०—वे भागे ।

अभ्यास २४ दुहराना

१—प्रातः फिर होगा । २—अन्धकार भागता था । ३—वे जा रही थीं । ४—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुम्हें भागना चाहिए। ५—चिड़ियाँ उड़ती हैं। ६—गुरूजी पीटेंगे। ७—माली सींचता था। ८—तुम्हें जाना चाहिये। ९—भिखारी माँगता है। १०—शत्रु नष्ट होवें।

अभ्यास २५ कर्म कारक (द्वितीया विभक्ति)

विशेष—१—क्रिया के पहले किसको अथवा क्या लगाने पर उत्तर में जो कुछ आता है उसे कर्म कारक कहते हैं। इसका 'चिह्न' 'को' है अर्थात् जिस शब्द के बाद 'को' लगा होता है उसमें कर्मकारक या द्वितीया विभक्ति होती है। जैसे—वह पुस्तक को पढ़ता है 'वह क्या पढ़ता है 'पुस्तक' अतः 'पुस्तक' में द्वितीया हुई और उन वाक्यों की संस्कृत 'सः पुस्तकं पठति' होगी। कभी-कभी 'को' चिह्न छिपा रहता है। जैसे 'मैं पत्र लिखता हूँ' (अहं पत्रं लिखामि।)

२—अंग्रेजी की तरह संस्कृत में भी कुछ धातुयें दो कर्म रखती हैं। याच् (माँगना), प्रच्छ (पूछना) कथ (कहना) आदि धातुओं और इनके अर्थ वाली अन्य धातुएं द्विकर्मक है। जैसे—सः मोहनं पुस्तकं याचते (वह मोहन से पुस्तक माँगता है।) पिता पुत्रं प्रश्नं पृच्छति। (पिता पुत्र से प्रश्न पूछता है) रामः कृष्णं कथाँ कथयति (राम कृष्ण से कथा कहता है।)

१—मैं घर जाता हूँ। २—तुम दोनों पुस्तक पढ़ते थे। ३—हम पत्र लिखेंगे। ४—वह नाटक देखती थी। ५—वे गीत सुनते थे। ६—राम ने रावण को मारा ७—आप बालकों से कथा कहते हैं। ८—गुरुजी शिष्यों से प्रश्न पूछते हैं। ९—सीता ने राम से कहा कि मैं भी वन जाऊँगी। १०—वह पुस्तक चुराता है। ११—मैं गुरुजी को प्रणाम करता हूँ।

अभ्यास—२६—करण कारक (तृतीया विभक्ति)

विशेष—किसी की सहायता से कोई काम होता है, उसमें करण कारक (तृतीया-विभक्ति) होती है। इसका चिह्न 'से' अथवा के 'द्वारा' है जैसे—वह हाथ से काम करता है। (सः हस्तेन कार्यं करोति।)।

१—तुमने डण्डे से कुत्ते को पीटा। २—हम नाक से फूल को सूँघते हैं। ३—तुम दोनों कानों से सुनते हो। ४—वह वेग से दौड़ा। ५—राम ने रावण को बाणों से मारा। ६—वह दाँतों से चने चबाता है। ७—हम दोनों बुद्धि से विचारते हैं। ८—बालक पैरों से दौड़ता है।

शब्दार्थ—नासिका—नाक। जिघ्रति—सूँघता है। चणकः—चना। चर्वयति—चबाता है। विचारयति—विचारता है। पादः—पैर।

अभ्यास—२७—सम्प्रदान कारक (चतुर्थी), अपादान कारक (पंचमी)

विशेष—१—जिसे कुछ दिया जाता है, उसमें सम्प्रदान कारक (चतुर्थी विभक्ति) होती है। इसका चिह्न को (देने के अर्थ में) के लिए अथवा के वास्ते है जैसे—राम को पुस्तक दो (रामाय पुस्तकं यच्छ) वह पढ़ने के लिए स्कूल जाता है (सः पठनाय विद्यालयं गच्छति।)

२—जिससे अलग हुआ जाता है, उसमें अपादान कारण (पंचमी-विभक्ति) होता है। इसका चिन्ह 'से' (अलग होने के अर्थ में) है। जैसे—पेड़ से फल गिरता है (वृक्षात् फलं पतति।)

१—हम लड़कों के लिये पुस्तकें लाते हैं।—तुम मोहन को फल देते हो। ३—अन्न के लिए किसान खेत जोतता है। ४—वह बाजार से कृष्ण के लिए पुस्तक लाता है। ५—हम पढ़ने के लिए रोज स्कूल आते हैं। ६—वे शाम को टहलने के लिए घर से बगीचे को जाते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
हैं। ७—नीम से पत्ते गिरते हैं। ८—गङ्गा हिमालय से निकलती है। ९ मैं गुरूजी से पढ़ता हूँ। १०—खजाने से रुपये लाओ।

अभ्यास २८—सम्बन्ध कारक (षष्ठी), अधिकरण कारक (सप्तमी) तथा सम्बोधन

विशेष—(१) जिस वस्तु का सम्बन्ध किसी दूसरी वस्तु से होता है, उसमें सम्बन्ध कारक (षष्ठी-विभक्ति) होता है। इसके चिह्न का, की, के, ना, नी, ने, रा, री, रे हैं। जैसे—यह राम का घोड़ा है। (एषः रामस्य अश्वः अस्ति।)

(२) जहाँ कोई कार्य होता है, उसमें अधिकरण कारक (सप्तमी विभक्ति) होता है। इसके चिह्न में, पर है। जैसे—वह प्रयाग में रहता है। (सः प्रयागे वसति।)

(३) जिसे पुकारा जाता है, उसमें सम्बोधन कारक होता है। इसके चिह्न 'हे, अरे, भो' हैं। ये शब्द पहले लगते हैं। जैसे—हे राम! तुम यहाँ आओ (भो राम! त्वम् अत्र आगच्छ।)

१—राम दशरथ के पुत्र थे। २—यह शिकोहाबाद में रहता था ३—कल तुम दोनों गणित की पुस्तक पढ़ते थे। ४—हे गुरूजी! क्या मैं अन्दर आजाऊँ? ५—पेड़ पर पक्षी चहचहा रहे हैं। ६—तालाब के जल में मछलियाँ सुख से तैर रही हैं। ७—राम ने कहा, हे सीता तुम घर पर ही रहो। ८—तुम्हारा नाम क्या है? ९—हे विद्यार्थियो! अपनी जगह बैठ जाओ और पुस्तक को पढ़ो। १०—सूर्य पूर्व में निकलता है और पश्चिम में अस्त होता है।

अभ्यास २९—विशेषणों का प्रयोग

विशेष—१—विशेषण के वे ही लिंग, विभक्ति और वचन होते हैं, जो उसके विशेष्य के होते हैं—जसे—सुन्दरः बालकः, सुन्दरी बालिका, सुन्दर फलम्, सुन्दरेण बालकेन आदि।

२—विशेषण और विशेष्य में कर्मधारय समास भी हो सकता है और ऐसी दशा में सुविधा भी रहती है, पर समास करने पर सन्धि अवश्य करनी पड़ती है, अतः यहाँ सावधानी रखनी चाहिए। अतएव 'सुन्दरेण बालकेन' की जगह पर 'सुन्दर बालकेन' भी ठीक है।

१—इस मकान में कौन रहता है? २—वह एक सुन्दर पुस्तक पढ़ता है। ३—हिमालय एक विशाल पर्वत है। ४—गंगा हिन्दुओं की एक पवित्र नदी है। ५—आम का फल मीठा होता है। ६—मैं इस वृक्ष की शीतल छाया में विश्राम करता हूँ। ७—इस नगर की इमारतें ऊँची हैं। ८—सीता एक चतुर बालिका थी।

अभ्यास ३०—१—वह अपनी पुस्तक पढ़ता है। २—यह नगर सुन्दर था। ३—तुम यह काम करो। ४—हम जल पीते हैं। ५—वह घर आयेगा।

हाई स्कूल परीक्षा उत्तर प्रदेश, १९५८

अभ्यास ३१—१—यह देश हमारा है। २—हम सब वहाँ गये थे। ३—वह अपना पाठ पढ़ेगा। ४—तुम अपने घर जाओ। ५—ईश्वर की महिमा अपार है।

उक्त—१९५९

अभ्यास ३२—१—हरि पूछता है। २—वे सब गये। ३—तुम दोनों पढ़ो। ४—कौन पियेगा? ५—राम को करना चाहिए। उक्त—१९६०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभ्यास ३३—१—हम दोनों जल पियेंगे। २—तुम पढ़ते हो। ३—हम गए। ४—उनको काम करना चाहिए। ५—वे दोनों प्रश्न पूछें। उक्त—१९६१

अभ्यास ३४—१—वह दूध पीता है। २—राम पूछेगा।—३—तुम दोनों करो। ४—वे सब जाते हैं। ५—श्याम पाठशाला में था। उक्त—१९६२

अभ्यास ३५—१—मोहन फल खाता है। २—तुम दोनों पुस्तक पढ़ो। ३—बालक पाठशाला जाते हैं। ४—मैं घर जाऊँगा। ५—उसने चिट्ठी लिखो। उक्त—१९६३

अभ्यास ३६—१—वह गया। २—अध्यापक प्रश्न पूछता है। ३—वे कार्य करेंगे। ४—तुम जल पीते हो। ५—मैं घर गया। उक्त १९६४

अभ्यास ३७—१—वे नगर जायेंगे। २—मैं जल पीता हूँ। ३—श्याम कार्य करता है। ४—तुम दोनों ने पूछा। ५—उसे पढ़ना चाहिए। उक्त—१९६५

अभ्यास ३८—(१) मराल का मन कहाँ रमता है ? (२) मैं घर जाऊँगा (३) मृग वन में विचरण करते हैं। ४—हे मित्र ! बैठो। (५) तुम घर जाओ। (उक्त—१९६७)

अभ्यास (१) १—सः पठति। २—ते गच्छतः। ३—ताः खादन्ति। ४—रामः धावति। ५—फले पततः। ६—मयूराः नृत्यन्ति। ७—सीता गायति। ८—बालिके हसतः। ९—बालकाः पश्यन्ति। १०—बालकाः क्रीडन्ति। ११—मनुष्यौ उपदिशतः १२—ते वदन्ति। १३—सूर्यः उदयति १४—बानरो कूदतः। १५—पशवः चरन्ति। १६—भवान् स्मरति। १७—भवन्तौ भजतः। १८—भवन्तः नमन्ति। १९—सा शोचति। २०—ते पिवन्ति। २१—अग्निः ज्वलति। २२—भवती उपविशति। २३—भवत्यौ आकारयतः।

अभ्यास (२) १—सूर्यः प्रातः उदयति। २—अश्वो तौ न आकर्णयतः। ३—बालकाः सायं क्रीड़न्ति ४—वानराः दिवानृत्यन्ति। ५—रामः मोहनः च शीघ्रं धावतः। ६—अधुना बालकाः सर्वत्र न स्वपन्ति। ७—सायं भवति। ८—गुरुः नक्तम् उपदिशति। ९ रामः कुत्र वसति ? १०—भवान् अत्र कथम् आगच्छति ? ११—श्यामः कृष्णः वा चोरयति। १२—ईश्वरः सर्वत्र अस्ति। १३—अत्र कः तिष्ठति ? १४—अत्रमेघः कथं न वर्षति ?

अभ्यास (३) १—त्वं यच्छसि। २—युवां चलथः। ३—यूयं पतथ। ४—त्वं हृष्यसि। ५—यूयं स्वपथ। ६—युवां पृच्छथः ७—त्वं क्षिपसि। ८—युवां द्रुतधावथः। ९—यूयम् आगच्छथ। १०—त्वं नृत्यसि। ११—यूयं गायथ। १२—त्वम् आकर्णयस। १३—युवां नमथः ? १४—यूयं प्रक्षालयथ। १५—त्वं खादसि।

अभ्यास (४) १—अहं हसामि। २—आवां धावावः। ३—वयं पतामः। ४—आवां कथयावः ५—वयं यच्छामः ६—अह पृच्छा म। ७—वयम् आकर्णयामः। ८—आवाम् आगच्छावः। ९—अहं नामामि। १०—वय स्मरामः।

अभ्यास—(५) १—सः जिघ्रति। २—सर्पः दशति। ३—मेघाः वर्षन्ति। ४—वयं कथायामः। ५—यूयं किं खादथ ? ६—सः प्रातः भजति। ७—गृहं न पतति। ८—युवां कदा धावथः ? ९—युवां कुत्र वसथः ? १० ईश्वरः सृजति। ११—शत्रवः नश्यन्ति।

अभ्यास (६) १—मनोहरः श्यामः कृष्णः च पठिष्यन्ति। २—ते गमिष्यन्ति। ३—रामः श्यामः च खादिष्यतः। ४—सः धाविष्यति ५—रामः पतिष्यति। ६—वानराः नर्तिष्यन्ति। ७—बालकाः श्वः गास्यन्ति। ८—सा हसिष्यति। ९—चन्द्र सायम् उदेष्यति। १०—भवान् क्रीडिष्यत।

अभ्यास (७) १—त्वम उपदेक्ष्यसि। २—यूयं वदिष्यथ। ३—त्वं हसिष्यसि। ४

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४—युवाँ द्रक्ष्यथः । ५—त्वं कूर्दिष्यसि । ६—युवां स्मरिष्यथः । ७—यूयं भजिष्य । ८—त्वं नस्यसि । ९—यूयं शोचिष्यथ । १०—युवाँ पास्यथः ।

अभ्यास (८) १—अहं घ्रास्यामि । २—आवाँ स्वप्स्यावः । ३—श्वः वयम् अत्र वत्स्यामः । ४—आवाम् अत्र कदा आगमिष्यावः । ५—अहं कुत्र उपवेक्ष्यामि । ६—आवाँ दास्यावः । ७—वयं खादिष्यामः । ८—वयं चलिष्यामः । ९—अहं प्रक्ष्यामि । १०—आवाँ गमिष्यावः ।

अभ्यास (९) १—वयम् आगच्छामः । २—अहं खादिस्यामि । ३—यूयं गमिष्यथ । ४—सूर्यः प्रातः उदेष्यति । ५—खगाः कूजिष्यन्ति । ६—मयूरः नर्तिष्यति । ७—युवाँ गायथः । ८—सा अत्र आगमिष्यति । ९—यूयं द्रक्ष्यथ । १०—ते प्रक्ष्यतः ।

अभ्यास (१०) १—ते अपठन् । २—सा अगच्छत् । ३—भगवान् अखादत ४—तौ क्रीड़ताम् । ५—ते अधावन् । ६—सः अपतत् । ७—मयूरः अनृत्यत । ८—बालिकाः अगायन् । ९—रामः अहसत् । १०—सूर्यः उदगच्छत् ।

अभ्यास (११) १—यूयम् उपादिशत । २—त्वम् अवदः ३—युवाम् अपश्यतम् । ४—त्वम् अकूर्दः । ५—यूयम् अस्मरत । ६—युवाम अहसतम् । ७—त्वम अभजः । ८—यूयम अनमत । ९—त्वम अशोचः । १०—युवाम अपिबतम् ।

अभ्यास (१२) १—वयम अजिघ्राम । २—अहम अस्वपम् । ३—आवां ह्यः अत्र अवसाव । ४—अहम अत्रकदा आगच्छम् ? ५—वयम उपाविशाम । ६—आवाम् अयच्छाव । ७—अहम अखादम् । ८—आवाम् अचलाव । ९—वयम् अपृच्छाम् । १०—अहम अगच्छम ।

अभ्यास (१३) १—त्वं प्रक्ष्यसि । २—आवाम् उपाविशाव । ३—सः कुत्र वसति ? ४—तौ अपश्यताम । ५—यूयम् आकर्णयिष्यथ । ३—वयं गमिष्यामः ७—रामः अलिखत् । ८—वयम् अहसाम् । ९—भवान् चलिष्यति । १०—सायं भवति ।

अभ्यास (१४) १—ते पठन्तु । २—तौ गच्छताम् । ३—सः खादतु । ४—भवान धावतु । ५—फलानि पतन्तु । ६—सः चिरं जीवतु । ७—मयूराः नृत्यन्तु । ८—ते गायन्तु । ९—बालकाः हसन्तु । १०—अधुना मनुष्याः क्रीडन्तु ।

अभ्यास (१५) १—त्वं गच्छ । २—(यूयम्) अत्र उपविशत । ३—युवाम् अत्र आगच्छतम । ४—वत्स ! त्वं चिरंजीव । ५—त्वं धाव । ६—युवा द्रुतं चलतम् । ७—यूयं भजत । ८—युवाम् नमतम् । ९—त्वं न शोच । १०—यूयं पिबत ।

अभ्यास (१६) १—अहं स्मराणि । २—आवां चिन्तयाव । ३—वयं जिघ्राम । ४—अहम् आकर्णयानि । ५—वयं कथयाम । ६—आवाम् अत्र उपविशाव । ७—वयं चलाम । ८—अहं कूर्दानि । ९—वयं लिखाम । १०—आवाम् अत्र आगच्छाव ।

अभ्यास (१७) १—मीनाः तरन्ति । २—हरिणाः अचरन् । ३—सिंहः धाविष्यति । ४—ह्यः जलम् अवर्षत । ५—वयं पश्याम । ६—यूयं श्वः गमिष्यथ । ७—मेघाः गर्जन्ति । ७—बालिकाः द्रक्ष्यन्ति । ९—भवान् खादिष्यति । १०—माता रक्षतु ।

अभ्यास (१८) १—सः गच्छेत् । २—बालकाः बालिकाः च पठेयुः । ३—तौ खादेताम् । ४—भवान् न धावेत् । ५—ते [illegible]युः । ६—नटाः नृत्येयुः । ७—शुकाः गायेयु । ८—सः हसेत् । ९—सूर्यः उदयेत् । १०—[illegible] क्रीडेयुः ।

अभ्यास (१९) १—त्वम् उपदिशेः । २—युवां वदेतम् । ३—अद्य यूयं न हसेत ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

४—यूयं पश्येत । ५—युवां कुर्वेतम् । ६—यूयं स्मरेत । ७—त्वं भजेः । ८—यूयं नमेत । ९—युवां न शोचेतम् । १० यूयं पिबेत ।

अभ्यास (२०) १—अधुना वयं स्वपेम । २—अहं जिघ्रेयम । ३—वयम् अत्र वसेम । ४—आवाम् आगच्छेव । ५—अहम् उपविशेयम् । ६—अहं यच्छेयम् । ७—वयं खादेम । ८—आवां चलेव । ९—वयं पृच्छेम । १०—वयं चलेम ।

अभ्यास (२१) १—वयं गच्छामः । २—ते धावन्तु । ३—अहं खादिष्यामि । ४—युवाम् अपश्यतम् । ५—वयं नमामः । ६—अग्नि धक्ष्यति । ७—ते अहसन् । ८—सा अखादत् । ९—रामः मोहनः च अनयताम् । १०—यूयं वदिष्यथ । ११—मनुष्याः हृस्यन्तु । १२—मेघः वर्षतु ।

अभ्यास (२२) १—ते नश्यन्ति । २—ईश्वरः असृजत् । २—अनृत्यन् । ४—बालिकाः गास्यन्ति । ५—यूयं लेखिष्यथ । ६—सिंहाः अत्र वसन्ति । ७—वयम् अहृष्याम । ८—मनुष्याः कथं चिन्तयन्ति ? ९—खगाः कूजन्ति । १०—मेघः अवर्षत् । ११—अत्र एव उपविशत । १२—मेघः वर्षेत् ।

अभ्यास (२३) १—यूयं किम् इच्छथ ? २—वयं द्रक्ष्यामः । ३—भवान् आकर्णयिष्यति । ४—आवो नमेम् । ५—अश्वाः धावन्तु । ६—मीनाः तरिष्यन्ति । ७—ताः खादिष्यन्ति । ८—यूयं कदा न वदिष्यथ । ९—शीघ्रं पठ । १०—ते आधावन् ।

अभ्यास (२४) १—प्रातः पुनः भविष्यति । २—अन्धकारः अधावत् । ३—ताः अगच्छन् । ४—यूयं धावेत् । ५—खगाः उत्पतन्ति । ५—गुरुः ताडयिष्यति । ७—मालाकारः असिञ्चित् । ८—यूयं स्पृशेत । ९—भिक्षुकः याचति । १०—शत्रवः नश्यन्तु ।

अभ्यास (२५) १—अहं गृहं गच्छामि । २—युवां पुस्तकम् अपठतम् । ३—वयं पत्रं लेखिष्यामः । ४—सा नाटकम् अपश्यत् । ५—ते गीतम् आकर्णयन् । ६—रामः रावणाम् व्यापादयत् । ७—भवान् बालकान् कथान् कथयति । ८—गुरुः शिष्यान् प्रश्नान् पृच्छति । ९—सीता रामम् अकथयत् अहम् अपि वनम् गमिष्यामि । १०—सः पुस्तकं चोरयति । ११—अहं गुरुं प्रणमामि ।

अभ्यास (२६) १—यूयं दन्डेन कुक्कुरम् अताडयत । २—वयं नसिकया पुष्पं जिघ्राम ३—युवां कर्णाभ्याम् आकर्णयथः । ४—सः वेगेन अधावत् । ५—रामः बाणैः रावणम् व्यापादयत् । ६—सः दन्तैः चणकान् चर्वयति । ७—आवां मत्या विचारयावः । ८—बालकः पदाभ्यां धावति ।

अभ्यास (२७) १—वयं बालकेभ्यः पुस्तकानि आनयामः । २—यूयं मोहनाय फलानि यच्छथ । ३—अन्नाय कृषकः क्षेत्रं कर्षति । ४—सः आपणात् कृष्णाय पुस्तकम् आनयति । ५—वयम् अध्ययनाय नित्यं विद्यालयं आगच्छामः । ६—ते सायं भ्रमणाय गृहात् उद्यानं गच्छन्ति । ७—निम्बात् पत्राणि पतन्ति । ८—गंगा हिमालयात् उद्गच्छति । ९—अहं गुरोः पठामि कोशात् रूप्यकाणि आनय ।

अभ्यास (२८) १—रामः दशरथस्य पुत्रः आसीत् । २—सः शिकोहाबादे अवसत् । ३—ह्यः युवां गणितस्य पुस्तकम् अपठतम् । ४—भो गुरो, किम् अहम् अन्तः आगच्छानि : ५—वृक्षे खगाः कूजन्ति । ६—तडागस्य जले मीनाः सुखेन तरन्ति । ७—रामः अकथयत् भो सीते ! त्वं गृहे एव तिष्ठ । ८—तव किं नाम अस्ति ? ९—भो छात्राः ! स्वस्थाने उपविशत पुस्तकानि च पठत । १०—सूर्यः पूर्वे उद्गच्छति पश्चिमे च अस्त गच्छति ।

अभ्यास (२९) १—अस्मिन् गृहे कः वसति ? २—सः एकं सुन्दरं पुस्तक पठति ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—हिमालयः एकः विशालः पर्वतः अस्ति । ४—गंगा हिन्दूनामः एका पवित्रा नदी अस्ति । ५—आम्रस्य फलं मधुरं भवति । अहम् अस्य वृक्षस्य शीतल छायायाँ विश्रामं करोमि । ७—अस्य नगरस्य भवनानि उच्चानि सन्ति । ८—सीता एका चतुरा बालिका आसीत्

अभ्यास (३०) १—सः स्व पुस्तकं पठति । २—इदं नगरं सुन्दरम् आसीत् । ३—त्वम् इदम् ददम् कार्यं कुरु । ४— वयं जलं पिवामः । ५—सः गृहम् आगमिष्यति ।

अभ्यास (३१) १—अयम् अस्माकं देशः अस्ति । २—वयं तत्र अगच्छाम । ३—सः स्वपाठः पठिष्यति । ४—यूयं स्वगृहं गच्छत । ५—ईश्वरस्य महिमा अपारः अस्ति ।

अभ्यास (३२) १—हरिः पृच्छति । २—ते अगच्छन् । ३—युवां पठतम् । ४—कः पास्यति ? ५—रामः कुर्यात् ।

अभ्यास (३३) १—आवां जलं पास्यावः । २—यूयं पठथ । ३ —वयम् अगच्छाम । ४—ते कार्यं कुर्युः । ५—तौ प्रश्नं पृच्छाम् ।

अभ्यास (३४) १—सः दुग्ध पिवति । २—रामः प्रक्ष्यति । ३—युवां कुरुतम् । ४—ते गच्छन्ति । ५—श्यामः पाठशालायाम् आसीत् ।

अभ्यास (३५) १—मोहन फलं खादति । २—युवां पुस्तकं पठतम् । ३—बालकाः पाठशाला गच्छन्ति । ४—अहं गृहं गमिष्यामि ५—सः पत्रम् अलिखत् ।

अभ्यास (३६) १—सः अगच्छत् । २—अध्यापकः प्रश्नं पृच्छति । ३—ते कार्यं करिष्यन्ति । ४—यूयं जलं पिबथ । ५—अहं गृहम् अगच्छत ।

अभ्यास (३७) १—ते नगरं गमिष्यन्ति । २—अहं जलं पिवामि । ३—श्यामः कार्यं करोति । ४—युवाम् अपृच्छम् । ५—सः पठत् ।

अभ्यास (३८) १—मरालस्य मनः कुत्र रमते । २—अहं गृहं गमिस्यामि । ३—मृगाः वने विचरन्ति । ४—हे मित्र ! उपविश । ५—यूयं गृहं गच्छत ।

हिन्दी साहित्य का इतिहास

साहित्य तथा समाज का घनिष्ठि सम्बन्ध है । दोनों ही एक दूसरे को प्रभावित करते हैं । अतः हिन्दी साहित्य भी सदा से इस देश की राजनीतिक, सामाजिक तथा ऐतिहासिक परिस्थितियों से प्रभावित होता रहा है । इसी प्रभाव के कारण उसके विषय, वर्णन, शैली आदि में अन्तर आता रहा है । विभिन्न परिस्थितियों के कारण साहित्य में होने वाले इसी परिवर्तन को क्रम पूर्वक दिखाना साहित्य का इतिहास कहा जाता है । इस नियम के अनुसार हिन्दी साहित्य के आज तक के इतिहास को चार भागों में बाँटा गया है । अपने अपने समय की प्रमुख प्रवृत्ति के अनुसार ही इन कालों का नामकरण भी किया गया है । ये निम्न हैं—

१—आदि काल (वीर गाथा काल) सं० १०५० से १३७५ तक ।
२—पूर्व मध्य काल (भक्ति काल) सं० १३७५ से १७०० तक ।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३— उत्तर मध्य काल (रीति काल) सं० १७०० से १९०० तक ।
४—आधुनिक काल (गद्यकाल) सं० १९०० से अब तक ।

१—आदि काल अथवा वीरगाथा काल

(सं० १०५०—१३७५)

भारतीय **इतिहास** में यह समय राजनीतिक उथल-पुथल का था। देश पर मुसलमानों के आक्रमण हो रहे थे। प्रजा में असन्तोष फैला हुआ था। उसे सदा ही अपनी रक्षा की चिन्ता रहती थी। देशी राजा भी छोटी छोटी बातों पर एक दूसरे से लड़ बैठते थे। ऐसी अवस्था में उन्हीं कवियों का आदर हो सकता था जिनकी रचनाओं में देशाभिमान के भावों से पूर्ण वीर रस की प्रधानता हो और जो समय पड़ने पर हाथ में तलवार लेकर युद्ध में भी कूदने का साहस रखते हैं। पृथ्वीराज की सभा में रहने वाला 'चन्दबरदाई' ऐसा कवि था। इसका लिखा हुआ 'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का सबसे पहला महाकाव्य है।

इस काल में लिखी हुई वीर रस पूर्ण कविता या तो प्रबन्ध काव्यों के रूप में हैं या वीर गीतों के रूप में। 'चन्द' का पृथ्वीराज रासो प्रथम प्रकार का तथा 'नरपति नाल्ह' का 'बीसल देव रासो' और 'जगनिक' का 'आल्हा खण्ड' दूसरे प्रकार की रचनाएं हैं। 'खुमान रासो' 'जयचन्द प्रकाश' और 'जस मयंक जस चन्द्रिका' इस काल की अन्य प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

२—पूर्व मध्यकाल अथवा भक्ति काल

(सं० १३७५—१७००)

राजपूतों के विरोध करने पर भी विक्रमी की चौदहवीं सदी के उत्तरार्ध तक देश में मुसलमानों का राज्य स्थापित हो चुका था। हिन्दुओं पर तरह-तरह के अत्याचार हो रहे थे। इनकी बहू बेटियों की इज्जत लूटी जाती थी। उनके देवताओं को गालियाँ दी जाती थीं; देव मन्दिर गिराये जाते थे। वे सब कुछ अपनी आँखों से देखते थे पर करते क्या ? अपनी शक्ति से निराश होकर वे भगवान की ओर देखने लगे थे। ऐसी परिस्थितियों में जो रचनाएं हुईं, उनमें शान्ति रस तथा भक्ति की प्रधानता रही। अतएव इस काल को भक्ति काल कहते हैं। इस काल में प्राप्त होने वाली भक्ति दो प्रकार की है—निर्गुण-भक्ति और सगुण भक्ति। निर्गुण भक्ति की दो शाखाएँ हैं—ज्ञानाश्रयी और प्रेममार्गी। सगुण भक्ति की भी दो शाखाए हैं—कृष्ण भक्ति शाखा और राम भक्ति शाखा।

निर्गुण-भक्ति

ज्ञानाश्रयी शाखा—यद्यपि इस समय तक मुसलमानों ने भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था, पर वे हिन्दुओं की भावनाओं का दमन न कर पाये थे। अतः आये दिन हिन्दू और मुसलमानों में झगड़े हुआ करते थे, जिससे सारे समाज की नींव हिल गई थी। ऐसे समय में ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता थी, जो दोनों विरोधी समाजों में एकता स्थापित करा सकें। नानक, कबीर, दादू आदि सन्तों ने समाज की इस आवश्यकता की पूर्ति की। इन्होंने दोनों समाजों में प्रचलित धार्मिक आडम्बरों तथा कुप्रथाओं की तीव्र निन्दा की और उसके विरोध को दूर करके उन्हें एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया है। उन्होंने जाति प्रथा, मूर्ति पूजा, हिंसा, अवतारवाद का खण्डन कर दार्शनिक तत्वों का उपदेश दिया। इन सन्त कवियों की रचनाओं में ज्ञान की प्रधानता रहने के कारण इनकी परम्परा को निर्गुण भक्ति की ज्ञानाश्रयी शाखा कहा जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनकी (संत कवियों की) कविताओं में जो दिव्य सन्देश था, उसे मानसिक दृष्टि से पराजित जनता समझने में पूर्ण असमर्थ रही। उसे न्त के नीरस उपदेश न भाये, अतः इन सन्तों का स्थान सूफी कवियों ने ले लिया।

प्रेममार्गी शाखा—सूफी कवियों ने प्रेम गाथाओं के रूप में उस प्रम तत्व का वर्णन किया जो ईश्वर से मिलाने वाला है तथा जिसका आभास लौकिक प्रेम के रूप में मिलता है। इन्होंने अपने सम्प्रदाय की परम्परा के अनुसार अपने को 'प्रेमी' और परमात्मा को 'प्रेमिका' समझकर जिन प्रेम पूर्ण कथानकों की सृष्टि की उनसे पीड़ित प्रजा सन्तुष्ट न हो सकी क्योंकि न तो इन कथानकों में पीड़ित प्रजा के प्रति कोई सहानुभूति की भावना थी न इन कथानकों के नायकों में कोई ऐसी बात थी, जो जनता को प्रभावित कर सके। ये सारे कवि मुसलमान थे। इनमें जायसी, कुतबन, मंझन और उसमान प्रसिद्ध हैं। इनकी सारी रचनाएँ अवधी भाषा में दोहे और चौपाइयों में हैं। जायसी का 'पद्मावत' हिन्दी साहित्य में एक उच्चकोटि का महाकाव्य है।

सगुण-भक्ति

निर्गुण भक्ति के उपदेशक कवि जन मन के अवसाद दूर करने में असमर्थ रहे, क्योंकि उनकी रचनाओं में कोई ऐसी बात न थी, जो साधारण जनता को विपत्ति में धैर्य बँधा सके। हिन्दू जाति भगवान के उस रूप को देखने के लिये व्याकुल तथा उत्सुक थी जो अत्याचारियों से उनकी रक्षा कर सके, उसके दुःख में दुःखी तथा सुख में सुखी हो सके। फलस्वरूप साहित्य में सगुण भक्ति की धारा प्रभावित होने लगी। कृष्ण-भक्त कवियों ने कृष्ण को मन-मोहन रूप दिखाकर हिन्दुओं के हृदय की खिन्नता को दूर कर उनके जीवन में सरसता का संचार किया, और राम भक्त कवियों ने राम का भक्तजन रक्षक असुर संहारी रूप दिखाकर उनकी निराशा को सर्वदा के लिए भगा दिया।

कृष्ण भक्ति शाखा—इसके प्रवर्तक सूरदास थे। इन्होंने कृष्ण की बाल-लीला, रास क्रीड़ा तथा गोपी विरह का वर्णन करके साधारण जनता को रस मग्न कर दिया। गो, ब्राह्मण, दीन-दुखी भगवान का वर्णन सुनकर निराश जनता इनकी ओर खिंच गई। नन्ददास परमानन्द दास, कृष्णदास, मीराबाई, रसखान आदि इस शाखा के अन्य प्रसिद्ध कवि हैं, इन सबने ब्रज भाषा में गेय पदों की रचना की है।

रामभक्ति शाखा—यद्यपि कृष्ण-भक्ति के कवियों ने अपनी रचनाओं के द्वारा हिन्दुओं के हृदय की खिन्नता को दूर कर दिया, किन्तु वे उनकी निराशा को दूर न कर सके, क्योंकि उन्होंने महाभारत और गीता के दुष्ट-दलनकारी योगेश्वर कृष्ण का वर्णन न कर जन-मनहारी, माखन चोर, नटवर नागर, 'कन्हैया' को ही अपना वर्ण्य विषय बनाया था। रामभक्ति कवियों ने इस बात को समझा और सर्वशक्ति समन्वित दुष्ट संहारक राम का वर्णन कर निराशा नदी में डूबी जनता को दृढ़ आलम्बन प्रदान किया।

तुलसीदास इस शाखा के प्रवर्तक कवि हैं। उन्होंने राम के रूप में परमात्मा की आराधना का जो आदर्श जनता के सामने उपस्थित किया, उसमें शक्ति शील, और आदर्श का अपूर्व सामञ्जस्य था। जनता इस रूप को देखने के लिये लालायित थी; अतः उसने मर्यादा पुरुषोत्तम राम को शीघ्र ही अपना लिया। नाभादास, अग्रदास, हृदयराम आदि इस शाखा के अन्य प्रसिद्ध कवि हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—उत्तर मध्यकाल अथवा रीतिकाल

(सं० १७००—१९००)

सत्रहवीं शताब्दी का अन्त होते होते हिन्दुओं तथा मुसलमानों में पहले जैसा वैमनस्य नहीं रह गया था। मुसलमान शासक भी हिन्दुओं से अच्छा व्यवहार करने लगे थे। मुसलमानों के अखड राज्य के स्थापित हो जाने से लड़ाई झगड़ों का अन्त सा हो गया था। अतः राजाओं और प्रजा में बिलासिता बढ़ चली थी। कवियों ने भी समय के अनुसार राधा और कृष्ण की ओट लेकर वासनामय प्रेम की अनेक उद्भावनाएँ कीं। वे नायिका भेद, षट्ऋतु वर्णन आदि में ही लगे रहे।

उधर भक्तिकाल में साहित्य की पर्याप्त उन्नति हो जाने से कुछ कवियों का ध्यान संस्कृत के लक्षण ग्रन्थों की भांति हिन्दी में रस अलङ्कारादि के ग्रन्थों की रचना की ओर गया। इस प्रकार के ग्रन्थों को रीति ग्रन्थ कहा जाता है। इस काल में ऐसे ग्रन्थों की बहुलता रहने से इस काल को रीति काल कहा जाता है।

इस काल की भाषा ब्रजभाषा थी। अधिकतर रचनाएँ मुक्तक काव्य के रूप में कविता, सवैया, दोहा छन्द में हुई थीं। यद्यपि इस काव्य में कुछ प्रबन्ध काव्य तथा खण्ड काव्य भी लिखे गये, परे वे सफलता प्राप्त न कर सके। मतिराम तथा भूषण की रचनाओं को छोड़कर प्रायः सारी रचनाएँ शृंगार रस में हुई। केशवदास, बिहारी, मतिराम भूषण, देव, पदमाकर आदि इस काल के प्रमुख कवि हैं।

४-आधुनिक अथवा गद्यकाल

(सं० १९०० से अब तक)

सन् १९५७ ई० के स्वतन्त्रता संग्राम के बाद भारत में अंग्रेजों का आधिपत्य पूर्ण रीति से स्थापित हो गया, अतः उनके लिये यहाँ की भाषा सीखने का प्रयत्न करना स्वाभाविक ही था। उन्हें वहाँ शिष्ट समाज के बीच दो प्रकार की भाषाएँ चलती मिलीं, एक तो खड़ी बोली का सामान्य देश रूप और दूसरा उसका ही 'उर्दू' रूप।

जब उन्हें देश की भाषाओं को सीखने की आवश्यकता हुई, तब उन्होंने दोनों भाषाओं की गद्य-पुस्तकों की खोज की पर वें ऐसी पुस्तकें प्राप्त न कर सके। अतः 'फोर्ट विलियम कालेज कलकत्ता' में गद्य पुस्तकों को लिखवाने की व्यवस्था की गई। पर हिन्दी में इससे पहले योगवाशिष्ट, पद्मपुराण, मुन्शी सदासुखलाल की ज्ञानोपदेश वाली पुस्तक और इंशाअल्लाखाँ की रानी केतकी की कहानी, नाम की पुस्तकें लिखी जा चुकी थीं। फोर्ट विलियम कालेज के प्रबन्ध में 'लल्लूलालजी' ने 'प्रेम सागर' तथा सदल मिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' लिखा। इस प्रकार इस काल का आरम्भ गद्य साहित्य से हुआ। अतः इसे गद्य काल कहते हैं।

आधुनिक साहित्य की उन्नति के सम्पूर्ण काल को तीन भागों में बटा जा सकता है—

(१) भारतेन्दु युग, (२) द्विवेदी युग, (३) नवीन युग।

भारतेन्दु युग—खड़ी बोली के गद्य का यह आरम्भ काल है। इस काल का गद्य व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों से पूर्ण है। वाक्यों में गठन की कमी है। भाषा में सरसता का अभाव है। फिर भी निबन्ध, नाटक, तथा उपन्यास लिखे गये हैं। भारतेन्दु, हरिश्चन्द्र

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी, अम्बिकादत्त व्यास आदि इस काल के प्रसिद्ध लेखक हैं।

(२) द्विवेदी युग—इस काल में भाषा का संस्कार हो जाता है और भाषा अपने शुद्ध रूप में निखर जाती है। निबन्ध, नाटक, उपन्यास कहानी, आलोचना आदि विधाओं में पुस्तकें लिखी जाने लगी हैं। मासिक पत्र-पत्रिकाओं का भी प्रचलन हुआ। गोविन्द नरायण मिश्र, बालमुकन्द गुप्त, महावीरप्रसाद द्विवेदी, माधव प्रसाद मिश्र आदि इस काल के प्रमुख लेखक हैं।

(३) नवीन युग—इस काल में भाषा का स्वरूप स्थिर होता है और उसका भिन्न-भिन्न शैलियों में विकास होने लगा है। कला तथा भाव पक्ष का समुचित सम्मिश्रण दृष्टि-गोचर होने लगा है। इस युग में साहित्य के सभी अंगों का विस्तार होता है। पं० पद्मसिंह, बाबू श्यामसुन्दरदास, पं० रामचन्द्र शुक्ल, बाबू जयशंकर प्रसाद, मुन्शी प्रेमचन्द्र, बाबू गुलाब राय, श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि इस काल के लेखक हैं।

इस युग में कविता के क्षेत्र में भी ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली का प्रयोग होने लगा है, फिर भी ब्रजभाषा का प्रभाव बना हुआ हैं। नाना प्रकार के नवीन नवीन छन्दों, विषयों और शैलियों की उद्भावना की जा रही है। राष्ट्रीय जाग्रति के फलस्वरूप कवियों में राष्ट्रीयता की छाप दृष्टिगोचर होने लगी है। वर्तमान कवि किसान-मजदूरों की दयनीय दशा का चित्रण करते हुए पूँजीवाद के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जगन्नाथदास, रत्नाकर, श्रीधर पाठक, अयोध्यासिंह उपाध्याय. मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, निराला, महादेवी वर्मा, आदि खड़ी बोली के प्रसिद्ध कवि हैं।

सार यह है कि आधुनिक काल में हिन्दी साहित्य की सर्वांगीण उन्नति हो रही है। अनेक लेखक तथा कवियों ने सुन्दर सुन्दर नाटक, उपन्यास, कहानी, महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीत काव्य आदि लिखे हैं, इन सब बातों को देखने से यही ज्ञात होता है कि हमारे साहित्य का भविष्य बहुत ही उज्जवल है और वही शीघ्र ही संसार के सर्वोच्च साहित्यों में एक सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेगा।

———

हिन्दी काव्य के कीर्ति स्तम्भ

(जीवन और साहित्य परिचय)

किसी कवि (परिचय के अन्तर्गत) या लेखक के परिचय से तात्पर्य उसकी जीवनी और शैली से है। जीवनी में उसके जीवन की प्रधान घटनाएँ तथा शैली में प्रायः निम्न बातों का विवेचन रहता है—

१—रचना में प्रकट किए हुए भाव। २—वर्णन करने का प्रकार। ३—भाषा। ४—शैली। ५—छन्द। ६—रस। ७—अलंकार।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अब हम हिन्दी के कुछ प्रमुख कवियों और लेखकों का परिचय देंगे—

विशेष—छात्रों की सुविधा के लिए प्रत्येक कवि या लेखक की शैली के अन्त में उसी शैली का साराँश लिख दिया गया है। छात्रों को यह साराँश तथा शैली में उद्धरण रूप से आए हुए छन्द अथवा गद्यांश कण्ठस्थ कर लेने चाहिए। इसके बाद शैली को कई बार पढ़कर साराँश से दी हुई रूप रेखाओं के क्रम के अनुसार उन्हीं उद्धृत छन्दों अथवा गद्यांशों का प्रयोग ध्यान में रखना चाहिए। लिखते समय इसी क्रम से लिख देना चाहिए। सम्पूर्ण शैली को कण्ठस्थ करना समय तथा शक्ति का दुरुपयोग करना है।

कबीर

जीवन तथा परिचय—कबीर का जन्म काशी में सम्वत् १४५६ के लगभग एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ था। वह इन्हें लोकापवाद के डर से 'लहरतारा' नामक गाँव के पास फैंक आई थी; वहाँ से गुजरने वाले नीरू और नीमा नामक एक जुलाहे दम्पत्ति ने इनको उठा लिया और इनका पालन-पोषण किया। नीची जाति और गरीबी के कारण वे पढ़ लिख न सके। बचपन में वे अपने पिता को कपड़ा बुनने में मदद देते; साधुओं की संगति में रह उनकी सेवा करते और उनके गीतों को गाते फिरते थे। साधुओं की संगति के कारण ही उन्हें वेदान्त, पुराण, योग आदि का थोड़ा बहुत ज्ञान हो गया था। ये स्वभाव से ही सत्य के प्रेमी, छल-कपट से दूर रहने वाले और आडम्बरों से घृणा करने वाले थे।

ये काशी के रामानन्द के शिष्य थे। एक बार रात्रि को ये काशी के पंचगङ्गाघाट की सीढ़ियों पर पड़े थे। तड़के ही रामानन्द जी वहाँ स्नान करने के लिए आये। धोखे में उनका पैर इनके ऊपर पड़ गया, इस पर रामानन्द ने कहा—"राम राम कह।" कबीर ने इसी को अपना गुरु मन्त्र मान लिया और अपने को रामानन्द का शिष्य कहने लगे। इनकी स्त्री का नाम लोई और पुत्र का नाम कमाल था। प्रायः ये जीवन भर काशी में रहे, पर मृत्यु के समय "जो कांशी तन तजै कबीरा, रामै कौन निहोरा रे' कह कर मगहर चले गये और वहीं पर सं० १५७५ में इनकी मृत्यु हो गई।

रचनाएँ—इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ 'बीजक' है, इसके तीन भाग हैं—रमैनी, सबद और साखी। इसमें वेदान्त तत्व, हिन्दू मुसलमानों को फटकार, संसार को अनित्यता, वाह्य आडम्बरों का विरोध आदि अनेक प्रसंग हैं।

भावपक्ष

भक्ति भावना—कबीर भक्तिकाल की ज्ञानाश्रयीशाखा के सर्वोच्च कवि हैं। अतएव इनकी कविता में ज्ञान और भक्ति का सुन्दर समन्वय मिलता है। 'प्रेम' का 'ढाई अक्षर' पढ़ने वाला ही 'पण्डित' है और प्रेम रहित शरीर 'मसान'—

जा घट प्रेम न संचरै सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की साँस लेत बिनु प्रान॥

यद्यपि कबीर ने राम का वर्णन किया है पर इनके 'राम' दशरथ के पुत्र नहीं हैं, वे तो 'अलख', अनादि और 'अनामी' हैं। न उनके मुंह है और न माथा—

जाके मुख माथा नहीं नाहीं रूप कुरूप।
पुहुप बाँस तें पातरा ऐसा तत्व अनूप॥

पर वहीं 'राम' कबीर के उपासना क्षेत्र में 'पिउ' बन जाता है—

'हरि मोर पिउ मैं राम की बहुरिया।'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

माया 'पिउ' और 'बहुरिया' के इस मिलन में बाधा डालती है। संसार के प्रत्येक प्राणी को इसने ठगा है।

रहस्यवाद की भावना—उक्त आलम्बन के निर्गुण अलख, अनादि और 'अनामी' होने के कारण कबीर की उक्त साधना में रहस्यवाद का पुट आ गया है। वह रहस्यवाद प्रेममार्गी सूफी कवियों के रहस्यवाद की छाया से ओत-प्रोत होते हुए भी मूलतः भारतीय ही है। रहस्यवाद को भावना से युक्त इनकी निम्न साखी दर्शनीय है—

लाली मेरे लाल की जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं चली, मैं भी हो गई लाल॥

वर्णन का क्षेत्र—कबीर का उद्देश्य मुक्ति प्राप्त करना ही नहीं है। ये सुधारक, उपदेशक तथा धर्म प्रचारक भी हैं। अतएव इन्होंने हिन्दुओं तथा मुसलमानों से प्रचलित आडम्बरों का डटकर विरोध किया है। जप, माला, छापा तिलक, मूँड मुड़ाना अजाँ देना, मूर्ति पूजा आदि की निरर्थकता के प्रतिपादन में इनकी वाणी निरख आई है। इनका एक तीव्र कटाक्ष देखिए—

अरे इन दोउन राह न पाई,
हिन्दू अपनी करै बढ़ाई गागर छुवनन देई।
वैश्या के पाइन तर सोवै यह देखो हिन्दुवाई॥
मुसलमान के पीर औलिया मुर्गी मुरगा खाई।
खाला केरी बेटी व्याहें घरहिं में करहि सगाई॥

कबीर ने धार्मिक उपदेशों के अतिरिक्त मानव को दैनिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले उपदेश भी दिये हैं और उनमें प्रभाव उत्पन्न करने के लिये अन्योक्ति, उपमा आदि का प्रयोग भी किया है। इस प्रकार की दो साखियाँ देखिये—

केला तबहिं न चेतिया जब ढिग लागी बेरि।
अब के चेते क्या भया, काँटों लीना घेरि॥
कथनी मीठी खाँड सी, करनी विष की लोय।
कथनी तज करनी करै, तो विष से अमृत होय॥

कला पक्ष

भाषा—कबीर की भाषा पचमेल खिचड़ी अथवा सधुक्कड़ी है, जिसमें राजस्थानी, पंजाबी, खड़ी बोली और ब्रजभाषा के शब्दों का मेल है। शुद्धता और परिमार्जन की दृष्टि से वह भाषा विशेष महत्व की न होते हुये भी वाणी की सत्यता के कारण बड़ा गहरा प्रभाव रखती है।

शैली—कबीर की शैली सीधी-साधी और कृत्रिमता से दूर रहने वाली है, पर उसमें हृदय को स्पर्श करने की अपूर्व शक्ति है। इनकी शैली के निम्न रूप पाये जाते हैं—

१—**सरल तथा सुबोध शैली**—भक्ति तथा प्रेम के चित्रण में।

२—**दुरूह अस्पष्ट शैली**—रहस्यमय भावनाओं तथा उलटवासियों में।

३—**व्यङ्ग्य पूर्ण तथा तार्किक शैली**—धर्म की मान्यताओं तथा रूढ़ियों के खण्डन मण्डन में।

छन्द—इन्होंने साखी (दोहा का दूसरा रूप), गेय पद तथा देहातों में प्रचलित कहरवा छन्द का प्रयोग किया है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रस-अलङ्कार—कबीर के काव्य में रस, अलङ्कार, गुण आदि का अभाव सा है। कहीं-कहीं उपमा रूपक, अन्योक्ति आदि दृष्टिगोचर होते हैं। हाँ, सिद्धान्त और सन्देश इनकी भाषा में ऊँचे से ऊँचे मिलते हैं, और वही इनकी प्रसिद्ध के कारण हैं।

साराँश

जन्म-सम्वत्, स्थान—१४५८ के लगभग, काशी।

माता पिता— विधवा ब्राह्मणी, पर पालन पोषण नीरू तथा नीमा ने किया।

गुरू— रामानन्द।

मरण संवत्, स्थान—१५७५, मगहर।

रचना— बीजक।

भक्ति भावना— प्रेम तथा श्रद्धा द्वारा प्राप्य निराकार राम की भक्ति।

वर्ण्य विषय— वेदान्त, प्रेम-महिमा गुरु-महिमा, हिंसा का त्याग, आडम्बर का विरोध, जाति-पाँति का विरोध।

भाषा— राजस्थानी, पंजाब, खड़ी बोली और ब्रजभाषा के शब्दों से बनी पंचमेल खिचड़ी अथवा सधुक्कड़ी।

शैली— १—सरल तथा सुबोध शैली—भक्ति तथा प्रेम के चित्रण में।

२—दूरूह तथा अस्पष्ट शैली—रहस्यमय भावनाओं तथा उलट वासियों में।

३—व्यंग पूर्ण तार्किक शैली—खण्डन-मण्डन में।

छन्द— साखी, गेय पद, कहरवा।

रस, गुण अलङ्कार—इनका अभाव सा है। कहीं-कहीं उपमा, रूपक, अन्योक्ति पाये जाते हैं।

सूरदास

जीवन तथा परिचय—हिन्दी साहित्य के सूर 'सूरदास' का जन्म सवत् १५४० के लगभग आगरा से मथुरा जाने वाली सड़क पर स्थित 'रुनकता' नामक ग्राम में हुआ था। कुछ विद्वानों का मत है कि ये सारस्वत ब्राह्मण थे और इनके पिता का नाम रामदास था। कोई इन्हें ब्रह्म-भट्ट बतलाता है। इनके जन्मान्ध होने के विषय में विद्वानों में मतभेद है। प्रकृति के नाना व्यापार, मानव स्वभाव की विविधता तथा रंगों के चित्रण को देखकर इनकी जन्मान्धता के विषय में सहसा विश्वास नहीं होता। ये श्री बल्लभाचार्य जी के शिष्य थे और उन्हीं की आज्ञा से इन्होंने श्रीमद्भागवत के आधार पर 'सुर सागर' की रचना की थी। इनकी मृत्यु 'पारसोली' नामक ग्राम में सं० १६२० के लगभग हुई।

रचनाएँ—इनके रचे हुये ग्रन्थों में से सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी ही हमें प्राप्त है। कहा जाता है कि सूर सागर में सवा लाख पद थे, पर अब तो ६-७ हजार ही मिलते हैं। सूरसागर कवि का सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। इसमें कृष्ण की बाल लीला, गोपी, प्रेम, मथुरा गमन, गोपी, विरह, उद्धव गोपी सम्वाद आदि का विशद वर्णन है। 'सूरसारावली सूर सागर' का संक्षिप्त संस्करण है और 'साहित्य लहरी' में कवि के दृष्ट कूटों का संग्रह है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—ये भक्तिकाल की कृष्ण भक्ति शाखा के सर्वोच्च कवि हैं। इनकी कविता का मुख्य विषय भगवान कृष्ण की लीला का वर्णन है। इन्होंने कृष्ण जीवन के विविध अंगों का चित्रण न करके बाल-लीला, गोपी-प्रेम और गोपी विरह को प्रधानता दी है। सूर के कृष्ण महाभारत और गीता के राजनीतिज्ञ तथा योगेश्वर कृष्ण न होकर गोकुल मथुरा के नटवर-नागर, गोपों मन रंजन, माखनचोर, नन्द किशोर हैं।

बाल चरित्र चित्रण—बाल-लीला के वर्णन में कृष्ण के बाल सुलभ भावों और चेष्टाओं का जैसा सुन्दर, सरस और जीता जागता चित्रण उपस्थित किया गया है, वैसा अन्य नहीं मिलता। पालने में झूलने से लेकर गोचारण और माखन चोरी की सारी लीलाओं में सूर के बाल स्वभाव के व्यापक अध्ययन की छाप मिलती है। कृष्ण अभी बिल्कुल छोटे हैं। यशोदा उन्हें पालने में झुलाती हुई लोरी गा-गाकर सुलाने की चेष्टा कर रही है—

यशोदा हरि पालने झुलावै।
लहरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै ॥

\+ + +

कबहूँ पलक हरि मूँद लेते हैं कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै रहि रहि करि करि सैन बतावै।
यहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरे गावै।
जो सुख सूर अमर मुनि दुरलभ सो नँद भामिनि पावै।

कृष्ण अब घुंटनों के बल चलने लगे हैं—

किलकत कान्ह घुटुरुवन आवत।
मनिमय कनक नन्द के आँगन, बिम्ब पकरिवे धावत ॥
कबहुँ निरिख हरि आप छाँह को, कर सों पकरन चाहत।
किलक हँसत, राजत द्वैदतियाँ, पुनि पुनि तेहि अवगाहत ॥

यदि कृष्ण बाल सुलभ स्वभाव से 'मैया कबहि बढ़ैगी चोटी' पूछते हैं तो माता भी 'कजरी को पय पिवहु लला तेरी चोटी बाढ़ै।' कहकर उन्हें दूध पीने को उत्साहित करती है।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि सूर ने बाल्यावस्था से सम्बन्धित एक एक मनोभावों का चित्रण किया है जिसके साथ-साथ माता-पिता संगी-साथी और गोप-गोपियों का भी यथोचित वर्णन होता चला है।

शृंगार-चित्रण—शृंगार के वर्णन में भी सूर को अद्वितीय सफलता मिलता है। शृंगार के दोनों पक्षों संयोग और वियोग का जो सांगोपांग व'न किया गया है, वह सूर के लिए ही सम्भव था। दान-लीला, मुरली-माधुरी, रास-लीला और चीर हरण में संयोग शृंगार की चरमावस्था को देखा जा सकता है। राधा को यमुना तट पर पहली बार देखते ही कृष्ण रीझ जाते हैं और—

बूझत स्याम कौन तू गोरी।
कहाँ रहति काकी है बेटी, देखी नहीं कहूँ ब्रज खोरी ॥
काहे को हम ब्रज तन आवति, खेलत रहत आपुनी पौरी।
सुनति रहत स्रवनन नन्द ढोटा, करत रहत माखन दधि चोरी ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तुम्हरो कहा चोरि हम लैहैं, खेलन चलो संग मिलि जोरी।
'सूरदास' प्रभु रसिक सिरोमनि, बातन भुरई राधिका भोरी ।।

कृष्ण के वियोग में वही राधा 'सखी, इन नैनन से घन हारे।' कहकर सचमुच ही आँसुओं से 'घनों' को भी हरा देती है। गोपियाँ कृष्ण-वियोग में मधुवन को हरा-भरा नहीं देखना चाहतीं और उसे उलाहना देती हैं।

मधुवन तुम कत रहत हरे ?
विरह वियोग श्याम सुन्दर के ठाढ़े क्यों न जरे ?

उधर उद्धव का योग—उपदेश घाव पर नमक छिड़कने का काम करता है। इस पर वे 'अखियाँ हर दर्शन की भूखी' कहकर अपनी आकुलता का परिचय देती हैं।

भक्ति भावना—सूर ब्रजवासी कृष्ण के अनन्त भक्त हैं। इनकी भक्ति सखा-भाव की है। अतएव कृष्ण से मिलने के लिये उन्हें ग्रन्थ किसी मध्यस्थ देवता की आवश्यकता नहीं पड़ती और उन्हें हीन दृष्टि से देखते थे 'और देव सब रङ्क भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे' कहते हुए सुने जाते हैं। इनकी इस प्रकार की भक्ति के कारण ही 'आजु हों एक-एक टरि हो' जैसी गर्वोक्तियाँ पाई जाती हैं।

कला पक्ष

भाषा—सूरदास की भाषा व्रज की चलती हुई भाषा है जो कुछ अपवादों को छोड़कर शुद्ध तथा परिमार्जित है। जहाँ तहाँ मुहावरों तथा कहावतों का भी सुन्दर प्रयोग किया गया है। संस्कृत शब्दावली का सहारा न लेकर भी सूर ने अपनी भाषा में शिथिलता नहीं आने दी है। सूर की सारी रचना मुक्तक काव्य के रूप में गाने योग्य पदों में हैं।

शैली—सूर की शैली गीति—काव्य की सुन्दर शैली कही जाती है। इनकी शैली के निम्न तीन रूप दिखलाई देते हैं।

१—भाव पूर्ण शैली—विनय तथा भक्ति के पदों में।

२—कथात्मक मधुर शैली—बाल लीला तथा गोपी प्रेम के वर्णन में।

३—अस्पष्ट तथा दुरूह शैली—कूट पदों में। इस शैली का निम्न उदाहरण दर्शनीय है—

सखी री सुन परदेशी की बात।
मन्दिर अरध अवधि हरि गन गये, हरि अहार चलि जात।
ग्रह नक्षत्र अरु वेद अरध करि को बरजै हम खात ।।

रस—बाल लीला के वर्णन में वात्सल्य, गोपी प्रेम में शृंगार (संयोग तथा विप्रलम्भ) और विनिय के पदों में शान्त के दर्शन होते हैं।

अलङ्कार—इनकी रचना में प्रायः सारे अलङ्कार पाये जाते हैं, पर उपमा रूपक, उत्प्रेक्षा आदि इनके प्रिय अलङ्कार हैं। अद्भुत एक अनूपम बाग में प्रयुक्त रूपकातिशयोक्ति जैसे केवल पांडित्य प्रदर्शन के लिये प्रयुक्त अलङ्कारों को छोड़कर इनके अलङ्कार भावाभिव्यक्ति में पूर्ण सहायक हुए हैं। यथा—

ऊधो ! तुम अति चतुर सुजान।
\+ \+ \+
द्वइ लोचन जो विरद किए श्रुति गावत एक समान।
भेद चकोर किए ताहूँ में विधु प्रीतम रिपु भान ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कला-पक्ष

भाषा—तुलसीदास ने अवधी और व्रज दोनों ही भाषाओं में कविता की है। संस्कृत शब्दों के प्रयोग से इनकी भाषा में साहित्यिकता आ गयी है। शथिल्य दोष का अभाव है। कहीं कहीं पर अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग भी दिखाई देता है। प्रकरण के अनुसार भाषा को कोमल अथवा ओजपूर्ण बनाने में तुलसीदास जी सिद्धहस्त हैं। यदि—

'चली संग लै सखी सयानी। गावत गीत मनोहर बानी।।
सोह नवल तन सुन्दर [illegible] [illegible] री।।

में [illegible] न का क्षेत्र—मीरा कृष्ण की भक्त हैं और उनका सा[illegible] [illegible]ार कृष्ण के ही चारों ओर घूमता है। अतः उनका सारा काव्य कृष्ण से ही सम्बद्ध है। इसमें कृष्ण की भक्ति प्रेम विरह तथा संयोग के चित्र पाये जाते हैं। सांसारिक दुर्व्यवहारों के प्रति होने वाली खिन्नता-ध्वनि भी इनके पदों में यत्र-तत्र मिलती है।

"अब तो बात फैल गई जाणों सब कोई,
मीरा राम लगण लागी होणी होय सो होई।"

में उनकी यह रुचि स्पष्ट देखी जा सकती है।

भक्ति भावना—मीरा की भक्ति गोपी भाव की है। ये कृष्ण को अपना पति मानती हैं और उनके सिवाय अन्य किसी को अपना नहीं समझतीं—

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई,
जाके सिर मोर मुकुट मेरा पति सोई।

इनकी इच्छा है कि उसके अपने सुन्दर साँवरे रूप में सदा ही उनके नैनों में बसे रहें—

बसौ मेरे नैनन में नन्दलाल।
मोहनी मूरत साँवरि सूरत नैना बने बिसाल।।

मीरा की भक्ति में प्रेम की प्रधानता है। इनके प्रेम में भावों की तीव्रता कोमलता और मधुरता है। इनके हृदय में निरन्तर उठने वाली प्रेम की पीर को स्वाभाविक गति है और यह लोक दिखावे से सदा दूर रहती है। मीरा के प्रेम में विरह की पीर, संयोग का आनन्द तथा भक्ति की आकुलता है।

वियोग वर्णन—मीरा का वियोग वर्णन स्वानुभूति वाचक है। इन्होंने स्वयं अपने वियोग का वर्णन किया है। अतः इसमें जितनी तल्लीनता, अनन्यता तथा भावुकता है, उतनी अन्य कवियों के वर्णन में नहीं है। अन्य कवियों के वर्णन जहाँ कल्पना तथा वाग्वैचित्र्य का सहारा लेकर आगे बढ़ते हैं, वहाँ मीरा अत्यन्त सीधे-सादे ढङ्ग से अपने हृदय की पीर को हमारे सामने रख देती है—

पान ज्यों पीली पड़ी रे, लोग कहे पिंड रोग
छाने लाँघन मैं किया रे, राम मिलन के जोग।।
बाबुल बैद बुलाया रे, पकड़ दिखाई म्हारी बाँह।
मूरख बैद मरम नहिं जाने करक कलेजे माँह।।
जाओ बैद घर आपने रे, म्हारे नाँव न लेय।
मैं तो दाधी विरह की रे, काहे कूँ ओषध देय।।

प्रिय विरह में मीरा को चैन नहीं पड़ता, वह कभी मन्दिर के अन्दर जाती है और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कभी आँगन में जाती हैं। वह घायल की तरह घूमती फिरती हैं, पर उसकी विथा को कोई नहीं पूछता—

खिन मन्दिर खिन आँगन खिन रे, खिन ठाढ़ी होय।
घायल ज्यूं घूमूं खड़ी, म्हारी विथा न बूझै कोय॥

प्रतीक्षा करते करते मीरा हार गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसका प्रिय उसे भूल सा गया है, अतः उसके पास सन्देश भेजना आवश्यक हो गया है। मीरा भी एक कौआ के द्वारा सन्देश भेजती है, पर वह सन्देश मौन है और उसके अन्तर में मीरा की वेदना तथा विवशता छिपी हुई है—

काढ़ि कलेजी में धरूँ रे, कौआ तू ले जाय।
ज्याँ देसा म्हारो पिव बसै रे, वे देखत तू खाय॥

संयोग वर्णन—मीरा केवल अपने गिरधर के वियोग में दुःखी ही नहीं रही हैं। उन्होंने उनका सुखद संयोग भी पाया है। यद्यपि मीरा ने 'लोक लाज' को छोड़कर 'गिरधर' को अपनाया है और उनकी बात चारों ओर फैल गई है, पर उनके इस मिलन में शालीनता तथा शिष्टता है। उनके संयोग वर्णन ने भी मर्यादा की सीमा को नहीं लाँघा है। यही कारण है कि उन्होंने कहीं आलिंगन तथा चुम्बन आदि का वर्णन नहीं किया है। इसमें आत्म समर्पण की भावना की अधिकता है और प्रतिदिन की चिन्ता का अभाव है। वास्तव में जो 'गिरधर' के 'रंग' में रहती है, उसे किस की चिन्ता—

मैं गिरधर रंग राती।
पंच रंग चोला पहर सखी मैं झिरमिट खेलन जाती।
ओह झिरमिट माँ मिल्यों साँवरो, खोल मिली तन गाती॥
× × × ×
जाऊँनी पीहरिये जाऊँनी सासरिये, हरि सूँ सैन लगाती।
मीरा के प्रभू गिरधर नागर, हरि चरणों चित लाती॥

विषय की दृष्टि से मीरा के पदों को निम्न पाँच भागों में बाँटा जा सकता है—

१—**विनय तथा प्रार्थना के पद**—इनमें एक भक्त हृदय की आतुरता तथा समर्पण की भावनाओं की प्रधानता है।

२—**रूप सम्बन्धी पद**—इन पदों में भगवान कृष्ण के सुन्दर तथा मनमोहक रूप का चित्रण करके उनसे अपने हृदय में बसने की प्रार्थना की गई है।

बसो मेरे नैनन में नन्द लाल,
मोहनि मूरत साँवरि सूरत नैना बने विशाल।
मोरि मुकुट मकराकृति कुण्डल अरुन तिलक दिये भाल।

३—**जीवनी सम्बन्धी पद**—इन पदों में मीरा ने अपने जीवन में आने वाली कठिनाइयों तथा अपने जीवन पर प्रभाव डालने वाली कुछ घटनाओं का वर्णन किया है।

४—**प्रेम सम्बन्धी पद**—इन पदों में मीरा ने अपने गिरधर गोपाल के संयोग तथा वियोग का वर्णन किया है।

५—**रहस्यवादी पद**—इन पदों में मीरा की निर्गुण भक्ति का चित्रण है, जो कबीर आदि से प्रभावित है। इनमें मीरा ने उस निराकार सत्ता को अपने हृदय में रहने वाला बताकर भी 'प्रिय' के रूप में चित्रित किया है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिनका पिउ परदेश बसत है लिख-लिख भेजें पाती।
मेरा पिया मेरे हिये बसत है ना कहुँ आती जाती ।
चन्दा जायगा सूरज जायगा जायगी धरण अकासी।
पवन पाणि दोनु ही जांयगे अटल रहे अविनासी।

रस—मीरा ने श्रृंगार के दोनों पक्ष संयोग तथा वियोग का सुन्दर चित्रण किया है। इन्होंने शान्त रस में भी लिखा है।

कला-पक्ष

भाषा—मीरा की भाषा कृत्रिमता से दूर स्वाभाविक ब्रज भाषा है, जिसमें राजस्थानी, गुजराती, पूर्वी पंजाबी और फारसी के शब्द मिले हुए हैं। वास्तव में मीरा का ध्यान भावों की ओर रहा है और उन्हें व्यक्त करने के लिए जो शब्द अधिक उपयुक्त प्रतीत हुए हैं, उनका उन्होंने जी खोलकर प्रयोग किया है। यही कारण हैं कि उनके पदों की भाषा में एकरूपता का अभाव है।

शैली—मीरा की शैली गीति काव्य की भावपूर्ण शैली है। ये स्वयं ही इसकी जन्मदात्री तथा पोषिका हैं। इनमें संगीतात्मकता तथा लय की प्रधानता है।

छन्द—मीरा की सम्पूर्ण रचना गाने योग्य पदों में है जो विभिन्न राग रागिनियों से पूर्ण है।

अलंकार—मीरा ने अलंकारों की दृष्टि से नहीं लिखा, फिर भी उपमा रूपक, दृष्टान्त आदि अलंकार इनके वाक्य में स्वभाविक रीति में आ गए हैं।

मीरा के उक्त गुणों के कारण उनका नाम हिन्दी के गीतकारों में सबसे पहले लिया जाता है और उनके बारे में कहा जाता है।

गीति वेदना सौख्य मगन, श्री प्रेम पुजारिन।
प्रेम सौख्य वेदना विकल, थी गीत पुजारिन ।।

रूप पाया जाता है...

शैली—नरोत्तमदास की शैली काव्यात्मक नाट्य शैली है। कथोपकथनों का स...... तथा स्वाभाविकता शब्दों, का उचित सन्निवेश तथा भाषा की सरलता से इनकी शैली प्रवाह पूर्ण तथा प्रसादमय हो गई है, जो खण्ड काव्य के सर्वथा उपयुक्त है।

अलंकार—नरोत्तमदास अलंकारों के फेर में अधिक नहीं पड़े हैं। एक दरिद्र तथा सच्चे ब्राह्मण का अलंकारों से मोह भी सम्भव नहीं है। अलंकारों का प्रयोग न होने पर भी इनकी कविता में सुन्दरता तथा मनोहरता का अभाव नहीं है। फिर भी इनकी कविता में अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि का स्वाभाविक प्रयोग मिलता है।

छन्द—नरोत्तमदास ने दोहा, कवित्त, सवैया, कुण्डली आदि छन्दों में रचना की है। वास्तव में नरोत्तमदास एक सहृदय कवि हैं। उनका काव्य 'सुदामा चरित' सुदामा जैसे दीनों की पारिवारिक जीवन की विषमताओं की समस्या को उपस्थित करता है। कृष्ण जैसे मित्रों की सहानुभूति तथा स्वेच्छापूर्ण दान के द्वारा उस समस्या का हल प्रस्तुत कर देना नरोत्तमदास की कवि प्रतिभा का द्योतक है। इस समस्या के समाधान को प्रस्तुत करके नरोत्तमदास का काव्य सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक हो गया है और इसके साथ साथ रचयिता भी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सारांश

जन्म संवत तथा स्थान—	संवत् १५५० के लगभग वाड़ी, जिला सीतापुर ।
मृत्यु संवत्—	सं १६०५ के लगभग ।
रचना—	सुदामा चरित, ध्रुव चरित, विचार माला ।
वर्ण्य विषय—	कृष्ण और सुदामा की आदर्श मित्रता, दरिद्रता और भावुकता का भली भाँति चित्रण ।
भाषा—	प्रवाहपूर्ण, सरस ब्रजभाषा, जिसमें वैसवाड़े के शब्दों का प्रयोग है ।
शैली—	काव्यात्मक नाट्य शैली ।
अलंकार—	अलंकारों का कम प्रयोग है, पर अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा पाये जाते हैं ।
छन्द—	दोहा, कवित्त, सवैया, कुण्डली ।

रहीम

जीवनी तथा परिचय—इनका पूरा नाम अब्दुल रहीम खानखाना था । ये अकबर के संरक्षक वैरमखाँ के पुत्र थे । इनका जन्म सम्वत् १६१० में हुआ था । इन्होंने अरबी, फारसी, हिन्दी तथा संस्कृत का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था ।

ये सहृदय कवि तथा मर्मज्ञ विद्वान थे । सम्राट अकबर इनका अत्यन्त सम्मान करते थे । इनके गुणों पर मुग्ध होकर उन्होंने इन्हे 'मिरजा खाँ' की उपाधि प्रदान की थी । अपने गुणों से उन्नति करते करते ये क्रमशः अकबर के प्रधान सेनापति, मन्त्री तथा उनकी सभा के नवरत्न हो गये ।

रहीम का हृदय परोपकारी, दयालु तथा कोमल था । ये कवियों एवं विद्वानों का बड़ा आदर करते थे । इनके दरबार में कवियों तथा कलाकरों की भीड़ लगी रहती थी । ये कवियों तथा कलाकारों की कृतियों पर प्रसन्न होकर उन्हें पुरष्कार भी दिया करते थे । गंग कवि को इन्होंने एक छप्पय पर ३६ लाख रुपये दिये थे । कहा जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास से इनका महान स्नेह था । गोस्वामी जी ने एक ब्राह्मण को, उसकी कन्या के विवाह में सहायता प्रदान करने के लिए दोहे की निम्न पंक्ति को लिखकर इनके पास भेज दिया ।

सुरतिय, नरतिय, नागतिय, यह चाहत सब कोय ।

रहीम ने उस ब्राह्मण को पर्याप्त धन दिया और दोहे की पूर्ति निम्न प्रकार से करदी—

गोद लिये हुलसी फिरैं, तुलसी सौ सुत होय ।।

रहीम के जीवन के अन्तिम दिन बड़ी कठिनाई में बीते । अकबर की मृत्यु के बाद जहाँगीर ने इन पर विद्रोह का अपराध लगाकर इनकी सारी सम्पत्ति को जब्त कर लिया, जिससे ये इधर उधर मारे मारे फिरते रहे । कष्टों तथा आपदाओं को सहते हुए भी इन्होंने कभी अपने स्वभाव तथा आत्म-सम्मान को नहीं छोड़ा और जहाँगीर के सामने अपना सिर नहीं झुकाया । इनकी मृत्यु संवत् १६८३ के लगभग हुई थी ।

रचनायें—इनकी रचनाओं में—रहीम दोहावली, बरवै नायिका भेद, मदनाष्टक,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रास पंचाध्यायी, नगर शोभा आदि प्रसिद्ध हैं। इनमें अधिकांश छोटे किन्तु रस के पूर्ण ग्रन्थ हैं।

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—रहीम उदार हृदय के भावुक कलाकार थे। इन्होंने जीवन के सुनहले तथा अन्धकारपूर्ण दोनों ही प्रकार के दिन देखे थे, अतः इनकी कविता में हमें जीवन के विविध प्रकार के चित्र मिलते हैं। इनकी रचनाओं के मुख्य विषय नीति, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, श्रृंगार तथा हास परिहास है।

रहीम की दृष्टि अधिकाँश में जीवन की बाहरी परिस्थितियों तथा परिवर्तनों पर केन्द्रित रही है। अतः इनकी कविता में अन्तर्द्वन्द्वों तथा हृदय की उथल-पुथल की अपेक्षा जीवन के बाहरी चित्रों की अधिकता है और इनमें कवि को पूर्ण सफलता मिली है। नायक तथा नायिका के मिलन का निम्न वर्णन इस प्रसंग में दर्शनीय है—

पिय आवत अँगनैया, उठि कै लीन।
बिहँसत चतुर तिरियवाँ बैठक दीन॥

नीति वर्णन—रहीम का जन्म एक उच्च परिवार में हुआ था तथा इनका राज दरबार से भी घनिष्ट सम्बन्ध था। दरबारियों के साथ साथ ये जन-साधारण से भी मिलते-जुलते रहते थे। अतः इनके ज्ञान और अनुभव का क्षेत्र अति विस्तृत था। इनके नीति के दोहे में इनका साँसारिक अनुभव कूट कूट कर भरा है। दूसरे के घर जाने पर सबका सम्मान नष्ट हो जाता है' को रहीम ने निम्न दोहे में कितने सुन्दर ढंग से कहा है—

कौन बड़ाई जलधि मिल, गंग नाम भो धीम।
केहि की प्रभुता ना घटी, पर घर गये रहीम॥

जीवन की विविध परिस्थितियों तथा अवसरों पर भिन्न स्वभाव के मनुष्यों के साथ करने योग्य व्यवहारों तथा आचरणों की शिक्षा भी रहीम के दोहों में भली प्रकार से पाई जाती है। कटु वचन बोलने वालों के साथ करने योग्य व्यवहार की शिक्षा निम्न दोहे में दर्शनीय है—

खीरा सिर से काटिए, मलियत नमक लगाय।
रहिमन करुए मुखन को, चहिअत इहै सजाय॥

भक्ति भावना—रहीम मुसलमान होते हुए भी ब्रजवासी भगवान कृष्ण के भक्त थे। कृष्ण का प्रेम इनकी रग रग में व्याप्त था। ये कृष्ण से मिलने के लिए प्रतिक्षण व्याकल रहते थे। इनके लिये ही इन्होंने अपने चित्त को चकोर बना रखा था—

तू रहीम चित्त आपनो, कीन्हों चतुर चकोर।
निसिवासर, लाग्यो रहे, कृष्णचन्द्र की ओर॥

सचमुच ही इनके 'यार' कृष्ण हैं भी तो इतने मनोहर और अलबेले कि उनके लिए चित्त चकोर बन जाय, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है—

कलित ललित माला वा जवाहिर जड़ा था।
चपल चखन वाला चाँदनी में खड़ा था॥
कटि तट बिच मेला पति सेला नवेला।
अलि॰ बन अलबेला यार मेरा अकेला॥

यही नहीं, इन्हें अपने 'यार' पर पूरा भरोसा तथा विश्वास है और इसीलिये ये किसी की भी परवाह नहीं करते—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रहिमन कोऊ का करै ज्वारी चोर लवार ।
जो पत राखन हार है, माखन चाखन हार ।।

रस—रहीम की कविता में श्रृंगार, शान्त तथा हास्य रस पाये जाते हैं, इन्हें श्रृंगार से अधिक प्रेम था । श्रृंगार के दोनों पक्ष संयोग तथा वियोग का इन्होंने अच्छा चित्रण किया है ।

कला-पक्ष

भाषा—रहीम ने अवधी तथा ब्रज दोनों ही भाषाओं में रचना की है । 'बरवै नायिका भेद' बड़ी सुन्दर अवधी में और 'दोहावली' ब्रज भाषा में हैं । ये हिन्दी, संस्कृत, अरबी, फारसी आदि कई भाषायों के पण्डित थे, अतः इनकी भाषा में इनके शब्द प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं ।

शैली—रहीम की शैली सरल, सरस, तथा सुबोध है । संक्षेप में हम इनकी शैली को नीतिकारों की प्रभावोत्पादक वर्णनात्मक शैलो कह सकते हैं ।

अलंकार—रहीम के वाक्यों में प्रायः सभी अलंकार पाये जाते हैं, पर इन्हें दृष्टान्त, उदाहरण, उपमा तथा उत्प्रेक्षा अधिक प्रिय हैं । इनका अलंकार प्रयोग सरस, स्वाभाविक तथा विषय को स्पष्ट करने में सहायक होता है, और उसमें व्यर्थ की ठूँसठास नहीं होती । इस प्रसंग में निम्न दोहा दर्शनीय है—

माँगे घटत रहीम पद, कितो करौ बढ़ि काम ।
तीन पैग वसुधा करी, तऊ बावन नाम ।।

छन्द—दोहा, सोराठा, बरवै, कवित्त, सवैया आदि रहीम के प्रिय छन्द हैं ।

यद्यपि रहीम ने कोई महाकाव्य नहीं लिखा है, पर जीवन की यथार्थ अनुभूतियों के चित्रण से उनकी कविता में जनसाधारण को अपनी ओर आकृष्ण करने की अपूर्व शक्ति है । यही कारण है कि रहीम के दोहे आज भी जन-साधारण में लोकोक्ति के रूप में प्रयुक्त होते हैं ।

साराँश

जन्म सम्वत्—	१६१० ।
पिता—	वैरम खाँ
मृत्यु संवत्—	१६८३ के लगभग ।
रचनाएँ—	रहीम दोहावली, बरवै नायिका भेद, मदनाष्टक, रास पंचाध्यायी, नगरशोभा आदि ।
वर्ण्य विषय—	नीवि, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, श्रृंगार ।
रस—	श्रृंगार, शान्त हास्य ।
भाषा—	अवधी तथा ब्रज, जिनमें अरबी, फारसी, संस्कृत के शब्दों का मेल है ।
शैली—	नीतिकारों की प्रभावोत्पादक वर्णनात्मक शैलो ।
अलंकार—	दृष्टान्त, उपमा, उदाहरण, उत्प्रेक्षा आदि ।
छन्द—	दोहा, सोरठा, बरवै, कवित्त, सवैया ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आचार्य केशवदास

जीवन तथा परिचय—आचार्य केशवदास का जन्म संवत् १६१२ के लगभग ओरछा नगर में हुआ था। ये सनाढ्य ब्राह्मण थे। ये कृष्णदत्त के पौत्र तथा काशीनाथ के पुत्र थे। इनके पूर्वजों का ओरछा के राजाओं के दरबार में अत्यधिक सम्मान था तथा उच्च पदों पर स्थित थे। केशव भी ओरछा नरेश महाराज रामसिंह के भाई इन्द्रजीतसिंह की सभा में रहते थे। इन्द्रजीतसिंह केशव का बहुत मान करते थे और इन्हें अपना गुरु, मन्त्री तथा मित्र मानते थे। उन्होंने केशव को २१ गाँव दान में दिये थे—

गुरु करि मान्यो इन्द्रजित तन मन कृपा विचारि।
ग्राम दिए एक बीस तब ताके पाँय पखारि॥
इन्द्रजीत के हेत पुनि राजा राम सुजान।
मान्यो मन्त्री मित्र के, केशवदास प्रमान॥

केशव के कुल में संस्कृत साहित्य के उच्च विद्वान् होते आये थे। केशव भी संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे, किन्तु केशव को हिन्दी से प्रेम था, अतएव इन्होंने हिन्दी में भी रचनाएँ की। ये कहते हैं—

भाषा बोलि न जानहीं, जिनके कुल के दास।
भाषा कवि भो मन्द मति, तेहि कुल केशवदास॥

केशव को अपनी जाति, कुल और विद्वता का बड़ा अभिमान था, अतएव राज दरबार में रहते हुए भी इन्होंने कभी किसी के सामने अपना हाथ नहीं पसारा। राजकीय व्यवहार तथा दावपेचों से भली भाँति परिचित थे। इनकी बुद्धि अत्यन्त तीव्र थी। कहा जाता है कि एक बार अकबर ने अप्रसन्न होकर इन्द्रजीतसिंह पर एक करोड़ रुपया जुर्माना कर दिया था। इन्होंने अपनी बुद्धिमत्ता से बीरवल के द्वारा इन्द्रजीतसिंह को उस जुर्माने के मुक्त करा दिया था।

ये स्वभाव से ही अत्यन्त रसिक थे, और विलासिता पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। इन्होंने इन्द्रजीतसिंह के राज दरबार में रहने वाली छै वैश्याओं का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है इनमें से 'रायप्रवीण' को तो इन्होंने लक्ष्मी, सरस्वती तथा शर्वाणी तक कह डाला है। इनकी रसिकता के बारे में प्रसिद्ध है कि ये एक बार वृद्धावस्था में एक कुँए पर बैठे हुए थे, इतने में कुछ स्त्रियाँ पानी भरने के लिए आईं। उन्होंने उनको बाबा कह कर पुकारा। इन्हें यह बात असह्य हो गई और उनके मुख से निकल गया—

केशव केसनि, अस करी, जस अरि हून कराहिं।
चन्द्र वदनि, मृग लोचनी, बाबा कहि कहि जाहिं॥

इनकी मृत्यु संवत् १६७४ के आस पास हुई।

रचनाएँ—इन्होंने निम्न ग्रन्थ लिखे थे—

(१) कवि प्रिया। (२) रसिक प्रिया। (३) विज्ञान गीता। (४) रतन बावनी। (५) वीरसिंह देव चरित (६) जहाँगीर जस चन्द्रिका। (७) राम चन्द्रिका। (८) नख-शिख। (८) राम अलंकृत मंजरी।

भाव—पक्ष

भक्ति भावना—यद्यपि केशवदास राम को इष्ट देव बतलाते हैं, किन्तु ये कहीं भी

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शैली—केशव की शैली पूर्णतया अपनी शैली है। इस विषय में इन्होंने अपने से पूर्ववर्ती किसी कवि का अनुकरण नहीं किया है। संक्षेप में हम उसे संस्कृत की काव्य शैली कह सकते है। इस पर इनके व्यक्तित्व की पूरी छाप है। इन्होंने केवल संस्कृत की काव्य शैली को नहीं अपनाया, अपितु सभी संस्कृत छन्दों का भी प्रयोग किया है। इनके अतिरिक्त इन्होंने कवित्त, सवैया दोहा, सोरठा आदि छन्दों मे भी रचना की है।

यद्यपि आलोचकों ने केशव पर बहुत से आक्षेप लगाये हैं और उनमें से बहुत से उन्हें कवि ही नहीं मानते। फिर भी हम निस्संकोच भाव से कह सकते हैं कि ये एक श्रेष्ठ कवि हैं और इनमें भाव पक्ष की अपेक्षा कला पक्ष की प्रधानता है।

[illegible] और ये कह उठते थे—

जग माँझ है दुःख जाल।
सुख है कहाँ कलि-काल

ऐसा ज्ञात होता है कि शास्त्रज्ञ पंडितों की भाँति ये भगवान का भजन और गीता, रामायण, योग वशिष्ठ आदि का मनन किया करते थे और इनसे ही प्रभावित होकर इन्होंने 'विज्ञान गीता' की रचना की थी।

इनकी भक्ति भावना के विषय में इतना तो कहा जा सकता है कि इनके हृदय में भगवान राम के प्रति आकर्षण तो था, पर वह राजकीय भोग-विलास से दब सा गया था।

वर्णन का क्षेत्र—केशव ठाठ-बाट से रहने वाले एक दरबारी कवि थे। ये जीवन की तड़क भड़क तथा चकाचौंध को ही सब कुछ मानते थे। अतएव इनके काव्यों में भी ऊपरी दिखावट तथा साजसवार के दर्शन तो होते हैं किन्तु उसमें हृदय को रमाने वाली रागात्मक वृत्ति का अभाव सा दीखता है। यही कारण है कि राम कथा के प्रसंग में ये अत्यन्त भावपूर्ण स्थलों को भी अत्यन्त संक्षेप तथा निरपेक्ष भाव से कह देते हैं। राम वनवास की कथा 'रामचरित' की एक करुण रस पूर्ण कथा है, किन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि केशव के हृदय पर ऐसे कथानकों का कोई प्रभाव नहीं है। केवल कला सूत्र को अविच्छिन्न रखने के लिए ये उसे संक्षेप में कहना चाहते हैं और वह भी इतिहास लेखक की भाँति, एक निरक्षेप द्रष्टा के रूप में।

केशव की रचनाओं में हमें उनके दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य और कवि। आचार्य के रूप में उन्होंने काव्यागों का विवेचन किया है और कवि रूप में उन्होंने कविताएँ लिखी हैं। किन्तु इनका आचार्यत्व उनके कवित्व की अपेक्षा प्रबल है।

केशव एक असाधारण विद्वान थे और जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इन्हें इस पर अभिमान भी था। अतः जहाँ इन्हें थोडा भी अवसर प्राप्त होता है, ये श्लेष, प्रसिद्ध उपमानों तथा दूर की सूझों में ये कविता को क्लिष्ट तथा दुरूह बना देते हैं। (अतएव इन्हें 'कठिन भाषा का प्रेत' कहा जाता है।) ऐसे अवसरों पर कविता स्वभाव से ही रस विहीन तथा अपने उद्देश्य से च्युत हो जाती है। पंचवटी का इसी प्रकार का एक वर्णन देखिए—

शोभत दंडक की रुचि बनी, भाँतिन भाँतिन सुन्दर घनी।
सेव बड़े नृप की जनु लसै, श्रीफल भूरि भाव जह बसै॥
बेर भयानक सो अति लगै, अर्क समूह जहाँ जगमगै॥
नैनन को बहुरूपन ग्रसै, श्री हरिकी जनु मूरति लसै॥

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यद्यपि इन्होंने उक्त दोहे के द्वारा राजा जयसिंह को विलास-पंक से मुक्त किया था, पर आगे चलकर ये भी समय के प्रवाह में बह गये, और वासना को उत्तेजित करने वाली कविता करने लगे। इस प्रकार इन्होंने ७१९ दोहे लिखे, जो संगृहीत होकर 'बिहारी सतसई' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनकी मृत्यु संवत् १७२० के लगभग हुई।

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—बिहारी ने कुछ दोहे नीति, ज्ञान, वैराग्य पर भी लिखे हैं पर इनकी वृति प्रधानतः शृंगार में ही रमी है। इनकी यह प्रवृति मंगलाचरण में ही शृंगार रस की नायिका राधा की स्तुति से प्रकट हो जाती है—

मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँई परैं, स्यामु हरित दुति होय॥

इनके कृष्ण भी तो राधा के ही अनुरूप हैं—

मोर मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल।
इहि बानक मो मन सदा, बसो 'बिहारी लाल'॥

रस—इन्होंने शृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का सुन्दर चित्रण किया है। संयोग पक्ष का एक सुन्दर दोहा देखिए—

बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहनु हँसे दैन कहै नटि जाय॥

वियोग के वर्णन में कवि की प्रतिभा निखर आई है, पर उस पर उर्दू और फारसी कवियों का प्रभाव स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है, जिससे कहीं-कहीं तो अस्वाभाविकता भी आ गई है। भला विरहिणी नायिका को दीवाल घड़ी का पैण्डुलम' बना देना किसे स्वाभाविक लगेगा—

इत आवति चलि जात उत, चली छ सातक हाथ।
चढ़ी हिंडोरे सी रहै, लगी उसासन साथ॥

पर ऐसा सब जगह नहीं है। विरह में जहाँ व्यंजना से काम लिया गया है, वहाँ उक्ति अति मनोहर है— [illegible] में भूषण की दृष्टि में शिवाजी इसलिए गेय और स्तुत्य नहीं हैं कि वे एक राजा हैं और उनका सम्[illegible] सरलता आ गई है।

अलङ्कार—केशव को अलंकारों से विशेष प्रेम है। इनका सिद्धान्त है—

जदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरन सरस सुवृत्त।
भूषन बिनु न बिराजई, कविता बनिता मित्त॥

अतएव ये सदा ही अलंकारों के नवीन प्रयोगों की खोज करते हुए से दिखलाई देते हैं। संस्कृत के विद्वान होने के कारण इन्होंने बाण, हर्ष माघ आदि कवियों की अलंकार योजना को ज्यों का त्यों उतारने का प्रयत्न किया है। श्लेष, यमक, विरोधाभास आदि में स्वाभाविक प्रयोगों ने इनकी कविता को और भी दुरूह बना दिया है। गोदावरी के निम्न वर्णन में विरोधाभास की दुरूहता दर्शनीय है—

बिषमय यह गोदावरी, अमृत को फल देति।
केशव जीवन हार को, दुख अशेष हरि लेति॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तहाँ बुन्देलखन्डी, फारसी, अरबी आदि भाषाओं के शब्द पाये जाते हैं। इनका शब्द प्रयोग एक निश्चित प्रणाली पर है और वाक्य विन्यास व्यवस्थित।

शैली—विषय के अनुसार बिहारी की शैली में पर्याप्त विविधता है—

(१) **प्रसाद गुण पूर्ण सरस शैली**— भक्ति तथा नीति के दोहों में।

(२) **माधुर्य पूर्ण व्यजना प्रधान शैली**—श्रृंगार के दोहों में।

(३) **चमत्कार पूर्ण शैली**—दर्शन, ज्योतिष, गणित आदि से सम्बन्धिति दोहों में।

अलंकार—अलङ्कार की कारीगरी दिखाने में बिहारी अत्यन्त ही पटु हैं इनके प्रत्येक दोहे में कोई न कोई अलङ्कार अवश्य ही आया है। किसी-किसी दोहे में तो चार-चार पाँच-पाँच अलङ्कार भी देखे जाते हैं। उत्प्रेक्षा का एक सुन्दर उदाहरण देखिए—

सोहत ओढ़े पीत पट, स्याम सलौने गात।
मनौ नील मनि सैल पर, आतपु परयौ प्रभात

पर जहाँ बिहारी केवल अलङ्कारों के फेर में पड़ गये हैं वहाँ तो कोरा चमत्कार ही हाथ आता है। 'को घटि ये वृषभानुजा वे हलधर के वीर' में 'सभग' और 'अभंग श्लेष' चाहे जितने उत्कृष्ट रूप में आये हों, पर इनके द्वारा 'गाय' और 'सांड़' की जो मूतियाँ हमारे सामने खड़ी होती हैं, उन्हें देख कर हमारा सिर लज्जा से झुक जाता है।

शुक्ल जी के मतानुसार कल्पना की समाहार शक्ति के साथ साथ भाषा की समास शक्ति भी बिहारी में पूर्ण रूप से वर्तमान है। इनके दोहों के विषय में रहीम की निम्न उक्ति अक्षरशः सत्य प्रतीत होती है—

दीरघ दोहरा अर्थ के, आखर थोरे आँहि।
ज्यों रहीम नट कुण्डली, सिमिट कूद चलि जाँहि॥

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि बिहारी एक सच्चे कलाकार हैं। अद्भुत कल्पना शक्ति, मानव प्रकृति का अपरिमित ज्ञान तथा कला नैपुण्य के कारण बिहारी अपने दोहों से अपरिमित रस भर सके हैं, अतएव इनके दोहों के बारे में कहा जाता है—

सतसैया के दोहरे, ज्यों नाविक के तीर।
देखत के छोटे लगें, घाव करें गम्भीर॥

... रूप दृष्टिगोचर होते हैं। आचार्य और कवि।

जीवनी तथा परिचय—कविवर बिहा[illegible] का जन्म संवत् १६६० के लगभग ग्वालियर के निकट वसुवा गोविन्दपुर नामक ग्राम में हुआ था। ये जाति के माथुर चौबे थे। इनका बालकपन मथुरा तथा युवावस्था भी वहीं ससुराल में बीती। ससुराल में आदर न होने से खिन्न होकर जयपुर नरेश मिर्जा राजा जयसिंह के यहाँ चले गये। राजा जयसिंह नवोढ़ा रानी के प्रेम में इतने लीन थे कि महल से बाहर ही नहीं निकलते थे। इस पर इन्होंने निम्न दोहा लिखकर राजा के पास भेज दिया—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही सौं बिंध्यो, आगे कौन हवाल॥

कहा जाता है कि इस दोहे के पढ़ते ही राजा उस रानी के प्रेम पाश से मुक्त हो गये। इसी समय से इनका मान बहुत बढ़ गया, और इन्हें जयसिंह के यहाँ प्रति दोहे पर एक अशरफी मिलने लगी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूषण

जीवनी तथा परिचय—भूषण का जन्म संवत् १६७० में कानपुर जिले के तिकवाँपुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम रत्नाकर त्रिपाठी था। इनके वास्तविक नाम का पता नहीं चलता। 'भूषण' इनकी उपाधि है जो इन्हें चित्रकूट के राजा 'हृदयराम सुत रुद्र, ने दी थी—

कुल सुलङ्कि चितकूटमति, साहस सील-समुद्र।
'कवि भूषण' पदवी दई, हृदयराम सुत रुद्र॥

(शिवराज भूषण)

कहा जाता है कि भावज के ताने पर ये घर छोड़कर निकल पड़े और कई राजाओं के कहाँ रहने के पश्चात् ये शिवाजी के यहाँ चले गये, मृत्यु पर्यन्त वहीं रहे। शिवाजी के यहाँ इनको धन तथा सम्मान दोनों ही मिले। भूषण को जितना सुख और सम्मान मिला, उतना केशव को छोड़कर अन्य किसी को प्राप्त नहीं हुआ। ये राजाओं की भाँति रहा करते थे। वे पन्ना के राजा छत्रसाल के यहाँ भी जाया करते थे। किवदन्ती है कि इनके प्रति आदर प्रदर्शित करने के लिए छत्रसाल ने इनकी पालकी को भी अपने कन्धों पर उठाया था। ये शिवाजी और छत्रसाल के ही सच्चे प्रशंसक थे। इन्होंने स्वयं ही कहा है—

और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब,
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को।

इनकी मृत्यु सं० १७७२ में हुई।

रचनायें—'शिवराज भूषण', 'शिवा बावनी' और 'छत्रसाल दशक' इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। 'शिवराज भूषण' में रीतिकाल की प्रवृत्ति के अनुसार अलङ्कारों का विवेचन और अन्य दो में शिवाजी तथा छत्रसाल के वीरतापूर्ण कार्यों का वर्णन है।

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—भूषण ने अपने नायकों (शिवाजी तथा छत्रसाल) के रूप सौन्दर्य तथा काम क्रीड़ा का वर्णन नहीं किया है। इनकी दृष्टि निरन्तर उनके प्रताप तथा शौर्य पर ही रही है। वे हैं भी तो अन्याय दमन में तत्पर हिन्दू-धर्म-संरक्षक महावीर। वास्तव में भूषण की दृष्टि में शिवाजी इसलिए गेय और स्तुत्य नहीं हैं कि वे एक राजा हैं और उनका सम्मान करते हैं, पर इसलिए कि उन्होंने—

राखी हिन्दुवानी हिन्दुवान को तिलक राख्यौ,
अस्मृति पुरान राखे वेद विधि सुनी मैं,
राखी राजपूती राजधानी राखी राजन की,
धरा में धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी में।

इनका वर्णन शुष्क प्रथा पालन के रूप में न होकर स्वाभाविक तथा परिस्थिति अनुकूल है। इन्हें पढ़कर हमारी आँखों के सामने सारा का सारा चित्र उपस्थित हो जाता है। युद्धार्थ प्रस्थान के समय का एक सुन्दर चित्र देखिए—

बाने फहराने घहराने घन्टा गजन के,
नाहीं ठहराने राव राने देस देस के।
नग भहराने, ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निसाने सिवराज जू नरेस के।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हाथिन के हौदा उकसाने, कुंभ कुंजर के,
भौन को भजाने अलि, छूटे लट केस के ।
दल के दरारन तें कमठ करारे फूटे,
केरा, केसे पात बिहराने फन सेस के ॥

कला पक्ष

भाषा—भूषण की भाषा ब्रजभाषा है जिसमें अरबी, फारसी, तुर्की, बुन्देलखण्डी और खड़ी बोली के शब्द भी स्थान-स्थान पर मिलते हैं। भाषा में जहाँ तहाँ व्याकरण की अशुद्धियाँ पाई जाती हैं और कहीं-कहीं तो वाक्य रचना भी गड़बड़ हो गई है। शब्दों को भी इच्छानुसार बिगाड़ा गया है। इतना सब होते हुये भी इनकी शली सरसता, मधुरता और ओज से परिपूर्ण है। कवित्त और सवैया इनके प्रिय छन्द हैं।

रस शैली—भूषण की शैली अपने विषय के अनुकूल है। उसे वीर रस की ओजपूर्ण शैली कह सकते हैं। यह वर्णन की विशेषता के कारण चित्र को उपस्थित कर देती है। भूषण की कविता प्रधानतः वीर रस की कविता है, जिसे पढ़कर कायर का हृदय भी एक बार उत्साह से भर जाता है। कहा जाता है कि इनके 'एते काम कीन्हें फेरि बादशाही पाई है।' वाले कवित्त को सुनकर औरङ्गजेब का हाथ भी मूँछों पर पहुँच गया था। यद्यपि उसने यह प्रतिज्ञा की थी कि वह ऐसा नहीं करेगा।

वीर रस के स्वभाव सिद्ध सहायक होने के कारण भूषण ने भयानक, वीभत्स और रौद्र का भी वर्णन किया है। शिवाजी के आतङ्क के कारण शत्रुओं की भययुक्त दशा के वर्णन में भूषण ने यत्र-तत्र 'परिहास' का भी परिचय दिया है—

चित्त अनचैन, आँसू उमगत नैन, देखि,
बीबी कहै बैन, मियाँ कहियत काहिनै ।
भूषन भनत बूझि आये दरबार तें,
कँपत बार-बार क्यों सभार तन नाहिनै ॥
सीना धक धकत, पसीनों आये देह सब,
हीनो भयो रूप न चितौत बायें दाहिनै ।
सिवाजी संक मान गये हौं सुखाय तुम्हें,
जानियत दक्खिन को सूबा करो साहिनै ।

भूषण की कुछ फुटकर रचनाएँ शृंगार पर भी मिलती हैं, उनमें से कुछ तो उच्चकोटि की हैं। एक विरहिणी का चन्द्रोपालम्भ देखिए—

जिन किरनन मेरो अङ्ग छुऔ तिनहिन सों,
पिय अङ्ग छुवै क्यों न मन-दुख दाहे को।
भूषन भनत तू जो जगत को भूषन है,
हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को ।
चन्द ऐसी चाँदनी तू प्यारे पै बरसि उतै,
रहि न सकै मिलाप होय चित चाहे को ।
तू तो निसाकर सब ही की निसा करै मेरी,
जो न निसा करै तो तू निसा करै काहे को ।

अलंकार—भूषण की कविता में प्रायः सभी अलंकार पाये जाते हैं। प्रत्येक छन्द में कई-कई अलंकार आये हैं। अनुप्रास तो सर्वत्र ही है। यमक के लिए 'ऊँचे घोर मन्दिर के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अन्दर रहनवारी, ऊँचे घोर मन्दिर के अन्दर रहाती हैं' दर्शनीय है। 'इन्द्र निज हेरत फिरत जग इन्द्र……' में भ्रान्तिमान और 'इन्द्र जिमि जम्भ पर, बाड़व सु-अम्ब पर……' में उपमा भी स्वाभाविक रूप से आये हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि घोर शृंगार से परिपूर्ण रीतिकाल में उत्पन्न होकर भी भूषण तत्कालीन प्रभाव से मुक्त होकर वीर रस के ही नहीं समूचे राष्ट्र के और उसके साथ साथ जातीय स्वाभिमान के भी सच्चे कवि रहे हैं।

जन्म संवत् तथा स्थान—	१६७० तिकवांपुर जिला कानपुर।
पिता—	रत्नाकर त्रिपाठी।
मृत्यु संवत्—	१७७२।
ग्रन्थ—	शिवराज भूषण, शिवा बावनी, छत्रसाल दशक।
वर्ण्य विषय—	शिवाजी तथा छत्रसाल के वीरतापूर्ण कार्यों का वर्णन।
भाषा—	ब्रजभाषा जिसमें अरबी, फारसी, तुर्की, बुन्देलखन्डी और खड़ी बोली के शब्द मिले हुए हैं। व्याकरण की अशुद्धियाँ हैं और शब्द बिगड़ गए हैं।
शैली—	वीर रस की ओजपूर्ण शैली।
छन्द—	कवित्त, सवैया।
रस—	प्रधानतः वीर, भयानक, वीभत्स, रौद्र और शृंगार।
अलंकार—	प्रायः सभी अलंकार हैं।

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र

जीवनी तथा परिचय—भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म संवत् १९०७ में काशी में सुकवि सेठ बाबू गोपाल चन्द्र (उपनाम गिरधरदास) के यहाँ हुआ था। दुर्भाग्यवश ५ वर्ष की अवस्था में ही इनकी माता का देहान्त हो गया और १० वर्ष की अवस्था में इनके पिता की भी मृत्यु हो गई। अतएव ये पूरी तौर से स्कूली शिक्षा को प्राप्त करने में असमर्थ रहे, किन्तु स्वाध्याय से इन्होंने घर पर ही मराठी, गुजराती, बङ्गाली, उर्दू, अँग्रेजी तथा संस्कृत का अच्छा ज्ञान कर लिया।

भारतेन्दु को बालपन से ही कविता से प्रेम था। पाँच वर्ष की अवस्था में ही इन्होंने निम्न दोहा बनाकर अपने पिता को सुनाया था—

लै ब्योड़ा ठाढ़े भए श्री अनुरुद्ध सुजान।
बानासुर की सैन को हनन लगे बलवान॥

८ वर्ष की अवस्था में ही इन्होंने 'कवि-वचन-सुधा' नामक पत्र निकाला था, जिसमें उस समय के बड़े बड़े विद्वान लिखा करते थे।

ये स्वभाव से ही अत्यन्त उदार थे। दीन-दुखियों की सहायता, देश-सेवा और साहित्य सेवा में इन्होंने बहुत व्यय किया। एक बार जब काशी नरेश ने इन्हें इस प्रकार के व्यय करने से रोकने के लिए समझाया, तब इन्होंने उत्तर दिया कि इस धन ने मेरे पूर्वजों को खाया है और मैं इसे खाऊँगा।

इनकी मृत्यु संवत् १९४१ में ३५ वर्ष की अल्पायु में हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचनाएँ—इन्हें लिखने का व्यसन सा था। अतएव इन्होंने अपने जीवन के थोड़े समय में ही छोटे बड़े कुल मिलाकर १७५ ग्रन्थ लिखे। इनमें इतिहास, नाटक, चरित्र, काव्य आदि सभी हैं जो इनकी बहुमुखी प्रतिभा के द्योतक हैं। इनके नाटकों में 'सत्य हरिश्चन्द्र, भारत दुर्दशा, चन्द्रावली, नील देवी, अंधेर नगरी, काव्यों में प्रेम फुलवारी; इतिहास में काश्मीर कुसुम; संग्रहीत ग्रन्थों में सुन्दरी तिलक तथा अनुवाद किए नाटकों में 'मुद्राराक्षस' अति प्रसिद्ध हैं।

साहित्यक सेवा—भारतेन्दु का जन्म ऐसी परिस्थिति में हुआ था, जब भारत की खड़ी बोली [illegible] भी [illegible] था। शिक्षित लोग हिन्दी को जनता पर पाश्चात्य सभ्यता का पूरा पूरा रङ्ग चढ़ चुका था। साहित्यिक भाषा ही न मानते थे। प्राचीन परिपाटी के कुछ ग्रन्थों को छोड़कर उसमें कुछ न था। समय की परिस्थिति के अनुकूल उसमें अपने आपको परिवर्तित करने की शक्ति नहीं रही थी, अतएव नवीन भावों और विचारों को प्रकट करने में वह असमर्थ सिद्ध हो रही थी। ऐसी अवस्था में भारतेन्दु ने साहित्य क्षेत्र में प्रवेश कर भाषा को नव जीवन प्रदान किया और उसे प्रगतिशील भावों तथा विचारों को अभिव्यक्त करने की शक्ति प्रदान की।

भारतेन्दु काल से पहले हिन्दी गद्य का कोई निश्चित रूप ही न था। उस समय कुछ लोग संस्कृत-प्रधान भाषा के पक्षपाती थे और कुछ अरबी फारसी मय रूप के। वास्तव में ये दोनों ही रूप हिन्दी की उन्नति में बाधक थे। भारतेन्दु ने बीच का मार्ग अपनाकर खड़ी बोली गद्य का एक प्राञ्जल तथा संस्कृत रूप स्थापित किया। साहित्य के क्षेत्र में भी इन्होंने क्राँति कर दी। साहित्य को प्राचीन रूढ़िवाद पर अवस्थित विषयों से हटाकर नवीन नवीन विषयों की ओर अग्रसर किया। हिन्दी में नाटक-रचना का अवतार भी भारतेन्दु से ही होता है। इनसे पहले दो एक नाटक थे, वे नगण्य से ही थे।

पद्य के क्षेत्र में भी भारतेन्दु ने ब्रज भाषा को परम्परा प्रयुक्त दुर्बोध्य शब्दावली को निकालकर सरस तथा सरल शब्दावली को अपनाया। इनके प्रयास से कविता के विषय में भी पर्याप्त विविधता आई। अब तक हास्य रस के आलम्बन मोटे लाला जी तथा पेटू ब्राह्मण ही होते थे, पर भारतेन्दु ने अन्य पुरुषों तथा घटनाओं को भी इसका आलम्बन बनाया। 'ऐडिटर' (सम्पादक) तथा 'पुलिस' पर लिखा हुआ एक व्यंग देखिए—

चूरन खायें ऐडीटर जात, जिनके पेट पचै नहिं बात
चूरन पुलिस वाले खाते, सब कानून हजम कर जाते।

आलसियों का भी एक हास्यपूर्ण चित्र देखिए—

दुनियाँ में हाथ पैर हिलाना नहीं अच्छा।
मर जाना पै उठके कहीं जाना नहीं अच्छा।
बिस्तर पै मिस्ल लोथ पड़े रहना हमेशा।
बन्दर की तरह धूम मचाना नहीं अच्छा।
सिर भारी चीज है, इसे तकलीफ हो तो हो।
पर जीभ बिचारी को सताना नहीं अच्छा।

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—भारतेन्दु की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने शृंगार प्रेम, ईश्वर भक्ति आदि प्राचीन विषयों पर पुराने ढङ्ग की कविता भी लिखी और राष्ट्र प्रेम, समाज सुधार आदि नवीन विषयों पर भी अपने कवित्वमय विचार प्रकट किए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन्होंने शृंगार के संभोग तथा विप्रलम्भ दोनों ही पक्ष अपनाये है। संभोग के अन्तर्गत तन्मयता का एक सुन्दर चित्र देखिए—

लाल के रङ्ग रङ्गी तू प्यारी।
याही तें तन धारत मिस कै, सदा कसूँमी सारी।
लाल अधर, कर पद सब तेरे, लाल तिलक सिर धारी॥
नैनन हूँ में डोरन के मिस, झलकत लाल बिहारी॥
तन में रही नहीं सुधि तन की, नख सिख तू गिरधारी॥
'हरीचन्द' जग विदित भई यह, प्रेम प्रतीत तिहारी॥

'चन्द्रावली' में नायिका के मुख से ही उसकी विरह दशा का चित्रण सुनिए—

मन मोहन तें बिछुरी जब सौं,
तन आँसुन सौं सदा धोवती हैं।
हरीचन्द्र जू प्रेम के फ़न्द परी,
कुल की कुल लाजहि खोवती हैं।
दुख के दिन को कोउ भाँति बितै,
बिरहागम रैन संजोवती हैं।
हम ही आपुनी दशा जानें सखी,
निसि सौवती हैं किधौं रोवती हैं॥

भक्ति भावना—भारतेन्दु, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है, 'गुलाम राधा रानी के' प्रधानतः राधा के भक्त हैं और उनके कारण ही 'कृष्ण' के। इनके भक्ति के पद इनकी विनय, दीनता और सरलता से ओतप्रोत हैं।

राष्ट्र-प्रेम—'भारत दुर्दशा' नामक ग्रन्थ इनके राष्ट्र प्रेम का सच्चा प्रतीक है। वे भारत के पूर्व वैभव को बखानते हुए कहते हैं—

भारत के भुज बल जग रच्छित, भारत विद्या लहि जग सिच्छित।
भारत तेज जगत विस्तार, भारत भय कंपित संसार॥

और दूसरे क्षण ही वे वर्तमान गति पर विलाप से करते नजर आते हैं—

'हाय चितौर निजल तू भारी, अजहुं खरो भारतहि मँझारी।

प्रकृति चित्रण—भारतेन्दु का प्रकृति वर्णन चमत्कारपूर्ण होते हुए भी प्रयास साध्य है। उसमें मानव-हृदय को अपनी तरफ स्वाभाविक रूप से आकर्षित करने की शक्ति नहीं है। कहीं कहीं तो ऐसा मालूम होता है कि वे अपने सम्पूर्ण बुद्धि वैभव से उपमाओं के जुटाने में लग गये हैं। इसी प्रसंग में 'सत्य हरिश्चन्द्र' में वर्णित गंगा का चित्रण देखिए—

धोवत सुन्दरि बदन करन अति ही छवि पावत,
वारिधि नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत।
सुन्दरि ससिमुख नीर मध्य इमि सुन्दरि सोहत,
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत॥

हाँ, चन्द्रावली नाटिका के यमुना वर्णन में सजीवता अवश्य है और उसकी उपमायें तथा उत्प्रेक्षाएं नवीनता लिए हुए हैं।

कला-पक्ष

भाषा—भारतेन्दु की गद्य 'खड़ी बोली' में तथा पद्य प्रधानतः 'ब्रजभाषा' में हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भारतेन्दु ने ब्रजभाषा में से अप्रचलित शब्दों को निकालकर उसका बहुत संस्कार किया है। भाषा में जहाँ-तहाँ प्रचलित उर्दू शब्द और 'पौलसी' "मौडल' जैसे अंग्रेजी शब्द भी पाये जाते हैं। यत्र तत्र मुहावरों और कहावतों का प्रयोग भी किया गया है। इनकी भाषा में यत्र-तत्र व्याकरण की कुछ अशुद्धियाँ पाई जाती हैं जिनका कारण यही है कि उन्हें एक बार लिखकर दुबारा देखने का अवकाश ही न मिला था।

शैली—भारतेन्दु के काव्य में निम्न शैलियाँ दृष्टिगोचर होती हैं—

(१) **भावात्मक शैली**—भक्ति के पदों में।

(२) **रीतिकाल की रसपूर्ण अलंकृत शैली**—शृंगार के पदों में।

(३) **उद्बोधन शैली**—देश प्रेम की कविताओं में।

(४) **व्यंग्यात्मक शैली**—समाज-सुधार की भावनाओं से युक्त कविताओं में गद्य के क्षेत्र में निम्न शैलियाँ दृष्टिगोचर होती हैं—

(१) **परिचयात्मक शैली**—इसमें वाक्य छोटे-छोटे हैं तथा भाषा सरल है।

(२) **विवेचनात्मक शैली**—इसमें वाक्य कुछ लम्बे और भाषा गम्भीर तथा कुछ दुरूह है।

(३) **भावात्मक शैली**—इसमें वाक्य बहुत छोटे होते हैं तथा भाषा में बोलचाल का रूप ग्रहण किया गया है।

छन्द—भारतेन्दु ने अपने समय में प्रचलित प्रायः सभी छन्दों में रचना की है। गीत, कवित्त, सवैया, कुण्डली, लावनी, गजल, छप्पय, दोहा आदि इनके प्रिय छन्द हैं। इन्होंने कवित्त, सवैया, दोहा, कुण्डली, गेय-पद तथा संस्कृत के छन्दों में रचना की है। इन्होंने खड़ी बोली में भी कविता करके आधुनिक कवियों का मार्ग प्रशस्त किया है।

रस, अलंकार—भारतेन्दु ने प्रायः सभी रस और अलंकारों में रचना की है। उपमा, रूपक, सन्देह और उत्प्रेक्षा इन्हें अधिक प्रिय हैं। यमुना वर्णन में ये सारे अलंकार अपने उत्कृष्ट रूप में देखे जा सकते हैं।

संक्षेप में भारतेन्दु ने अपनी प्रतिभा के बल से भाषा, भाव और शैली सभी में नवीनता एवं मौलिकता का समावेश करके उन्हें आधुनिक काल के अनुरूप बनाया है। अतएव वे आधुनिककाल के साहित्यकारों में एक ऊँचा स्थान रखते हैं।

साराँश

जन्म सम्वत, तथा स्थान—	१६०७ काशी।
पिता—	बाबू गोपालचन्द्र।
मृत्यु सम्वत्—	१६४१।
रचनाएँ—	ऊपर लिखी हैं।
साहित्यिक सेवा—	गद्य और पद्य की भाषाओं का सुधार तथा साहित्य में नवीन-नवीन विषयों का समावेश।
वर्ण्य विषय—	शृंगार, प्रेम, ईश्वर भक्ति, राष्ट्रीय प्रेम, समाज सुधार, प्रकृति चित्रण आदि।
भाषा—	गद्य-खड़ी बोली, पद्य-ब्रज भाषा, भाषा में उर्दू, अंग्रेजी आदि के शब्द मिश्रित हैं और व्याकरण की अशुद्धियाँ हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शैली—	ऊपर देखो।
छन्द—	गीत, कवित्त, सवैया कुण्डली, लावनी, गजल, छप्पय, दोहा आदि।
रस, अलंकार—	प्रायः सभी।

जगन्नाथ दास 'रत्नाकर'

जीवनी तथा परिचय—रत्नाकरजी का जन्म सं० १९२३ में काशी के एक प्रतिष्ठित अग्रवाल वैश्य कुल में हुआ था। इनके पिता बाबू पुरुषोत्तमदास फारसी के अच्छे विद्वान थे। बचपन से ही इन्हें कविता से प्रेम था जिसे देखकर भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने इनके कवि होने की भविष्यवाणी की थी, जो अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई।

बी० ए० उत्तीर्ण होने के बाद ये अलीगढ़ रियासत में नौकर हो गये। कुछ समय बाद ये अयोध्या नरेश के प्राइवेट सेक्रेटरी हो गये। अयोध्या नरेश की मृत्यु के बाद ये महारानी के सेक्रेटरी हुए और जीवन भर इसी पद पर कार्य करते रहे। महारानी ने इनके गंगावतरण काव्य पर (जब यह अपूर्ण ही था) १०००) रुपये पुरस्कार दिया जो इन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा को दान कर दिया। हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद के द्वारा भी इसी काव्य पर ५००) का पुरस्कार दिया गया था। सं० १९७९ में ये हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कलकत्ता अधिवेशन के सभापति भी निर्वाचित हुए थे। इनकी मृत्यु सं० १९८९ में हरिद्वार में हुई।

रचनाएँ—इनकी रचनाओं में हिण्डोल, गंगावतरण, उद्धव-शतक, हरिश्चन्द्र आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। 'बिहारी-रत्नाकर' नाम की एक उत्कृष्ट टीका भी आपने लिखी है। 'सूरसागर' का सम्पादन कार्य भी आपकी देख-रेख में आरम्भ हुआ, पर वह पूरा न हो सका।

भाव-पक्ष

वर्ण्य विषय—खड़ी बोली के चरम उन्नति के युग में भी ब्रजभाषा में रचना करने का व्रत लेकर रत्नाकर जी ने पुरानी परिपाटी को जीवित रखा है। इनके बारे में प्रसिद्ध है कि 'रत्नाकर की आत्मा भक्तिकाल की, और शरीर रीति काल का है।' और सचमुच है भी यही, क्योंकि रत्नाकर का वर्ण्य विषय भक्ति काल के अनुरूप भक्ति, श्रृंगार भ्रमर-गीत आदि से सम्बन्धित है, और उनकी वर्णन प्रणाली रीतिकाल के अनुकूल है। इतना होने पर भी इनकी रचनाओं पर इनके व्यक्तित्व तथा आधुनिक काल का पूर्ण प्रभाव है।

भाव चित्रण—इनकी कविता में भाव कहीं भी विशृङ्खल नहीं होते। कहीं-कहीं तो कल्पनाएँ अत्यन्त ही मौलिक तथा प्रभावोत्पादक होती हैं। गोपी-उद्धव संवाद में दर्पण से सम्बन्धित निम्न अनूठी कल्पना दर्शनीय है।

जब एक दर्पण बिना टूटा हुआ होता है, तब उसमें एक ही प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, पर यदि कहीं किसी पत्थर आदि से उसके अनेक टुकड़े कर दिया जांय तो फिर उन सभी टुकड़ों में एक एक प्रतिबिम्ब दिखाई देने लगता है। एक गोपी भी इसी प्रसंग को लेकर उद्धव पर फबतियाँ कस रही हैं—

टूक टूक ह्वै है मन मुकुर हमारो होय,
चूकि हूँ कठोर बैन पाहन चलाबो ना।
एक मनमोहन तो बसि के उजारयौ मोहि,
हिय में अनेक मनमोहन बसाबो ना॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनकी कविता में मानव हृदय के भावों की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है। उद्धव शतक में उद्धव को बृन्दावन भेजते हुए कृष्ण के भावों और उनके द्वारा प्रकाशित कृष्ण की शारीरिक चेष्टाओं को देखिए—

आइ व्रज पथ पर उधौं को चढ़ाइ कान्ह,
अकथ कथानि की विथानि सौं अकुलात हैं :
कहैं 'रत्नाकर' बुझाइ कछु रोकें पाय,
पुनि कछु ध्याइ उर धाइ उरझात है
उमसि उसाँसनि सौं बहि बहि आँखिन सौं,
भूरि भरे हिय से हुलास ना उरात हैं।
सीरे तपे विविध संदेसिन की बातनि की,
घतानि की झोंक में लगेई चले जात हैं।

प्रकृति चित्रण—रत्नाकर को प्रकृति चित्रण में सफलता प्राप्त हुई है। हाँ उससे यत्र-तत्र रीतिकाल की छाप प्राप्त होती है। उद्धव शतक में केवल छः पंक्तियों में ही छहों ऋतुओं का वर्णन करके उनका मानव व्यापार से तादात्म्य दिखा देना रत्नाकर की अपनी विशेषता है। 'गंगावतरण' में प्रकृति के सुन्दर और सजीव दृश्यों को दिखाया गया है। गंगा गमन का एक सजीव दृश्य देखिए—

कबहुँ सघन वन पैठि मरम स्वच्छन्द कलोलति।
कहुँ धावत कहुँ चलत चारु, कहुँ डगमग डोलति॥
कहुँ पँ थपकि थपेड़ पेड़ के पेड़ ढहावति।
कहुँ उत्तुङ्ग तरंग संग तट विटप बहावति॥

कला-पक्ष

भाषा—रत्नाकर की भाषा साहित्यिक व्रज भाषा है, जो सरस, व्यवस्थित तथा प्रवाह युक्त है। शब्दों की तोड़ मरोड़ भी नहीं पाई जाती है। व्याकरण की दृष्टि से इन जैसी शुद्ध व्रजभाषा के श्रेष्ठ कवियों में भी नहीं पाई जाती। कहीं कहीं पर पूर्वी शब्दों का प्रयोग मिलता है, पर वे भी इनके द्वारा प्रयुक्त होकर व्रजभाषा के ही बन गये हैं। अंग्रेजी की लाक्षणिकता, उर्दू के मुहावरे और ग्रामों में प्रचलित कहावतों का प्रयोग कर रत्नाकर ने अपनी भाषा को आधुनिक काल के योग्य बनाया है। किसी छन्द में तो कई कई कहावतों और मुहावरों का प्रयोग अलौकिक दक्षता के साथ किया गया है। इसी प्रसंग में एक गोपी का कथन देखिये—

जोगिन की भोगिन की विकल वियोगिनि की,
जग में न जागती जमातें रहि जाइगी।
कहैं 'रत्नाकर' न सुख के रहे जो दिन,
तौ ये दुख द्वन्द की न रातें रहि जाइँगी।
प्रेम नेम छाँड़ि ज्ञान क्षेम जो बतावत सो,
भीति ही नहीं तौ कहा छातें रहि जाइँगी॥
घातें रहि जाइँगी न कान्ह की कृपा तें इती,
ऊधौ कहिवे को बसि बात रहि जाइँगी॥

शैली—रत्नाकरजी की शैली 'रीतिकाल' की ऐसी अलंकृत शैली है, जिसमें सूर तथा मीरा की भावुकता, देव की प्रेममयता, बिहारी की कलात्मकता, पद्माकर का प्रभाव तथा भूषण की ओजस्विता का सुन्दर समन्वय है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रस, अलङ्कार छन्द—यद्यपि रत्नाकर ने सभी रसों में रचना की है, पर उन्हें शृङ्गार, करुण वीर और बीभत्स में विशेष सफलता मिली है। ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों की भाँति इन्होंने अलंकारों का प्रचुर प्रयोग किया है। अलंकारों के प्रयोग में प्रायः इन्होंने चिरपरिचित उपमान ही चुने हैं; जिससे विषय को समझाने में सुविधा रहती है। 'ओना मोटा पोइया' जैसे—अंग्रेजी अलंकारों का भी प्रयोग यत्र तत्र किया गया है। ऊपर लिखे हुए 'टूक टूक ह्वै है मन मुकुर हमारौ होय ?' में विषय को स्पष्ट करने में सहायक साँग रूप का सुन्दर प्रयोग देखा जा सकता है। यद्यपि इन्होंने बहुत प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है; पर इन्हें रोला, कवित्त, सवैया अधिक प्रिय हैं।

उक्त विशेषता के कारण रत्नाकर ने प्राचीन काल की परिपाटी के अनुसार रचना करके भी आधुनिक काल के कवियों में एक उच्च आसन प्राप्त कर 'यथा नाम तथा गुण' को अक्षरशः सिद्ध कर दिया है।

साराँश

जन्म संवत तथा स्थान—	सं० १९२३, काशी।
पिता—	बाबू पुरुषोत्तमदास।
शिक्षा—	बी० ए० उत्तीर्ण।
मृत्यु सं० तथा स्थान—	सं० १९८९, हरिद्वार।
रचनाएँ	ऊपर लिखी हैं।
वर्ण्य विषय—	भक्ति, शृङ्गार, भ्रमर गीत का विषय, प्रकृति चित्रण आदि।
भाषा—	शुद्ध तथा परमार्जित ब्रजभाषा, जिसमे पूर्वी शब्दों मुहावरों और कहावतों का प्रयोग है।
शैली—	रीति काल की अलंकृत शैली।
रस—	प्रायः सभी रस, पर शृङ्गार, करुण और वीर में विशेष सफलता मिली है।
अलंकार	प्रायः सभी अलंकार।
छन्द—	प्रायः सभी पर रोला, कवित्त, सवैया अधिक प्रिय हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

जीवनी तथा परिचय—उपाध्यायजी का जन्म संवत् १९२२ में आजमगढ़ जिले के निजामाबाद ग्राम में पं० भोलानाथजी के यहाँ हुआ था। हिन्दुस्तानी मिडिल पास करने के बाद ये अंग्रेजी पढ़ने के लिये 'क्विन्स कालेज बनारस' में प्रविष्ट हो गये; किन्तु अस्वस्थ होने के कारण वहाँ अधिक न रह सके और घर चले आये। वहीं रहकर संस्कृत, अँग्रेजी और उर्दू का अध्ययन करने लगे। इसके बाद ये अपने गाँव के मिडिल स्कूल में पाँच वर्ष तक अध्यापन कार्य करते रहे। पश्चात् ये सरकारी विभाग में कानूनगो हो गये।

कानूनगोही से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त ये हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में हिन्दी के अवैतनिक अध्यापक हो गये। विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के उपरान्त ये अपने ग्राम में रहकर ही साहित्य सेवा का कार्य करते रहे। इनकी मृत्यु संवत् २००३ में हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचनाएँ—इनकी गद्य पद्यमय रचनाओं में अधखिला फूल, ठेठ हिन्दी का ठाठ, वेनिस का बांका, प्रिय प्रवास, वैदेही वनवास, रस कलश, हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास, चोखे चौपदे, चुभते चौपदे, पारिजात आदि अधिक प्रसिद्ध हैं।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—उपाध्याय जी की प्रधान विशेषता बहु-विधि वर्णन शीलता है। यदि एक ओर ये राधा-कृष्ण तथा सीताराम से सम्बन्धित प्राचीन विषयों पर कविता करते पाये जाते हैं, तो दूसरी ओर आधुनिक काल से सम्बन्धित अनेक समस्याओं पर नवीन ढङ्ग से विचार करते हैं। बहुत से स्थानों पर तो प्राचीन तथा अर्वाचीन भावों का सम्मिश्रण एक नवीन चमत्कार उत्पन्न कर देता है।

प्रिय प्रवास इनका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है। यह अतुकान्त संस्कृत छन्दों में लिखा गया है। इसमें कृष्ण के मथुरा गमन तथा उनके जाने के बाद की ब्रज दशा का वर्णन है। कृष्ण के वियोग में सारा ब्रज ही अत्यन्त दुःखी है। अपने प्रियतम के चले जाने पर राधा की दशा तो अवर्णनीय सी है, पर वह सूर आदि की राधा की तरह रोती बिलखती नहीं है, वह तो अपने जीवन को समाज सेवा में ही अर्पित कर देती है। कृष्ण वियोग में नन्द और यशोदा की भी बुरी हालत है। यशोदा यदि किसी श्रेष्ठ मिष्ठान्न और सुन्दर फल को देखती हैं, तो अत्यन्त ही दुखी हो कृष्ण को याद करने लगती हैं—

जो पाती हूँ कुँवर मुख के जोग में भोग प्यारा,
तो होती है हृदय तल में वेदनाएँ बड़ी ही।
जो कोई भी सुफल सुत के योग्य मैं देखता हूँ,
हो जाती हूँ व्यथित अति ही दग्ध होती महा हूँ।

प्रकृति चित्रण—उपाध्याय जी का प्रकृति वर्णन सजीव तथा परिस्थितियों में प्रभावित है। वह अपने से सम्बन्धित पुरुषों के सुख में उत्फुल्ल तथा दुःख में मलीन दिखाई देती है। कृष्ण वियोग से दुःखी ब्रज के साथ साथ वहाँ के वृक्ष भी रोते हैं और यशोदा की सहानुभूति में रजनी की आँखों से भी बूँदें गिरती हैं—

फूलों पत्तों सकल पर हैं वारि बूँदें लखाती।
रोते हैं या विपट सब यों आँसुओं को दिखाके॥
रोई थी जो रजनि दुःख से नन्द की कामिनी के।
ये बूँद हैं निपतित हुई या उसी के दृगों से॥

प्रकृति चित्रण में जहाँ कहीं उपाध्यायजी लम्बी सूचियों को गिनाने में लग जाते हैं, वहाँ इनका वर्णन नीरस तथा परम्परा प्रयुक्त सा लगता है, पर अधिकतर ऐसा नहीं हुआ है और ऐसे सभी स्थलों पर उपाध्यायजी का प्रकृति वर्णन स्वाभाविक तथा सरस है। सायं-काल के समय की 'अरुणता' का एक मनोहर चित्र देखिए—

अधिक और हुई नभ-लालिमा।
दश-दिशा अनुरंजित हो गई॥
सकल-पादप पुंज हरीतिमा।
अरुणिमा विनिमज्जित सी हुई॥
झलकने पुलिनों पर भी लगी।
गगन के तल की यह लालिमा॥
सरिता औ सर के जल में पड़ी।
अरुणता अति ही रमणीय थी॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कला पक्ष

भाषा—उपाध्यायजी ने ब्रज भाषा और खड़ी बोली में कविता लिखी है। इनकी खड़ी बोली पर संस्कृत और ब्रज भाषा दोनों का ही प्रभाव है। संस्कृत के तत्सम प्रयोगों की अधिकता से कहीं कहीं तो हिन्दी था, थी, थे और का, की, के तक ही सीमित रह गई है—

रूपोद्यान प्रफुल्ल प्राय कलिका राकेन्दु बिम्बानना।
तन्वंगी कलहासिनी सुरसिका क्रीड़ा कला पुतली॥
शोभा वारिधि की अमूल्य मणि सी लावण्य लीलामयी।
श्री राधा मृदुभाषिणी मृग दृगी माधुर्य सन्मूर्ति थी॥

पर उपाध्यायजी मुहावरों से युक्त बोल चाल की साधारण भाषा लिखने में भी सिद्धहस्त हैं और शुक्लजी के शब्दों में "यही द्विकलात्मक कला उपाध्याय जी की बड़ी विशेषता है" 'चोखे चौपदे' नामक पुस्तक में उनकी इन्हीं मुहावरों से युक्त भाषा को देखा जा सकता है—

क्यों पले पीस कर किसी को तू ?
है बहुत पालसी बुरी तेरी
हम रहे चाहते पटाना ही।
पेट तुझ से पटी नहीं मेरी॥

शैली—उपाध्यायजी के काव्यों में हमें चार प्रकार की शैलियों के दर्शन होते हैं—

१—उर्दू की मुहावरेदार शैली (चोखे चौपदे और चुभते चौपदे आदि में)

२—हिन्दी के रीतिकाल की शैली (रस कलस में)

३—संस्कृत काव्य शैली (प्रिय प्रवास में)

४—आधुनिक काल की सरस हिन्दी की शैली (बैदेही-बनवास में)

छन्द—इन्होंने प्रबन्ध-काव्य और मुक्तक दोनों प्रकार की रचनाएँ की हैं। आरम्भ में इन्होंने हिन्दी के पुराने छन्द, कवित्त, सवैया, छप्पय, दोहा तथा उर्दू छन्दों का प्रयोग किया था। आगे चलकर इन्होंने संस्कृत के छन्दों को भी अपनाया और उनमें अतुकान्त कवितायें कीं।

रस, अलंकार—इनके काव्यों में प्रायः सम्पूर्ण रस पाये जाते हैं। इन्होंने अनुप्रास उपमा, रूपक, उत्पेक्षा आदि अलंकारों का प्रयोग भी किया है, पर ये अलंकारों के फेर में नहीं पड़े हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि उपाध्यायजी ने ब्रज भाषा के युग में जन्म लेकर जाति, देश, समाज, भाव, छन्द और साहित्य का अद्भुत समन्वय कर एक नवीन मार्ग प्रस्तुत किया है।

सारांश

जन्म सम्वत् तथा स्थान—सम्वत् १९२२, निजामाबाद जिला आजमगढ़।

पिता— पं० भोलानाथ।

मृत्यु सम्वत्— सं० २००३।

रचनाएँ— ऊपर देखो।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्ण्य विषय—	प्राचीन तथा अर्वाचीन भावों का सम्मिश्रण, प्रकृति-चित्रण (परिस्थितियों से प्रभावित)
भाषा—	ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली (क्लिष्ट तथा सरल) मुहावरों का प्रयोग भी किया है ।
शैलियाँ—	चार प्रकार की (ऊपर देखो)
छन्द—	कवित्त, सवैया, छप्पय, दोहा, उर्दू-छन्द, संस्कृत-छन्द ।
रस का अलंकार—	प्रायः सभी ।

मैथिलीशरण गुप्त

जीवनी तथा परिचय—राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त का जन्म सम्वत् १९४३ में झाँसी जिले के चिर गाँव नामक ग्राम में हुआ था । इनके पिता सेठ रामचरण एक भगवद् भक्त और हिन्दी काव्य के प्रेमी वैश्य थे । गुप्त जी को बालकपन से ही कविता करने की रुचि थी । बाल्यकाल में ही एक दिन इन्होंने पिताजी की कापी में स्वरचित एक छन्द लिख दिया, जिससे प्रसन्न होकर पिताजी ने पुत्र को सफल और सिद्ध कवि होने का आशीर्वाद दिया, जो आगे चलकर सत्य सिद्ध हुआ ।

इन्होंने घर पर ही थोड़ी सी संस्कृत की शिक्षा और झाँसी में नवीं कक्षा तक अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त की । महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पर्क में आने से इनकी प्रतिभा निखर उठी और ये उत्कृष्ट कोटि की रचना करने लगे ।

गुप्तजी का स्वभाव बड़ा सरल तथा जीवन अति साधारण था । राष्ट्रीयता की छाप इनकी कविताओं पर ही नहीं, वेष भूषा पर भी थी । असहयोग आन्दोलन में ये जेल भी गये थे । आगरा विश्वविद्यालय तथा प्रयाग विश्वविद्यालय ने इनको क्रमशः सन् १९४८ तथा १९५८ में डी० लिट् की उपाधि से विभूषित किया था । इन सद्गुणों पर मुग्ध होकर राष्ट्रपति ने इनको स्वतन्त्र भारत की प्रथम राज्य परिषद् का सदस्य मनोनीत किया था । इनकी मृत्यु सं० २०२१ में हुई थी ।

रचनाएँ—गुप्तजी ने मौलिक और अनूदित दोनों ही प्रकार की रचनाएँ की थीं । इनकी मौलिक रचनाओं में भारत भारती, जयद्रथ वध, पञ्चवटी, साकेत, यशोधरा मुख्य हैं । साकेत पर इन्हें मंगला प्रसाद पारितोषिक भी मिला था । इनकी अनूदित रचनाएँ मेघनाथ वध, बीरांगना, स्वप्न-वासवदत्ता आदि हैं ।

भाव पक्ष

भक्ति भावना—गुप्तजी राम के अनन्य भक्त हैं । इनके राम कृष्ण से भिन्न नहीं हैं फिर भी इन्हें तुलसी की तरह रामरूप ही अधिक प्रिय है—

धनुर्वाण या वेण लो, श्याम रूप के संग ।
मुझ पर चढ़ने से रहा, राम ! दूसरा रङ्ग ।।

भक्ति के साथ दैन्य और विनय का जो सम्बन्ध होता है, वह भी गुप्तजी में दिखाई देता है—

आया यह दीन आज चरण-शरण आया ।
हाय, सौ उपाय किए फल न एक पाया ।।
सर्व अहङ्कार गर्व, नाथ हुआ आज खर्व ।
पाऊँ अब प्रगति पर्व मिटे मोह माया ।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वर्ण्य विषय—(भारतीय संस्कृति से प्रेम) गुप्तजा की रचनाओं में आर्य संस्कृति और मर्यादा का श्रेष्ठ रूप दृष्टिगोचर होता है। प्रायः इनकी सारी रचनाएं आर्य भावनाओं से ओत-प्रोत हैं। 'मंगल घट' में 'मा विद्वषावहै' की भावना का अवलोकन कीजिए—

सब तीर्थों का एक तीर्थ यह हृदय पवित्र बनालें हम।
आओ यहाँ अजातशत्रु बन, सबको मित्र बना लें हम॥
रेखाएँ प्रस्तुत हैं अपने मन के चित्र बना लें हम।
सौ सौ आदर्शों को लेकर, एक चरित्र बना लें हम॥

राष्ट्र प्रेम—गुप्तजी एक सच्चे राष्ट्र प्रेमी कवि हैं। भारत-भारती में कवि की यह भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। राष्ट्रीय-भावनाओं में ये गाँधी जी से प्रभावित हैं। गाँधी के सन् १९३०—३१ के असहयोग आन्दोलन का भी इन पर पूरा प्रभाव पड़ा है। 'साकेत' में राम के वन जाते समय प्रजा राम के मार्ग में लेटकर कहती है—

जाओ, यदि जा सको रौंद हमको यहाँ,
यों कह पथ में लेट गये बहुजन वहाँ।

राम भी उन्हें उत्तर देते हैं—

उठो प्रजा जन, उठो, तजो यह मोह तुम।
करते हो किस हेतु विनति विद्रोह तुम॥

और यह 'विनति विद्रोह' असहयोग आन्दोलन का ही दूसरा रूप है।

चरित्र चित्रण—मानव हृदय का वास्तविक चित्र खींचने की गुप्तजी में अद्भुत क्षमता थी, अतएव इनका चरित्र चित्रण स्वाभाविक और मर्मस्पर्शी होता था। 'साकेत' में भरत के साथ ही राम को वन से लौटाने के लिए गई हुई कैकयी के हृदय की मर्म वेदना उसके ही शब्दों मे प्रस्फुटित हो उठी है—

हे राम, दुहाई करूँ और क्या तुझसे?
कहते आते थे यही अभी नर देही,
माता न कुमाता, पुत्र कुपुत्र भले ही।
अब कहें सभी यह हाय! विरुद्ध विधाता,
'है पुत्र पुत्र ही रहे, कुमाता माता।'
× × ×
युग-युग तक चलती रहे कठोर कहानी—
'रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।'

नारी का महत्व—प्राचीन आर्य संस्कृति के उपासक होने के कारण गुप्त जी के हृदय में नारीयों के प्रति अत्यन्त श्रद्धा और सहानुभूति थी। उर्मिला और यशोधरा जैसी काव्य में उपेक्षित नारियों का सफल चित्रण कर गुप्तजी ने एक नवीन परम्परा को जन्म दिया है। उर्मिला 'साकेत' की नायिका है और राम कथा से सम्बन्धित न होवे पर भी 'साकेत' उसी पर केन्द्रित सा लगता है। यशोधरा तो 'यशोधरा' काव्य की सर्वेसर्वा है, इसमें कवि ने यशोधरा के मातृ तथा पत्नी रूपों का सुन्दर सामंजस्य दिखाया है कवि की यशोधरा से पूर्ण सहानुभूति है और उसने दो पंक्तियों में ही उसका सार चित्र खींच दिया है—

अबला जीवन हाय, तुम्हारी यही कहानी,
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संवाद रचना—संवाद लिखने में तो केशव के बाद गुप्त जी का ही नाम आता है। इसमें कवि ने प्रसंगानुकूल वाग्वैदग्ध्य, व्यंग, तर्क शैली, साँकेतिकता आदि से काम लिया है। साकेत में प्रातःकाल के समय का उर्मिला लक्ष्मण संवाद देखिए—

"उर्मिला बोली, "अजी तुम जाग गए ! स्वप्न निधि से नयन कब से लग गए ?"
"मोहिनी ने मन्त्र पढ़ जब से छुआ, जागरण रुचिकर तुम्हें जब से हुआ।"
"जागरण है स्वप्न से अच्छा कहीं, प्रेम में कुछ भी बुरा होता नहीं।"
"प्रेम की यह रुचि विभिन्न सराहिए, योग्यता क्या कुछ न होनी चाहिए ?"
"प्राण प्यारी तुम्हारी योग्यता के पास हूँ किन्तु मैं भी तुम्हारा दास हूँ ?"
"दास बनने का बहाना किस लिए, क्या मुझे दासी कहाना इसलिए ?"
"देव होकर तुम सदा मेरे रहो, और देवी ही मुझे रक्खो अहो ?"

भाव-पक्ष

भाषा—गुप्त जी की भाषा शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली है। खड़ी बोली में सरस तथा मधुर कविता करके गुप्त जी ने इस धारणा को निर्मूल सिद्ध कर दिया है कि खड़ी बोली में ब्रजभाषा का सा माधुर्य नहीं हो सकता है; इनकी भाषा में कहीं कहीं संस्कृत शब्दों की क्लिष्टता अवश्य मिलती है, पर इससे भाषा के प्रवाह में कोई अन्तर नहीं आया है।

गुप्तजी की प्रगति में तीन अवस्थाएँ दृष्टिगोचर होती हैं—

(१) **भाषा की सफाई**—यह इनमें प्रारम्भ से ही दिखाई देती है। 'भारत भारती' इसका उदाहरण है।

(२) **सरसता तथा कोमलता**—वंग भाषा की कविताओं के अनुशीलन तथा उसी भाषा के काव्यों के अनुवाद से गुप्तजी की रचनाओं में सरसता तथा कोमलता आ गई है।

(३) **छायावाद तथा रहस्यवाद का प्रभाव**—इन वादों के प्रभाव से गुप्तजी ने 'प्रगति काव्य' लिखे हैं। साकेत तथा यशोधरा इनके उदाहरण हैं।

शैली—गुप्तजी ने कई प्रकार की रचनाएँ की हैं, अतः इनके काव्यों में निम्न चार प्रकार की शैलियाँ पाई जाती हैं।

(१) **प्रबन्धात्मक शैली**—इस शैली में साकेत, पंचवटी, रंग में भंग जयद्रथ बध आदि लिखे गये हैं। इनमें भाषा सरल तथा सुबोध है।

(४) **उपदेशात्मक शैली**—हिन्दू गुरुकुल, भारत-भारती आदि इस शैली में लिखे गये हैं। इसमें भाषा सशक्त तथा ओजपूर्ण है।

(३) **गीत नाट्य शैली**—यशोधरा, सिद्धराज, नहुष आदि काव्यों में कथोपकथन को गाने योग्य पदों में प्रस्तुत किया है; अतः इस शैली को गीत नाट्य शैली कहा जाता है।

(४) **भावात्मक शैली**—गुप्त के स्वानुभूति व्यंजक गीतों में भावों की प्रधानता है, अतः इन गीतों की शैली को 'भावात्मक शैली' कहा जाता है। झंकार के गीत इसी शैली में हैं।

छन्द अलंकार तथा रस—गुप्तजी ने आधुनिक तथा प्राचीन दोनों प्रकार के छन्दों में रचना की है। इनकी रचना में प्रायः सभी अलकारों का स्वाभाविक प्रयोग पाया जाता है। इनके काव्यों में प्रायः सम्पूण रस मिलते हैं, पर कवि को विप्रलम्भ शृङ्गार तथा वात्सल्य में विशेष सफलता मिली है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस प्रकार अपनी अद्भुत प्रतिभा के कारण श्री मैथिलीशरणगुप्त अपने युग के प्रतिनिधि कवि थे। अपनी रचनाओं द्वारा इन्होंने जो कार्य कर दिखाया है, उसे एक महान् नेता भी अपनी व्यक्तित्व द्वारा पूर्णतया करने में असफल सिद्ध होगा।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—	सं० १९४३, चिरगाँव जिला झाँसी।
पिता—	सेठ रामचरण।
मृत्यु संवत—	२०२१।
रचनाएँ—	काव्य-भारत-भारती, जयद्रथ-वध, पंचवटी साकेत, यशोधरा, द्वापर, सिद्धराज, नहुष आदि। नाटक—तिलोत्तमा, चन्द्रहास, अनघ। अनूदित-मेघनाथ बध, वीराङ्गना, विरहिणी-ब्रजाङ्गना, प्लासी का युद्ध, रुबाइयात उमर खैयाम।
वर्ण्य विषय—	राम-प्रेम, आर्य-संस्कृति से प्रेम, राष्ट्र-प्रेम, मानव हृदय के चित्र, नारी महत्व।
भाषा—	शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली।
शैली—	प्रबन्धात्मक, उपदेशात्मक, गीति नाट्य तथा भावात्मक।

छन्द, अलंकार तथा रस—प्रायः सभी। विप्रलम्भ शृङ्गार तथा वात्सल्य में विशेष सफलता मिली है।

बाबू जयशंकर प्रसाद

जीवनी तथा परिचय—बाबू जयशकर प्रसाद का जन्म संवत् १९४६ में काशी के एक धनी वैश्य घराने में हुआ था। इनके पिता बाबू देवीप्रसाद जी तम्बाकू के एक प्रसिद्ध व्यापारी थे। बाल्यकाल में ही पिता जी की मृत्यु हो जाने से ये अधिक स्कूली शिक्षा प्राप्त न कर सके; किन्तु इन्हें अध्ययन से विशेष रुचि थी, अतः घर पर ही हिन्दी, संस्कृत, अँग्रेजी, उर्दू, फारसी पढ़ने लगे और अपने परिश्रम से इन्होंने अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। ये अपने व्यापार की देख-भाल के साथ ही हिन्दी सेवा भी करते रहे। ये स्वभाव से बड़े सरल, मिलनसार तथा भारतीय संस्कृति के सच्चे उपासक थे। इनकी मृत्यु संवत् १९९४ में ४८ वर्ष की अवस्था में हुई।

रचनाएँ—प्रसाद जी की प्रतिभा बहुमुखी है। इन्होंने चन्द्रगुप्त, अजातशत्रु, स्कन्दगुप्त, राज्यश्री, विशाख, जन्मेजय का नाग यज्ञ, कामना, एक घूँट आदि नाटक लिखकर भारतीय इतिहास के आदि काल के उज्जवल रूप को हमारे सामने रखा है। आकाश दीप, आँधी, प्रतिध्वनि नामक संग्रहों में इनकी कहानियाँ संगृहीत हैं। तितली और कंकाल इनके यथार्थवादी उपन्यास हैं। चित्राधार, कानन-कुसुम, झरना, आँसू, लहर, कामायनी इनके काव्य ग्रन्थ हैं। 'आँसू' इनके स्वानुभूति व्यंजक छन्दों का संग्रह है। 'कामायनी' इनकी अन्तिम और सर्वश्रेष्ठ रचना है। इस महाकाव्य पर इन्हें मंगलाप्रसाद पारितोषक भी प्राप्त हुआ था। 'चित्राधार' में इनको प्रारम्भिक रचनाएँ हैं। अन्य पुस्तकों में इनकी बाद की कविताएँ संगृहीत हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भाव–पक्ष

वर्ण्य विषय—प्रसाद जी आधुनिक काल के छायावादी तथा रहस्यवादी कवियों में एक उच्च स्थान रखते हैं। इनकी प्रतिभा बहुमुखी है। विद्वत्ता तथा प्रतिभा का चमत्कार इनकी प्रत्येक प्रकार की रचनाओं में मिलता है। नाटकों के क्षेत्र में जिस प्रकार इनकी सूक्ष्म विवेचना शक्ति और तर्कमयी प्रतिभा के दर्शन होते हैं, उसी प्रकार कविता के क्षेत्र में भी भावात्मक अनुभूति तथा कविजनोचित सहृदयता भी दृष्टिगोचर होती है। कहानियों में भी मानव-हृदय की कामनाए, प्रेम की झलक, ऐतिहासिक काल के खण्ड चित्र आदि प्रस्तुत किये गए हैं।

दार्शनिकता, भावुकता तथा कल्पना की समाहार शक्ति तो इनकी प्रत्येक प्रकार की रचनाओं में ओत प्रोत है। यही कारण है कि प्रसाद की गद्यात्मक रचनाएँ भी यत्र-तत्र काव्य गुणों से युक्त हैं। ये भारतीय संस्कृति के सच्चे पुजारी हैं, जिसका प्रभाव इनकी सभी रचनाओं पर पड़ा है। प्रसाद की रचनाओं में प्रधानतः निम्न तीन प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं—

१—ईश्वरोन्मुख लौकिक प्रेम—प्रसाद का जीवन के प्रेम-विलासमय मधुर पक्ष से स्वाभाविक प्रेम है।

प्रेमचर्या इनके जीवन का प्रधान उद्देश्य है, तभी ये स्थान स्थान पर इसका नाना रूपों में वर्णन करते पाये जाते हैं। इनके द्वारा वर्णित प्रेम का प्रथम परिचय देखिऐ—

हृदह गुफा थी शून्य, रहा घोर सूना।
इसे बसाऊं शीघ्र, बढ़ा मन दूना॥
अतिथि आ गया एक, नहीं पहचाना।
हुए नहीं पद शब्द, न मैंने जाना॥
हुआ बड़ा आनन्द, बसा घर मेरा।
मन को मिला विनोद, कर लिया घेरा॥
उसको कहते 'प्रेम' अरे! अब जाना।
लगे कठिन नख रेख तभी पहचाना॥

लौकिक—प्रेमचर्या में अनिवार्य रूप से रहने वाले व्यभिचारी भावों (अश्रु स्वेद, स्तम्भ आदि) रंगरेलियों, अठखेलियों आदि में प्रसाद की वृत्ति खूब ही रमी है, पर आगे चलकर यही लौकिक प्रेम ईश्वरोन्मुख हो जाता है और वहीं से प्रसाद दार्शनिक हो जाते हैं। 'आँसू' में इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

२—प्रकृति प्रेम— यावादी कवि होने के नाते प्रसाद का प्रकृति से स्वाभाविक प्रेम है। इनकी सभी रचनाओं में प्रकृति के नाना रूपों के संश्लिष्ट चित्र मिलते हैं। प्रसाद ने प्रकृति के रम्य तथा भया क दोनों ही प्रकार के रूपों का स्वाभाविक चित्रण किया है। 'कामायनी' में रात्रि के आदि भाग में बन के एक भाग का रम्य रूप देखिए—

देवदारु निकुञ्ज गह्वर सब सुधा में स्नात,
सब मानते एक उत्सव जागरण की रात।
आ रही थी मदिर भीनी माधवी की गन्ध।
पवन के घन घिरे पड़ते थे बने मधु अन्ध।
× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और उसी कामायनी में प्रलय का एक भयानक चित्र भी लीजिए—

पंच भूत का भैरव मिश्रण, शंपाओं के शकल निपात,
उल्का लेकर अमर शक्तियाँ खोज रहीं ज्यों खोया प्रात।

× × × ×

घूमती धरा धधकती ज्वाला, मुखियों के निश्वास।
और संकुचित क्रमशः उसके अवयव का होता था ह्रास॥

प्रकृति प्रसाद के लिए अचेतन न होकर एक सजीव सत्ता है जो आपत्ति के समय खिन्न हो जाती है और समय आने पर उसी प्रकृति का विवर्ण मुख फिर से हँसने लगता है।

वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का आज लगा हँसने फिर से।

३—भारतीय संस्कृति से प्रेम—प्रसाद की सभी गद्य पद्यमय रचनाओं में उनका भारतीय संस्कृति के प्रति अजीव अनुराग देखा जाता है। यही कारण है कि इन्होंने अपने नाटकों का विषय पौराणिक तथा बौद्ध काल से लिया है। (जो भारतीयों के लिए अभिमान के युग रहे हैं) देश के प्रति इनका अनुराग स्थान-स्थान पर देखा जा सकता है—

अरुण यह मधुमय देश हमारा,
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरस तामरस-गर्भ विभा पर नाच रही तरु शिखा मनोहर,
छिटका जीवन हरियाली पर मंगल कुंकुम सारा॥

देश की वर्तमान अधोगति से खिन्न होकर 'प्रसाद' उसकी उन्नति के लिये नवयुवकों को पुकारते हुए कहते हैं—

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती।
अमर्त्य वीर पुत्र हो दृढ़ प्रतिज्ञ सोचलो,
प्रशस्त पुण्य पन्थ हैं बढ़े चलो, बढ़े चलो॥

कला पक्ष

भाषा—प्रारम्भ से प्रसाद ब्रजभाषा मे कविता लिखा करते थे। बाद में ये खड़ी बोली में लिखने लगे और अन्त तक उसी में लिखते रहे। कुछ प्रारम्भिक रचनाओं को छोड़कर इनकी सम्पूर्ण गद्य पद्यमय रचनाएँ संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त खड़ी बोली में है। संस्कृत शब्दों की अधिकता, व्यंजनात्मक शैली की प्रचुरता तथा भावों की गहराई से प्रसाद की भाषा में अस्पष्टता आ गई है, पर उसकी सरसता तथा कोमलता कहीं भी नष्ट नहीं होने पाई है। प्रसाद की भाषा में मुहावरों का प्रयोग नहीं के बराबर ही हुआ है। परन्तु मुहावरों के अभाव से भाषा में जो नीरसता तथा लचरपन आ जाता है, उसका प्रसाद की भाषा में सर्वथा अभाव है। कहीं कहीं इनकी रचनाओं में सुन्दर व्यंग भी दृष्टिगोचर होता है, पर यह व्यंग विशेष चुटीला न होकर सरल तथा मीठा होता है।

शैली—प्रसाद की गद्य पद्यमय रचनाओं पर उनके अध्ययन की गम्भीरता और काव्यात्मकता की गहरी छाप है अतः संक्षेप में हम उसे 'काव्यात्मक गम्भीर शैली' कह सकते हैं। उनकी पद्य तथा गद्य की शैलियों की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं—

पद्य-कथात्मक शैली—प्रसाद जी जहाँ अपने कथानक को आगे बढ़ाते हैं, वहाँ इस शैली के दर्शन होते हैं। इसमें भाषा सरस तथा प्रवाह पूर्ण है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२—दुरूह तथा गहन शैली—प्रसाद जी ने अपने दार्शनिक विचारों को इसी शैली में व्यक्त किया है। इसमें भाषा कठिन तथा अस्पष्ट सी है।

३—भावात्मक शैली—लज्जा, चिन्ता आदि मानसिक भावों के चित्रण में इस शैली का आश्रय लिया गया है। इसमें भाषा सरल तथा व्यंजना प्रधान है।

इस शैली के कुछ वाक्य लोकोक्ति होने की क्षमता रखते हैं। इस प्रकार का एक उदाहरण देखिए—

"अधिकार सुख कितना मादक और सारहीन है। अपने को कर्त्ता और क्रियात्मक समझने की बलवती स्पृहा उससे बेगार कराती है।"

गद्य १—विवरणात्मक शैली—जहाँ प्रसाद जी कथानक को आगे बढ़ाते हैं, वहाँ इस शैली के दर्शन होते हैं।

२—भावात्मक शैली—अन्तस्तल के भावों तथा अन्तर्द्वन्द्व के चित्रण में इस शैली के दर्शन होते हैं।

३—गवेषणात्मक शैली—नाटकों की भूमिका तथा निबन्धों में इस शैली के दर्शन होते हैं।

अलंकार—इनकी गद्य पद्यमय सभी रचनाओं में अलंकार मिलते हैं। अलंकारों ने इनकी भाषा को चमत्कारपूर्ण बना दिया है। इन्होंने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि भारतीय अलंकारों तथा मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वनि-चित्रण आदि पाश्चात्य अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया है। उपमानों की खोज में प्रसाद जी की मौलिकता दृष्टव्य है। प्रलय समुद्र से घिरे हुए हिमालय के लिए प्रयुक्तों उपमानों को देखिए—

विश्व कल्पना सा ऊँचा वह, सुख शीतल सन्तोष निदान,
और डूबती सी अचला का, अवलम्बन मणि रत्न निधान।

रस तथा छन्द—प्रसाद ने 'रसों' के उद्देश्य से नहीं लिखा है, फिर भी इनकी रचनाओं में सभी रस पाये जाते हैं। इन्होंने हिन्दी के प्राचीन छन्दों, संस्कृत छन्दों तथा आधुनिक समय में प्रचलित छन्दों में रचना की है। इन्होंने गीत भी लिखे हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कल्पना की ऊँची उड़ान, दार्शनिक तत्वों का सरल विवेचन, राष्ट्र प्रेम की अभिव्यक्ति और ऐतिहासिक अध्ययन में प्रसाद अपने युग के सम्पूर्ण अलंकारों में श्रेष्ठ हैं और सच्चे अर्थों में वाग्देवी के 'प्रसाद' हैं।

सारांश

जन्म संवत स्थान—	सं० १९४६, काशी।
पिता—	बाबू देवीप्रसाद।
मृत्यु संवत—	१९९४।
रचनाएँ—	ऊपर देखो।
वर्ण्य विषय—	छायावाद, रहस्यवाद, ईश्वरोन्मुख, लौकिक प्रेम, प्रकृति प्रेम, भारतीय संस्कृति से प्रेम।
भाषा—	आरम्भ में ब्रजभाषा, पर बाद में खड़ी बोली, संस्कृत शब्दों का प्रचुरता, मुहावरों का अभाव।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शैली—	पद्य—(१) कथात्मक, (२) दुरूह तथा गहन, (३) भावात्मक।
	गद्य—(१) विवरणात्मक (२) भावात्मक (३) गवेषणात्मक।
अलंकार—	सभी प्राचीन तथा नवीन (मानवीकरण आदि) अलङ्कार।
छन्द—	हिन्दी के प्राचीन तथा नवीन छन्द, गीत।
रस—	प्राय: सभी।

पं० रामनरेश त्रिपाठी

जीवनी तथा परिचय—पं रामनरेश त्रिपाठी का जन्म संवत् १९४६ में जौनपुर जिले के कोइरीपुर नामक ग्राम के सारस्वत ब्राह्मण कुल में हुआ था। इनके पिता पं० रामदत्त त्रिपाठी एक भगवत् भक्त कर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। इनकी स्कूली शिक्षा अधिक नहीं हुई थी तथापि विद्या के प्रति असाधारण प्रेम, देशाटन तथा स्वाध्याय से त्रिपाठी जी ने अच्छी योग्यता प्राप्त करली थी। जीवन के प्रारम्भिक काल से ही ये हिन्दी की सेवा करने में लग गये थे। ग्राम गीतों का संग्रह इनकी इसी प्रवृत्ति का परिणाम है। ये संवत् १९८८ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की इतिहास परिषद् के सभापति रहे थे। इनकी मृत्यु संवत् २०१८ में हुई थी।

रचनाएँ—ये जितनी सुन्दर पद्य लिखते थे, उतना उत्कृष्ट गद्य भी। इनकी प्रतिभा बहुमुखी है। इन्होंने काव्य, नाटक, आलोचना आदि लिखे थे। इनकी रचनाएँ निम्न हैं—

खण्ड-काव्य—पथिक, मिलन, स्वप्न।

कविताओं का संग्रह—मानसी।

सम्पादित—कविता कौमुदी छ: भाग, ग्राम गीतों का संग्रह।

नाटक—प्रेम लोक।

आलोचना—गोस्वामी तुलसीदास और उनकी कविता (दो भाग)

इसके अतिरिक्त तरकस, जयन्त, स्वप्न के चित्र, मालवीयजी के साथ तीस दिन, बाल कथा, कहानी आदि इनकी अन्य रचनाएँ हैं।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—इन्होंने ऐतिहासिक तथा पौराणिक आख्यानों के पीछे न रहकर अपने खण्ड काव्यों के लिए नवीन आख्यानों की सृष्टि की है। चरित्र चित्रण के स्वाभाविक होने के कारण इनकी ये कल्पनाएँ सजीव तथा सामयिक हैं। ये आदर्शवादी कवि हैं; और इनके आदर्श हैं त्याग, उत्सर्ग और देश प्रेम। 'पथिक' में साधु के मुख से 'पथिक' से पूछे हुए प्रश्नों में उनके ये सब आदर्श अच्छी प्रकार से देखे जा सकते हैं—

कभी उदर ने भूखे जन को प्रस्तुत भोजन पानी।
देकर मुदित भूख के सुख की क्या महिमा है जानी?
× × ×
जग से दूर, स्वार्थ साधन ही सतत तुम्हारा यश है।
सोचो तुम्हीं, कौन जन जग से तुमसा स्वार्थ विवश है॥
× × ×
मस्तक ऊँचा हुआ तुम्हारा कभी जाति गौरव से।
अगर नहीं तो देह तुम्हारी तुच्छ अधम है शव से॥
× × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जिस पर खड़े हुये, खेले, घर बना बसे सुख पाये।
जिसका रूप विलोक तुम्हारे दृग, मन, प्राण जुड़ाये ।।
वह सनेह की मूर्ति दयामयि माता तुल्य मही है।
उसके प्रति कर्त्तव्य तुम्हारा क्या कुछ शेष नहीं है ।।

चरित्र चित्रण—त्रिपाठी का चरित्र चित्रण स्वाभाविकता से परिपूर्ण है। प्रायः इनके सम्पूर्ण चरित्र प्रकृति नटी की लीलाओं में अनुराग रखने वाले देश-प्रेम से परिपूर्ण भारत माता के सच्चे पुजारी हैं। चरित्रों का देश-प्रेम उन्हें कर्म तथा प्रेम के मार्ग में बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। इनके 'सच्चे-प्रेम' की परिभाषा ही ऐसी है जो राष्ट्र-प्रेम तथा त्याग के बिना पूरी हो ही नहीं सकती।

सच्चा प्रेम वही है, जिसकी तृप्ति आत्म बलि पर हो निर्भर,
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है करो प्रेम पर प्राण निछावर;
देश प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है अमल असीम-त्याग से विलसित;
आत्मा के विकास से जिसमें मानवता होती है विकसित ।।

प्रकृति चित्रण—त्रिपाठी जी स्वभाव से ही प्रकृति के प्रेमी हैं। इनके भ्रमण ने उनके प्रकृति वर्णन को सजीव बनाने में विशेष सहायता दी है। प्रकृति के संश्लिष्ट चित्रण में इनकी असाधारण प्रतिभा प्रकट होती है। इसी प्रसंग में रात्रि के समय समुद्र की हल-चलों का एक चित्र देखिए—

या निर्भय कर्त्तव्य परायण वीर प्रभावित स्वर से।
सिन्धु सन्तरी गरज रहा था अगणित ऊर्मि अधर से।
चञ्चल बीच मरीचि-बसन से सजकर नीले तन को।
होड़ लगी सी उछल रही थी चारु-चन्द्र-चुम्बन को।

भक्ति भावना—प्राचीन काल के कवियों की भाँति ये अपने उद्धार के लिये भगवान् पर ही भरोसा करते हैं, इन्हें अपने कर्मों पर विश्वास नहीं है—

सरके कपोल के उजाले में दिवस रात,
केशों के अँधेरे में निकल भागी पास से,
सन्ध्या बालापन की युवापन की आधी रात
मैंने काट डाली क्षण भंगुर विलास से,
श्वेत केश झलके प्रभात की किरन से तो,
आँखें खुली काल के कुटिल मन्द हास से,
मेरे करुणा निधि का आसन गरम होगा,
कौन जाने कब मेरे शीतल उसास से ?

कबीर की भाँति इनके राम भी 'मन्दिर, मस्जिद' आदि में नहीं रहते हैं। वे तो इनके मतानुसार 'दीन जनों' की भूख प्यास में हैं—

ना मन्दिर में ना मस्जिद में,
ना गिरजे के आस पास में।
खोजले कोई राम मिलेंगे,
दीन जनों की भूख प्यास में ।।

कला पक्ष

भाषा—त्रिपाठीजी की भाषा शुद्ध खड़ी बोली है। वह व्याकरण सम्मत तथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रसाद गुण से परिपूर्ण है । संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता से पूर्ण होते हुए भी मधुर भावानुकूल तथा ओजमय है । 'स्वप्न' नामक खण्ड काव्य में 'छायावाद' की भी स्पष्ट छाप है ।

शैली—त्रिपाठी जी की शैली सरस, स्वाभाविक तथा संगीतमय है । इनकी शैली के निम्न दो रूप पाये जाते हैं—

१—**वर्णनात्मक शैली**—वर्णन के क्षेत्र में जहाँ प्रकृति का चित्रण अथवा अन्य भावों का वर्णन है, वहाँ इस शैली के दर्शन होते हैं ।

२—**उपदेशात्मक शैली**—जहाँ कवि आदर्शवाद के अनुसार उपदेश देता है, वहाँ उपदेशात्मक शैली है ।

छन्द तथा अलंकार—इन्होंने प्राचीन तथा आधुनिक दोनों ही प्रकार के छन्दों में रचना की है । इनकी कविता में प्रायः सभी अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग मिलता है ।

अन्त में हम कह सकते हैं कि अपनी बहुमुखी प्रतिभा से त्रिपाठी ने हिन्दी की जो सेवा की है, वह अन्य साहित्यकारों से नहीं बन पड़ी है और इसीलिए खड़ी बोली के कवियों में इनका एक गौरवपूर्ण स्थान है ।

साराँश

जन्म सम्वत् तथा स्थान—	सं० १९४६, कोइरीपुर, जिला जौनपुर ।
पिता—	पं० रामदत्त त्रिपाठी ।
मृत्यु सम्वत्—	२०१८ ।
रचना—	ऊपर देखो ।
वर्ण्य विषय—	त्याग, उत्सर्ग, देश प्रेम, प्रकृति-चित्रण, भगवत् प्रेम ।
भाषा—	व्याकरण सम्मत, प्रसाद गुण से पूर्ण, शुद्ध खड़ी बोली, संस्कृत शब्दों की बहुलता ।
शैली—	वर्णनात्मक, उपदेशात्मक ।
छन्द—	प्राचीन तथा आधुनिक ।
अलंकार—	प्रायः सभी ।

पण्डित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

जीवनी तथा परिचय—निरालाजी का जन्म माघ शुक्ला ११ सम्बत् १९५३ को बंगाल के मेदनीपुर नामक ग्राम में हुआ था । इनके पिता पण्डित रामसहाय त्रिपाठी उन्नाव जिले में गढ़कोला नामक ग्राम के निवासी थे । वे उस समय बंगाल की महिषादल नामक रियासत में नौकर थे । बंगाल में जन्म लेने के कारण इनकी शिक्षा बंगाली छात्रों के साथ हुई । वहीं पर उन्होंने 'मैट्रिक' की परीक्षा पास की । १३ वर्ष की अवस्था में इनका विवाह एक संगीतज्ञ विदुषी महिला के साथ हो गया । उनके संसर्ग से इनको संगीत तथा हिन्दी से रुचि हो गयी । २२ वर्ष की अवस्था में इनकी पत्नी का देहान्त हो गया । इससे इनका हृदय क्षुब्ध हो गया और ये रियासत की नौकरी छोड़कर वहाँ से चले आये । इनकी मृत्यु संवत् २०१८ में हुई थी ।

रचनाएँ—रामकृष्ण परमहँस तथा स्वामी विवेकानन्द के दार्शनिक विचारों के अध्ययन का इन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा । कुछ समय तक इन्होंने रामकृष्ण मिशन अद्वैत आश्रम के

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिन्दी पत्र 'समन्वय' का सम्पादन भी किया था। इनकी प्रतिभा बहुमुखी है। इन्होंने काव्य, उपन्यास, कहानी, समालोचना, निबन्ध आदि लिखे हैं। इनकी रचनाएँ निम्न हैं –

काव्य—अनामिका, परिमल, गीतिका, अपरा, तुलसीदास, अणिमा, कुकुर मुत्ता, बेला, नये पत्ते।

उपन्यास—अप्सरा, अलका, निरुपमा, प्रभावती।

हास्यात्मक—उपन्यास, बिल्लेसुर, बकरिहा।

कहानियाँ—लिली, सखी।

आलोचना—रवीन्द्र कविता कला।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—(दार्शनिकता)—निरालाजी की कविताओं पर उनकी दार्शनिकता तथा अनुभूतियों की छाप स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। इनमें बुद्धिवाद और हृदयवाद का सुन्दर समन्वय है। जागरण, मैं और तुम, कर्ण आदि रचनाओं में इनके दार्शनिक विचारों को देखा जा सकता है। तुलसीदास की 'तू दयाल दीन हों' की भाँति इनकी भी भावना है—

तुम आशा के मधुमास
और मैं पिक कल कूजन तान
तुम मदन पंच शर हस्त
और मैं हूँ मुग्धा अनजान।
तुम अम्बर मैं दिग्वसना
तुम चित्रकार घन पटल श्याम
मैं तड़ित तूलका रचना।

दार्शनिक भाव धारा, निरालाजी की भाव धारा से मिलकर काव्य रूप में प्रवाहित हुई है। इस प्रकार इनकी रचनाओं में दर्शन काव्य है और काव्य दर्शन है। कबीर आदि की भाँति ही ये कहते हुए पाये जाते हैं—

पास ही रे, हीरे की खान,
खोजता कहाँ अरे नादान।

प्रकृति चित्रण—निरालाजी छायावादी होने के साथ साथ रहस्यवादी भी हैं, अतः ये प्रकृति को रहस्यवादी और अद्वैतवादी दृष्टिकोण से देखते हैं। जुही की कली' में प्रकृति के प्रति इनके ये दोनों दृष्टिकोण विकसित रूप में देखे जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त जब ये प्रकृति में एक सचेतन सत्ता का अनुभव करने लगते हैं तब प्रकृति इन्हें एक स्त्री के रूप में दिखलाई देने लगती है और यही हम इनकी रचनाओं में प्रकृति और पुरुष का एकत्व देखने लगते हैं। इसी प्रसंग में संध्या सुन्दरी का शान्त और स्तब्ध रूप देखिए—

दिवसावसान का समय,
मेघ मय आसमान से उतर रही है।
वह संध्या सुन्दरी परी सी
धीरे धीरे धीरे ?
तिमिराञ्चल में चञ्चलता का नहीं कहीं आभास
मधुर मधुर हैं दोनों उसके अधर—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किन्तु जरा गम्भीर नहीं है उसमें हाय विलास
हँसता है केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले-काले बालों से
हृदय राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक ।

प्रगतिवाद—निरालाजी छायावादी तथा रहस्यवादी कवि होने के साथ साथ प्रगतिवादी भी हैं । नई भाषा शैली का सबसे सुन्दर रूप प्रगतिवादी कवियों में इनमें ही मिलता है । निम्न वर्ग के दैनिक जीवन के कार्य कलापों का सुन्दर चित्रण 'वह तोड़ती पत्थर' 'इलाहाबाद के पथ पर,' भिक्षुक आदि में देखा जा सकता है । जरा भिक्षुक को तो देखिए—

वह आता
दो टूक कलेजे के करता, पछताता, पथ पर आता
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक
मुट्ठी भर दाने को भूख मिटाने को
मुँह फटी पुरानी झोली को फैलाता,
दो टूँक कलेजे के करता पछताता, पथ पर आता ।

देश प्रेम—निरालाजी आर्य संस्कृति के पूर्ण भक्त हैं । देश प्रेम की पूत धारा इनके वाक्यों में भरी पड़ी है । इन्हें देश की वर्तमान दशा पर अत्यन्त ही क्षोभ तथा वेदना है । राष्ट्रीय प्रभाती के रूप में गाये हुए उद्‌बोधन गीत में इनकी वह वेदना स्पष्ट देखी जा सकती है ।

जागो फिर एक बार
प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हें
अरुण पङ्ख तरुण किरण
खड़ी खोल रही द्वार
जागो फिर एक बार ।

कला पक्ष

भाषा—बंगला साहित्य के पर्याप्त अध्ययन के कारण इनके विचारों, भाषा और शैली सभी पर बंगला साहित्य का प्रभाव पड़ा है । इससे इनकी भाषा में संगीत तथा कोमलता प्रर्याप्त मात्रा में मिलती है । संस्कृत के सामासिक तथा तत्सम शब्दों का प्रयोग इनकी भाषा में अधिक मिलता है । विचारों की दार्शनिकता तथा संस्कृत के अप्रचलित शब्दों के प्रयोग से भाषा कहीं कहीं इतनी क्लिष्ट हो जाती है कि वह साधारण पाठकों की समझ में ही नहीं आती । पर प्रगतिवादी कविताओं में भाषा सरल, मुहावरेदार तथा चलती हुई सी प्रतीत होती है । उदाहरण के लिये ऊपर लिखी हुई 'भिक्षुक' की कविता देखी जा सकती है । इन्होंने उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्दों को भी निस्संकोच भाव से अपनाया है—

अबे सुन बे गुलाब !
भूल मत, गर पाई खुशबू रंगो आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट !
डाल पर इतरा रहा है कैपीटलिस्ट !

शैली—निराला जी की शैली में दो प्रकार की शली के दर्शन होते हैं—

(१) **कठिन तथा दुरूह शैली**—इस शैली में भाषा कठिन, दुरूह तथा लम्बे लम्बे

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समासों से युक्त है। रहस्यवादी गीतों तथा विवरणात्मक काव्यों में इस शैली के दर्शन होते हैं।

(२) सरल तथा सुबोध शैली—प्रगतिवादी गीतों में इस शैली के दर्शन होते हैं। इसमें भाषा अपेक्षाकृत सरल तथा सुबोध है।

छन्द—इन्होंने तुकान्त और अतुकान्त दोनों ही प्रकार के छन्द लिखे हैं। हिन्दी में स्वछन्द छन्द जिसे 'रबड़ छन्द' का नाम भी दिया गया है, इन्हीं की देन है। बंगला के तुकान्त छन्दों की भाँति इनके 'रबड़ छन्दों' में ताल और गति का विशेष ध्यान रहा है। इसी प्रकार का इनका 'बादल राग' अति प्रसिद्ध है।

अलंकार—इनकी कविताओं में अलंकारों की प्रचुरता है। इनके साँग 'रूपक' सफल और सार्थक हैं। इन्होंने पुराने और नये दोनों प्रकार के उपमानों का व्यवहार किया है। मानवीकरण, ध्वनिकरण, विशेषण विपर्यय आदि अलंकार भी इनकी कविताओं में प्रचुर परिमाण में पाये जाते हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि वर्ण्य विषय, छन्द अलंकार, गीत और लय की दृष्टि से निराला जी अपने क्षेत्र के सम्राट हैं और सचमुच 'निराला' हैं।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—	माघ शुक्ल, ११ संवत् १९५३, मेदनीपुर (बंगाल)
पिता—	पं० रामसहाय त्रिपाठी।
मृत्यु संवत्—	२०१८
रचना—	ऊपर देखो।
वर्ण्य विषय—	छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद, प्रकृति के प्रति तादात्म्य का भाव।
भाषा—	खड़ी, बोली जिसमें संस्कृत शब्दों की बहुलता है। उर्दू, अंग्रेजी के शब्दों तथा मुहावरों का प्रयोग।
शैली—	१—दुरूह शैली, २—सरल शैली।
छन्द—	तुकान्त, अतुकान्त, रबड़ छन्द।
अलंकार—	उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय आदि।

सुमित्रानन्दन पन्त

जीवनी परिचय—पन्त जी का जन्म संवत् १९५७ में अलमोड़ा जिले के कौसानी नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम गङ्गादत्त पन्त था। प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के उपरान्त ये काशी के जयनारायण हाई स्कूल में प्रविष्ट हो गये। यहाँ से स्कूल लीविंग परीक्षा पास करने के बाद ये 'म्योर कालेज' इलाहाबाद में प्रविष्ट हुए, किन्तु एफ० ए० की प्रथम वर्ष पास करने के बाद इन्होंने पढ़ना छोड़ दिया। इन्होंने घर पर ही संस्कृत तथा बङ्गला का अध्ययन किया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर से अति प्रभावित हुए। शिक्षाकाल से ही पन्त जी की काव्य रचना में प्रवृत्ति है। आजकल ये आकाशवाणी केन्द्र, प्रयाग में काम कर रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचनाएँ—काव्य-वीणा, ग्रन्थि, पल्लव, गुञ्जन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या स्वर्ण किरण, स्वर्णधूलि, उत्तरा, युगपथ आदि।

नाटक—ज्योत्स्ना।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—पन्त जी के काव्यों में युग की परिस्थिति के अनुसार विभिन्न मोड़ आते रहे हैं। ये छायावाद तथा रहस्यवाद से होते होते प्रगतिवाद तक जा पहुँचे हैं। प्रकृति प्रेम, देश प्रेम तथा लौकिक प्रेम इनके काव्यों में सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं।

प्रकृति चित्रण तथा छायावाद—आधुनिक काल के छायावादियों में कोमलतम भावनाओं तथा मधुरतम भाषा के कारण पन्त जी का एक विशिष्ट स्थान है। छायावाद की ओर झुके होने के कारण प्रकृति और पन्त घुल मिल से गये हैं। इनका यह व्यवहार यहाँ तक बढ़ गया है कि उसमें लेन देन की मात्रा भी परिलक्षित होने लगी है—

बिजन बन में तुमने सुकुमारि कहाँ पाया मेरा यह गान,
मुझे लौटा दो विहग कुमारि, सजल मेरा सोने सा गान।

रहस्यवाद—भावुकता के साथ साथ पन्त जी में दार्शनिकता भी पूर्ण परिमाण में मौजूद है, परन्तु यह जीव और ब्रह्म के पचड़े में अधिक नहीं पड़े हैं। अधिकतर इनकी रचनाओं में प्रकृति सम्बन्धी रहस्यवाद ही दृष्टिगोचर होता है। ये प्रकृति के वैभव को देखकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में ये स्वभावतः ही प्रकृति के पीछे एक जीवित, जागृत, अतीन्द्रिय सत्ता की कल्पना कर लेते हैं—

छबि की चपल अँगुलियों से छू
मेरे हृत्तन्त्री के तार।
कौन आज मादक अस्फुट ?
राग कर रहा है गुञ्जार।

इस विश्व के सायं, प्रातःकाल कवि को अजीब रहस्यमय दिखाई पड़ते हैं। ये प्रकृति को प्रियतम की परीक्षा में मग्न पाता है—

कब से विलोकती तुमको,
ऊषा आ वातायन से।

प्रगतिवाद—छायावाद तथा रहस्यवाद में होते-होते पन्त जी प्रगतिवाद में जा पहुँचते है। सच पूछिए तो पन्त ही हिन्दी में प्रगतिवाद के प्रवर्तक हैं। इनका मत है कि किसान और मजदूर ही लोकक्राँति के अग्रदूत हैं। पर उनकी वर्तमान दशा को देखकर ये कराह उठते हैं। ग्रामों की दशा तो और भी शोचनीय है। यह तो आज 'मानव-लोक' जैसे भी नहीं दीखते हैं—

यह तो मानव लोक नहीं रे, यह है नरक अपरिचित।
यह भारत की ग्राम सभ्यता, संस्कृति से निर्वासित॥
अकथनीय क्षुद्रता विवशता भरी वहाँ के जग में।
ग्रह-ग्रह में कलह, खेत में कलह, कलह है, मग में॥

वहाँ के निवासी तो जीते हुए मुर्दे के समान हैं—

प्रकृति धाम यह तृण तृण कण कण जहाँ प्रफुल्लित जीवित।
यहाँ अकेला मानव ही रे, चिर विषण्ण जीवान्मृत॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

देश प्रेम—देश की वर्तमान दशा पर भी ये खिन्न हैं। पर उनकी खिन्नता प्रतीकों द्वारा कुछ व्यंजना प्रधान शब्दों में व्यक्ति हुई है—

आज तो सौरभ का मधुमास
शिशर में भरती सूनी साँस
वही मधुऋतु की गुंजित डाल
झुकी थी जो यौवन के भारे
अकिञ्चनता में निज तत्काल
सिहर उठती जीवन है भार
×   ×   ×
गूंजते हैं सबके दिन चार
सभी फिर हा हा कार

प्रेम भावना—पन्त जी के काव्यों में लौकिक प्रेम की अभिव्यंजना भी पूर्ण मात्रा में हुई है। 'ग्रन्थि' में कवि की सम्पूर्ण प्रेमानुभूति एक कथा के रूप में अभिव्यक्त हुई है। संयोग की अपेक्षा इन्हें वियोग ही अधिक प्रिय है । ये वियोगी को तो पहला कवि ही मानते हैं—

वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान,
निकलकर नयनों से चुप चाप,
वही होगी कविता अनजान ।।

कला पक्ष

भाषा—पन्तजी की भाषा अति कोमल खड़ी बोली है। कुछ शब्दों का प्रयोग इन्होंने मनमाने ढंग से स्वतन्त्रतापूर्वक किया है। लिंग का निर्णय ये प्रायः शब्द के अर्थानुसार करते हैं। संस्कृत से तत्सम शब्दों का प्रयोग उन्होंने अधिक किया है पर उसके कारण भाषा का सौन्दर्य नष्ट नहीं हुआ है। 'अनजान, दई, कारे' जैसे प्रचलित वृजभाषा के शब्दों का प्रयोग भी जहां तहां हुआ है माधुर्यपूर्ण कोमल भाषा लिखने में सिद्धहस्त पन्तजी विषयानुसार 'शतशत फेनोच्छ्वसित स्वीत फूत्कार भयंकर' जैसी ओजपूर्ण भाषा भी लिखते हैं। मुहावरों का प्रयोग भी एकाध स्थल पर हुआ है—

'अरे वे अपलक चार नयन आठ आठ आँसू रोते निरुपाय ।।

भाषा में सर्वत्र लाक्षणिक प्रयोग की प्रचुरता है ।

शैली—पन्तजी की शैली अंग्रेजी, संस्कृत तथा बंगला के कवियों से प्रभावित 'गीतात्मक—मुक्त शैली' है। इसमें सरसता, संगीतात्मकता तथा व्यंजना शक्ति की प्रधानता है।

अलंकार तथा छन्द—'वाणी मेरी चाहिए तुझे क्या अलंकार' को मानने वाले पन्त ने भी स्थान स्थान पर श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वनि चित्रण आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। पर ये इनकी कविता का भार रूप न होकर भावों को व्यक्त करने में सहायता देते हैं। इनकी रचनाओं में तुकान्त अतुकान्त स्वच्छन्द और मुक्तक सभी प्रकार के छन्द पाये जाते हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भाषा, भाव, कल्पना सभी दृष्टियों से पन्तजी छायावाद, रहस्यवाद और प्रगतिवाद के उन्नायक कवि हैं और इनके द्वारा कविता-कामिनी का जो श्रृंगार हुआ है, वह मानवकृत होते हुए भी अतीन्द्रिय और अलौकिक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सारांश

जन्म संवत् तथा स्थान—	सं० १९५७, कौसानी, जिला अल्मोड़ा ।
पिता—	श्री गंगादत्त पन्त ।
रचनाएं—	ऊपर देखो ।
वर्ण्य विषय—	छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद, प्रकृति-प्रेम, देश प्रेम लौकिक प्रेम ।
भाषा—	संस्कृत बहुला कोमल खड़ी बोली ।
शैली—	गीतात्मक मुक्तक शैली ।
अलंकार—	श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वनि चित्रण आदि ।
छन्द—	तुकान्त, अतुकान्त, स्वच्छन्द, मुक्तक ।

श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

जीवनी व परिचय—हिन्दी में राष्ट्रीय भावनाओं को सर्व प्रथम गुंजाने वाली, ओजस्विनी कविताओं की निर्मात्री श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान का जन्म प्रयाग में संवत् १९६१ में हुआ था । इनके पिता का नाम ठाकुर रामनाथसिंह था । इनकी प्रारम्भिक शिक्षा प्रयाग में ही हुई । पन्द्रह वर्ष की अवस्था में सं० १९७६ में इनका विवाह खंडवा निवासी ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान, बी० ए०, एल-एल० बी० के साथ हुआ । विवाह के उपरान्त कुछ समय तक इन्होंने बनारस में अध्ययन किया । असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर इन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और स्वदेश सेवा का व्रत धारण किया । स्वातन्त्र्य संग्राम में भाग लेने के कारण इनको जेल यात्रा भी करनी पड़ी । मध्य प्रदेश की विधान सभा की ये सदस्या भी रही थीं । अपनी मुकुल नामक पुस्तक पर सेकसरिया पुरस्कार मिलते समय इनके जो विनम्रता सूचक भाव निस्रत हुए, वे दृष्टव्य हैं—

'हर पत्थर पर लिखा जहाँ बलिदान लक्ष्मीबाई का ।
कौन मूल्य है वहाँ सुभद्रा की कविता चतुराई का ।।''

इस कविता में तरंगित मानव हृदय की कोमल भावनाओं का इनके स्वभाव में पूर्ण परिपाक पाया जाता है । जिस प्रकार के दया, ममता पूर्ण उद्‌गार 'मेरा बचपन' (कविता) 'किस्मत्' (कहानी) में व्यक्त हुए हैं । उनका प्रकटीकरण उनके व्यवहार में भी पाया जाता था । कहा जाता है कि एक बार ये विधान सभा की बैठक में भाग लेने जाते समय मोटर यात्रा कर रही थीं । रास्ते में कुछ मुर्गी के बच्चे सामने से होकर गुजरे तो इन्होंने सावधान करते हुए कहा, "देखो ये बच्चे न दब जायें" इनकी पुकार का परिणाम यह हुआ कि मुर्गी के बच्चों को बचाने के प्रयत्न में मोटर पुलिया से टकरा गई और फलस्वरूप दया और ममता की प्रतिमूर्ति की जीवन-लीला समाप्त हो गई । इस प्रकार सम्वत् २००४ में इनकी असामयिक मृत्यु हुई ।

रचनाएँ—सुभद्रा जी ने अपनी रचानाओं में ओज और माधुर्य दोनों का सुन्दर मिश्रण किया है । इनकी कविता और कहानी दोनों ही हिन्दी के पाठकों को आकर्षित तथा प्रभावित करने में पूर्णतया समर्थ हैं । इनकी लिखी हुई निम्नलिखित रचनाएँ पाई जाती हैं ।

कविता संग्रह—मुकुल, त्रिधारा ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहानी संग्रह—बिखरे मोती, उन्मादिनी।

बाल साहित्य—सभा के खेल, सीधे-सादे चित्र।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—सुभद्राजी की कविताओं में भावों को आन्दोलित करने की अपूर्व शक्ति है।

इनकी लेखिनी से निकले हुए शब्द भावों से सच्चे प्रतिनिधि और हृदय पर चोट करने वाले हैं। इनकी रचनाओं की भाव प्रवणता के आधार पर इनको 'भाव जगत की रानी' कहा गया है। इनके वात्सल्य और दाम्पत्य प्रेम की मार्मिक चुटकियों में हृदय की सचाई और जीवन सौन्दर्य निहित है। 'झाँसी की रानी' कविता तो इनकी अमर कृति है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक उसे सोत्साह गाते नहीं अघाते।

संक्षेप में सुभद्रा जी की वाणी मुख्यत: तीन दिशाओं में प्रवाहित हुई है—

(१) राष्ट्र भक्ति (२) वात्सल्य भावना (३) प्रणय-भावना।

राष्ट्र भक्ति—सुभद्राजी राष्ट्रीय जागरण के स्वर का संचार करने वाली प्रथम महिला कवियित्री हैं। इनकी प्रसिद्धि का प्रधान कारण इनकी राष्ट्रवादिनी कविताएँ ही हैं।

इनकी देश प्रेम की रचनाओं में वास्तविक जीवन की झलक पाई जाती है। इनकी भारत माता सम्बन्धी गीता प्रेरणादायक है। 'झाँसी वाली रानी' एक वीर क्षत्राणी के ओजपूर्ण कथन की परिचायिका है। 'वीरों का कैसा हो बसन्त' तथा 'जलियाँ वाला बाग' ओजपूर्ण तथा त्याग और बलिदान की प्रेरक रचनाएँ हैं।

राष्ट्र साधना की वेदी पर इन्होंने जो अपने हृदय के भाव सुमन अर्पित किये हैं, उनके मधुमय प्रभाव-पराग ने निश्चित हो राष्ट्र के मानस को सुवासित किया है। अपनी कविताओं में सुभद्राजी ने 'अपनी ओजस्विनी और स्फूर्तिदायिनी भावनाओं द्वारा भारतीय विगत शौर्य के उज्ज्वल चित्र प्रस्तुत किये हैं। दिशाओं में मुखरित हुई हैं।

इस प्रसंग में राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत इनकी 'झाँसी की रानी' का निम्न छन्द दर्शनीय है—

सिंहासन हिल उठे राजवन्शों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नई जवानी थी,
गई हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,
बुन्देले हर बोलों में मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी॥

वात्सल्य भावना—इनकी वात्सल्यपूर्ण कविताओं में मातृ-हृदय का सहज भाव विकसित हुआ है। 'बालिका के परिचय' में व्यक्त मातृ-हृदय की तन्मयता निम्न कविता में दर्शनीय है—

मेरा मन्दिर मेरी मस्जिद,
काबा-काशी यह मेरी।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
भर कर इन्होंने खड़ी बोली के पद्य तथा गद्य के क्षेत्रों को सुरक्षित किया है। मुख्य रूप से इनका क्षेत्र पद्य है, पर इनका गद्य भी प्रौढ़ प्राञ्जल तथा भावपूर्ण है।

वर्ण्य विषय—महादेवी जी छायावाद तथा रहस्यवाद की प्रमुख कवयित्री हैं, अत: इनके काव्यों में आत्मा परमात्मा का मिलन, वियोग तथा प्रकृति के व्यापारों की छाया स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। ये संसार और मानव-जीवन को निराशा, वेदना के झूले में झूलता हुआ दिखाती हैं।

पीड़ावाद—इनकी कल्पना में सरलता, मधुरता और पीड़ा का अद्भुत समन्वय है। दूसरे शब्दों में इनका काव्य पीड़ा है और पीड़ा ही काव्य है। ये दुःख की वह बदली हैं, जो सदा ही घुमड़ती रहती है—

मैं नीर भरी दुःख की बदली !
स्पन्दन में चिर स्पन्दन बसा, क्रन्दन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते, पलकों में निर्झरिणी मचली।

× × × ×

विस्तृत नभ का कोई को...

...—सुभद्राजी की कविता की भाषा सरल तथा सुबोध खड़ी बोली है। रचनाओं में क्लिष्टता कहीं भी नहीं पाई जाती। भावों की भाँति इनकी भाषा में आडम्बर हीन प्रांजलता व प्रसाद गुण ओत-प्रोत है। अलंकार विहीन होते हुये भी उनकी भाषा में स्वाभाविक सौन्दर्य है, प्रवाह है, सजीवता है।

शैली—श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान की कविताओं की शैली में सुबोधता है। ओज, प्रसाद और माधुर्य गुणों का सम्मिलित प्रभाव इनकी रचनाओं में सर्वत्र व्याप्त है। राष्ट्रीयता प्रधान कविताओं की शैली विशेषकर ओजस्विनी और सजीव है।

छन्द—सुभद्राजी ने रसानुकूल विभिन्न तुकान्त छन्दों का प्रयोग करके अपने पाठकों की रागात्मिक वृत्ति को प्रोत्साहन दिया है। इन्होंने सीधे-साधे छन्दों में भावों की अभिव्यक्ति की है, साथ ही इन्होंने नवीनता के प्रदर्शन के लिए पुराने छन्दों का न तो तिरस्कार ही किया है और न उन्हीं में बँधकर चलना चाहा है। प्रसंग के अनुकूल परम्परागत पुराने छन्दों का व्यवहार और नये ढङ्गों के छन्दों तथा चरण व्यवस्थाओं का विधान भी इन्होंने किया है।

अलंकार—इनकी प्रवृत्ति अलंकारों के बोझ से कविता को बोझिल बनाने से मुक्त करने की ओर थी। यही कारण है कि हृदय से निकले भावों को इन्होंने सरल तथा स्वाभाविक वाणी दी है जिसमें कहीं कहीं बिना प्रयास ही अलंकारों की बौछार इनकी काव्य वृष्टि के अन्तर्गत यत्र तत्र दिखाई देती है।

श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान के जीवन एवं कार्यों के आधार पर हम इन्हें एक स्वदेश एवं साहित्य-सेविका के सम्मानित पद पर अधिष्ठित पाते हैं। इन्होंने अपने तन और मन से देश एवम् साहित्य की सेवा की है। इनके भाव बीजों से अंकुरित पद्य-पौधे अपनी स्वभाविकता, प्रभावोत्पादकता एवं ओजस्विता के कारण हिन्दी साहित्योपवन में सदा स्मरणीय रहेंगे।

सारांश

जन्म सम्वत् तथा स्थान—सम्वत् १९६१, प्रयाग।

पिता— ठा० रामनाथसिंह।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कहानी संग्रह—बिखरे मोती, उन्मादिनी ।

बाल साहित्य—सभा के खेल, सीधे-सादे चित्र ।

भाव पक्ष

वर्ण्य विषय—सुभद्राजी की कविताओं में भावों को आन्दोलित करने की अपूर्व शक्ति है ।

इनकी लेखिनी से निकले हुए शब्द भावों से सच्चे प्रतिनिधि और हृदय पर चोट करने वाले हैं । इनकी रचनाओं की भाव प्रवणता के आधार पर इनको 'भाव जगत की रानी' कहा गया है । इनके वात्सल्य और दाम्पत्य प्रेम की मार्मिक चुटकियों में हृदय की सचाई और जीवन सौन्दर्य निहित है । 'झाँसी की रानी' कविता तो इनकी अमर कृति है । बच्चे से लेकर बूढ़े तक उसे सोत्साह गाते नहीं अघाते ।

संक्षेप में सुभद्रा जी की वाणी मुख्यतः तीन दिशाओं में प्रवाहित हुई है—

(१) [illegible]

फरुखाबाद में हुआ था । इनके पिता का नाम गोविन्द प्रसाद वर्मा तथा माता का [illegible] हेमरानी देवी है । इनके पिता बड़े विद्वान तथा माता विदुषी और भक्त थी । इनके पिता की सम्प्रदायहीनता तथा दार्शनिकता और माता की भावुकता तथा आस्तिकता ने मिलकर इनके व्यक्तित्व का निर्माण किया है । बचपन में सुने हुए मीरा, तुलसी के भावमय संगीतपूर्ण पदों का इन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है ।

इनकी प्रारम्भिक शिक्षा इन्दौर में हुई । सं० १९७३ में इनका विवाह डा० स्वरूप-नारायण वर्मा के साथ हुआ । ससुराल में आकर इनकी शिक्षा बन्द हो गई, किन्तु अपने श्वसुर की मृत्यु के बाद इन्होंने पुनः पढ़ना आरम्भ कर दिया और निरन्तर प्रयत्न करने के बाद 'प्रयाग विश्व विद्यालय' से संस्कृत में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की । इसके बाद वे 'प्रयाग महिला विद्यापीठ' में प्रधानाध्यापिका के पद पर नियुक्त हुई और आज तक इसी पद पर कार्य कर रही हैं ।

रचनाएँ—श्रीमती महादेवी वर्मा अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही हिन्दी साहित्य की सेवा में संलग्न हैं । इन्होंने गद्य तथा पद्य दोनों में ही रचनाएँ की हैं । इन्हें 'नीरजा' पर ५००) का सेक्सरिया पुरुस्कार और 'यामा' पर १२००) का मंगलाप्रसाद पारितोषिक भी प्राप्त हो चुके हैं । इनकी मुख्य रचनाएँ निम्न हैं—

कविता—नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा और यामा । यामा में नीहार, रश्मि और नीरजा की कविताओं का संग्रह है ।

निबन्ध—अतीत के चल चित्र, स्मृति की रेखाएँ, श्रृङ्खला को कड़ियाँ आदि ।

आलोचना—हिन्दी का विवेचनात्मक गद्य ।

भाव-पक्ष

साहित्य सेवा—सूर, तुलसी तथा मीरा के भावुक पदों से प्रेरित होकर महादेवी ने व्रजभाषा में रचना आरम्भ की और फिर गद्य के सहारे खड़ी बोली में उतरीं । शृङ्गारमयी, अनुरागमयी, भारत जननी, 'भारत माता' तथा 'तेरी उतारूँ आरती माँ भारती' जैसी कविताओं में राष्ट्र प्रेम के साथ साथ अनन्त की वेदना और कसक के पुष्पों में अपना आँचल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
भर कर इन्होंने खड़ी बोली के पद्य तथा गद्य के क्षेत्रों को सुरक्षित किया है। मुख्य रूप से इनका क्षेत्र पद्य है, पर इनका गद्य भी प्रौढ़ प्राञ्जल तथा भावपूर्ण है।

वर्ण्य विषय—महादेवी जी छायावाद तथा रहस्यवाद की प्रमुख कवयित्री हैं, अतः इनके काव्यों में आत्मा परमात्मा का मिलन, वियोग तथा प्रकृति के व्यापारों की छाया स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। ये संसार और मानव-जीवन को निराशा, वेदना के झूले में झूलता हुआ दिखाती हैं।

पीड़ावाद—इनकी कल्पना में सरलता, मधुरता और पीड़ा का अद्भुत समन्वय है। दूसरे शब्दों में इनका काव्य पीड़ा है और पीड़ा ही काव्य है। ये दुःख की वह बदली हैं, जो सदा ही घुमड़ती रहती है—

मैं नीर भरी दुःख की बदली !
स्पन्दन में चिर स्पन्दन बसा, क्रन्दन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते, पलकों में निर्झरिणी मचली।

× × × ×

विस्तृत नभ का कोई कोना, मेरा कभी न अपना होना,
परिचय इतना, इतिहास यही, उमड़ी कल थी मिट आज चली।

दार्शनिकता—(छायावाद तथा रहस्यवाद) महादेवी जी की भावनाओं पर अद्वैतवाद तथा बौद्ध दर्शन का प्रभाव दिखाई देता है। इसका एक अद्वैत भावचित्र देखिए—

तुम सो जाओ मैं गाऊँ।
मुझको सोते युग बीते तुमको यों लोरी गाते।
अब आओ मैं पलकों में: स्वप्नों की सेज बिछाऊँ।।

पर इनका भावुक हृदय जब कभी वेदनाओं और पीड़ाओं की चोट खाकर द्वैत की ओर भी लौट आता है और ये एक शिशु की भाँति पूँछ बैठती हैं—

कहदे माँ क्या देखूँ ?
देखूँ खिलती कलियाँ, या प्यासे सूखे अधरों को,

× × × ×

या मुरझाई पलकों से झरते आँसू कण देखूँ।

महादेवी जी ने छायावाद तथा रहस्यवाद दोनों को ही एक दूसरे का पर्याय सा मान लिया है। इनका मत है कि ज्ञान से जिस दार्शनिक सत्य की प्राप्ति होती है, वह हृदय के माध्यम से अनुभव की जाती है और तभी रहस्य भाव की सृष्टि होती है। रहस्यवादियों की भाँति इनका भावुक मन कभी प्रिय-मिलन-सुख का अनुभव करता है और कभी मान, अभिसार, शृंगार आदि का विरह की स्थिति में ये प्रतीक्षा करती पाई जाती हैं—

मैं कण कण में डाल रही अलि।
आँसू के मिस प्यार किसी का।।
मैं पलकों में पाल रही हूँ।
यह सपना सुकुमार किसी का।।

प्रकृति चित्रण—अन्य छायावादी और रहस्यवादी कवियों की भाँति महादेवी वर्मा ने अपने काव्यों में प्रकृति का सुन्दर तथा संश्लिष्ट चित्रण किया है। इन्होंने अधिकतर प्रकृति को उद्दीपन के ही रूप में ही लिया है। इसमें इन्हें कभी अपने प्रिय का आभास हुआ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
हैं, कभी प्रिय-मिलन के लिए आवश्यक सामग्री मिली है, कभी मनोभावों की चेतना प्राप्त हुई है और कभी इनके भाव उसे आधार मान कर आगे बढ़े हैं। इसी प्रकाश में प्रातःकाल का एक चित्र दर्शनीय है—

चुभते ही तेरा अरुण बान।
बहते कन कन से फूट फूट मधु के निर्झर से सजल गान,
थाह इन कनक रश्मियों में अथाह लेता हिलोर तम-सिन्धु जाग,
बुद-बुद के बहते चलते अपार उनमें विहंगों के मधुर राग।

गद्य साधना—महादेवी जी एक सफल गद्य लेखिका भी हैं। पद्य के क्षेत्र में आध्यात्म के लोक में विचरण करने वाली महादेवीजी गद्य के क्षेत्र में यथार्थ की पुष्टि करती हुई दिखलाई देती है। पद्य के क्षेत्र में इनकी रचनाएँ तीन प्रकार की हैं। एक वे हैं जिनमें इन्होंने अपनी यात्राओं का वर्णन किया है। ये वर्णन अत्यन्त सजीव तथा प्रभावोत्पादक हैं।

दूसरे प्रकार की रचनाओं में साहित्यिक निबन्ध आते हैं। इन-निबन्धों में विषय का विवेचन अत्यन्त प्रौढ़ता, गम्भीरता तथा तर्कमयता के साथ किया गया है। आधुनिक कवि यामा और दीप शिखा की भूमिकाएँ इसका उदाहरण हैं।

तीसरे प्रकार की रचनाओं में इनके सामाजिक निबन्ध आते हैं। स्मृति की रेखाएँ, अतीत के चलचित्र और शृङ्गार की कड़ियाँ इसी प्रकार की रचनाएँ हैं, इनमें दरिद्र जनता तथा उपेक्षित और निम्न स्तर के मनुष्यों के प्रति इनकी सहानुभूति प्रकट होती है।

कला-पक्ष

भाषा—(पद्य) काव्य के क्षेत्र में इनकी प्रारम्भिक रचनाएँ ब्रजभाषा और बाद की खड़ी बोली में हैं। इनकी खड़ी बोली शुद्ध मधुर और कोमल है। इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। किन्तु भाषा को मधुर तथा कोमल बनाने के लिए कहीं कहीं शब्दों को मनमाने ढंग से तोड़ा-मोड़ा गया है। सूक्ष्मतम भावनाओं का चित्रण होने के कारण इनकी भाषा में संकेतात्मकता है, जिससे यह अस्पष्ट सी हो गई है।

गद्य—गद्य के क्षेत्र में इनकी भाषा काव्यात्मक खड़ी बोली है। संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता होने पर भी इसके प्रवाह में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती। भावों की उच्चता के कारण इसमें कहीं कहीं दुरूहता आ गई है। विषय के अनुसार यह कहीं चित्रमय, कहीं ओजपूर्ण तथा कहीं बिल्कुल सीधी-साधी होती है।

शैली—(पद्य) पद्य के क्षेत्र में श्रीमती वर्मा जी की शैली का धीरे-धीरे विकास हुआ है। संक्षेप में हम इनकी शैली को 'भावात्मक गीत शैली' कह सकते हैं। इसमें व्यंजना, लाक्षणिक प्रयोगों तथा समासोक्तियों के कारण अस्पष्टता तथा दुरूहता आ गई है, पर वह सर्वत्र मधुर तथा कोमल है।

गद्य—गद्य के क्षेत्र में इनकी तीनों प्रकार की रचनाओं में तीन प्रकार की शैली दृष्टिगोचर होती हैं। सब प्रकार की शैलियों पर इनके व्यक्तित्व की छाप है। संक्षेप में ये निम्न हैं—

चित्र प्रधान वर्णनात्मक शैली—यात्रा सम्बन्धी लेखों, स्मृति की रेखाओं तथा अतीत के चलचित्रों में चित्र प्रधान तथा वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है। इससे भाषा सरल तथा प्रवाहपूर्ण है। इसमें चित्रमयता तथा कवित्तपूर्ण कल्पना का मधुर मिलन है। 'बद्रीनाथ की यात्रा' से उद्धृत इसका निम्न उदाहरण देखिए—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

"श्वेत कमल की पंखुरियों के समान लगने वाले पर्वतों के बीच में वह पुरी हिमालय के हृदय में छिपी इच्छा के समान जान पड़ी.........जहाँ तक दृष्टि जाती थी, निस्पन्द समाज में मग्न तपस्वी जैसे आडम्बर हीन सूनी पृथ्वी ही दिखाई देती थी, और उतने ही निश्चल तथा उज्ज्वल हिमालय के शिखर ऐसे लगते थे मानो किसी शरद पूर्णिमा की रात्रि में पहरा देते-देते चाँदनी समेत जमकर जड़ हो गये हैं।"

विवेचनात्मक शैली—महादेवीजी के साहित्यिक निबन्धों में विवेचनात्मक शैली के दर्शन होते हैं। इसमें अपनी मान्यताओं को प्रकट करने के लिए तर्क का सहारा लिया गया है। इसमें वाक्य कहीं लम्बे हैं और कहीं छोटे हैं। इस प्रकार की शैली का एक उदाहरण देखिए—

दुःख मेरे निकट जीवन का एक खुला काव्य है जो सारे संसार को एक सूत्र में बाँध रखने की क्षमता रखता है। हमारे असंख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीढ़ी तक भी न पहुँचा सकें, किन्तु हमारा एक बूँद आँसू भी जीवन को अधिक मधुर उर्वर बनाये बिना नहीं गिर सकता। मनुष्य सुख को अकेला भोगना चाहता है, परन्तु दुख में सबको बोर कर विश्व जीवन में अपने जीवन को, विश्व वेदना में अपनी वेदना को इस प्रकार मिला देना जिस प्रकार एक जल विन्दु समुद्र में मिल जाता है कवि का मोक्ष है।

ओजपूर्ण विद्रोहात्मक शैली—सामाजिक निबन्धों में इस शैली के दर्शन होते हैं। सामाजिक विषमताओं तथा अत्याचारों को देखकर वर्माजी का हृदय कराह उठा जिससे इनकी शैली में कहीं करुणा, कहीं सहानुभूति और कहीं विद्रोह भावना के दर्शन होते हैं। इसमें स्थान-स्थान पर व्यंग के भी दर्शन होते हैं। इसमें भाषा सरल तथा ओजपूर्ण है।

संक्षेप में महादेवी जी सरस्वती की वीणा का वह अनुपम बरदान है, जो अपनी कलात्मक तथा भाव प्रवणता के मधुर संगीत की अमृत वर्षा से मानव हृदय को रस सिक्त कर रही हैं।

साराँश

...... आनन्द ...... ।
चूम कर प्रति रोम के सिर पर बढ़ा वरदान प्रभु का,
रश्मि अंचल में पिता का स्नेह आशीर्वाद आया ॥

कला पक्ष

भाषा—दिनकर की भाषा शुद्ध खड़ी बोली है जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्द पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। कहीं कहीं पर उर्दू के प्रचलित शब्द भी पाये जाते हैं। इनके वाक्यों में कहीं पर अपूर्ण क्रियाओं के दोष भी पाये जाते हैं। इनकी शैली में ओज और प्रसाद का सुन्दर सम्मिश्रण है। इनकी कविता में क्लिष्ट कल्पनाओं का अभाव सा है।

शैली—दिनकर जी के काव्यों में निम्न शैलियों के दर्शन होते हैं—

(१) विवरणात्मक शैली—प्रबन्ध काव्यों में,
(२) भावात्मक शैली—प्रगतिवाद गीतों में,
(३) उद्बोधन शैली—उद्बोधन गीतों में,

अलङ्कार—आधुनिक काल के अनुकूल इनका ध्यान अलङ्कारों की ओर नहीं है, फिर भी इनकी कविता में स्वाभाविक रीति से उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा रूपकातिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय आदि अलंकारों का प्रयोग हो गया है। इनके छन्द भी आधुनिक काल के अनुरूप ही हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रामधारीसिंह 'दिनकर'

जीवनी तथा परिचय—श्री रामधारीसिंह 'दिनकर' का जन्म संवत् १९६५ में मुंगेर जिले के सिमरिया नामक ग्राम में हुआ था। इन्होंने पटना विश्व विद्यालय से बी० ए० (ऑनर्स) पास किया है। बचपन से ही इन्हें कविता लिखने का शौक है। इसके ही फलस्वरूप मैट्रिक पास करते ही इनकी 'प्रण-भंग' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी।

रचनाएँ—ये गद्य-पद्य दोनों में ही लिखते हैं। प्रण-भंग, रेणुका, हुंकार विद्रोह-निशा, रसवन्ती, द्वन्द्व गीत, कलिंग-विजय, कुरुक्षेत्र, कामधेनी, हमारे सामने की हिन्दी कविता संस्कृति के चार अध्याय आदि इनकी गद्य पद्यमय प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

वर्ण्य विषय—(देश प्रेम) वर्तमान काल में देश-प्रेम तथा राष्ट्रीयता की भावनाओं को जाग्रत करने वाले कवियों में दिनकर जी का नाम अग्रणी है। इनकी कविता में देशव्यापी जागरण का तीव्र स्वर है। भारत के अतीत का स्वर्णिम इतिहास, उनकी प्राचीनता, संस्कृति तथा आधुनिक काल का चतुर्दिक पतन दिनकर जी के हृदय से रह रह कर विद्रोह सा उत्पन्न कर देते हैं और ये पुकार उठते हैं—

ओ मगध ? कहाँ मेरे अशोक, वह चन्द्रगुप्त बलधाम कहाँ ?
× × × ×
री कपिलवस्तु कह बुद्धदेव के वे मंगल उपदेश कहाँ ?
× × ×
वैशाली के भग्नावशेष से पूँछ लिच्छवी शान कहाँ ?

और फिर वे वही चाहते हैं—

कहदे शंकर से आज करें, वे प्रलय नृत्य फिर एक बार,
सारे भारत में गूँज उठे, 'हर-हर बम बम' का महोच्चार।
ले अंगड़ाई उठ हिले धरा, कर निज विराट स्वर में निनाद,
तू शैल राष्ट्र ! हुँकार भरे फट जाय कुहा, भागे प्रमाद !

गद्य—गद्य के क्षेत्र में इनकी भाषा काव्यात्मक खड़ी बोली है। संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता होने पर भी इसके प्रवाह में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती। भावों की उच्चता के कारण इसमें कहीं कहीं दुरूहता आ गई है। विषय के अनुसार यह कहीं चित्रमय, कहीं ओजपूर्ण तथा कहीं बिल्कुल सीधी-साधी होती है।

शैली—(पद्य) पद्य के क्षेत्र में श्रीमती वर्मा जी की शैली का धीरे-धीरे विकास हुआ है। संक्षेप में हम इनकी शैली को 'भावात्मक गीत शैली' कह सकते हैं। इसमें व्यंजना, लाक्षणिक प्रयोगों तथा समासोक्तियों के कारण अस्पष्टता तथा दुरूहता आ गई है, पर वह सर्वत्र मधुर तथा कोमल है।

गद्य—गद्य के क्षेत्र में इनकी तीनों प्रकार की रचनाओं में तीन प्रकार की शैली दृष्टिगोचर होती हैं। सब प्रकार की शैलियों पर इनके व्यक्तित्व की छाप है। संक्षेप में ये निम्न हैं—

चित्र प्रधान वर्णनात्मक शैली—यात्रा सम्बन्धी लेखों, स्मृति की रेखाओं तथा अतीत के चलचित्रों में चित्र प्रधान तथा वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है। इससे भाषा सरल तथा प्रवाहपूर्ण है। इसमें चित्रमयता तथा कवित्तपूर्ण कल्पना का मधुर मिलन है। 'बद्रीनाथ की यात्रा' से उद्धृत इसका निम्न उदाहरण देखिए—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यथार्थवाद को चित्रित करते हुए भी ये अपने आदर्श को कभी नहीं भूलते हैं। इनकी तो यही आकांक्षा रहती है कि हम अपने प्राचीन आदर्श को ही किसी प्रकार प्राप्त करलें और इसीलिए ये उपदेश देते हुए सुने जाते हैं—

पीले विष का घूँट बहक तब मजा सुरा पीने का है,
तनकर बिजली वार सहे यह गर्व नए सीने का है,
सिर की कीमत का भान हुआ तब त्याग कहाँ ? बलिदान कहाँ ?
गरदन इज्जत पर हिये पिये तब स्वाद यहाँ जीने का है।

प्रकृति चित्रण—छायावाद के युग में जन्म लेने के कारण दिनकर जी के 'प्रकृति चित्रण' पर छायावाद का प्रभाव पड़ा है, और कहीं-कहीं पर प्रकृति के साथ इनका पूर्ण तादात्म्य देखा जाता है। 'ऊषा' को एक अभिमानिनी नायिका की भाँति देखकर ये उससे पूछ बैठते हैं—

कंचन-थाल सजा सौरभ से ओ फूलों की रानी,
अलसायी सी चली कहो करने किसकी अगवानी।
वैभव का उन्माद, रूप की यह कैसी नादानी,
ऊषे ! भूल न जाना ओस की करुणामयी कहानी॥
× × × ×
और गाल के फूलों सर क्यों तू भूली अलबेली,
बिना बुलाये ही आती होगी वह मौत सहेली॥

कहीं कहीं पर आलम्ब रूप में भी प्रकृति चित्रण मिलता है और उसके अन्तस् में रहस्यवादियों की भाँति उस 'भगवान' की भावना भी पाई जाती है। इस प्रकार का एक प्रातः कालीन चित्र देखिये—

व्योम सर में हो उठा विकसित अरुण आलोक शतदल,
चिर-दुःखी धरणी विभा में हो रही आनन्द-विह्वल।
चूम कर प्रति रोम के सिर पर बढ़ा वरदान प्रभु का,
रश्मि अंचल में पिता का स्नेह आशीर्वाद आया॥

कला पक्ष

भाषा—दिनकर की भाषा शुद्ध खड़ी बोली है जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्द पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। कहीं कहीं पर उर्दू के प्रचलित शब्द भी पाये जाते हैं। इनके वाक्यों में कहीं पर अपूर्ण क्रियाओं के दोष भी पाये जाते हैं। इनकी शैली में ओज और प्रसाद का सुन्दर सम्मिश्रण है। इनकी कविता में क्लिष्ट कल्पनाओं का अभाव सा है।

शैली—दिनकर जी के काव्यों में निम्न शैलियों के दर्शन होते हैं—

(१) विवरणात्मक शैली—प्रबन्ध काव्यों में,
(२) भावात्मक शैली—प्रगतिवाद गीतों में,
(३) उद्बोधन शैली—उद्बोधन गीतों में,

अलङ्कार—आधुनिक काल के अनुकूल इनका ध्यान अलङ्कारों की ओर नहीं है, फिर भी इनकी कविता में स्वाभाविक रीति से उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा रूपकातिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय आदि अलंकारों का प्रयोग हो गया है। इनके छन्द भी आधुनिक काल के अनुरूप ही हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भाषा भाव तथा शैली सभी दृष्टियों से दिनकर जी हिन्दी साहित्य के 'दिनकर' ही हैं और उनकी वाग्रश्मियों द्वारा युवकों के हृत्तड़ागों में राष्ट्र प्रेम रूपी कमल खिल चुके हैं और अनन्तकाल तक खिलते रहेंगे।

सारांश

जन्म संवत तथा स्थान—१९६५, सिमरिया, जिला मुँगेर।

शिक्षा— बी० ए० (ऑनर्स)

रचनाएँ— प्रणभंग, रेणुका, हुंकार, विद्रोह, शिक्षा, रसवन्ती द्वन्द-गीत, कलिंग विजय, कामधेनी, हमारे सामने की हिन्दी कविता, संस्कृत के चार अध्याय।

वर्ण्य विषय—प्रगतिवाद, राष्ट्र-प्रेम, भारत के अतीत का स्वर्णिम इतिहास, आधुनिक काल का पतन, किसानों मजदूरों की दयनीय दशा तथा उच्च वर्ग की शोषण नीति का चित्रण, प्रकृति-चित्रण।

भाषा— संस्कृत बहुला शुद्ध खड़ी बोली, जिसमें उर्दू के प्रचलित शब्द भी मिले हुये हैं।

शैली— विवरणात्मक, भावात्मक, उद्‌बोधनात्मक।

अलंकार— उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, रूपकातिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय।

हिन्दी गद्य के आलोक स्तम्भ

(बालकृष्ण भट्ट)

जीवनी तथा परिचय—भट्टजी का जन्म संवत् १९०१ में प्रयाग में हुआ था। इनकी शिक्षा का आरम्भ घर पर ही संस्कृत में हुआ था। कुछ समय बाद ये अंग्रेजी पढ़ने के लिए स्थानीय मिशन स्कूल में प्रविष्ट हो गये, पर वहाँ के पादरी हैडमास्टर से अनबन हो जाने के कारण स्कूल छोड़कर घर पर ही संस्कृत का अध्ययन करने लगे। इसी समय इन्हें 'जमुना मिशन स्कूल' में अध्यापक का काम मिल गया, पर धार्मिक मतभेद होने के कारण ये यहाँ भी न टिक सके। इसके बाद ये काफी समय तक 'कायस्थ-पाठशाला कालेज' में संस्कृत के अध्यापक रहे।

इन्होंने हिन्दी गद्य का प्रचार करने के लिये ही सम्वत् १९३३ वि० से 'हिन्दी-प्रदीप' नाम का पत्र निकाला। इस पत्र के द्वारा इन्होंने ३२ वर्षों तक 'सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिज्ञ, नतिक आदि विभिन्न प्रकार के निबन्धों, उपन्यासों नाटकों, आदि का प्रचार किया। इनकी मृत्यु संवत् १९७१ में हुई।

रचनाएँ—भट्टजी के निबन्धों के संग्रह 'साहित्य सुमन' और 'भट्ट निबन्धावली' के नाम से प्रकाशित हुए हैं। इन्होंने 'सौ अजान और एक सुजान' तथा 'नूतन ब्रह्मचारी' नामक दो उपन्सास और 'बाल-विवाह' 'चन्द्रसेन' आदि नाटक भी लिखे हैं। इन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'माइकेल मधुसूदन दत्त' द्वारा बंग भाषा में लिखित 'पद्मावती' तथा 'शर्मिष्ठा' नामक दो नाटकों का हिन्दी में अनुवाद भी किया है।

वर्ण्य विषय—भट्टजी ने साधारण तथा मननशील दोनों ही प्रकार के विषयों पर साहित्यक लेख लिखे हैं। आँख, कान, नाक, बातचीत जैसे साधारण विषयों पर लिखे हुए मौलिक तथा प्रभावपूर्ण लेख भट्टजी की सुरुचि, साहित्य मर्मज्ञता तथा बहु विधि-वर्णन शीलता के अच्छे उदाहरण हैं। 'आत्म निर्भरता', 'चारु-चरित्र' जैसे मननशील विषयों पर लिखे हुए लेखों में हास्य तथा गाम्भीर्य का अच्छा सम्मिश्रण मिलता है। वास्तव में भारतेन्दु युग में 'पं० बालकृष्ण भट्ट' तथा 'पं० प्रतापनारायण मिश्र' ही ऐसे साहित्कार हैं जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल से साहित्यिक ढंग के निबन्ध लिखकर हिन्दी में साहित्यिक निबन्ध लिखने का सूत्रपात किया है। साहित्यिकता की दृष्टि से भट्टजी के निबन्ध मिश्र जी के हुए ... लेख हैं। को कला का अनुसर... तथा सामाजिक सुधारों की सामाजिक भावनाओं से पूर्ण ... परिचयात्मक तथा भावात्मक।

मिश्रजी के निबन्धों में विषय की पर्याप्त विविधता मिलती है। इनके 'ब्राह्मण' पत्र में निकलने वाले निबन्ध प्रायः हर प्रकार के विषय पर लिखे गये हैं। जैसे—घरे के लत्ता बिनें, कनात का ढोल बाधे, समझदार की मौत है, बात, मनोयोग, वृद्ध, भौं, शिवमूर्ति, सोने का अण्डा और पौंड आदि। बात, दाँत भौं आदि पर लिखे हुये इनके लेख साहित्यिक भाषा में हैं और उच्चकोटि के हैं। अन्य लेख सामाजिक तथा धार्मिक विषयों पर हैं और चलती हुई भाषा में हैं।

शैली—मिश्रजी स्वभाव से ही विनोद तथा हास्य प्रिय थे। अतः इनमें अधिकांश निबन्धों में स्थान स्थान पर विनोद पूर्ण व्यंग तथा वक्रता के दर्शन होते हैं। कुछ निबन्धों में विषय के अनुकूल गम्भीरता भी दिखाई देती है, पर ऐसे निबन्धों की संख्या गिनी चुनी है। इस प्रकार मिश्रजी की शैली के दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। (१) विनोद पूर्ण (२) गम्भीर।

विनोद पूर्ण शैली—इस शैली में भी कहीं तो हास्य तथा विनोद की प्रधानता रहती है और कहीं व्यंग और कटाक्ष की। व्यंग को लाने के लिये ये पूर्वीपन की भी कोई परवाह ...ने हैं और बैसवारे की ग्रामीण कहावतें तथा शब्द भी बेधड़क लिख जाते हैं ही कल्पना, मिथ्या नाशवान और ... हैं। इस प्रसंग मे

भट्टजी की शैली में स्थान स्थान पर हास्य तथा व्यङ्ग के दर्शन होते हैं। विषयानुकूल कहीं तो यह व्यंग अत्यन्त ही मार्मिक तथा चुटीला हो जाता है। प्रायः सर्वत्र ही वाक्यों में सरसता लाने के लिए मुहावरों का भरपूर प्रयोग किया है। "संसार कभी एक सा न रहा' ने मानव जीवन के परिवर्तन पर एक व्यङ्ग देखिए—

× × × × हौले हौले! पूर्ण तरुनाई तक पहुँच नीचे को खिसकने लगे, गदह-पच्चीसी को लाँघ चहेल साली को भी डाँक अधेड़ की गिनती में आ गये। बस अब खिसके सो खिसके। बाल चाँदी होने लगे, सौ-सौ तरह के खिजाब कर पुराने ठीकरे पर नई कलई की भाँति पहले का सा कुदरती रङ्ग फिर लाना चाहते हैं।

भाषा—ये हिन्दी को किसी वर्ग विशेष की भाषा न रखकर अंग्रेजी और उर्दू पढ़े लिखे बाबुओं तथा साधारण जनता तक पहुँचाना चाहते थे। अतः इनकी भाषा में उर्दू तथा अंग्रेजी शब्दों की भरमार है। कहीं-कहीं तो हिन्दी शब्दों के आगे उनके अर्थ को समझने के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिए कोष्टक में उनके पर्याप्त वाचक Education, standard जैसे शब्दों को लिख दिया है। जहाँ तहाँ संस्कृत शब्दों के साथ साथ 'नाज-नखरा, कौमियत' जैसे अरबी फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। कहावतें और मुहावरे भी इनकी भाषा में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। इनकी भाषा में खड़ी बोली का शुद्ध और संस्कृत रूप नहीं मिलता। जहाँ-तहाँ भाषा के पूर्वी प्रयोग मिलते हैं। ये प्रायः 'समझा बुझाकर' के स्थान पर 'समुझाय बुझाय' लिखा करते थे। फिर भी इनमें अपने समकालीन मिश्रजी जैसी ग्रामीणता नहीं मिलती और वह नागरिकता की ओर झुकी हुई है। हिन्दी में कोष्ठकों का प्रयोग सर्वप्रथम भट्टजी ने ही किया है। इन्होंने विराम-चिन्हों का भी प्रयोग किया है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भारतेन्दु काल के लेखकों में भट्टजी एक उच्च स्थान के अधिकारी हैं और हिन्दी के सर्व प्रथम साहित्यिक निबन्ध लेखक हैं।

सारांश

वर्ण्य विषय—	प्रगतिवाद, राष्ट्र-प्रेम, भारत के अतीत का स्वर्णिम इतिहास, आधुनिक काल का पतन, किसानों मजदूरों की दयनीय दशा तथा उच्च वर्ग की शोषण नीति का चित्रण, प्रकृति-चित्रण।
भाषा—	संस्कृत बहुला शुद्ध खड़ी बोली, जिसमें उर्दू के प्रचलित शब्द भी मिले हुये हैं।
शैली—	विवरणात्मक, भावात्मक, उद्‌बोधनात्मक।
अलंकार—	उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, रूपकातिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय।

हिन्दी गद्य के आलोक स्तम्भ

(बालकृष्ण भट्ट)

जीवनी तथा परिचय— भट्टजी का जन्म संवत् १९०१ में प्रयाग में हुआ था। इनकी शिक्षा का आरम्भ घर पर ही संस्कृत में हुआ था। कुछ समय बाद ये अंग्रेजी पढ़ने के लिए स्थानीय मिशन स्कूल में प्रविष्ट हो गये, पर वहाँ के पादरी हैडमास्टर से अनबन हो जाने के कारण स्कूल छोड़कर घर पर ही संस्कृत का अध्ययन करने लगे। इसी समय इन्हें 'जमुना मिशन स्कूल' में अध्यापक का काम मिल गया, पर धार्मिक मतभेद होने के कारण ये यहाँ भी न टिक सके। इसके बाद ये काफी समय तक 'कायस्थ-पाठशाला कालेज' में संस्कृत के अध्यापक रहे।

इन्होंने हिन्दी गद्य का प्रचार करने के लिये ही सम्वत् १९३३ वि० से 'हिन्दी-प्रदीप' नाम का पत्र निकाला। इस पत्र के द्वारा इन्होंने ३२ वर्षों तक 'सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिज्ञ, नतिक आदि विभिन्न प्रकार के निबन्धों, उपन्यासों नाटकों, आदि का प्रचार किया। इनकी मृत्यु संवत् १९७१ में हुई।

रचनाएँ— भट्टजी के निबन्धों के संग्रह 'साहित्य सुमन' और 'भट्ट निबन्धावली' के नाम से प्रकाशित हुए हैं। इन्होंने 'सौ अजान और एक सुजान' तथा 'नूतन ब्रह्मचारी' नामक दो उपन्यास और 'बाल-विवाह' 'चन्द्रसेन' आदि नाटक भी लिखे हैं। इन्होंने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचनाएँ—इन्होंने गद्य-पद्य की लगभग ४० पुस्तकों की रचना की है। जिसमें निम्न मुख्य हैं।

निबन्ध संग्रह—हठी हरमी, कलि-प्रभाव, गो संकट समय।

नाटक—भारत दुर्दशा, कलि कौतुक।

लावनी—संगीत शाकुन्तल।

वर्ण्य विषय—मिश्रजी भारतेन्दु काल के प्रमुख लेखक हैं। इनकी प्रसिद्धि के प्रधान कारण इनके निबन्ध ही हैं। हास्य तथा व्यंग से परिपूर्ण इनके जैसे निबन्ध हिन्दी में बहुत समय बाद तक भी न लिखे जा सके। इनकी कविता में उपदेशात्मकता अधिक पाई जाती है। इसमें कवि ने देश की तत्कालीन दशा का चित्र खींचा है। क्षणिक प्रेरणा से पूर्ण होते हुए भी इसमें रागात्मक भावों को प्रबुद्ध करने की शक्ति अधिक नहीं है। नाटकों में भारतेन्दु की कला का अनुसरण किया गया है। इनमें मिश्रजी की प्रवृति प्रधानतः उन्हें राष्टीयता तथा सामाजिक सुधारों की सामाजिक भावनाओं से परिपूर्ण करने में ही लक्षित होती है।

मिश्रजी के निबन्धों में विषय की पर्याप्त विविधता मिलती है। इनके 'ब्राह्मण' पत्र में निकलने वाले निबन्ध प्रायः हर प्रकार के विषय पर लिखे गये हैं। जैसे—घरे के लत्ता बिनें, कनात का ढोल बाधे, समझदार की मौत है, बात, मनोयोग, वृद्ध, भौं, शिवमूर्ति, सोने का अण्डा और पौंड आदि। बात, दाँत भौं आदि पर लिखे हुये इनके लेख साहित्यिक भाषा में हैं और उच्चकोटि के है। अन्य लेख सामाजिक तथा धार्मिक विषयों पर हैं और चलती हुई भाषा में हैं।

शैली—मिश्रजी स्वभाव से ही विनोद तथा हास्य प्रिय थे। अतः इनमें अधिकांश निबन्धों में स्थान स्थान पर विनोद पूर्ण व्यंग तथा वक्रता के दर्शन होते हैं। कुछ निबन्धों में वि[illegible]य के अनुकूल ग[illegible]ीरता भी दिखाई देती है, पर ऐसे निबन्धों की संख्या गिनी चुनी है। इस प्रकार मिश्रजी की शैली के दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। (१) विनोद पूर्ण (२) गम्भीर।

विनोद पूर्ण शैली—इस शैली में भी कहीं तो हास्य तथा विनोद की प्रधानता रहती है और कहीं व्यंग और कटाक्ष की। व्यंग को लाने के लिये ये पूर्वीपन की भी कोई परवा[illegible] [illegible]ने हैं और बैसवारे की ग्रामीण कहावतें तथा शब्द भी बेधड़क लिख जाते हैं [illegible] ही कल्पना, मिथ्या नाशवान और [illegible] हैं। इस प्रसंग मे

भट्टजी की शैली में स्थान स्थान पर हास्य तथा व्यङ्ग के दर्शन होते हैं। विषयानुकूल कहीं तो यह व्यंग अत्यन्त ही मार्मिक तथा चुटीला हो जाता है। प्रायः सर्वत्र ही वाक्यों में सरसता लाने के लिए मुहावरों का भरपूर प्रयोग किया है। "संसार कभी एक सा न रहा' ने मानव जीवन के परिवर्तन पर एक व्यङ्ग देखिए—

× × × × हौले हौले! पूर्ण तरुनाई तक पहुँच नीचे को खिसकने लगे, गदह-पच्चीसी को लाँघ चहेल साली को भी डाँक अधेड़ की गिनती में आ गये। बस अब खिसके सो खिसके। बाल चाँदी होने लगे, सौ-सौ तरह के खिजाब कर पुराने ठीकरे पर नई कलई की भाँति पहले का सा कुदरती रङ्ग फिर लाना चाहते हैं।

भाषा—ये हिन्दी को किसी वर्ग विशेष की भाषा न रखकर अंग्रेजी और उर्दू पढ़े लिखे बाबुओं तथा साधारण जनता तक पहुँचाना चाहते थे। अतः इनकी भाषा में उर्दू तथा अंग्रेजी शब्दों की भरमार है। कहीं-कहीं तो हिन्दी शब्दों के आगे उनके अर्थ को समझने के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिए कोष्टक में उनके पर्याप्त वाचक Education, standard जैसे शब्दों को लिख दिया है। जहाँ तहाँ संस्कृत शब्दों के साथ साथ 'नाज-नखरा, कौमियत' जैसे अरबी फारसी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। कहावतें और मुहावरे भी इनकी भाषा में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। इनकी भाषा में खड़ी बोली का शुद्ध और संस्कृत रूप नहीं मिलता। जहाँ-तहाँ भाषा के पूर्वी प्रयोग मिलते हैं। ये प्रायः 'समझा बुझाकर' के स्थान पर 'समुझाय बुझाय' लिखा करते थे। फिर भी इनमें अपने समकालीन मिश्रजी जैसी ग्रामीणता नहीं मिलती और वह नागरिकता की ओर झुकी हुई है। हिन्दी में कोष्ठकों का प्रयोग सर्वप्रथम भट्टजी ने ही किया है। इन्होंने विराम-चिन्हों का भी प्रयोग किया है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भारतेन्दु काल के लेखकों में भट्टजी एक उच्च स्थान के अधिकारी हैं और हिन्दी के सर्व प्रथम साहित्यिक निबन्ध लेखक हैं।

सारांश

वर्ण्य विषय— प्रगतिवाद, राष्ट्र-प्रेम, भारत के अतीत का स्वर्णिम इतिहास, आधुनिक काल का पतन, किसानों मजदूरों की दयनीय दशा तथा उच्च वर्ग की शोषण नीति का चित्रण, प्रकृति-चित्रण।

भाषा— संस्कृत बहुला शुद्ध खड़ी बोली, जिसमें उर्दू के प्रचलित शब्द भी मिले हुये हैं।

शैली— विवरणात्मक, भावात्मक, उद्बोधनात्मक।

अलंकार— उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, रूपकातिशयोक्ति, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय।

हिन्दी गद्य के आलोक स्तम्भ

(बालकृष्ण भट्ट)

जीवनी तथा परिचय— भट्टजी का जन्म संवत् १९०१ में प्रयाग में हुआ था। इनकी शिक्षा का आरम्भ घर पर ही संस्कृत में हुआ था। कुछ समय बाद ये अंग्रेजी पढ़ने के लिए

जीवनी तथा परिचय— मिश्र जी का जन्म संवत् १९१३ में कानपुर में हुआ था। इनके पिता प० संकटाप्रसाद एक प्रसिद्ध ज्योतिषी थे और अपने पुत्र को भी ज्योतिषी ही बनाना चाहते थे, पर इनका मन ज्योतिष के पढ़ने में न लगा। इनके पिता ने विभिन्न स्कूलों में भेजकर इन्हें अंग्रेजी पढ़ाना चाहा, पर इनका मन स्कूली शिक्षा में भी न लगा। लाचार होकर इनके पिता जी ने इन्हें घर पर ही हिन्दी तथा संस्कृत पढ़ाना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे इन्होंने हिन्दी तथा संस्कृत के अतिरिक्त उर्दू, फारसी, बंगाली आदि भाषाओं में भी अच्छी योग्यता प्राप्त करली। 'लावनियों' से इन्हें विशेष प्रेम था। और लावनियों की संगति से इन्हें 'कविता' करने का शौक लगा। आगे चलकर ये लेख भी लिखने लगे और साहित्य सेवा में जी जान से जुट गए। इन्होंने 'ब्राह्मण' नामक मासिक पत्र का सम्पादन बड़ी योग्यता तथा लगन के साथ किया और घाटा उठाकर १० वर्ष तक पत्र को आठ आने के वार्षिक मूल्य पर ग्राहकों को देते रहे। इनकी मृत्यु ३८ वर्ष की अल्पायु में सम्वत् १९५१ में हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रचनाएँ—इन्होंने गद्य-पद्य की लगभग ४० पुस्तकों की रचना की है। जिसमें निम्न मुख्य हैं।

निबन्ध संग्रह—हठी हम्मीर, कलि-प्रभाव, गो संकट समय।

नाटक—भारत दुर्दशा, कलि कौतुक।

लावनी—संगीत शाकुन्तल।

वर्ण्य विषय—मिश्रजी भारतेन्दु काल के प्रमुख लेखक हैं। इनकी प्रसिद्धि के प्रधान कारण इनके निबन्ध ही हैं। हास्य तथा व्यंग से परिपूर्ण इनके जैसे निबन्ध हिन्दी में बहुत समय बाद तक भी न लिखे जा सके। इनकी कविता में उपदेशात्मकता अधिक पाई जाती है। इसमें कवि ने देश की तत्कालीन दशा का चित्र खींचा है। क्षणिक प्रेरणा से पूर्ण होते हुए भी इसमें रागात्मक भावों को प्रबुद्ध करने की शक्ति अधिक नहीं है। नाटकों में भारतेन्दु की कला का अनुसरण किया गया है। इनमें मिश्रजी की प्रवृति प्रधानतः उन्हें राष्टीयता तथा सामाजिक सुधारों की सामाजिक भावनाओं से परिपूर्ण करने में ही लक्षित होती है।

मिश्रजी के निबन्धों में विषय की पर्याप्त विविधता मिलती है। इनके 'ब्राह्मण' पत्र में निकलने वाले निबन्ध प्रायः हर प्रकार के विषय पर लिखे गये हैं। जैसे—घरे के लत्ता बिनें, कनात का ढोल बाधे, समझदार की मौत है, बात, मनोयोग, वृद्ध, भौं, शिवमूर्ति, सोने का अण्डा और पौंड आदि। बात, दाँत भौं आदि पर लिखे हुये इनके लेख साहित्यिक भाषा में हैं और उच्चकोटि के हैं। अन्य लेख सामाजिक तथा धार्मिक विषयों पर हैं और चलती हुई भाषा में हैं।

शैली—मिश्रजी स्वभाव से ही विनोद तथा हास्य प्रिय थे। अतः इनमें अधिकांश निबन्धों में स्थान स्थान पर विनोद पूर्ण व्यंग तथा वक्रता के दर्शन होते हैं। कुछ निबन्धों में विषय के अनुकूल गम्भीरता भी दिखाई देती है, पर ऐसे निबन्धों की संख्या गिनी चुनी है। इस प्रकार मिश्रजी की शैली के दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। (१) विनोद पूर्ण (२) गम्भीर।

विनोद पूर्ण शैली—इस शैली में भी कहीं तो हास्य तथा विनोद की प्रधानता रहती है और कहीं व्यंग और कटाक्ष की। व्यंग को लाने के लिये ये पूर्वीपन की भी कोई परवाह नहीं करते हैं और बैसवारे की ग्रामीण कहावतें तथा शब्द भी बेधड़क लिख जाते हैं। विषय कैसा ही क्यों न हो मिश्रजी उसमें विनोद को ढूंढ़ ही लेते हैं। इस प्रसंग में 'समझदार की मौत है' का एक उदाहरण देखिए—

'सच है सब तें भले हैं मूढ़ जिन्हें न व्यापै जगत गति'। मजे से पराई जमा गपक बैठना, खुशामदियों से गत मारा करना जो कोई तिथि त्यौहार आ पड़ा तो गङ्गा में बदन धो आना, गङ्गा पुत्र को चार पैसे देकर सैंत मैंत में धरम मूरत, धरम औतार का खिताब पाना, संसार परमार्थ दोनो तो वन गए, अब काहे की हैं हैं और काहे की खैं खैं ?''

गम्भीर शैली—इस शैली में इन्होंने थोड़ा ही लिखा है। इस प्रकार के लेखों में ऐसा प्रतीत होता है कि ये हास्य को बचा बचा कर आगे बढ़ रहे है और वास्तव में यह गम्भारता इन्हें विषय के गाम्भीर्य को अक्षुण बनाये रखने के लिए ही अङ्गीकार करनी पड़ी है। वैसे तो इस प्रकार के लेख लिखना इनके स्वभाव के विरुद्ध ही है। ऐसे लेखों में भाषा संयत और गंभीर है। 'मनोयोग' लेख से उद्धृत इस प्रकार का एक अवतरण देखिए—

"शरीर द्वारा जितने काम किये जाते हैं उन सब में मन का लगाव अवश्य रहता

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। जिनमें मन प्रसन्न रहता है, वही उत्तमता के साथ होते हैं और जो उसकी इच्छा के अनुकूल नहीं होते वह वास्तव में चाहे अच्छे कार्य भी हों, किन्तु भली प्रकार पूर्ण रीति से सम्पादित नहीं होते, न उनका कर्त्ता ही यथोचित आनन्द लाभ करता है।"

भाषा—इन्होंने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा स्वीकृत जन साधारण की भाषा को अपनाया है, पर भारतेन्दु की भाषा पर नागरिकता की छाप है और मिश्र जी की भाषा पर ग्रामीणता की। ये स्वयं ही कृत्रिमता से दूर रहते थे, अतएव इनकी भाषा में भी कृत्रिमता नहीं है। वह स्वाभाविक है और उस पर इनकी मातृ-भाषा 'पूर्वी' का पर्याप्त प्रभाव है। स्थान स्थान पर इनकी भाषा में "पूर्वी मुहावरे और शब्द' पाये जाते हैं। ये अपना भाव व्यक्त करने के लिये संस्कृत की अपेक्षा अपने यहाँ की ग्रामीण भाषा को अधिक पसन्द करते हैं। इन्होंने संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू, अँग्रेजी आदि के वे ही शब्द प्रयुक्त किये हैं जो हिन्दी में घुल मिल गये हैं, जैसे—तेग, अदा, नेटिव, मेमोरियल आदि।

मिश्रजी ने पण्डिताऊपन और पूर्वीपन की झपट में व्याकरण के नियमों का कोई ध्यान नहीं रखा है। 'ऋषि, ऋतु' जैसे शब्दों को भी बिगाड़ कर रिषि, रितु आदि' की तरह मनमाने ढङ्ग से लिखा है। विराम-चिह्नों का प्रयोग भी कम किया है। फिर भी इनकी भाषा में वह सजीवता तथा रोचकता है कि पाठक का मन इनकी रचनाओं की ओर बरबस ही खिच जाता है और बहुत कुछ काल के लिए देश तथा काल की परिधि से निकल रस-मग्न हो जाता है। यही इनकी प्रधान विशेषता है और इसके लिए ये चिरकाल तक स्मरणीय रहेंगे।

साराँश

जन्म सम्वत्
तथा स्थान—सं० १९१३, कानपुर।
पिता— संकटाप्रसाद ज्योतिषी।
मृत्यु संवत्—सं० १९५१।
रचना— गद्य-पद्य की लगभग ४० पुस्तकें, मुख्य निम्न हैं— निबन्ध संग्रह—हठी हमीर, कलि-प्रभाव, गो-संकट, समय, नाटक—भारत दुर्दशा, कलि-कौतुक। लावणी—संगीत—शाकुन्तल।
वर्ण्य विषय—निबन्ध-सभी प्रकार के विषयों पर साहित्यिक ढङ्ग के। कविता—उपदेशात्मक काव्य का आधिक्य देश की दशा का चित्रण। नाटक—राष्ट्रीयता तथा सामाजिक सुधारों की भावनाओं में पूर्ण।
शैलियाँ— (१) विनोद-पूर्ण, (२) गम्भीर।
भाषा— जनसाधारण की प्रचलित भाषा, पूर्वी मुहावरे और शब्दों की अधिकता, संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू, अंग्रेजी आदि के चलते शब्दों का प्रयोग, शब्द बिगाड़े गये हैं—(रिषि, रितु)। व्याकरण के नियमों का उल्लंघन, विराम चिह्नों का प्रयोग कम किया है, फिर भी संजीवता तथा रोचकता है।

पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी

जीवनी तथा परिचय—पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म संवत् १९२१ में रायब-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
रेली जिले के दौलतपुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता फौज में नौकर थे। धनाभाव के कारण इनकी शिक्षा का प्रबन्ध ठीक तौर से न हो सका। इनकी शिक्षा आरम्भ घर पर ही संस्कृत से हुआ। कुछ समय बाद ये गाँव के स्कूल में जाने लगे। तदन्तर ये अंग्रेजी पढ़ने के लिए क्रमश: रायबरेली, फतहपुर और उन्नाव गये, पर कहीं भी सुचारु रूप से न पढ़ सके। कुछ समय बाद ये बम्बई चले गये, और वहाँ तार का काम सीखते रहे। काम सीखने पर इन्हें जी० आई० पी० में २२) मासिक की नौकरी मिल गई। परिश्रम तथा अध्यवसाय के कारण इनकी उन्नति होती गई और अन्त में १५०) मासिक के पद पर पहुँच गये। एक दिन एक उच्च अफसर से कुछ कहा सुनी हो जाने पर इन्होंने नौकरी छोड़ दी और सन् १९०३ ई० से 'सरस्वती' का सम्पादन करने लगे।

नौकरी के समय से ही ये अपने ज्ञान की अभिवृद्धि में लगे रहे। अपनी तीव्र बुद्धि तथा सच्ची लगन के कारण इन्होंने मराठी, गुजराती और संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर लिया और धीरे धीरे हिन्दी तथा संस्कृत में कविता करने लगे। इनकी मृत्यु संवत् १९९५ में हुई।

रचनाएँ—इनके लिखे ग्रन्थों में 'बेकन विचार रत्नावली' हिन्दी कालिदास की समालोचना, रसज्ञ-रंजन, साहित्य सन्दर्भ आदि अति प्रसिद्ध हैं।

साहित्यिक सेवा—द्विवेदी जी के समय तक हिन्दी गद्य का प्रचार तो हो चुका था, पर उसका न कोई स्थिर रूप था, न निजी भाव-प्रकाशन-प्रणाली। भाषा गम्भीर विचारों को प्रकट करने में सर्वथा असमर्थ थी। वाक्य ऊबड़ खाबड़ होते थे। व्याकरण के नियमों तथा विराम चिह्नों की कोई परवाह नहीं की जाती थी और 'इच्छा किया' 'आशा किया' जैसे प्रयोग दृष्टिगोचर होते थे। द्विवदी जी ने भाषा के इस रूप को देखा और इसे शुद्ध करने का बीड़ा उठाया। इन्होंने 'सरस्वती' में लेख लिखकर इस प्रकार की अशुद्धियों की ओर लेखकों का ध्यान खींचा और इन्हें शुद्ध तथा परिमार्जित भाषा लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। इससे भाषा में सफाई आने लगी और व्याकरण सम्बन्धी दोष दूर होने लगे इन्होंने अंग्रेजी की ओर झुके हुए हिन्दी भाषा भाषियों का ध्यान हिन्दी की ओर खींचा और उन्हें हिन्दी लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। अन्य भाषाओं के साहित्य का अनुशीलन कर इन्होंने उनकी विशेषताओं तथा अच्छाइयों से अपनी भाषा को पुष्ट किया।

वर्ण्य विषय—द्विवेदी जी हिन्दी के प्रथम समालोचक हैं। इनसे पहले हिन्दी में समालोचना साहित्य का अभाव था। द्विवेदी जी एक मर्मज्ञ विद्वान थे, अत: ये साहित्य क्षेत्र में गुण दोषों का विवेचन अत्यन्त ही विद्वता तथा निपुणता से किया करते थे। ये भाषा तथा साहित्य में आये हुए दोषों की ओर लेखकों का ध्यान बड़ी शिष्टता तथा नम्रता से खींचा करते थे। अपनी 'सरस्वती' पत्रिका के द्वारा ये सदा ही हिन्दी साहित्य में शुद्धता लाने का प्रयत्न किया करते थे। इन्होंने अपनी आलोचनाओं के द्वारा भारतेन्दु काल में कहानी तथा उपन्यासों के क्षेत्र में लाई हुई प्रेम अय्यासी तथा अय्यारी की दूषित प्रवृत्तियों को दूर किया तथा हिन्दी साहित्य को स्वस्थ विकास की ओर उन्मुख किया।

द्विवेदी जी ने स्वयं ही कई कवियों की आलोचना करके कवियों की आलोचना करने का मार्ग प्रशस्त किया। इन्होंने संस्कृत के कालिदास जैसे कवियों की आलोचना करके प्राचीन कविता को नवीन दृष्टि से देखा और जनता को उसका रसास्वादन करवाया। यद्यपि द्विवेदी जी की आलोचनाओं में शुक्ल जी जैसी प्रौढ़ता के दर्शन तो नहीं होते हैं किन्तु इस क्षेत्र की प्रारम्भिक रचनाएँ होने के कारण वे अत्यधिक महत्व की हैं। साहित्यिक निबन्धों के अतिरिक्त द्विवेदी जी ने शिक्षा, समाज, व्यापार, राजनीति, धर्म अर्थशास्त्र आदि विषयों पर भी निबन्ध लिखे हैं।

शैली—द्विवेदी जी ने प्रायः तीन तरह के लेख लिखे हैं। परिचयात्मक, आलोचनात्मक तथा गवेषणात्मक। विषय के अनुसार तीन प्रकार के लेखों में भिन्न भिन्न प्रकार की शैलियाँ अपनाई गई हैं। संक्षेप में इनका विवरण निम्न है।

(१) **परिचयात्मक शैली**—द्विवेदी जी के समय तक हिन्दी में नवीन प्रकार विषयों पर रचना का कार्य आरम्भ नहीं हुआ था, द्विवेदी जी ने इन विषयों की ओर लेखकों का ध्यान आकर्षित किया। उदाहरण के लिए स्वयं भी शिक्षा, सम्पत्ति-शास्त्र आदि पर कुछ लेख लिखे। इनकी शैली सरल, सुबोध तथा व्याख्यात्मक होती थी, जिसमें प्रत्येक बात को सीधे सरल ढंग से भली प्रकार समझाया जाता है।

(२) **आलोचनात्मक शैली**—जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, द्विवेदी जी का उद्देश्य भाषा शुद्धि तथा हिन्दी का प्रचार करना था। इसके लिये इन्होंने जो लेख लिखे उनमें उन्होंने विरोधियों के तर्कों का मुँह तोड़ उत्तर दिया तथा मनमाने ढंग से लिखने वालों की खूब खबर ली। ऐसे स्थलों पर हमें उनके लेखों में ओजपूर्ण शैली के दर्शन होते हैं। उसमें भाषा गम्भीर तथा संयत होती है।

साहित्य के बाहर के विषयों की आलोचना करते समय इनकी शैली ओजपूर्ण न होकर व्यंगात्मक हो जाती है। ऐसे स्थलों पर शब्दों में चुलबुलाहट तथा वाक्यों में सरलता आ जाती है। इस प्रसंग में 'हंस का क्षीर नीर ,विवेक' से उद्धृत एक उदाहरण देखिये।

'अच्छा' हंस रहते कहाँ हैं और खाते क्या हैं? हंस बहुत करके इसी देश में पाये जाते हैं, उनका सबसे प्रिय निवास स्थान मानसरोवर है।.......यदि यह दूध पीते हैं, तो दूध इनको मिलता कहाँ है? मानसरोवर में उन्होंने गायें या भैंसें तो पाल नहीं रक्खीं और न हिन्दुस्तान के किसी तालाब या नदी में उनके दूध पीने की कोई सम्भावना है।

(३) **गवेषणात्मक शैली**—गम्भीर विषयों के विवेचन में द्विवेदी जी ने गवेषणात्मक शैली का आश्रय लिया है। इनमें हमें दो प्रकार के रूप दृष्टिगोचर होते हैं। पहला रूप तो हमें उन लेखों में मिलता है जिसका उद्देश्य जनसाधारण को किसी गम्भीर विषय को समझाना है। इसमें वाक्य छोटे हैं और भाषा सरल है। दूसरे प्रकार के लेखों में जिनका उद्देश्य विद्वानों को सम्बोधित करना होता था वाक्य अपेक्षाकृत लम्बे, भाषा कुछ क्लिस्ट तथा विशुद्ध हिन्दी है।

भाषा—द्विवेदी जी ने साधारण तथा सरल और प्रचलित भाषा में लिखा है। इन्होंने उस समय के प्रचलित संस्कृत, उर्दू, अरबी, फारसी के शब्दों का बेधड़क प्रयोग किया है, किन्तु प्रयोग करते समय हिन्दी की प्रकृति का पूरा ध्यान रखा है। इनका वाक्य-विन्यास पूरी तौर से हिन्दी के ही अनुकूल है। इन्होंने न तो उर्दू वालों की कलाबाजी को ग्रहण किया और न संस्कृत पक्षपातियों की लम्बी समास पदावली को। शब्दों के प्रयोग में भी ये 'गृह' से 'घर' को तथा 'लेखिनी' से 'कलम' को अच्छा समझते थे।

द्विवेदीजी ने कविताएँ भी लिखी हैं पर उनमें कविजनोचित सहृदयता तथा उक्ति वैचित्र्य का अभाव सा है। वे प्रायः इतिवृतात्मक ही हैं। उनमें संस्कृत शब्दों की अधिकता है। भाषा गद्य से मिलती जुलती सी है। आरम्भ की कुछ कविताएँ ब्रजभाषा में हैं; पर बाद की खड़ी बोली में। भाषा की दृष्टि से इनके द्वारा अनूदित (छन्दों में) कुमार सम्भव एक अच्छी रचना है।

द्विवेदी हिन्दी के आचार्य माने जाते हैं। इनकी प्रेरणा तथा प्रयत्नों से भाषा को बल मिला और वह शुद्ध तथा संस्कृत होकर नवीन नवीन विचारों और भावों को धारण करने में असमर्थ हुई है। सारा हिन्दी जगत उनकी इन सेवाओं के लिए चिर-ऋणी रहेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सारांश

जन्म सम्वत्
तथा स्थान—संवत् १९२१, दौलतपुर, जिला रायबरेली।

मृत्यु संवत्—१९९५।

रचनाएँ— सम्पादन—सरस्वती (सन् १९०३ से)।
अनुवाद-कुमार सम्भव आदि अन्य बेकन विचार रत्नावली, हिन्दी-कालिदास की समालोचना, रसज्ञ-रञ्जन, साहित्य सन्दर्भ आदि।

वर्ण्य विषय—गद्य-भाषा की शुद्धि का प्रयत्न, आलोचना, व्याख्या। पद्य इतिवृतात्मक।

शैलियाँ— परिचयात्मक, आलोचनात्मक, गवेषणात्मक।

भाषा— गद्य-व्याकरणानुकूल सरल तथा प्रचलित भाषा संस्कृत, उर्दू, अरबी, फारसी के प्रचलित शब्दों का प्रयोग। आरम्भ में व्रजभाषा, बाद में खड़ी बोली।

मुन्शी प्रेमचन्द

जीवनी तथा परिचय—मुन्शी प्रेमचन्द का जन्म संवत् १९३७ में काशी के समीप पाण्डेपुर नामक ग्राम में एक प्रतिष्ठित कायस्थ कुल में हुआ था। इनका असली नाम धनपतिराय था। इनकी शिक्षा का आरम्भ उर्दू, फारसी से हुआ। मैट्रीकुलेशन परीक्षा करने के बाद ये एक स्कूल में २०) मासिक पर अध्यापक हो गये। बड़ी कठिनता से किसी प्रकार इन्होंने बी० ए० पास कर लिया। इसके बाद ये स्कूल के सब डिप्टी इन्सपेक्टर हो गये, किन्तु स्वतन्त्र प्रकृति के होने के कारण इन्होंने नौकरी छोड़ दी। आरम्भ में ये उर्दू में लिखते थे और उर्दू के क्षेत्र में इनका काफी सम्मान था। इनकी कहानियाँ उर्दू के 'जमाना' पत्र में प्रकाशित होती थीं। सम्वत् १९७२ में ये हिन्दी में लिखने लगे। पहले इन्होंने 'मर्यादा और 'माधुरी' पत्रिकाओं का सम्पादन किया और फिर 'हंस' और 'जागरण' का। इन्होंने कुछ दिनों तक सिनेमा क्षेत्र में भी कथानक लिखने का कार्य किया था पर उसमें इन्हें सफलता न मिल सकी। अपनी उदारता के कारण उन्हें जीवन भर आर्थिक संकट झेलना पड़ा। इनकी उदारता के बारे में सिद्ध है कि इनकी पत्नी ने गरम सूट बनवाने के लिये दो बार चालीस चालीस रुपये दिये, पर इन्होंने वे रुपये प्रेस के मजदूरों में बाँट दिए। पत्नी के पूछने पर वे मुस्करा कर बोले—जो दिन भर हमारे प्रेस में काम करे, वह भूखों मरे और मैं गरम सूट पहनूँ, यह तो शोभा नहीं देता।' इनकी मृत्यु संवत् १९९३ में हुई।

रचनाएँ—उपन्यास—सेवा सदन, गोदान, गबन, कायाकल्प रङ्गभूमि, प्रेमाश्रम, कर्म भूमि आदि।

कहानी संग्रह—प्रेम-द्वादशी, प्रेम-पूर्णिमा, प्रेम-पचीसी, प्रेम प्रसून, सप्त सरोज, प्रेम प्रमोद, नवनिधि।

नाटक—कर्बला, संग्राम, प्रेम की वदी।

वर्ण्य विषय—प्रेमचन्दजी हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यासकार तथा कहानी लेखक हैं। इनके उपन्यासों को तत्कालीन समाज का दर्पण कह सकते हैं। उनमें जीवन की विविध समस्याओं का वर्णन है। कुछ का समाधान तो लेखक ने स्वयं ही कर दिया है और कुछ को पाठकों के ऊपर छोड़ दिया है। इनके उपन्यासों में प्रायः मिल मालिक और मजदूर, किसान और जमींदार तथा नवीनता और प्राचीनता का संघर्ष दिखाया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इनमें यथार्थ तथा आदर्श का उचित समन्वय है। प्रेमचन्द जी नग्न यथार्थ तथा नग्न आदर्श दोनों के ही विरुद्ध हैं। इनका कथन है—"नग्न यथार्थ तथा नग्न आदर्श दोनों ही अतियाँ हैं। नग्न यथार्थ, पुलिस की रिपोर्ट भर हो जाता है; नग्न आदर्श प्लेटफार्म का फतवा।"

इन्होंने अपनी रचनाओं के लिए पात्रों का चुनाव उनमें से किया जो सदा से उपेक्षित हैं, विपत्ति के सताएँ हुए हैं, जीवन संग्राम में खपमरना ही जिनके जीवन की मात्र उपयोगिता है। जिनकी उपेक्षा आज तक के साहित्यकारों ने की है और यदि कहीं उन्हें स्थान भी दिया है तो केवल मजाक उड़ाने के लिए चाहें बाल्मीकि हों या कालिदास, सूरदास हों या तुलसीदास, भूषण हों या मतिराम सब ने ही राव-राजों और लक्ष्मी के लाड़ले लालों का ही चित्रण किया है। पर प्रेमचन्द जी ने सबसे पहले उन उपेक्षितों को अपनाकर कूड़े पर से उठा देवता के आसन पर बैठा दिया है और इस प्रकार के साधारण कोटि के पात्रों का चित्रण करने के कारण ही उनके उपन्यास तथा कहानियों में हृदय को छूने की शक्ति आ गई है। जीवन का घात-प्रतिघात ही उपन्यास या कहानी का प्राण है और घात-प्रतिघात जितनी इन उपेक्षित समुदायों में मिलता है, उतना लक्ष्मी के लाड़ने लालों में नहीं।

उपन्यास कला—इनके उपन्यासों के पात्र प्रायः वर्ग के प्रतिनिधि रूपों में आते हैं। घटनाओं के विकास के साथ साथ पात्रों के चरित्रों का भी विकास होता चलता है। वे पात्रों के चरित्र की कल्पना पहले कर लेते हैं और फिर उनका विकास दिखाते हुए आवश्यक घटनाओं की सृष्टि कर लेते हैं। इनके कथोपकथन मनोवैज्ञानिक होते हैं, पर जहाँ कहीं ये किन्हीं आदर्शों या भावनाओं का चित्रण करते हैं, वहाँ ये लम्बे तथा उपन्यास के प्रतिकूल से हो जाते हैं। अतः प्रकृति के चित्रण से इनके उपन्यासों में सजीवता आ गई है।

प्रेमचन्द जी एक सच्चे समाज सुधारक तथा क्रान्तिकारी लेखक थे। अपने उपन्यासों में इन्होंने स्थान-स्थान पर ढोंग, दहेज, असमान विवाह आदि का डटकर विरोध किया है और तीव्रता के साथ करारे व्यंग किए हैं। 'गोदान' में खाने-पीने के विषय में पाखण्ड करने वालों पर कसा हुआ एक व्यंग देखिए—

'हमारा धर्म है हमारा भोजन। पवित्र रहे फिर हमारे धर्म पर कोई आँच नहीं आ सकती। रोटियाँ ढाल बन कर अधर्म से हमारी रक्षा करती हैं।'

नारियों के प्रति इनको स्वाभाविक श्रद्धा है। समाज में उपेक्षित, अपमानिता और पतिता स्त्रियों के प्रति इनकी बड़ी सहानुभूति थी। सेवासदन में इनकी यह भावना साफ तौर से देखी जा सकती है। ये विधवा विवाह के पक्ष में थे और स्वयं भी एक बाल विधवा से विवाह किया था।

कहानी कला—इनकी कहानियों में घटना और कला का सुन्दर समन्वय पाया जाता है। उपन्यासों की अपेक्षा अधिक मार्मिक तथा प्रभावोत्पादक होती है। इसमें जीवन की सम्पूर्ण परिस्थिति की मार्मिक विवेचना है।

भाषा तथा शैली—आरम्भ में ये उर्दू के प्रसिद्ध लेखक रहे थे, अतः इनकी शैली पर उर्दू का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इनकी रचनाओं में मुहावरों और कहावतों की अधिकता दिखाई देती है। इनकी भाषा सरल तथा स्वाभाविक है और कहानी तथा उपन्यासों के लिए पूरी तौर से उपयुक्त है। इसमें आवश्यकतानुसार पूर्वी, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, उर्दू आदि के शब्द मिले हुए हैं। भाषा, भाव के अनुकूल बदलती रहती है। जहाँ कोमल भावों की व्यंजना की गई है, वहाँ भाषा मधुर और कोमल है; और जहाँ क्रोध, आवेश अथवा उग्रता को प्रकट किया है, वहाँ भाषा भी स्वभावतः उग्र तथा ओजपूर्ण हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गई है। पात्रों के अनुसार भी भाषा में परिवर्तन होता रहता है। नागरिकों की भाषा में तत्सम शब्दों का और ग्रामीणों की भाषा में तद्भव शब्दों का बाहुल्य रहता है। मुसलमानों की भाषा में उर्दूपन और हिन्दुओं की भाषा में हिन्दी शब्दों की अधिकता होती है और सबसे अधिक विचित्रता यह है कि ये सब भाषाएँ एक दूसरे से सम्बन्धित तथा स्वाभाविक होती हैं। स्थान स्थान पर मर्मभेदिनी और भावपूर्ण सूक्ति जोड़ देना इनके बाएँ हाथ का खेल है। 'क्षमा' कहानी में प्रयुक्त सूक्तियाँ देखिए

'जिसको तलवार का आश्रय लेना पड़े, वह सत्य नहीं है।'

'निर्जनता किसी की आड़ नहीं कर सकती; बस्ती का जन बाहुल्य स्वयं आड़ है।'

भाषा में प्रभाव तथा स्पष्टता लाने के लिए स्थान स्थान पर अलंकारों का प्रयोग किया गया है। 'क्षमा' कहानी में उपमा तथा रूपकातिशयोक्ति का प्रयोग देखिए—

'अरब की भारी तलवार, ईसाई की हल्की कटार के सामने शिथिल हो गई। एक सर्प की भाँति फन से चोट करती थी दूसरी नागिन की भाँति उड़ती थी। एक लहरों की भाँति लपकती थी, दूसरी जल की मछलियों की भाँति चमकती थी।..........सहसा एक बार नागिन उछल कर अरब के अन्तः स्थल में जा पहुँची।'

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि प्रेमचन्द जी एक महान कलाकार, विचारक और समाज सुधारक थे। इन्होंने अपनी रचनाओं से हिन्दी का गौरव बढ़ाया है। दुखी ग्रामों का सच्चा चित्रण और शोषितों का प्रतिनिधित्व किया है।

सारांश

जन्म संवत
तथा स्थान—१९३७, काशी के समीप पाण्डेपुर।

शिक्षा— आरम्भ—उर्दू, फारसी से, अन्त में बी० ए० पास किया।

मृत्यु सम्वत्—सं० १९९३।

रचानाएँ— सम्पादक-मर्यादा, माधुरी, हंस, जागरण।

उपन्यास—सेवासदन, गोदान, गबन, कायाकल्प, रंग भूमि, प्रेमाश्रम, कर्म भूमि आदि।

कहानी संग्रह—प्रेम द्वादशी, प्रेम-पूर्णिमा, प्रेम-पचीसी, प्रेम प्रसून सप्त-सरोज, प्रेम-प्रमोद, नवनिधि।

नाटक—कर्बला संग्राम प्रेम की वेदी।

वर्ण्य विषय— उपन्यास—जीवन की विविध समस्याएँ, विविध सङ्घर्ष, यथार्थ तथा आदर्श का उचित समन्वय, किसान मजदूरों का वास्तविक चित्रण, पात्र वर्ग के प्रतिनिधि, हैं। ढोंग, दहेज, असमान विवाह आदि का विरोध, नारियों के प्रति श्रद्धा।

कहानी—घटना और कला का समन्वय, जीवन की सम्पूर्ण परिस्थितियों की मार्मिक विवेचना।

भाषा तथा शैली— शैली पर उर्दू का प्रभाव, भाषा सरल तथा स्वाभाविक हैं, जो भावों तथा पात्रों के अनुकूल बदलती रहती है; (कोमल भावों में सरल उग्र भावों में ओजपूर्ण; नागरिकों की तत्सम बहुल, ग्रामीणों की तद्भव
बहुला मुसलमानों की उर्दूपन से प्रभावित हिन्दुओं की हिन्दी प्रचुर)
भाषा में पूर्वी, अंग्रेजी, अरबी, फारसी तथा उर्दू के शब्द मिलते हैं
मुहावरों तथा कहावतों का अधिक प्रयोग है सूक्ति होने योग्य
वाक्य भी हैं अलंकारों का भी प्रयोग है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुला, मुसलमानों की उर्दूपन से प्रभावित, हिन्दुओं की हिन्दी प्रचुर) भाषा में पूर्वी, अंग्रेजी, अरबी, फारसी, उर्दू आदि के शब्द मिलते हैं। मुहावरों और कहावतों का अधिक प्रयोग है। सूक्ति होने योग्य वाक्य भी लिखे हैं। अलङ्कारों का प्रयोग है।

अध्यापक पूर्णसिंह

जीवनी तथा परिचय—अध्यापक पूर्णसिंह जी का जन्म सम्वत् १६३८ में ऐबटाबाद जिले में हुआ था। इनकी शिक्षा-दीक्षा रावल पिन्डी में हुई। यहाँ से एण्ट्रेंस पास करने के अनन्तर आप आगे की पढ़ाई के लिए लाहौर पहुंचे। लाहौर से उन्हें जापान जाने के लिए राज्य की ओर से छात्रवृत्ति मिली। इस प्रकार सम्वत् १६४७ में ये जापान यात्रा पर गये। जापान में ये तीन वर्ष तक रहे। इन तीन वर्षों के समय में इन्होंने इम्पीरियल यूनीवर्सिटी में व्यावहारिक रसायन शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। जापान में ही इनकी भेंट स्वामी रामतीर्थ से हुई जिनके प्रभाव से ये वेदान्त में आस्था रखने लग गये।

भारतवर्ष लौटने पर ये कुछ काल तक सन्यासी के वेष में रहे। इनका यह सन्यास अधिक स्थिर न रह सका क्योंकि इन्होंने विवाह करके गृहस्थाश्रम का पालन करने का निश्चय कर डाला। अपने निश्चय के अनुसार इन्होंने गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया और पारिवारिक पोषण की दृष्टि से देहरादून में जीविकोपार्जन में लग गये। कहने को तो गृहस्थ जीवन बिताते थे परन्तु इनकी प्रवृत्ति तो साधुओं की संगति में ही रमती थी। इस कारण इनकी आय का अधिक भाग साधु सन्तों की सेवा में ही व्यय होता था। नौकरी में अधिकारियों से अनवन होने की हालत में ये नौकरी छोड़कर पंजाब चले गये और वहाँ कृषि कर्म में लग गये।

इनकी मातृभाषा हिन्दी न होने पर भी इन्होंने हिन्दी से अनुराग रखकर उसके साहित्य का सम्वर्द्धन करने का सत्कार्य किया। यद्यपि इनकी रचनाएँ परिमाण में अधिक नहीं हैं तथापि वे परिमाण की दृष्टि से महत्वपूर्ण अवश्य हैं। जिस प्रकार कि पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जी केवल तीन कहानियाँ लिखकर हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ तथा साहित्य सेवियों की कोटि में गिने गये उसी भाँति अध्यापक पूर्णसिंह जी भी चार पाँच उत्कृष्ट निबन्धों की रचना करके हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ निबन्धकारों में गिने जाने लगे हैं। हिन्दी भाषा के हितैषी अध्यापक पूर्णसिंह जी की मृत्यु सम्वत् १६८८ में हुई।

रचनाएँ—आपकी रचनाएँ परिमाण में अधिक नहीं, परन्तु वे अपने देश के साहित्य का गौरव बढ़ाने वाली अवश्य हैं। ये हिन्दी में निबन्धकार के रूप में ही प्रसिद्ध हैं। इनके निम्नलिखित छः निबन्ध प्राप्त हैं—(१) कन्या दान या नयनों की गंगा (२) पवित्रता, (३) आचरण की सभ्यता, (४) मजदूरी और प्रेम (५) सच्ची वीरता, (६) अमरीका का मस्त जोगी वाल्ट ह्विटमैन। ये निबन्ध हिन्दी निबन्ध साहित्य अक्षय निधि हैं।

वर्ण्य विषय—इन्होंने सामाजिक व नैतिक विषयों पर लेखिनी चलाई है। इनके निबन्ध मुख्यतः भाव प्रधान हैं। उन पर गाँधी जी के युग धर्म की छाप है। किसानों और मजदूरों के प्रति भी इनकी सहानुभूति है। इनके निबन्ध लोक मंगल की भावना से ओत प्रोत हैं। इन्होंने अपने निबन्धों में सत्य, अहिंसा त्याग, प्रेम, उदारता आदि गुणों की प्रतिष्ठा की है। इन्होंने मानव के पारस्परिक व्यवहार में त्याग व प्रेम को विशेष महत्व दिया है।

रस—श्री पूर्णसिंह द्वारा लिखित भावात्मक कोटि के निबन्धों में शृंगार, वीर एवं

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

शान्त रस की त्रिवणी लहराती है। इनके विचारों का मूल उद्गम मानवीय प्रेम पर प्रतिष्ठित है।

भाषा—पूर्णसिंह जी की भाषा विशुद्ध खड़ी बोली है। इन्होंने संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है। साथ ही उर्दू के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। यथा—बफानी, शिकामी दीदार, तलाक, अश्क, वेसरों समान आदि। कहीं कहीं तो उर्दू, फारसी के शेरों का प्रयोग भी किया गया है। जैसे—

"किसी घर में न घर कर बैठना इस दारे फानी में।
ठिकाना बे ठिकाना और मका कर ला मकाँ रखना।।

तथा—जो खुदा को देखना हो तो मैं देखता हूँ तुझको।
मैं देखता हूँ तुझको जब खुदा को देखना हो।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं अँग्रेजी के प्रचलित शब्द मार्च, पालिसी, क्रूसेड्स, पार्ट आदि का भी प्रयोग किया गया है। मुहावरों का भी इनकी भाषा में यत्र तत्र प्रयोग किया गया है, जिससे इनकी भाषा में अजश्र प्रभाव आ गया है। संक्षेप में इनकी भाषा प्रौढ़ संयत परिमार्जित एवं व्याकरण के नियमों के अनुकूल है। विषयानुकूलता की दृष्टि से भाषा में स्वाभाविकता भी पाई जाती है। इनकी भाषा के दो रूप स्पष्टतः लक्षित होते हैं (१) साधारण और (२) क्लिष्ट कथानक के वर्णन में भाषा का साधारण रूप रहता है। और विचार प्रधान रचना में भाषा क्लिष्ट हो जाती है। भाषा के दोनों रूपों पर इनका पूरा अधिकार है। कहीं कहीं भावावेश के कारण कुछ व्याकरण सम्बन्धी भूलें हो गई हैं।

शैली—अध्यापक पूर्णसिंह जी की शैली मुख्यतः भावात्मक शैली है जो भाषा की अनूठी लाक्षणिकता, प्रबल प्रवाह, आध्यात्मिक मस्ती और ओज आदि विशेषताओं से युक्त है। 'मजदूरी और प्रेम' नामक निबन्ध इनकी इस भावात्मक शैली का प्रतिनिधि निबन्ध है। यह शैली हृदय की तरंग से प्रभावित व्यास शैली है। इन्होंने अपने विचारों को सूत्र रूप में प्रस्तुत कर उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है। तुकदार शब्दों के प्रयोग द्वारा तथा मुहावरों व लाक्षणिक शब्दों के योग से निर्मित सूत्रात्मक वाक्यों के आधार पर शैली में उत्कृष्टता व रोचकता लाई गई है। शैली की दृष्टि से इनकी रचनाओं में कई विशेषताएँ द्रष्टव्य हैं—

१—इन्होंने साधारण वाक्यों को मिलाकर वाक्य बनाये हैं, जिससे भाषा में कहीं अधिक आकर्षण आने के साथ साथ काव्यगत प्रवाह भी आ गया है।

२—इन्होंने अपनी भाषा और विचारों को सुन्दर लाक्षणिक शब्दों द्वारा रहस्यमय रूप के साथ प्रस्तुत किया है।

३—व्यंग्यात्मक पदों तथा वाक्यों द्वारा इन्होंने अपनी शैली में विशेष आकर्षण और चमत्कार उत्पन्न कर दिया है।

इनकी शैली का एक उदाहरण देखिए—

'आजकल की कविता में नयापन नहीं, उसमें पुराने जमाने की कविता की पुनरावृत्ति मात्र है।.......अब तो एक नये प्रकार का कला कौशल पूर्ण संगीत साहित्य-संसार में प्रचलित होने वाला है। यदि वह न प्रचलित हुआ तो मशीनों के पहियों के नीचे दब कर हमें मरा समझिये। यह नया साहित्य मजदूरों के हृदय से निकलेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अध्यापक पूर्णसिंह जी एक उच्चकोटि के निबन्धकार तथा शैलीकार हैं और इन्होंने अपने लेखों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सारांश

जन्म सम्वत्

तथा स्थान—सम्वत् १९३८, सीमा प्रान्त के जिला ऐब्टाबाद का एक गाँव।

शिक्षा दीक्षा—रावल पिंडी, लाहौर व जापान।

उद्योग— देहरादून के फारेस्ट कालेज में कैमिस्ट, कृषि कार्य।

मृत्यु— सम्वत् १९८८।

रचनायें— (१) कन्यादान, (२) पवित्रता, (३) आचरण की सभ्यता, (४) मजदूरी और प्रेम, (५) सच्ची वीरता, (६) अमरीका का मस्त जोगी वाल्ट ह्विटमैन।

भाषा— खड़ी बोली जिसमें यथास्थान संस्कृत के तत्सम रूप उर्दू, फारसी, अँग्रेजी शब्दों एवं मुहावरों का भी प्रयोग किया गया है।

शैली— मुख्यत: भावात्मक, जिसमें विचारात्मक निबन्धों में उतार चढ़ाव आ सका है। वाक्य सरल, छोटे, भावपूर्ण और अर्थ व्यंजक हैं, किन्तु भावावेश की दशा में वाक्य आवश्यकता से अधिक बड़े हो गये हैं और कहीं कहीं अर्थ अस्पष्ट हो गया है। विचार को सूत्र रूप में प्रस्तुत कर बाद को उसे विस्तार से समझाया गया है।

आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल

जीवनी तथा परिचय—आचार्य पण्डित रामचन्द्र शुक्ल का जन्म संवत् १९४१ विक्रमी में बस्ती जिले के अगोना नामक ग्राम में हुआ था। इनकी शिक्षा का आरम्भ संस्कृत से हुआ। इसके बाद हाई स्कूल एवं इण्टर की परीक्षाएँ पास की। कानून की परीक्षा में बैठे, किन्तु उत्तीर्ण न हो सके। इसके बाद वे मिशन स्कूल मिर्जापुर में अध्यापक हो गये। इसी समय से इनके लेख पत्र पत्रिकाओं में निकलने लगे और इनकी विद्वता की कीर्ति चारों तरफ फैल गई। सन् १९०८ में ये 'हिन्दी शब्द सागर' के सहकारी सम्पादक नियुक्त हुए। तदन्तर 'नागरी प्रचारिणी' के पत्रिका के सम्पादक हुए। अन्त में ये हिन्दू विश्वविद्यालय काशी में हिन्दी के प्राफेसर हुए, बाबू श्यामसुन्दर के बाद हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हो गये। इनकी मृत्यु सम्वत् १९९८ में हुई।

रचनाएँ—आपके रचित ग्रन्थों में हिन्दी साहित्य का इतिहास, चिन्तामणि, तुलसी दास, भ्रमरगीत सार, काव्य में रहस्यवाद, जायसी ग्रन्थावली अति प्रसिद्ध हैं। इन्होंने 'लाइट ऑफ एशिया' के आधार पर ब्रजभाषा में 'बुद्ध चरित' काव्य भी लिखा है।

साहित्य सेवा—शुक्ल जी हिन्दी के उद्भट विद्वान, उच्चकोटि के मर्मज्ञ, समालोचक, निबन्धकार थे। यद्यपि शुक्लजी से पहले द्विवेदी युग में साहित्य के भिन्न भिन्न अंगों का विकास हो चुका था, पर समालोचन और निबन्ध कला का कोई ऊँचा आदर्श अभी तक स्थापित नहीं हुआ था। इनसे पहले की समालोचनाओं में गुण-दोष विवेचना की प्रधानता थी। शुक्लजी ने अपनी आलोचना के द्वारा समालोचना का नवीन आदर्श उपस्थित किया। उनमें भारतीय तथा पश्चात्य समालोचन कलाओं का अद्भूत समन्वय है। इन्होंने जायसी तुलसी और सूर का उत्कृष्ट व्याख्यात्मक आलोचनाएँ लिखी हैं। स्थान-स्थान पर कवि की भावनाओं तथा महत्व को समझाने के लिए तत्सम्बन्धित काव्य सिद्धान्त भी लिखे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वास्तव में हिन्दी में वैज्ञानिक ढंग की व्याख्यात्मक समालोचनाओं का प्रारम्भ शुक्लजी से ही होता है।

वर्ण्य विषय—शुक्लजी ने प्रायः साहित्यिक तथा मनोवैज्ञानिक ढंग के निबन्ध लिखे हैं। साहित्यिक ढंग के निबन्धों में भी कुछ सैद्धान्तिक आलोचना से सम्बन्धित हैं, जैसे—साधारणीकरण और व्यक्ति 'वैचित्र्यवाद' और कुछ व्यवहारिक आलोचना से सम्बन्धित हैं, जैसे—'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र,' मनोवैज्ञानिक निबन्धों में लज्जा, ग्लानि, क्रोध, लोभ आदि मनोविकारों पर लिखे हुए निबन्ध आते हैं। हिन्दी में इस प्रकार के निबन्ध लिखना शुक्लजी की अपनी विशेषता है। इन निबन्धों में भावों का विश्लेषण पर्याप्त मात्रा में हुआ है, किन्तु शुक्ल जी की विद्वता तथा विषय की विवेचना करने की अद्भुत क्षमता के कारण ये मनोविज्ञान की पुस्तक की भाँति नीरस तथा व्यक्तित्व की छाप से रहित नहीं हो पाये हैं।

आलोचना के साथ साथ अन्वेषण और गवेषण करने की प्रवृति भी शुक्लजी में पर्याप्त मात्रा में है। उनकी प्रवृत्ति का परिणाम है, हिन्दी साहित्य का इतिहास। उनका यह इतिहास हिन्दी साहित्य के गत ९०० वर्षों का एक प्रमाणिक लेखा-जोखा माना जाता है और आज भी वह इस विषय के अन्य ग्रन्थों का उपजीवी बना हुआ है।

कविताएँ—शुक्लजी ब्रजभाषा के सरस तथा भावुक कवि हैं। इन्होंने 'लाइट ऑफ एशिया' के आधार पर 'बुद्धचरित' नामक काव्य लिखा है। इन्होंने प्रकृति को आलम्बन रूप में लिया है, उद्दीपन रूप से नहीं। कविताओं में वर्णन की अपेक्षा विवरण की प्रधानता है।

शैली—इन्होंने तीन प्रकार की शैलियों में लिखा है—:—विवेचात्मक, २—गवेषणात्मक, ३—भावात्मक।

विवेचनात्मक शैली—विषय के अनुकूल शुक्लजी की शैली में अन्तर आता रहता है। आलोचनात्मक निबन्धों में विवेचनात्मक शैली का आश्रय लिया गया है। इसमें वाक्य प्रायः छोटे छोटे हैं। विषय का स्पष्टीकरण इस ढंग से किया गया है कि लेखक के भावों को समझने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। इस प्रकार का एक उदाहरण देखिये—

"उस पुण्य समाज के प्रभाव से चित्रकूट की रमणीयता में पवित्रता भी मिल गई। उस समाज के भीतर नीति, स्नेह, शील, विनय, त्याग आदि के संघर्ष से जो धर्म ज्योति फूटी, उससे आस पास का सारा प्रदेश जगमगा उठा। उसकी मधुर स्मृति से आज भी वहाँ की वन—स्थली परम पवित्र है।

गवेषणात्मक शैली—गवेषणात्मक निबन्धों में शैली कुछ दुरूह तथा गम्भीर हो गई है। वाक्य भी अपेक्षाकृत कुछ लम्बे हैं। इस शैली को हम विषय के अनुकूल ही गवेषणात्मक शैली का नाम दे सकते हैं। इस प्रकार की शैली का एक उदाहरण देखिए—

"अज्ञेय और अव्यक्त को अज्ञेय और अव्यक्त ही रखकर कामवासना के शब्दों में प्रेम व्यञ्जना भारतीय काव्य-धारा में कभी नहीं चली। यह स्पष्ट बात 'हमारे यहाँ भी था' की प्रवृत्ति वालों की अच्छी नहीं लगती। उससे खिन्न होकर वे उपनिषद से लेकर तन्त्र और योग मार्ग तक की दौड़ लगाते हैं। उपनिषदों में आये हुये आत्मा के पूर्ण आनन्दस्वरूप के निर्देश ब्रह्मानन्द की अपरिमेयता को समझाने के लिए स्त्री-पुरुष सम्बन्ध वाले दृष्टान्त या उपमाएं योग के सहस्र दल कमल आदि के बीच वे बड़े सन्तोष के साथ उद्धृत करते हैं।"

भावात्मक शैली—मनोविकार पर लिखे हुए शुक्लजी के निबन्ध भावात्मक शैली में हैं। इसमें वाक्य तो विवेचनात्म शैली की भाँति छोटे-छोटे हैं, किन्तु भाषा को प्रचलित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

तथा व्यवहारिक रूप में ग्रहण किया गया है। इस शैली में प्रयुक्त बहुत से वाक्य तो सूक्ति रूप में ही व्यवहृत हो सकते हैं। जैसे—

"बैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है।" "लाभ सामान्योन्मुख होता है और प्रेम विशेषोन्मुख।"

शुक्ल जी की प्रत्येक प्रकार की शैली में उनके व्यक्तित्व की पूरी छाप मिलती है, अतएव गम्भीर प्रकृति के होने के कारण उच्छृङ्खल हास्य के दर्शन नहीं होते। हाँ, शिष्ट हास्य इनकी रचनाओं में यत्र तत्र मिलता है—

'काजर दे नहिं, एरी सुहागिन,
आँगुरि तेरी कटेगी कटाच्छन।

पर 'यदि कटाक्ष से उँगली कटने का डर है, तब तो तरकारी चीरने या फल काटने के लिए हँसिया, छुरी आदि की कोई जरूरत न होनी चाहिए। कहना और विरह के कारण साँस के साथ आगे पीछे जाने वाली बिहारी की नायिका को 'दीवाल घड़ी का पैण्डुलम' बना देना किसके होठों को नहीं फड़का देता।

भाषा—शुक्लजी की गद्य संस्कृत मिश्रित परिमार्जित खड़ी बोली में और पद्य खड़ी बोली की ओर झुकी हुई ब्रजभाषा में है। इन्होंने शब्दों का निरर्थक प्रयोग नहीं किया है। वाक्य इतने गठे हुए तथा सम्बद्ध हैं कि किसी भी वाक्य में से एक भी शब्द निकाल देने से सारा का सारा वाक्य लड़खड़ा सा जाता है। उर्दू तथा अँग्रेजी शब्दों का प्रयोग शुक्ल जी ने बहुत ही कम किया है। जहाँ कहीं यह हुआ भी है, वहाँ व्यंग अथवा अन्य किसी उद्देश्य से किया गया है। शुक्ल जी विदेशी शब्दों का तत्सम रूप में ग्रहण करने के पक्ष में थे, तद्भव रूप में नहीं, अतः उन्होंने चीज, तारीफ और जरूरत न लिखकर चीज, तारीफ और जरूरत लिखे हैं। भाषा व्याकरण सम्मत है और विराम चिह्नों का प्रयोग सावधानी से किया है।

कथन में प्रभाव तथा ओज लाने के लिए शुक्ल जी ने यथास्थान अलंकारों का प्रयोग भी किया है। ये अलंकार विषय को स्पष्ट करने वाले तथा स्वाभाविक होते हैं। निम्न उद्धरण में रूपक तथा उपमाओं का प्रयोग देखने योग्य है—

'कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है।..............किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैर में बंधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन दिन अवनति के गड्ढे में गिराती जायगी, और यदि अच्छी होगी, तो सहारा देने वाली बाहु के समान होगी जो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायेगी।"

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि शुक्ल जी हिन्दी साहित्य की वैज्ञानिक ढंग की व्याख्यात्मक आलोचना प्रणाली के जन्मदाता तथा उत्कृष्ट कोटि के निबन्ध लेखक थे। इनकी आलोचनाएँ अँग्रेजी के प्रसिद्ध समालोचक रिचार्ड्स (Richards) की कोटि की हैं। अपनी रचनाओं द्वारा इन्होंने हिन्दी के लेखकों को मार्ग दिखाया है और वास्तव में दण्डी के द्वारा वर्णित 'सर्वं शुक्ला सरस्वती' इसी शुक्ल द्वारा हुई है।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—सं० १९४१, अगोना, जिला वस्ती।
शिक्षा— आरम्भ-संस्कृत से इण्टर पर्यन्त।
मृत्यु संवत्— सं० १९९८।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धर्म के पालने के लिए पास के एक खेत में चरी बो रखी थी। ज्वार की पत्तियाँ ऐंठऐंठ कर बत्तियाँ बन गई थीं। मैं भी जीव-दया प्रचारणी सभा का भूतपूर्व मेम्बर होने के नाते नौनिहाल किन्तु अब तन मन मुर्झाये हुए नौ उम्र पौधों की बेबसी पर और अपनी गाढ़ी कमाई के बीस रुपयों की बरबादी पर दो चार आँसू बहा देता। लेकिन उनसे होता क्या? यदि ये रीतकाल के काव्यों की विरहिणी गोपिकाओं के समान भी होते जिनसे समुद्र का पानी खारी हो गया था तो भी वे खारी होने के कारण सिंचाई का काम न देते।"

...ली में स्थान-स्थान पर हास्य तथा व्यंग के दर्शन होते हैं। विषयानुकूल ...ाता है। स्थान स्थान ...ाषाओं के शब्दों का भी ...

...तथा परिचय—बाबू श्याम सुन्दर दास का जन्म संवत् १९३२ में बनारस के बाबू देवीदास खन्ना के घर में हुआ था। छात्रावस्था में ही ये हिन्दी से विशेष अनुराग रखते थे। इण्टरमीडिएट परीक्षा पास करने के बाद अपने कुछ मित्रों की सहायता से इन्होंने 'नागरी प्रचारिणी सभा, काशी' की स्थापना की और जीवन भर उसकी उन्नति के लिए प्रयत्न करते रहे। बी० ए० पास करने के बाद इन्होंने कुछ दिनों तक 'सेण्ट्रल हिन्दू कालेज, काशी' में अध्यापन कार्य किया। इसके बाद कई विभिन्न स्थानों पर कार्य करने के अनन्तर इन्होंने मालवीय जी के अनुरोध से 'हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी' में हिन्दी का उच्च कक्षाओं में प्रवेश कराया और वहीं पर हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष हो गये। इसी समय इन्हें हिन्दी की उच्च कक्षाओं के लिए उपयुक्त 'भाषा विज्ञान' 'साहित्यालोचना' 'हिन्दी भाषा और साहित्य' जैसे ग्रन्थों का निर्माण करना पड़ा। ये एक उत्कृष्ट समालोचक तथा अच्छे वक्ता थे। इनकी साहित्यिक सेवाओं से प्रभावित होकर तत्कालीन गवर्नमेन्ट ने इन्हें 'राय-बहादुर' तथा हिन्दू विश्वविद्यालय ने 'डी-लिट' की उपाधियों से विभूषित किया था। इनकी मृत्यु संवत् २००२ में हुई।

रचनाएँ—बाबू जी ने हिन्दी की लगभग १०० पुस्तकों का सम्पादन किया है। अप्राप्य पुस्तकों की खोज करके उन्हें प्रकाशित कराने का इन्हें बहुत शौक था। हिन्दी शब्द सागर, हिन्दी वैज्ञानिक कोष, भाषा विज्ञान, साहित्यालोचन, हिन्दी भाषा और साहित्य, भाषा रहस्य, रूपक रहस्य, गोस्वामी तुलसीदास, हिन्दी कोविद रत्नमाला (दो भाग) आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

वर्ण्य विषय—बाबू जी उच्च कोटि के निबन्ध लेखक, गम्भीर समालोचक तथा विचारक थे। इन्होंने विचारात्मक तथा भावात्मक दोनों ही प्रकार के निबन्ध लिखे हैं। निबन्धों के विषय में पर्याप्त विविधता है। इन्होंने बहुत से अछूत विषयों पर भी अपनी लेखिनी उठाई है। अपने इस कार्य में पर्याप्त सफलता भी प्राप्त की है। कवियों की खोज तथा इतिहास के सम्बन्ध में लिखे हुए निबन्ध इनकी प्रतिभा के द्योतक हैं विषयों को यथार्थ रूप में जैसे का तैसा समझा देना इनकी प्रधान विशेषता है। हिन्दी भाषा और साहित्य के साहित्य वाले भाग से इनकी विवेचना शक्ति निरख आई है। इसमें साहित्य की विविध धाराओं का उद्गम तथा विकास जिस ढंग से दिखलाया गया है वह अद्भुत तथा सर्वथा वैज्ञानिक है। हिन्दी के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी 'भाषा विज्ञान' की रचना करके इन्होंने विद्यार्थियों का उपकार किया है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भिव्यक्ति का जो सुन्दर रूप हमें बाबूजी के निबन्धों में दृष्टिगोचर होता है, वह हिन्दी के बहुत कम निबन्धकारों में पाया जाता है।

साहित्य के क्षेत्र में बाबूजी ने सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक दोनों ही ढंग के निबन्ध लिखे हैं। बाबूजी ने 'मेरी असफलताओं' के नाम से आत्म कथा के रूप में अपने जीवन के कुछ मनोरंजक चित्र उपस्थित किये हैं। 'मेरे निबन्ध' नामक पुस्तक में संग्रहीत निबन्धों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि बाबूजी जीवन और जगत के विचित्र रूपों तथा पहलुओं के प्रति सावधानी और निष्पक्षता के साथ अपने स्वतन्त्र और निष्पक्ष विचारों की अभिव्यक्ति कर सकते हैं। इस आलोक में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आगरा के राजामण्डी स्टेशन के नव निर्मित भवन के सम्बन्ध में अभिव्यक्त बाबूजी के निम्न विचार दर्शनीय हैं—

...."स्टेशन में सबसे उल्लेखनीय है तीसरे दर्जे का प्रतीक्षालय, उससे संलग्न स्नान

है। यह शैली साहित्यालोचन तथा भाषा विज्ञान में दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार की शैली का एक उदाहरण देखिये—

"यह जीवन संग्राम दो भिन्न सभ्यताओं के संघर्षण से और भी तीव्र और दुःखमय प्रतीत होने लगता है। इस अवस्था के अनुकूल ही जब साहित्य उत्पन्न होकर समाज के मस्तिष्क को प्रोत्साहित और प्रतिक्रियमाण करेगा तभी वास्तविक उन्नति के लक्षण दीख पड़ेंगे और उनका कल्याणकारी फल देश को आधुनिक काल का गौरव प्रदान करेगा।"

इनकी शैली में अलंकारों की सजावट नहीं पाई जाती है। हाँ, जहाँ—तहाँ रूपक आदि का एकाध प्रयोग अवश्य दिखाई देता है, जो विषयों को पूर्ण रूप से स्पष्ट करने के लिए अनिवार्य होता है। स्थान स्थान पर उदाहरण देने से विषय और भी स्पष्ट हो जाता है। प्रायः ये प्रकरण के अन्त में 'साराँश यह है' 'संक्षेप में' आदि लिखकर अपने कथन का साराँश कुछ ही शब्दों में रख देते हैं, जिससे सारे का सारा विषय सरलता से समझ में आ जाता है।

भाषा—बाबू जी की भाषा शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। इन्होंने जहाँ तहाँ अरबी, फारसी, उर्दू, अँग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है, पर ये हैं सब तद्भव रूप में ही! ये विदेशी शब्दों को अपनी भाषा के अनुकूल प्रत्ययों से युक्त करने के पक्ष में थे। भाषा में मुहावरों और कहावतों का अभाव है। हिन्दी में ये 'गङ्गा, मंगल आदि' शब्दों में प्रयुक्त वर्णों के पञ्चम वर्णों के स्थान पर अनुस्वर प्रयुक्त करके गंगा, मंगल आदि की तरह लिखना अधिक पसन्द करते थे। इन्होंने विराम चिह्नों का प्रयोग अत्यावश्यक स्थलों पर ही किया।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि बाबू श्याम सुन्दरदास हिन्दी के उत्कृष्ट समालोचक, श्रेष्ठ निबन्धकार तथा कर्मठ साहित्यकार हैं। नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना, हिन्दी शब्द सागर का सम्पादन आदि ऐसे कार्य हैं जिनके लिए हिन्दी संसार इनका चिर ऋणी रहेगा।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—सं० १९३२, काशी।
पिता— बाबू देवीदास खन्ना।
शिक्षा— बी० ए० पर्यन्त।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धर्म के पालने के लिए पास के एक खेत में चरी बो रखी थी। ज्वार की पत्तियाँ ऐंठऐंठ कर बत्तियाँ बन गई थीं। मैं भी जीव-दया प्रचारणी सभा का भूतपूर्व मेम्बर होने के नाते नौनिहाल किन्तु अब तन मन मुर्झाये हुए नौ उम्र पौधों की बेबसी पर और अपनी गाढ़ी कमाई के बीस रुपयों की बरबादी पर दो चार आँसू बहा देता। लेकिन उनसे होता क्या? यदि ये रीतकाल के काव्यों की विरहिणी गोपिकाओं के समान भी होते जिनसे समुद्र का पानी खारी हो गया था तो भी वे खारी होने के कारण सिंचाई का काम न देते।"

बाबूजी की शैली में स्थान-स्थान पर हास्य तथा व्यंग के दर्शन होते हैं। विषयानुकूल कहीं कहीं तो यह व्यंग अत्यन्त ही मार्मिक तथा चुटीला हो जाता है। स्थान स्थान पर हास्य में सरसता लाने के लिए मुहावरों, कहावतों तथा अन्य भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है—

जीवनी तथा परिचय—आधुनिक युग के प्रसिद्ध निबन्धकार एवं उत्कृष्ट समालोचक बाबू गुलाबराय का जन्म माघ शुक्ल ४ सं० १९४४ वि० को इटावा में हुआ था। इनके पिता श्री भवानी प्रसाद एक धार्मिक प्रवृत्ति के सरकारी कर्मचारी थे। इनकी माता कृष्ण की उपासिका थीं और सूर के पदों को बड़े प्रेम से गाया करती थीं। माता पिता की धार्मिक प्रवृत्ति का प्रभाव बालक पर भी पड़ा और बाबू जी की प्रवृत्ति धर्म तथा दर्शन की ओर गई। इनके जन्म के कुछ समय बाद ही पिताजी की बदली मैनपुरी को हो गई। यहाँ पर बाबूजी की शिक्षा का आरम्भ हुआ। इन्होंने सन् १९०५ में मिशन हाई स्कूल, मैनपुरी से हाईस्कूल, सन् १९११ में 'आगरा कालेज' आगरा से बी० ए० तथा सेण्ट जौन्स कालेज आगरा से एक अध्यापक की भाँति-दर्शन शास्त्र में एम० ए० की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं। इसके बाद ये छतरपुर रियासत में नौकर हो गये। वहीं से सन् १९१७ में इन्होंने एल० एल० बी० की परीक्षा उत्तीर्ण की। इन्होंने रियासत में महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी, दीवान तथा चीफ जज के रूप में कार्य किया। वहाँ अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त ये आगरा में आकर रहे और कई वर्षों तक सेण्ट जोन्स कालेज में अध्यापन कार्य तथा 'साहित्य सन्देश' नामक आलोचना प्रधान मासिक पत्र का सम्पादन करते रहे। सन् १९६३ में बाबूजी का शरीरान्त हो गया।

रचनाएँ—श्री बाबूजी ने मौलिक तथा सम्पादित दोनों प्रकार की रचनाएँ की हैं। 'फिर निराश क्यों' तर्क शास्त्र, कर्त्तव्य शास्त्र, मैत्री धर्म शान्ति धर्म, पाश्चात्य दर्शनों का इतिहास, नवरत्न, प्रबन्ध प्रभाकर, प्रबन्ध माला, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, हिन्दी नाट्य विमर्श, सिद्धांत और अध्ययन काव्य के रूप, जीवन पथ, ठलुआ क्लब, मेरी असफलताएँ आदि' इनकी मौलिक कृतियाँ हैं। भाषा भूषण, कादम्बरी, कथासार आदि इनके सम्पादित ग्रन्थ हैं।

वर्ण्य विषय—श्री बाबूजी हिन्दी के उत्कृष्ट आलोचक तथा मौलिक निबन्धकार हैं। बाबूजी की आलोचना पर इनके व्यक्तित्व की अनोखी छाप है। इसमें तर्कपूर्ण विश्लेषण के साथ-साथ भारतीय सिद्धान्तों की विवेचना पाई जाती है। पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्तों को भी भारतीयता के साँचे में ढालकर प्रस्तुत कर देना बाबूजी की प्रधानता है।

निबन्ध के क्षेत्र में बाबूजी का क्षेत्र धर्म, दर्शन और साहित्य है। इनके निबन्धों पर इनके अध्ययन की पूरी छाप है। यद्यपि आलोचक के रूप में बाबूजी अधिक प्रसिद्ध हैं। किन्तु उनकी प्रतिभा का पूर्ण विकास हमें इनके निबन्धों में दृष्टिगोचर होता है। आत्मा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भिव्यक्ति का जो सुन्दर रूप हमें बाबूजी के निबन्धों में दृष्टिगोचर होता है, वह हिन्दी के बहुत कम निबन्धकारों में पाया जाता है।

साहित्य के क्षेत्र में बाबूजी ने सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक दोनों ही ढंग के निबन्ध लिखे हैं। बाबूजी ने 'मेरी असफलताओं' के नाम से आत्म कथा के रूप में अपने जीवन के कुछ मनोरंजक चित्र उपस्थित किये हैं। 'मेरे निबन्ध' नामक पुस्तक में संग्रहीत निबन्धों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि बाबूजी जीवन और जगत के विचित्र रूपों तथा पहलुओं के प्रति सावधानी और निष्पक्षता के साथ अपने स्वतन्त्र और निष्पक्ष विचारों की अभिव्यक्ति कर सकते हैं। इस आलोक में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आगरा के राजामण्डी स्टेशन के नव निर्मित भवन के सम्बन्ध में अभिव्यक्त बाबूजी के निम्न विचार दर्शनीय हैं—

"स्टेशन में सबसे उल्लेखनीय है तीसरे दर्जे का प्रतीक्षालय, उससे संलग्न स्नान ग्रह आदि। जलपान ग्रह भी उसकी प्रतिष्ठा के अनुरूप है। उन सबको देखकर यह भान होने लगा कि साम्य की ओर युग बढ़ रहा है। इस साम्य में नीची श्रेणी का उत्थान ही नहीं वरन् ऊँची श्रेणी का कुछ समतलीकरण भी है। द्विवेदी और प्रथम श्रेणी को एक कर भेदीकरण की दूषित नीति का उन्मूलन कर दिया गया है। पार्थक्य प्रेमी प्रथम श्रेणी के सम्भ्रान्त लोग अब भी आगरा केन्ट की शरण लेंगे। पुराने राजामण्डी स्टेशन यात्रियों को निकटवर्ती होटलों और धर्मशालाओं में चाहे मुफ्त ठहरने की जगह मिल जाय, किन्तु धर्मशाला तक पहुँचने में जेब का भार हल्का हो जायगा। शायद इसलिए कि उनको जागरणशील रहने की आवश्यकता है। यह सब सुविधाएं समय के साथ प्रस्तुत हो जायेंगी, तब तीसरे दर्जे का प्रतीक्षालय चिरंजीवी रहे।"

शैली—विषय के अनुकूल बाबूजी की शैली में अन्तर आता रहा है। प्रायः बाबूजी ने दो प्रकार के निबन्ध लिखे हैं—विचारात्मक और भावात्मक। अतः बाबूजी की शैली के भी हमें दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं—विचारात्मक अथवा विवेचनात्मक और भावात्मक।

विवेचनात्मक शैली—आलोचना तथा विचारात्मक निबन्धों में विवेचनात्मक शैली के दर्शन होते हैं। इस शैली में विचारों को पुष्ट करने के लिए तर्क का आश्रय लिया गया है। इस विवेचनात्मक शैली में जहाँ बाबूजी साहित्यिक तथा दार्शनिक विषयों पर गम्भीरता से विचार व्यक्त करते हैं, वाक्य अपेक्षाकृत लम्बे तथा दुरूह से हो जाते हैं। किन्तु जहाँ ये वर्तमान समस्याओं या प्राचीन सिद्धान्तों की व्याख्या अथवा कवियों की व्याख्यात्मक आलोचना करते हैं, वाक्य सीधे, सरस तथा भावाभिव्यञ्जता में पूर्ण सफल होते हैं। इस प्रकार की शैली का एक उदाहरण देखिए—

"राष्ट्रीय पर्व का मानना कोरी भावुकता नहीं है। इस भावुकता का मूल्य है भावुकता से संक्रामकता होता है और फिर वह शक्ति का संचार करती है। विचार हमारी दिशा को दिग्दर्शन कर सकते हैं, किन्तु कार्य सम्पादन की प्रबल प्रेरणा और शक्ति भावों में ही निर्मित रहती है। भाव भी जब तक वैयक्तिक रहते हैं, तब तक 'एक चना भाड़ नहीं फोड़ सकता' की बात सार्थक करते हैं।"

भावात्मक शैली—भावात्मक शैली में विचारों और भावों का सुन्दर समन्वय है। इस प्रकार की शैली में अभिभूत होते हुए भी बाबूजी की तर्क बुद्धि उनका साथ नहीं छोड़ती और ये निबन्ध पाठकों पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ जाते हैं। इस प्रकार की शैली में गद्य काव्य जैसा आनन्द आता है। 'नर से नारायण' नामक निबन्ध से उद्धृत इस प्रकार की शैली का एक उदाहरण देखिए—

"सितम्बर के महीने में आगरे में पानी की त्राहि त्राहि मची थी। मैंने भी वैश्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धर्म के पालने के लिए पास के एक खेत में चरी बो रखी थी। ज्वार की पत्तियाँ ऐंठऐंठ कर बत्तियाँ बन गई थीं। मैं भी जीव-दया प्रचारणी सभा का भूतपूर्व मेम्बर होने के नाते नौनिहाल किन्तु अब तन मन मुर्झाये हुए नौ उम्र पौधों की बेबसी पर और अपनी गाढ़ी कमाई के बीस रुपयों की बरबादी पर दो चार आँसू बहा देता। लेकिन उनसे होता क्या? यदि ये रीतकाल के काव्यों की विरहिणी गोपिकाओं के समान भी होते जिनसे समुद्र का पानी खारी हो गया था तो भी वे खारी होने के कारण सिंचाई का काम न देते।"

बाबूजी की शैली में स्थान-स्थान पर हास्य तथा व्यंग के दर्शन होते हैं। विषयानुकूल कहीं कहीं तो यह व्यंग अत्यन्त ही मार्मिक तथा चुटीला हो जाता है। स्थान स्थान पर हास्य में सरसता लाने के लिए मुहावरों, कहावतों तथा अन्य भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है—

"ताजा व ताजा, नौ व नौ, गर्मागर्म, प्रतिक्षण की टटकी खबर सुनने के अभ्यस्त नारद मुनि के अवतार स्वरूप समाचार पत्रों के समुत्सुक पाठकों को जब सात समुन्दर पार विलायत की भी एक छाक की पुरानी खबरें बासी और बेमजा लगती हैं, तब उनको आगरे की कई महीने पुरानी बात सुनना उनकी सुरुचि का अपमान करना ही नहीं है, वरन् उनका 'ब्लेक होल' की यातना देना होगा।"

भाषा—बाबूजी की भाषा सस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली है। भावात्मक निबन्धों में संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ साथ उर्दू के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। स्थान स्थान पर कहावतों, मुहावरों तथा अंग्रेजी के 'कम्पोजीटरों' जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है। विचारात्मक निबन्धों में संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है उर्दू तथा अंग्रेजी के शब्द भी अपेक्षाकृत कम हैं भाषा में संस्कृत तथा हिन्दी के कवियों की उक्तियों का भी यथास्थान समावेश किया है जिससे भाषा में मनोहरता तथा सरसता आ गई है।

संक्षेप में बाबूजी आधुनिक काल के मर्मज्ञ समालोचक तथा उत्कृष्ट कोटि के निबन्धकार हैं। दुरूह शास्त्रीय विषय को सरल तथा छात्रोपयोगी शैली प्रस्तुत करने की जैसी कुशलता बाबूजी में पाई जाती है, वैसी हिन्दी के अन्य निबन्धकारों में नहीं मिलती है।

साराँश

जन्म सवत् तथा स्थान—माघ शुक्ला ४ सं० १९४४, इटावा।

पिता— श्री भवानी प्रसाद

शिक्षा— एम० ए०, एल-एल० बी०।

मृत्यु— सन् १९६३।

रचनाएँ— ऊपर देखो

वर्ण्य विषय— निबन्ध—धर्म, दर्शन, साहित्य, आत्मालोचन आदि। आलोचना—सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक।

शैली— १—विवेचनात्मक, २—भावात्मक (स्थान स्थान पर हास्य तथा व्यंग से पूर्ण।)

भाषा— संस्कृत तत्सम शब्दों से शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली, आवश्यकतानुसार उर्दू और अँग्रेजी के शब्दों तथा कहावतों और मुहावरों का भी प्रयोग है।

श्री राय कृष्णदास

जीवनी तथा परिचय—श्री रायकृष्णदास का जन्म १९४७ वि० में काशी के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

एक धनी अग्रवाल परिवार में हुआ था। 'राय' इनकी वंश परम्परागत उपाधि है, जो इनके पूर्वजों को शाही जमाने में प्राप्त हुई थी। इनके पिता का नाम राय प्रह्लादराय था, जो हिन्दी संस्कृत के विद्वान थे। इनके पिता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द के फूफेर भाई तथा पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी और मैथलीशरण गुप्त के मित्र थे। अतः राय कृष्णदास का परिचय बाल्यकाल में ही साहित्यिकों से हो गया था और इनके प्रभाव से ही ये आठ वर्ष की ही अवस्था में कविता करने लगे थे।

श्री राय जी की शिक्षा का आरम्भ घर पर ही हुआ था; किन्तु जब ये १२ वर्ष के ही थे, तब इनके पिता का देहान्त हो गया और इनकी शिक्षा का क्रम शिथिल हो गया। इनके बाद ये घर पर ही हिन्दी, संस्कृति तथा बंगला का अध्ययन करते रहे। १५ वर्ष की अवस्था में इन्होंने 'दुलारे रामचन्द्र' नामक उपन्यास लिखना भी आरम्भ किया था, पर वह पूरा न हो सका। इनकी कविता, गद्य-गीत और कहानियाँ सरस्वती में प्रकाशित होती थी।

साहित्यिक होने के साथ साथ रायजी भारतीय कला के पण्डित और पारखी भी हैं। इन्होंने पर्याप्त धन व्यय करके अपने 'कला-भवन' में बहुत सी कलात्मक वस्तुओं का संग्रह किया। बाद में इन्होंने ये 'कला-भवन' नागरी प्रचारिणी सभा, काशी को दान कर दिया और आजकल यह सभा के ही पास है।

रचनाएँ—रायजी ने कविता, गद्य-काव्य, कहानियाँ, गल्प तथा कला सम्बन्धी लेख लिखे हैं। इनकी रचनाएँ निम्न हैं—

कविता संग्रह—भावुक, ब्रज, रज।
गद्य काव्य—साधना, छाया पथ, सन्तोष, प्रवाल।
कहानी तथा गल्प संग्रह—अनाख्या, सुधांशु, आँखों की थाह।
कला— विषयक लेख, भारतीय मूर्ति कला भारतीय चित्रकला।

वर्ण्य विषय—रायजी ने कविताएँ गद्य काव्य कहाँनियाँ तथा कला सम्बन्धी लेख लिखे हैं। इन्होंने आरम्भ में उपन्यास लिखना आरम्भ किया था, पर इसमें इन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई।

कविता लेखन—कविता के क्षेत्र में रायजी श्री मैथिलीशरण गुप्त से प्रेरणा प्राप्त करके आगे बढ़े हैं। इनकी कविता में भावनाओं की प्रधानता है। हृदय की कोमलता और भावनाओं के चित्रण से इनकी कविताओं में अनूठापन आ गया है। भावनाओं के झूले में झूलते हुए ये दार्शनिकता के लोक में विचरण करने लगते हैं और अपनी कविताओं में चिन्मयता उत्पन्न कर देते हैं।

गद्य काव्य विवेचन—राय जी की गद्य काव्य हिन्दी में अपने ढङ्ग की अद्वितीय है। पद्य काव्य के क्षेत्र में ये बङ्गला के गीतों से प्रभावित हुए हैं। इनकी 'साधना' नामक पुस्तक श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीताञ्जलि' के ढंग पर लिखी गई है। इसके गद्य गीतों में भावुकता की प्रधानता है और इनमें 'रहस्यवाद' के दर्शन होते हैं। इनके गद्य गीतों का एक उदाहरण देखिए—

"और जानते हो, मेरे मानस ने अपने खेलने का स्थान कहाँ रखा है? जिनका विलास स्थान भी मानस ही है उन चरण कमलों में जिन्हें मेरा मानस सदैव अपनी तरंगों से छुआ करे, जिनके मधुर मधुपान से यह छका रहे, जिनके पराग से यह पंकिल वन और जिनकी रतनारी छाया से यह रत्नाकर की छवि को मन्द करे।"

कहानी कला—रायजी के भाव मूलक तथा घटना मूलक ढंग की कहानियाँ लिखी हैं।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

विषय में विषमता होने पर भी काव्यात्मकता की अधिकता होने के कारण दोनों ढंग की कहानियाँ एक सी ही ज्ञात होती हैं इनकी कहानियों के पात्र कल्पना लोक से उतर कर रंग मंच पर आते हैं और अपने आदर्शों और सात्विक भावनाओं से पाठक के हृदय पर अपना प्रभाव छोड़ जाते हैं।

भाषा—रायजी की भाषा शुद्ध सरल, व्यवहारिक तथा प्रभावपूर्ण खड़ी बोली है। इसमें संस्कृत के सरल, तत्सम शब्द तथा उर्दू, फारसी के बोलचाल के शब्दों का पर्याप्त प्रयोग किया है। स्थान-स्थान पर तद्भव तथा देशी भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से भाषा में सरलता आ गई है। इन्होंने उर्दू के मुहावरों को हिन्दी का रूप देकर प्रयुक्त किया है। इनकी भाषा अनठी उपमाओं, रूपकों और प्रतीकों युक्त है। 'बीज की बात' से उद्धृत अवतरण में इनका अलङ्कार प्रयोग दर्शनीय है—

'एक दिन आकाश में घटा घिर आई, बूँदें पड़ने लगीं, पृथ्वी ने एक सोंधी उसास ली और प्रकृति बाजीगरनी भानुमती के पिटारे, हम बीज, अपना इन्द्र जाल पसारने लगे। दो ही चार दिन में अँकुरित होकर खल्वाट पृथ्वी को हमने गहरी हरी कुन्तल राशि से आच्छादित करना शुरू कर दिया।"

शैली—रायजी की प्रधान शैली 'भावात्मक अलंकृत शैली' है। इसमें वाक्य छोटे छोटे तथा भावों को व्यक्त करने में पूर्णतया समर्थ हैं। गहन तथा गम्भीर दार्शनिक भावों को सरलता तथा सरसता से व्यक्त कर देना रायजी की शैली की प्रमुख विशेषता है। इनकी शैली पर रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा जयशंकर प्रसाद का प्रभाव पड़ा है। प्रतीकात्मकता, साँकेतिकता तथा इनका चमत्कार प्रियता ने इनकी शैली को मधुर, भावात्मक तथा चमत्कारपूर्ण बना दिया है। ऊपर लिखा हुआ, "और जानते हो मेरे मानस ने अपने खेलने का स्थान कहाँ रखा है ?" "यह रत्नाकर की छवि को मन्द करे।" अवतरण इसी शैली का उदाहरण है।

संक्षेप में राय कृष्णदास ने सरल तथा अलंकृत भाषा में गम्भीर तथा गूढ़ दार्शनिक विचारों को प्रकट कर हिन्दी में जो विशिष्ट स्थान बना लिया है, वह हिन्दी के अन्य किसी कलाकार को प्राप्त नहीं है।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—सं० १९४९, काशी।

पिता— राय प्रह्लादराय।

रचनाएँ— कविता संग्रह—भावुक, ब्रज रज।
गद्य काव्य—साधना, छाया पथ, संताप, प्रवाल कहानी तथा गल्प संग्रह—अनाख्या, सुधाँशु, आँखों की थाह।
कला विषयक लेख—भारतीय मूर्ति-कला, भारतीय चित्र कला।

वर्ण्य विषय— शुद्ध, सरल, व्यावहारिक तथा प्रवाहपूर्ण खड़ी बोली है, जिसमें संस्कृत के सरल तत्सम शब्द, तदभव शब्द, देशी भाषाओं के शब्द और उर्दू, फारसी की बोल-चाल के शब्द मिले हुए हैं। उर्दू मूहावरों का प्रयोग हिन्दी का रूप देकर किया है।

शैली— भावात्मक, अलंकृत शैली।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

जीवनी तथा परिचय—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का जन्म शुक्ला एकादशी सं० १९६४ को बलिया जिले के छपरा नाम के ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० अनमोल द्विवेदी और माता का नाम ज्योतिर्कली है। इनकी शिक्षा का प्रारम्भ हिन्दी से हुआ। इन्होंने काशी विश्वविद्यालय से ज्योतिष तथा साहित्य में आचार्य परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। इन्होंने इन्टर परीक्षा उत्तीर्ण होने के बाद बी०ए० में भी बैठने का प्रयत्न किया, किन्तु अस्वस्थ होने के कारण उसमें न बैठ सके।

शिक्षा समाप्त करने के बाद ये 'शान्ति निकेतन' चले गये और वहाँ हिन्दी विभाग में कार्य करने लगे। वहाँ रवीन्द्रनाथ ठाकुर तथा आचार्य क्षिति मोहनसेन के प्रभाव से इन्होंने साहित्य का गहन अध्ययन तथा निर्माण करना आरम्भ कर दिया। द्विवेदीजी हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, बँगला, भाषाओं के विद्वान हैं और भक्तकालीन साहित्य के मर्मज्ञ हैं। इन्होंने कबीर, सूर, तुलसी, विद्यापति, चण्डीप्रसाद आदि तथा बंगाली भक्त कवियों का गवेषणापूर्ण अध्ययन किया है। लखनऊ विश्वविद्यालय से इन्हें डी० लिट० की उपाधि मिल चुकी है। 'सूर साहित्य' पर इन्दौर से इन्हे स्वर्णपदक और 'कबीर' पर मंगलाप्रसाद पारितोषक प्राप्त हुए हैं। कुछ समय तक ये काशी विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के रूप में कार्य कर चुके हैं।

रचनाएँ—हिन्दी साहित्य की भूमिका, सूर साहित्य, कबीर, अशोक के फूल, बाणभट्ट की आत्म-कथा, हिन्दी साहित्य का इतिहास, विचार और वितर्क, विश्व परिचय लाल कनेर आदि इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। इन्होंने अनेक स्वतन्त्र निबन्ध भी लिखे हैं, जो पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर पुस्तक रूप में संग्रहीत हो चुके हैं।

वर्ण्य विषय—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी आधुनिक-काल के प्रसिद्ध आलोचक तथा निबन्धकार हैं। भारतीय संस्कृति का इतिहास, ज्योतिष, साहित्य और विभिन्न धर्मों तथा सम्प्रदायों का विवेचन द्विवेदो जी के प्रिय विषय हैं। द्विवेदी जी ने कबीर, सूर, तुलसी आदि पर विद्वत्तापूर्ण आलोचनाएँ लिखी हैं जिनमें इन्होंने तर्कपूर्ण शैली तत्सम्बन्धी अनेक संदेहों का निराकरण किया है।

द्विवेदी ने विचारात्मक तथा आलोचनात्मक ढङ्ग के सुन्दर निबंध लिखे हैं। द्विवेदी जी के निबंधों में शास्त्रीय विवेचन, बौद्धिक चिंतन तथा कविता की कमनीयता का सुन्दर समन्वय है। इनमें विचारों की गम्भीरता, निरीक्षण की नवीनता और विश्लेषण की सूक्ष्मता रहती है। यद्यपि इनमें बौद्धिक प्रतिभा की प्रधानता है किन्तु स्वस्थ भावुकता मधुरता के मधुर मिलन से इनमें सरसता आ जाती है। इन निबंधों में स्थान-स्थान पर छोटे छोटे पौराणिक प्रसङ्गों, उद्धरणों दृष्टान्तों, उदाहरणों आदि का सुन्दर समावेश रहता है।

भाषा—द्विवेदी जी की भाषा शुद्ध, प्रौढ़ तथा परिमार्जित खड़ी बोली है। उनमें उर्दू फारसी तथा अंग्रेजी के अत्यन्त प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया गया है, पर अधिकता संस्कृत के तत्सम शब्दों की है। कहीं कहीं संस्कृत के श्लोकों को भी उद्धरण रूप में प्रस्तुत किया गया है। इनकी भाषा में मुहावरों का प्रयोग अत्यन्त ही कम है। संक्षेप में इनकी भाषा शुद्ध, परिमार्जित तथा विषय को स्पष्ट करने में पूर्णतया समर्थ है।

शैली—द्विवेदीजी ने 'विवेचनात्मक शैली' में लिखा है। इनकी शैली पर श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर की काव्यमयी शैली का प्रभाव पड़ा है, जिससे वह सरल तथा मधुर हो गई है। इनकी शैली श्री रामचन्द्र शुक्ल की शैली का अनुगमन करती है, पर जहाँ शुक्ल जी की शैली में गुम्फन है, वहाँ द्विवेदी जी शैली में विशद व्यापकता है, अतएव वह बोधगम्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा सरल है। 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' नामक निबंध से उद्धृत उनकी शैली का एक उदाहरण देखिए—

"मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य की दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता से न बचा सके, जो उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उनके हृदय को पर दुःख कातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्यिक कहने में मुझे संकोच होता है। मैं अनुभव करता हूँ कि हम लोग कठिन समय के भीतर से गुजर रहे हैं।

—ऐसा लग रहा है किसी विकट दुर्भाग्य के इङ्गति पर दलगत स्वार्थ के प्रेत ने मनुष्यता को दबोच लिया है।'

बाणभट्ट की आत्मकथा में इन्होंने अलंकृत, काव्यात्मक तथा चमत्कारपूर्ण शैली का प्रयोग किया है, यह इनकी प्रतिनिधि शैली नहीं है।

संक्षेप में द्विवेदी जी आधुनिक गद्य साहित्य के एक श्रेष्ठ निबन्धकार तथा आलोचक हैं और इन्होंने अपनी प्रतिभा से हिन्दी पाठकों को अपूर्व विचारात्मक सामग्री दी है।

सारांश

...प्रयोग भी किया है। भाषा विषय के अनुसार बदलता रहता है।

शैली—वियोगी जी की शैली को प्रधानतया दो रूपों में बाँटा जा सकता है···(१) दुरूह शैली (२) सरस तथा भावपूर्ण शैली।

दुरूह शैली—इनकी इस शैली पर संस्कृत के 'वाण भट्ट' की शैली का प्रभाव पड़ा है। इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है और लम्बे समासों का प्रयोग किया है। यह अनाकर्षक, अस्वाभाविक तथा क्लिष्ट है। इसका एक उदाहरण देखिए—

'प्यारे, तू नित्य ही मेरे द्वार पर सघन-घन तमासाच्छन्न-कृष्ण-वसन लसित निशि समय सुजन-मन-मोहनी रसिक-रस सोहिनी वेणु बजाता है, माधवी मल्लिका-मकरन्द लोलुप-मिलिंद-गुञ्जार समुल्लसित-नव-रस-पूरित सुप्रेम-प्रतिमा-समुदित-कवि हृदय द्वारा स्वच्छन्द आनन्द कन्द संदेश भेजता है।······ (तरंगिन)।

सरस तथा भाव पूर्ण—इनकी यह शैली अत्यन्त भावपूर्ण, प्रसाद गुण से युक्त, मनोहर तथा स्वाभाविक है। इसमें आवश्यकतानुसार उर्दू, फारसी, ब्रज भाषा आदि के शब्दों का प्रयोग किया गया...

वियोगी हरि

जीवनी तथा परिचय—श्री वियोगी हरि का पूरा नाम हरिप्रसाद द्विवेदी है। इनका जन्म संवत् १९५३ में छतरपुर रियासत में हुआ था। इनके पिता पं० बल्देव प्रसाद द्विवेदी कान्य कुब्ज ब्राह्मण थे। जब ये ६ मास के ही थे, इनके पिता का स्वर्गवास हो गया और इनका पालन पोषण इनके नाना के यहाँ हुआ। आरम्भ में इन्होंने घर पर ही हिन्दी संस्कृत का साधारण ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सम्वत् १९७२ में उन्होंने हाई स्कूल परीक्षा भी उत्तीर्ण करली थी। इन्हें बाल्यकाल से ही दर्शनशास्त्र से विशेष प्रेम है। इनका हृदय निष्कपट, कोमल, तथा राष्ट्र-प्रेम से परिपूर्ण है। इन्हें हरिजनों तथा दीन-दुखियों से विशेष प्रेम है और ये निरन्तर ही उनके उद्धार कार्य में लगे रहते हैं।

रचनाएँ— वियोगी जी ने मौलिक तथा अनूदित दोनों ही प्रकार की रचनाएँ की हैं, जो निम्न हैं—

मौलिक— काव्य-प्रेम, शतक, प्रेम-पथिक, प्रेमाञ्जलि, प्रेम परिचय, मेवाड़ केसरी,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सुकदेव, वकील की राम कहानी, असहयोग वीणा, वीर वाणी, श्री गुरु पुष्पाँजलि, कवि कीर्तन, अनुराग वाटिका, वीर सतसई ।

नाटक—वीर हरदौल, श्री छद्मयोगिनी नाटिका ।

गद्य काव्य—तरङ्गिनी, अन्तर्नाद, प्रार्थना, श्रद्धाकण ।

निबन्ध—साहित्य विहार ।

आत्म कथा—मेरा जीवन प्रवाह ।

अन्य गद्य ग्रन्थ—पगली, योगी, अरविन्द की दिव्य वाणी, मन्दिर प्रवेश आदि ।

सम्पादित—ब्रज माधुरी, सार, संक्षिप्त सूर सागर, बिहारी-संग्रह, तुलसी सूक्ति सुधा, पंचवटी आदि ।

भाव—पक्ष

वर्ण्य विषय—वियोगी जी की प्रतिभा बहुमुखी है। इन्होंने कवि निबन्धकार, नाटककार, सम्पादक तथा आलोचक के रूप में हिन्दी साहित्य की अनुपम सेवा की है। इनकी सभी रचनाओं पर इनके गम्भीर अध्ययन, परिपक्व विचार, भावुकता-पूर्ण कल्पना तथा दलित-प्रेम की पूरी पूरी छाप दृष्टिगोचर होती है।

संक्षेप में वियोगी जी की साहित्यिक विशेषताएँ निम्न हैं—

रचनाएँ—हिन्दी साहित्य की भूमिका, सूर साहित्य, कबीर, अशोक के फूल, बाण-भट्ट की आत्म-कथा, हिन्दी साहित्य का इतिहास, विचार और वितर्क, विश्व परिचय लाल कनेर आदि इनके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। इन्होंने अनेक स्वतन्त्र निबन्ध भी लिखे हैं, जो पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर पुस्तक रूप में संग्रहीत हो चुके हैं।

वर्ण्य विषय—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी आधुनिक-काल के प्रसिद्ध आलोचक तथा निबन्धकार हैं। भारतीय संस्कृति का इतिहास, ज्योतिष, साहित्य और विभिन्न धर्मों तथा सम्प्रदायों का विवेचन द्विवेदी जी के प्रिय विषय हैं। द्विवेदी जी ने कबीर, सूर, तुलसी आदि पर विद्वत्तापूर्ण आलोचनाएँ लिखी हैं जिनमें इन्होंने तर्कपूर्ण शैली तत्सम्बन्धी अनेक संदेहों का निराकरण किया है।

द्विवेदी ने विचारात्मक तथा आलोचनात्मक ढङ्ग के सुन्दर निबंध लिखे हैं। द्विवेदी जी के निबधो मे शास्त्रीय विवेचन, बौद्धिक चितन तथा कविता की कमनीयता का सुन्दर ... क्षमता

कायर तौ जीवत मरत, दिन में बार हजार ।
प्रान पखेरू वीर के, उड़त एक ही बार ।।
जोरि नाँव संग 'सिंह' पद, करत सिंह बदनाम ।
ह्वै है कैसे सिंह तुम, करि सृगाल के काम ।।
पाठ पढ़ावति मातु पितु, लै उछंग निज लाल ।
ललन ! वीर व्रत धारियो धरि पछारियो काल ।।

निबन्ध कला—वियोगी जी ने विविध विषयों पर सुन्दर निबन्ध लिखे हैं। इनके निबन्धों में बुद्धि तत्व की अपेक्षा हृदयतत्व की अधिकता है। देश भक्ति, दीनदुःखी हरिजन, उपेक्षित आदि इनके निबन्धों के मुख्य विषय हैं। भावुकता, चिन्तन शीलता तथा सरसता की दृष्टि से इनके निबन्ध हिन्दी साहित्य में अनुपम हैं।

नाटक कला—इनके नाटकों में भी भावुकता की प्रधानता है। ये साधारण कोटि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के होने पर भी हृदय को छूने की पूरी शक्ति रखते हैं और दर्शकों के हृदय को भाव विभोर करते हैं।

सम्पादक कला—सम्पादक के रूप में भी, वियोगी जी का अत्यन्त सम्मान है। इन्होंने सम्मेलन-पत्रिका, तथा 'हरिजन सेवक' नामक पत्रों का वर्षों तक योग्यता के साथ सम्पादन किया है। पात्रों के अतिरिक्त इन्होंने 'तुलसीदास' 'सूरदास' आदि की रचनाओं का सम्पादन भी किया है। 'विनय-पत्रिका' तथा 'ब्रज माधुरी सार' इनके श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

रस परिचय—वियोगी जी की रचनाओं में वीर, करुणा, शान्त तथा भक्ति रस के दर्शन होते हैं। 'वीर सतसई' इनकी वीर रस पूर्ण कविताओं का सुन्दर संग्रह है।

कला-पक्ष

भाषा—वियोगी जी की पद्य प्रधानतया ब्रजभाषा में है, जो संस्कृत तद्भव शब्दों से पूर्ण हैं। इसमें भावों के अनुसार शब्दों की कोमलता तथा सरसता आती रहती है। इनकी कुछ पद्य-रचनाएँ 'खड़ी बोली' में भी हैं, जो सरस, सरल तथा भाव पूर्ण है।

गद्य के क्षेत्र में वियोगी ने 'खड़ी बोली' का प्रयोग किया है। यह शुद्ध परिष्कृत तथा संस्कृत के तद्भव शब्दों से युक्त है। इसमें आवश्यकतानुसार उर्दू, फारसी, ब्रजभाषा आदि के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी किया है। भाषा विषय के अनुसार बदलती रहती है।

शैली—वियोगी जी की शैली को प्रधानतया दो रूपों में बाँटा जा सकता है···(१) दुरूह शैली (२) सरस तथा भावपूर्ण शैली।

दुरूह शैली—इनकी इस शैली पर संस्कृत के 'बाण भट्ट' की शैली का प्रभाव पड़ा है। इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है और लम्बे समासों का प्रयोग किया है। यह अनाकर्षक, अस्वाभाविक तथा क्लिष्ट है। इसका एक उदाहरण देखिए—

'प्यारे, तू नित्य ही मेरे द्वार पर सघन-घन तमासाच्छन्न-कृष्ण-वसन लसित निशि समय सुजन-मन-मोहनी रसिक-रस सोहिनी वेणु बजाता है, माधवी मल्लिका-मकरन्द लोलुप-मिलिंद-गुञ्जार समुल्लसित-नव-रस-पूरित सुप्रेम-प्रतिमा-समुदित-कवि हृदय द्वारा स्वच्छन्द आनन्द कन्द संदेश भेजता है।······ (तरंगिन)।

सरस तथा भाव पूर्ण—इनकी यह शैली अत्यन्त भावपूर्ण, प्रसाद गुण से युक्त, मनोहर तथा स्वाभाविक है। इसमें आवश्यकतानुसार उर्दू, फारसी, ब्रज भाषा आदि के शब्दों का प्रयोग किया गया है। कवियों के उद्धरणों के द्वारा यह शैली अधिक प्रभावोत्पादक तथा अभिव्यंजनापूर्ण हो गई है। इसका एक उदाहरण देखिए—

'तो क्या हमारे श्री लक्ष्मीनारायण जी' दरिद्र नारायण' हैं? इस फकीर की सदां से तो यही मालूम होता है। तो क्या हम भ्रम में थे। अच्छा अमीरों के शाही महलों में वह पैर भी नहीं रखता।

मेरे लिये खड़ा था दुखियों के द्वार पर तू
मैं बाट जोहता था तेरी किसी चमन में।

'हजरत खड़े भी कहाँ होने गये।''

अलंकार विधान—यद्यपि इन्होंने सभी अलंकारों का प्रयोग किया है। पर उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, अनुप्रास आदि इनके विशेष प्रिय अलंकार हैं। अलंकारों के प्रयोग से इनकी रचनाओं में सरलता तथा स्वाभाविक आ गई है और वे भावोत्पादन में सहायक हुए हैं। लाटानुप्रास का उदाहरण देखिए—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पराधीन जो जनु, नहीं स्वर्ग नरकता हेतु ।

पराधीन जो जनु नहीं स्वर्ग नरकता हेतु ।

इसी प्रसंग में निम्न 'परिसंख्या' अलंकार भी दर्शनीय है—

पावस में ही धनुष अब, नदी तीर ही तीर ।
रोदन में ही लाल दृग, नव रस ही में धीर ।

सारांश

इस प्रकार हम देखते हैं कि वियोगी जी ने अपनी पद्य-गद्य मय रचनाओं के द्वारा हिन्दी-साहित्य की अद्वितीय सेवा की है और उनका नाम आधुनिक काल के उच्च साहित्यकारों में प्रसिद्ध है ।

जन्म संवत्
तथा स्थान—१९५३, रियासत छतरपुर ।
पिता— पं० बलदेव प्रसाद द्विवेदी
रचनाएँ— उपर देखो ।
वर्ण्य विषय— काव्य, निबन्ध, नाटक, सम्पादन, आदि ।
रस— करुणा, वीर, शान्त, भक्ति ।
भाषा— पद्य—व्रज तथा खड़ी बोली । गद्य—शुद्ध तथा परिष्कृत खड़ी बोली ।
शैली— (१) दुरूह शैली (२) सरस तथा भावपूर्ण शैली ।
अलंकार— प्रायः सभी उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा, अनुप्रास में विशेषता ।

कवियों पर आधारित प्रश्न और उत्तर

प्रश्न १—कबीर एक समाज सुधारक कवि थे इस कथन की सार्थकता सिद्ध कीजिए ।
(हाई स्कूल परीक्षा उ० प्र० १९६१)

उत्तर—प्रस्तावना—कबीर ने जिस समय जन्म लिया था, उस समय उत्तर भारत के समाज की दशा अति शोचनीय थी । राजनीतिक दृष्टि से हिन्दू पराजित हो चुके थे और मुसलमान विजयी । यद्यपि दोनों साम्प्रदायों को अब एक ही जगह पर रहना था, पर उनके धर्म और रीति रिवाज उन्हें मिलने से रोक रहे थे । वे थोड़ी थोड़ी बातों पर एक दूसरे से लड़ बैठते थे । मूलरूप में दोनों ही किसी न किसी प्रकार से एक ही ईश्वर को मानते थे, पर उनके धर्मों के बाह्य-आचार उन्हें एक दूसरे से अलग करते थे ।

हिन्दू और मुसलमान दोनों ही धर्म के सच्चे रूप को भूलकर बाहरी— रीति रिवाज जैसे मूर्ति-पूजा, तीर्थ यात्रा, रोजा-नमाज आदि को ही सच्चा धर्म मानते थे ।

हिन्दुओं में भी जाति पाँति के कारण घोर विशृंखलता थी । ब्राह्मण शूद्रों से घृणा करके उन्हें छूना भी पाप समझते थे । इसी प्रकार पढ़े लिखे लोग भी बे पढ़ों को अति नीच और हेय मानते थे । इस प्रकार सारा समाज आपसी द्वेष, घृणा और पापाचार से लिप्त था । कबीर ने समाज की इस दशा को देखा ओर उसका सुधार करने का बीड़ा उठाया । उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमान को एक दृष्टि से देखकर उनकी बुराइयों को दूर करने के लिये उन्हें कड़ी फटकार लगाई । धर्म के सच्चे स्वरूप को जनता के सामने रखा और जाति पाँति का डटकर विरोध किया । उन्होंने अपनी सुधार की भावना को जिन रूपों में प्रकट किया है, उनमें मुख्य निम्न हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साम्प्रदायिकता का विरोध—कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों को एक ही दृष्टि से देखते थे, अतः उन्होंने दोनों को ही कड़ी फटकार लगाते हुए अपनी अपनी बुराइयों को दूर करने का उपदेश दिया है। वे कहते हैं—

अरे इन दोउन राह न पाई,
हिन्दू अपनी करै बड़ाई गागर छुवन न देई।
वेश्या के पाइन तर सोवै यह देखी हिन्दुवाई ॥
मुसलमान के पीर औलिया मुरगी मुरगा खाई।
खाला केरी बेटी ब्याहैं घरहिं में करें सगाई ॥

उन्होंने दोनों को एक ही ईश्वर का पुत्र बताकर आपसी वैर-विरोध का त्याग करने का उपदेश देते हुए कहा है—

हिन्दू-तुरक की एक राह है, सतगुरु इहै बताई।

जाति पाँति का विरोध—कबीर का मत है कि ब्राह्मण और शूद्र में एक ही सा खून है और सभी एक ही ईश्वर की सन्तान हैं। उनमें न कोई बड़ा है और न कोई छोटा। वास्तव में जो सत्कर्म करता है वही श्रेष्ठ है चाहे वह किसी जाति का क्यों न हो। जो ईश्वर का भजन करता है वह ईश्वर का हो जाता है, उसकी कोई भी जाति क्यों न हो।

जाति पांति पूछै नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि को होई।

बाह्य आडम्बरों का विरोध—कबीर मन की शुद्धि और विचारों की पवित्रता पर विशेष बल देते थे। जय-माला, छापा-तिलक, मूर्ति—पूजा, रोजा-नमाज, वेद शास्त्रों का अध्ययन आदि सब उनके मत से बाह्य आचार हैं और इनसे ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती, केवल अभिमान और अनाचारों की वृद्धि होती है, वे नमाज का विरोध करते हुये कहते हैं—

काँकर पाथर जोरिकर मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बाग दे, बहिरा हुआ खुदाय ॥

इसी प्रकार मूर्ति पूजा के विरोध में भी वे कहते हैं—

दुनियाँ ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाइ।
घर की चकिया कोइ न पूजै, जाको पीसो खाइ ॥

वे कथनी और करनी में भेद रखने के घोर विरोधी थे और कहते थे—

कथनी मीठी खाँड सी करनी विस की लोय।
कथनी तजि करनी करै, बिस तै अमृत होय ॥

हिंसा का विरोध—कबीर को हिंसा से अति घृणा थी। वे माँस खाने वालों के बारे में कहते हैं—

बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात हैं ताको कौन हवाल ॥

उन्होंने वे हलाल वे झटका मारें, आग दोऊ घर लागी' कह हिंसा करने वाले हिन्दू और मुसलमान दोनों को ही फटकारा है।

अहंकार भावना का त्याग—समाज में उच्च जाति, शास्त्रीय ज्ञान, रूप यौवन, धन-सम्पति भजन पूजा आदि के कारण अभिमान और अहंकार करने वालों के कारण समाज में द्वेष की भावना फैलती है, अतः अबीर ने ससार को अनित्य मानकर इन सभी को अभिमान को छोड़ने के लिए कहा है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कबिरा गरब न कीजिये, इह जीवन की आस।
टेसू फूला दिवस दस, खांखर भया पलास ॥
माटी केरा बुदबुदा, अस मानस की जात।
देखत ही छिप जायगा, ज्यों तारा परभात ॥

उपसंहार—इस प्रकार हम देखते हैं कि कबीर सच्चे हृदय के एक समाज सुधारक कवि थे और उन्होंने निर्भय होकर अपने समय की सभी सामाजिक बुराइयों का डटकर विरोध किया है।

प्रश्न २—"सूरदास का बाल वर्णन बहुत स्वाभाविक है"—इस कथन पर अपने विचार प्रकट कीजिये। (उक्त, १९६२)

अथवा

'सूरदास का वात्सल्य वर्णन हिन्दी साहित्य में अद्वितीय है।' इस कथन पर उद्धरण देते हुए अपने विचार लिखिए। (उक्त, १९६५)

उत्तर—सूर 'पुष्टि मार्ग' के अनुयायी हैं, जिसमें बालकृष्ण की भक्ति पर बल दिया गया है, अतः सूर का मन पूरी तौर से अपने उपास्य देव बालकृष्ण में रम रहा था और उनके लिये यह स्वभाविक ही था कि वे उनकी बाल लीलाओं का वर्णन करते। वे एक महाकवि हैं, अतः उनके हृदय ने बालक कृष्ण के साथ एकरूपता स्थापित करके बाल भाव के जो चित्र प्रस्तुत किये हैं, वे देश और काल की सीमा को लाँघ कर सार्वदेशिक और सार्वकालिक बन गये हैं। उन्होंने बालक कृष्ण, माता यशोदा, पिता नन्द, गोपियाँ और ग्वाल वालों का ऐसा विशद वर्णन किया है कि कृष्ण की बालक्रीडा से सम्बन्ध रखने वाला कोई भाव तथा चेष्टा शेष नहीं रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि सूर इस क्षेत्र का प्रत्येक कौना झाँक आये हैं और किसी दूसरे कवि के लिये उन्होंने इस विषय में कहने के लिये कुछ भी नहीं छोड़ा है। उनके इस वर्णन का प्रभाव इसलिए और भी अधिक पड़ता है कि उनके आज भी संसार के प्रत्येक देश के प्रत्येक घर में छोटे बालक के रूप में, नन्द पिता के रूप में और ग्वालबाल संगी-साथियों के रूप में दिखलाई पड़ते हैं। आप बालकों से भरे पूरे किसी भी घर में चले जाइये सूर के बालकृष्ण के दर्शन आपको मिल जायेंगे। और किसी वस्तु को लेने के लिए मचलता हुआ बालक 'लैं हौं री माँ चन्द खिलौना लैंहों' कह मचलते हुये कृष्ण के रूप में दिखलाई देगा।

सूर ने वात्सल्य के दोनों पक्ष आलम्बन (कृष्ण) और आश्रय (यशोदा) का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है।

सूर ने वात्सल्य के दोनों पक्षों (संयोग और वियोग) का मार्मिक वर्णन किया है। जो यशोदा कृष्ण को पालने में झुलाते समय आनन्द विभोर हो लोरी गाया करती थीं, वही कृष्ण के मथुरा जाते समय व्याकुल हो जाती है और कहती है—

'है कोउ ब्रज में हितू हमारो, चलत गोपालहिं राखै।'

कृष्ण के मथुरा जाने पर उसे सदैव उन्हीं का ध्यान रहता है और अवसर प्राप्त होते ही वह कृष्ण को सुविधा दिलवाने के लिये देवकी के पास उनके स्वभाव का सन्देश भेजती है—

संदेसो देवकी सों कहियो
हों तो धाय तिहारे सुत की दया करत हो रहियो।
जदपि टेव तुम जानत हुँ हो, तदपि मोंहि कहि आवै।
प्रातः उठत मोरे अलक लड़ैते माखन रोटी भावै।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूर का बाल चरित्र चित्रण अद्वितीय है और उन्होंने बाल-स्वभाव से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक चेष्टा का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है।

प्रश्न ३—तुलसीदास जी का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ कौन सा है ? आप उसे क्यों श्रेष्ठ समझते हैं ? (उक्त, १६६०)

अथवा

तुलसीदास के रामचरित मानस के लोक प्रियता के कारण लिखिये। (१६६३)

उत्तर—राम चरित्र मानस तुलसीदास का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है। वह एक महाकाव्य है। उसने गत ४०० वर्षों में असंख्य भारतीयों को प्रभावित किया है। उसकी श्रेष्ठता तथा लोकप्रियता के निम्न कारण हैं।

इसके बाद इस पुस्तक के पृष्ठ २६१ पर मेरी प्रिय पुस्तक (राम चरित मानस) के 'परिचय तथा विशेषता आदि' सभी शीर्षकों को देखिये।

प्रश्न ४—तुलसी और सूर में किसकी कविता आपको अधिक पसन्द है और क्यों ? उत्तर उद्धरण सहित दीजिये। (उक्त, १६६४)

अथवा

'सूर सूर तुलसी शशी' को सिद्ध कीजिये।

उत्तर—सूर और तुलसी दोनों ही भक्तिकाल की सगुण शाखा के सर्वोच्च कवि हैं। दोनों ही अपने अपने इष्ट देवों कृष्ण और राम के लोक पावन चरित्र का वर्णन किया है। दोनों की ही कविता गत ४०० वर्षों से असंख्य भारतीयों को रस मग्न करती आ रही है। यदि सूर की कविता ने जनता के खिन्न मानस को आनन्दित किया है तो तुलसी की कविता ने उसे निराशा में आशा की ज्योति दिखाकर आदर्श की ओर उन्मुख किया है। यद्यपि दोनों महा कवियों की कवितायें मुझे पसन्द हैं, फिर भी मैं सूर की कविताओं को तुलसी की कवितओं से अधिक पंसद करता हूँ। इसके प्रधान कारण निम्न हैं—

बाल—चरित्र का चित्रण—यद्यपि तुलसी ने सूर की अपेक्षा जीवन के अधिक विशाल क्षेत्र का वर्णन किया है, पर बाल चरित्र के चित्रण में तुलसी सूर से बहुत पीछे रह गये हैं। जहाँ तुलसी—

कबहूँ ससि मांगत आरि करें कबहूँ प्रतिबिम्ब निआरि डरैं,
कबहूँ रिसियाइ कहैं हठिकैं, पुनि लेत सो जेहिलागिअरें।
कबहूँ करतारि बजाइ कै नाचत मातु सबै मन मोद भरैं,
अवधेश के बालक चारि सदा तुलसी मन मंदिर में बिहरैं।

कह कर केवल बिम्ब सा ग्रहण कर दिया है, वहाँ

'लैहोंरी माँ चन्द खिलौना लैहों' में सूर ने चन्द्रमा को खिलौने के रूप में लेने के लिये रूठते-मचलते हुए बालक का पूरा चित्र उतार दिया है।

दोनों कविताओं का अन्तर स्पष्ट है। तुलसी कवित्त के तीन चरणों में बाल चरित्र का वर्णन करके चौथे चरण में सम्पूर्ण बाल चरित्र को अपनी भक्ति भावना का अंग बना देते हैं और इस प्रकार उनकी भक्ति भावना प्रधान हो जाती है और बाल चरित्र अप्रधान।

एक तो तुलसी ने बालचरित्र का वर्णन अपने सभी ग्रन्थों में अति सीमित रूप में थोड़े से ही छन्दों में किया है, दूसरे वह बालक के सम्पूर्ण मनोभावों और क्रीड़ाओं का चित्रण भी नहीं कर पाये हैं, जबकि सूर ने बालचरित्र का अति विशालता से चित्रण किया है और उससे सम्बन्ध रखने वाले किसी भाव या दशा को नहीं छोड़ा है और सभी वर्णन अति

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

स्वाभाविक तथा मनोहर हैं। अपनी चोटी को शीघ्र ही बड़ा देखने की भावना निम्न पद में कितनी स्वाभाविकता से व्यक्त हुई है।

मैया कबहि बढ़ैगी चोटी।
कितिक बार मोहि दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।
तू जों कहत बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाम्बी मोटी।
काढ़त गुहत नहावति आँछति नागिन सी मुँह लोटी।
काचो दूध पियावति पचि पचि देत न माखन रोटी।
'सूर श्याम' चिरंजिब दोउ भइया हरि हलधर की जोटी।

शृंगार का चित्रण—शृंगार के क्षेत्र में भी सूर तुलसी से बहुत आगे हैं। शृंगार के दोनों पक्ष संयोग और वियोग का जितना हृदय-स्पर्शी वर्णन सूर ने किया है, उतना तुलसी ने नहीं किया इसका प्रधान कारण तुलसी का दास भाव की भक्ति है। वे आदर्शवाद के अनुयायी होने के कारण अपने माता-पिता स्वरूप सीता और राम के प्रेम के वर्णन में सकुचाते हैं और बड़ी सावधानी से आगे बढ़ते हैं, जबकि सूर निस्संकोच भाव से सब कुछ कह डालते हैं। जनक की पुष्पवाटिका में जब राम पहली बार सीता को देखते हैं, वे सीता से तो कुछ कहते नहीं, केवल लक्ष्मण से कहते हैं—

कंकन किंकन नूपर धुनि सुनि, कहत लखन सन राम हृदय गुन।
मानहुँ मदन दुन्दुभी दीन्हीं, मनसा विश्व विजय कर कीन्हीं॥

× × ×

तात जनक तनया यह कोई धनुष जग्य जा कारन होई।

× × ×

जासु बिलोकि अलौकिक सोभा, सहज पुनीत मोर मन छोभा।
सो सब कारन जान बिधाता, फरकहि सुभद अंग सब भ्राता॥

इसके विपरीत यमुना के तट पर राधा को पहली ही बार देखकर कृष्ण उनसे विचित्र प्रश्न करते हैं और वह भी कितनी सरलता से उत्तर देती हैं और दोनों का प्रेम आरम्भ हो जाता है—

बूझत स्याम कौन तू गोरी,
कहाँ रहत काकी है बेटी, देखी नहीं कहूँ ब्रज खोरी।
काहे को हम ब्रज तन आवत खेलत रहत आपुनी पौरी।
सुनत रहत स्रवननि नन्द ढोटा करत रहत माखन दधि चोरी।
तुमरो कहा चोरि हम लैहैं खेलन चलो संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि बातन भुरइ राधिका भोरी।

दोनों वर्णनों में महान अन्तर है। वियोग के वर्णन में भी राम और सीता के वियोग में तुलसी दोनों की कृशता और थोड़ा बहुत विलाप दिखाकर चुप रह जाते हैं और सूर गोपियों के विरह का जो विशद वर्णन करते हैं, वह अवर्णनीय है। जहाँ सीताजी हनुमानजी के द्वारा राम को अपने प्रणाम कहने को कहकर अपनी थोड़ी सी ही घिसी-पिटीसी विरह व्यथा का सन्देश भेजती हैं, वहाँ गोपियाँ उद्धव के द्वारा अपने हृदय के सारे मनोभावों और व्यथाओं को कह डालती हैं। उनका एक सन्देश देखिये—

बिनु गोपाल बैरिन भइ कुंजैं।
तब ये लता लगति अति शीतल, अब भइ विषम ज्वाल की पुंजैं

× × × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ए ऊधौ कहियो माधव सों विरह-करद कर मारत लुँजैं ।।

भाषा—सूर की भाषा भी तुलसी की भाषा की अपेक्षा अधिक बोध गम्य है । सूर की व्रजभाषा व्रज की बोलचाल की भाषा है और तुलसी की संस्कृत के तत्सम शब्दों से भरपूर है ।

यही कारण है कि मुझे तुलसी की अपेक्षा सूर की कविता अधिक पसन्द है और इसीलिये यह भी सत्य कहा जाता है ।

सूर सूर तुलसी शशी ।

प्रश्न ५—अन्योक्ति किसे कहते हैं ? उसका क्या महत्व है ? किसी अन्योक्तिकार क परिचय देते हुये उसकी कविता की विशेषताएँ लिखिये ।

उत्तर—अन्योक्ति दो शब्दों से मिलकर बना है—

अन्य+उक्ति अर्थात् अन्य की उक्ति । इसका अर्थ है कि अन्योक्तिकार बह अलंकार है जिसमें किसी अप्रस्तुत के वर्णन के द्वारा प्रस्तुत वर्णन किया जाय । जैसे—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इह काल ।
अली कली ही सों बिंध्यो, आगे कौन हवाल ।

यहाँ अलि । (भौंरा) और कली के द्वारा नवोढ़ा रानी से प्रेम करने वाले राज जयसिंह का वर्णन है, इनमें राजा जयसिंह प्रस्तुत हैं और 'अली' अप्रस्तुत अतः अन्योक्ति है ।

सीधे साधे ढंग से कहने से बात का प्रभाव नहीं पड़ता पर इस प्रकार से कहने से पूरा प्रभाव पड़ता है । कहा जाता है कि इस दोहे के सुनते ही राजा यर्जसिंह ने नवोढा रानी को छोड़ दिया था । यही इसका महत्व है ।

बिहारी एक अन्योक्तिकार कवि भी हैं । इन्होंने बहुत सी श्रेष्ठ प्रभाव पूर्ण अन्योक्तियाँ लिखी हैं । इनकी कविता की विशेषताएँ निम्न हैं (इसके आगे इस पुस्तक के पृष्ठ ३६३ पर बिहारी की शैली देखिए) ।

प्रश्न ६—बिहारी ने शृंगार, भक्ति और नीति विषयक दोहों की रचना की है—इस कथन की सोदाहरण पुष्टि कीजिये । (१९६०)

उत्तर—इसके उत्तर के लिये बिहारी की शैली का भाव पक्ष देखिये ।

प्रश्न ७—बिहारी की 'समास शक्ति' का संक्षेप में वर्णन कीजिए ।

अथवा

सिद्ध कीजिये कि बिहारी ने गागर में सागर भर दिया है ।

अथवा

सिद्ध कीजिए—

सतसैया के दोहरे, ज्यो नाविक के तीर ।
देखत के छोटे लगें, घाव करैं गम्भीर

उत्तर—बिहारी रीतिकाल के रस सिद्ध कवि हैं । उनकी सारी रचना 'दोहा' छन्द में हैं । दोहा हिन्दी का एक छोटा सा छंद है जिसमें किसी कभी प्रसंग को पूर्णतया व्यक्त करना बिहारी जैसे कुशल कलाकार के लिए ही सम्भव है । बिहारी ने अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये कहीं अनुभावों का कहीं विभावों का, कहीं अन्योक्ति का और कहीं अन्य अलङ्कारों का आश्रय लिया है ।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कृष्ण मथुरा को चले गये हैं। एक नायिका यमुना के किनारे पर स्थित, सुखदायक छाया से युक्त कुंज में जाती है, वहाँ के सुन्दर वातावरण को देखकर उसे उस समय का स्मरण हो आता है, जब वह कृष्ण के साथ यहाँ आकर नाना प्रकार की क्रीड़ाएँ किया करती थी और उनका मन सासांरिक बन्धनों को छोड़कर अलौकिक आनन्द का अनुभव किया करता था। बिहारी इस सम्पूर्ण वातावरण तथा कथानक को 'उद्दीपन विभाव' तथा 'अनुभाव' के द्वारा एक ही दोहे में किस प्रकार व्यक्त करते हैं—

सघन कुंज छाया सुखद, सीतल मन्द समीर।
मन ह्वै जात अजौ वही वा जमुना के तीर॥

वास्तव में उक्त दोहे में प्रयुक्त 'वही' तथा 'वा' शब्द नायिका के पूर्व अनुभूत सम्पूर्ण आनन्दों को जिस प्रकार व्यक्त कर देते हैं, उस प्रकार उन्हें एक लम्बे अख्यान के द्वारा भी व्यक्त नहीं किया जा सकता।

इसी प्रसंग में निम्न दोहा भी द्रष्टव्य है—

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौहन हँसे, दैन कहै नटि जाय॥

इस दोहे में नायक और नायिका का जो व्यापार वर्णित है, वह अभिनय में एक लम्बे समय तक दिखाया जा सकता है। दोहे को पढ़ते ही ऐसा प्रतीत होने लगता है कि मानो हमारे सामने कोई सिनेमा का चित्र दिखाया जा रहा है।

इसी प्रसंग में 'नहि पराग नहि मधुर मधु' वाला दोहा भी प्रस्तुत किया जा सकता है। जयसिंह कली के समान कोमल तथा अल्प वयस्का नवोढ़ा रानी के प्रेम में इतने लीन हैं कि उन्हें राज कार्य की भी कोई चिन्ता नही है। वे भविष्य के बारे में भी कुछ नहीं सोचते। बिहारी इस अवसर के अनुकूल उक्त दोहे को अन्योक्ति रूप कहकर राजा को किस प्रकार प्रभावित कर देते हैं, वह एक लम्बे उपदेश से भी सम्भव नहीं था।

हम प्रतिदिन डोरे को उलझता देखते हैं। तो डोरा उलझता है, वही टूटता है, वही जुड़ता है और उसी में गांठ लग जाती है पर ब्रज मे एक नई रीति चल पड़ी है, वहाँ नायिका की आंखें तो आपस में उलझ रहीं हैं, पर कुटुम्ब से नेह नाता टूटता है, चतुर नायक से प्रेम जुड़ता है और दुष्ट मनुष्यों के हृदय में गांठ पड़ जाती है। बिहारी निम्न दोहे के तीन चरणों में इस सम्पूर्ण व्यापार को व्यक्त करके चौथे चरण में 'दई नई यह रीति' कहकर आश्चर्य प्रकट करने के लिए स्थान भी निकाल लेते हैं—

दृग उरझत टूटत कुटुम जुरत चतुर चित प्रीति।
परत गाँठ दुरजन हिए दई नई यह रीति॥

प्रश्न ८—ब्रजभाषा के कवियों में तुम्हें किस कवि की कविता पसन्द है और क्यों? उसका परिचय देते हुए उसकी कविता की विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर—ब्रजभाषा के कवियों में हमें भक्ति काल के ब्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि सूरदास की कविता सबसे अधिक पसन्द है, क्योंकि उन्होंने बालकृष्ण का जो वर्णन किया है, वह अत्यन्त सरस और मनोहारी है। हम आप भी उनके कृष्ण को अपने घर में अपने छोटे भाई के रूप में, यशोदा को अपनी माता के रूप में, नन्द को अपने पिता के रूप में और ग्वाल-बालों को अपने मित्रों के रूप में देखते हैं। इस प्रकार सूर के पात्र हमारे निकट के सम्बन्धी गिने जाते हैं और उनका वर्णन नित्य ही हमारी आँखों के सामने मूर्त रूप में दर्शन होता हुआ दीखता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इसके अतिरिक्त सूर की भक्ति और श्रृंगार के पद भी अत्यन्त उच्च कोटि के हैं। यही कारण है कि हमें व्रजभाषा के सभी कवियों में सूर की कविता अधिक पसन्द है।

इसके आगे इस पुस्तक में दी हुई सूर की शैली देखिए।

प्रश्न ९—भक्ति काल में व्रजभाषा के कवियों में तुम्हें किस कवि की कविता अधिक पसन्द है और क्यों ? उसका परिचय देते हुए उसकी कविता की प्रमुख विशेषताओं को लिखिये।

उत्तर—हमें व्रजभाषा के भक्ति काल के कवियों में सूर की कविता अधिक पसन्द है। (इसके आगे ऊपर के प्रश्न के उत्तर को देखना चाहिए।)

प्रश्न १०—हिन्दी के किसी भक्त कवि की कविता का परिचय दीजिए। कविता से उद्धरण देना आवश्यक है। (हा० परी० उ० प्र० १९६५)

अथवा

तुम्हें किस भक्त कवि की कविता पसन्द है और क्यों ? उसकी कविता की प्रमुख विशेषतायें लिखिए।

उत्तर—हमें भक्त कविता में सूर की कविता अधिक पसन्द है। क्योंकि सूर की भक्ति अत्यन्त उच्च कोटि की है। वे सभी देवी-देवताओं को छोड़कर कृष्ण के ही गुणगान में लगे रहते हैं।

और देव सब रंक भिखारी त्यागे बहुत अनेरे।

उन्हें न धन की चिन्ता है, न मान की और न मोक्ष की, वे तो केवल यही चाहते हैं कि कृष्ण उन्हें स्वीकार करलें।

उनके उपास्य देव भी 'बाल कृष्ण हैं' जो आज भी छोटे भाइयों के रूप में हमारे मध्य में रहते हैं और इस प्रकार वे हमारे अधिक निकट हैं। इसके आगे इस पुस्तक में दी हुई सूर की शैली देखिए।

प्रश्न ११—व्रजभाषा के रीतिकाल के कवियों में तुम्हें किस कवि की कविता अधिक पसन्द है और क्यों ? उसका परिचय देते हुए उसकी कविता की विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर—हमें रीतिकल के व्रजभाषा के कवियों में 'भूषण' की कविता अधिक पसन्द है, क्योंकि श्रृंगार के घोर युग में जन्म लेकर भी भूषण ने राष्ट्रीय भावना को जगाने वाली वीर रस से परिपूर्ण रचनाएँ की हैं। उनकी रचनाएँ आज भी हमारे हृदय में उत्साह और स्फूर्ति को जगा देती है। उनमें भाव पक्ष तथा कला पक्ष का सुन्दर समन्वय है। (इसके आगे इस पुस्तक में दी हुई 'भूषण' की शैली देखिये।)

प्रश्न १२—हिन्दी के किसी वीर रस के कवि और कविता का परिचय दीजिए। (हा० परीक्षा उ० प्र० १९६३)

अथवा

तुम्हें वीर रस के किस कवि की कविता अधिक पसंद है और क्यों ? उसका परिचय देते हुए उसकी कविता की विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर—हमें वीर रस के कवियों मे रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि भूषण की कविताएँ अधिक पसंद है, क्योंकि (इसके आगे ऊपर के प्रश्न का उत्तर देखिये।)

प्रश्न १३—तुम्हें व्रजभाषा के आधुनिक काल के कवियों में किस कवि की कविता अधिक पसंद है और क्यों ? उसकी कविता की विशेषताएँ लिखिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उत्तर—हमें ब्रजभाषा में आधुनिक काल के कवियों में श्री जगन्नाथदास रत्नाकर की कविता अधिक पसंद है क्योंकि इसमें भाव पक्ष और कला पक्ष का सुन्दर समन्वय है। उसमें हृदय को स्पर्श करने की पूरी शक्ति है। उसमें भक्ति कालीन विषय को रीति काल की शैली में आधुनिक काल के अनुरूप बनाकर प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार इसमें भक्तिकाल, रीतकाल और आधुनिक काल का उपयुक्त समन्वय है जो अन्यत्र नहीं मिलता।

(इसके आगे इस पुस्तक में दी हुई रत्नाकर जी की शैली देखिये।

प्रश्न १४—खड़ी बोली के कवियों में तुम्हें किस किस की कविता पसन्द है और क्यों ? उसका परिचय देते हुये उसकी भाषा शैली पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—हमें खड़ी बोली के कवियों में श्री मैथिलीशरण गुप्त की कविता अधिक पसन्द है, क्योंकि गुप्त जी ने खड़ी बोली में सफल कविता करके इस आरोप को निर्मूल सिद्ध कर दिया है कि खड़ी बोली में ब्रजभाषा जैसा माधुर्य नहीं आ सकता। इसके अतिरिक्त गुप्त जी ने राष्ट्रीयता तथा भारतीयता से परिपूर्ण कविताएँ लिखकर खड़ी बोली का मस्तक ऊँचा किया है।

(इसके आगे इस पुस्तक में दी हुई गुप्त जी की शैली देखिये।)

प्रश्न १५—हिन्दी के किसी राष्ट्रीय भावना से पूर्ण देशभक्त कवि और उसकी कविताओं का परिचय दीजिये।

उत्तर—हिन्दी में श्री मैथिलीशरण गुप्त ऐसे कवि हैं जिनकी कविताएँ सब प्रकार से राष्ट्रीय भावनाओं और देशभक्ति से पूर्ण हैं। उनकी कविताओं में भारत के गत गौरव, भारतीय-संस्कृत तथा सभ्यता, आत्मसम्मान और देशोन्नति की भावनाएं पूरी तौर से विद्यमान है।

(इसके आगे इसी पुस्तक में श्री गुप्त जी की शैली देखिए।)

प्रश्न १६—हिन्दी के किसी मुसलमान कवि और उसकी कविताओं का परिचय दीजिये (हा० परीक्षा उ० प्र० १९६६)

उत्तर—रहीम हिन्दी के प्रसिद्ध मुसलमान कवि हैं। (इसके आगे रहीम की शैली देखिये।)

प्रश्न १७—हिन्दी की किसी नारी कवियित्री और उनकी कविताओं का परिचय दीजिये।

उत्तर—श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान हिन्दी की प्रसिद्ध कवियित्री हैं। (आगे इनकी शैली देखिये।)

प्रश्न १८—हिन्दी के आधुनिक कवियों में, जिनकी कविताएं आपने अपनी पाठ्य पुस्तक में पढ़ी हैं, अपने सर्व प्रिय कवि की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(हा० परीक्षा उ० प्र० १९६१)

उत्तर—हिन्दी के आधुनिक कवियों में मुझे श्री रामधारीसिंह दिनकर की कविताएं प्रिय हैं। उनकी कविता की विशेषताएं निम्न हैं—

(इसमें श्री पाण्डे जी की शैली देखिये।)

प्रश्न १९—हिन्दी के किसी प्रकृति चित्रण करने वाले कवि का परिचय देते हुए उसकी कविता की विशेषताएं लिखिए।

उत्तर—श्री जयशंकर प्रसाद हिन्दी के प्रकृति चित्रण करने वाले एक प्रसिद्ध कवि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं। उन्होंने अपनी कविता में प्रकृति का आलम्बन, उद्दीपन, मानवीकरण, भूमिका, रहस्यात्मक सत्ता, शाश्वत तथ्यों की उद्भावक सुन्दर तथा भयंकर सभी रूपों में चित्रण किया है। उनका परिचय तथा कविता की विशेषताएँ निम्न हैं—

(इसके आगे प्रसाद की शैली देखिये।)

प्रश्न २०—नीति विषयक कविता से आप क्या समझते हो? उसका क्या महत्व है? किन्हीं दो नीतिकार कवियों का नाम लिखकर उनमें से किसी एक कवि तथा उसकी कविता का परिचय दीजिये।

उत्तर—जीवन के क्षेत्र में नित्य-प्रति काम आने वाले ऐसे अनुभवों को जो बहुत से प्रयोग की कसौटी पर खरे उतरे हैं, नीति कहा जाता है।

हमारे जीवन में नीति का बहुत ही महत्व है, क्योंकि इसके आधार पर हम अपने जीवन के कठिन समयों में संकट से पार हो जाते हैं। काव्य में तो इनका और भी महत्व है, क्योंकि साधारण रूप में कहने पर कोई बात अपना विशेष प्रभाव नहीं रखती, पर कविता के द्वारा सुन्दर तरीके से कहने पर उसका बहुत प्रभाव पड़ता है। 'किसी के साथ बुराई मत करो' की अपेक्षा निम्न दोहे का प्रभाव अधिक पड़ता है—

जो तोको काँटा बुबै, ताहि बोइ तू फूल।
तोको फूल के फूल हैं, बाको हैं त्रिशूल।

रहीम तथा बिहारी हिन्दी के प्रसिद्ध नीतिकार कवि हैं। (इसमें आगे इस पुस्तक में दी हुई रहीम या बिहारी की शैली लिखनी चाहिये।)

प्रश्न २१—'दोहा' छन्द में सफल रचना करना क्यों कठिन माना गया है? अपनी पाठ्य पुस्तक के किसी एक ऐसे कवि का नाम लिखिये जिसने 'दोहे' ही लिखे हों। उसका परिचय देते हुये उसकी भाषा शैली पर प्रकाश डालिये।

उत्तर—दोहा अड़तालीस मात्रा का एक छोटा सा छन्द है। इतने छोटे छन्द में प्रत्येक कवि भावपूर्ण रचना नहीं कर सकता, क्योंकि इसके लिये लौकिक एव शास्त्र विज्ञान व्यंञ्जना शक्ति का सफल प्रयोग, अलकारों का समुचित तथा भाषा पर अधिकार होना अत्यावश्यक है, जो हर कवि में नहीं होता।

रीतिकाल के बिहारी एक ऐसे ही कवि हैं। उन्होंने केवल ७१६ दोहे लिख कर हिन्दी साहित्य में अपना नाम अमर कर दिया है। उनकी रचना में एक श्रेष्ठ रचना के सभी गुण मौजूद हैं। (इसके आगे बिहारी की भाषा शली देखिये।)

प्रश्न २२—मुक्तक काव्य किसे कहते हैं किसी प्रसिद्ध मुक्तककार कवि और उसकी काव्यगत विशेषताओं का परिचय दीजिये।

उत्तर—जिस कविता का अपने से पहले या बाद की कविता से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं होता और जो अपने में ही पूर्ण होती है, मुक्तक काव्य कही जाती है।

मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँई परै स्याम हरित दुति होय।।

यह दोहा मुक्तक काव्य का एक उदाहरण है, क्योंकि इसका अपने से पहले या बाद के किसी भी दोहे से कोई सम्बन्ध नहीं है और इसका अर्थ अन्य किसी कविता की सहायता के बिना ही पूरी तरह से समझ में आ जाता है।

बिहारी हिन्दी से प्रसिद्ध मुक्तककार हैं। (इसके आगे बिहारी की शैली देखिये।)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रश्न २३—प्रबन्ध काव्य से क्या समझते हो ? हिन्दी के कोई से दो प्रबंध काव्यों का नाम लिखकर किसी प्रबन्ध काव्यकार कवि का नाम लिखकर उसकी जीवनी तथा शैली का परिचय दीजिये।

उत्तर—वह काव्य जिसमें जीवन से सम्बन्ध रखने वाली कोई कथा कही जाती है। प्रबंध काव्य कहा जाता है। रामचरित मानस तथा कवितावली हिन्दी के दो प्रसिद्ध प्रबंध काव्य हैं। श्री तुलसीदासजी इन दोनों काव्यों के रचयिता और हिन्दी के प्रसिद्ध प्रबन्धकार हैं। (इसके आगे तुलसी की भाषा शैली देखिये।)

प्रश्न २३—महाकाव्य की संक्षिप्त परिभाषा देकर हिन्दी के किसी महाकाव्य का नाम लिखिये। उसके लेखक का जीवन परिचय तथा काव्यगत विशेषतायें देना भी आवश्यक है।

उत्तर—महाकाव्य उस प्रबंध काव्य को कहते हैं, जिसमें जीवन के एक विस्तृत भाग का अच्छी प्रकार से परिचय दिया जाता है। इनका आकार काफी बड़ा होता है अर्थात् इसमें चार से अधिक अध्याय, खंड, सर्ग या काण्ड होते हैं। इसमें ऋतु, समय, वन, नदी पर्वत आदि का कवित्व पूर्ण ढंग से वर्णन होता है। इसका नायक लोक प्रसिद्ध व्यक्ति या देवता होता है। 'राम चरित मानस' हिन्दी का प्रसिद्ध महाकाव्य है। तुलसी इसके रचयिता हैं। (इसके आगे तुलसी की भाषा शैली देखिये।)

प्रश्न २४—किसी ऐसे कवि का परिचय दीजिए जिसके पद्य तथा गद्य दोनों में ही सफल रचनायें की हों। उचित उद्धरण देते हुए उसकी प्रमुख काव्यगत विशेषताओं को भी लिखिए।

उत्तर—श्री जयशंकर प्रसाद हिन्दी के एक ऐसे महाकवि हैं, जिन्होंने पद्य तथा गद्य दोनों में ही उच्चकोटि की सफल रचनाएँ की हैं। श्री प्रसाद की प्रतिभा बहुमुखी है। इन्होंने खण्ड काव्य, महाकाव्य, गीति काव्य, उपन्यास, कहानी, नाटक निबन्ध आदि सभी कुछ लिखे हैं। कामायनी इनका प्रसिद्ध कामाकाव्य, आंसू आदि खण्ड काव्य कुंकाल, तितली आदि उपन्यास, आकाशदीप मधुप्रार आदि कहानियाँ, स्कन्दगुप्त चन्द्रगुप्त आदि नाटक तथा कई निबन्ध लिखे हैं, जो उच्चकोटि के हैं।

(उसके आगे प्रसाद की भाषा शैली देखिए।)

प्रश्न २५—प्रकृति चित्रण का काव्य में क्या महत्व है ? किसी प्रकृति चित्रण करने वाले कवि का नाम लिखकर उसके प्रकृति चित्रण की प्रमुख विशेषतायें लिखिए।

उत्तर—प्रकृति और मनुष्य का आदिकाल का सम्बन्ध है। जब से मनुष्य ने पृथ्वी पर अपनी आंखें खोली हैं, प्रकृति उसके साथ रही है। इसलिए प्रकृति और मनुष्य के हृदय में गहरा सम्बन्ध है। कविता भी मनुष्य के हृदय गत भावों का उद्‌गार है, इसलिए कविता में आदि काल से प्रकृति किसी न किसी रूप में आती रही है। आधुनिक काल में तो प्रकृति अनेक रूपों को धारण करके काव्य में आविराजी है।

मनुष्य और प्रकृति के चिरकाल से साथी होने के कारण ही मनुष्य को प्रकृति से स्वाभाविक प्रेम हो गया है और इसीलिए वह प्रकृति चित्रण से युक्त कविताओं के प्रति सरलता से शीघ्र ही आकृष्ट हो जाता है। संक्षेप में काव्य में प्रकृति चित्रण का यही महत्व है।

आधुनिक काल में श्री जयशंकर प्रसाद ने प्रकृति का बहुत ही सुन्दर तथा विशद चित्रण किया है। प्रकृति का जितने रूपों में चित्रण आज तक प्राप्त होता है, वे सभी रूप

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रसाद जी की कविता में सुन्दरतम रूप में विद्यमान है। संक्षेप में इनका विवरण निम्न है—

प्रकृति के सुन्दर रूप का चित्रण—प्रसाद ने प्रकृति मधुर तथा हृदय ग्राही रूप को आंख खोल कर देखा है और उसका सजीव रूप प्रस्तुत किया है। सायंकाल के समय हिमालय का रूप देखिए—

सन्ध्याघन माला की सुन्दर ओढ़े, रंग बिरंगी छींट।
गगन चुम्बिनी शैल श्रेणियाँ, पहने हुए तुषार किरीट ॥
अचल हिमालय का शोभन तन, लता कलित शुचि सानु शरीर।
निद्रा में सुख स्वप्न देखता, जैसे पुलकित हुआ अधीर ॥

प्रकृति के भयंकर रूप का चित्रण—प्रसाद ने प्रकृति के भयंकर रूप का भी चित्र खींचा है। प्रलयकाल का एक भयावह चित्र देखिये—

पंच भूत का भैरव मिश्रण, शम्पाओं का केश शकल निपात।
उल्का लेकर अमर शक्तियाँ, खोज रहीं क्यों खोया प्रात ॥

× × ×

धसती धरा धधकती ज्वाला, ज्वालामुखियों के निश्वास।
और संकुचित क्रमशः उसके अवयव का होता था ह्रास ॥

आलम्बन के रूप में चित्रण—प्रसाद ने प्रकृति को एक चिन्तत चेत सत्ता के रूप में भी देखा है,

स्वर्ण शालियों की कल में थी, दूर दूर तक फैल रहीं।
शरद इन्दिरा के मन्दिर की मानो कोई गैल रही ॥

उद्दीपन के रूप में—प्रसाद ने प्रकृति का उद्दीपन के रूप में भी चित्रण किया है। कामायनी के आशा सर्ग में प्रकृति का उल्लास पूर्ण रूप ही निराश मनु के खिन्न मन को उत्साहित करके जीवन के मार्ग पर आगे बढ़ाता है। वहाँ का सारा प्रकृति चित्रण इसी रूप के अन्तर्गत भी आता है।

प्रकृति का संश्लिष्ट चित्रण—प्रसाद की प्रकृति निर्जीव न होकर मानव भावनाओं से भी अभिभूत है। प्रलयकाल में दुखी और बाद में प्रसन्न दीखती है—

वह विवर्ण अमुख त्रस्त प्रकृति का आज लगा हँसने फिरसे।

भूमिका के रूप में चित्रण—प्रसाद ने भावी घटनाओं की पृष्ठ भूमि को प्रस्तुत करने के लिये प्रकृति का भूमिका के रूप में भी चित्रण किया है। 'कामायनी' के 'आशा' सर्ग का प्रारम्भिक 'उषा' का चित्रण इसी प्रकार का है—

उषा सुनहले तीर बरसती,
जय लक्ष्मी सी उदित हुई।
उधर पराजित कालरात्रि भी
जल में अस्तनिहित हुई ॥

रहस्यात्मक ईश्वरी सत्ता की अभिव्यक्ति के रूप में—प्रसाद ने प्रकृति के रूप में ईश्वरी सत्ता का भी अनुभव किया है—

महानील इस परम व्योम में, अन्तरिक्ष में ज्योतिमान।
गृह नक्षत्र और विद्युत्कण, किसका करते सन्धान ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अलंकार विधान के रूप में—प्रसाद ने स्थान स्थान पर अप्रस्तुत को दिखाने के लिये भी प्रकृति का प्रयोग किया है जैसे—

नव कोमल आलोक बिखरता, हिम संसृति पर भर अनुराग।
सित सरोज पर क्रीड़ा करता, जैसे मधुमय पिंग पराग ॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रसाद का प्रकृति-चित्रण अत्यन्त व्यापक तथा सजीव है और उनके प्रकृति चित्रण की ये ही प्रमुख विशेषतायें हैं।

निबन्ध रचना

किसी विषय पर रोचक तथा सरस शैली द्वारा गद्य में प्रकट किये गये क्रमबद्ध विचारों को 'निबन्ध' कहा जाता है। इस परिभाषा पर ध्यान देने से ज्ञात होता है कि निबन्ध के दो अङ्ग हैं। (१) विचार समूह या विषय सामग्री (२) शैली।

विचार समूह या विषय सामिग्री

विचार ही किसी निबन्ध के प्राण होते हैं, अतः विचारों को सुव्यवस्थित करने के लिए विषय पर पर्याप्त समय तक सोचना चाहिए। विषय की सामग्री को एकत्र करने का सबसे सरल तरीका यह है कि लेखक विषय से सम्बन्धित (क्या ? क्यों ? कैसे ? आदि) नाना प्रकार के प्रश्नों को एक कागज पर लिख लें। जैसे यदि हमें 'समाचार पत्र' पर निबन्ध लिखना है, तो प्रश्नों को लिखेंगे।

क—'समाचार पत्र' क्या है ? ख—उसका आरम्भ कब और कैसे हुआ ? ग—उसकी क्या आवश्यकता है ? घ—उससे हमें क्या लाभ हैं ?

दो एक जगह इन प्रश्नों के उत्तर ही निबन्ध को लिखने में काम आयेंगे। इस प्रकार के प्रश्नोत्तरों में एक बात का ध्यान रखना चाहिये कि ये विषय से सम्बन्धित हीं हों, इनमें कोई अनावश्यक और ऊटपटाँग बात न हो। दूसरे ये क्रमानुसार हों। उदाहरण के लिए उक्त 'समाचारपत्र' के निबन्ध में आरम्भ में ही 'उससे हमें क्या लाभ है ?' लिखना क्रम के विरुद्ध होगा। एक एक प्रश्न का उत्तर अलग-अलग अनुच्छेद (पैराग्राफ) में लिखना चाहिए।

विचारों को सुव्यवस्थित और परिपक्व बनाने के लिए छात्रों को नाना प्रकार की पुस्तकों को पढ़ना चाहिए। दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों के पढ़ने से विचार दृढ़ होते हैं। प्राकृतिक दृश्यों के देखने तथा विद्वानों के भाषणों को सुनने से भी निबन्ध लेखन में सहायता मिलती है। इन सब बातों के होते हुए भी निबन्ध लेखन का अभ्यास होना आवश्यक है, क्योंकि अभ्यास रहित चतुर छात्र भी अच्छा निबन्ध नहीं लिख पाते।

विचारों के तीन भाग किये जा सकते हैं—(१) प्रारम्भिक विचार (२) मध्यम भाग, (३) उपसंहार।

(१) **प्रारम्भिक विचार**—इसे ही प्रस्तावना, भूमिका अथवा विषय-प्रवेश कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य पाठक के ध्यान को लेख की ओर आकर्षित करना है। विभिन्न मनुष्यों के विचार, भावना तथा कल्पना विभिन्न हुआ करते हैं। अतः उनके आरम्भ करने के प्रकार भी अलग अलग हुआ करते हैं। कोई लेखक अपनी बात को बिलकुल सीधे सादे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
ढङ्ग से कहता हुआ आगे बढ़ता है, कोई निबन्ध की परिभाषा देकर अपना निबन्ध आरम्भ करता है, तथा कोई किसी कविता अथवा लोकोक्ति से अपना निबन्ध आरम्भ करता है, तथा कोई किसी प्राकृतिक दृश्य को ही अपने लेख की भूमिका के रूप में प्रस्तुत करता है।

ढङ्ग कोई भी हो, पर यह भाग आकर्षक होना चाहिये, जिससे चित्त ऊब न जाय और पाठक अनमना सा होकर पन्ने न पलटने लगे। वास्तव में यह काम एक लम्बे अभ्यास के द्वारा ही सम्भव है।

मध्य भाग—इसमें संकेतों की 'प्रारम्भ' और 'उपसंहार' सम्बन्धी बातों को छोड़कर अन्य संकेतों का विवरण रहता है। एक संकेत का विवरण एक अलग अनुच्छेद (पैराग्राफ) में होना चाहिए। एक अनुच्छेद के बाद दूसरे अनुच्छेद में किसी ऐसी बात का वर्णन कर देना चाहिए जिससे उसका पहले अनुच्छेद से सम्बन्ध स्थापित हो जाय। प्रधान बात को विस्तार सहित और साधारण बात को संक्षेप में लिखना चाहिए। वास्तव में इस भाग को लिखने में 'समय' का पूरा ध्यान रखना चाहिये। यदि समय थोड़ा हो, तो विचार संकेत रूप में प्रकट किये जायें और यदि समय पर्याप्त हो, तो उन्हें विस्तार सहित लिखा जाय।

३—उपसंहार—यह लेख का अन्तिम भाग है। यह अत्यन्त ही प्रभावोत्पादक होना चाहिये। इसे पढकर पाठक लेखक के आचार-विचार, आदर्श योग्यता आदि के विषय में अपनी धारणा बनाता है। प्रायः देखा जाता है कि परीक्षक भी अच्छे उपसंहार युक्त निबन्ध में अधिक अङ्क दे देते हैं। अतः छात्र को इसे विशेष सावधानी से लिखना चाहिए। यह निम्न प्रकारों में से किसी एक प्रकार से समाप्त किया जा सकता है—

१—पूरे निबन्ध का सारांश अथवा परिणाम देकर।

२—शिक्षा अथवा अपनी सम्मति देकर।

३—किसी कवि की उक्ति अथवा कहावत देकर।

४—विषय का भविष्य अथवा महत्व बतलाकर।

५—किसी सुधार के लिए अपील निकाल कर।

प्रत्येक मनुष्य अपने हृदय के भावों को इस प्रकार प्रकट करना चाहता है कि उसकी बातों को पढने या सुनने वाले पर अधिक से अधिक प्रभाव पड़े। इनके लिये वह जिस ढङ्ग को अपनाता है, वही उसकी शैली है। इस प्रकार किसी व्यक्ति के लिखने के ढंग को शैली कहा जाता है। कोई लेखक अपनी बात को ज्यों की त्यों सीधे-सादे शब्दों में प्रकट करता है, और कोई उसको साज सँवार कर कहता है। पहले प्रकार की शैली को सुबोध शैली और दूसरे प्रकार की शैली को अलंकृत शैली कहा जाता है। 'सूर्य निकल रहा है' सुबोध शैली का उदाहरण है और 'उषा सोने का थाल सजाकर लाई है' अलंकृत शैली का उदाहरण है। आरम्भ में छात्रों को सुबोध शैली में ही लिखना चाहिए। अभ्यास होने पर 'अलंकृत शैली' में भी लिखा जा सकता है। निबन्ध के लिखने में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए—

१—भाषा सरल, सुबोध तथा गठी हुई हो।

२—वाक्य सीधे-सादे तथा छोटे हों। वे जंजीर की कड़ियों की भाँति एक दूसरे से जुड़े हों।

३—भाषा में न तो अप्रचलित संस्कृत शब्दों की ही भरमार हो, न उनमें एकदम विदेशी शब्दों की सेना ही सजा दी जाय। अधिक प्रचलित विदेशी शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु वे हिन्दी व्याकरण के अनुसार होने चाहिए। उदाहरणार्थ 'रेल' का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बहुवचन 'रेल्स' न लिख कर 'रेलों' तथा 'हाल' का 'हाल्स' न लिखकर 'हालों' ही लिखना चाहिए।

४—मुहावरों, लोकोक्तियों तथा अलंकारों का प्रयोग भी यथास्थान करना चाहिए। इससे भाषा में सरलता, रोचकता तथा प्रभावोत्पादकता आ जाती है।

५—निबन्ध में किसी कवि या लेखक की उक्ति दी जा सकती है, किन्तु यह उक्ति विषय से सम्बन्धित होनी चाहिए।

६—निबन्ध में सजीवता लाने के लिए हास्य विनोद की सामग्री का भी प्रयोग करना चाहिए, पर यह विषयानुकूल तथा संयत हो।

७—विचारों को स्पष्ट करने के लिये उचित उदाहरण भी देने चाहिए।

८—निबन्ध में अनुच्छेद (पैराग्राफ) विराम-चिह्न तथा व्याकरण के नियमों का उचित ध्यान रखना चाहिए।

अब हम नमूने के कुछ निबन्ध देकर इस प्रकरण को समाप्त करते हैं। उनसे छात्रों को कुछ सहायता मिलेगी।

किसी महापुरुष की जीवनी (महात्मा गान्धी)

१—बाल्यावस्था तथा शिक्षा । २—अफ्रीका के कार्य ३—भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये प्रयत्न । ४—जीवन निर्माण । ५—सिद्धान्त तथा विशेषताएँ

विविध बाधा मुक्ति-पथ की शमन की रह शान्त।
मंजु मोहनचन्द्र में रमकर बिहित संग्राम ॥ —हरिऔध

बालकपन तथा शिक्षा—निर्माणोन्मुख आदर्शों के अन्तिम दीपशिखोदय, 'मानव आत्मा के प्रतीक, दलित देश के दुर्दम नेता' श्री मोहन दास कर्मचन्द गांधी का जन्म २ अक्टूबर, १८६९ ई० को काठियावाड़ प्रदेश के पोरबन्दर राज्य में हुआ था। आपके पिता कर्मचन्द पहले पोरबन्दर के तथा बाद में राजकोट तथा बीकानेर के दीवान रहे। आपकी माता पुतलीबाई व्रत-उपवास तथा पूजा-पाठ में विश्वास रखने वाली एक धार्मिक महिला थीं। अपने परिवार विशेषतया माता के प्रभाव से आप बचपन ही में सत्य और अहिंसा के पुजारी बन गये। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा राजकोट में हुई। आपका विद्यार्थी जीवन साधारण रहा। आपका विवाह तेरह वर्ष की अल्पायु में हुआ। सन् १८८७ ई० में मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद आप कानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिये इंग्लैंड चले गये और तीन वर्ष में बैरिस्ट्री पास करके भारत लौट आये। भारत आकर आपने बम्बई तथा राजकोट में वकालत आरम्भ की, किन्तु सत्य के पक्षपाती होने के कारण आपको इसमें सफलता प्राप्त न हो सकी।

अफ्रीका कार्य—सन् १८९३ ई० में आप पोरबन्दर के एक धनी व्यापारी के मुकद्दमे की देख रेख करने के लिये अफ्रीका गये। सच्ची लगन तथा कठिन परिश्रम के कारण आप इस मुकद्दमे में सफल हो गये। दक्षिणी अफ्रीका में भारतीयों की दयनीय दशा को देखकर गांधी जी का हृदय असह्य वेदना से कराह उठा। 'गोरे' भारतीयों को, कुली और गाँधी जी को 'कुली बैरिस्टर कहकर पुकारते थे। वे भारतीय रेलगाड़ी के प्रथम श्रेणी के डिब्बे में यात्रा नहीं कर सकते थे। गाँधी जी को भी एक बार उच्च श्रेणी के डिब्बे से निकाल दिया गया। इन सब अत्याचारों को देखकर आपकी आत्मा बड़ी दुखी हुई। आपने भारतीयों का संगठन कर 'नैटाल कांग्रेस' की स्थापना की तथा एक 'समाचार पत्र'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का प्रकाशन कर 'असहयोग आन्दोलन' का श्री गणेश कर दिया। सन् १९१४ ई० में आप अफ्रीका में भारतीयों का मस्तक ऊँचा करके भारत लौट आये।

भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रयत्न—इसी समय संसार में 'प्रथम महायुद्ध' की ज्वाला धधक उठी। ब्रिटिश सरकार का विश्वास कर गांधी जी ने उस युद्ध में सहायता देने का प्रयत्न किया। आपको आशा थी कि भारतीयों की सेवा के बदले ब्रिटिश सरकार भारतीयों को कुछ अधिकार सौंप देगी. किन्तु बदले में उन्हें 'रौलेट एक्ट' और 'जलियां वाला बाग का हत्या कांड' मिले। गांधी जी इस चोट को न सह सके और आपने देश भर में अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन का शंख फूंक दिया। दमन का दौर-दौरा चला और गांधी जी तथा असंख्य जन-सेवक जेल में डाल दिये गये। इसके बाद १९२०, १९३२ तथा १९४२ ई० में आन्दोलन की पुनरावृत्ति हुई। अन्त में आपके भागीरथ प्रयत्नों और अनेक संघर्षों के फलस्वरूप १५ अगस्त, १९४७ ई० को भारत स्वतन्त्र हो गया।

जीवन निर्वाण—३० जनवरी सन् १९४८ ई० को देहली में जब आप बिड़ला मन्दिर से प्रार्थना स्थल की ओर आ रहे थे, क्रूर नाथूराम गौडसे द्वारा आपकी हत्या कर दी गई। भारत ही क्या सारा विश्व इस आकस्मिक बज्रपात की चोट से कराह उठा, सज्जनता चीख उठी, मानवता रो पड़ी और पृथ्वी आकाश, जल-स्थल सभी शोक से व्याप्त हो गये। यद्यपि आप अपने भौतिक शरीर से हमारे बीच में नहीं है तथापि आपके द्वारा प्रज्वलित दिव्य ज्योति हमारा मार्ग प्रदर्शन कर रही है।

सिद्धान्त तथा विशेषताएँ—आप सत्य और अहिंसा के सच्चे पुजारी थे। आपका मत था—

"शान्त सदा होती है हिंसा अहिंसा से
वैर विजित होता है केवल निर्वैर से।
घृणा शान्त होती है शुद्ध-बुद्ध प्रेम से।"

आपने जीवन पर सत्य और अहिंसा के सफल प्रयोग किये। आपकी अहिंसा के बारे में श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान लिखती हैं—

वह चली तोप, गल चले टैङ्क, बन्दूकें पिघली जाती हैं।
सुन पावन मन्त्र अहिंसा का, अपने में आप समाती हैं।
विज्ञानी की है परम सिद्धि, जग को लोहे से भर देना।
है हँसी खेल तुमको बापू, लोहे को पानी कर देना॥

आपने हिन्दू-मुस्लिम एकता, अछूतोद्धार, ग्राम सुधार और खादी प्रचार के लिए भरसक प्रयत्न किये। आपकी महत्ता का वर्णन करना मानव शक्ति के लिए असम्भव है। हम तो केवल इतना ही कह सकते हैं—

"पूर्ण पुरुष, विकसित मानव, तुम जीवन सिद्धि अहिंसक,
मुक्त हुए तुम मुक्त हुए जन, हे जग वन्द्य महात्मन्।"

हमारा प्रिय नेता (पं० जवाहरलाल नेहरू)

रूप रेखा—(१) विशेषताएँ, २—जन्म तथा शिक्षा, ३—भारत की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष, ४—प्रधान मन्त्री के रूप में देश की सेवा, ५—अन्त।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विशेषताएँ—

जाकौ जस है जगत में, जगत सराहै जाहि ।
ताको जीवन है सफल, कहत अकब्बर साहि ॥

हमारे प्रिय नेता पं० जवाहरलाल नेहरू में ये सभी गुण पूरी तरह से विद्यमान थे। भारत ही नहीं सारा विश्व ही उन्हें नेता मानता था। संसार की सभी पीड़ित तथा दलित जातियाँ और देश उनसे प्रेरणा पाकर अपनी उन्नति के कार्यों में लग जाते थे। उनका 'हृदय उदार, मस्तिष्क विचारमय, बुद्धि तर्क युक्त, हाथ कर्मरत तथा वाणी मधुर थी'। उन जैसी देशभक्ति, कर्त्तव्य निष्ठा तथा लगन विरले पुरुषों में ही दृष्टिगोचर होती है। भारत-माता उन जैसे सपूत को जन्म देकर धन्य हो गई। वे देश के लिए पैदा हुए, देश के लिए जीवित रहे और देश के लिए ही मर गये।

जन्म तथा शिक्षा—पं० जवाहरलाल नेहरू का जन्म १४ नवम्बर १८८९ को इलाहाबाद में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० मोतीलाल नेहरू और माता का नाम स्वरूप रानी था। इनकी शिक्षा का आरम्भ घर पर ही अंगरेज शिक्षकों के द्वारा हुआ था और बहुत समय तक ये घर पर ही पढ़ते रहे।

१५ वर्ष की अवस्था में ये पढ़ने के लिये इंग्लैण्ड गये। वहाँ इन्होंने कई विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त की। ये सन् १९१२ में इंग्लैंड से "बैरिस्ट्रर" की पदवी प्राप्त करके भारत लौट आये।

भारत की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष—स्वदेश लौटने पर नेहरू को अपने देश की हीन दशा को देखकर बड़ा दुःख हुआ। अंग्रेजों के अत्याचारों को देखकर इनका खून खौल उठता था। कुछ समय बाद इनका गान्धी जी से परिचय हो गया। वे गान्धीजी के विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुए और अपने राजसी ठाट-बाट तथा वैभवपूर्ण जीवन को छोड़कर कांग्रेस में शामिल हो गये। इन्होंने कांग्रेस के सभी आन्दोलनों में पूरी तौर से भाग लिया और कई बार जेल गये तथा तरह तरह के कष्टों को सहा। ये बहुत वर्षों तक कांग्रेस के मन्त्री तथा अध्यक्ष भी रहे थे। इनके प्रयत्नों से देश १५ अगस्त १९४७ से अंग्रेज भारत छोड़कर चले गये और देश को पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई।

प्रधानमंत्री के रूप में देश की सेवा—स्वतन्त्रता प्राप्त होने के बाद नेहरू जी देश के प्रधान मंत्री बने। एक प्रधान मंत्री के रूप में नेहरू जी ने देश की अनुपम सेवा की है। उन्होंने शरणार्थी समस्या को साहस से सुलझाया। फ्रान्सीसी तथा पुर्तगाली बस्तियों को स्वतन्त्र कराया। देश में गणतन्त्र की स्थापना कराकर समाजवाद प्राप्त करने का प्रयत्न किया। भारत को सभी गुटों से दूर रख कर तटस्थ रखा। अपनी सफल विदेश नीति के द्वारा उन्होंने विश्व के सामने भारत के मस्तक को ऊँचा रखा।

अन्त—एक लम्बे समय तक देश की सब प्रकार से सेवा करके पं० नेहरू २७ मई १९६४ को हम सबको रोता-बिलखता छोड़कर इस असार संसार से चले गये। सारा विश्व रो पड़ा, मानवता कराह उठी, उदारता दीन हो गई और भारत माता चीख पड़ी।

यद्यपि आज नेहरू अपने नश्वर शरीर से हमारे मध्य में नहीं हैं, किन्तु अपने यश शरीर से वे हमें सदा ही मार्ग दिखलाते रहेंगे हम श्री शम्भूनाथ मुकुल के शब्दों में उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

ओ नव भारत के निर्माता मानवता के शंकर ?
ओ जन्मेजय, ओ मृत्युञ्जय, ओ धर्म युद्ध के वीर प्रवर ?

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

ओ जन-जन के लपलभ्य, अगम, ओ अपराज्य, ओ योद्धा,
ओ सुधी जनों के अग्रदूत, ओ भारत माँ के पुत्र सबल ?
तुम ले मशाल मानवता को, मर्यादा देते आये,
तुम अग्निशिखा से खेल, शान्ति के मंत्र चले दुहराये।
तुम पंचशील परिव्राजक थे, तुम सह अस्तित्व विधायक,
तुम अमर ज्योति, नर पुङ्गव, तुम युग चर्चित युग नायक।

हमारे विद्यालय का वार्षिकोत्सव

१—प्रस्तावना। २—समय तथा स्थान। ३—उत्सव का आरम्भ। ४—विभिन्न प्रतियोगिताएँ। ५—कवि सम्मेलन तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—जिस प्रकार शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के तुल्य अपने पुत्र को बढ़ता देखकर उसके जन्म दिवस पर माता-पिता अत्यधिक आह्लादित होते हैं, और अपने इष्टदेव से मनोवृतियाँ मनाते हैं, कि उनका लाल अनन्त काल तक अमर रहे उसी प्रकार एक विद्यालय के संस्थापक समाज के मन में भी अपने विद्यालय के वर्ष दिवस को मनाते समय असीम आनन्द उमड़ पड़ता है।

समय तथा स्थान—बसन्त पञ्चमी की पावन प्रभात-वेला में प्रतिवर्ष की भाँति हमारे किसान हायर सैकण्डरी स्कूल का वार्षिकोत्सव अत्यन्त सज-धज के साथ श्री लालबहादुर शास्त्री के सभापतित्व में आरम्भ हुआ। उस काल की शोभा का वर्णन क्या किया जाय। वसे तो हमारा विद्यालय पुण्य सलिला गंगा के तट पर कुछ ग्रामों के अड़ोस पड़ोस में स्थिति है, वहाँ भला, मोटरों के यातायात से क्या प्रयोजन ! पर उस दिन भारत सरकार के प्रधान मन्त्री के पीछे पीछे सरकारी अधिकारियों की मोटरों का ताँता सा लग गया था। जङ्गल में मङ्गल हो रहा था।

उत्सव का प्रारम्भ—उत्सव की कार्यवाही प्रारम्भ होने के पूर्व ज्यों ही माननीय प्रधान मन्त्री महोदय ने सभापति का आसन ग्रहण किया, छात्रों ने स्वागत गान के साथ उन्हें 'गार्ड आफ आनर' देते हुए पुष्पहार पहनाये।

तदन्तर हमारे विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री पद्मनाभ जी एम० एस-सी० एल० टी० ने शास्त्रजी को अभिनन्दन पत्र समर्पित किया।

तत्पश्चात् विद्यालय के छोटे छोटे बालकों द्वारा 'गाँधी युग का किसान' नामक छोटासा एकाङ्की नाटक प्रस्तुत किया गया। नाटकों के कथोपकथन में छात्रों ने दिखाया था कि भूमिधर किसान आदर्श पंचायत के द्वारा अपनी और अपने ग्राम की अवस्था का किस प्रकार सुधार कर सकता है। किसानों पर इसका प्रभाव बहुत पड़ा। इसके पश्चात् कई कविताओं का गान तथा भारतेन्दु के 'अन्धेर नगरी' नामक प्रहसन का अभिनय किया। सम्पूर्ण कार्य-क्रम अत्यन्त प्रभावशाली तथा हृदयस्पर्शी रहे। इसके बाद श्री शास्त्री जी ने विद्यार्थियों को विभिन्न पुरुस्कार दिये।

फिर श्री प्रधानाचार्य ने वार्षिक आय व्यय का लेखा प्रस्तुत करते हुये बतलाया कि यह विद्यालय कृषि की शिक्षा देने के निमित्त ही ग्रामीण वातावरण में स्थापित किया गया है, किसानों के भूमि-दान, अन्न दान और श्रम-दान से इस विद्यालय के कण कण का पोषण हुआहै। राज्य के अन्य सहायता प्राप्त विद्यालय के सामने कोरी किताबी शिक्षा देना ही हमारे विद्यालय की योजना नहीं है। हमने अपनी पचास एकड़ भूमि में अध्यापकों और विद्यार्थियों के संयुक्त श्रम से फलों की वाटिकाएँ आरोपित कर दी हैं। सत्तर एकड़ की भूमिके एक फार्म में इसी प्रकार से फसलें तैयार की जाती हैं। हमारी योजना का मुख्यांश

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

यहीहै कि पांच वर्षों में यह विद्यालय अपने अन्न-जल से ही अपनी आत्मा का भरण पोषण करेगा.......... ।

अब माननीय शास्त्रीजी ने अभिनन्दन पत्र का उत्तर देते हुए प्रवचन किया, "किसान विद्यालय के अभिभावकों और विद्यार्थियो ! आपके विद्यालय की उन्नति के लिए मैं आपसे शुभ कामना करता हूँ। मैं जानता हूँ कि हमारे, स्वाधीनता यज्ञ में आत्माहुति देने वाले श्री श्यामजी वर्मा के हाथों इस भवन की आधारशिला रक्खी गई है। वे एक आदर्श किसान सिपाही के समान जिए और आदर्श मृत्यु से मरे। मुझे जब आपका निमन्त्रण मिला, तब मैंने अपने को सौभाग्यशाली समझा और मन में सोचा, क्यों न उन आदर्श पुरुष की जन्म भूमि की पुण्य रज के पावन स्पर्श से अपने मस्तक को पवित्र करूँ। आप सच मानिए इस पवित्र भाव से प्रेरित होकर ही मैं यहाँ आया हूँ—।"

तालियों की गड़गड़ाहट के बीच और राष्ट्रीय-नारों के गगन-भेदी तुमल नाद के मध्य शास्त्री जी की वक्तृता समाप्त हुई।

अवशिष्ट भवन की पूर्ति के निमित तथा अन्य कृषि कर्म उपयोगी यन्त्रादि के क्रियार्थ श्री शास्त्रीजी ने सहायता के रूप में पाँच सहस्त्र रुपये देने की घोषणा की। फिर क्या था। एक एक किसान दानी कर्ण बन गया। एक सहस्त्र किसानों ने दस रुपये प्रति वर्ष के हिसाब से पन्द्रह वर्षों तक चन्दा देने की प्रतिज्ञा की।

इस प्रकार अनन्त प्रसन्नता से परिपूर्ण वासन्ती वातावरण में वार्षिकोत्सव की प्रातः कालीन कार्यवाही सानन्द सम्पन्न हुई।

मध्याह्न वेला में समीपवर्ती सघन आम्र उद्यान में दालबाटी के द्वारा अतिथियों के लिए भोजनादि की व्यवस्था की गई। तदनन्तर अपराह्न में उनको दुग्ध आदि दिया गया।

विभिन्न प्रतियोगिताएँ—फिर उत्सव की द्वितीय कार्यवाही का प्रारम्भ चरखा प्रतियोगिता से हुआ। विद्यालय की नवम श्रेणी के अस्सी छात्रों ने आध घन्टे तक कताई का कार्य दिखाया। उस कार्य की सराहना शास्त्रीजी ने की और इन सभी छात्रों को पुरस्कृत किया।

अब इसके बाद छात्रों ने मल्लखम्भ, बनैटी, गदका, लाठी इत्यादि के अद्भुत हस्त कौशल दिखलाए। अन्त में राजन्द्र कालेज के छात्रों के साथ कुश्ती की प्रतियोगिता में हमारे विद्यालय के छात्र बहुत शान के साथ विजयी हुए।

इस कार्यवाही के उपरान्त भोजनादि ग्रहण कर चुकने पर श्री शास्त्री जी और उनके साथ में समागत अन्य राज्य कर्मचारी अपनी अपनी मोटरों में सवार होकर चले गये।

कवि सम्मेलन तथा उपसंहार—उनको विदा देने के उपरान्त तृतीय बैठक की कार्यवाही का श्रीगणेश कवि सम्मेलन से हुआ। हिन्दी काव्य में हास्य रस सागर सृष्टा पूज्य पं० हरिशंकर शर्माजी ने प्रधानाचार्य जी की प्रार्थना पर सभापति का आसन अलंकृत किया।

विद्यालय के छात्रों ने अपनी योग्यतानुसार समस्याओं की पूर्तियाँ सुनाईं जिन पर टिप्पणी करते हुए सभापति जी ने कहा कि बाल प्रयास की दृष्टि से समस्त छात्रों का प्रयत्न इस दिशा में प्रशंसनीय है।

इसके उपरान्त श्री बलवीरसिंह जी 'रंग' ने शुद्ध वीर रस की कविताएँ सुनाईं। श्री खेमचन्द सुमन, श्री डा० आनन्द, श्री गोपालप्रसाद जी व्यास, श्री भागीरथजी भास्कर ने अपनी प्रसिद्ध रचनाओं को सुनाकर काव्यप्रेमी जनता का मनोरंजन किया। कुल मिलाकर सभी कवियों की सभी रचनाएँ सजीव और राष्ट्र के कल्याणकारी उपदेशों से ओत-प्रोत थीं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिनेमा फिल्मों में नेताओं के स्वरूप तथा वाणी सुरक्षित रहते हैं, और समय समय पर उन्हें देख सुन सकते हैं।

शिक्षा प्रसार का साधन—किसी वस्तु को आँखों से देखकर हम उसके बारे में जितना जान लेते हैं, उतना उसके बारे में सुनकर या पढ़कर नहीं जान पाते। ऐतिहासिक चित्रों को देखकर हमें तत्कालीन चित्र का ज्ञान सरलता से हो जाता है। विभिन्न स्थानों के प्राकृतिक दृश्यों, पैदावार आदि भौगोलिक चित्रों को देखकर सहज ही में हमारे भौगोलिक ज्ञान की वृद्धि हो जाती है। विज्ञान के वृहत्तर प्रयोग जो साधारण प्रयोगशालाओं में नहीं दिखलाये जा सकते, फिल्मों के द्वारा सरलता से दिखला दिये जाते हैं। सभ्यता तथा स्वच्छता की जैसी सफलता और क्रियात्मक शिक्षा सिनेमा के द्वारा दी जा सकती है, वैसी अन्य प्रकार से दुर्लभ है। स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी फिल्मों से स्वास्थ्य शिक्षा भी सरलता से दी जाती है। सिनेमा द्वारा प्रदत्त शिक्षा की यह प्रमुख विशेषता है कि वह नीरस नहीं होती और अशिक्षित व्यक्ति भी इसी से लाभ उठाते हैं।

सिनेमा का दुरुपयोग तथा हानि—यद्यपि सिनेमा का आविष्कार एक लाभदायक आविष्कार है, किन्तु जितना दुरुपयोग इस आविष्कार का हो रहा है उतना शायद ही किसी और आविष्कार का हुआ होगा। भारतवर्ष में तो इसके दुरुपयोग की चरम सीमा हो गई है। धन प्राप्त को ही जीवन का चरम उद्देश्य समझने वाले फिल्म निर्माता शृंगारिक फिल्मों का निर्माण कर रहे हैं जिसका प्रभाव कोमल मति के बालकों पर बहुत बुरा पड़ रहा है। सिनेमा आज मनोरंजन का साधन न रह कर व्यसन बन गया है। और आये दिन उसका दुष्परिणाम हमें देखने को मिलता है।

चारित्रिक पतन—आधुनिक काल के नव युवकों के चारित्रिक पतन का अधिकांश उत्तरदायित्व सिनेमा पर ही है। अधिकतर फिल्मों में कथानक भद्दे तथा शृंगार से परिपूर्ण होते हैं। वे हमारे नवयुवकों के सामने अनुचित आदर्श रखते हैं। 'प्रेम' जैसे शुद्ध तथा दिव्य भाव को कुत्सित वासना के रूप में प्रचलित करके सिनेमाओं ने हमारा घोर पतन किया है। सिनेमा के कुत्सित गानों का इतना प्रचार है कि पाँच-पाँच छः छः वर्ष के बालक भी उनका अर्थ समझे बिना ही गाते फिरते हैं।

स्वास्थ्य की हानि— भारतीय सिनेमाघर अच्छे ढंग से नहीं बनाये जाते। उनमें बाहरी तड़क-भड़क तो पर्याप्त मात्रा में होती है, किन्तु शुद्ध वायु के आगमन तथा संचरण का उचित प्रबन्ध नहीं होता। जिस समय मनुष्य की एक बड़ी भीड़ सिनेमा घर में बैठकर सिनेमा देखती है, वहाँ की अशुद्ध वायु का मनुष्यों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। छत की बीमारियों से पीड़ित मनुष्य भी सिनेमा देखने आते हैं। उनके सम्पर्क से स्वस्थ पुरुषों को भी वे बीमारियाँ हो जाती हैं। सिनेमा के देखने से नेत्रों की दृष्टि भी क्षीण होती है। सिनेमा के देखने से वासनाओं की वृद्धि होती है और उनका अन्तिम परिणाम स्वास्थ्य नाश के रूप में हमारे सामने आता है।

धन का अपव्यय—सिनेमा के व्यसन रूप में प्रचलित होने के कारण बहुत से मनुष्य नित्य प्रति सिनेमा देखते हैं और धन का अपव्यय करते हैं। यह ठीक है कि मनोरंजन जीवन के लिये आवश्यक है किन्तु जब मनोरंजन का 'कर' भोजन, वस्त्र और शिक्षा को चुकाना पड़े तो कोई भी समझदार व्यक्ति उसका समर्थन नहीं कर सकता।

इसके अतिरिक्त सिनेमा व्यवसाय में प्रयुक्त होने वाली अधिकतर वस्तुएँ विदेशों से आती हैं, जिससे हमारे विदेशी मुद्रा-कोष पर भार पड़ता है। 'सिनेमा' पर पूँजीपतियों का एक छत्र आधिपत्य है। वे इसके द्वारा और भी अधिक मालदार होते जा रहे हैं। वे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पूंजीपति तथा सिनेमा के अभिनेता और अभिनेत्रियाँ धन का अत्यधिक अपव्यय और राष्ट्रीय-सम्पत्ति का दुरुपयोग करती हैं।

सुधार की आवश्यकता तथा उपसंहार—यद्यपि सिनेमा से हमारे देश की पर्याप्त हानि हो रही है, फिर भी उससे पर्याप्त लाभ हो सकता है। अतः इसमें सुधार की परम आवश्यकता है। फिल्म कम्पनियों ने कला तथा फोटोग्राफी पर विशाल ध्यान दिया है, यदि वे इतना ध्यान कथानक तथा गीतों के विषय पर दें, तो शीघ्र ही अभिलषित उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है। यद्यपि 'जागृति' 'हम पंछी एक डाल के' 'बूट पालिश' 'काबुली वाला' जैसे चित्रों का निर्माण कर फिल्म कम्पनियों ने अपना सुधारवादी दृष्टिकोण हमारे सामने रक्खा है, किन्तु ऐसे चित्रों की संख्या अँगुलियों पर गिनी जा सकती है। यदि हमारी सरकार सिनेमा पर विशेष ध्यान देने लगे, तो सिनेमा-संसार की बुराइयाँ दूर हो सकती हैं। और वह हमारे लिये स्वस्थ मनोरंजन को प्रस्तुत कर हमारा अत्यधिक कल्याण कर सकता है।

विद्यार्थी जीवन

१—प्रस्तावना। २—जीवन का स्वर्ण काल। ३—विद्यार्थी जीवन के उद्देश्य (क) विद्या प्राप्ति, (ख) चरित्र निर्माण, (ग) शारीरिक तथा मानसिक उन्नति। ४—उपसंहार।

प्रस्तावना—प्राचीन भारतीय इतिहास को देखने से ज्ञात होता है कि हमारे पूर्व पुरुषों ने जीवन को सुव्यवस्थित ढंग से बिताने के लिये चार भागों में बाँटा था—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। इनकी महत्ता का प्रतिपादन करने के लिये उन्होंने इनकी आवश्यकता को सर्वोपरि समझते हुए इन्हें आश्रम का नाम दिया था। विद्यार्थी जीवन ब्रह्मचर्य का ही दूसरा नाम था। महाकवि कालीदास ने रघुवंश के आरम्भ में लिखा है—

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धक्ये मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।
रघूणामन्वयं वक्ष्ये................. ।

"मैं बाल्यकाल में विद्या का अभ्यास करने वाले, यौवन में इन्द्रियों के विषयों का उपयोग करने वाले, बुढ़ापे में मुनि की वृत्ति का आचरण करने वाले और अन्त में योग के द्वारा शरीर का त्याग करने वाले रघुवंशियों के वंश का वर्णन करूँगा।"

जीवन का स्वर्ण काल—विद्यार्थी-जीवन मनुष्य जीवन का सर्वाधिक श्रेष्ठ काल है। इस समय का सदुपयोग कर मनुष्य अपने जीवन को सुखमय बनाने का सफल प्रयत्न कर सकता है। इस समय विद्यार्थी पर भोजन-वस्त्रादि की चिन्ता का कोई भार नहीं होता। उसका मन और मस्तिष्क निर्विकार होता है, उसके शरीर और मस्तिष्क की सभी शक्तियाँ विकासोन्मुख होती हैं। इस स्वर्णकाल में उसके लिये केवल एक ही कार्य होता है, और वह है—अपनी सम्पूर्ण प्रवृत्तियों और शक्तियों को विद्या के अर्जन की ओर लगाना।

विद्यार्थी जीवन के उद्देश्य—'विद्यार्थी' शब्द का अर्थ ही 'विद्या का अर्थी अर्थात्-चाहने वाला है, किन्तु उसका उद्देश्य विद्या की प्राप्ति करना ही नहीं है, अपितु उसे चरित्र-निर्माण शारीरिक तथा मानसिक उन्नति और सद्गुणों को प्राप्ति की ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिये। इस प्रकार विद्यार्थी जीवन के प्रधानतः तीन उद्देश्य हो जाते हैं—

विद्या प्राप्ति, चरित्र निर्माण, शारीरिक तथा मानसिक उन्नति।

विद्या प्राप्ति—विद्या से तात्पर्य केवल पुस्तकीय ज्ञान से नहीं है। विद्यार्थी को अपने चारों ओर की प्रकृति की सुरम्य छटाको आँख खोलकर देखना चाहिये। ऐसा करने से उसके ज्ञान में विविधता और उसके अवलोकन में सूक्ष्म दर्शिता आ जाती है। पुस्तकों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में वह जिन वर्णनों को पढ़ता है, उन्हें प्रकृति में साकर रूप में देखकर उसका मन आनन्द विभोर हो जाता है और उसके हृदय में स्वभाव से ही दैवी गुणों का विकास होने लगता है।

विद्या की प्राप्ति में विद्यार्थी को कभी आलस्य नहीं करना चाहिए। उसे ज्ञान प्राप्ति के लिये बड़े से बड़ा त्याग और कठिन से कठिन-परिश्रम करने के लिये तैयार रहना चाहिए। उसे 'क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थं च चिन्तयेत् (क्षण क्षण करके विद्या का और कण कण करके धन का अर्जन करे) को ध्यान में रखकर विद्या की प्राप्ति में प्रत्येक क्षण को लगा दे। विद्या की प्राप्ति में किसी भी प्रकार के ऊँच-नीच के भेद को छोड़ कर निस्संकोच भाव से उसे ग्रहण करे—

उत्तम विद्या लीजिए, जदपि नीच पै होय।
परो अपावन ठौर में कंचन तजत न कोय ।।

चरित्र निर्माण—यों तो मानव मात्र के लिये चरित्र-निर्माण की आवश्यकता होती है, किन्तु विद्यार्थी के लिये तो इसकी प्रधान आवश्यकता है। श्रेष्ठ चरित्र के अभाव में विद्या-विभूषित मनुष्य को भी कोई आदर की दृष्टि से नहीं देखता। चरित्र के निर्माण के लिये विद्यार्थी को 'आत्म संयमी' होना चाहिये। संयम के बिना विद्या को प्राप्त करना एक कठिन कार्य है। जिनका मन चंचल है जो पढ़ते-पढ़ते आकाश में वायुयान की आवाज को सुन कर उसे देखने दौड़ पड़ता है, सिनेमा जाने वालों के आह्वान पर किताबों को फेंक साथ हो लेता है, चाटवाले की घण्टी की आवाज सुन उसे खाने के लिये दौड़ पड़ता है, वह, क्या कभी लिख पढ़ सकता है ? कदापि नहीं।

चरित्र की श्रेष्ठता के लिये ब्रह्मचर्य व्रत का पालन तथा मादक द्रव्यों के सेवन से दूर रहने की परम आवश्यकता है। सत्संगति के बिना चरित्र निर्माण का होना असम्भव ही है। दुष्टों की संगति अच्छे पुरुषों को भी अवनति के गर्त में गिरा देती है। शील, विनय, सदाचार, अनुशासन-प्रियता, बड़ों का आदर आदि ऐसे गुण हैं जिनका होना एक विद्यार्थी के लिये आवश्यक है।

चरित्र की शालीनता के लिए गुरु संरक्षण में रहकर उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिये। सच्ची ज्ञान-किरण गुरु सेवा के बिना प्राप्त नहीं होती। (गुरुशुश्रूषया ज्ञानम्-गुरु की सेवा से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है।) विद्यार्थियों का कर्तव्य है कि वे अपने शिक्षकों का सम्मान करें, उन पर श्रद्धा रखें, उन्हें आदर से मस्तक झुकाएं और उनके प्रति कृतज्ञता की भावना रखें। एक चरित्रवान विद्यार्थी 'सादा जीवन, उच्च विचार' के सिद्धान्त को ध्यान में रखता हुआ अपने सम्पूर्ण आचरणों और उपकरणों में सादगी रखकर सदा ही बाह्याडम्बरों से दूर रहता है। वह श्रृंगार की आराधना में समय और धन का अपव्यय नहीं करता।

शारीरिक तथा मानसिक उन्नति—मस्तिष्क का विकास शरीर के विकास के बिना असम्भव है, '**स्वस्थ** मस्तिक स्वस्थ शरीर में ही रहता है' को ध्यान में रखकर विद्यार्थी को सर्वदा ही अपने शरीर को स्वस्थ रखने का प्रयत्न करना चाहिये। इसके लिये उसे अपनी रुचि के अनुकूल खेल-कूद में भाग लेना चाहिए। व्यायाम तथा आसनों के प्रयोग शरीर को स्वस्थ रखने में बहुत योग देते है। स्वच्छ वायु में प्रातः तथा सायंकाल का भ्रमण जीवन शक्ति को बढ़ाता है और चित्त को प्रफुल्लित रखता है।

हमारे प्राचीन शास्त्रों में चरित्र गठन के लिये विद्यार्थी में निम्न पाँच लक्षणों का होना अनिवार्य बताया गया है—

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

काक चेष्टा बक ध्यान, श्वान निद्रा तथैवच ।
अल्पाहारी गृह त्यागी, विद्यार्थी पंच लक्षणम् ।।

उपसंहार—उक्त विवरण से स्पष्ट है कि एक विद्यार्थी का जीवन बड़ा ही उत्तरदायित्वपूर्ण है । इस काल में उसे सदा ही सावधान तथा सचेष्ट रहना पड़ता है, वह चैन की वंशी नहीं बजा पाता सुख तथा विद्या का बैर है, एक के चाहने वाले को दूसरे की प्राप्ति नहीं होती—

सुखार्थी वा त्येजत् विद्या विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम् ।
सुखार्थिनः कुतों विद्या, विद्यार्थिनः कुतः सुखम् ।।

किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि विद्यार्थी-जीवन को कष्ट साध्य समझ कर उससे विरक्त हो जाना चाहिए । ये कष्ट सुख की प्राप्ति कराने वाले हैं, अतः इन्हें सुख के रूप में स्वीकार कर प्रसन्नता से अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए । यदि भारतीय विद्यार्थी-विद्यार्थी जीवन की श्रेष्ठता को समझकर उसे आदर्श बनाने की ओर उन्मुख हो जायेंगे तो वह दिन दूर नहीं है जब वे अपने को सत्यम् शिवम् और सुन्दरम् के अनुकूल बनाकर देश की बहुमुखी प्रगति कर सकेंगे ।

पुस्तकालय से लाभ

१—प्रस्तावना । २—परिभाषा तथा प्रकार । ३—उपयोगिता (क) ज्ञान की वृद्धि (ख) आत्म शुद्धि (ग) मनोरंजन (घ) जन सम्पर्क (ङ) आन्तरिक मित्रों की प्राप्ति ४—उपसंहार ।

प्रस्तावना—

काव्यशास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम ।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ।।

बुद्धिमान पुरुष अपना समय काव्य शास्त्र आदि के विनोद द्वारा बिताते हैं और मूर्ख व्यसन निद्रा अथवा कलह के द्वारा व्यतीत करते हैं ।

वास्तव में ज्ञान की प्राप्ति और बुद्धि के लिए विभिन्न प्रकार की पुस्तकों का अध्ययन अत्यावश्यक होता है । यद्यपि मुद्रण यन्त्रों के आविष्कारों से पुस्तकों के मूल्य में असाधारण कमी हो गई है और उनकी प्राप्ति भी सरलता से हो जाती है, फिर भी सर्वसाधारण के लिए विभिन्न प्रकार की पुस्तकों को खरीदना और उन्हें सुरक्षित रूप में रखना एक कठिन कार्य है । इसके अतिरिक्त बहुत सी ऐसी प्राचीन पुस्तकें हैं जो किसी भी मूल्य पर बाजार में नहीं मिलतीं, ज्ञान की बहुमुखी प्रगति के कारण नयी पुस्तकों का प्रकाशन भी अत्यधिक संख्या में हो रहा है, अतः आधुनिक काल में जनहित के लिए पुस्तकालयों की अत्यधिक उपयोगिता तथा आवश्यकता है ।

परिभाषा तथा प्रकार—'पुस्तकालय' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है 'पुस्तक' और 'आलय,' अतः इसका अर्थ हुआ पुस्तकों का आलय अर्थात् घर वह स्थान जहाँ पुस्तकें रखी जाती हैं, संग्रह की जाती हैं और जहाँ उन पुस्तकों को प्राप्त कर मनुष्य उनका उपयोग करते हैं । यह एक ऐसी सामाजिक संस्था है, जहाँ प्रत्येक पुरुष बिना किसी भेदभाव के पुस्तकालय के नियमों का पालन करता हुआ पुस्तकों से लाभ उठा सकता है । कुछ पुस्तकालय सदस्यों से कुछ मासिक या वार्षिक चन्दा लेते हैं जिससे उनका व्यय चलता है । कुछ पुस्तकालय इस प्रकार के भी होतें हैं जो केवल जमानत के रूप में कुछ धन जमा करा लेते हैं तथा कोई चन्दा नहीं लेते । विद्यालयों में भी पुस्तकालय होते हैं जिनसे छात्र और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अध्यापक लाभ उठाते हैं। कुछ पुरुष अपने निजी पुस्तकालय रखते हैं। हमारी सरकार ने कुछ चलते-फिरते पुस्तकालयों की भी व्यवस्था की है। ये पुस्तकालय मोटर लारियों में होते हैं और साप्ताहिक क्रम से ग्रामों में चक्कर लगाते रहते हैं।

उपयोगिता—(ज्ञान की वृद्धि)—अध्यापकों से प्राप्त ज्ञान उस विषय की अनेक पुस्तकों के अध्ययन के बिना अधूरा रहता है। एक विषय की अनेक पुस्तकों को खरीदना न तो सम्भव ही है और न बुद्धिमत्तापूर्ण। अतः पुस्तकालयों में बैठकर निर्धन से निर्धन व्यक्ति भी अच्छी से अच्छी दुष्प्राप्य पुस्तकों को पढ़कर अपने ज्ञान की वृद्धि कर सकता है।

आत्म शुद्धि—पुस्तकालय में हम श्रेष्ठ लेखकों की उपदेशपूर्ण पुस्तकें पढ़ते हैं। इन पुस्तकों में उपदेशपूर्ण आख्यान तथा कथानक होते हैं। वाचक को पता भी नहीं चलता कि उसे उपदेश दिया जा रहा है और मधुर आख्यानों में व्याप्त उपदेश उसके मन और मस्तिष्क के अंग बन जाते हैं। 'रामचरित मानस को पढ़ते समय कौन सोचता है कि उसे उपदेश दिया जा रहा है, पर रामकथा के अन्त होते-होते पाठक के मन में राम बनने की अभिलाषा जाग्रत हो जाती है' और वह आत्म शुद्धि की ओर प्रवृत होता है. किसी पाठक को प्रबन्ध काव्य अच्छे लगते हैं, किसी को नाटक, किसी को कहानी और किसी को उपन्यास। एक पुस्तकालय में सब प्रकार के पाठकों की रुचि की पुस्तकें मिल जाती हैं, अतः पुस्तकालय सब प्रकार के पाठकों को आत्म-संस्कार का समान अवसर प्रदान करता है।

मनोरंजन तथा समय का सदुपयोग—प्रत्येक पुरुष अपने अवकाश के समय में मनोरंजन चाहता है। खेल-कूद, नाटक, सिनेमा, शतरंज आदि के द्वारा भी यह मनोरंजन प्राप्त हो सकता है. पर ये पुस्तकालय की समानता नहीं कर सकते, क्योंकि पुस्तकालय से प्राप्त होने वाले मनोरंजन के साथ साथ ज्ञान की वृद्धि भी होती है। एक क्रिया द्वयर्थ करी प्रसिद्धा—एक पंथ दो काज। किसी पुस्तकालय में बैठ जाइए और फिर चाहे सूर के कृष्ण के साथ खेलिए, चाहे कबीर से इकतारे पर तान लगाइए, चाहे मीरा के गिरधर नागर को देखिए, चाहे प्रेमचन्दजी के साथ गांवों और गली कूचों का चक्कर लगाइए, सर्वत्र आनन्द ही आनन्द है।

जन सम्पर्क तथा सामाजिक भावना की तुष्टि—पुस्तकालयों में पुस्तकों को पढ़ने के लिए विभिन्न प्रकार के व्यक्ति जाते हैं। विद्वान, कलाकार, अध्यापक, वकील, विद्यार्थी आदि से सम्पर्क प्राप्त कर हमें उनके अनुभवों से लाभ होता है। हमें उनसे सामाजिक व्यवहार तथा आचरण सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार पुस्तकालयों में जाने से जन-सम्पर्क बढ़ता है और हमारी सामाजिक भावना की तुष्टि होती है।

आन्तरिक मित्रों की प्राप्ति—प्रत्येक पुरुष बाह्य साथियों के साथ-साथ कुछ आन्तरिक साथी सगी चाहता है, जिनके साथ वह भावलोक में विचरण कर अलौकिक आनन्द की प्राप्ति कर सके। पुस्तकालय कालीदास, तुलसीदास, शेक्सपियर जैसे बड़े कवियों शंकराचार्य, अरस्तू जैसे दार्शनिकों, चाणक्य, मार्क्स जैसे राजनीतिज्ञ आदि से हमारा परिचय कराकर उन्हें हमारे मन का साथी बना देता है। उनके अनुभव तथा विशाल ज्ञान का भण्डार हमें लाभ ही लाभ पहुँचाते हैं। इसीलिए किसी कवि ने कहा है।

जब कोई नया ग्रन्थ विलोकता हूँ,
मानो मिला मित्र मुझे पुराना।

देश में पुस्तकालयों की कमी तथा उपसंहार—खेद का विषय है कि मानव जाति के लिये उपयोगी पुस्तकालयों की हमारे देश में बहुत ही कमी है। नगरों में तो जहाँ कहीं पुस्तकालय दीख भी जाते हैं, पर गाँवों में इनका सर्वथा अभाव है। यद्यपि ग्राम पंचायतों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
तथा सरकार ने ग्रामीण पुस्तकालयों की स्थापना की है, चलते फिरते पुस्तकालयों काभी प्रबन्ध किया गया है पर उनकी संख्या नगण्य ही है। हमारे धार्मिक प्रवृत्ति के धनीमनी पुरुष मन्दिरों मस्जिदों के बनवाने को तो पुण्य का काम समझते हैं पर पुस्तकालयों की स्थापना को कोई महत्व नहीं देते। यदि वे अपने प्राचीन शास्त्रों के अनुसार पुस्तकालय के महत्व को समझकर पुस्तकालयों की स्थापना करने लगें तो इस दिशा में शीघ्र ही महान् प्रगति हो सकती है। इसके अतिरिक्त हमारी जन सरकार का भी यह पुनीत कर्तव्य है कि वह ग्राम विकास योजना में पुस्तकालयों की स्थापना को प्रमुखता दे जिससे ग्रामों की आर्थिक उन्नति के साथ-साथ बौद्धिक उन्नति भी हो सके और वे सब प्रकार से सुखी समृद्ध बन सकें।

जीवन में परिश्रम का महत्व (उद्योग)

१—प्रस्तावना, २—परिभाषा तथा महत्व। ३—लाभ, ४—उपसंहार।

श्रम ही सों सब मिलत है, बिन श्रम मिले न काहि।
सीधी उँगरी घी जमौ कबहूँ निकसत नाहि।

उक्त पद में जीवन को सफल बनाने का अत्यन्त श्रेष्ठ उपाय प्रदर्शित किया गया है। भावार्थ स्पष्ट है कि परिश्रम तथा उद्योग के बिना मनुष्य को कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता है। मानव जाति के इतिहास से भी यही सिद्ध होता है। मानव युग के उस आदि काल पर थोड़ा सा विचार कीजिए, जब मनुष्य को केवल अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए ही घोर संघर्ष और परिश्रम करना पड़ता था। अपनी सुरक्षा, भोजन, वस्त्र, निवास स्थान आदि के लिये उसने घोर श्रम और अनवरत उद्योग किया। उसका ही यह फल है कि हम आज सम्पूर्ण प्राणि जगत के राजा बने हुये हैं। प्रकृति के अण-अण का रहस्य हमें ज्ञात है और वह आज हमारी क्रीत दासी बनी हुई है।

परिभाषा तथा महत्व—किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कोई भी प्राणी अपने मस्तिष्क तथा हाथ, पैर आदि शरीर के अंगों के द्वारा, जो प्रयत्न करता है उसे ही परिश्रम कहा जाता है। हमारे जीवन में श्रम का अत्यधिक महत्व है। श्रम के बिना किसी भी प्रकार उन्नति सम्भव नहीं है। जीवन का कोई भी क्षेत्र हो सब जगह श्रम की अत्यन्त आवश्यकता है। चाहे कला हो, साहित्य हो, विज्ञान हो, राजनीति हो, सब जगह सफलता की प्राप्ति के लिए श्रम करना ही पड़ता है। हजारों मनुष्यों ने पच्चीसों वर्ष तक एक-एक पत्थर को काट-छांटकर 'ताज' जैसी सुन्दर इमारत बना पाई। कई पीढ़ी की कठिन तपस्या के बाद भागीरथ गंगा को पृथ्वी पर लाये।

लाभ—(आत्म निर्भरता) जब हमें परिश्रम करने में सफलता की प्राप्ति हो जाती है, तो हमें अपनी शक्तियों का ज्ञान हो जाता है। अपनी शक्ति का ज्ञान होने से आत्म-निर्भरता तथा आत्म-संतोष प्राप्त हो जाते हैं। आत्म सन्तोष से सुख तथा शान्ति की प्राप्ति होती है। सफलता के प्राप्त न होने पर भी हम यह अवश्य सोचते हैं कि हमने अपने कर्तव्य का पालन तो किया ही है और हमें आत्म सन्तोष प्राप्त हो जाता है।

सुख की प्राप्ति—जो मनुष्य परिश्रमी होता है, उसे भोजन वस्त्र, बच्चों की शिक्षा का व्यय आदि की चिन्ता नहीं सताती। वह अपने साधारण खर्चों को पूरा करने के लिए तो कम से कम कमा ही लेता है। इससे उसके परिवार में सदा सुख और शान्ति का साम्राज्य रहता है। इसके विपरीत परिश्रम से जी चुराने वालों के घर में आर्थिक तंगी के कारण कलह का अखाड़ा जमा रहता है और वे सुख-शान्ति के लिए तरस जाते हैं।

आत्म संस्कार—परिश्रम न करने वाला पुरुष अकर्मण्य हो जाता है और धीरे-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

धीरे दुराचार की ओर अग्रसर होने लगता है। इसके विपरीत परिश्रम करने वाले पुरुषों की आत्मा शुद्धि तथा बलवती हो जाती है। अतः परिश्रम वह अग्नि है जिसमें तपकर आत्मा का सुवर्ण चमकने लगता है, अतएव परिश्रम को ईश्वर का पूजन (Work is worship) कहा गया है। परिश्रमरूपी पारिजातपादप के प्रसून ही परमात्मा को प्रसन्न कर सकते हैं। श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर भी गीताञ्जलि में ईश्वर पूजक से पूजा छोड़कर ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए किसानों और मजदूरों के साथ काम करने को कह रहे हैं—

Come out of the meditations and leave aside flowers and incense. What harm is there if thy clothes become tattered and stained? Meet Him and stand by Him in toil and in sweat of the brow.

गुणों तथा शक्ति का विकास—परिश्रम करने से मनुष्य की कार्य करने की शक्ति बढ़ती है और उसमें दक्षता आती है। जो मनुष्य परिश्रम करने से विरत हो जाता है, उसकी दक्षता और शक्ति का धीरे-धीरे ह्रास होने लगता है। अतः दक्षता और शक्ति को रखने तथा उसके विकास के लिए हमें निरन्तर परिश्रम में रहना चाहिए।

आदर तथा यश की प्राप्ति—परिश्रमी पुरुष की उन्नति होती है। समाज उसका आदर तथा सम्मान करता है। मरणोपरान्त भी उसका यश स्थायी रहता है। कालिदास चाणक्य आदि का नाम आज भी संसार भर में प्रसिद्ध है। परिश्रमी पुरुष को मनुष्य आदर की दृष्टि से देखते हैं। माता-पिता अपने बालकों को उसका अनुकरण करने की शिक्षा देते हैं।

परिश्रम की इतनी सब कुछ महत्ता होने पर भी आज कुछ आलसी कहते सुने जाते हैं कि प्रारब्ध पुरुषार्थ (परिश्रम करने) से अधिक गौरवपूर्ण है, गरिमाशाली है। वे अपने विचार की पुष्टि में बाबा मलूकदास के वचनों को उद्धृत करते हुए सुने जाते हैं—

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका कहि गये, सबके दाता राम॥

पर आज के युग में आलसियों के इस महामन्त्र की निस्सारता स्वतः ही सिद्ध हो गई है। जब सामने थाली में रखा हुआ भोजन हाथ पैर मुँह हिलाये बिना पेट में नहीं पहुँच सकता, फिर किसी महान उद्देश्य को प्राप्त करना तो अत्यन्त ही असम्भव है।

उपसंहार—उक्त विवरण से भली भाँति स्पष्ट है कि परिश्रम जीवन है और आलस्य मरण। यदि परिश्रम किसी देश अथवा राष्ट्र के लिए जीवन दायिनी औषधि है, तो आलस्य घातक कालकूट विष। यदि परिश्रम मनुष्य को उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा देता है, तो आलस्य अवनति के गड्ढे में गिरा देता है। बहुत कहने से क्या, परिश्रम ही हमारी सफलता का पथप्रदर्शक है। हम अधिक से अधिक परिश्रम करके हा अधिक से अधिक सुखी और समृद्धिशाली हो सकते हैं। किसी कवि ने ठीक कहा है—

उद्योगिनं पुरुषसिंह मुपैत लक्ष्मीः;
दैवेन देयमिति का पुरुषा वदन्ति।

विशेष—विद्यार्थी इस निबन्ध की सहायता से 'उद्योग' पर सरलता से लिख सकते हैं अर्थात् प्रायः 'परिश्रम' के स्थान पर 'उद्योग' और 'परिश्रमी' के स्थान पर उद्योगी लिख देने से यह उद्योग का निबन्ध हो जायगा।

समाचार पत्र और उनकी उपयोगिता

१—प्रस्तावना। २—परिभाषा तथा स्वरूप। ३—प्रकार। ४—उपयोगिता (क)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
ज्ञान वृद्धि (ख) राष्ट्रीय एकता का साधन, (ग) सामाजिकता का प्रचारक, (घ) प्रजातन्त्र का रक्षक, (ङ) व्यापार तथा व्यवसाय की उन्नति (च) योग्य कर्मचारी तथा योग्य कार्य की प्राप्ति, (छ) मनोरंजन की प्राप्ति (ज) एक प्रमुख व्यवसाय। ५—उपसंहार।

प्रस्तावना—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह स्वभाव से ही अपने बारे में कहना और दूसरों के बारे में सुनना चाहता है। प्राचीन काल में भी तीर्थ यात्रा से लौटे हुए मनुष्यों से देश विदेश के समाचारों को सुनने के लिए मनुष्य लालायित रहते थे। सभ्यता के विकास के साथ मनुष्यों का संसार का ज्ञान बढ़ता गया और उसके साथ साथ उन्हें संसार के समाचारों को शीघ्रातिशीघ्र जानने की उत्सुकता भी बढ़ती गई। इसी उत्सुकता तथा जिज्ञासा को शान्त करने के लिये आधुनिक युग में समाचार पत्रों का प्रादुर्भाव हुआ।

परिभाषा तथा स्वरूप—समाचार पत्र से तात्पर्य उस पत्र से है, जिसमें देश विदेश के समाचार प्रकाशित होते हैं। यद्यपि इन पत्रों में समाचारों की ही प्रमुखता रहती है, किन्तु इनमें इनके अतिरिक्त सामयिक घटनाओं पर विद्वानों के विचार, कविताएँ, कहानियाँ, विज्ञापन, पाठकों के पत्र, व्यंग्य चित्र, सम्पादकीय लेख आदि प्रकाशित होते हैं।

प्रकार—समय तथा विषय की दृष्टि समाचार पत्र कई प्रकार के होते हैं। नित्य प्रकाशित होने वाले को दैनिक, सप्ताह में दो बार प्रकाशित होने वालों को अर्ध साप्ताहिक तथा सप्ताह के अन्त में प्रकाशित होने वाले को साप्ताहिक कहा जाता है। पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक आदि पत्रों की गणना समाचार पत्रों के अन्तर्गत नहीं होती। विषय की दृष्टि से ये साहित्यिक, धार्मिक, व्यापारिक, चित्रपट सम्बन्धी, वैज्ञानिक, राष्ट्रवादी, उदारवादी, साम्यवादी आदि अनेक प्रकार के होते हैं।

उपयोगिता—(ज्ञान वृद्धि)—समाचार-पत्र ज्ञान वृद्धि का सबसे सुलभ साधन है संसार भर में होने वाली प्रत्येक प्रकार की घटनाओं को हम समाचार पत्रों के द्वारा सरलता से जान लेते हैं। समाचार पत्रों की टिप्पणियाँ तथा सम्पादकीय लेख, इस कार्य में हमारी सहायता करते हैं। दूसरे इनका मूल्य भी इतना कम होता है कि सर्वसाधारण इन्हें बिना किसी कठिनाई के खरीद सकते हैं। जो इन्हें खरीदना भी नहीं चाहते, वे सुविधानुसार किसी वाचनालय में जाकर इन्हें पढ़कर लाभ उठा सकते हैं।

राष्ट्र निर्माण—समाचार पत्र राष्ट्र-निर्माण में महत्वपूर्ण सहायता देते हैं। हमारे ही देश में समाचार पत्रों ने भारतेन्दु के समय से लेकर आज तक राष्ट्रीय चेतना को जागृत कर उनकी उन्नति में सहायता दी है। जब हमारा देश गुलामी की जंजीरों से जकड़ा हुआ, भ्रान्ति की निन्द्रा में सो रहा था, उस समय समाचार पत्रों ने ही राष्ट्रीय चेतना का बिगुल बजाकर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए संघर्ष करने को प्रोत्साहित किया था। वे समय समय पर देशवासियों को देश की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दशाओं से अवगत कराते रहे। वे नाना प्रकार की यातनाओं और कठिनाइयों का सामना करके भी सदा अपने कर्तव्य को निभाते रहे हैं। ये नेताओं के एक छोटे से इशारे पर जनता को स्वतन्त्रता संग्राम के लिये तैयार कर देते हैं।

राष्ट्रीय एकता का साधन—जब हमारे देश में समाचार पत्र नहीं थे तो एक प्रान्त के निवासी दूसरे प्रान्त के निवासियों से आचार व्यवहार में पूर्णतया भिन्न थे। अतः प्रान्तीय सम्बन्ध का अभाव सा था। न काश्मीरी मद्रासियों की दशा जानते थे और न मद्रासी काश्मीरियों की। समाचार पत्रों ने देशवासियों को एक दूसरे की दशा से अच्छी तरह अवगत करा दिया। इस प्रकार उनमें एकता का भाव जागृत हुआ और राष्ट्रीयता की भावना पुष्ट हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सामाजिकता का प्रचारक—समाचार पत्रों के द्वारा मनुष्य अपने भावों को व्यक्त करता है और उस सम्बन्ध में दूसरे के विचारों को जानता है। इस प्रकार विचारों तथा भावों का आदान प्रदान होता है। इसमें बन्धुत्व भावना का विकास होता है। बन्धुत्व-भावना के विकास होने से सामाजिकता का प्रचार होता है।

प्रजातन्त्र का रक्षक—यद्यपि प्रजातन्त्र में सरकार जनता द्वारा ही चुनी जाती है, किन्तु जब सरकार में किसी दल का अत्याधिक बहुमत हो जाता है, तो वह दल तानाशाही का रूप धारण कर लेता है। ऐसे समय में समाचार पत्र सरकार की कटु आलोचना करके उसे ठीक मार्ग पर लाने का प्रयत्न करते हैं। जनता भी अपनी आवाज को समाचार पत्रों द्वारा सरकार तक पहुँचाती है। समाचार पत्रों में 'पाठकों के पत्र' नामक स्तम्भ इसमें विशेष सहायक होते हैं। समाचार पत्रों के द्वारा अपनी आलोचना तथा जनता की अभिरुचि जानकर सरकार ठीक मार्ग पर आ जाती है और प्रजातन्त्रात्मक तरीके से कार्य करने लगती है। इसके विपरीत जब जनता भी सरकार की भावना को उचित तरीके से न समझने के कारण क्षुब्ध हो जाती है, तब समाचार पत्र उसे वास्तविकता का ज्ञान करा कर शान्त करते हैं। सरकार भी समाचार पत्रों के द्वारा अपनी योजनाओं को स्पष्ट रीति से जनता के सम्मुख प्रस्तुत कर उसे वास्तविकता से अवगत करा देती है। इस प्रकार उभय विधि से समाचार पत्र प्रजातन्त्र की रक्षा करते हैं।

चुनाव के दिनों में विभिन्न राजनीतिक दल अपने कार्य-क्रमों तथा उद्देश्यों को समाचार पत्रों के द्वारा जनता तक पहुँचाते हैं। जनता इनके द्वारा विभिन्न दलों की स्थिति तथा कार्य-क्रमों को जानकर अपना मत सुनिश्चित कर अपने लिए सबसे हितकर दल को अपना मत देती है। इस प्रकार मताधिकार का उचित प्रयोग होता है और प्रजातन्त्र की रक्षा होती है।

व्यापार तथा व्यवसाय की उन्नति—समाचार पत्रों द्वारा विज्ञापन कार्य अति सरलता, कम व्यय और व्यापक रूप से हो जाता है। इससे व्यापार की उन्नति होती है। इसके अतिरिक्त समाचार पत्रों में विभिन्न व्यापारिक मण्डियों के भाव, बाजार के रुख, माल की आमद आदि के बारे में सूचना तथा टिप्पणियाँ प्रकाशित होती रहती हैं, जिससे व्यापारी माल का परता मिलाकर माल खरीदते तथा बेचते हैं और लाभ उठाते हैं।

योग्य कर्मचारी तथा योग्य कार्य की प्राप्ति—समाचार पत्रों की 'आवश्यकता है' शीर्षक विज्ञापनों के द्वारा संस्थाओं तथा व्यक्तियों को अपने कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त कर्मचारियों के चुनाव में विशेष सहायता देते हैं। योग्य कर्मचारी भी इन विज्ञापन की सहायता से अपने लिये सर्वाधिक उपयुक्त कार्य को चुनकर तथा उसे प्राप्त कर अपनी जीविका को सुखपूर्वक अर्जन करने लगता है।

मनोरंजन की प्राप्ति—समाचार पत्रों में कविता, कहानी, एकाँकी नाटक, हास्य लेख, वाणी विलास आदि प्रकाशित होते रहते हैं, जिससे पाठकों का पर्याप्त मनोरंजन होता है। विभिन्न प्रकार के व्यंग चित्रों (कार्टूनों) से भी जनता का स्वस्थ मनोरंजन तथा ज्ञान वर्धन होता है।

एक प्रमुख व्यवसाय—अन्य व्यवसायों के समान समाचार पत्रों का प्रकाशन भी एक स्वतन्त्र व्यवसाय है। प्रत्येक देश में कई ऐसी बड़ी बड़ी संस्थाएँ होती हैं जो विभिन्न प्रकार के बहुत से समाचार पत्रों का प्रकाशन करती हैं। इन पत्रों में शिक्षित तथा अशिक्षित दोनों ही प्रकार के सैकड़ों व्यक्ति काम करते हैं और अपनी जीविका का उपार्जन करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपसंहार—उक्त विवरण से स्पष्ट है कि समाचार पत्र एक उपयोगी वस्तु है। इनका राष्ट्र के निर्माण तथा उन्नति में अनुपम तथा महत्वपूर्ण स्थान है, किन्तु खेद है कि कुछ समाचार पत्र राजनीति तथा स्वार्थ के दलदल में अपने कर्तव्य मार्ग से भटक गये हैं। यदि वे निष्पक्ष तथा स्वार्थ भावना से रहित होकर जनता के हित को अपना हित समझ कर कार्य करेंगे, तो इसमें सन्देह नहीं कि हमारा देश शीघ्र ही अपनी सर्वांगीण उन्नति कर सकेगा और हमारा निम्न आदर्श बन जायेगा—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत् ॥

(सब सुखी हों, रोग रहित हों और कल्याण का दर्शन करें तथा किसी को दुख की प्राप्ति न हो।)

वर्षा ऋतु

१—प्रस्तावना। २—वर्षा से पूर्व की दशा। ३—वर्षा का आरम्भ। ४—वर्षा का दृश्य। ५—वर्षा का मनुष्यों पर प्रभाव। ६—लाभ। ७—हानि। ८—उपसंहार।

प्रस्तावना—भारत वर्ष अपनी प्राकृतिक शोभा तथा ऋतुओं के क्रम के लिए प्रसिद्ध है। षड् ऋतुओं की जैसी सुन्दर शोभा दिखाई देती है, वसी अन्यत्र दुर्लभ है। यद्यपि सभी ऋतुओं की अपनी अपनी विशेषताएँ तथा महत्व है किन्तु अपने मनोरम दृश्य तथा विविध उपयोगिताओं के कारण वर्षा का अपना विशेष महत्व है। यदि हम यह कहें कि वर्ष भर की सारी ऋतुएं वर्षा पर ही निर्भर हैं, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। प्राकृतिक दृश्य, मनोरमता, जीवनदायिनी शक्तिमत्ता सभी दृष्टि से वर्षा महत्वपूर्ण है। आइए, हम भी उसके दर्शन करें।

वर्षा से पूर्व की दशा—ज्येष्ठ का महीना है। भयंकर लू चल रही है। शरीर पसीना पसीना हो रहा है। पशु पक्षी सभी पानी के लिए त्राहि-त्राहि कर रहे हैं। कहीं भी चैन नहीं मिलता। लू का चलना भी बन्द हो गया और उमस बढ़ने लगी है।

वर्षा का आरम्भ—ग्रीष्म की भयंकर गरमी के बाद आकाश मण्डल में काले काले बादल दिखलाई देने लगते हैं। प्राणी मात्र में आशा का संचार होने लगता है। वायु के शीतल झकोरों से मन की पीर दूर हो जाती है। सघन घन मालाओं को देखकर कृषक वर्ग प्रफुल्लित हो जाते हैं। पशु पक्षी मनुष्य सभी भावी आनन्द की आशा से उन्मत्त हो उठता है। अषाढ़ के ऐसे ही प्रथम दिन कालिदास ने किसी पर्वत की श्रेणी से लगे हुए मेघ को देखा था और उसके हृदय का यक्ष उनकी वाणी से मुखर हो उठा था—

आषाढ़स्य प्रथम दिवसे मेघमाश्लिष्ट सानुं,
वप्र क्रीड़ा परिणत गज प्रेक्षणीयं ददर्श।

बूंदों के पड़ते ही सारी पृथ्वी, आकाश और अन्तरिक्ष का दृश्य बदल जाता है। जैसे ही पृथ्वी पर बूंदें पड़ती हैं, अद्भुत भीनी भीनी सुगन्ध उठने लगती है। ऐसा मालूम होता है मानो ग्रीष्म से तप्त पृथ्वी वर्षा के ठण्डे जल से सिक्त होकर भीनी सांस ले रही है। वृक्षों में नया जीवन आ जाता है। उनकी उदासी हरियाली में परिणत हो जाती है। पक्षियों का कलरव मन को मोहने लगता है। कृषकगण भावी आशा से मल्हारें गाने लगते हैं। वर्षा का प्रथम प्रभात ही सम्पूर्ण वातावरण को बदल देता है।

वर्षा का दृश्य—मनोरम पृथ्वी के अलौकिक रूप को देखकर बादल भी उससे आकृष्ट होकर पृथ्वी की ओर एक प्रेमी नायक की भाँति झुकते चले आते हैं और रसमय होकर

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उसे सरस बना देते हैं। महाकवि तुलसीदास को उनके नमन में बिद्वानों की नम्रता दीखती है और वे कहते हैं—

बरसहिं जलद भूमि नियराये,
जथा नवहिं बुध विद्या पाये।

काले बादलों के बीच उड़ती हुई बगुलों की पंक्ति आकाश के हृदय पर सुशोभित मोतियों की माला सी लगती है। काले काले घने बादलों के बीच में चमकती हुई बिजली उसके शुभ्र हास्य सी लगती है। आकाश के एक कोने में पड़ा हुआ इन्द्र धनुष अपनी शोभा से किसे आकृष्ट नहीं करता। मेढ़कों की टर्र टर्र, मोरों की केयों केयों हमारे मन को आल्हादित करती है। वीर बहूटियों की लाली और जुगुनुओं की चमक अपना अद्भुत सौन्दर्य प्रकट करती है। निरन्तर बादलों के घिरे रहने से सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र कुछ भी नहीं दिखाई देते। महाकवि सेनापति ने वर्षा के इसी रूप को देखकर कहा था—

गगन अगन घनाघन तैं सघन तम,
सेनापति नेक हूँ न नैंन मटकत हैं।
दीप की दमक जींगदान की झमक छाड़ि,
चपला चमक और सौं न अटकत हैं।।
रवि गयौ दबि मानों ससि सोऊ धसि गयो,
तारे तोरि डोरे से न कहूँ फटकत हैं।।
मानों महा तिमिर तैं भूलि परी बाट तातैं,
रवि ससि तारे कहूँ भूले भटकत हैं।।

वर्षा का मनुष्य पर प्रभाव—पानी को बरसता देखकर बालक तो कपड़े उतार कर पानी में इधर उधर दौड़ते दिखाई देते हैं। कवि-गण भी वर्षा के मनोरम रूप को देखकर अपनी भाव सरिता को रोक नहीं पाते और वह वाणी के प्रभाव की अजस्त्र धारा के रूप में वह निकलती है।

वर्षा के आरम्भ होने पर उससे बचने के लिए मनुष्य छातों तथा बरसातियों का प्रबन्ध करने लगते हैं। जीर्ण शीर्ण गृहों के स्वामियों के मन में घनघोर बादलों को देखकर भय का संचार होने लगता है।

किसानों के हृदय में नयी आशा का संचार होने लगता है। उनके जीवन में गति आ जाती है और वे ईश्वर का नाम लेकर अपने कार्य में तत्परता से लग जाते हैं। उनकी स्त्रियाँ भी प्रसन्न हो झूले के गीत और मल्हारों को गाती हुई बागों में झूला-झूलती हुई दिखलाई पड़ती हैं।

लाभ—वर्षा के आगमन से हमारे शरीर और मन तो प्रसन्न होते ही हैं, इसके अतिरिक्त वर्षा से अन्य व्यवहारिक लाभ भी है। कृषि का आधार तो वर्षा ही है। वर्षा के अभाव में कृषि नहीं हो पाती, कृषि के अभाव में अन्न कहाँ, और अन्नाभाव के होने पर जीवन कैसा! वर्षा से घास आदि चारे की उत्पत्ति होती है और उससे उपयोगी पशुओं का पालन होता है। नदियों में जल के आ जाने से सिंचाई के लिए जल की प्राप्ति सम्भव हो जाती है और विद्युत शक्ति का उत्पादन भी सरलता से बढ़ जाता है। नदियों में जल की वृद्धि से जलीय यातायात में सुविधा हो जाती है। वर्षा की बूँदों से सूखे पेड़ों में भी नव-जीवन आ जाता है और वे अपनी पूरी गति से बढ़ने लगते हैं। इससे ईंधन और चारे की सुविधा रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हानि—यदि वर्षा का उक्त रूप इतना मनोरम और लाभदायक है तो इसका दूसरा रूप अति भयानक और संहारक भी है। अति वृष्टि होने से नदी नाले तालाब सभी अपनी सीमाओं को तोड़ देते हैं। चारों ओर जल ही जल दिखाई देता है, बड़े बड़े पेड़ बहे चले जाते हैं। खड़ी हुई फसलें बरबाद हो जाती हैं। सैंकड़ों गाँव बाढ़ की लपेट में आकर अपना अस्तित्व खो बैठते हैं। सड़कें, रेल लाइन, पुल सभी इससे क्षति ग्रस्त हो जाते हैं। मनुष्य या पशु जो भी इसकी चपेट में आ जाता है, उसका भगवान ही रक्षक होता है। बहुत कहने से क्या, बाढ़ से होने वाली धन जन की अपार क्षति हमारे हृदय को दहला देती है। इस ऋतु में मच्छर, मक्खी, डाँस आदि की असाधारण वृद्धि हो जाती है। जिससे हैजा, मलेरिया आदि अनेक रोग फैलने लगते हैं।

उपसंहार—इतना सब कुछ होने पर भी वर्षा हमारे शरीर की पोषक है, मन की आह्लादक है और जीवन का प्राण है। हमें ईश्वर को इसके लिए धन्यवाद देना चाहिए।

बसन्त ऋतु

१—प्रस्तावना तथा समय। २—बसन्त का आगमन। ३—प्राकृतिक शोभा। ४—मनुष्यों पर प्रभाव। ५—महत्व (क) कर्म-मार्ग का प्रेरक (ख) स्वास्थ्य वर्द्धक। (ग) काव्य भावना का प्रेरक। ६—उपसंहार।

ऋतूनां कुसुमाकरः

प्रस्तावना का समय—गीता में भगवत् वैभव के प्रदर्शनों में जिन प्रतीकों (चिह्न) का संकेत है, उनमें कुसुमाकर (बसन्त) भी हैं। इस संकेत का मुख्यार्थ यही है कि जिस प्रकार ऋतुओं में बसन्त ज्येष्ठ श्रेष्ठ है, उसी प्रकार निखिल जगत् में भगवान प्रथम-उत्तम है। इस वर्णन से बसन्त का महत्व स्पष्ट है। हमारे देश में इसका आरम्भ फाल्गुन से होने लगता है, चैत्र से यह अपने पूर्ण उत्कर्षक पर पहुँच जाता है और वैसाख में इसका अन्त हो जाता है।

बसन्त का आगमन—शीत अपनी अन्तिम साँस ले रहा है, शिशिर का अन्त हो चुका है, ऋतुराज बसन्त अपनी सेना लेकर आ पहुँचा है। उसके स्वागत में कलियाँ अपने अवगुंठन को खोलकर बाहर झाँकने लगी हैं। भौंरे और कोयल उसका स्वागत गान कर रही हैं, पेड़ पौधे हर्ष उन्मत्त होकर अपने मस्तकों को हिलाकर उसे नमस्कार करके पुष्प अर्पण कर रहे हैं। सेनापति ने बसन्त के इसी ऋतुराजत्व को प्रकट करते हुए कहा—

बरन बरन तरु फूले, उपवन वन,
सोई चतुरंग सङ्ग दल लहियत है।
बन्दी जिमि बोलत बिरद कीर कोकिल है,
गुंजत मधुप गान गुन गहियत है॥
आवै आसपास पुहुपन की सुवास सोई,
सौंधे के सुगन्ध माँझ सने रहियत है।
शोभा कौं समाज सेनापति मुख साज आज,
आवत बसन्त ऋतुराज कहियत है।

प्राकृतिक शोभा—बसन्त से मिलकर प्रकृति उन्मत्त हो रही है। उसने अपना सुन्दरतम रूप संवारा है। वह सरसों के फलों की पीली साड़ी पहने है और फ्लास के लाल पुष्पों की बिन्दी लगाकर अपने प्रियतम की प्रतीक्षा में संलग्न है। गुलाब की मदभरी प्याली को पीकर भौंरे मस्त होकर गुनगुना रहे हैं, मलयज पवन अपनी सुगन्ध दोनों हाथों से लुटा रहा है। वृक्षों में निकलती हुई कोमल कोपलें सौंदर्य की वर्षा कर रही है। चन्द्रमा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की दूधिया चाँदनी सारे संसार को दुग्धमय सी बना रही है। आकाश निर्मल है और सारा वातावरण आनन्द विभोर है। सब कुछ सुहावना ही सुहावना है। महाकवि पद्माकर ने बसन्त के इसी सौन्दर्य के वर्णन में कहा था—

कूलन में, केलिन में, कछारन में, कुजन में,
क्यारिन में कलिन कालीन किलकन्त है।
कहे पद्माकर पराग हूँ में पौन हूँ में,
पातन में, पिकन पलासन पगन्त है।
द्वार में दिसान में, दुनी में देस, देसन में,
देखो द्वीप द्वीपन में दीपत दिगन्त है।
बीथिन में ब्रज में नवेलिन में वेलिन में,
बनन में बागन में बगर्‌यो बसन्त है।

मनुष्यों पर प्रभाव—प्रकृति के घनिष्ठ सम्पर्क में आने वाला कृषक वर्ग इस बसन्त ऋतु में ही गेहूँ, जौ की स्वर्णिम राशि को 'नव-धान्य' के रूप में उपलब्ध कर जीविका के प्रश्न से मुक्त हो जाता है फिर क्या है, कोकिल की कूक के साथ कृषक-कामिनी का कमनीय कण्ठ होली, धमार, रसिया के रूप में इस ऋतु के अनुकूल सुरीला संगीत गा गाकर दिग-दिगान्तों को अभिभूत कर लेता है। 'होली' के अवसर पर इस ऋतु में कृषक का आनन्द फाग के राग में और बरसाने की राधा और नन्द गाँव के कृष्ण की स्तुति में अभिव्यक्त हो उठता है—'बरसो बरसाने की गोरी घटा, नन्द गाँव के साँवरे ऊपर री।'

महत्व (कर्म मार्ग का प्रेरक)—बसन्त आनन्द और सौन्दर्य का प्रतीक है। इस ऋतु में न अधिक शरदी होती है और न गरमी, अतः मानव मात्र स्वभाव ही से आनन्द मग्न होकर सौन्दर्य की ओर आकृष्ट हो जाता है। उसके हृदय का अवसाद दूर हो जाता है। इससे उसकी जीवन शक्ति बढ़ती है और वह दूने उत्साह से अपने कर्म मार्ग पर चल पड़ता है।

स्वास्थ्य वर्द्धक—इस ऋतु में बात और पित्त का प्रकोप शान्त हो जाता है। शरीर में नवीन रुधिर का संचार होने लगता है। प्राकृतिक दृश्यों का मनोरमता से चित्त प्रसन्न रहता है, अतः स्वास्थ्य की दृष्टि से यह ऋतु अत्युत्तम है। इस ऋतु में वनस्पतियाँ फूलने लगती हैं, अतः वायु में जीवन दायिनी शक्ति बढ़ जाती है। इसीलिए आयुर्वेद शास्त्र में कहा गया है—'बसन्त भ्रमण-पथ्यम्' बसन्त में भ्रमण पथ्य है।

काव्य भावना का प्रेरक—कवि स्वभाव से ही सौन्दर्य प्रेमी होता है और बसन्त होता है सौन्दर्य तथा सुषमा का मूर्त रूप। फिर भला कवि की भावनाएँ ऐसे सुअवसर पर कैसे मौन रह सकती हैं। ऋतुराज के वैभव को देखकर कवियों की टोली आनन्द विभोर हो उठती है और वह उसे अलङ्कारों से विभूषित करने लगती है। हिन्दी ही नहीं संस्कृत, बंगला, मराठी, तामिल, तेलगू आदि सभी भाषाओं के कवियों ने बसन्त की पूजा में अपने काव्य पुष्प चढ़ाये हैं। कालिदास, माघ, विद्यापति, सेनापति, बिहारी, देव मतिराम, पद्माकर जैसे प्राचीन कवियों से लेकर रत्नाकर, प्रसाद, पन्त आदि नवीन कवियों तक की वाणी बसन्त के स्तवन में मुखरित हो उठी है।

उपसंहार—सृष्टि विकास, धन धान्य विकास, भाव विकास और स्वास्थ्य का सार्वजनिक विकास इस ऋतु में ही होता है। अतएव इसे 'ऋतु राज' अर्थात् ऋतुओं का राजा कहा गया है और वास्तव में यह उपयुक्त ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किसी मनोरंजक यात्रा का वर्णन (पुष्कर यात्रा)

रेल यात्रा तथा मोटर यात्रा

१—प्रस्तावना २—रेल यात्रा का आरम्भ ३—रेल यात्रा के मार्ग का वर्णन। ४—प्रातःकाल का दृश्य ५—मोटर यात्रा। ६—पुष्कर झील का दृश्य तथा पुष्कर निवास । ७—लौटना तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—मेरी त्रैमासिक परीक्षा हो रही थी। परीक्षा की तैयारी करते करते और प्रश्नों का उत्तर लिखते लिखते जी ऊब गया था। बस यही सोचता था कि कब परीक्षा समाप्त हो, दशहरा की छुट्टियाँ हों और मैं अपने गाँव जाकर अपने बाल साथियों से मिलूँ। परीक्षा समाप्ति के दिन स्काउट मास्टर साहब आये और उन्होंने घोषणा की कि परीक्षा समाप्ति होने के दो दिन बाद अर्थात् १ अक्टूबर को हमारे स्काउट का दल पुष्कर जी की यात्रा पर जायेगा और वहाँ चार दिन का कैम्प होगा। अतः जो स्काउट वहाँ जाना चाहें, वे आज अपना नाम लिखा दें और आवश्यक सामान लेकर पहली अक्टूबर को सायं-काल ६ बजे आगरा फोर्ट स्टेशन पर पहुंच जायें। घोषणा सुनकर मेरा चित्त प्रसन्न हो गया और जैसे ही परीक्षा समाप्ति हुई, मैंने अपना नाम मास्टर साहब को लिखा दिया।

परीक्षा समाप्त होने पर पिताजी से जाने की आज्ञा तथा लाठी, स्काउट की बर्दी, बिस्तर आदि सामान लेकर पहली अक्टूबर को सायं ६ बजे आगरा फोर्ट स्टेशन पर पहुँच गया। मेरे अन्य साथी तथा मास्टर साहब वहाँ पहले से ही मौजूद थे। हम सब मिलकर बहुत ही प्रसन्न हुए।

यात्रा का आरम्भ—मास्टर साहब ने कन्सेशन टिकट खरीद लिये थे। हम सब ४० स्काउट थे। सभी अपनी बर्दी पहने हुए थे और सबके हाथ में एक एक लाठी थी। मास्टर साहब की आज्ञा पाते ही हम सब स्काउट एक पंक्ति में मार्च करते हुये चल दिये। एक अद्भुत दृश्य था, प्लेटफार्म के सारे व्यक्ति हमारी ओर आकर्षित होकर देख रहे थे। यद्यपि प्लेटफार्म पर काफी भीड़ थी किन्तु हमारे प्रभाव से हमें मार्ग मिलने में कोई कठिनाई नहीं हुई। गाड़ी प्लेट फार्म पर खड़ी थी, हमारे लिए एक छोटा सा डिब्बा पहले ही रिजर्व था। हम सब लोग जाकर उसमें आनन्द पूर्वक बैठ गये। सबने अपना अपना सामान यथा स्थान रख दिया। बहुतों ने अपने बिस्तर भी खोलकर बिछा लिये। गाड़ी चलने में अभी आधे घण्टे की देर थी, अतः हम लोग इच्छानुसार फल, पेठा, दालमोठ, आदि लेकर खाने लगे। गार्ड ने सीटी दी और गाड़ी चल दी।

रेल यात्रा के मार्ग का वर्णन—कुछ देर तक विद्यार्थियों में गप सप होती रही। कोई परीक्षा की बातें करता था तो कोई हाल में ही हुई घनघोर वर्षा की कीर्ति गाता था। मैंने कहा कि इस प्रकार समय बिताने में कोई विशेष आनन्द नहीं आ रहा है, अतः सब लोग अपनी-अपनी रुचि की मनोरंजक कहानियाँ सुनायें। सब इस प्रस्ताव को सुनकर प्रसन्न हो गए और यह शीघ्र ही स्वीकृत हो गया। 'कहै सो घी को जाय' की कहावत के अनुसार सबसे पहले मेरी बारी आई। मैं इसके लिए पहले से ही तैयार था। मैंने श्री भारतेन्दु के 'अन्धेर नगरी' नामक प्रहसन की कहानी बड़े ही मनोरंजक ढंग से सुनाई। सब सुनकर हँसी में लोट पोट हो गये। इसके बाद अन्य साथियों की बारी थी। किसी ने अकबर और बीरबल के लतीफे सुनाये, किसी ने सिंहासन बत्तीसी, वेताल पच्चीसी, और पंचतन्त्र की कहानियाँ सुनाईं। मास्टर साहब ने राजा भोज और कालिदास की कहानियों को इतने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सुन्दर ढंग से कहा कि हम सब मुग्ध हो गये। इसके बाद कविता पाठ हुआ। हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू की सुन्दर और सरल कविताओं का लय और स्वर के साथ उच्चारण होता रहा। मास्टर साहब ने श्री रत्नाकर के उद्धव शतक के कुछ कवित्तों का सव्याख्या पाठ किया। हम लोग रत्नाकर जी सूक्ष्म-दृष्टि और मास्टर साहब की विद्वता से अत्यन्त प्रभावित हुए। इतने में बाँदीकुई जंक्शन आ गया और हमारी गाड़ी खड़ी हो गई। हम वहाँ उतर पड़े। किसी ने चाय पीयी, किसी ने चाट खाई और किसी ने मीठा। स्टेशन पर काफी भीड़ थी। इतने में गार्ड ने सीटी बजाई और हम लोग अपने अपने स्थानों पर आ गये। लगभग बारह बज रहे थे, अतः सब लोगों ने सोने की इच्छा प्रकट की। डिब्बा नये प्रकार का बना हुआ था, अतः उसमें सोने के लिए पर्याप्त स्थान मिल गया। हम लोगों ने विस्तर खोले और लेट गये। मास्टर साहब ने सुरक्षा की दृष्टि से जागना ही उचित समझा और वे रात भर जागते ही रहे। थोड़ी ही देर में हम निद्रा देवी की सुखद गोद में विश्राम कर रहे थे। हम रात भर सोते रहे।

प्रातः काल का दृश्य—प्रातः के पाँच बजे के लगभग मास्टर साहब ने हमें जगाया। हम लोग उठकर बैठ गये। इतने में ही हमारी गाड़ी 'फुलेरा' जंक्शन पर जा कर खड़ी हो गई। यहाँ गाड़ी काफी देर रुकती थी, अतः हम लोग यहाँ पर शौच, स्नान, प्रातराश से निवृत हो गए। गाड़ी फुलैरा से चल पड़ी। इस समय भगवान भास्कर निकल आये थे और अपनी सुनहरी किरणों से संसार को स्वर्णमय बना रहे थे। पेड़ों पर चिड़ियाँ चहचहा रही थीं, पशु आस पास के मैदानों में चर रहे थे। रेलवे लाइन से कुछ दूर पर बड़े बड़े टीले से दिखलाई दे रहे थे। मास्टर साहब ने हम बताया कि यह लाल पत्थर के पहाड़ हैं। अजमेर स्टेशन आने वाला था, अतः हमें लोग अपना सामान बाँधने लगे। थोड़ी देर में गाड़ी अजमेर पर रुक गई। हम लोग डिब्बे से नीचे उतरे। हम बहुत प्रसन्न थे और मार्ग की थकावट हमें बिल्कुल भी नहीं व्यापी थी। अजमेर का स्टेशन विशाल था और वहाँ पर काफी भीड़ थी। प्लेटफार्म के पुल को पार कर हम बाहर पहुंचे यहाँ से हमें मोटर के द्वारा पुष्कर जाना पड़ा था। मोटर स्टेशन पर ही खड़ी थी। बहुत से आदमी उसका टिकट ले रहे थे किन्तु हमारा टिकट पुष्कर तक का था अतः हमें इसकी कोई आवश्यकता न पड़ी। यहाँ पुष्कर जी के पंडे यात्रियों को घेर रहे थे किन्तु हमारी वेशभूषा को देखकर कोई भी हमारे पास नहीं आया। इतने में मास्टर साहब ने एक बड़ी सी ४० सीट की बस मँगाई। हमने अपना सामान उस पर लाद दिया और उसमें बैठ गये।

मोटर यात्रा—हमने पुष्कर जी की जय बोली और मोटर चल पड़ी। अजमेर नगर की भीड़ भाड़ को चीरती हुई और वहाँ की सुन्दर चौड़ी सड़कों पर दौड़ती हुई मोटर चली जा रही थी। थोड़ी ही देर में मोटर चढ़ाई पर चढ़ने लगी। यहाँ सड़क के दोनों ओर हरे हरे खेत थे, जो बड़े ही भले मालूम पड़ रहे थे। किन्तु थोड़ी ही देर में हमारे चारों ओर पहाड़ ही पहाड़ थे। ये अधिक ऊँचे न थे। इनको काटकर ही सड़क बनाई गई थी। जहाँ तहाँ खरगोश, हिरन आदि घूम रहे थे। वे हमारी मोटर की आवाज सुनकर भाग जाते थे। ज्यों ज्यों हमारी मोटर आगे बढ़ती जाती थी, चढ़ाई सीधा होती जाती थी। हम मोटर ड्राइवर की कुशलता पर मुग्ध थे, कि वह कितनी कुशलता से मोटर को ले जाता है और छोटी से छोटी मोड़ों पर भी बिना किसी हिचकिचाहट के उसी गति से मोटर को दौड़ाये लिये जाता है। सड़क बहुत टेढ़ी-मेढ़ी थी जिसके कारण आगे का मार्ग अवरुद्धसा जान पड़ता था। सड़क पहाड़ की परिक्रमा करती हुई आई थी। एक स्थान पर हमने देखा कि हम एक पहाड़ के ऊपर के हिस्से पर हैं और नीचे उसी पहाड़ को सड़क दो बार लपेटे हुए है। नीचे की सड़क पर दौड़ती हुई एक मोटर बहुत छोटी और रेंगती हुई सी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लगती थी। सारा वातावरण बड़ा ही सुहावना था और प्राकृतिक शोभा निरन्तर बढ़ती जा रही थी। वहाँ ऊँचे वृक्ष भी थे जिन पर बड़ी बड़ी पूंछ वाले काले मुँह के लंगूर उछल रहे थे। बात की बात में मोटर पुष्करजी के अड्डे पर खड़ी हो गई। हम लोग वहाँ उतरे और पास की एक धर्मशाला में अपना सारा सामान रख दिया। थोड़ी देर विश्राम करने के उपरान्त हम स्नान करने के लिए चल दिए।

पुष्कर झील तथा पुष्कर निवास—पुष्कर जी में एक बहुत बड़ी झील है, जिसे पुष्कर कहते हैं और इसी नाम पर इस नगर का नाम भी पुष्कर पड़ा है। हम झील के किनारे पर पहुँच गये। उसकी प्राकृतिक शोभा देखकर मुग्ध हो गये। जल का इतना विशाल भंडार हमने पहले कभी नहीं देखा था। हम यहाँ पानी में बहुत देर तक तैरते रहे। स्नान करने के बाद ब्रह्माजी तथा रङ्गजी के मन्दिरों में गये। इसके बाद धर्मशाला लौट आये। अपने हाथ से भोजन बनाया। भोजन के उपरान्त भजन किया। शाम को इधर उधर घूमे। रात्रि को कम्पफायर हुआ। इसके बाद सो गये। पुष्करजी में विविध कार्यक्रमों में हमारे चार दिन बीत गये। हम सब बहुत प्रसन्न थे और यहाँ बहुत दिन तक रुकना चाहते थे किन्तु मास्टर साहब की आज्ञा का पालन कर हम ६ अक्टूबर को मोटर में बैठकर अजमेर आ गये।

लौटना तथा उपसंहार—अजमेर में हमने सोनी जी का प्रसिद्ध जैनियों का मन्दिर देखा। ख्वाजा साहब की दरगाह पर गये, 'लोको मिल' में जाकर रेल इंजन बनता देखकर अति प्रसन्न हुए। अजमेर से गाड़ी शाम को चलती थी, अतः हम सब निश्चित समय से एक घन्टा पूर्व स्टेशन पर आ गये। गाड़ी में बैठे और पहले के समान ही मार्ग के आनन्दों का अनुभव करते हुए आगरा फोर्ट स्टेशन पर आ गये और वहाँ से अपने घर को चल दिये।

यह यात्रा मेरे जीवन की सबसे अधिक मनोरंजक यात्रा थी और उसे मैं आज तक भी नहीं भूल पाया हूँ। मास्टर साहब की दूरदर्शिता, सहृदयता तथा स्नेह-व्यवहार और साथियों की आत्मीयता मुझे बार बार याद आती है। मैं सोचता हूँ कि क्या जीवन में ऐसा सुअवसर फिर कभी मिल सकेगा।

देश प्रेम

१—प्रस्तावना। २—देश प्रेम की स्वाभाविकता। ३—उदाहरण। ४—देश सेवा के विविध क्षेत्र (क) राजनीति द्वारा देश सेवा (ख) धन द्वारा देश सेवा। (ग) कला द्वारा देश सेवा (घ) सामाजिक दशा के सुधार द्वारा देश सेवा। ५—अन्य मार्गों द्वारा देश सेवा। ६—उपसंहार।

प्रस्तावना—'जननी जन्म-भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

उपर्युक्त सूक्ति कितनी सारगर्भित एवं सोलहों आना सत्य है। आज अन्तर्राष्ट्रीयता के युग में भी हम राष्ट्र प्रेम को महत्व प्रदान कर रहे हैं। यही इसका प्रमाण है कि राष्ट्र प्रेम का स्थान अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम से ऊँचा है।

देश प्रेम की स्वाभाविकता—कुछ अपवादों को छोड़कर प्रत्येक मनुष्य के हृदय में अपनी जननी और जन्म भूमि के प्रति स्वाभाविक प्रेम होता है। वह बिना सोचे विचारे स्वभाव से ही उनकी ओर आकृष्ट रहता है, और जननी तथा जन्म-भूमि का निश्छल निःस्वार्थ प्रेम भी उस पर क्षमा, दया और करुणा के दैवी-वरदान की वृष्टि सा करता है।

यह ठीक है कि भारत की उर्वर बसुन्धरा में अखिल ऋतुएँ निखिल प्रकार के प्राण-पोषक पदार्थ लेकर आती हैं। वह भौगोलिक और ऐतिहासिक रूप में भी यहाँ के निवासियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
के लिये निर्माता भूमि रही है; परन्तु विश्व के मानचित्र में ऐसे भी देश हैं जिन्हें उपर्युक्त प्राकृतिक वरदान उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी उन देशों के लिये उनके निवासियों का अतुल अगाध प्रेम है—

विषुवत् रेखा का वासी जो, जीता है नित हाँफ-हाँफ कर।
रखता है अनुराग अलौकिक, वह भी अपनी मातृ-भूमि पर।
हिम वासी जो हिम में तम में, जो लेता है काँप काँप कर।
वह भी अपनी मातृ-भूमि पर, कर देता है प्राण निछावर।

देश प्रेम से देश की उन्नति—देश एक ऐसा पवित्र और सात्विक भाव है जो मानव-मात्र में अपने आपको बलिदान करने का उत्साह भर देता है। देश से प्रेम करने वाला पुरुष देश की उन्नति में अपनी उन्नति और देश की अवनति में अपनी अवनति समझता है। वह सदा ऐसे कार्य करता है जिससे देश की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति हो। सच्चा देश प्रेमी अपना सब कुछ न्यौछावर करके भी देश की उन्नति चाहता है। उसका सच्चा प्रेम उसमें आत्म बलिदान की भावना को जाग्रत करता है। इसीलिए श्री रामनरेश त्रिपाठी ने सच्चे प्रेम की परिभाषा का देश प्रेम के साथ एकाकार करते हुए कहा है—

सच्चा प्रेम वही है, जिसकी तृप्ति आत्म-बलि पर हो निर्भर।
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है, करो प्रेम पर प्राण निछावर।।
देश प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है, अमल असीम त्याग से विलसित।
आत्मा के विकास से जिसमें मानवता होती है विकसित।।

उदाहरण—प्रत्येक देश का इतिहास ऐसे स्वनाम धन्य देश प्रमियों के बलिदानों से भरा पड़ा है। भारत के मध्य कालीन इतिहास के राणा प्रताप और शिवाजी की राष्ट्रभक्ति किसे आकृष्ट नहीं करती ? यूरोप में आयरलैंड और इटली के स्वाधीनता सूर्य की परतन्त्रता के राहु ग्रास से रक्षा करने वाले मैंबिस्वन, मेजिनी, गैरीवाल्डी के आदर्श नाम अखिल विश्व को राष्ट्र प्रेम का पाठ पढ़ाते रहते हैं।

काकोरी षड़यन्त्र, देहली बम केस, मेरठ षड़यन्त्र जैसे शुद्ध राष्ट्रीय यज्ञअनुष्ठानों में आत्मार्पण करने वाले पवित्र कीर्ति रामबिहारी बोस, सुभाषचन्द्र बोस, चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह और उनके साथी राजगुरु इत्यादि के अमर बलिदान इतने असंख्य हैं जितने कि नभ में तारे भी नहीं हैं।

बीसवीं सदी में राष्ट्रपिता बापू, पं० जवाहरलाल नेहरू और देश रत्न राजेन्द्र प्रसाद के बलिदान विश्व के महत्तम बलिदान रहे हैं। वे देश के लिए जिए और देश के लिए मरे।

देश प्रेम के विविध क्षेत्र—हम जिस देश में उत्पन्न हुये हैं वहाँ की जलवायु और अन्न से हमारा शरीर पला है उस देश की सब प्रकार से सेवा करना हमारा पुनीत कर्तव्य है। जो देश राजनीति, धन, कला सामाजिक दशा में श्रेष्ठ होता है, वही देश उन्नत तथा समृद्ध कहा जाता है। अतः देश की वास्तविक उन्नति के लिए हमें सब प्रकार से हर क्षेत्र में देश की सेवा करनी चाहिए।

राजनीतिक द्वारा देश सेवा—आज प्रजातन्त्र का बोल बाला है। प्रजातन्त्र में वास्तविक शक्ति जनता के हाथों में होती है। जनता अपने प्रतिनिधियों द्वारा अपने ऊपर शासन करती है। ऐसे समय में ऐसे पुरुषों की परम आवश्यकता होती है जो राजनीति में सक्रिय भाग लेकर साधारण जनता को मार्ग दिखायें, उन्हें मताधिकार का उचित और सही

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
प्रयोग करना सिखाये। यदि वे आवश्यक समझें, तो जनता की प्रतिनिधि के रूप में चुनकर देश के शासन में सत्य, न्याय तथा ईमानदारी से भाग लें और प्रलोभनों में न फँसे। हमारा भी कर्तव्य है कि हम भी अपने मताधिकार का उचित प्रयोग करें और जाति सम्प्रदाय तथा प्रान्तीयता के चंगुल से निकल कर उनको ही अपना प्रतिनिधि चुनें जो शासन में पहुँचकर देश की सब प्रकार से सेवा कर सकें। इस प्रकार योग्य व्यक्तियों को शासन में भाग लेकर तथा मताधिकार का उचित प्रयोग करके राजनीति के द्वारा देश की सेवा करनी चाहिए।

धन द्वारा देश सेवा—धन सब प्रकार के कार्यों का मूल है, अतः हम सभी को यथा-शक्ति धन के द्वारा देश-सेवा करनी चाहिए। सरकार द्वारा प्रचारित विभिन्न बचत योज-नाओं में सहयोग देकर शिक्षा संस्थाओं, अनाथालयों, विधवा आश्रम, अस्पतालों आदि को दान देकर हम धन द्वारा देश सेवा कर सकते हैं। धन के द्वारा उत्पादक फैक्टरियों तथा मिलों का निर्माण भी देश सेवा है।

कला द्वारा देश सेवा—कलाकार की कला—कृतियों में अद्भुत शक्ति होती है। लेखक और कवि अपनी रचनाओं द्वारा मनुष्यों के हृदय में देश प्रेम का जो पुनीत भाव जगा देते हैं, वह बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों और वक्ताओं द्वारा बड़े परिश्रम से दिये गये भाषणों से भी नहीं होता। भूषण ने अपनी कविता के द्वारा शिवाजी के हृदय में वीरता का भाव जगाया था। मार्ग च्युत राणाप्रताप को पृथ्वीराज के एक पत्र ने अपनी मातृ भूमि पर मरने के लिये प्रेरित किया था। हमारे गत स्वतन्त्रता संग्राम में हमारे कवियों ने भी पूरा सहयोग दिया था। साहित्यकार के अतिरिक्त अन्य कलाकार भी सुन्दर कला-कृतियों का निर्माण कर सकते हैं। वे कलाकृतियाँ विदेशों में जाकर देश के लिये विदेशी मुद्रा का अर्जन करती हैं जिससे देश का विकास होता है।

सामाजिक दशा के सुधार द्वारा देश सेवा—समाज में अशिक्षा, मद्यपान, बाल-विवाह, वृद्ध विवाह, छुआ-छूत, व्यभिचार आदि अनेक बुराइयाँ फैली हुई हैं। इनके कारण देश की अवनति हो रही है। इनको दूर कर हम देश की उन्नति कर सकते हैं।

अन्य मार्गों द्वारा देश सेवा—इनके अतिरिक्त स्वस्थ पुरुष सेवा तथा पुलिस में भर्ती होकर, अध्यापक, डाक्टर आदि अपने कर्त्तव्य का निःस्वार्थ भाव से पालन करके, मजदूर मिलों में अधिक काम करके, सरकारी कर्मचारी अपने कार्य को लगन के साथ करके देश सेवा कर सकते हैं।

उपसंहार—इस प्रकार देश के प्रति प्रत्येक पुरुष का पुनीत कर्त्तव्य है कि वह अपने कार्य को अच्छी प्रकार से करके देश सेवा करें। जो मनुष्य अपने कर्त्तव्यों का पालन न करके, देश सेवा में योग नहीं देता, वह नर नहीं है नर पशु है—

जिसको न निज गौरव तथा, निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं नर पशु निरा, है और मृतक समान है॥

ग्राम्य जीवन और उनमें सुधार की आवश्यकता (ग्राम सुधार)

१—ग्राम्य जीवन की दशा। २—ग्राम्य जीवन में सुधार की आवश्यकता। ३—सुधार के उपाय (सर्वोदय की स्थापना)। ४—आर्थिक सुधार। (क) कृषि सुधार। (ख) कुटीर उद्योगों का विकास। ५—सामाजिक सुधार। ६—सांस्कृतिक सुधार। (क) शिक्षा का प्रचार। (ख) मनोरंजन का प्रबन्ध (ग) स्वास्थ्य रक्षा का प्रबन्ध। ७—उपसंहार।

ग्राम्य जीवन की दशा—

अहा! ग्राम्य-जीवन भी क्या है, क्यों न इसे सबका मन चाहे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपर्युक्त कविता की पंक्तियों में ग्राम्य जीवन की सुन्दरता का चित्राङ्कन किया गया है। प्राकृतिक दृश्यों की सुषमा, स्वास्थ्य-प्रद वातावरण, सात्विक-प्रेम, त्यागमय जीवन और निष्कपट व्यवहार की दृष्टि से ग्राम जीवन एक आदर्श जीवन है। पर क्या कारण है कि हमारा मन ग्राम जीवन को अङ्गीकार करने को ललक नहीं उठता ?

इसमें दोष हमारा ही है। अखिल जगत् का प्राणाधार अन्न कहाँ पैदा होता है ? ग्राम में। इस अन्न का उत्पादक भू-पुरुष किसान कहाँ रहता है ? उस ग्राम में। तब क्यों न कहा जाय कि इसमें दोष हमारी दृष्टि का है कि हम उस किसान की महिमा-महत्ता का मूल्याङ्कन राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त की निम्न पंक्तियों में नहीं करते—

बरसा रहा रवि अनल, भूतल तवा-सा जल रहा।
है चल रहा सन सन पवन, तन से पसीना ढल रहा।।
देखो कृषक शोणित सुखाकर हल तथापि चला रहे।
किस लोभ से इस आँच में वे निज शरीर जला रहे ?

सच है, आज गाँव और किसानों की दशा हीन से हीनतर हो गई है। उन्हें न भर पेट भोजन मिलता है और न शरीर ढकने को वस्त्र, सामाजिक कुरीतियों, कलह, शोषण तथा अत्याचारों ने आज उन्हें खोखला बना दिया है। यही कारण है कि 'पन्तजी' को आधुनिक ग्राम 'मानव-लोक' से भी नहीं लगते—

यह तो मानव लोक नहीं रे, यह है नरक अपरिचित।
यह भारत की ग्राम सभ्यता, संस्कृति से निर्वासित।।

× × × ×

अकथनीय क्षुद्रता विवशता भरी यहां के जग में।
गृह-गृह में है कलह, खेत में कलह, कलह है मग में।।

यद्यपि यहाँ प्रकृति का कण-कण आनन्द मग्न रहता है किन्तु यहाँ के निवासी तो जीते हुए मुर्दे के समान हैं—

प्रकृति धाम यह तृण-तृण कण-कण जहाँ प्रफुल्लित जीवित।
यहाँ अकेला मानव ही रे चिर—विषण्ण जीवन्मृत।।

ग्राम्य जीवन में सुधार की आवश्यकता—भारत ग्रामों का देश है। उसकी आबादी का अधिकतम भाग ग्रामों में ही रहता है। अतः जब तक ग्रामों की दशा का सुधार न होगा, देश की उन्नति सम्भव नहीं। यह ठीक है कि १५ अगस्त, १९४७ से पहले पराधीन भारत में ग्राम और उसका किसान उपेक्षा के विषय बने रह सकते थे। वे जमींदारी प्रथा के जुल्म सहन कर सकते थे। पर बापू के स्वाधीन भारत में ग्राम और वहाँ के किसान क्यों पिछड़े पडे रहे।

आज हम सबको ग्रामों की समस्या का समाधान करना ही होगा।

सुधार के उपाय—अब प्रश्न यह उठता है कि ग्राम और उसके निवासी किसान की दुरव्यवस्था का निराकरण कैसे किया जाय ? गाँव की आर्थिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक उन्नति कैसे की जाय ? इसी प्रकार के अन्य प्रश्नों के उत्तर में ग्रामोन्नति का इतिहास छिपा है।

सर्वोदय की भावना का प्रचार—ग्रामों की दीन-दशा देखकर पूज्य बापूजी को भी दुःख हुआ था और उन्होंने इन्हें सुधारने के लिए सर्वोदय संघ की स्थापना की थी। इस योजना में अर्थ के विकेन्द्रीकरण पर बहुत बल दिया गया है। इसमें माना गया है कि धन

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का वितरण ग्राम और नगर में समान रूप से होना चाहिए। ग्रामों में कुटीर उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन देना चाहिए। ग्राम पंचायत ही ग्राम की अखिल व्यवस्था की स्वामिनी होनी चाहिए। उस ग्राम पंचायत के पंच-परमेश्वर अपने ग्राम की शिक्षा, निवास, स्थान, औषधि-वितरण, मनोरंजन आदि पर अपना ही अधिकार अंकुश रखे। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो किसान अपने ग्राम की सम्पदा से अपने ग्राम का सुधार करें।

हमें सर्वोदय के सिद्धान्तों पर चलकर ग्रामों में आर्थिक, सामाजिक, तथा साँस्कृतिक सुधार कर उनकी उन्नति करनी चाहिए।

आर्थिक सुधार (सहकारी संघ की स्थापना)—किसान वस्त्र, नमक, मिर्च, और सुई-धागा जैसी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और अपने अन्न, दूध, घी को बेचने के लिए शहरों पर आश्रित रहता है। हमने देखा है कि किसान की सच्चाई से अनुचित लाभ उठाकर जमीदारों और बोहरों ने किसान की कमाई का अन्न और कपास छीन कर शहरों में पहुँचाया है। शहर के व्यापारी वर्ग ने उस सीधी भेड़ की ऊन नोंचने में कोई कोर कसर नहीं रखी है। अतः आज ग्रामों की उन्नति के लिए सहकारी संघों की स्थापना करनी होगी। यहाँ किसान अपनी उपज को बेचेगा, अपनी आवश्यकता की चीजों को खरीदेगा, आवश्यता पड़ने पर ऋण प्राप्त करेगा और इस सम्पूर्ण कार्य में जो कुछ भी लाभ होगा, उस पर उसका एकाधिकार होगा। ऐसी दशा में न उसे व्यापारी लूटेंगे और न बोहरे। उसकी आर्थिक दशा सुधरेगी और वह आनन्द का उपयोग करेगा।

कृषि सुधार—आज का किसान सैकड़ों वर्षों की पुरानी परिपाटी से खेती कर रहा है। परिणाम यह है कि निरन्तर प्रयत्न करने पर भी उसे उचित फल नहीं मिलता। अतः खेती की प्रणाली में आधुनिक आविष्कारों और खोजों की सहायता से परिवर्तन करना चाहिए। अच्छी खाद, श्रेष्ठ बीज, उपयुक्त सिंचाई आदि का प्रबन्ध कर उपज में वृद्धि के साधन जुटाने चाहिए। 'चकबन्दी' तथा 'सहकारी खेती' को भी स्वीकार करके लाभ उठाना चाहिए।

कुटीर उद्योगों का विकास—किसानों के पास ऐसा काफी समय होता है, जब वे खेती का काम नहीं करते। इसके अतिरिक्त ग्रामों की भूमि बढ़ती हुई आबादी के बोझ को संभालने में भी असमर्थ है। अतः हमें किसान को कुटीर उद्योगों की शिक्षा देकर उन्हें उनमें लगाना चाहिए। सूत कातकर, कपड़ा तथा दरी बुनकर, रस्सी बँटकर डलियाँ तथा चटाई बनाकर, चमड़े तथा लकड़ी की दस्तकारी का प्रोत्साहन करके ग्रामों की आर्थिक दशा को सरलता से संभाला जा सकता है।

सामाजिक सुधार—ग्रामों में बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, छूआ-छूत, नशे का सेवन जुआ, पारस्परिक कलह आदि अनेक कुरीतियाँ फैली हुई हैं। इन्होंने ग्राम्य जीवन को क्षत-विक्षत कर दिया है। नाना प्रकार के संगठनों द्वारा इन्हें दूर करना चाहिए!

सांस्कृतिक सुधार—(शिक्षा का प्रचार)—आज ग्राम में अशिक्षा का बोल-बाला है। इसके कारण ग्रामीणों को बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। हमें पाठशालाओं तथा प्रौढ़ पाठशालाओं की स्थापना करके निःशुल्क शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए, जिससे ग्रामीण जन शिक्षा का लाभ उठा सकें। इससे ग्रामों में सुख और शान्ति की वर्षा होने लगेगी। किसी कवि ने इसी कल्पना को ध्यान में रखकर कहा है—

जगती कहीं ज्ञान की ज्योती, शिक्षा की यदि कमी न होती।
तो ये ग्राम स्वर्ग बन जाते, पूर्ण शान्ति रस में पग जाते ॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मनोरंजन का प्रबन्ध—ग्रामों में रेडियो, संगीत-गोष्ठी, कवि सम्मेलन, नाटक, समारोह, पुस्तकालय आदि का भी प्रबन्ध होना चाहिए। इनसे ग्रामीणों का मनोरंजन होगा और ज्ञान की वृद्धि भी होगी।

स्वास्थ्य रक्षा के लिए प्रबन्ध—किसान दीर्घ जीवन के केन्द्र ग्राम में निवास तो करता ही है। विरल आवास सदनों के होने से ग्राम में प्राणपोषक पवन का संचार सर्वत्र अव्याहत गति से होता है। किन्तु खाद का एकत्रीकरण, गन्दे जल का निष्कासन, पशु निवास आदि की व्यवस्था के सुचारु न होने से ग्रामों में गन्दगी फैलती है, वर्षा ऋतु में किसान अपने पशुओं को कच्चे मार्गों पर बाँध रखता है। ग्राम के मार्ग बरसात में बहुत बदबू देते हैं। ग्राम पँचायतों को चाहिये कि वे ग्रामीणों को स्वच्छता का महत्व समझाकर गाँव को स्वच्छ तथा साफ सुथरा रखने का प्रबन्ध करें। ऐसे अस्पतालों तथा औषधालयों की भी स्थापना होनी चाहिये, जहाँ से किसान निःशुल्क औषधि तथा उचित परिचर्या प्राप्त कर सके।

उपसंहार—यदि भारतीय किसान को उक्त सुविधायें प्राप्त हो जायेंगी तो वह निश्चय ही ग्राम की वसुन्धरा को सुजला, सुफला और शस्य-श्यामला बना कर छोड़ेगा। वह विश्वामित्र का नई दुनियाँ बसा देगा। ग्राम स्वर्ग बन जायेंगे। देव उन ग्रामों में निवास को तरसेंगे और हम स्वाभिमान के साथ कहेंगे।

अहा ! ग्राम जीवन भी क्या है,
क्यों न इसे सबका मन चाहे।

मनोरंजन के आधुनिक साधन

१—प्रस्तावना (मनोरंजन की आवश्यकता)। २—मनोरंजन की आवश्यकता और उसके प्राचीन साधन। ३—मनोरंजन के विविध प्रकार के आधुनिक साधन (क) रेडियो, (ख) सिनेमा, (ग) टलीविजन, (घ) ग्रामोफोन हारमोनियम आदि (ङ) सरकस, मदारी के खेल, (च) हाकी, क्रिकेट आदि (छ) अजायबघर, मेला आदि (ज) अन्य साधन। ४—महत्व। ५—उपसंहार

मनोरंजन की आवश्यकता—आधुनिक युग विज्ञान का युग है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने मानव जीवन को अति व्यस्त बना दिया है। आज का मनुष्य केवल भोजन और वस्त्र के लिए कठिन परिश्रम करता है। वह सुबह से शाम तक अपने शरीर का पसीना निकालता है। परिश्रम के कारण उसके शरीर और मन शिथिल हो जाते हैं। शरीर की थकान तो कुछ विश्राम करने पर दूर हो जाती है किन्तु मन की खिन्नता तथा अवसाद को दूर करने के लिए उसे आमोद-प्रमोद की आवश्यकता पड़ती है। चाहे व्यापारी हो, साहित्य सेवी हो, वकील हो, डाक्टर हो अथवा श्रमजीवी मजदूर सभी दिन भर की थकान के बाद मनोरंजन चाहते हैं।

मनोरंजन की आवश्यकता और प्राचीन साधन—जब से मानव सृष्टि प्रारम्भ हुई है, मनोरंजन भी अपना पैर पसारते रहे हैं। प्रस्तर युग का मानव भी रेखा-मात्र चित्रों तथा आखेटों द्वारा अपना मनोरंजन करता था। वैदिक काल में भी यज्ञों के अवसर पर नाट्य मूक अभिनय, समूह गान आदि मनोरंजन के लिए ही होते थे। आज के युग में यह कार्य रेडियो सिनेमा आदि के द्वारा होता है। यदि हम इसके विकास पर ध्यान दें तो हमें पता चलता है कि सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनोरंजन के साधनों में भी विकास होता रहा है। प्राचीन काल में रोम में मनोरंजन के लिए साँडों और भैंसों का युद्ध कराया जाता था। उस युद्ध में भैंसों के टूटे हुए मस्तक को देखकर मनुष्य आनन्द से अट्टहास करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
भूखे सिंह के पिंजड़े में मनुष्य को डालकर उसके तड़फड़ाने को देखना, वर्षा की उमड़ती हुई यमुना में आदमियों से भरी हुई नाव को डुबाकर डूबते हुए मनुष्यों की चिल्लाहट से आनन्द प्राप्त करना भारत के इतिहास में भी प्रसिद्ध है। नाटक, नौटंकी, रास रामलीला, चौपड़, कुश्ती, कठपुतली का नाच, आल्हा, ढोला आदि प्राचीन पुरुषों के मनोरंजन के साधन थे। आज ये हमें नहीं रुचते और विज्ञान द्वारा प्रदत्त रेडियो, सिनेमा, टेलीविजन आदि हमें मनोरंजन प्रदान कर रहे हैं।

मनोरंजन के विविध प्रकार के आधुनिक साधन—प्रत्येक पुरुष की रुचि में कोई न कोई विशेषता होती है। अतः प्रत्येक को विभिन्न प्रकार के मनोरंजन पसन्द होते हैं। कोई रेडियो सुनता है, कोई सिनेमा देखता है। कोई ताश, पत्ते शतरंज खेलता है, और कोई हाकी, क्रिकेट आदि में ही अपना समय बिताता है।

रेडियो—आधुनिक युग में रेडियो मनोरंजन का प्रमुख साधन है। यदि हमारे पास रेडियो है तो अच्छे से अच्छे गाने सुन सकते हैं। विभिन्न प्रकार के नाटकों का आनन्द ले सकते हैं और महान पुरुषों की वाणियाँ सुन सकते हैं। किन्तु प्रचुर व्यय होने के कारण यह साधन जन-साधारण को लाभ नहीं पहुँचा पाता।

सिनेमा—मनोरंजन के आधुनिक साधनों में इसका प्रचार सर्वाधिक है। शाम को किसी भी सिनेमा घर पहुँच जाइए, वहाँ आपको एक बड़ी भीड़ टिकट लेने के लिए धक्कम धक्का करती हुई मिलेगी। सिनेमा में साहित्य और कला का ऐसा सामंजस्य है कि समस्त जीवन साकार हो उठता है। भावोद्दीपन की जितनी शक्ति सिनेमा में है उतनी मानवोपार्जित किसी अन्य साधन में नहीं। मनोरम प्राकृतिक दृश्यों को देखकर, मधुर लय और तान से भरे भावपूर्ण गीतों को सुनकर, सुन्दरतम रूप को दिखाकर सिनेमा दर्शकों को भावमग्न कर देता है। एक क्षण के लिए वह जीवन की कठिनाइयों और अभावों को भूलकर स्वर्गीय आनन्द का अनुभव कर लेता है। इतने पर भी यह इतना सस्ता है कि गरीब से गरीब मनुष्य भी थोड़े से पैसे खर्च करके इसका लाभ उठा सकता है।

टेलीविजन—यह रेडियो और सिनेमा का समन्वित रूप है। इसके द्वारा सुदूर प्रदेशों से वाणी के साथ-साथ दृश्य भी प्रेषित किये जाते हैं। इसके द्वारा श्रवणेन्द्रिय तथा नेत्रेन्द्रिय दोनों की ही तृप्ति होती है। अभी हमारे देश में इसका प्रचलन नहीं हुआ है किन्तु निकट भविष्य में ही यह रेडियो की तरह सर्व सुलभ हो जायगा।

ग्रामोफोन हारमोनियम, तबला आदि—यद्यपि रेडियो के प्रचार से ग्रामोफोन, हारमोनियम, तबला आदि का महत्व कम हो गया है, किन्तु जहाँ रेडियो में परतंत्रता है, वहाँ इनमें स्वाधीनता का अचल साम्राज्य है। आप किसी भी समय मनमाने ढंग से इनका उपयोग कर आनन्द उठा सकते हैं।

सरकस, जादूगर, मदारी, आदि के खेल—ये खेल मानव मन में कौतूहल वृत्ति को जागृत कर गुदगुदी उत्पन्न करते हैं। मौत के कुँए में साईकिल का चलाना, तार पर साइकिल दौड़ाना, तोप में से गोले के साथ-साथ आदमी का भी निकालना, किसी की जेब का रुपया किसी की जेब में पहुँच जाना, रीछ का नृत्य करना आदि देखकर किस का मन मयूर नाचने नहीं लगता है।

हाकी, क्रिकेट, वालीवाल, कबड्डी कुश्ती आदि—ये आधुनिक काल के स्वास्थ्य को लाभ पहुँचाने वाले प्रसिद्ध मनोरंजन हैं। इनसे खेलने वाले तथा देखने वाले दोनों को ही आनन्द प्राप्त होता है।

शतरंज, ताश, कैरम, चौपड़ आदि—इन साधनों से घर के अन्दर ही बैठे बैठे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मनोरंजन हो जाता है। खिलाड़ी इनमें इतना तन्मय हो जाता है, कि वह खाना पीना सब कुछ भूल कर इनसे ही अपना बहुत सा समय गुजार देता है। यदि ये परिमित रूप में खेले जाँय, तो इनमें मनोरंजन के साथ बुद्धि का विकास भी होता है किन्तु जब सीमा के आगे बढ़कर व्यसन बन जाते हैं, तब इनसे हानि ही हानि होती है।

अजायब घर, मेला, नुमाइश आदि—अवकाश के समय में उक्त स्थानों पर भी मनोरंजन की प्राप्ति होती है। अद्भुत तथा आकर्षक वस्तुओं को देख कर दर्शक आनन्द विभोर हो जाता है। मेला आदि में आवश्यक वस्तुओं का क्रय विक्रय भी होता है।

अन्य साधन—इनके अतिरिक्त बहुत से मनुष्य बगीचों पार्कों आदि में भ्रमण कर, नदी, तालाब आदि में तैर कर, विभिन्न प्रकार की चित्र कला, मूर्ति कला आदि का अवलोकन कर, कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि पढ़कर अपना मनोरंजन करते हैं। वास्तव में आधुनिक काल में मनोरंजन के जितने साधन हैं, उतने पहले कभी नहीं हुए थे और उनका होना भी असम्भव था विभिन्न रुचि के मनुष्य अपनी रुचि के अनुसार उनसे अपना आमोद प्रमोद करते हैं।

मनोरंजन का महत्व—मनोरंजन से मन और मस्तिष्क की खिन्नता दूर होती है; जिससे मनुष्य पुनः अपने कार्य में उत्साह तथा साहस से लग जाता है।

जो मनुष्य मनोरंजन की ओर उचित ध्यान नहीं देता, उन्हें धीरे धीरे अपने जीवन से विरक्ति होने लगती है। वे अपने आप से घृणा करने लगते हैं और एक दिन ऐसा भी आता है जब वे दुःखी होकर आत्म हत्या कर डालते हैं। इसके अतिरिक्त सिनेमा, रेडियो, साहित्य आदि के मनोरंजन के साथ साथ ज्ञान की भी वृद्धि होती है और हाकी, फुटबाल, भ्रमण आदि में स्वास्थ्य बढ़ता है।

उपसंहार—इस प्रकार यह सिद्ध हो चुका है कि मनोरंजन का होना मानव जीवन के लिए अत्यावश्यक है। इससे मानव जीवन में सरसता आती है, जीवन भार स्वरूप होने नहीं पाता, वह हमारी जीवन यात्रा का सम्बल है। अतः हमें इसकी ओर उचित ध्यान देना चाहिए और अपनी रुचि के अनुकूल साधन जुटाकर अपने जीवन को आनन्दमय बनाना चाहिए। मानव जीवन के लिए इसी मनोरंजन की आवश्यकता को ध्यान में रखकर साहित्य संगीत और कला को प्रमुखता दी गई है और इनसे रहित मनुष्य को पूँछ, सींग रहित पशु बतलाया गया है।

साहित्य संगीत कला विहीनः
साक्षात्पशुः पुच्छ विषाण हीनः।

चरित्रबल (सच्चरित्रता)

१—प्रस्तावना तथा परिभाषा। २—उदाहरण। ३—महत्व। ४—चरित्र बल की प्राप्ति में कठिनाई। ५—उपसंहार।

प्रस्तावना तथा परिभाषा—चरित्र बल एक समस्त शब्द है। साधारणतया इस शब्द का अर्थ चरित्र का बल होता है।

वस्तुतः चरित्र कोई पृथक रहने वाला मूर्त तत्व नहीं है। वह स्वयं रूप रहित रूप होकर भी रूपवान (मूर्त और चेतन सम्पन्न मनुष्यों) में रहता है। वह सूर्य के सदृश्य गुणों का एक विराट पुँज है। सूर्य एक है। वह द्वादस मासों के संयोग से द्वादश रूप धारण करता है, इसी प्रकार चरित्र भी मूल रूप में एक है परन्तु प्रभाव में अनेक है। जिस प्रकार स्वाँति नक्षत्र से समागत जल-विन्दु नितान्त निर्मल होता है, किन्तु वह केले के सम्पर्क से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
कपूर, सर्प के सहचर्य से विष, सीपी के सन्नियोग से मोती के रूपों को अङ्गीकार करता है, ठीक उसी प्रकार चरित्र राम-रावण रूप मानव की लीलाओं के अभिनय वालों के सान्निध्य को प्राप्त कर नाना रूपधारी हो जाता है। जब वह 'राम' के साथ होता है, तो हम उसे सच्चरित्र और जब वह रावण के साथ होता है तो हम उसे दुश्चरित्र कहकर पुकारते हैं।

चरित्र-बल में जिस 'चरित्र' शब्द का प्रयोग किया गया है, वह सच्चरित्र के लिए ही है। सच्चरित्र कोई एक नहीं है, यह आन्तरिक पुण्य भावना है; यह सद्गुणों का समूह है, शिष्टता, नम्रता, सदाचार, उदारता आदि सभी इसके अन्तर्गत हैं। गीता के सोलहवें अध्याय में जो दैवी सम्पदा के गुण कहे गए हैं वे सब सच्चरित्र के ही अन्तर्गत हैं—

अभय सत्व सशुद्धिज्ञान योग व्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायास्तप आर्जवम् ॥
अहिंसा सत्यमक्रोध सत्यागः शान्ति रपैशुनम।
दया भूतेष्वलोलुपत्वं मार्दवं ह्रीरचा पलम् ॥
तेज क्षमा धृतिः शौचमद्रोही नातिमानिता।
भवन्ति सपद दैवीमभिजातस्य भारत ॥

भय का अभाव, चित्त की शुद्धि, आत्मा-ज्ञान, इन्द्रियों का दमन, यज्ञ स्वाध्याय, तप, सीधापन, अहिंसा, सत्य, क्रोध, का अभाव, त्याग भावना शान्ति, निन्दा न करना, प्राणियों पर दया, लोभ का अभाव कोमलता, लज्जा, चंचलता का अभाव, तेज, क्षमा, धैर्य, मन, कर्म और वचन की पवित्रता, द्रोह का अभाव, अभिमान का अभाव ये गुण दैवी संपद में उत्पन्न हुए मनुष्यों में रहते हैं।

उदाहरण—उक्त गुणों में से जिस पुरुष के पास एक भी गुण होता है, वह महान् तथा पूजनीय बन जाता है। सत्य के प्रभाव से हरिश्चन्द्र अमर हो गए हैं। अहिंसा तथा भूत-दया के कारण ही हम बुद्ध को भगवान के नाम से पुकारते हैं। इन्हीं गुणों से गान्धी जी महात्मा बन गये और हम उन्हें बापू कहते हैं। स्वामी शंकराचार्य, वल्लभाचार्य, सूर, तुलसी, चैन्तय, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, मुहम्मद साहब, ईसामसीह आदि चरित्रबल के ही कारण आज तक संसार भर में प्रसिद्ध हैं।

महत्व—कोई महान् कार्य चरित्र बल के बिना सम्भव नहीं। संसार के सभी महान् कार्य चरित्र शैलियों के द्वारा ही किये गये हैं। बड़े वैज्ञानिक, योगी, कवि, कलाकार सभी अपने चरित्र-बल के द्वारा ही कुछ कर सकने में समर्थ हुए हैं। तुलसी जब तक कामुकता के बन्धन को न काट सके, कुछ न कर पाये, किन्तु जब उन्होंने चरित्र-बल को अपना लिया, उन्होंने 'रामचरितमानस' जैसा रत्न प्रदान किया। चरित्र-बल के अभाव के कारण ही विश्वा-मित्र वशिष्ठ से पराजित हो जाते थे और कहते थे।

"धिग्बलं क्षत्रिय बलं ब्राह्मस्य बलं बलम्।" (क्षत्रिय के बल को धिक्कारा है, वास्तव में ब्राह्मण का बल ही सच्चा है।)

उन्होंने चरित्र-बल के दूसरे रूप इसी ब्राह्मण बल को प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या की और उसे प्राप्त करके महर्षि बन गये।

चरित्रवान् व्यक्ति की संगति से दुष्ट लोग भी सच्चरित्र तथा महान् बन जाते हैं। सप्तऋषियों की थोड़ी सी ही संगति से व्याध बाल्मीकि बन गया। वास्तव में चरित्रवान व्यक्ति में एक अद्भुत तेज तथा प्रभाव होता है। जो कोई उसके समीप जाता है, उससे आलोकित होकर देदीप्यमान हो जाता है। भगवान् बुद्ध को देखते ही डाकू, चोर तथा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हत्यारे साधू होकर उनके शिष्य बन जाते थे। इन चरित्रवान् साधुओं की क्षण भर की भी संगति दूसरों की व्याधि को हर लेती है—

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी तें पुनि आधि।
अच्छी संगति साधु की, हरे और की व्याधि ॥

चरित्रवान व्यक्ति लोभ-लालच से दूर रहने वाला सन्तोषी पुरुष होता है और 'सन्तोषी सदा सुखी' के सिद्धान्त के अनुसार वह कभी दुखी नहीं होता।

चरित्रवान पुरुष को सभी आदर तथा सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। उसका यश सारे संसार में व्यक्त होता है। मरणोपरान्त भी उसके आदर्श को ग्रहण कर करोड़ों व्यक्ति लाभान्वित होते हैं। उसी विद्यावान तथा धनवान व्यक्ति की पूजा होती है जो सच्चरित्र होता है। विद्यायुक्त होते हुए भी दुर्जन त्यागने योग्य होता है—

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्यया भूषितोऽपि सन्।
मणिनाऽलंकृतः सर्पः किमसौ न भयङ्करः ॥

विद्या से युक्त भी दुर्जन को छोड़ देना चाहिए, क्या मणि से युक्त सर्प भयङ्कर नहीं होता।

चरित्रबल की प्राप्ति में कठिनता—किन्तु इस चरित्र-बल को प्राप्त करना सरल नहीं है। इसके लिए मीरा संकेत करती है—'सूली ऊपर सेज पिया की।' उस सेज तक पहुँचने के लिए 'मंसूर की मस्ती और ईसा की ईश्वरता' की आवश्यकता है। बाहरी तड़क-भड़क और ताल ठप्पे पर जान देने वाले ऐरे गैरे नत्थू खरे वहाँ नहीं पहुँच सकते।

उपसंहार—भारत सदैव से चरित्र प्रधान रहा है। शारीरिक सुख भोग को उसने अनार्य दुर्गुण कहकर त्यागा है। इन्द्रिय निग्रह और चरित्र की रक्षा में उसका विश्वास रहा है। आज भूल से, पाश्चात्य प्रभाव में बहक कर कुछ भारतीय 'Eat drink and be merry'—खाओ पियो और मौज उड़ाओ—को अङ्गीकार करके चरित्र को कलंकित कर रहे हैं। जब तक देश में शिक्षा तथा उपदेशों के द्वारा चरित्र बल की महत्ता को नहीं समझाया जायगा, उसकी वृद्धि नहीं की जायगी, तब तक देश की बहुमुखी प्रगति नहीं हो सकेगी। अतः हमें अपने देश को सुखी तथा समृद्ध बनाने के लिए सच्चरित्रता पर बल देना चाहिए।

किसी मेले का वर्णन

(मेला बटेश्वर)

१—प्रस्तावना। २—समय तथा स्थान परिचय। ३—घाटों तथा मन्दिरों का दृश्य। ४—मेले का दृश्य—(क) विविध प्रकार की दूकानें (ख) खेल तमाशों का दृश्य (ग) पशुओं का मेला। ५—प्रबन्ध। ६—हानि, लाभ तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—मैं कालिज से लौटकर घर आया ही था कि इलाहाबाद से मेरे चचेरे भाई आ पहुँचे। कुशल प्रश्न के उपरान्त उन्होंने बताया कि वे बटेश्वर के मेले में आये हुए कुछ व्यापारियों से अपनी दूकान का रुपया लेने आये हुये हैं। उन्होंने कहा 'तुम्हें भी मेरे साथ बटेश्वर चलना होगा, क्योंकि मुझे उस स्थान के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं हैं।' मैं पहले से ही वहाँ जाना चाहता था, भाई साहब के कहने से पिताजी ने भी जाने की आज्ञा प्रदान कर दी। दूसरे दिन प्रातः ही हम शिकोहाबाद रेलवे स्टेशन पर गये और वहाँ से 'बस' में बैठकर बटेश्वर चल दिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

समय, स्थान तथा परिचय—मोटर तेजी से चली जा रही थी। मेरे भाई साहब ने कहा कि मैंने बटेश्वर का नाम तो बहुत सुना है, पर मैं इसके बारे में कुछ भी नहीं जानता हूँ। इसका संक्षिप्त विवरण सुनाओ। मैंने कहा यह मेला कार्तिक सुदी दौज से अगहन वदी पंचमी तक बटेश्वर के मैदान में यमुना नदी के किनारे लगता है। यहाँ यमुना के किनारे पक्के घाटों को इस प्रकार से बनाया गया है कि वे एक सुदृढ़ बाँध का काम करते हैं, जिससे यमुना कुछ दूर तक उल्टी बहती है। यमुना की धारा यहाँ इस प्रकार बही है कि उसने मेले को दो तरफ से घेर लिया है। बटेश्वर आगरा जिले में स्थित है। यह उत्तर रेलवे शिकोहाबाद स्टेशन से बारह मील दक्षिण में है। यह धार्मिक तथा व्यापारिक मेला है। यहाँ यमुना के किनारे बटुकेश्वरनाथ महादेव का मन्दिर है। इनकी पूजा तथा दर्शन के लिए धार्मिक व्यक्तियों का ताँता लगा रहता है। यहाँ बैल, घोड़ा, ऊँट, गधा खच्चर आदि लाखों की संख्या में बिकने के लिए आते हैं। अतएव यह उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध मेला है। हम बातें कर ही रहे थे, कि 'नारंगीबाद' नाम का बटेश्वर का घाट आ गया वहाँ हमने यमुना को पार किया और मेले को पार करते हुए यमुना के घाट पर पहुँच गये।

घाटों तथा मन्दिरों का दृश्य—यमुना के घाटों का दृश्य अत्यन्त ही मनोहर है। ये धनुषाकार बने हुए हैं और यमुना की धार से लगभग २० फीट ऊँचे हैं। घाटों के ऊपर अत्यन्त ऊँचे विशाल शिव मन्दिर बने हुये हैं। घाटों का निर्माण इस ढङ्ग से हुआ है कि किसी भी घाट पर खड़े होकर सम्पूर्ण घाटों की सुषमा को सरलता से देखा जा सकता है। उन घाटों को देखकर भारत की प्राचीन निर्माण-कला पर आश्चर्य होता है।

जिस समय हम घाटों पर पहुँचे, आठ बज चुके थे। भगवान भास्कर आकाश में ऊँचे चढ़ आये थे। उनकी स्वर्णिम किरणें जल, थल, पृथ्वी, आकाश सबको ही स्वर्णमय बना रही थीं। सूर्य का प्रतिविम्ब यमुना में पड़ रहा था और यमुना की लहरें उसमें क्रीड़ा कर रही थीं। ऐसा मालूम होता था कि मानो यमुना अपने पिता को पाकर आनन्द से हिलोरें ले रही है। हजारों स्त्री पुरुष यमुना में स्नान कर रहे थे, हजारों स्नान की तैयारी में थे और हजारों स्नान करके मन्दिर की ओर जा रहे थे। हमने भी स्नान किया और पूजन की सामग्री लेकर यहाँ के प्रधान महादेव बटुकेश्वरनाथ की पूजा के लिये चल दिये।

बटुकेश्वरनाथ जी का मन्दिर अपनी प्रतिष्ठा के ही अनुरूप बना हुआ है। मन्दिर के बाहर बड़े-बड़े असंख्य घण्टे लटके हुए हैं। मन्दिर के शिखिर पर स्वर्ण कलश देदीप्यमान है। मेला होने के कारण वहाँ बड़ी ही भीड़ थी। बड़ी कठिनता से हम भीतर जा सके। फूल और बेलपत्ती से शिवजी की मूर्ति ढक गई थी। वहाँ से पूजा करके हम बाहर आ गये। लगभग दस बज चुके थे, हमें भूख लग रही थी, अतः हमने एक दूकान पर भोजन किया और मेला देखने के लिए चल दिए।

मेले का दृश्य (विविध प्रकार की दूकानें)—सम्पूर्ण मेले का दृश्य अति मनोहर तथा आकर्षक था। ऐसा मालूम होता था कि मानो एक नया नगर ही बसा दिया गया है। मेले में चौड़ी-चौड़ी सड़कें बनी हुई थीं जिनके दोनों ओर विविध प्रकार की दूकानें सजी हुई थीं। कहीं मिठाई की मिठास थी, तो कहीं चाट की चटपटाहट। कहीं कपड़ों की तड़क-भड़क थी तो कहीं आभूषणों की चटक मटक। कहीं काँच के बर्तन थे, तो कहीं चीनी और धातु के। कहीं लकड़ी का सामान बिक रहा था, तो कहीं लोहे का। कहीं मिट्टी का सामान था, तो कहीं पत्थर का। कहाँ तक कहें वहाँ सभी प्रकार के आवश्यक पदार्थ बिक्रयार्थ प्रस्तुत थे। स्त्री पुरुषों की एक बड़ी भीड़ सामानों को खरीदती घूम रही थी। व्यापारी भी अपने सामानों को बेचने में पूर्ण व्यस्त थे। उनका मिष्ठ भाषण तथा शिष्टाचार ग्राहकों की जेब के भार को

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
काफी हद तक हल्का कर रहे थे। रही सही कसर पान, बीड़ी और चाय के द्वारा ग्राहकों का सम्मान करके पूरी कर दी जाती थी। ग्राहकों को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए दूकानों को खूब सजाया गया था। स्थान स्थान पर लाउडस्पीकर, रेडियो, ग्रामोफोन बज रहे थे। मेरे भाई साहब ने व्यापारियों से अपने रुपये बसूल किये और हम आगे चल दिये।

खेल तमाशों का दृश्य—इसके बाद हम उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ खेल-तमाशों के तम्बू लगे हुए थे। अजीब दृश्य था, मनुष्यों के मनोरंजन के लिए इतने अधिक उपकरण मैंने इससे पहले कहीं एकत्र नहीं देखे थे। सब लोग लाउडस्पीकरों के द्वारा अपने अपने तमाशों की प्रसंशा कर रहे थे। कोहराम सा मचा हुआ था। सब तमाशों के तम्बुओं के मुख्य द्वार अत्यन्त ही कलापूर्ण ढंग से सजाये गये थे। एक पंक्ति में कई सिनेमा शिविर लगे हुये थे। दूसरी तरफ नाटक तथा नौटंकी गृह थे और सरकस हो रहा था। विविध तमाशों को देखते हुए हम उधर जा पहुँचे, जहाँ पशुओं का व्यापार हो रहा था।

पशुओं का मेला—चारों तरफ़ पशु ही पशु थे। घोड़ों की हिनहिनाहट, ऊँटों की बलबलाहट, गधों की शंखनाद, और बैलों की रंभाने की ध्वनि से सारा वातावरण व्याप्त था। कान में कही बात सुनाई नहीं देती थी। धूल के बादल उड़ रहे थे। पशुओं का इतना बड़ा जमघट मैंने इससे पहले कभी नहीं देखा था। वहाँ प्रत्येक प्रकार के पशु थे। गाय, बैल, ऊँट, घोड़ा, भैंस, बकरी, गधा और खच्चर। सभी के अलग अलग बाजार थे। व्यापारियों की बातचीत और दाँव-पेच दर्शनीय थे। घोड़ों और बैलों के दाँतों को गिनना तथा उन्हें दौड़ा कर मोल तोल करना मेरे लिए कौतूहल का विषय था। वहाँ एक से एक अच्छे तथा खराब पशु मौजूद थे। दलालों और लिखिया मुन्शियों की चाँदी थी। सब कोई उन्हें पुकारता हुआ नजर आता था। बटेश्वर उत्तर भारत का प्रसिद्ध पशु मेला है, अतः बिहार तक के व्यापारी यहाँ दिखलाई दे रहे थे।

प्रबन्ध—मेले में सफाई का पूर्ण प्रबन्ध था। सफाई करने के लिए स्थान स्थान पर मेहतर उपस्थिति थे। जहाँ तहाँ मूत्रालय और शौचालय बने हुए थे। यातायात तथा सुरक्षा के लिए पुलिस तथा स्काउटों का प्रबन्ध था। मन्दिरों, घाटों तथा प्रमुख स्थानों पर स्काउट सतर्कता से काम कर रहे थे। पशुओं तथा मनुष्यों की चिकित्सा के लिए अस्थाई चिकित्सालय भी खुले हुए थे। पीने के लिए नलों का तथा रात्रि को प्रकाश के लिए बिजली का प्रबन्ध था। मुख्यव्यवस्था रखने के लिए डिस्ट्रिक्ट बोर्ड तथा अन्य सरकारी विभागों के अधिकारी मेले में गश्त लगा रहे थे। मेले का प्रबन्ध सुव्यवस्थित था।

सायंकाल का समय हो चुका था। अतः हम वहाँ से बस के अड्डे पर आये और बस पर बैठकर शिकोहाबाद वापिस आ गये।

हानि लाभ तथा उपसंहार—बटेश्वर का मेला एक सुन्दर मेला है, अतः बहुत कुछ करने पर भी चोर और जेबकट अपना हाथ साफ कर ही देते हैं। पास पड़ौस के स्थानों में गन्दगी भी फैल जाती है जिससे कभी-कभी संक्रामक रोग फैल जाते हैं। इतना सब कुछ होने पर भी इससे अनेक लाभ हैं। मनुष्य इसमें अनावश्यक पशुओं को सरलता से बेचकर आवश्यक पशुओं को खरीद लेते हैं। गृहस्थी की अन्य आवश्यक वस्तुओं को भी यहाँ से खरीदा जाता है। जिस स्थान पर मेला लगता है वहाँ की भूमि भी पशुओं के मलमूत्र से अधिक शक्तिशाली तथा उपजाऊ हो जाती है। इस मेले से डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को काफी आय होती है और वह इस जिले की उन्नति के लिए व्यय की जाती है। इस प्रकार यह एक लाभदायक मेला है और हमें आवश्यकतानुसार इससे लाभ उठाना चाहिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

किसी त्यौहार का वर्णन

(दीपावली)

१—प्रस्तावना (विभिन्न त्यौहारों में दीपावली का स्थान)। २—समय। ३—मनाने का कारण। ४—त्यौहार की तैयारियाँ। ५—मनाने का प्रकार। ६—रात्रि की शोभा। ७—महत्व। ८—दोष तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना इसका अस्तित्व सम्भव नहीं है। वह आनन्द तथा शोक सभी समाज के साथ ही मनाना चाहता है। आनन्द तथा शोक में आनन्द रोगात्मक भाव है, अतः इसके प्रति उसकी स्वाभाविक अनुरक्ति है। अतः उसने इस आनन्द का अनुभव करने के लिए कुछ विशिष्ट अवसरों को खोज निकाला है। त्यौहार भी उनमे से ही है। इस प्रकार त्यौहार समाज के उस उत्सव का मूर्त रूप हैं जिसमें सम्पूर्ण समाज आनन्द को प्राप्त करने के लिए सामहिक रूप से तल्लीन हो जाता है। संसार के प्रत्येक देश में त्यौहारों की अपनी अपनी परम्परा है। भारत तो त्यौहारों का धनी है। यहाँ प्रत्येक मास और पक्ष में कोई न कोई त्यौहार अवश्य आ जाता है। यदि फाल्गुन के महीने में होली है, तो चैत में राम नवमी है। बैसाख में बैसाखी है, तो जेष्ठ में गंगा दशहरा। यदि श्रावण में रक्षा बन्धन का उत्सव मनाया जाता है, तो भादों में कृष्ण जन्म लेते हैं। यदि क्वार में दशहरा की चहल पहल रहती है, तो कार्तिक में दीपावली का प्रकाश आँखों को चौंधिया देता है। इन सभी त्यौहारों में सौन्दर्य तथा उपादेयता की दृष्टि से दीपावली का अपना विशेष महत्व है।

समय—यह त्यौहार कार्तिक मास की अमावस्या को मनाया जाता है। इस समय शरद ऋतु का आरम्भ होता है, अतः इस समय न अधिक सर्दी होती है और न अधिक गर्मी। गर्मी समाप्त हो जाती है और सारे मार्ग पंक रहित हो जाते हैं। शीतल, मन्द सुगन्ध पवन चलने लगती है। हरी दूब पर पड़ी हुई ओस की बूँदें बिखरे हुए मोतियों जैसी लगती हैं। सारे पशु पक्षी लता-वृक्ष, स्त्री-पुरुष आनन्द मग्न से दिखलाई देते हैं। ऐसे सुहावने समय में मनुष्य दीपावली मनाने का उपक्रम करते हैं।

मनाने का कारण—किंवदन्ती है कि इस दिन मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम रवण को जीतकर अयोध्या में आये थे और नगर वासियों ने उन्हीं के स्वागत में दीपकों का प्रकाश किया था। तभी से यह त्यौहार मनाया जाता है। किन्तु शास्त्रीय प्रमाणों से यह बात सिद्ध नहीं होती है। बंगालियों का कहना है कि कालीदेवी इसी दिन अपनी ससुराल गई थी। जैनियों का कहना कि भगवान महावीर का इसी दिन निर्वाण हुआ था और उनके स्वागत के लिए देवताओं ने दीपक जलाये थे। पुराणों में भी विविध कथाएँ इससे सम्बंधित बतलाई जाती हैं। जो कुछ भी हो हम तो इसका कारण यही समझते हैं कि आर्य लोग इस समय वर्षा के कारण गन्दे तथा क्षतिग्रस्त मकानों की सफाई तथा मरम्मत करते थे। खरीफ की फसल का अन्न उनके घर में आ जाता था जिससे आनन्द मग्न हो वे इस दिन यज्ञ करते थे। ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री देवी "लक्ष्मी" का पूजन करते और अपनी दूरस्थ बहिनों से मिलकर अपने हृदय के अवसाद को दूर कर लेते। वैश्य लोग भी आने वाली फसल को खरीदने की तैयारी में अपने तराजू बाँट और बही खाते तैयार कर लेते थे। भारत के कृषि प्रधान देश होने के कारण फसल के घर में आ जाने पर लक्ष्मी के प्रति कृतज्ञ होना और आने वाली फसल के लिए प्रार्थना करना उचित ही है। प्राचीन आर्य लोग नई फसल के धान से बनी लाजा (खील तथा लाई) को लक्ष्मी देवी के चरणों में अर्पण करके कृत्य कृत्य हो जाते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

त्यौहार की तैयारियाँ—प्रधान त्यौहार के लगभग एक सप्ताह पहले से लोग तैयारियाँ करने लगते हैं। घरों की सफाई करके उनको लीपा पोता जाता है। कलई तथा विविध रंगों से पुते हुए मकान नये से लगते हैं। किवाड़ों तथा फर्नीचर पर वार्निश की जाती है। घरों तथा दूकानों को चित्रों तथा कला कृतियों में सुसज्जित किया जाता है। ऐसा मालूम होता है कि मानो सम्पूर्ण नगर तथा ग्राम अपनी 'लक्ष्मी' के स्वागत के लिए यौवन का सुन्दरतम रूप सवार करके तैयार खड़े हैं। ऐसे सुन्दर वातावरण में दीपावली का आगमन होता है।

मनाने का प्रकार—'दीपावली' विविध उत्सवों का एक सम्मिलित रूप है। यह कार्तिक कृष्णा १३ से कार्तिक शुक्ला २ तक मनाई जाती है। प्रथम दिन धन तेरस होती है। यह 'भगवान' धनवन्तरि का जन्म दिवस है। वैद्य लोग इस दिन धन्वन्तरि की पूजा करते हैं। साधारण जनता इस दिन बर्तन खरीदना शुभ समझ कर बर्तन खरीदती है। इस दिन कसेरट के बाजार की चहल पहल देखने योग्य होती है। दूसरे दिन चौदस होती है। इस दिन कृष्ण ने नरकासुर का वध किया था। हिरण्यकशिपु भी इसी दिन मारा गया था। इस दिन बच्चों का उबटन कर उन्हें विशेष स्नान कराया जाता है। सायंकाल को दरवाजे पर नाली के पास एक दीपक रखा जाता है। इसके बाद दीपावली का मुख्य दिन आता है। चौथे दिन 'अन्नकूट' होता है। इस दिन कृष्ण ने 'ब्रज' में होने वाली इन्द्र पूजा को बन्द कराके गोवर्द्धन पर्वत की पूजा करवाई थी। आजकल भी घरों में गोबर का गोबर्द्धन बना कर नाना प्रकार के पकवानों से उनकी पूजा की जाती है। कृष्ण मन्दिरों में तो विशेष रूप से निर्मित प्रसाद का वितरण होता है। पाँचवें दिन भैया दौज आती है। इस दिन बहनें अपने भाइयों को टीका करके उपहार करती हैं।

यह त्यौहार बड़े ही आमोद प्रमोद का है। दीपावली के मुख्य दिन मनुष्य नवीन नवीन वस्त्र आभूषण पहनते हैं। प्रातः काल से ही बालक वृद्ध सभी किसी न किसी कार्य में जुट जाते हैं। कोई मकान को सजाता है और कोई दूकान को, कोई चित्र टाँगता है तो कोई 'बल्ब' लगाता है। बाजार बड़ा ही सुन्दर तथा मनोहर लगता है। खिलौने, चित्रों, मिठाइयों आदि की दूकानें तो बड़ी ही भली मालूम होती हैं। व्यापारी लोग इसी दिन अपने नवीन बहीखातों की पूजा करते हैं। त्यौहार के दिन बड़े ही प्रसन्न दिखलाई पड़ते हैं। वे रंगीन कागजों के खिलौने बनाते हैं। शाम को प्रत्येक घर में लक्ष्मी तथा गणेश जी की मिट्टी की मूर्तियों की पूजा होती है, और धान की खील तथा शक्कर के खिलौनों को मिल बाँट कर खाया जाता है।

रात्रि की शोभा—रात्रि के दृश्यों में विशेष आकर्षण तथा मनोहरता होती है। प्रत्येक घर तथा दूकान पर दीपों की अवलियाँ सजाई जाती हैं। प्रत्येक गली, कुँआ और सड़क दीपों से जगमगा जाते हैं। नगरों में तो रंग-बिरंगे बल्वों का प्रकाश मन को हर लेता है। मनुष्यों का विश्वास है कि इस रात को प्रकाश युक्त गृहों में लक्ष्मी जी निवास करती हैं। इस रात को लक्ष्मीजी तथा गणेश जी के मन्दिरों की शोभा निराली होती है, वहाँ तरह तरह की झाँकियाँ सजाई जाती हैं। पण्डित लोग मूर्तियों के सामने बैठकर स्तोत्रों का पाठ करते हैं। जहाँ तहाँ संगीत तथा कीर्तन का आयोजन इस त्यौहार की मनोहरता को और भी बढ़ा देता है।

महत्व—दीपावली हिन्दुओं के त्यौहारों में सबसे महत्वपूर्ण त्यौहार है। वर्षा के कारण क्षतिग्रस्त तथा गन्दे मकानों की मरम्मत तथा सफाई इसी त्यौहार पर होती है जिससे उनकी आयु बढ़ती है और वे अच्छे लगने लगते हैं। वर्षा की सीलन कलई से दूर होती है। सरसों के तेल के दीपक भी इस कार्य में सहायता प्रदान करते हैं। वर्षा में उत्पन्न तरह तरह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

के कीड़े मकोड़े भी सफाई करने से नष्ट हो जाते हैं, जिससे घर में रहने वाले लोगों को रोग नहीं होते। इनके अतिरिक्त इस त्यौहार के आने पर हमारे जीवन में एक नवीन उत्साह आ जाता है, जिससे इस वर्ष के आगामी दिनों में बड़ी हंसी खुशी से कार्य करने में जुट जाते हैं।

दोष तथा उपसंहार—इस अवसर पर मनुष्य लक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए 'जुआ' खेलते हैं। कैसी विडम्बना है ! सोचिए तो सही, जुआ से लक्ष्मी का अपमान है अथवा पूजन। 'जुआ' खेलना एक राक्षसी प्रवृत्ति है, उससे देवी किस प्रकार प्रसन्न हो सकती है। इसी मूर्खता के कारण असंख्य मनुष्य तबाह हो चुके हैं, और हो रहे हैं। भगवान धन्वन्तरि, राम, कृष्ण और महावीर की स्मृति में मनाये जाने वाले इस त्यौहार पर यदि हम इस कुप्रथा को न छोड़ सके तो आने वाली पीढ़ियाँ इसके लिए हमें धिक्कारेंगी। अतः हमें शीघ्र से शीघ्र इस कुप्रथा को दूर कर इस त्यौहार को सब प्रकार से श्रेष्ठ बनाना चाहिए।

आधुनिक काल का सर्वश्रेष्ठ कवि
(श्री मैथिलीशरण गुप्त)

१—प्रस्तावना तथा महत्व। २—जीवनी। ३—रचनाएँ। ४—भक्ति भावना तथा आर्य संस्कृति से प्रेम। ५—राष्ट्र प्रेम। ६—मानव हृदय का चित्रण। ७—नारियों के प्रति श्रद्धा। ८—संवाद लिखने की पटुता। ९—भाषा। १०—शैली। ११—उपसंहार।

प्रस्तावना तथा महत्व—हिन्दी काव्य सरोवर में अनेक कवि कमल खिले हुए हैं किन्तु यदि किसी में सौरभ नहीं है, तो किसी में पराग नहीं है। यदि किसी में वर्ण-वैचित्र्य नहीं है तो किसी में सरसता नहीं है। यदि ऐसा कोई कवि कमल है जिसमें सौरभ, पराग, वर्ण-वैचित्र्य तथा सरसता है, तो वह हैं श्री मैथिलीशरण गुप्त। इनके काव्यों में भावों की विविधता, भाषा की सरसता और कल्पना की कमनीयता का सुन्दर समन्वय है। गुप्तजी भारतेन्दु काल से लेकर सन् १९६४ तक कविता करते रहे हैं। उनके काव्यों में आधुनिक काल की सम्पूर्ण प्रवृत्तियों तथा भावनाओं को समय समय पर स्थान मिलता रहा है। आधुनिक काल की ही नहीं, प्राचीन काल की भी विविध परम्पराएँ उनके काव्यों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। यदि गुप्तजी जयद्रथ वध में वीरगाथा काल के कवियों की परम्परा में और साकेत के राम-कथाकारों की श्रेणी में दिखाई देते हैं, तो झंकार में उनका आधुनिकतम छायावादी रूप स्पष्ट हो जाता है। उनके काव्य में भारतीय संस्कृति की गुण गरिमा, भक्ति की तन्मयता और राष्ट्र प्रेम की पवित्रता की त्रिवेणी समान रूप से प्रवाहित हुई है। उन्होंने खण्ड काव्य, महाकाव्य, मुक्तक-काव्य, गीति काव्य, नाटक सभी कुछ लिखे हैं। उन्होंने मौलिक तथा अनूदित दोनों ही प्रकार की रचनाएँ की हैं। भाषा के क्षेत्र में उन्होंने सर्व प्रथम खड़ी बोली का काव्य क्षेत्र में सफलता से प्रयोग किया था और भारतेन्दु काल की इस धारणा को कि 'खड़ी बोली में ब्रज-भाषा जैसी मधुरता नहीं आ सकती', निर्मूल सिद्ध कर दिया था। इन्हीं सब कारणों से गुप्त जी को आधुनिक काल का प्रतिनिधि कवि कहा जाता है।

विशेष—इनके आगे शैलियों के प्रकरण में लिखी हुई गुप्त जी की शैली को उक्त रूपरेखाओं के अनुसार लिख देना चाहिये।

मेरी प्रिय पुस्तक (रामचरित मानस)

१—प्रस्तावना। २—परिचय तथा विशेषता। ३—भाव पक्ष। ४—कला पक्ष।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
५—शिक्षाएँ (क) आचरण सम्बन्धी (ख) सामाजिक शिक्षा (ग) राजनीतिक शिक्षा ।
६—उपसंहार ।

प्रस्तावना—इस 'प्रेस युग' में पुस्तकों की कोई कमी नहीं है। शिक्षा के प्रचार से नवीन-लेखकों तथा कवियों की बाढ़ सी आ गई है। आप किसी भी अच्छे पुस्तकालय में चले जाइये आपको लाखों की संख्या में प्रत्येक विषय की पुस्तकें मिल जायेंगी किन्तु यदि ऐसी कोई पुस्तक है, जिसने भारतीय जन-जीवन को सर्वाधिक प्रभावित किया है, जिसने उसे दुराचार के मार्ग से हटा कर सदाचार के सुरम्य पथ पर चलाया है, जिसने उसकी नीति, मर्यादा तथा संस्कृति की रक्षा की है, जिसमें गृहस्थ जीवन का आदर्श रूप अंकित है, और जिसमें कला-पक्ष तथा भाव-पक्ष का सुन्दर समन्वय है, तो वह है गोस्वामी-तुलसीदास जी का 'राम चरित मानस'। यह एक ऐसी रसायन है जो बिना किसी अनुपात भेद के बाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, पण्डित, मूर्ख सभी को दी जा सकती है और सभी के लिए परमोपयोगी है। अपनी रचना के आदि काल से लेकर आज तक इसने न जाने कितने जन मानसों को आन्दोलित किया है। इस पुस्तक ने जितनी जनप्रियता प्राप्त की है, उतनी अन्य किसी पुस्तक ने नहीं। इसका अनेक भारतीय तथा अंग्रेजी रूसी आदि अनेक विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इसके अनेक प्रकार के असंख्य संस्करण निकल चुके हैं। आज भारत का ऐसा कौनसा हिन्दू परिवार होगा, जिसके यहाँ रामचरित मानस न हो और जो किसी न किसी रूप में इसकी एकाव चौपाई या दोहे का प्रयोग न करता हो।

परिचय तथा विशेषता—रामचरित मानस का उद्देश्य मर्यादा पुरुषोत्तम भगवाना राम के लोक पावन जीवन-चरित्र का वर्णन करना है। इसमें राम के सम्पूर्ण जीवन का चित्रण है। जीवन का ऐसा कोई व्यापार नहीं है, जोइसके रचयिता तुलसीदास जी की पेनी दृष्टि से बच गया हो। मानव जीवन के विविध पहलुओं और मानव हृदय की कोमल कठोर तथा स्वाभाविक भावनाओं का जितना सफल चित्रण रामचरित मानस में हुआ है, उतना अन्यत्र दुर्लभ है।

भगवान राम-चरित मानस के वीरोदात्त नायक हैं। परब्रह्म होते हुए भी गृहस्थ हैं, अपने पिता के पुत्र हैं, भाइयों के भाई हैं, पत्नी के पति हैं और गुरु के शिष्य हैं। उनके भी कुछ मित्र हैं, कुछ शत्रु हैं और कुछ भक्त हैं। वे राज पुत्र हैं और राज घराने की कुटिल नीति के शिकार हुए हैं। उन्हें ऐसे समय जबकि उनका राज्याभिषेक होने जा रहा था, अकस्मात ही वन जाने की तैयारी करनी पड़ी है, और उनके साथ हैं केवल छोटे भाई, लक्ष्मण और पत्नी, सीता। वन में भी उन पर अकथनीय आपत्तियाँ आई हैं। उनकी पत्नी हर ली गई हैं। फलस्वरूप उन्हें विश्व विजयी रावण से युद्ध करना पड़ा है। वे तरह तरह के संघर्षों को करते रहे हैं और अन्त में अग्नि में तपाए हुए सोने की तरह खरे निकले हैं। उक्त विवरण से स्पष्ट है कि जीवन के जितने विविध चित्र रामचरित मानस में उपलब्ध होते हैं, उतने अन्य किसी काव्य में नहीं मिलते। इन चित्रों की दूसरी विशेषता यह है कि तुलसी ने जीवन के इन विविध चित्रों में लोक संग्रह का ध्यान रखते हुए उन आदर्शों की स्थापना की है, जो सार्वभौमिक और सार्वदेशिक हैं और इन सबके साथ भक्ति का ऐसा समन्वय किया गया है जो तत्कालीन परिस्थितियों में और आज भी मार्ग प्रदर्शन का कार्य कर रहा है। मानव हृदय की जिस सुदृढ़ भाव भूमि पर राम चरित मानस का भव्य प्रसाद खड़ा है, वह सनातन है। यही कारण है कि राम-चरित मानस देश और काल की परिधि को लाँघकर एक शाश्वत तथा सार्वदेशिक महाकाव्य बन गया है।

भाव-पक्ष—राम-चरित मानस में भाव पक्ष और कला पक्ष का सुन्दर समन्वय है। इसमें मानव हृदय की विविध भावनाओं का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया गया है। हर्ष, शोक

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करुणा, द्वेष, क्षोभ, चिन्ता, अमर्ष आदि का स्वाभाविक वर्णन राम चरित मानस की अपनी विशेषता है। आप राम चरित-मानस के किसी भी प्रसंग को ले लीजिए, उनमें किसी न किसी भाव का चित्रण मिल जायगा।

रसवादियों के सिद्धांत के अनुसार भी इसमें प्रायः सभी रस तथा लक्षण और व्यंजना शक्तियों के सुन्दर उदाहरण पाये जाते हैं। विभाव, अनुभाव व्यभिचारी भाव आदि रस के सभी अंगों का इसमें यथास्थान समावेश मिलता है।

कला पक्ष—राम चरित मानस का कला पक्ष भी अत्यन्त उत्कृष्ट है। इसका अलङ्कार-प्रयोग भाषा और भाव के अनुकूल है। यह स्वाभाविक है और उसमें जबरदस्ती की ठूस-ठास नहीं है। अवसरानुकल सभी अलङ्कारों का प्रयोग कुशलता से किया गया है। बाल काण्ड के आरम्भ में आया हुआ 'साधु समाज प्रयाग' वाला साँग रूपक इसके उदाहरण में उपस्थित किया जा सकता है। सीता के मानसिक भावों के साथ साथ उनकी शारीरिक अभिव्यंजना में निम्न उत्प्रेक्षा कितनी सहायक सिद्ध हुई है—

प्रभुहि चितै पुनिचितै महि, राजत लोचन लोल।
खेलत मनसिज मीन जुग, जनु विधु मण्डल डोल॥

इसमें दोहा चौपाई आदि छन्दों का प्रयोग प्रबन्ध काव्य के अनुकूल किया गया है। इसकी भाषा भाव की अनुसारिणी है। वह संस्कृतमय होते हुये भी जन भाषा के समीप है। यही कारण है कि तुलसी के इस 'मानस' में गोता लगाने वालों की कभी कमी नहीं रही है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि श्रेष्ठ काव्य के जितने भी गुण हैं, वे सभी राम चरित मानस में विद्यमान हैं।

शिक्षा—(आचरण सम्बन्धी)—राम चरित मानस में नीति, मर्यादा, शिष्टाचार, शील आदि की उत्कृष्ट शिक्षा राम के चरित को आदर्श रूप में रख कर दी गई है। राम चरित मानस में पतिव्रता धर्म, पुत्र धर्म, मित्र धर्म, राज धर्म आदि विविध धर्मों की शिक्षा इस सरल ढंग से दी गई है कि इनका निरूपण भी हो जाता है और पाठक को इनकी उपदेशात्मकता का पता भी नहीं चलता। पुत्र धर्म का एक उदाहरण देखिए।

अनुचित उचित विचार तजि, जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमर पति ऐन॥

सामाजिक शिक्षा—समाज की सुव्यवस्था तथा संचालन के लिये राम-चरित मानस में वर्णाश्रम धर्म के पालन का विधान है। राम-राज्य में सब पुरुष वेद-विहित वर्णाश्रम धर्म का पालन करते थे, अतएव वे सुखी तथा भयशोक से रहित थे।

समाज की सुव्यवस्था के लिये प्रत्येक परिवार का संगठित और सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। इसके लिये मानस एक प्रत्यक्ष चित्र है। यदि दशरथ के समान पिता, राम के समान पुत्र, भरत और लक्ष्मण जैसे भाई, सीता जैसी पत्नी तथा हनुमान जैसे सेवक प्रत्येक घर और परिवार में रहें, तो सामाजिक दशा स्वयं ही सुधर जायेगी।

अशुद्ध तथा अछूत समझी जाने वाली जातियों को राम तथा वशिष्ठ जैसे पात्रों से स्पर्श कराकर समाज की छुआ छूत को त्यागने का उपदेश दिया गया है।

धार्मिक शिक्षा—राम चरित मानस में धार्मिक शिक्षाओं की भी कमी नहीं है। तुलसी के समय में धर्म का वास्तविक रूप जनता की आँखों से ओझल हो चुका था। शैव, वैष्णव और शक्ति आपस में झगड़ते रहते थे। 'घट' के ही अन्दर 'ऊघट' को देखने वाले नाममात्र के ज्ञानी जनता को धोखा देने में लगे हुए थे। ऐसे समय में तुलसी ने राम चरित

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मानस की रचना करके जनता के सामने आर्य धर्म का जो सुन्दर रूप प्रस्तुत किया, उसके प्रति जनता आकर्षित हुए बिना न रह सकी। इसके द्वारा शैवों; वैष्णवों, शाक्तों निर्गुण-वादी तथा सद्गुण वादियों के पारस्परिक झगड़ों का सदैव के लिये अन्त हो गया। सब धर्मों के मूल में आचरण की शुद्धता को स्थान देकर तुलसी ने धर्म को एक दृढ़ आधार शिला दी है।

राजनीतिक शिक्षा—'राम चरित मानस' से हमें राजनीतिक शिक्षा भी मिली है। राजा तथा प्रजा का सम्बन्ध और उनके कर्त्तव्यों पर मानस में पूर्ण प्रकाश डाला गया है। राजा के ऊपर भी बीतराग महात्माओं का नियन्त्रण दिखलाकर राजा को निरकुशता से दूर रखा गया है। राजा के लिए समत्व भाव का आदर्श प्रस्तुत करते हुए कहा गया है—

मुखिया मुख सो चाहिए खान पान को एक।
पालै पोसै सकल अंग, तुलसी सहित विवेक।।

उपसंहार—उक्त विवरण से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य में जितने भी ग्रन्थ उपलब्ध हैं, उनमें रामचरित मानस का स्थान सर्वोपरि है। साहित्य दर्शन, राजनीति, समाज-शास्त्र, धर्म-आचरण आदि सभी दृष्टियों से इसमें पूर्णता है। इसमें भारतीय संस्कृति को अमरतत्व का सन्देश देकर विश्व के कौने कौने तक पहुँचाया है। जीवन की ऐसी कोई परिस्थित नहीं, मन की कोई ऐसी दशा नहीं, विचार की कोई ऐसी गति नहीं, जिसमें राम चरित मानस और उसके रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जिसका सर्वांगीण गान हमारी शक्ति से बाहर है। हम तो श्रद्धानत होकर इतना ही कह सकते हैं—

"भारी भव सागर उतरतोकवन पार,
जो पै यह रामायण तुलसी न गावतो।"

कुटीर-उद्योग

१—प्रस्तावना (प्राचीन भारत के कुटीर उद्योग)। २—आधुनिक भारत में कुटीर उद्योगों का ह्रास। ३—आवश्यकता। ४—विभिन्न कुटीर उद्योग तथा इनका क्षेत्र। ५—लाभ—(क) ग्राम विकास (ख) बेकारी का निराकरण। (ग) धन का विकेन्द्रीकरण, (घ) देश की आर्थिक दशा का सुधार। ६—सुधार की आवश्यकता। (क) यंत्रों में सुधार, (ख) सहकारी समितियों की स्थापना (ग) कच्चे माल का प्रबन्ध। ५—उपसंहार।

प्रस्तावना—(प्राचीन भारत में कुटीर उद्योग)—हमारा प्राचीन भारत धनधान्य से समृद्ध तथा सुखी था। विदेशी भी उसे 'सोने की चिड़िया' के नाम से पुकारते थे। भारत की इस समृद्धि का प्रधान कारण कुटीर-उद्योग-धन्धों का प्रचलन था। देश के प्रत्येक घर में कोई न कोई कला अथवा लघु उद्योग चलता था। कहीं सूत काता जाता था, तो कहीं कपड़ा बुना जाता था। कहीं बर्तन बनते थे, तो कहीं फर्नीचर का निर्माण होता था। कहीं अस्त्र-शस्त्र बनाये जाते थे, कहीं लोह-शलाकाएँ ढाली जाती थीं। विविध प्रकार के इत्र, आभूषण, लकड़ी धातु, मिट्टी, पत्थर, आदि के खिलौने, श्रृङ्गार का सामान सभी कुछ यहाँ कुटीर-उद्योग के ही रूप में बनता था। वस्त्र-निर्माण तथा भवन-निर्माण कला का तो आविष्कार सर्व प्रथम भारत में ही हुआ था। श्री मैथिलीशरण गुप्त भारत-भारती में कहते हैं—

जब थे दिगम्बर रूप में, वे जंगलों में घूमते।
प्रासाद के तन-पट-हमारे चन्द्र को थे चूमते।।

ढाके की मलमल और दिल्ली के पास का लौह स्तम्भ यहाँ के इन उद्योगों की

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उत्कृष्टता के सफल प्रमाण हैं। यहाँ की मूर्तियाँ, खिलौने तथा छपे हुए वस्त्र भी कम आकर्षक नहीं होते थे। विदेशों में इन चीजों की काफी माँग थी। अपनी उत्कृष्टता के कारण ये हाथों हाथ बिक जाती थीं और उनके बदले में यहाँ अपार स्वर्ण राशि आ जाती थी यहाँ के विस्तृत स्वर्ण भण्डार को देख कर फ्रान्सीसी यात्री बर्नियर ने कहा था कि भारत एक ऐसा गहरा गड्ढा है जिसमें बाहर का सोना आकर इकट्ठा तो हो जाता है पर वह किसी भी प्रकार बाहर निकलने का नाम नहीं लेता। जहाँ आना ही आना हो और जाने का नाम भी न हो, वहाँ की सम्पत्ति का अनुमान कैसे लगाया जा सकता है ?

आधुनिक भारत में कुटीर उद्योग का ह्रास—किन्तु आज नदी उल्टी बह रही है। देश की सारी सम्पत्ति कपड़ा, सण्ट, घड़ी, पेन, शृङ्गार-प्रसाधन आदि के बदले में विदेशों को चली जा रही है। सोने की चिड़िया मिट्टी की चिड़िया हो गई है। दीर्घकाल के विदेशी शासन में देश के सारे कुटीर उद्योग चौपट हो चुके हैं। वह सुई धागे से लेकर मेज कुर्सी तक के लिए विदेशों का मुँह ताकने लगा है। यहाँ की पसीने की कमाई से लङ्काशायर और मैनचेस्टर के विशाल भवन बन चुके हैं। परिणामस्वरूप हम दरिद्र से दरिद्रतर हो गए हैं। हमारी आर्थिक दशा अत्यन्त क्षीण है। इसी कारण आज राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होते हुए भी हम अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता को प्राप्त नहीं कर सके हैं।

आवश्यकता—अतः यदि हम आर्थिक स्वतन्त्रता को प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें कुटीर उद्योगों का विकास करना पड़ेगा। इससे हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर सकेंगे। हमारी जो अतुल धनराशि मशीनीकरण के कारण विदेशों को चली जाती है, वह मशीनों के अधिक उपयोग में न आने के कारण देश में ही रहेगी। देश में कलात्मकता का प्रचार होगा। प्रत्येक ग्राम अपने में एक इकाई बन जायेगा। अतः हमें शीघ्र ही कुटीर-उद्योगों के विकास की ओर ध्यान देना चाहिए।

विभिन्न कुटीर उद्योग तथा इनका क्षेत्र—भारतवर्ष में कुटीर उद्योगों का क्षेत्र अति विस्तृत है। प्रत्येक गाँव, नगर और मुहल्ले में इनका क्षेत्र खुला पड़ा है। चरखा कातना, कपड़ा बुनना, दरी-निवार बुनना, गलीचे कालीन बुनना, चमड़े का काम, लकड़ी का काम, चीनी मिट्टी के बर्तन बनाना, धातु के बर्तन बनाना, कागज तथा खिलौना बनाना, कपड़े रंगना और छापना प्रसिद्ध कुटीर उद्योग हैं। आज भी देश के विभिन्न भागों में उक्त उद्योग अति उत्कृष्ट दशा में चल रहे हैं। जयपुर की कपड़े की रंगाई और फर्रुखाबाद की कपड़े की छपाई अति प्रसिद्ध है। आगरे के जूते, दरी और कालीन विदेशों में भी जाते हैं। चुनार के मिट्टी के खिलौने तथा मिट्टी के बर्तन, अपनी कला में अनोखे हैं। वाराणसी की नक्काशी के बर्तन, जरी का काम और लकड़ी के खिलौने किसे आकर्षित नहीं करते। यदि ये और इसी प्रकार के अन्य कुटीर उद्योग सुव्यवस्थित ढङ्ग से चलाये जाँय; तो देश को पर्याप्त लाभ हो सकता है।

लाभ—(ग्राम विकास)—आज गांवों की आर्थिक दशा बिगड़ रही है। वहाँ के निवासियों को पर्याप्त भोजन वस्त्र भी नहीं मिलते। इसका कारण है कि गांवों के किसान वर्ष भर का पूरा काम नहीं रखते। इसके अतिरिक्त गाँवों की जनसंख्या निरन्तर बढ़ रही है, और वहाँ की भूमि इस भार को सहन करने में असमर्थ है। फलतः वहाँ बेकारी भी फैली हुई है। यदि गाँवों में कुटीर-उद्योगों का विकास हो जायगा, तो वहाँ के मनुष्यों को काम मिल जायगा। वे अधिक रुपया पैदा करेंगे और उस रुपये से ग्रामीणों की आर्थिक दशा सुधरेगी। आर्थिक दशा का विकास होने से ग्रामों की सर्वाङ्गीण उन्नति होगी। वहाँ शिक्षा, सफाई आदि का प्रबन्ध होगा और ग्राम स्वर्ग बन जायेंगे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

बेकारी का निराकरण—आज देश में बेकारी की समस्या भयङ्कर रूप धारण कर रही है। देश में लाखों नवयुवक बेकार फिर रहे हैं। वे काम चाहते हैं पर काम नहीं मिलता। देश के पास न तो इतनी भूमि है कि सबको दी जा सके, न इतना व्यापार है कि सब उसमें खप सकें, और न इतनी नौकरियाँ हैं कि सब लगाये जा सकें। इस समस्या का एक मात्र हल कुटीर-उद्योगों का विकास ही है। यदि युवकों को इनकी क्रियात्मक शिक्षा दे दी जाय, तो वे इनमें लगकर अपनी जीविका कमा सकते हैं।

धन का विकेन्द्रीकरण—आज बड़े-बड़े उद्योगों से धन का केन्द्रीकरण हो रहा है। मालदार अधिक मालदार होते जा रहे हैं और गरीब अधिक गरीब। कुटीर उद्योगों से धन सर्व साधारण में बँट जायगा। एक गाँव की आवश्यकताएँ अधिकाँश में गाँव में ही पूर्ण हो जायेंगी। शहरों की ओर चलने वाला धन का प्रवाह रुक जायगा। शहरों में भी इससे गरीबों को रोजी मिलेगी और वे अपने पैरों पर खड़े होने लगेंगे। कला के विकास से उसकी काम करने की क्षमता बढ़ेगी। वे धनी होंगे और धन का विकेन्द्रीकरण होगा।

देश की आर्थिक दशा का सुधार—जब कुटीर उद्योगों से गाँवों और शहरों की आर्थिक दशा सुधर जायगी तो उससे देश की भी आर्थिक दशा सुधरेगी। कुटीर-उद्योगों में निर्मित वस्तुओं के कलात्मक होने पर उनका विदेशों को निर्यात होगा और हमें दुर्लभ विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होगी। आज भी मुरादाबाद के कलई के बर्तन, लखनऊ के कनकौए और मद्रास के हाथ के बने हुए कपड़े पर्याप्त मात्रा में विदेशों को जाते हैं।

कुटीर-उद्योगों के विकास से मशीनीकरण की प्रवृत्ति भी रुकेगी। आज मशीनों, उनके पुर्जों तथा अन्य आवश्यक उपकरणों को मंगाने में जो विशाल धनराशि विदेशों को जा रही है, वह कुटीर उद्योगों के विकास से कम हो जायगी और देश की आर्थिक दशा सुधर जायेगी।

सुधार की आवश्यकता—(यन्त्रों में सुधार) यद्यपि आज जगह-जगह कुटीर उद्योग चल रहे हैं, लेकिन उनसे पर्याप्त लाभ नहीं हो रहा है। इसके कई कारण हैं। कुटीर उद्योगों में प्रयुक्त होने वाले यन्त्र अति प्राचीन ढङ्ग के हैं, जिनकी सहायता से दिन भर कठोर परिश्रम करने पर भी पेट भर भोजन नहीं मिल पाता। एक साधारण चर्खे पर सात आठ आने से अधिक का सूत नहीं कतता। आज इन बातों की आवश्यकता है कि आर्थिक दृष्टि से उपयोगी यन्त्रों का निर्माण और प्रचार किया जाय, जिससे जनता इनकी ओर आकृष्ट होकर पूर्ण लाभ उठा सके।

सहकारी समितियों की स्थापना—कुटीर उद्योगों के विकास में दूसरी बाधा तैयार माल की खपत का न होना है। कारीगरों के पास माल बना पड़ा रहता है पर उसके खरीदार पैदा नहीं होते। इसके लिए सहकारी समितियों की स्थापना की आवश्यकता है। सहकारी समितियाँ उसे खरीद कर देश के बाजारों में पहुँचायेंगी और उनका विज्ञापन द्वारा प्रचार करके उनकी खपत को बढायेंगी। गाँवों और शहरों के मध्य आवागमन की असुविधा होने से भी कुटीर उद्योगों का बहुत सा सामान गाँवों में ही रह जाता है। सड़कों के बन जाने से यह असुविधा दूर हो सकती है।

कच्चे माल का प्रबन्ध—प्रत्येक कुटीर उद्योग के लिए कच्चे माल की आवश्यकता होती है। इसके लिए उद्योगों को ऐसे स्थानों पर चलाया जाना चाहिये, जहाँ कच्चा माल सरलता से कम दामों में मिल सके। उदाहरण के लिए राजस्थान में भेड़ें अधिक पाली जाती हैं जिससे वहाँ काफी ऊन प्राप्त होती है, अतः वहाँ कम्बल, ऊनी वस्त्र आदि का उद्योग लाभदायक रहेगा। सहकारी समितियाँ भी इस कार्य में योग दे सकती हैं। पशु

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
पालन, वस्त्रों का बुनना आदि कुछ ऐसे कार्य भी हैं जो सब जगह सुविधा से चल सकते हैं। अपेक्षाकृत इन पर अधिक बल देना चाहिये।

उपसंहार—सारांश यह है कि यदि हम देश को सब प्रकार से सुखी, समृद्ध तथा गौरवशाली बनाना चाहते हैं तो हमें शीघ्रातिशीघ्र कुटीर उद्योगों का विकास करना होगा। तभी भारत आर्थिक परतन्त्रता की बेड़ियों को तोड़ कर स्वाधीनता के सच्चे सुख का अनुभव कर सकेगा और बापू के रामराज्य का स्वप्न साकार हो सकेगा।

देशाटन

(हाई स्कूल परीक्षा उत्तर प्रदेश १९४२, १९४९)

१—प्रस्तावना। २—देशाटन की प्राचीनता। ३—लाभ (क) ज्ञानार्जन (ख) भौगोलिक ज्ञान की वृद्धि, (ग) मनोरजन की प्राप्ति (घ) स्वास्थ्य लाभ (ङ) अनुभव में वृद्धि, (च) व्यापार में लाभ, (छ) देशोन्नति, (ज) सामाजिकता की वृद्धि, (झ) विश्वशान्ति की प्राप्ति (ञ) विभिन्न भाषाओं का ज्ञान। ४—आधुनिक काल में देशाटन की सुविधा तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—देशाटन शब्द देश और अटन शब्दों के योग से बना है। अतः इसका अर्थ है देशों में अटन (अर्थात् देश देशान्तरों में भ्रमण) इस प्रकार विभिन्न प्रयोजनों से देश विदेशों में भ्रमण करना कहा जाता है।

देशाटन की प्राचीनता—हमारे देश में प्राचीन काल से ही देशाटन की महत्ता को स्वीकार करके उसे प्रत्येक पुरुष के लिए आवश्यक माना गया था। प्रत्येक पुरुष को तीर्थ यात्राओं के बहाने देश के सुदूर वर्ती भागों में जाना पड़ता था। अन्य देशों के व्यक्ति भी व्यापार, ज्ञानार्जन आदि के लिए इधर उधर घूमा करते थे। फाइयान, ह्वेनसाँग, अलबरूनी आदि विदेशियों का भारत-भ्रमण प्रसिद्ध ही है।

लाभ ज्ञानर्जन—देशाटन ज्ञान की वृद्धि का सर्वाधिक उपयोगी साधन है। विभिन्न देशों के निवासियों के आचार-विचारों तथा विशिष्ट वस्तुओं का जितना सुन्दर और पूर्ण ज्ञान देशाटन से होता है, उतना अन्य किसी साधन से नहीं होता। यद्यपि पुस्तकों, समाचार पत्रों तथा सिनेमा चित्रों के द्वारा भी उक्त ज्ञान प्राप्त होता है, किन्तु जितना पूर्ण और सर्वाङ्गीण ज्ञान देशाटन के द्वारा प्राप्त होता है, उनता उक्त साधनों से नहीं।

भौगोलिक ज्ञान की वृद्धि—देशाटन के द्वारा विभिन्न स्थानों का भौगोलिक ज्ञान बड़ी सरलता से हो जाता है। वास्तव में किसी स्थान की जलवायु तथा स्थिति का पूर्ण ज्ञान वहाँ के भ्रमण से सम्भव है। वह पुस्तकों के पढ़ने से कदापि प्राप्त नहीं हो सकता।

मनोरंजन की प्राप्ति—देशाटन से हमें विभिन्न वस्तुएँ देखने को मिलती हैं। यदि कहीं तुषार किरीट धारणी पर्वत शृङ्खलाएँ दिखाई देती हैं तो कहीं अतल स्पर्शी सागर हिलोरें लेता है, कहीं गगन चुम्बी अट्टालिकायें तथा मन्दिर, मस्जिद दिखलाई देते हैं, तो कहीं दिन में भी अन्धकार को शरण देने वाली गुफाएँ। भला प्रकृति के विभिन्न रूपों ताजमहल, एलीफेंटा की गुफाओं, शालीमार और निशात के बागों को देखकर किस सहृदय पुरुष का मन मयूर न नाच उठेगा।

स्वास्थ्य लाभ—देशाटन से मनोरंजन होता है और चित्त प्रसन्न रहता है। चित्त प्रसन्न रहने से स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की जलवायुओं और पर्वतीय स्थानों में भ्रमण आदि से भी स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

अनुभव में वृद्धि—विभिन्न देशों में भ्रमण करके हमें विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का सामना करना पड़ता है। उनका अपनी बुद्धि के अनुसार सामना करने में हमें अपनी शक्तियों का ज्ञान होता है, जिससे आत्म सम्मान बढ़ता है और हमारे अनुभव में वृद्धि होती है। अनुभव वृद्धि से हमें अपने जीवन में सुविधा रहती है।

व्यापार में लाभ—देशाटन से विभिन्न स्थानों पर सरलता से कम मूल्य में प्राप्त होने वाली वस्तुओं का हमें ज्ञान हो जाता है। उनको वहाँ से खरीद कर अधिक मूल्य में बेचकर व्यापार में लाभ होता है।

देशोन्नति—देशों में भ्रमण करने से वहाँ के कल-कारखानों, कृषि फार्मों, बाँधों आदि का प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है। उनके अनुसार ही अपने यहाँ आचरण करने से देश की उन्नति हो जाती है। यही कारण है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार विभिन्न प्रकार के क्रियात्मक अनुभवों को प्राप्त करने के लिये अपने यहाँ के विभिन्न प्रतिनिधि मण्डल अन्य देशों में भेजती है।

सामाजिकता की वृद्धि—विभिन्न स्थानों में भ्रमण करने से वहाँ के निवासियों से परिचय हो जाता है, जिससे परस्पर प्रेम और सहानुभूति उत्पन्न होती है।

विश्व शान्ति की प्राप्ति—विदेशों के भ्रमण से विभिन्न देशों के निवासी पारस्परिक समानताओं को देखकर एक दूसरे से स्नेह करने लगते हैं और विश्व बन्धुत्व की भावना को जन्म देते हैं। विश्व बन्धुत्व की भावना 'विश्वशान्ति को बनाये रखने में सर्वाधिक योग देती है। इस प्रकार देशाटन से विश्वशान्ति की प्राप्ति होती है। आधुनिक काल में विश्व के विभिन्न देशों की सरकारें इस तथ्य को समझ कर ही देशाटन करने वालों को प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न प्रकार की सुविधायें दे रही हैं।

विभिन्न भाषाओं का ज्ञान—देशाटन में विभिन्न भाषा-भाषी मनुष्यों से मिलने से उनकी भाषाओं का ज्ञान सरलता से हो जाता है। महा पंडित राहुल सांस्कृत्यायन ने विभिन्न भाषाओं को इसी प्रकार सीखा था।

आधुनिक काल में देशाटन की सुविधा तथा उपसंहार—आधुनिक काल में वैज्ञानिक आविष्कारों की सहायता से देशाटन करना अत्यन्त सरल हो गया है। अब प्राचीन काल की भाँति न तो मार्ग में उतना समय ही लगता है और न चोर उचक्कों का भय रहता है अब उतना व्यय भी नहीं होता। अतएव हमें यथावसर देशाटन करके लाभ उठाना चाहिए। किसी उर्दू कवि ने ठीक ही कहा है—

सैर कर दुनियाँ की गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ।
जिन्दगी भी गर रही तो, नौ जवानी फिर कहाँ।।

ग्राम पंचायत

१—प्रस्तावना, २—परिभाषा, ३—स्थापना, ४—स्वरूप, ५—लाभ, ६—दोष, ७—उपसंहार।

प्रस्तावना—भारत ग्रामों का देश कहा जाता है। उसकी आबादी का अधिकतर भाग ग्रामों में ही रहता है, किन्तु आज भारतीय ग्रामों की जो हीन दशा है, वह क्या किसी से छिपी हुई है। तभी तो पन्त जी ने कहा है—

यह तो मानव लोक नहीं रे, यह है नरक अपरिचित।
यह भारत की ग्राम सभ्यता संस्कृत से नर्वासित।

× × × ×

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अकथनीय क्षुद्रता विवशता भरी यहाँ के जग में।
गृह-गृह में कलह, खेत में कलह, कलह है मग में।

परिभाषा—ग्रामों की उक्त दशा को देखकर बापूजी ने ग्रामों के उत्थान के लिये पंचायत राज्य की कल्पना की थी। उनके मतानुसार पंचायत राज्य उस लोकतन्त्र का नाम है जिसमें सभी देहात और देहाती सुखी, समृद्ध एवं स्वावलम्बी हों, जिसमें निर्धन और धनिक का, स्त्री और पुरुष का, काले और गोरे एवं जाति धर्म का भेद भाव मिट गया हो, जिसमें सम्पूर्ण भूमि और सत्ता जनता जनार्दन के हाथ में हो, जिसमें न्याय शीघ्र, शुद्ध और सस्ता हो।

स्थापना—स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हमारी जन-प्रिय सरकार ने ग्रामों की दशा सुधारने के लिए बापूजी के मतानुसार पंचायत राज्य की स्थापना की। सबसे पहले दिसम्बर १९४७ ई० में उत्तर प्रदेश की सरकार ने ग्राम पंचायत अधिनियम को स्वीकृत किया, और पंचायत राज्य अस्तित्व में आ गया। अब तो भारत के प्रत्येक राज्य में विधिवत् ग्राम पंचायतों की स्थापना हो चुकी है।

स्वरूप—(उत्तर प्रदेश में) इसके अनुसार प्रत्येक ग्राम में एक ग्राम सभा होती है। ग्राम के सभी वयस्क स्त्री, पुरुष इसके सदस्य होते हैं। ये सदस्य सभापति तथा कार्यकारिणी का चुनाव करते हैं। यह कार्यकारिणी ही ग्राम पचायत के नाम से पुकारी जाती है। कार्यकारिणी के इन्हीं सदस्यों को पंच कहा जाता है। जनसंख्या के अनुसार ग्राम पंचायत में ३० से ५१ तक सदस्य होते हैं। कई ग्राम पंचायतों को मिलाकर एक अदालती पंचायत बनती है। कई अदालती पंचायतों का एक मंत्री होता है और उसके ऊपर पंचायत निरीक्षक होता है।

स्वरूप—(बिहार में) १००० अथवा अधिक की जनसंख्या वाले प्रत्येक ग्राम या ग्राम समूह में एक ग्राम पंचायत का गठन किया जाता है। (आशा है कि निकट भविष्य में ५०० की जनसंख्या वाले ग्रामों में ग्राम-पंचायतों की स्थापना हो जायगी।) ग्राम का प्रत्येक २१ वर्ष या इससे अधिक अवस्था का प्रत्येक निवासी इसका सदस्य होता है और इन सभी सदस्यों की सभा को पंचायत की 'साधारण सभा' कहा जाता है। इस साधारण सभा की बैठक वर्ष में दो बार होती है। वर्ष की प्रथम बैठक में मुखिया तथा १५ पंचों को इन्हीं सब सदस्यों (अर्थात ग्राम के वयस्क निवासियों) द्वारा चुना जाता है। इन्हीं १५ पंचों की ग्राम कचहरी बनती है। जो गाँव के फौजदारी तथा दीवानी के छोटे-मोटे झगड़ों को तय करती है। ये पन्द्रह पंच अपने में से एक सरपंच चुनते हैं, जो 'ग्राम कचहरी' का प्रधान होता है।

मुखिया ही पंचायत का प्रधान होता है। मुखिया अपनी सहायता के लिए सदस्यों में से कुछ व्यक्तियों को चुन लेता है और उन्हें गाँव के भिन्न भिन्न कार्यों को सौंप देता है। मुखिया ग्राम वालों की सेवा के १८ से २५ वर्ष तक की अवस्था वाले नवयुवकों का एक सेवा दल बनाता है। सेवा दल के प्रधान को 'दलपति' कहा जाता है। सरकार की ओर से प्रत्येक ग्राम-पंचायत के कार्यालय का कार्य करने के लिए एक 'ग्राम-सेवक' नियुक्त किया जाता है राज्य सरकार की ओर से इनके कार्यों की देखभाल 'स्थानीय संस्थाओं के निरीक्षक' करते हैं।

कार्य—ग्राम पंचायत गाँव की बहुत सी समस्याओं को हल करती है। सड़कों का बनाना और मरम्मत करबाना 'चिकित्सालयों और विद्यालयों की स्थापना करना, तालाब कुआ आदि बनवाना, सिंचाई के साधन जुटाना, ग्रामों में सफाई रखना आदि ग्राम सभा के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
प्रमुख कार्य हैं। जनगणना, पशु गणना, कृषि उन्नति, चरागाहों का संरक्षण करना, सार्वजनिक स्थानों की देखभाल तथा रक्षा आदि भी ग्राम पंचायत के कार्यों में आते हैं। संक्षेप में गाँव और गाँव वालों की उन्नति सम्बन्धी जितने भी कार्य हो सकते हैं, ग्राम पंचायत उन सभी को करती है।

पंचायत अदालत या ग्राम कचहरी ग्रामों के छोटे मोटे झगड़ों तथा दीवानी के थोड़ी सम्पत्ति से सम्बन्ध रखने वाले मुकद्दमों को तय करती है। यहाँ न तो लम्बी चौड़ी कोर्ट फीस देनी पड़ती है और न वकील वैरिस्टरों का ही प्रवेश है। अतः यहाँ न्याय की व्यवस्था बहुत ही सस्ती है। पंचों को सारी बातें मालूम रहती हैं और वे तथ्यों के आधार पर दूध का दूध और पानी का पानी करते हैं।

पंचायतों के व्यय के लिए सरकारी सहायता भी मिलती है और कर लगाकर भी आवश्यक धन जुटाया जाता है।

लाभ—पंचायत-राज्य ने गाँवों को अनेक लाभ पहुँचाये हैं। सत्ता के विकेन्द्रीकरण हो जाने से ग्रामों के प्रबन्ध में सुविधा रहती है। ग्राम निवासी अपनी सुविधा के अनुसार कम समय और कम खर्च में शिक्षा, सफाई, यातायात आदि जन-हित कार्यों को कर लेते हैं। पंचायती अदालतों के द्वारा न्याय सरलता के साथ मिल जाता है। जमीदारी उन्मूलन के बाद तो इन पंचायतों का कार्य और भी अधिक बढ़ गया है।

दोष—उक्त लाभों के साथ-साथ इस व्यवस्था में कई दोष भी हैं। चुनावों में जातीयता शक्तिमत्ता आदि के कारण योग्य व्यक्ति पंचायतों में नहीं पहुँच पाते, अतः उसका कार्य सुचारु रूप से नहीं चलता। कुछ लोग अनुचित रीति से धन कमाते हैं और ठेके आदि में रिश्वत खाते हैं। यह भी देखा जाता है कि पंचायती अदालत के पंच भी धन या अन्य किसी दवाब के कारण उचित निर्णय नहीं दे पाते। न्याय में व्यय न होने के कारण छोटी-छोटी बातों के मुकद्दमे भी यहाँ पहुँचते रहते हैं, जिससे पारस्परिक शत्रुता की वृद्धि होती है।

उपसंहार—निःसन्देह ग्राम पंचायत एक उपयोगी तथा लाभप्रद संस्था है। यद्यपि आजकल उक्त दोषों के कारण उससे पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं हो रहा है, किन्तु जैसे-जैसे ग्रामीण जनता शिक्षित होती जायगी और वह जातीय द्वेष, साम्प्रदायिक मनमुटाव, दलबन्दी, शत्रुता आदि को छोड़कर पंचायत राज्य का उद्देश्य समझती जायगी, भारतीय ग्राम सुखी और सम्पन्न होने लगेंगे। वहाँ न कोई दुखी होगा और न दरिद्र। पंचायत राज गाँवों की काया पलट देगा और वहाँ की धरती को सुजला, सुफला और शस्य श्यामला बना देगा। बापू का स्वप्न साकार हो जायगा और हम स्वाभिमान के साथ कहेंगे—

अहा ! ग्राम जीवन भी क्या है,
क्यों न इसे सबका मन चाहे।

नोट—उत्तर प्रदेश के छात्रों को केवल उत्तर प्रदेश का स्वरूप और बिहार के छात्रों को केवल बिहार का स्वरूप ही लिखना चाहिए।

बाढ़ का वर्णन

१—प्रस्तावना, २—समय तथा प्रारम्भ, ३—हानि, ४—उपसंहार।

प्रस्तावना—संसार में सब कोई वृद्धि चाहता है ! माँ अपने बेटे की वृद्धि चाहती है, नौकर अपने वेतन की वृद्धि चाहता है, विद्यार्थी परीक्षा में अङ्कों की वृद्धि चाहता है तथा वृक्ष अपने फूलों पत्तों की वृद्धि चाहता है, और 'बाढ़' इस वृद्धि का ही तो दूसरा नाम है फिर यदि ग्रीष्म की विरल, जल नदियाँ अपने जल की वृद्धि की कामना करें तो इसमें उनका दोष क्या है। पर अति सर्वत्र वर्जयेत् (अति सबकी बुरी होती है) नियम के अनुसार यहाँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वृद्धि जब अपनी सीमा का अतिक्रमण कर जाती है तब उसकी यही वृद्धि या बाढ़ सबको दुःखदायी हो जाती है और तब सब उसकी भर्त्सना तथा निन्दा करने लगते हैं। गत वर्ष अगस्त १९१८ में गंगा में इसी प्रकार की बाढ़ आई थी।

समय तथा प्रारम्भ—श्रावण का मास था। ऋतुओं की रानी वर्षा अपने समस्त वैभव तथा समृद्धि के साथ संसार पर शासन कर रही थी। शस्यश्यामला भूमि उसके स्वागत में पलक पाँवडे बिछाये हुए थी। पशु-पक्षी किलोल करते हुए आनन्द विभोर हो रहे थे। नदियाँ भी अपने पूर्ण यौवन में उफनती हुई चली जा रही थीं। सब कुछ ठीक था और—

'God's in His Heaven And all's right with the world'

का कथन अक्षरशः सत्य प्रतीत हो रहा था। किन्तु

"दिग्दाहों' से घूम उठे या जलधर उठे क्षितिज तट से"

की कहानी कही जाने लगी। चारों ओर दूर-दूर तक घनघोर वर्षा होने लगी। लगभग १५ दिन तक वरुणदेव का अजस्त्र जलदान चलता रहा। चारों ओर जल ही जल थी और कामायनी के जलप्लावन की घटना याद आ रही थी।

पहाड़ों पर तथा मैदानों में घनघोर वर्षा हुई थी, फलतः उत्तर प्रदेश की सारी नदियाँ बाढ़ ग्रस्त थीं। रेडियो तथा समाचार पत्र बाढ़ों के समाचारों से भरे रहते थे। रेडियो ने समाचार सुनाया कि कानपुर में गंगा का पानी खतरे के निशान को पार गया है। सुनते ही दिल दहल गया। हे भगवान, अब क्या होने वाला है निरन्तर वर्षा से दुखी होकर मकान पहले ही भूमिसात हो चुके थे। हमारा गाँव 'टापू' बना हुआ था, बाहर जाने का मार्ग न था। यातायात के सभी साधन ठप्प थे। सरकारी घोषणा हुई कि गाँव को खतरा है। अतः हमें गाँव खाली कर देना चाहिये। घोषणा सुनकर कुछ लोग जैसे-तैसे पड़ोस के गाँव को चले गये, पर अपनी सारी सम्पत्ति और पशुओं को छोड़कर भागना मुझे अच्छा न लगा। भगवान के भरोसे मैं वहीं रह गया।

दृश्य—गंगा अपने पूरे वेग में थी। उसकी उत्ताल तरंगें उछल-उछल कर फन फैलाए क्रुद्ध सर्पों की भाँति फुसकार रही थी। लहरों के निरंतर थपेड़ों से किनारे की ऊँची-ऊँची कगारें धड़ाधड़ पानी में गिर रही थीं। उनके गिरने की आवाजों से सारा वातावरण भयङ्करता से गूंज रहा था। मेरे देखते देखते गङ्गा के थपेड़ों से किनारे का एक पक्का घाट एक बूढ़े बैल के साथ पानी में चला गया। बेचारे बैल ने बाहर निकलने के लिये बहुतेरा प्रयत्न किया, पैर पूंछ पटके, पर उसकी एक न चली और सदा के लिये गंगा की गोद में विलीन हो गया। सामने ही एक छप्पर बहा चला आ रहा था। उस पर एक माँ अपने दुधमुँहे बच्चे सहित आतंकित अवस्था में बैठी थी। हम लोगों को देखकर वह सहायता के लिये चिल्लाई। इतने में उसकी गोद का बच्चा उसके हाथों से निकलर छप्पर पर गिरा और लुढ़क कर गंगा की क्रूर लहरों में समा गया। वह उसे पकड़ने के लिए झुकी, डगमगाई और वह भी गंगा में चली गई। बड़े-बड़े वृक्ष तिनकों की तरह बहे चले जा रहे थे। उनकी डालियों से ठिठुरे हुए साँप लिपटे हुए थे। भय का साम्राज्य छाया हुआ था।

गंगा का पानी गाँव में पहुँच चुका था। वहाँ उसका इतना वेग न था, किन्तु निरन्तर वर्षा तथा पानी के लगातार भरे रहने से अच्छे मकान भी गिर रहे थे। आदमी अपने अपने सामानों को ढो-ढो कर लिये जा रहे थे। पशु पक्षी सभी दुःखी थे।। बड़ा ही करुणाजनक दृश्य था। मीलों तक फैला हुआ गंगा का इतना विशाल रूप पहले कभी न देखा गया था। लगभग १० दिन तक यही दशा रही। इसके बाद गंगा का पानी धीरे-धीरे कम हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
एक मास में गाँव तथा मार्गों में भरा हुआ पानी हटा और रोते बिलखते ग्रामवासी अपने घरों को लौट आये।

हानि—हमारे देश में प्रति वर्ष इस प्रकार की बाढ़ें कहीं न कहीं आया ही करती हैं। बाढ़ से धन जन की अपार हानि होती है। खेतों में खड़ी फसलें नष्ट हो जाती हैं, जिससे खाद्यान्न तथा चारे की भयंकर कमी सामने आती है। मकान गिर पड़ते हैं। एक प्रकार से बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र का सारा आर्थिक ढांचा ही नष्ट भ्रष्ट हो जाता है, और वह क्षेत्र एक लम्बे समय तक अभाव की चक्की में पिसता रहता है। यद्यपि सरकार तथा जनता के द्वारा बाढ़ पीढ़ितों की सहायता के लिये अनेक प्रयत्न किये जाते हैं। पर वे अपने क्षेत्र के निवासियों के दुःखों को पूरी तरह से दूर नहीं कर पाते।

बाढ़ के समाप्त होने पर संकट और भी बढ़ जाता है। गड्ढों में पानी सड़ता रहता है, जिससे दुर्गन्ध फैलती है और मलेरिया के मच्छर अपने परिवार की वृद्धि कर अपना करतब दिखाने लगते हैं। बाढ़ के कारण मरे हुए पशु पक्षी भी सड़कर दुर्गन्ध फैलाते हैं। कुओं में बाढ़ का पानी भर जाता है और वह पीने योग्य नहीं रहता। विवशता में उसे ही पीना पड़ता है, जिससे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। बाढ़ के उतरने पर नदी अपना मार्ग भी बदल देती है, जिससे बहुत सी असुविधाएँ सामने आती हैं। इस प्रकार बाढ़ एक लम्बे समय तक कष्ट का कारण बनी रहती है।

यद्यपि बाढ़ से हानि अधिक है फिर भी उससे एक लाभ है और वह यह कि बाढ़ के समय नदी अपने साथ उपजाऊ मिट्टी बहा लाती है और उसे मैदान में फैला देती है, जिससे वह प्रदेश उपजाऊ हो जाता है। भारत में यमुना, गङ्गा और सिन्धु के मैदान इसी प्रकार की मिट्टी से बने होने के कारण अत्यधिक उपजाऊ हैं।

उपसंहार—मानव आदि काल से प्रकृति से संघर्ष करके उस पर विजय प्राप्त करता चला आया है, वह बाढ़ को रोकने के अनेक प्रयत्न कर रहा है आधुनिक वैज्ञानिक युग में सभी कुछ सम्भव है। चीन आदि देशों में तो उसने सफलता प्राप्त कर भी ली है। वह दिन दूर नहीं, जब हमारे भारत में भी बाढ़ को रोकने के प्रयत्नों में हम सफल हो जायेंगे। परमात्मा करे वह दिन शीघ्र आ जाये।

शठ सुधरहिं सत्संगति पाई

(सत्संगति)

१—प्रस्तावना। २—लाभ। (क) आत्म-संस्कार (ख) ज्ञान तथा अनुभव की वृद्धि (ग) सुख की प्राप्ति, (घ) यश तथा सम्मान की प्राप्ति (ङ) धैर्य प्राप्ति (च) चरित्र-निर्माण। ३—उदाहरण। ४—कुसंगति से हानि। ५—उपसंहार।

प्रस्तावना—महाकवि तुलसी ने सत्संगति का प्रभाव बतलाते हुये कहा है—

शठ सुधरहिं सत्संगति पाई, पारस परम कुधातु सुहाई।

चौपाई का अर्थ स्पष्ट है। मूर्ख (धूर्त या दुष्ट) भी सज्जनों की संगति को पाकर सुधर जाता है। जिस प्रकार पारस पत्थर को छूकर लोहा भी सोना हो जाता है। जब दुष्ट भी सत्संगति के प्रभाव से सर्वश्रेष्ठ महान बन जाते हैं तब साधारण पुरुषों का तो कहना ही क्या है।

'सत्संगति' दो शब्दों से मिलकर बना है—सत् और संगति और इसमें पुरुष समास होने के कारण इसका अर्थ है सत् अर्थात सत्पुरुषों की संगति। जो पुरुष अपने हानि लाभ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की चिंता न करके सदा दूसरों के हित में लगे रहते हैं, वे सत्पुरुष कहे जाते हैं। इन सत्पुरुषों के साथ रहना या इनके चरित्र से प्रेरणा प्राप्त करना ही सत्संगति कहा जाता है।

लाभ—(आत्मसंस्कार) सत्संगति का प्रभाव महान् है। इसके प्रभाव से दुष्ट भी श्रेष्ठ बन जाते हैं, पापी भी पुण्यात्मा हो जाते हैं, दुराचारी भी सदाचारी हो जाते हैं। कहने का भाव यह है कि सत्संगति के प्रभाव से मनुष्य की आत्मा शुद्ध हो जाती है, उसके कल्मष दूर हो जाते हैं और वह आनन्द विभोर होकर आदर्शोन्मुख हो जाता है। सप्त ऋषियों की संगति से व्याध आदि कवि बाल्मीक बन गये थे। गांधी जी के प्रभाव से अनेक पुरुष सुधर गये थे। गोस्वामी तुलसीदास जी ने सत्संगति की प्रशंसा में कहा था—

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक संग।
तुलिय न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग॥

ज्ञान तथा अनुभव की वृद्धि—सज्जन ज्ञान के भण्डार होते हैं। उनकी आत्मा मन और बुद्धि विशाल होती है, अतः वे सरलता से ही ज्ञान को ग्रहण कर आत्मसात कर लेते हैं, उनके साथ रहने से साथी पुरुष भी उनके ज्ञान तथा अनुभव से अपने ज्ञान और अनुभव की वृद्धि कर लेते हैं। ज्ञान और अनुभव की वृद्धि से जीवनयापन में सुविधा रहती है।

सुख की प्राप्ति—सत्संगति से मनुष्य दुर्गुणों से दूर रह कर सद्गुणी बन जाता है। सद्गुणों के प्रभाव से उसे जीविका के उपार्जन में सुविधा रहती हैं और उसे सुख की प्राप्ति होती है।

सत्पुरुष सदा ही अपने साथियों के दुखों को दूर कर सुख देते हैं, अतएव सत्संगति करने वाले को सुख प्राप्ति होती है।

यश तथा सम्मान की प्राप्ति—सत्संगति के प्रभाव से मनुष्य श्रेष्ठ तथा सद्गुणी बन जाता है। श्रेठ तथा सद्गुणी पुरुष का यश सर्वत्र फैल जाता है और सब उसका सम्मान करते हैं।

धैर्य की प्राप्ति—आपत्ति के समय सत्पुरुष अपने साथी को धैर्य बँधाते हैं, उसकी सहायता करते हैं और स्वयं साथ रह कर उसकी आपत्ति को दूर करते हैं। इस प्रकार सत्संगति करने वाले पुरुष के हृदय में आशा और धैर्य का संचार होता है।

चरित्र निर्माण—सत्संगति के प्रभाव से मनुष्य का चरित्र बन जाता है किशोरावस्था तक तो चरित्र निर्माण के लिए सत्संगति की (चरित्र निर्माण) सर्व प्रधान आवश्यकता है।

वास्तव में सत्संगति से जितने लाभ हैं, उनका वर्णन करना असम्भव है। कहा भी है—

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचिसत्यं,
मनोन्नति दिशति पापमपा करोति।
चेतः प्रासादयति दिक्षु तनोति कीर्ति,
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुसाम्॥

सत्संगति बुद्धि की मूर्खता को हरती है, वाणी में सत्यता को सींचती है, मान की उन्नति करती है, पाप को दूर करती है, चित्त को प्रसन्न करती है और दिशाओं में कीर्ति फैलाती है।

उदाहरण—सत्संगति अनादिकाल से मानव जाति का हित करती आई है। थोड़े समय की सत्संगति ने मनुष्यों के जीवन प्रवाह को ही बदल दिया है

तुलसीदास का कथानक उक्त कथन की सत्यता को प्रकट करता है। तुलसीदास अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पत्नी के मायके चले जाने पर कामान्ध हो मुर्दे के द्वारा नदी को पार कर वहाँ पहुँचे। वहाँ रत्नावली के एक छोटे से उपदेश ने उन्हें राम भक्त तथा महाकवि बना दिया। क्या यह रत्नावली के सत्संग का प्रभाव नहीं है, जिससे तुलसीदास का नाम आज भी संसार भर में प्रसिद्ध है ?

महाकवि कालिदास की कथा भी हमारे कथन की पुष्टि करती है। कालिदास पहले इतने मूर्ख थे कि वे जिस डाल पर बैठे थे, उसीको काट रहे थे। रत्नावली की संगति से वही मूर्ख विश्व के श्रेष्ठ कवियों में गिना जाता है।

बाल्मीकि, नारद, अगस्त्य आदि के कथानक भी सत्संगति की महिमा का गान कर रहे हैं। तुलसीदासजी ने भी कहा है—

मज्जन फल देखिय तत्काला, काक होइँ पिक, बकउ मराला।
बाल्मीकि नारद घट जोनी, निज निज मुखन कही निज होनी।
जलचर थलचर नभचर नाना, जे जड़ चेतन जीव जहाना।
मति कीरति गति भूति भलाई, जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई॥
सो जानव सत्संग प्रभाऊ, लोकहु बेद न आन उपाऊ।

कुसंगति से हानि—सत्संगति से जितने लाभ हैं, कुसंगति से उतनी ही हानियाँ हैं। अच्छे से अच्छे पुरुष भी दुष्टों की संगति में रहने से नीच तथा पापी बन जाते हैं। कहा भी है—

तुलसी संगति साधु की, हरै और की व्याधि।
ओछी संगति क्रूर की, आठों पहर उपाधि॥

दुष्टों की संगति में रहने से सदा कष्ट ही मिलते हैं। जुआरियों और चोरों के साथ रहने वाले साधारण पुरुष भी उनके साथ जेल चले जाते हैं। रावण ने सीता को चुराया था, किन्तु उसके पास रहने वाला समुद्र बाँधा गया।

उपसंहार—उक्त कथन से स्पष्ट है कि मानव जीवन की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए सत्संगति आवश्यक है और कुसंगति सर्वथा त्याज्य है। पं० रामचन्द्र शुक्ल ने ठीक कहा है—

'कुसंग का ज्वर सबसे भयानक होता है।………किसी युवा पुरुष की संगति यदि बुरी होगी, तो वह उसके पैर में बँधी चक्की के समान होगी, जो उसे दिन दिन अवनति के गड्ढे में गिराती जायगी और यदि अच्छी होगी तो सहारा देने वाली बाहु के समान होगी, जो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायगी।'

परोपकार

'पर हित सरिस धर्म नहि भाई'

१—प्रस्तावना (परिभाषा), २—महत्तम धर्म, ३—परोपकार का क्षेत्र, ४—भारतीयता के अनुकूल तथा उदाहरण, ५—लाभ, (क) आत्मिक शान्ति की प्राप्ति, (ख) आशीर्वाद की प्राप्ति, (ग) यश तथा सम्मान की प्राप्ति, (घ) समाज की उन्नति, ६—उपसंहार।

प्रस्तावना (परिभाषा)—संसार में विभिन्न प्रकार के मनुष्य पाये जाते हैं। उनमें से कुछ ऐसे होते हैं जो अपने हित की चिन्ता न करके सदा दूसरे के कार्यों में संलग्न रहते हैं। ऐसे पुरुष ही परोपकारी कहे जाते हैं और उनके द्वारा दूसरे के लिए किए जाने वाले कार्यों को परोपकार कहा जाता है।

परोपकार दो शब्दों से मिलकर बना है, पर+उपकार अर्थात् दूसरे का हित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

साधन। जो कार्य अपने हित, यश, सम्मान आदि की भावना को छोड़कर सर्वथा दूसरों के हित की इच्छा से किए जाते हैं, वे ही कार्य परोपकार की श्रेणी में आते हैं। वास्तव में परोपकार मनुष्य के हृदय में निवास करने वाला एक ऐसा देवी गुण है जो इसे मनुष्य की कोटि से उठाकर देवताओं की कोटि में रख देता है। इसका जन्म प्रेम तथा दया के संयोग से होता है। यह एक ऐसी भावना है जो विशाल हृदय तथा व्यापक दृष्टि कोण रखने वाले मनुष्य के अन्दर रहती है। वे पुरुष जो सदा केवल अपने ही बारे में सोचते हैं और जिनकी आँखों पर स्वार्थ का चश्मा लगा है, इसका अनुभव नहीं कर सकते।

महत्तम धर्म—परोपकार मनुष्य का सबसे बड़ा धर्म है। जिस मनुष्य में परोपकार नहीं है गुप्त जी के शब्दों में वह मनुष्य भी कहलाने योग्य नहीं है—

वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।

अपना पेट तो पशु-पक्षी भी भर लेते हैं। पर जो दूसरों का हित करता है, वही मनुष्य कहे जाने का अधिकारी है। परोपकार ही एक ऐसा गुण है जो मनुष्यों को पशुओं से अलग करता है। अतएव परोपकार की प्रशंसा में कहा गया है—

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।

परोपकार का क्षेत्र—परोपकार का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और इसे करने के विभिन्न प्रकार हैं— विद्वान पुरुष अपनी विद्या द्वारा अशिक्षित मनुष्यों को शिक्षित करके देश जाति तथा समाज का परोपकार कर सकते हैं। जो पुरुष शरीर से हृष्ट पुष्ट है वे अपनी शारीरिक शक्ति से परोपकार कर सकते हैं। वे अपने श्रम से सार्वजनिक स्थानों (कुओं, धर्मशाला, सड़क स्कूल, अस्पताल आदि) के निर्माण कार्य में सहयोग देकर सरलता से परोपकार कर सकते हैं, वे दलितों गरीबों और शोषितों पर अत्याचार करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध खड़े होकर और उनकी रक्षा करके अपनी परोपकार की भावना का परिचय दे सकते हैं। धनी पुरुष अपने धन के द्वारा गरीबों को भोजन-वस्त्र आदि से सहायता करके, होनहार विद्यार्थी को वजीफे, पुस्तकें आदि देकर, रोगियों के लिये औषधि आदि का प्रबन्ध करा कर, विद्यालय, अस्पताल आदि का निर्माण कराकर, परोपकार कर सकते हैं। जिन व्यक्तियों के पास उक्त साधन में से कोई भी साधन नहीं है, वे भी अपने मन और हृदय से परोपकार कर सकते हैं। किसी दुखी मनुष्य को धैर्य बंधाना, प्यासे को पानी पिलाना, अन्धे को रास्ता दिखाना, अवसर आने पर सही और नेक सलाह देना आदि ऐसे अनेक कार्य हैं, जिनमें न किसी विशेष साधन की आवश्यकता है और न किसी विशेष प्रयत्न की। एक आवश्यकता है तो केवल ऐसे मन की, जो सदैव दूसरों के हित की बात सोचता रहे।

भारतीयता के अनुकूल तथा उदाहरण—परोपकार की भावना भारतीय संस्कृति तथा भारतीय विचारधारा के सर्वथा अनुकूल है। त्याग तथा दान को सदा ही भारत में प्रधानता दी गई है। इस त्याग और दान का मूर्त रूप ही परोपकार है। त्याग और दान जब कभी कार्य रूप में लाये जाते हैं, वे परोपकर को ही जन्म देते हैं। भारत का इतिहास इस प्रकार के अनेक महापुरुषों के उदाहरणों से भरा पड़ा है जिन्होंने परोपकार के लिए अपना सर्वस्व तक दे डाला था। दधीच ने देवताओं की रक्षा के लिए अपनी हड्डियों को देकर अपने प्राणों का उत्सर्ग किया था। राजा शिव ने बाज से कबूतर की रक्षा के लिये अपने शरीर का माँस काट-काट कर दिया था। भगवान् महावीर तथा गाँधी ने परोपकार के लिये अनेक कष्ट सहे थे।

परोपकार के लाभ—(आत्मिक शान्ति की प्राप्ति,—यद्यपि परोपकारी अपने हित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा लाभ की दृष्टि से परोपकार नहीं करता, किन्तु इससे उसे भी अनेक लाभ होते हैं। आत्मिक शान्ति इनमें सबसे प्रधान है। परोपकार करने वाले का अन्तःकरण पवित्र तथा उज्ज्वल हो जाता है। उसकी आत्मा दीप्त तथा तेजोमय हो जाती है। परोपकार करने वाले के मन में यह भावना रहती है कि वह अपने कर्तव्य को पूरा कर रहा है। इस भावना से उसके मन तथा अत्मा को जो शान्ति और सन्तोष मिलते हैं, वे लाखों रुपयों को खर्च करके, बड़े-बड़े पद तथा सम्मान से भी प्राप्त नहीं होते।

आशीर्वाद की प्राप्ति—परोपकार करने से दीनों तथा दुखियों को आनन्द तथा सुख की प्राप्ति होती है। अनकी आत्मा प्रसन्न होकर परोपकार करने वाले को आशीर्वाद देती हैं। सच्ची आत्मा से निकला हुआ आशीर्वाद कभी व्यर्थ नहीं जाता और परोपकार करने वाले पुरुष का जीवन सुखी तथा समृद्ध बन जाता है।

यश तथा सम्मान की प्राप्ति—परोपकार करने वाले पुरुष का यश राजमहलों से लेकर झोंपड़ियों तक फैल जाता है। उसका सर्वत्र आदर होता है। जन-जन में उसकी गाथा गाई जाती है, और कवि तथा लेखक उसकी जीवन कथा लिखते हैं।

समाज की उन्नति—परोपकार करने से अनेक व्यक्तियों का लाभ होता है। वे अपनी आपत्तियों को दूर करके सुखी और समृद्धि होकर उन्नति की ओर अग्रसर होते हैं। इन्हीं व्यक्तियों की उन्नति तथा समृद्धि से समाज की उन्नति तथा समृद्धि होती है।

परोपकारी व्यक्ति का जीवन आदर्श रूप होता है। समाज के अन्य व्यक्ति उसे आदर्श मानकर उसकी पूजा करते हैं। उससे प्रेरणा पाकर अपने जीवन को भी आदर्श तथा श्रेष्ठ बनाने का प्रयत्न करते हैं। भगवान राम तथा महात्मा बुद्ध के जीवन से असंख्य मानवों ने प्रेरणा प्राप्त कर उन्नति की है। इस प्रकार की वैयक्तिक उन्नति ही समष्टि रूप में सामाजिक उन्नति बन जाती है।

वास्तव में परोपकारी के कारण ही समाज टिका हुआ है। यदि सारा समाज स्वार्थ लिप्त हो जाय, सब कोई केवल अपनी ही चिन्ता करे, तो फिर समाज कैसे टिक सकता है। अतः सामाजिक उन्नति के लिए परोपकार की अत्यन्त आवश्यकता है।

परोपकार के उक्त गुणों के कारण ही परोपकार को सर्वश्रेष्ठ पुण्य कहा गया है—

अष्टा दश पुराण में, कियो व्यास निरधार।
महा पुण्य उपकार है, महा पाप अपकार॥

उपसंहार—आज सारा संसार दुःखी है। मानव समाज की अवनति होती जा रही है। आज एक देश दूसरे देश को, एक समाज दूसरे समाज को, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को नष्ट भ्रष्ट करने के लिए तुला बैठा है। इन सबका मूल कारण परोपकार की भावना का अभाव है जिसको समझें, ग्रहण करें और तुलसी के राम के साथ कहें—

पर हित सरिस धर्म नहीं भाई।

आधुनिक काल का सर्वाधिक लोकप्रिय लेखक
(मुन्शी प्रेमचन्द)

१—प्रस्तावना, २—जीवनी तथा परिचय, ३—वर्ण्य-विषय, ४—उपन्यास कला, ५—कहानी कला, ६—भाषा तथा शैली, ७—उपसंहार।

प्रस्तावना—साधारण जनता को कहानियों तथा उपन्यासों से जितना प्रेम होता है, उतना साहित्य की अन्य किसी विधा से नहीं होता। बात है भी ठीक, कठिनाइयों और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपन्यासों में वह अपने जीवन की अनुकृति को सरलता से सीधे-साधे रूप में पा लेती है, जबकि साहित्य के अन्य क्षेत्रों में उसे जीवन की यह अनुकृति व्यंजनात्मक ढङ्ग से मिलती है। यही कारण है कि उपन्यास सम्राट मुन्शी प्रेमचन्द आधुनिक काल के सर्वाधिक लोक प्रिय लेखक हैं। सर्वसाधारण जनता के लिये मुन्शी जी ने उपन्यास दिये, कहानियाँ दीं और नाटक दिये तथा मननशील व्यक्तियों की बौद्धिक सन्तुष्टि के लिये इन्होंने विचारपूर्ण निबन्ध लिखे। वास्तव में प्रेमचन्द जी जनता के लेखक थे। उन्होंने सर्व प्रथम कथा साहित्य और जीवन के वास्तविक रूप में एक रूपता तथा समरसता स्थापित की। उन्होंने अपनी कृतियों में जन साधारण की समस्याओं का समाधान किया और कथा साहित्य को जासूसों तथा तिलिस्मों के चक्कर से निकाल जीवन क्षेत्र की लहराती हुई सुरम्य क्यारियों में भ्रमण करने के लिये आमन्त्रित किया और उसे वहाँ की शुद्ध वायु से पुष्ट बनाकर आधुनिक जीवन की ग्रन्थियों तथा संघर्षों से लड़ने योग्य बना दिया। भाषा के क्षेत्र में मुन्शी जी ने अपना नया आदर्श उपस्थित किया। उन्होंने भाषा को कृत्रिमता से दूर कर स्वाभाविक, सरल, प्रौढ़ तथा प्रभाव युक्त बनाया। संक्षेप में मुन्शी प्रेमचन्द जी जनता के सामने एक कल्पवृक्ष के रूप में आए, जिसकी शीतल छाया में बैठने से उसके सम्पूर्ण अवसाद दूर हो गए और उसकी मनोकामनाएँ पूर्ण हो गईं। यही कारण है कि प्रेमचन्द जी को आधुनिक काल का सर्वाधिक लोकप्रिय लेखक कहा जाता है।

विशेष—इसके आगे शैलियों के प्रकरण में लिखी हुई प्रेमचन्द जी की शैली को उक्त शीर्षकों के अनुसार लिख देना चाहिए।

सफलता के रहस्य

१—प्रस्तावना। २—साहस। ३—धैर्य। ४—स्वावलम्बन। ५—आलस्य का का अभाव। ६—व्यवहार में सत्यता। ७—लक्ष्य के प्रति निष्ठा। ८—स्वास्थ्य। ९—उदाहरण तथा उपसंहार।

प्रस्तावना—जाको जस है जगत में, जगत सराहै जाहि।
ताको जीवन सफल है, कहत अकब्बर साहि॥

उक्त दोहे में कवि ने जीवन की सफलता का एक सीधा-साधा रहस्य स्पष्ट रूप से अंकित किया है। और यह है यश। पर यह यश स्वयं ही कोई एक मूल वस्तु नहीं है। इसको भी प्राप्त करने के अनेक क्षेत्र हैं, अनेक मार्ग हैं, और अनेक प्रकार हैं। किसी का धन के क्षेत्र में यश होता है, किसी की सराहना उसकी विद्या के कारण होती है और कोई परोपकार के कारण ही मनुष्यों के द्वारा याद किया जाता है। इस प्रकार सफलता का वास्तविक रहस्य क्या है यह एक विकट पहेली है, जिसको विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से सुलझाया है। इतना तो सभी मानते हैं कि मरणोपरान्त भी मनुष्य जिसका यशोगान करते हैं और जिसके पद चिह्नों पर चल कर उन्नति प्राप्त करना चाहते हैं, उसका जीवन वास्तव में सफल है। उक्त दोहे के लेखक का तात्पर्य भी यही है।

यह तो हुई सामाजिक बात जिसके जितने अर्थ लगाने की इच्छा हो लगाये जा सकते हैं, पर 'जीवन में सफलता का क्या रहस्य है। यह कैसे प्राप्त होती है ?' पर विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साहस धैर्य, स्वावलम्बन, आलस्य का अभाव, व्यवहार में सत्यता, लक्ष्य के प्रति निष्ठा आदि ऐसे गुण हैं, जिन पर आचरण करने से मनुष्य सफलता प्राप्त कर सकता है और कर चुका है। संक्षेप में इसका विवरण निम्न है—

साहस—जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये साहस की सर्व प्रधान आवश्यकता है। प्रायः देखा जाता है कि साहसहीन धनी तथा बली पुरुष भी जिन कार्यों को नहीं कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पाता, उन्हें निर्धन तथा निर्बल किन्तु साहसी व्यक्ति आसानी से कर लेते हैं। साहस के अभाव में व्यक्ति किसी कार्य को आरम्भ करने में ही हिचकिचाता है। यदि वह किसी प्रकार कार्य को आरम्भ भी कर देता है, तो थोड़ी सी भी बाधा के आने पर उसे छोड़ देता है। जब कार्य आरम्भ ही नहीं किया जायगा या आरम्भ करके बीच में ही छोड़ दिया जायगा, तब सफलता कैसे प्राप्त हो सकती है? उसकी प्राप्ति के लिए तो ऐसे साहस की आवश्यकता है जो विघ्नों के आने पर उनसे लड़ता हुआ आगे बढ़ता जाये और अपने लक्ष्य को प्राप्त किये बिना न रुक सके। ऐसे ही व्यक्ति को ध्यान में रखकर संस्कृत के एक कवि ने कहा है—

प्रारभ्यते न खलु विघ्न भयेन नीचैः,
प्रारभ्य विघ्न विहिता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
प्रारभ्य चोत्तम जना न परित्यजन्ति॥

साहस रखकर जीवन के क्षेत्र में कार्य करने में लगा रहने को ही सफलता के लिये आवश्यक बतलाते हुए श्री मैथलीशरण गुप्त ने कहा है—

कुछ काम करो कुछ काम करो,
जग में रहकर कुछ नाम करो।
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो,
समझो जिसमें यह व्यर्थ न हो।
कुछ तो उपयुक्त करो तन को,
नर हो न निराश करो मन को।

धैर्य—सफलता के लिए धैर्य की अत्यन्त आवश्यकता है। कोई भी कार्य कितनी भी लगन अथवा परिश्रम से किया जाय, उसकी फल प्राप्ति में कुछ समय लगता है। यदि हममें धैर्य न होगा, तो निराश होकर कार्य को बीच में छोड़ देंगे या उतावले होकर कार्य को इस प्रकार से करेंगे कि उसके सफल होने पर भी उससे पूर्ण लाभ न होगा। अतएव धैर्य पूर्वक कार्य करने का उपदेश देते हुए एक कवि ने कहा है—

धीरे-धीरे होत है धीरै सब कुछ होय।
माली सींचे केवड़ा, रितु आये फल होय॥

स्वावलम्बन—स्वावलम्बन एक ऐसा वृक्ष है, जो जीवन में सफलता प्राप्ति के लिये परम आवश्यक है। जो व्यक्ति अपने बल-बूते पर किसी कार्य को करता है तो उसे करने अच्छी नहीं लगती। यदि कोई उसकी सहायता नहीं करता, तो भी वह अपना कार्य कर
कल की विषम परिस्थितियों में यह सम्भव भी नहीं है कि कोई देश निश्चित रूप से सदा अन्न देता ही रहेगा। युद्ध काल में मार्ग में इतना भय रहता है कि अन्न से भरे हुए जहाजों का दूसरे देशों तक पहुँचना भी कठिन हो जाता है। अतः युद्ध काल में दूसरे देशों में अन्न प्राप्ति की कोई निश्चित गारन्टी नहीं दी जा सकती।

दूसरे देशों के अन्न का उपभोग करने में हमें हीनता का अनुभव होता है, जिससे हमारे आत्म-सम्मान को धक्का लगता है।

दूसरे देशों की जलवायु हमारे देश की जलवायु से भिन्न होती है, अतः वहाँ का अन्न भी हमारे देशवासियों के अनुकूल नहीं पड़ता और उसके उपयोग से पेचिश आदि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं और भोजन का मुख्य उद्देश्य-शक्ति को बढ़ाना पूरा नहीं हो पाता।

प्रतिवर्ष विदेशों से अन्न मँगाने में हमारी विदेशी मुद्रा का एक बड़ा भाग व्यय हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

कार्य को पूर्ण सफलता से नहीं कर पाता। ऐसे ही मनुष्य को उपदेश देते हुए कहा गया है—

कालिह करै सो आज करि, आज करै सौ अब्ब।
पल में परलै होइगी, फेरि करैगो कब्ब॥

व्यवहार में सत्यता—सफलता के लिये मनुष्य के व्यवहार में सत्यता का होना भी आवश्यक है। व्यापार हो या नौकरी अथवा कोई अन्य कार्य असत्य व्यवहारी का कोई भी विश्वास नहीं करता। विश्वास के अभाव में उसे सहयोग नहीं मिलता और सहयोग के अभाव में सफलता भी दूर रहती है।

लक्ष्य के प्रति निष्ठा—अपने सामने किसी एक लक्ष्य को रखकर उसे प्राप्त करने के लिये अपनी शक्ति के अनुसार चेष्टा करने से उचित समय पर, सफलता अवश्य ही मिलती है। यह तो हो सकता है कि एकाध बार सफलता न मिले, पर यदि लक्ष्य की ओर ध्यान रहेगा और असफलता के होने पर भी उसे प्राप्त करने के लिये प्रयत्न जारी रहेगा, तो सफलता की प्राप्ति अनिवार्य है। इसीलिये तो कहा गया है—

एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।
जो तू सींचे मूल को, फूलै फलै अघाय॥

स्वास्थ्य—स्वस्थ शरीर का होना सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। रोगी व्यक्ति किसी भी कार्य को सफलता पूर्वक नहीं कर पाता।

उक्त गुणों के अतिरिक्त सन्तोष, परोपकार, कृतज्ञता, सहानुभूति, उदारता आदि अनेक ऐसे गुण हैं जिनकी जीवन में सफलता पाने के लिये आवश्यकता होती है।

उदाहरण तथा उपसंहार—वे मनुष्य धन्य हैं, जिनमें ये गुण विद्यमान हैं और सफलता ने जिनका वरण किया है। राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसा, गान्धी, वाशिंगटन आदि ऐसे ही महापुरुष हैं जिनमें प्रायः उक्त सभी गुण विद्यमान थे और सफलता उनके पीछे-पीछे चलती थी। उन्होंने जिस काम को लिया, पूरा करके छोड़ा और संसार के सामने विचित्र आदर्श प्रस्तुत किए। ऐसे व्यक्तियों के कार्य और शब्दों के द्वारा मानवता का असीम उपकार हुआ है और देशों तथा जातियों ने उनके उदाहरणों से उन्नति की है। इन्हीं महापुरुषों को अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुये एक अंग्रेज कवि ने कहा है—

Honour to those whose words or deeds,
Thus help us in our daily needs,
And by their over flow,
Raise us from what is low.

...क रहस्य क्या ... विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से सुलझाया है। इतना तो सभी मानते हैं कि मरणोपरान्त भी मनुष्य जिसका यशोगान करते हैं और जिसके पद चिह्नों पर चल कर उन्नति प्राप्त करना चाहते हैं, उसका जीवन वास्तव में सफल है। उक्त दोहे के लेखक का तात्पर्य भी यही है।

यह तो हुई सामाजिक बात जिसके जितने अर्थ लगाने की इच्छा हो लगाये जा सकते हैं, पर 'जीवन में सफलता का क्या रहस्य है। यह कैसे प्राप्त होती है ?' पर विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि साहस धैर्य, स्वावलम्बन, आलस्य का अभाव, व्यवहार में सत्यता, लक्ष्य के प्रति निष्ठा आदि ऐसे गुण हैं, जिन पर आचरण करने से मनुष्य सफलता प्राप्त कर सकता है और कर चुका है। संक्षेप में इसका विवरण निम्न है—

साहस—जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये साहस की सर्व प्रधान आवश्यकता है। प्रायः देखा जाता है कि साहसहीन धनी तथा बली पुरुष भी जिन कार्यों को नहीं कर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तावना—(भारत की भूतकालीन खाद्य-दशा)—भारत को एक कृषि प्रधान देश कहा जाता है। देश की लगभग तीन चौथाई जनता का जीवन निर्वाह कृषि पर ही निर्भर है। किन्तु आजकल हम नित्य प्रति समाचार पत्रों में पढ़ते रहते हैं कि देश के सामने भीषण अन्न संकट है। हमारे नेता कहते हैं, अन्न का एक एक दाना बचाओ, व्यर्थ के भोजों में भाग मत लो, जूठन मत छोड़ो। इस प्रकार के प्रचार और देश की वर्तमान खाद्य समस्या को देखकर हमें स्वयं अपने पर तरस आने लगता है और भूतकाल के रंगीन चित्र हमारी आँखों के सामने घूम जाते हैं। एक दिन था जब हमारे देश में दूध घी की नदियाँ बहती थीं, अपने भोजन की तो बात ही क्या, यहाँ अथिति को भोजन करना एक आवश्यक कर्तव्य माना जाता था। यहाँ के मनुष्यों का सिद्धान्त था।

अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते।
सतस्मै दुष्कृतं दत्वा सुकृतमादाय गच्छति॥

(जिसके घर से अतिथि अपनी आशाओं की पूर्ति किये बिना ही लौट जाता है, उसे वह अतिथि अपने पापों को देकर उसके पुण्यों को लेकर जाता है।)

भगवान कृष्ण ने गीता में घोषित किया था—भुञ्जन्ते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्म कारणात्।

(जो पापी केवल अपने लिए भोजन पकाते हैं, वे केवल पाप को ही खाते हैं।)

उस समय इस प्रकार की भावनाओं का होना स्वाभाविक ही था, क्योंकि प्रकृति हमारे ऊपर दयालु थी। यथा समय उचित वर्षा होती थी, हमारे खेत हरी भरी खेती से सदा ही लहलहाते रहते थे, हमारे अन्न भण्डार सदा परिपूर्ण रहते थे। अन्न के विषय में अभाव नाम की कोई वस्तु हमारी कल्पना में भी नहीं थी। हम खुद खूब खाते थे और दूसरे देशों की उदर पूर्ति करते थे। पर कुछ ही वर्षों में चित्र का जो रूप बदला है, वह हमारे लिए भयंकर चुनौती है। अन्न के भावों में दस गुनी से लेकर बीस गुनी तक वृद्धि हुई है। आज देश को प्रति वर्ष करोड़ों मन अन्न बाहर से मँगाना पड़ रहा है। भूतकाल की समृद्धि स्वप्नवत प्रतीत होती है और हमारे छोटे-छोटे बच्चे उस पर विश्वास भी नहीं करते।

भारत की वर्तमान खाद्य दशा और विदेशी अन्न का आयात—आज भारत की खाद्य समस्या देश के सामने एक प्रश्न वाचक चिह्न है, जिसको हल किये बिना देश की प्रगति असम्भव है। जब तक पेट नहीं भरता, तब तक शिक्षा, संस्कृति और उन्नति की कोई बात अच्छी नहीं लगती। दूसरे देशों से अन्न मँगाकर कब तक पेट भरा जा सकता है। आज-कल की विषम परिस्थितियों में यह सम्भव भी नहीं है कि कोई देश निश्चित रूप से सदा अन्न देता ही रहेगा। युद्ध काल में मार्ग में इतना भय रहता है कि अन्न से भरे हुए जहाजों का दूसरे देशों तक पहुँचना भी कठिन हो जाता है। अतः युद्ध काल में दूसरे देशों में अन्न प्राप्ति की कोई निश्चित गारन्टी नहीं दी जा सकती।

दूसरे देशों के अन्न का उपभोग करने में हमें हीनता का अनुभव होता है, जिससे हमारे आत्म-सम्मान को धक्का लगता है।

दूसरे देशों की जलवायु हमारे देश की जलवायु से भिन्न होती है, अतः वहाँ का अन्न भी हमारे देशवासियों के अनुकूल नहीं पड़ता और उसके उपयोग से पेचिश आदि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं और भोजन का मुख्य उद्देश्य-शक्ति को बढ़ाना पूरा नहीं हो पाता।

प्रतिवर्ष विदेशों से अन्न मँगाने में हमारी विदेशी मुद्रा का एक बड़ा भाग व्यय हो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाता है और उसके अभाव में हम अन्य आवश्यक वस्तुओं को नहीं मँगा पाते। इस प्रकार विदेशी अन्न का आयात हमारी आर्थिक दशा को क्षीण बनाता है।

कारण—उक्त विवरण से स्पष्ट है कि हमें अपनी पूरी शक्ति से खाद्य-समस्या को हल करना ही होगा। किसी समस्या को हल करने से पहले उसके मूल भूत कारणों पर विचार करना पड़ता है। जब हम अपने देश की खाद्य-समस्या के मूल भूत कारणों पर विचार करते हैं, तो हमें इनके मूल में निम्न कारण दृष्टिगोचर होते हैं—

जनसंख्या की वृद्धि—हमारे देश की जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है, जिसके कारण यहाँ की भूमि पर भार बढ़ता जा रहा है। यहाँ की भूमि बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए पर्याप्त अन्न उत्पन्न करने में असमर्थ है। अतः देश के सामने भीषण अन्न संकट उपस्थित रहता है।

कृषि पद्धति की अविकसित दशा—यहाँ की कृषि करने की पद्धति भी अविकसित तथा पुराने ढङ्ग की है। यहाँ के किसान अशिक्षित होने के कारण नवीन आविष्कारों से कोई लाभ नहीं उठाते। किसानों के खेत छोटे-छोटे तथा बिखरे हुए हैं, अतः खेती की उचित देख भाल और रक्षा नहीं हो पाती।

किसानों की निर्धनता—यहाँ के किसान अत्यन्त ही निर्धन हैं, जिससे वे चाहते हुए भी अच्छे बीज और अच्छी खाद का प्रबन्ध नहीं कर पाते। निर्धनता के कारण उनके पशु भी निर्बल होते हैं—वे खेतों में अच्छी प्रकार से काम नहीं कर पाते।

देश का बँटवारा—देश का बँटवारा हो जाने से भारत को जितनी जनसंख्या मिली, उसी अनुपात से अन्न उत्पादन करने वाली भूमि नहीं मिली। पंजाब तथा सिन्ध के अत्याधिक गेहूँ उत्पन्न करने वाले प्रान्त तथा पूर्वी बंगाल का अधिक चावल उत्पन्न करने वाला भाग विभाजन से पाकिस्तान में चले गये, इससे भी देश की खाद्य समस्या उग्रतर हो गई है।

आर्थिक दृष्टि से उपयोगी अन्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि—किसानों ने भूमि के थोड़े से क्षेत्र में अधिक मूल्य देने वाली, तम्बाकू, कपास, गन्ना, जूट आदि की फसलों को उत्पन्न करना आरम्भ कर दिया है। इससे खाद्यान्न उत्पन्न करने वाली भूमि के क्षेत्रफल में कमी होने से खाद्यान्न के उत्पादन में कमी आ रही है।

रेल, सड़क, बाँध, स्कूल मिल, कारखाने आदि के निर्माण में भूमि का उपयोग—आज पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत रेल, सड़क, बाँध, स्कूल, कारखाने आदि का तेजी से निर्माण हो रहा है। इन सबके निर्माण में कृषि योग्य भूमि काम में आती है। फलतः खाद्यान्न के उत्पादन में कमी होती है। जनसंख्या की वृद्धि के साथ साथ शहरों और ग्रामों का आकार बढ़ रहा है और इस प्रकार कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफल में कमी हो रही है।

प्राकृतिक प्रकोप—अतिवृष्टि, अनावृष्टि बाढ़, सूखा आदि के कारण फसलों को हानि पहुँचती है। इधर बनों के कट जाने से वर्षा के कारण भूमि का क्षरण हो रहा है, बाढ़ों की अधिकता हो रही है। राजस्थान का मरुस्थल उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ रहा है। ये सभी खाद्यान्न के उत्पादन पर अपना प्रभाव डालते हैं।

समस्या का हल—उक्त सभी कारणों से देश की खाद्य स्थिति बिगड़ती जा रही है। हमारी सरकार देश की तत्कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विदेशों से पर्याप्त अन्न माँगती रहती है, पर इससे समस्या का स्थायी हल नहीं हो सकता। इसके लिए तो हमें

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपने पैरों पर खड़ा होना होगा तथा जनता और सरकार के सहयोग से इस समस्या का हल करना होगा। इसके हल के लिये निम्न साधन उपयोगी प्रतीत होते हैं—

परिवार नियोजन—जब तक जनसंख्या की वृद्धि पर कोई अंकुश नहीं होगा और जनसंख्या इसी वेग में बढ़ती रहेगी, खाद्य समस्या के हल होने में कठिनाई होगी। आखिर-कार कृषि योग्य भूमि और उपज की कोई न कोई एक सीमा है, किन्तु जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि सदा अधिक अन्न की माँग करेगी, अतः अधिक अन्न उपजाने पर भी खाद्यान्न समस्या ज्यों की त्यों बनी रहेगी। अतः इस समस्या को हल करने के लिए परिवार-नियोजन के विविध उपायों का सहारा लेना अत्यावश्यक है।

खेती में सुधार—अन्य देशों की तुलना में हमारे यहाँ की प्रति एकड़ भूमि में कम अन्न उत्पन्न होता है। यहाँ के किसान अशिक्षित हैं वे अपने पुराने तरीकों से ही खेती करते हैं। अच्छे बीज, खाद आदि की कमी और निर्धनता के कारण वे अधिक अन्न उत्पन्न नहीं कर पाते। हमारे यहाँ सिंचाई के साधनों की भी कमी है। अतः किसानों को आधुनिक साधनों, रासायनिक खादों, अच्छे बीजों की सुविधा प्रदान करके उपज में वृद्धि की जा सकती है।

खाद्य समस्या को सुलझाने के सरकारी प्रयत्न और उपसंहार—हमारी जनप्रिय सरकार ने खाद्य समस्या की भयंकरता को समझा है और उसने 'अधिक अन्न उपजाओ' जैसे आन्दोलन को चलाकर इसे सुलझाने का प्रयत्न किया है। दोनों पंचवर्षीय योजनाओं में अन्न उत्पादन को बढ़ाने के पर्याप्त प्रयत्न किए गये हैं और किये जा रहे हैं। विभिन्न सिंचाई योजनाएँ चलाई जा रही हैं, चकबन्दी हो रही है, स्थान-स्थान पर बीज गोदाम खोले जा रहे हैं और रासायनिक तथा कम्पोस्ट खादों का वितरण हो रहा है। किसानों की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए 'सरकारी समितियों' तथा 'सहकारी बैंकों' की स्थापना हो रही है। ग्रामों के विकास की योजनाओं को पूर्ण करने के लिए विकास योजना खंडों की स्थापना हो चुकी है और अन्न का उत्पादन बढ़ रहा है किन्तु जनता और सरकार के पारस्परिक सहयोग की भावना के दृढ़ न होने के कारण इन योजनाओं में पर्याप्त लाभ प्राप्त नहीं हो रहा है और देश की खाद्य समस्या हल होने में नहीं आ रही है। यदि जनता और सरकार सहयोग की भावना से अपने अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण करने में लगी रहेगी, तो वह दिन दूर नहीं है जब हमारा राष्ट्र अन्न के विषय में आत्मनिर्भर हो जायगा और हमारी मातृभूमि सदा ही खेती से लहलहाती हुई दृष्टिगोचर होगी। उसी समय हम आनन्द से गाते हुये प्रणाम करते हुए कहेंगे—

सुजलां सुफलां मलयज शीतलां
शस्य श्यामला मातरम्, वन्दे मातरम्।

... प्रयत्नों को सफल बनाया जा सकता है और बेकारी को शीघ्रता से दूर किया जा सकता है।

३—**शासन के द्वारा किये जाने वाले प्रयत्न**—हमारी जनप्रिय सरकार बेकारी की भयंकरता को अच्छी तरह से समझती है और उसे दूर करने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील है। इसके लिये उसने प्रत्येक जिले में 'काम दिलाऊ दफ्तर' खोल दिये हैं, जो योग्य व्यक्तियों को उनके अनुकूल काम दिलवाते हैं।

सरकार ने उद्योग-धन्धों के विकास के लिये भी प्रयत्न किये हैं। इस कार्य के लिये भी अनेक जिलों में एक-एक कार्यालय है जो ...

सामा...

१—**प्रस्तावना**—मानव जीवन संघर्षों का जीवन है। मानव को अपने जीवन को सुखी तथा समृद्ध बनाने के लिये प्रति दिन संघर्ष करना पड़ता है। वह अपनी शारीरि

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तथा बौद्धिक शक्तियों तथा योग्यताओं के सहारे अपने जीवन की नौका को आगे बढ़ाता है किन्तु विभिन्न विघ्नों तथा प्रबल समस्याओं के प्रचण्ड झोकों से आहत होकर जब कभी उसकी यह जीवन नौका डगमगा उठती है, वह अत्यन्त दुःखी और किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है। इन समस्याओं में बेकारी की समस्या एक प्रमुख समस्या है। बुद्धिमान से बुद्धिमान, शक्तिमान से शक्तिमान और योग्य से योग्य व्यक्ति भी इस समस्या के तुरन्त जाल में फँसकर बेबस हो जाता है और उसकी सारी बुद्धि, शक्ति तथा योग्यता उसके लिए व्यर्थ हो जाती है।

यद्यपि यह समस्या सदा से ही मानव-जीवन जाति के सम्मुख रही है, पर आधुनिक युग में इसकी भयंकरता और भी अधिक बढ़ गई है। वैसे तो सारा विश्व ही इससे पीड़ित है, पर भारत में तो इसका अति भयंकरतम रूप दिखलाई देता है। प्रत्येक मुहल्ला, ग्राम और नगर में बेकारों की टोलियाँ घूमती हुई दिखलाई देती हैं। सर्वत्र बेकारों का आर्तनाद सुनाई देता है और आये दिन समाचार पत्रों में बेकारों की आत्म-हत्या के समाचार पढ़ने को मिलते हैं।

प्रमुख कारण तथा निराकरण—ऐसी स्थिति में हमारा परम कर्तव्य है कि हम इसका कारण सोचकर उनको दूर करने का प्रयत्न करें।

ध्यान देने पर हमें इस समस्या के निम्न प्रधान कारण ज्ञात होते हैं—

(क) विदेशी शासन—हमारा देश एक लम्बे समय से पराधीन रहा है। प्रायः शासक देश सम्पूर्ण कार्यों को अपने देश के हित की ही दृष्टि से करते हैं। अंग्रेजों ने भी यही किया। उन्होंने यहाँ के सम्पूर्ण उद्योग-धन्धों को चौपट कर दिया; शिक्षा को नौकरी करने का माध्यम मात्र बनाकर ही छोड़ा; यहाँ के निवासियों की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार कार्य करने की क्षमता को नष्ट कर दिया, इन्हीं कारणों से देश में बेकारी बढ़ गई, जो स्वतन्त्रता के इन वर्षों में भी दूर नहीं हो पाई है।

अब हमारा देश स्वतन्त्र है और हमारी राष्ट्रीय सरकार का कर्त्तव्य है कि वह इन समीकरणों को दूर कर दे।

(ख) जनसंख्या में वृद्धि—हमारे देश की जनसंख्या में अत्यन्त तेजी से वृद्धि हो रही है। यहाँ की कृषि योग्य भूमि वर्तमान उद्योग धन्धे तथा अन्य नौकरियाँ इस जन-संख्या को कार्य देने में असमर्थ हैं। उद्योग धन्धों का विकास भी जनसंख्या की वृद्धि के अनुपात से होना कठिन है, अतः जनसंख्या की वृद्धि भी बेकारी का एक कारण है। इसके निराकरण के लिये हमें विभिन्न उपायों से जनसंख्या की वृद्धि में कमी करनी चाहिए।

(ग) [illegible] की अविकसित अवस्था—हमारे देश की कृषि अविकसित अवस्था में [illegible] पंचवर्षीय [illegible] निर्माण हो रहा है। इन सबके निर्माण [illegible] के कारण खेती में खाद्यान्न के उत्पादन में कमी होती है। जनसंख्या की वृद्धि के साथ साथ शहरों [illegible] का आकार बढ़ रहा है और इस प्रकार कृषि योग्य भूमि के क्षेत्रफल में कमी हो रही है।

प्राकृतिक प्रकोप—अतिवृष्टि, अनावृष्टि बाढ़, सूखा आदि के कारण फसलों को हानि पहुँचती है। इधर बनों के कट जाने से वर्षा के कारण भूमि का क्षरण हो रहा है, बाढ़ों की अधिकता हो रही है। राजस्थान का मरुस्थल उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ रहा है।

इनमें बना हुआ सामान भी निम्न स्तर का तथा [illegible] अपना प्रभाव डालते हैं।
नाई होती है। आधुनिक काल के अनुकूल इनका विकास [illegible] स्थिति बिगड़ती जा रही है। होने पर ये भी बहुत स पर्याप्त अन्न
को रोजगार दे सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

(ङ) **पूँजीवाद**—पूँजीपति भी अपनी उन्नति के लिए बेकारी को फैलाते हैं क्योंकि बेकारी के अधिक होने पर अपने कल कारखानों के लिये कम वेतन पर सरलता से श्रम मिल जाता है और उससे अनुचित लाभ उठाते हैं।

पूँजीपति छोटे-छोटे उद्योगों से स्पर्धा करके उन्हें समाप्त कर देते हैं और बेकारों की संख्या में वृद्धि करते हैं। बड़े बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण व्यक्तिगत आय की सीमा निर्धारण तथा अन्य नियन्त्रों के द्वारा इससे भी छुटकारा पाया जा सकता है।

(च) **स्वचालित मशीनों का प्रयोग**—विज्ञान के विकास ने स्वचालित मशीनों को जन्म दिया है। एक स्वचालित मशीन सैकड़ों आदमियों का काम करती है और बेकारी को बढाती है। भारत में स्वचालित मशीनों के प्रयोग को बन्द करके अथवा आवश्यकतानुसार नियन्त्रित करके इससे छुटकारा पाया जा सकता है।

(छ) **औद्योगिक तथा व्यवहारिक शिक्षा का अभाव**—हमारे देश की शिक्षा प्रधानतः किताबी शिक्षा है जो मनुष्यों को 'क्लर्क' भर बनाती है और उन्हें नौकरी ढूँढ़ने के लिए विवश कर देती है। इसी से खिन्न होकर राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण गुप्त ने कहा था—

'शिक्षे तुम्हारा नाश हो, नौकरी के हित बनी।'

एक ओर तो आवश्यक कार्यों के लिए योग्य प्रशिक्षित व्यक्ति नहीं मिलते और दूसरी ओर बहुसंख्यक शिक्षित व्यक्ति रोजगार की तलाश में मारे-मारे फिरते हैं। शिक्षा को वर्तमान आवश्यकता के अनुसार विकसित करके इसे दूर किया जा सकता है।

(ज) **शिक्षितों की श्रम से उदासीनता**—आधुनिक शिक्षित लोग श्रम को हेय समझकर उसे करने में हिचकते हैं। वे बेकार रहना तो पसन्द करते हैं, पर हाथ-पैर हिलाकर परिश्रम से धन कमाना उन्हें नीच काम प्रतीत होता है। यदि वर्तमान शिक्षित लोग श्रम करने लगें तो इससे छुटकारा हो सकता है।

(झ) **स्वार्थ भावना की वृद्धि**—आधुनिक युग में भौगोलिकता की वृद्धि के कारण स्वार्थभावना में वृद्धि हो गई है। प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ की दृष्टि से ही कार्य करता है। शक्तिशाली व्यक्ति अपने थोड़े से लाभ के लिये दूसरों के उद्योगों को विभिन्न प्रकार से नष्ट कर देता है और बेकारी को बढाता है। दया, परोपकार, भ्रातृत्व आदि की भावनाओं को बढाकर स्वार्थ भावना को कम किया जा सकता है और बेकारी को कम किया जा सकता है।

(ञ) **भ्रष्टाचार**—आधुनिक काल में भ्रष्टाचार के कारण शासन तथा जनता के द्वारा किये जाने वाले विविध प्रयत्न पूरा लाभ नहीं पहुँचा पाते और बेकारी को दूर करने में अड़चन पड़ती है। भ्रष्टाचार को दूर करके इन प्रयत्नों को सफल बनाया जा सकता है और बेकारी को शीघ्रता से दूर किया जा सकता है।

३—**शासन के द्वारा किये जाने वाले प्रयत्न**—हमारी जनप्रिय सरकार बेकारी की भयंकरता को अच्छी तरह से समझती है और उसे दूर करने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील है। इसके लिये उसने प्रत्येक जिले में 'काम दिलाऊ दफ्तर' खोल दिये हैं, जो योग्य व्यक्तियों को उनके अनुकूल काम दिलवाते हैं।

सरकार ने उद्योग-धन्धों के विकास के लिये भी प्रयत्न किये हैं। इस कार्य के लिये भी अनेक जिलों में एक-एक कार्यालय है जो उद्योग-धन्धों के लिये आवश्यक ऋण, कच्चा सामान, मशीन प्रशिक्षित कारीगर आदि का प्रबन्ध करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उद्योग धन्धों के प्रशिक्षण, इन्जीनियरी आदि के प्रशिक्षण आदि के लिये भी विभिन्न संस्थाएँ खोली गई हैं।

सरकार ने भिलाई, रूर केला, दुर्गापुर, चितरंजन आदि में भी बड़े-बड़े कारखाने खोले हैं, जो लाखों व्यक्तियों को काम दे रहे हैं।

इनके अतिरिक्त नवीन शिक्षा-योजनाओं तथा विकास आदि की योजनाओं में भी बहुत से आदमी काम पर लगे हुए हैं। इतना सब कुछ होने पर भी अभी ये प्रयत्न प्रारम्भिक अवस्था में हैं तथा इनसे जनता को पूरा लाभ नहीं हो रहा है।

उपसंहार—समस्या वास्तव में भयंकर है, पर हमें साहस तथा उत्साह के साथ उसे दूर करने के लिये लग जाना चाहिए। यदि हम अपने सम्पूर्ण साधनों से इसे दूर करने का प्रयत्न करेंगे, तो निश्चय ही हम विजयी होंगे, हमारे देश की सर्वाङ्गीण उन्नति होगी तथा निम्न भरत वाक्य सत्य प्रमाणित होगा—

सर्वे च सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत्॥

शान्ति के समर्थक—श्री लालबहादुर शास्त्री

१—प्रस्तावना तथा जीवनी। २—विशेषताएँ (क) वीरता (ख) स्थिति प्रज्ञता (ग) दृढ़ता (घ) शान्ति तथा युद्ध के समय में नेतृत्व की शक्ति (ङ) आत्मनिर्भरता (च) सादगी। ३—उपसंहार।

प्रस्तावना तथा जीवनी—व्यक्ति से राष्ट्र बड़ा है, अवसर से दायित्व बड़ा है, सिद्धांत से सत्य बड़ा है, प्रयोग से प्रमाण बड़ा है और प्राप्ति से त्याग बड़ा है—

—महात्मा गान्धी

महात्मा गान्धी के उक्त आदर्श को अपने जीवन में अक्षरशः यथार्थ बनाने वाले, केवल नाम से ही नहीं काम से भी बहादुर श्री लाल बहादुर शास्त्री का जन्म मुगलसराय में २ अक्टूबर, १६०४ ई० को हुआ था। इनके पिता श्री शारदा प्रसाद एक स्कूल के अध्यापक थे। जब ये डेढ़ वर्ष के ही थे, इनके पिता का स्वर्गवास हो गया और इनके नाना नन्हें और इनकी माता श्रीमती रामदुलारी देवी को अपने घर ले आये और इनका पालन पोषण किया। इनका विवाह श्रीमती ललिता देवी से २३ वर्ष की अवस्था में हुआ था। ये आरम्भ से ही परिश्रमी तथा देशभक्त थे। जब यह हरिश्चन्द्र स्कूल काशी की दसवीं कक्षा में पढ़ रहे थे। १६२१ में श्री गान्धी जी ने देशवासियों से असहयोग आन्दोलन में भाग लेने की अपील की। शास्त्री जी ने शीघ्र ही अपनी पढ़ाई छोड़ दी और आन्दोलन में जेल गये। जेल से छूटने के बाद इन्होंने काशी विद्यापीठ से शास्त्री परीक्षा पास की। ये गाँधी जी के सभी आन्दोलन में भाग लेते रहे और आठ बार जेल गये, और अपने जीवन के लगभग नौ वर्ष जेल में काटे।

इन पर श्री गोविन्द बल्लभ, श्री पुरुषोत्तम दास टंडन और पंडित जवाहर लाल नेहरू के राजनीतिक विचारों का गहरा प्रभाव पड़ा था। ये १६४६ में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री के सभा सचिव और १६४७ में गृह मंत्री बने। १६५२ में ये राज्य सभा के लिये चुने गये और रेलवे मन्त्री बने। १६५६ में महबूब नगर (हैदराबाद) में हुई एक रेल दुर्घटना को अपनी नैतिक जिम्मेदारी मानकर इन्होंने इस पद से इस्तीफा दे दिया। ये १६५७ के चुनावों में इलाहबाद से लोक सभा के लिये चुने गये तथा परिवहन तथा संचार मंत्री बने। कुछ समय तक इन्होंने वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री के पद पर भी काम किया।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन्होंने पन्त जी की मृत्यु के बाद अप्रैल १९६१ मे गृह मंत्री पद के भार को सँभाला। १९६२ के आम चुनावों में ये विजयी हुये और पुनः गृह मन्त्री बने, किन्तु १९६३ में 'कामराज योजना' के अधीन इन्होंने इस्तीफा दे दिया। कुछ समय बाद नेहरू जी ने इन्हें बिना विभाग का मन्त्री चुना। पं० नेहरू की मृत्यु के बाद ९ जून, १९६४ को इन्होंने प्रधान मंत्री पद का भार संभाला और देश की अनेक प्रकार से उन्नति करने लगे। १९६५ में जब पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण किया, तो शास्त्री जी से यह न देखा गया और शक्ति का जवाब शक्ति से देने के लिये शास्त्री जी ने पाकिस्तान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और उसे परास्त कर दिया, किन्तु संयुक्त-राष्ट्र संघ के कहने पर लाभदायक स्थिति में होते हुए भी शान्ति की रक्षा के लिए इन्होंने युद्ध बन्द कर दिया। रूस के प्रधान मंत्री श्री कोसीगिन के कहने पर ये श्री अयूब से शान्ति वार्ता करने के लिए ताशकन्द गये और वहाँ पर कुछ हानि उठाकर भी शान्ति की रक्षा के लिये ही ताशकन्द घोषणा पर हस्ताक्षर कर दिये। इस घोषणा की स्याही सूख भी न पाई थी कि ११ जनवरी, १९६६ की रात्रि को १ बजकर ३५ मिनट पर हृदय की गति रुक जाने से इनका देहावसान हो गया। सारा विश्व रो पड़ा, मानवता कराह उठी और भारत माता चीख पड़ी।

विशेषताएँ— शास्त्रीजी में अनेक दुर्लभ विशेषताएँ थीं। वे लघुकाय होते हुये भी महान् थे। भारत माँ के सच्चे पुत्र; स्थिति प्रज्ञ, दृढ़, शान्ति के प्रेमी होते हुए भी युद्ध से न डरने वाले, आत्मनिर्भर, सादगी के प्रेमी, प्रजातन्त्र के समर्थक, मानवता से पुजारी तथा समदर्शी थे। एक सच्चे देशभक्त मानव के सभी गुण उनमें मौजूद थे।

वीरता— वे भारत माता के ऐसे बहादुर पुत्र थे, जिनके 'लाल' के साथ जन्म से ही 'बहादुर' जुड़ गया था, केवल वाक्‌वीर ही नहीं कर्मवीर भी थे। उन्होंने १५ अगस्त, १९६५ को लाल किले की प्राचीर पर खड़े होकर कहा था—'हम रहें या न रहें लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम या आप रहें या न रहें।' अपने इस कथन के दो सप्ताह बाद ही श्री शास्त्री जी ने पाकिस्तान के विरुद्ध अपने कथन को सत्य सिद्ध करने के लिए हथियार उठाने का फैसला कर लिया और उसे सत्य सिद्ध कर दिया। शान्ति के और अहिंसा के सच्चे पुजारी होने पर भी झण्डे की रक्षा के लिए उन्होंने जो कुछ किया, उसका इतिहास साक्षी है। उनकी इस दृढ़ता के पीछे कुछ उनके ऐसे देव-दुर्लभ गुण थे, जो सदैव ही उन्हें अपने कर्म-मार्ग पर आगे बढ़ाते रहे।

स्थित प्रज्ञता— शास्त्री जी सच्चे स्थित-प्रज्ञ थे। वे परिस्थिति की भीषणता को समझ कर उससे निपटने का उपाय भी शीघ्र ही सोच लेते थे। कठिन से कठिन परिस्थिति के आने पर भी वे घबड़ाते नहीं थे और एक सच्चे योगी की भाँति उससे निपटने के लिए डट जाते थे। पाकिस्तानी आक्रमण के समय उनकी सजगता और सक्रियता देखी जा सकती थी। शत्रु का आक्रमण और देश की खाद्य-समस्या जब दोनों ही एक साथ सामने आईं, उन्होंने दृढ़ता के साथ देश को 'जय जवान, जय किसान' का नारा दिया और सभी देशवासियों को परिस्थिति का मुकाबला करने के लिये तैयार कर दिया।

दृढ़ता— शास्त्री जी अपने विचारों के दृढ़ थे। अपने कर्त्तव्य का निश्चय करके वे उसका दृढ़ता से पालन करते थे, किन्तु उनकी दृढ़ता हठ से दूर रहती थी। यदि कोई तर्क या तथ्य उनकी समझ में आ जाता था तो वे शीघ्र ही अपने पूर्व-विचारों को बदल देते थे। वे यह कभी नहीं सोचते थे कि दूसरा पक्ष सत्य नहीं हो सकता और जो कुछ वे सोचते हैं वही सत्य है। वे दूसरों की बातों को सुनते और उस पर विचार करते थे। उन्होंने कश्मीर के शेख अब्दुल्ला को जेल से छुड़वाकर उसे अपनी सत्यता को प्रकट करने

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

का अवसर दिया और उसे विदेश जाने की भी आज्ञा दी, पर जैसे ही उन्होंने शेख साहब की हरकतों को देशहित के विरुद्ध समझा, उन्हें पुनः नजर बन्द कर दिया।

शान्ति तथा युद्ध के समय में नेतृत्व की शक्ति—शास्त्री जी में शान्ति तथा युद्ध दोनों ही अवसरों पर नेतृत्व करने की शक्ति थी। काँग्रेस पार्टी के आपसी झगड़ों को वे सरलता से दूर कर देते थे। असम के भाषा-विवाद तथा केरल की समस्या को उन्होंने बड़ी शान्ति से हल किया था। काश्मीर में 'हजरत बल' की समस्या को लेकर स्थिति गम्भीर हो गई थी, किन्तु शास्त्रीजी ने 'पवित्र बाल दर्शन' की व्यवस्था करवा कर सम्पूर्ण समस्या को हल कर दिया।

अपने पड़ोसी पाकिस्तान के साथ मैत्री सम्बन्ध रखने के खातिर ही उन्होंने देश की भावनाओं के कुछ विपरीत जाकर भी 'कच्छ समझौता करके अपनी शान्ति प्रियता का परिचय दिया, किन्तु जब उसी पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया तो वे 'पश्चिमी पंजाब' पर भी आक्रमण करने की आज्ञा देने में नहीं हिचके और पाकिस्तान को उसकी करनी का उचित फल देकर अपनी 'युद्ध कालीन नेतृत्व शक्ति' का परिचय दिया। जब संयुक्त राष्ट्र संघ ने युद्धबन्दी' का प्रस्ताव रखा तो उन्होंने लाभदायक स्थिति में होकर भी उसे स्वीकार कर लिया। ताशकन्द में उसी पाकिस्तान के प्रति अपने कश्मीर से ही फौजों को हटाने का समझौता करके पुनः अपनी शान्ति प्रियता का परिचय दे दिया। अपने इस शान्ति-प्रयास में उन्होंने एक सप्ताह तक कठोर परिश्रम किया और उसकी सफलता में अपने प्राण भी दे दिये। शास्त्रीजी में इस प्रकार की शान्ति काल तथा युद्ध काल की नेतृत्व शक्ति को देखकर ही हमारे मुख से सहसा निकल जाता है।

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि कोहि विज्ञातुमर्हति ॥

(लोक में श्रेष्ठ पुरुषों के चित्त वज्र से भी कठोर तथा फूलों से भी कोमल होते हैं, उनकी वास्तविकता को कौन जान सकता है।)

आत्मनिर्भरता— शास्त्री जी अपने वैयक्तिक तथा राष्ट्रीय जीवन में आत्मनिर्भरता के पक्षपाती थे। जब ये विद्यार्थी थे, इन्हें स्कूल जाने के लिये गंगा पार करनी पड़ती थी। इनके पास प्रायः पैसे न रहते थे और तैर कर ही गंगा पार करते थे। अपने कपड़ों को स्वयं धोकर पहनना, अपने जूतों को स्वयं सीना आदि इनकी आत्मनिर्भरता के उदाहरण हैं। प्रधान मन्त्री के समय में भी इनसे घर में आत्मनिर्भरता का साम्राज्य था। इनकी पत्नी सारे परिवार के लिये स्वयं भोजन बनाती थीं।

राष्ट्रीय जीवन में भी ये आत्मनिर्भरता के पक्षपाती थे। इनका कहना था कि जब तक हम आत्मनिर्भर न बनेंगे, हमारी समस्याओं का अन्त न होगा। चाहे खाद्य समस्या हो या रक्षा समस्या, आत्मनिर्भर होना ही होगा। इन्होंने इसीलिए देश को 'जय जवान, जय किसान' का नारा दिया। उन्होंने देश के अन्दर ही विभिन्न अस्त्र-शस्त्रों, वायुयानों आदि के निर्माण का कार्य कराया, उपज बढ़ाने के लिये खाद, बीज सिंचाई आदि के प्रयत्न किए और सप्ताह में सोमवार के दिन एक बार भोजन छोड़ने का उपदेश दिया तथा स्वयं भी ऐसा ही किया।

सादगी— शास्त्री जी सादगी से विशेष प्रेम रखते थे। खादी की धोती और कुरता यही उनकी पोशाक थी। विदेशों में भी उन्होंने धोती ही पहनी। वे सदैव किराये के ही मकान में रहे। उनका घर सदैव सजावट से दूर रहा। उनका भोजन भी अत्यन्त सादा तथा सात्विक रहता था। उनका व्यवहार भी छल कपट से दूर तथा सच्चा था। वे छोटे से

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

छोटे आदमी से भी बड़े प्रेम से मिलते थे। उनके व्यवहार और वेश-भूषा को देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि वे भारत-उपमहाद्वीप के प्रधान मंत्री हैं।

उपसंहार—शास्त्री जी के समस्त गुणों का वर्णन करना असम्भव है। संक्षेप में वे एक ऐसे प्रकाश स्तम्भ थे, जो अपने जाज्वल्यमान प्रकाश से हमें शान्ति तथा युद्ध दोनों के ही समय मार्ग दिखलाते रहे। उनके पार्थिव शरीर के समाप्त होने पर भी उनके गुणों का वह प्रकाश स्तम्भ हमें अनन्तकाल मार्ग दिखलाता रहेगा।

आज सारा विश्व उनकी स्मृति में रो रहा है। हम भी 'श्री ब्रिजेन्द्र कुमार' के शब्दों में शास्त्री जी को अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं—

वज्र प्रहारों से न टूटती नन्हे संकल्पों की छाती,
सब नातों रिश्तों से ज्यादा पावन जन जीवन की थाती

× × ×

तन विवेक का माप नहीं है, निर्धनता अभिशाप नहीं है।
यह सब हमें सुनाने वाला कथाकार बन गया कहानी

सादा जीवन उच्च विचार

१—प्रस्तावना (राष्ट्रीय तथा सामाजिक जीवन की सर्वांगीण उन्नति के लिए व्यक्ति के जीवन की उन्नति की आवश्यकता) २—जीवन की उन्नति के अनेक प्रकार (शिक्षा, स्वास्थ्य, धनसंचय, सच्चरित्रता आदि) और उनमें उच्च विचारों का स्थान ३—सादा जीवन से तात्पर्य (वस्त्र, भोजन तथा आचार-व्यवहार में कृत्रिमता का अभाव) ४—उच्च विचारों में तात्पर्य (दया, करुणा, सहानुभूति, वर्ण जाति आदि की भिन्नता की भावना का त्याग) ५—उदाहरण (बुद्ध, अशोक, सूर, तुलसी, राणा प्रताप, तिलक, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महात्मा गान्धी) ६—उपसंहार (राष्ट्रीय उन्नति)

मित्रता

१—प्रस्तावना (संसारिक जीवन की कठिनाइयाँ और उनको दूर करने के लिए मित्रों की आवश्यकता) २—मित्र के गुण क—निज दुख गिरि रज सम कर जाना, मित्र के दुख रज मेरु समाना ख—स्वार्थ त्याग ग—सहानुभूति घ—धैर्य शीलता ङ—विवेक ३—मित्र के गुण क—मित्र के दोषों को छिपाकर गुणों को प्रकट करना ख—आवश्यकता पड़ने पर शरीर, धन तथा वाणी से सहायता ग—उचित प्रेरणा। घ—मनोरंजक स्वभाव ४—उपसहार (वर्तमान काल के स्वार्थ मित्र, उनके चरित्र तथा उनसे बचने की आवश्यकता)

आधुनिक भारत की प्रमुख समस्याएँ

१—प्रस्तावना (परिभाषा—किसी देश की समस्या से तात्पर्य उस घटना या स्थिति से होता है, जो देश की प्रगति में किसी भी प्रकार से बाधा डालती है।) २—प्रमुख समस्याएँ क—भाषा वाद (उत्पत्ति, स्वरूप तथा निराकरण—राष्ट्रीय चेतना का विकास, स्वार्थ भावना का त्याग, सहनशीलता) ख—खाद्य समस्या (कारण, स्वरूप तथा निराकरण जन संख्या की रोक, भोजन की आदतों में सुधार, अन्न को रखने का प्रबन्ध, खेती की उन्नति) ग—बेकारी की समस्या कारण, (स्वरूप तथा निराकरण—शिक्षा में सुधार, कुटीर उद्योग धन्धों का विकास) घ—जन संख्या की वृद्धि की समस्या (स्वरूप तथा निरा-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

करण-परिवार नियोजन, विवाह की न्यूनतम अवस्था में वृद्धि, संयम) ङ—आर्थिक समस्या (कारण—जनसंख्या की वृद्धि, पाकिस्तानी तथा चीनी आक्रमण, खाद्य समस्या, विदेशी आयात, उद्योगों में मन्दीकरण, प्राकृतिक प्रकोप, भ्रष्टाचार, खेती की हीन दशा) च—भ्रष्टाचार की समस्या (व्यापकता, स्वरूप, निराकरण—कठोर दंड की व्यवस्था, कर्तव्य भावना का विकास, अनुचित हस्तक्षेप का त्याग) छ—कश्मीर समस्या (उत्पत्ति, स्वरूप तथा निराकरण-शक्ति संचय, राष्ट्रीयता का विकास) ज—चीनी आक्रमण की समस्या (उत्पत्ति, स्वरूप निराकरण-शक्ति संचय) झ—नागा तथा मिजों समस्या (कठोर नियन्त्रण, विदेशी प्रचारकों पर रोक, राष्ट्रीय भावना का विकास, शिक्षा प्रसार) ञ—बेकारी की समस्या (व्यापकता, कारण—केवल नौकरी की चाह, शिक्षा की निरुद्देश्यता, निराकरण के उपाय—उद्योग धन्धों का विकास) ३—उपसंहार (समस्याओं के निराकरण पर देश की उन्नति संभव है)

परिवार नियोजन

१—प्रस्तावना—(तात्पर्य-परिवार नियोजन से तात्पर्य परिवार को विभिन्न उपायों से सीमिति रखना है, जिससे परिवार, समाज तथा देश की उन्नति हो सके।) २—बड़े परिवार से होने वाली हानियाँ तथा परिवार नियोजन की आवश्यकता (आर्थिक दशा की हीनता, स्वास्थ्य का अभाव, खाद्य समस्या, बेकारी की समस्या, भूमि के बटबारे से होने वाली हानि, पारस्परिक कलह) ३—नियोजन के उपाय क—संयम ख—कृत्रिम उपाय औषधि, लूप, आपरेशन) ४—नियोजन के लिए किये जाने वाले सरकारी प्रयत्न। ५—उपसंहार इससे प्राप्त होने वाले लाभ, तथा जनता के सहयोग की आवश्यकता)

सैनिक शिक्षा

१—प्रस्तावना (देश की वर्तमान दशा—पाकिस्तानी तथा चीनी आक्रमणों का भय) २—सैनिक शिक्षा की आवश्यकता तथा लाभ क—विदेशी सेना के लिए श्रेष्ठ सैनिकों की प्राप्ति ख—विदेशी आक्रमणों के समय देश की आन्तरिक सुरक्षा में सहायता, ग—अनुसासन का प्रसार, घ—स्वास्थ्य लाभ ङ—सामाजिक भावना का विकास और ऊँच नीच की भावना का त्याग च—राष्ट्रीय भावना का प्रसार ३—सरकारी प्रयत्न (एन० सी० सी० तथा पी० एस० डी०) ४—उपसंहार।

किसी जादू के खेल का वर्णन

१—प्रस्तावना—(१५ नवम्बर की फीस लगने के बाद कालिज की छुट्टी जल्दी होने से लौटने पर मार्ग में भीड़ का देखना और वहाँ जाकर जादू के खेल को देखने के लिए रुक जाना २—खेल के मैदान का वर्णन (भीड़, जादूगर का सामान)। ३—विभिन्न प्रकार रोचक शब्दों को कहकर (जादू के खेल का प्रारम्भ) ४—तरह तरह के खेल (ताश के खेल, मिट्टी से रुपया बनाना, मुँह से गोला निकालना, लड़के को पिटारे में बन्द करके उड़ा देना, लड़के को चद्दर के नीचे लिटा कर उससे प्रश्न पूंछना, आदि) ५—खेल की समाप्ति (पैसे माँगना आदि) ६—उपसंहार (प्रसन्नता पूर्वक घर को लौटना)

किसी प्रदर्शनी का वर्णन

१—प्रस्तावना (स्थान—शिकोहाबाद की रेल जाने वाली सड़क के किनारे का मैदान तथा समय—१५ मार्च से १५ अप्रैल और उस समय पर ऋतु की शोभा का वर्णन) २—प्रदर्शनी का बाहरी रूप (बड़ा दरवाजा, बिजली, मध्य का मैदान पार्क, फव्वारा आदि)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३—प्रदर्शनी का विभाजन क—तरह तरह की दूकानें ख—सिनेमा, सरकस, नौटंकी आदि। ग—कृषि सम्बन्धी प्रगति को दिखाने वाला पंडाल। घ—उद्योग-धन्धों की प्रगति को दिखाने वाला पंडाल। ङ—विद्यार्थियों द्वारा निर्मित वस्तुओं का प्रदर्शन पंडाल। च—विभिन्न कार्य क्रमों को करने के लिए निर्मित बड़ा पंडाल। ४—विभिन्न कार्य क्रम—(छात्रों द्वारा प्रदर्शित प्रहसन आदि, कवि सम्मेलन, मुशायरा, संगीत सभा, नृत्य प्रदर्शन, लावनी आदि) ५—उपसंहार (प्रदर्शनी से लाभ—मनोरंजन, आवश्यक वस्तुओं का क्रय, देश की प्रगति का ज्ञान आदि)

किसी मैच का वर्णन (फुटबाल मैच)

१—प्रस्तावना—खेल का शिक्षा में स्थान और उसमें गति तथा रुचि रखने के लिए मैच की आवश्यकता। २—नगर के दूसरे विद्यालय के छात्रों से मैच का निर्णय, समय तथा तैयारी (मैदान का क्षेत्रफल, प्रत्येक दल के क्रीडा नायक तथा ११, ११ खिलाड़ी, निर्णायिक तथा दर्शक)। ३—मैच का आरम्भ और मध्य मध्य में विजय सन्देह। ४—विजय की प्राप्ति तथा हर्ष ध्वनि। ५—प्रधानाचार्य द्वारा पुरस्कार वितरण तथा विजयी दल को 'चल-जयन्ती' का दान। ६—उपसंहार—घर को जाना तथा लाभ।

ग्राम पंचायत

१—प्रस्तावना—भारत ग्रामों का देश है, अतः ग्रामों के सुधार पर ही देश की उन्नति सम्भव है। २—वर्तमान काल में भारतीय ग्रामों की दुर्दशा (गन्दगी, अव्यवस्था, लड़ाई झगड़े आदि) और उनको दूर करने के लिए पंचायतों की आवश्यकता। ३—प्राचीन भारत में ग्राम पंचायतों का स्वरूप और उनसे लाभ। ४—पंचायतों के नष्ट होने पर ग्रामों की दुर्दशा (कुरीति-प्रसार, लड़ाई-झगड़ों का विस्तार, मुकद्दमे बाजी, आत्म निर्भरता की समाप्ति)। ५—स्वतन्त्र भारत में गान्धी जी के स्वप्नों के आधार पर विभिन्न राज्यों में पंचायती राज्य की स्थापना। ६—उत्तर प्रदेश में पंचायतों का स्वरूप। क—ग्राम सभा (प्रत्येक वयस्क ग्रामवासी सदस्य, यह कार्य कारिणी चुनते हैं, जो ग्राम पंचायत कही जाती है, इसके सदस्य जन संख्या के आधार पर ३० से ५१ तक, इसका सभापति तथा उपसभापति होते हैं। ख—इसके कार्य सफाई शिक्षा चिकित्सा आदि। ग—पंचायत अदालत, ग्राम पंचायतों द्वारा चुनाव, माल, फौजदारी तथा दीवानी मुकद्दमों का फैसला। ७—लाभ (आर्थिक, सामाजिक)। ८—दोष (पार्टीबाजी, स्वार्थपरता, अशिक्षा)। ९—उपसंहार (दोषों के निराकरण पर उचित लाभ की प्राप्ति)।

अपनी रुचि

१—प्रस्तावना (जीवन में मनोरंजन की आवश्यकता, उसके विवध प्रकार और उनमें रुचि का महत्व) २—विभिन्न प्रकार की रुचियाँ (हाकी आदि खेल, टिकट इकट्ठा करना, चित्र बनाना, कविता करना, कैमरे के द्वारा चित्र खीचना, व्यायाम करना) और इनमें मेरी रुचि-चित्र बनाना ३—इस रुचि का प्रारम्भ (लखनऊ में चित्र कला प्रदर्शिनी में चित्रों का दर्शन तथा शंकर की चित्र प्रतियोगिता के समाचार। ४—अपने चित्र कला अध्यापक द्वारा प्रोत्साहन तथा प्रारम्भिक शिक्षा ५—विभिन्न प्रकार के समाचार पत्रों कलैण्डरों तथा चित्रों को अनुकरण के द्वारा विकास ६—वर्तमान काल में उसके प्रतिमोह तथा सफलता। ७—रुचि की सरलता तथा लाभ (चित्र की एकाग्रता, उद्देश्य के प्रति लगन की भावना का विकास व्यय की न्यूनता, सिनेमा आदि देखने की अभिलाषा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का न होना, उच्चकोटि के चित्रकार होने पर विशेष लाभ तथा साधारण कोटि के होने पर भी डिजायन, विज्ञापन आदि के निर्माण से धन प्राप्ति मनोरंजन ८—उपसंहार।

अपनी पसन्द का खेल (कबड्डी का खेल)

१—प्रस्तावना (खेलों का जीवन में महत्व—स्वास्थ्य वृद्धि, मनोरंजन की प्राप्ति, मेल-मिलाप की वृद्धि) २—विभिन्न प्रकार के खेल (विदेशी—हॉकी, क्रिकेट, पोलो, फुटबाल, टेनिस आदि, देशी—गेंद-बल्ला, गेंदतड़ी, किल्ली डन्डा, कबड्डी आदि) और इनमें अपनी पसन्द का खेल कबड्डी। ३—कबड्डी के खेल की सादगी (अन्य खेलों में तरह तरह के सामानों की आवश्यकता तथा व्यय पर इसमें किसी सामान की आवश्यकता नहीं) ४—नियमों की सरलता तथा खेलने का प्रकार (खिलाड़ियों की इच्छानुसार संख्या और उनका दो दलों में विभाजन, एक बड़े मैदान को रेखा द्वारा दो भागों में बाँटना, प्राचीन प्रकार-साँस को रोककर कुछ शब्दों को कहते हुए दूसरे दल के जितने व्यक्तियों को छूकर बिना पकड़े अपने भागमें लौटने पर छुए व्यक्तियों का खेल से अलग होना तथा दूसरे दल के उतने ही व्यक्तियों के अलग होने पर खेल में पुनः शामिल होना, किसी दल के सभी मनुष्यों के अलग होने पर उसका हारना। नवीन प्रकार—व्यक्तियों के अलग होने वाली संख्या के अनुसार विजय-अंक की प्राप्ति और अन्त में अधिक अंक पाने वाले दल की विजय) ४—लाभ-स्वांस रोकने की आदत, मनोरंजन, स्वास्थ्य लाभ। ५—खेल के दोष (अपशब्दों का उच्चारण, बुरी तरह से दूसरों को पकड़ना आदि) और उनका निराकरण।

संयुक्त राष्ट्र संघ

१—प्रस्तावना—मानव की स्वार्थभावना, युद्ध की प्रवृत्ति और शान्ति स्थापना के प्रयत्न। २—१९१४, के प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर १९२० में 'लीग आफ नेशंन्स की स्थापना, उसकी असफलता, तथा १९३९ में दूसरे महायुद्ध का आरम्भ इस में धन-जन की अपार क्षति तथा, १९४५ में इसकी समाप्ति ३—२५ अक्टूबर १९४३ को सेनफ्रान्सिसको में विश्व के शान्ति चाहने वाले राष्ट्रों द्वारा संयुक्त राष्ट्रसघ की स्थापना, आरम्भ में ५० देश सदस्य बने। ४—संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्य क—किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय विवाद को पारस्परिक विचार विनिमय द्वारा शान्ति पूर्ण ढंग से सुलझाना। ख—अन्तर राष्ट्रीय विधान का निर्माण और उसके प्रयोग का प्रयत्न ग—आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में पारस्परिक सहयोग घ—जाति वर्ण लिंग आदि के भेद भाव को भुलाकर प्रत्येक मानव को उसके अधिकारों को दिलाने का प्रयत्न। ङ - पिछड़ी हुई जातियों का सुधार च—संयुक्त राष्ट्र संघ के विभाग और उनके कार्य (१) सामान्य परिषद (२) सुरक्षा परिषद (३) आर्थिक और सामाजिक परिषद (४) ट्रस्टीशिप काउन्सिल (५) अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय (६) सचिवालय ५—संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयत्न—दक्षिण अफ्रीका में जाति भेद को दूर करना, अरब इसरायल समस्या को सुलझाने का प्रयत्न, वियतनाम में शान्ति का प्रयत्न आदि ६—दोष—साम्यवादी तथा पूंजी वादी देशों की गुट बन्दी और उनको दूर करने का प्रयास ७—उपसंहार—शान्ति की आशा

शिक्षा में क्रीड़ा का स्थान

१—प्रस्तावना (शिक्षा का उद्देश्य—मानव जीवन की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए मानसिक, बौद्धिक तथा शारीरिक विकास को करना, पुस्तकीय शिक्षा से इस उद्देश्य की पूर्ति का असम्भव होना और शारीरिक विकास के लिए क्रीड़ा का महत्व) २—क्रीड़ा से लाभ (क) मनोरंजन (ख) स्वास्थ्य वृद्धि (ग) हानि लाभ को बराबर समझने की प्रवृत्ति (हार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

होने पर दुःख न होना) (घ) भाई-चारे की भावना का विकास ३—विविध प्रकार के क्षेत्रों में तथा घरों में खेले जाने वाली क्रीड़ाएँ और उनसे शारीरिक बौद्धिक तथा मानसिक विकास की प्राप्ति ४—विद्यालयों में क्रीड़ाओं का प्रसार तथा उपसंहार।

समय का सदुपयोग

१—प्रस्तावना—जीवन में समय का महत्व—

कालि करै सो आज करि, आज करै सो अब्ब।
पल में परलै होइगी, बहुरि करैगो कब्ब॥

२—समय के सदुपयोग से तात्पर्य तथा उसका आवश्यक कार्यों में व्यय (क) स्वास्थ्य रक्षा (पहला सुख निरमल काया) (ख) ज्ञानार्जन (ग) परोपकार (घ) राष्ट्र सेवा तथा समाज सेवा (ङ) मनोरंजन ३—लाभ (क) रोग रहित होना (ख) धन प्राप्ति (ग) सम्मान प्राप्ति (घ) राष्ट्र तथा समाज की उन्नति ४—समय के दुरुपयोग से हानियाँ (क) स्वास्थ्य हानि (ख) अपयश की प्राप्ति (ग) पारिवारिक कलह (घ) आत्मग्लानि ५—उपसंहार (समय का सदुपयोग करना चाहिए)।

किसी राष्ट्रीय उत्सव का वर्णन

(स्वतन्त्रता-दिवस)

१—प्रस्तावना (परिभाषा-राष्ट्रीय जीवन में उत्साह लाने के लिए राष्ट्र के सम्पूर्ण नागरिकों द्वारा मनाये जाने वाले उत्सव को राष्ट्रीय उत्सव कहते हैं) भारत राष्ट्र के दो प्रमुख उत्सव—स्वतन्त्रता दिवस और गणतन्त्र दिवस। २—समय तथा इतिहास १५ अगस्त १९४७ से देश के स्वतन्त्र होने के कारण प्रत्येक वर्ष १५ अगस्त को मनाया जाता है। ३—मनाने का प्रकार (क) प्रभात फेरी-झंडा गान, नारे आदि (ख) राष्ट्रीय ध्वजा रोहण तथा ध्वज प्रणाम (ग) राष्ट्रीयगान, देश भक्ति के गीतों का गायन। (घ) विविध प्रकार के संवाद एकांकी नाटकों का प्रदर्शन (ङ) भाषण कविता-पाठ। (च) शिक्षा मन्त्री तथा शिक्षा निर्देशक के सन्देशों का पाठ (छ) पुरस्कार-वितरण। ४—उपसंहार—राष्ट्रीय उत्सवों का महत्व।

व्यायाम (उ० प्र० १९६५)

१—प्रस्तावना (परिभाषा-अंग संचालन की जिन जिन क्रियाओं से शरीर पुष्ट होता है, उन्हें व्यायाम कहा जाता है) २—व्यायाम के भेद—१—विदेशी (हॉकी, फुटबौल, टेनिस आदि के खेल, बर्फ पर फिसलना आदि) २—देशी—कबड्डी, दंड, बैठक, यौगिक आसन, तैरना, टहलना, दौड़ना, मुक्के बाजी, घोड़े पर चढ़ना, नाव चलाना आदि। ३—व्यायाम से लाभ (क) स्वास्थ्य की वृद्धि, (ख) चित्त का प्रसन्न रहना (ग) स्वस्थ रहने से चिकित्सा आदि में व्यय की बचत, ग—सम्मान में वृद्धि (घ) स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क के रहने के कारण बुद्धि में वृद्धि ४—विद्यार्थियों के लिए व्यायाम की उपयोगिता ५—उपसंहार।

जीवन में अनुशासन का महत्व

१—प्रस्तावना—संपूर्ण सृष्टि, ग्रह, उपग्रह आदि का अनुशासन में रहना—

विश्व देव सविता या पूषा,
सोम मरुत चंचल पवमान।
वरुण आदि सब घूम रहे हैं,
किसके शासन में अम्लान॥

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२—परिभाषा—किसी नियम के अनुसार अपने जीवन को ढालना। ३—अनुशासन का महत्व (क) विद्यार्थी जीवन में (ख) नागरिक जीवन में, (ग) शासन के कार्यों में (घ) देश सेवा में। ४—अनुशासन से लाभ (क) नियमित रूप से कार्य करने की आदत (ख) कार्य का सुचारु रूप से थोड़े समय में हो जाना। (ग) अपव्यय की बचत (घ) स्वास्थ्य की वृद्धि। ५—अनुशासन न होने से हानि (क) समय का अपव्यय (ख) राष्ट्रीय तथा सामाजिक सम्पत्ति का विनाश (ग) प्रतिष्ठा की हानि ६—अनुशासन प्रिय लोगों के उदाहरण—नेपोलियन, विस्मार्क, राम, अशोक, प्रताप, शिवाजी, गान्धी, जवाहरलाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री आदि। उपसंहार—विद्यार्थियों के लिए अनुशासन की विशेष आवश्यकता।

अनुशासन से मानव जग में शोभा पाता,
इसका ले आधार अमर जग में हो जाता।
आदर्श गुणों को जग में जो अपनाते,
अपना नाम अमर हैं वे कर जाते॥

सच्चरित्रता

१—प्रस्तावना (सच्चरित्रता शब्द की व्युत्पत्ति सत् अर्थात् श्रेष्ठ+चरित्रता, भाव यह है कि श्रेष्ठ चरित्र का होना) २—सच्चरित्रता की व्यापकता (इसमें मनुष्य के सभी गुण—दया, करुणा, सहानुभूति, स्वावलम्बन आदि आ जाते हैं) ३—सचचरित्रता का महत्व (इसके अभाव में जीवन की निरर्थकता तथा होने पर मानव जीवन की सार्थकता ४—सच्चरित्रता से लाभ क—दूसरों को प्रेरणा की प्राप्ति ख—सम्मान की वृद्धि ग—स्वास्थ्य लाभ घ—राष्ट्रीय तथा समाजिक उन्नति ङ—मितव्ययी होने के कारण आर्थिक उन्नति ५—सच्चरित्रता के न होने पर हानियाँ

गिरि से गिर कर जो गिरे गिरे एक ही बार।
जो चरित्र गिरि से गिरे, बिगड़े जन्म हजार॥—दिनेश

६—उपसंहार (स्वतन्त्र भारत में सच्चरित्र नागरिकों के होने पर भ्रष्टाचार और उससे उत्पन्न दोषों का अभाव)—

भारत की कुछ आदर्श नारियाँ

१—प्रस्तावना—(एक नहीं दो दो मात्राएँ नर से भारी नारी के अनुसार जीवन में नारियों का महत्व) २—नारियों के द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में की गई प्रगति तथा उनका परिचय क—विद्या के क्षेत्र में, अध्यात्म विद्या—गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा, गणित विद्या में—कलावती ख—पतिव्रता के रूप में—सावित्री, अनुसूया, सीता, पद्मिनी ग—वीरता के क्षेत्र में—कैकेयी, लक्ष्मीबाई, घ—काव्य के क्षेत्र में—विसमलाम्बा (संस्कृत) मीरा, सहजोबाई, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान। ३—उपसंहार (नारियों में प्रेरणा शक्ति की प्रधानता तथा उनके सम्मान और उत्थान की आवश्यकता।

विश्व शान्ति और निशस्त्रीकरण

१—प्रस्तावना (युयुत्सा की प्रवृत्ति) २—विश्व शान्ति के उपाय। क—पंचशील ख—वारसा, नाटो, सीटो आदि सैनिक गठ बन्धन ३—केवल निशस्त्रीकरण से ही विश्व शान्ति की सम्भावना ४—निःशस्त्रीकरण के मार्ग की बाधाएँ (क) सिद्धान्तों की विपरीतता (ख) भय आशंका तथा स्वार्थ ५—निःशस्त्रीकरण के लिए किये

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
जाने वाले प्रयत्न और उनका फल (क) १९४३ की मास्को घोषणा (ख) संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्य (ग) १९५२ का नि:शस्त्रीकरण आयोग (घ) नि:शस्त्रीकरण उपसमिति (ङ) १९५५ का शिखर सम्मेलन (च) रूस के प्रस्ताव (छ) अन्य प्रस्ताव (ज) उपसंहार।

प्रस्तावना—मानव की अनेक मूल प्रवृत्तियों में से 'युयुत्सा' (युद्ध करने की इच्छा) की प्रवृत्ति भी एक प्रवृत्ति है। आदिकाल से वह युद्ध करता रहा है। पौराणिक काल में देवताओं और राक्षसों में युद्ध हुए, वैदिक काल में युद्ध हुए, गुप्त काल में युद्ध हुए हिन्दी के बीर गाथा काल में युद्ध हुए, भक्ति काल में युद्ध हुए, रीति काल में युद्ध हुए और आधुनिक काल में युद्ध हो रहे हैं। हर समय संसार के किसी न किसी भाग में युद्ध होते ही रहते हैं। अभी कुछ समय पूर्व 'अरब और इसरायल' का युद्ध समाप्त होकर चुका है और कई वर्षों से चलने वाला 'वियटनाम युद्ध' अपने भयकरतम रूप में चल रहा है। समय के अनुसार इनके रूपों और उपकरणों मे अन्तर रहा है। आदि काल में पत्थरों और पेड़ों से युद्ध होता था, बाद में तीर-तलवारें चलीं, फिर तोप, तमंचे आये और अब अणु-बम्बों तथा प्रक्षेपणास्त्रों का युग है। इसके साथ साथ मानव आदि काल से ही युद्ध के भयकर परिमाणों को देखकर शान्ति की अभिलाषा भी करता रहा है। वैदिक ऋषि प्रार्थना करते थे—

द्यौ: शान्तिरन्त रिक्षं शान्ति: पृथिवी शान्ति राप: शान्ति रोषधय: शान्तिर्वनस्पतय: शान्तिर्बिश्वेदेवा: शान्ति: शान्ति रेब शान्ति: सामा शान्ति रेधि।

विश्व शान्ति के उपाय—(लीग आफ नेशन्स तथा संयुक्त राष्ट्र संघ) इस शान्ति को प्राप्त करने लिए आज का प्रबुद्ध मानव अनेक उपायों को सोच रहा है। प्रथम महायुद्ध के बाद 'लीग आफ नेशन्स' तथा द्वितीय महायुद्ध के बाद 'संयुक्त राष्ट्र संघ' की स्थापना इसी उद्देश्य से हुई थी। किन्तु ये प्रयत्न शान्ति की स्थापना में पूर्ण सफल नहीं हुए। 'लीग आफ नेशन्स' के होते हुए भी 'द्वितीय महायुद्ध' हुआ और 'संयुक्त राष्ट्र संघ' के होते हुए भी पश्चिमी एशिया और वियटनाम में युद्ध हुए हैं और युद्ध की बिभीषिका निरन्तर बनी हुई है।

पंचशील—भारत ने इसी शान्ति को प्राप्त करने के लिए पंचशील के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया पर सबसे पहले इन सिद्धान्तों पर सहमत होने वाले चीन ने ही भारत की सीमा पर हमला कर दिया।

वारसा, नाटो, सीटो आदि सैनिक गठ बन्धन तथा सैन्यशक्ति की वृद्धि—इसी शान्ति को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रों ने आपस में अनेक सैनिक गठबन्धन किये हैं तथा अपनी अपनी सैनिक शक्ति को बढ़ाना आरम्भ कर दिया है। विभिन्न राष्ट्रों ने वैज्ञानिकों को प्रलयंकारी अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण में लगा दिया है—

महा मृत्यु के पूजन में वैज्ञानिक राज्य नियोजिता

इन लोगों का कहना है कि जब हमारे पास अदम्य शक्ति होगी, तब कोई भी हम से युद्ध करने का साहस न करेगा और शान्ति की स्थापना हो जायगी।

आज के दोनों प्रमुख गुट (साम्यवादी तथा अमरीकन गुट) इसी भावना को लेकर अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण में होड़ कर रहे हैं। साम्यवादी गुट में भी चीन इस दिशा में विशेष प्रयत्न शील है। वह 'परमाणु बम्ब' बना चुका है और उसके विशेष परीक्षणों को करके उसमें उसे भयंकर से भयकरतर और भयंकरतम बनाने में लगा हुआ है। रूस, अमेरिका, इंगलैण्ड फ्रान्स ने तो इसका निर्माण पहले ही कर लिया है। आज इन सभी देशों के पास शक्ति-शाली परमाणु बम्बों और प्रक्षेपणास्त्रों का विशाल भंडार मौजूद है। ये बम्ब गत महायुद्ध में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नागासाकी और हिरोशिमा में प्रयुक्त परमाणु बम्बों से सैकड़ों गुनी शक्ति रखते हैं और सारे विश्व को समाप्त करने को महान् शक्ति रखते हैं। आज सारा विश्व इनकी विभीषिका से त्रस्त है।

केवल निःशस्त्रीकरण से ही विश्व शान्ति की सम्भावना—आज विश्व के महान् विचारक सोच रहे हैं कि क्या इस शस्त्रीकरण से विश्व शान्ति सम्भव है। "जिन अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण ही विनाश और अशान्ति के लिए हुआ है वे किस प्रकार निर्माण और शान्ति को कर सकेंगे ?" समझ में नहीं आता, अतः विश्वशान्ति और मानवता की रक्षा के लिए इन अस्त्र-शस्त्रों की होड़ को छोड़कर निश्चित रूप से निःशस्त्रीकरण को अपनाना होगा।

निःशस्त्रीकरण के मार्ग की बाधाएँ—यद्यपि आज विश्व के महान् विचारक तथा राजनीतिज्ञ निःशस्त्रीकरण की अनिवार्यता को समझने लगे हैं, किन्तु वे चाहते हुए भी इसे नहीं कर पा रहे हैं। इसके प्रधान कारण निम्न हैं—

सिद्धान्तों की विपरीतता—साम्यवादी देश मानते हैं कि जब तक विश्व में पूँजीवादी लोग रहेंगे, वे दूसरों का हर प्रकार से शोषण करते रहेंगे, अतः विश्व शान्ति के लिए पूँजीवाद का विनाश अनिवार्य है। यह शान्ति-पूर्ण उपायों से असम्भव है अतः इसके नाश के लिए अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण जरूरी है। इसके विपरीत पूँजीवादी देशों का कहना है कि साम्यवादी देश सारे विश्व को अपने अधीन करके नवीन प्रकार के साम्राज्य की स्थापना करना चाहते हैं अतः इससे विश्व की रक्षा के लिए शास्त्र निर्माण आवश्यक है। इस प्रकार की भावना से शास्त्र निर्माण में होड़ हो रही है।

भय, आशंका तथा स्वार्थ—आज विश्व के राष्ट्रों में पारस्परिक भय तथा आशंकाएँ भरी हुई हैं, जो अविश्वास तथा शीतयुद्ध को जन्म देकर शस्त्र-निर्माण में वृद्धि करती हैं। अपने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए भी उपनिवेशवाद तथा विस्तारवाद का सहारा लिया जा रहा है। गोरे लोग दक्षिणी अफ्रीका में कालों का शोषण कर रहे हैं। इसरायल ने बलपूर्वक अरबों की भूमि पर कब्जा कर रखा है। भारत की उत्तरी सीमा पर चीन का अधिकार है, और विएटनाम में अमरीका प्रजातन्त्र की रक्षा के नाम पर युद्ध कर रहा है। इस प्रकार की अनेक घटनाएँ आज अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण को बढ़ावा दे रही हैं।

निःशस्त्रीकरण के लिए किये जाने वाले प्रयत्न और उनका फल—आज सभी राष्ट्र निःशस्त्रीकरण की आवश्यकता को समझकर उसके लिए प्रयत्न कर रहे हैं। विभिन्न राष्ट्रों ने विभिन्न समयों पर इसके लिए अनेक प्रस्ताव रखे हैं, किन्तु पारस्परिक भय आशंका तथा शीत युद्ध के कारण वे सफल नहीं हो पाये हैं। इन प्रस्तावों में से मुख्य प्रस्ताव निम्न हैं—

१९४३ की मास्को घोषणा—१९४३ में मास्को में ब्रिटेन, अमरीका, सोवियत संघ तथा चीन ने घोषणा की कि उनका सामान्य उद्देश्य शस्त्रास्त्रों की व्यवस्था के लिए सामान्य समझौता करना है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्य—संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अपने निर्माण के समय अपनी २६ वीं धारा में इस पर बल दिया। दिसम्बर १९४६, तथा जनवरी १९४७ को राष्ट्र संघ की सामान्य सभा ने इस विषय में प्रस्ताव पारित किया और अणु शक्ति आयोग की इसी उद्देश्य से स्थापना की, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण के विषय में सर्वसम्मति से कोई निर्णय न होने के कारण यह असफल रहा। १९४८ में इसी प्रकार का एक आयोग और बना, किन्तु वह भी असफल रहा।

१९५२ का निःशस्त्रीकरण आयोग—१९५२ में उक्त दोनों आयोगों के समन्वित

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रूप को एक निःशस्त्रीकरण आयोग के रूप में परिणत कर दिया गया । इस आयोग में अनेक प्रस्ताव उपस्थित किये गये, किन्तु सभी सदस्य किसी एक प्रस्ताव पर सहमत न हो सके । सब अधिक मतभेद इस बात पर था कि प्रत्येक राष्ट्र की सैनिक शक्ति किस आधार पर हो । इस विषय पर १९५३ में सोवियत प्रस्ताव तथा आइजन हावर योजना भी सामने आई, पर कोई फल न निकला ।

निःशस्त्रीकरण उपसमिति—१९५४ में राष्ट्र संघ के निःशस्त्रीकरण आयोग ने ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रान्स, रूस तथा कनाडा की एक उपसमिति बनाई, जिसने यह निर्णय किया कि किसी राष्ट्र के पास इतनी सैनिक शक्ति न होनी चाहिए कि वह दूसरे को हानि पहुँचा सके, पर इस पर भी सैनिक संख्या के प्रश्न को लेकर मतभेद होने से यह भी असफल हो गई ।

१९५५ का शिखर सम्मेलन—जेनेवा में जौलाई १९५५ में ब्रिटेन, अमेरिका, रूस तथा फ्रान्स के शासनाध्यक्षों तथा विदेश मन्त्रियों का सम्मेलन हुआ, जिसमें निश्चय हुआ कि राष्ट्र संघ का निःशस्त्रीकरण आयोग अपना काम जारी रखे, पर इससे भी कोई लाभ न हुआ ।

फरवरी १९५७ के रूस के प्रस्ताव—इस समय रूस के प्रधान मन्त्री बुलगानिन ने अमरीका के राष्ट्रपति आइजन हावर के सामने प्रस्ताव रखा जिसमें निम्न बातों पर बल दिया गया था—

अणु बम्बों तथा उद् बम्बों के परीक्षण को बन्द करना, ब्रिटेन, अमेरिका तथा रूस द्वारा अणु बम्बों का त्याग, नाटो तथा वारसा सन्धि के देशों द्वारा अनाक्रमण सन्धि, प्रत्येक देश से विदेशी सैनिकों का हटाना तथा आकस्मिक आक्रमणों को रोकने का समझौता । इस समय युद्ध काल के लिए आणुविक परीक्षण रुक गये पर १९६२ से वे पुनः चालू हो गये और यह प्रस्ताव भी बेकार रहा ।

अन्य प्रस्ताव—१८ मार्च १९६२ को जेनेवा में, १७ राष्ट्रों का सम्मेलन हुआ पर वह व्यर्थ रहा । १९६३ में मास्को में अणु आयुधों के पृथ्वी के अन्दर तथा अन्तरिक्ष में रोकने के लिए १ सन्धि हुई, पर उसका भी सबने पालन नहीं किया २७ जौलाई १९६५ तथा २७ जनवरी १९६६ को निःशस्त्रीकरण आयोग की बैठकें हुईं । २ फरवरी १९६६ को रूस के प्रधान मन्त्री कोसीगिन इस विषय में एक सन्देश दिया । सभी प्रस्ताव ऊपर से देखने में बड़े अच्छे लगते हैं, पर भय तथा आशंकाओं के कारण वे कार्य रूप में परिणत नहीं हो पाये हैं ।

उपसंहार—अभी तक के निःशस्त्रीकरण के प्रयत्नों के इतिहास को देखने से पता चलता है कि पूर्व तथा पश्चिम के बीच की खाई अत्यधिक चौड़ी है और उसका पाटना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है ।

पारस्परिक सद्भावना, आध्यात्मिक प्रचार तथा विश्व बन्धुत्व की भावना से ही निःशस्त्रीकरण सम्भव है और तभी विश्व में स्थायी शान्ति की आशा की जा सकती है ।

हम भगवान से प्रार्थना करते हैं कि वह मानव का सद्बुद्धि दे जिससे कि वह अपनी निम्न प्रार्थना को सत्य देख सके ।

द्यौः शान्ति रन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिः—

कश्मीर समस्या

१—प्रस्तावना (समस्या का आरम्भ) २—ग्राहम कमीशन तथा समस्या की

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उलझनें । ३—भारत सरकार का जनता का मत जानने का निर्णय । ४—शेख अब्दुल्ला की महत्त्वाकांक्षा । ५—पाकिस्तानी आक्रमण तथा ताशकन्द घोषणा । ६—शेख अब्दुल्ला तथा उपसंहार ।

प्रस्तावना—भारत को स्वतन्त्रता के साथ साथ जो समस्याएँ प्राप्त हुईं, उनमें देशी रियासतों की भी एक प्रमुख समस्या थी । सभी रियासतों को यह पूरा अधिकार था, कि वे इच्छानुसार भारत या पाकिस्तान के साथ मिल सकती हैं या स्वतन्त्र रह सकती हैं । भारत की सभी रियासतें किसी न किसी प्रकार भारत में मिल गईं, पर कश्मीर के राजा हरीसिंह ने अपनी हठधर्मी के कारण अपनी रियासत को भारत से मिलाना स्वीकार नहीं किया और वे स्वतन्त्र ही रहे । कश्मीर की अधिकांश जनता मुसलमान थी, अतः पाकिस्तान ने इस्लाम-बाद का नारा लगाकर सीमा प्रान्त के कबाइलियों को कश्मीर पर आक्रमण करने के लिए उभारा उन्हें अस्त्र-शस्त्र दिए और उनकी सहायता के लिए पाकिस्तानी सेना भी भेज दी । कुछ ही समय में कश्मीर के एक बड़े भाग पर कबाइलियों और पाकिस्तानी सेनाओं का अधिकार हो गया । वहाँ की जनता भारत के साथ रहना चाहती थी । जनता की आवाज और पाकिस्तानी सेनाओं के आक्रमण से विवश होकर महाराज हरीसिंह ने रियासत को भारत में उस समय विलय किया, जब पाकिस्तानी सेनाएँ कश्मीर से केवल २१ मील दूर थीं । शीघ्र ही भारत सरकार ने भारतीय सेनाओं को वहाँ भेजा और उसने कश्मीर के लगभग तीन चौथाई भाग को आक्रमण-कारियों से मुक्त करवा लिया । इधर भारत ने इसकी शिकायत सुरक्षा परिषद में की और उसकी आज्ञा से (जब भारतीय सेनाएँ निरन्तर जीत रही थीं) कश्मीर में युद्ध विराम हो गया । लगभग कश्मीर का $\frac{1}{4}$ भाग पाकिस्तान के अधिकार में रह गया ।

ग्राहम कमीशन तथा समस्या की उलझनें—सुरक्षा परिषद ने मि० ग्राहम की अध्यक्षता में कश्मीर में आक्रमणकारी का पता लगाने के लिए एक कमीशन भेजा जिसने पाकिस्तान को आक्रमण कारी घोषित किया । पहले तो पाकिस्तान ने इसे स्वीकार नहीं किया, पर बाद में उसे यह स्वीकार करना पड़ा । सुरक्षा परिषद में कुछ ऐसी शक्तियाँ थीं, जिनका हित कश्मीर के पाकिस्तान के साथ रहने में था और जिनका सुरक्षा परिषद में बहुमत था । अमरीका गिल-गिट तथा टिशबाल के प्रदेश में अपने सैनिक अड्डे बनाना चाहता था, क्योंकि वहाँ पर रूस चीन, अफगानिस्तान तथा तिब्बत की सीमाएँ मिलती थीं । अतः उसने सुरक्षा परिषद में कोई भी निर्णय न होने दिया और समस्या अधिक उलझ गई ।

भारत सरकार की जनता का मत जानने का निर्णय—तत्कालीन भारतीय गवर्नर जनरल तथा प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा की कि कश्मीर में सामान्य स्थिति के हो जाने पर वहाँ मतगणना करायी जायगी, कि वहाँ की जनता भारत या पाकिस्तान के साथ रहना चाहती है या स्वतन्त्र । पाकिस्तान जानता था कि उसकी सेना ने कश्मीर में बरबादी की है, अतः वहाँ की जनता किसी भी प्रकार से पाकिस्तान के साथ नहीं मिलेगी, अतः उसने ऐसी परिस्थितियाँ ही उत्पन्न न होने दीं, कि वहाँ मतगणना हो सके ।

शेख अब्दुल्ला की महत्त्वाकांक्षा—इसी बीच कश्मीर की जनता द्वारा चुनी हुई संविधान सभा ने सर्वसम्मति से कश्मीर को भारत में रखने का फैसला कर दिया । अमेरिका को यह अच्छा न लगा । उसने अनेक षड्यन्त्रों को करके शेख अब्दुल्ला के द्वारा कश्मीर को स्वतन्त्र रखने की आवाज लगवादी । कश्मीर के उपप्रधान मन्त्री बख्शी-

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गुलाम मुहम्मद ने महाराजा हरीसिंह के द्वारा शेख अब्दुल्ला को बरखास्त करवा कर गिरफ्तार करवा लिया।

पाकिस्तानी आक्रमण तथा ताशकन्द घोषणा—इसके बाद अनेक बार यह मामला सुरक्षा परिषद में उठाया गया, भारत तथा पाक के प्रधान मन्त्रियों तथा उच्चाधिकारियों की अनेक बार मंत्रणायें हुईं, पर कोई हल न निकल सका। पाकिस्तान ने सितम्बर १९६५ में कश्मीर को बल-पूर्वक लेने के लिए सैनिकों तथा अपने नागरिकों को सादा वेश में कश्मीर में अशान्ति उत्पन्न करने के लिए भेज दिया। उसकी सेना ने भी कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। भारत ने भी उसको रोकने के लिए पश्चिमी पंजाब पर आक्रमण किया। भारतीय बीरों ने अमरीकी टैंकों तथा शैबरजैट विमानों को नष्ट-भ्रष्ट करके पाकिस्तानी सेना को करारी हार दी। इस बार पुनः संसार के कुछ महान देशों ने उस समय फिर युद्ध-विराम करवा दिया, जब भारतीय सेनाएँ लगभग लाहौर तक पहुँच गई थीं।

रूस के प्रधान मन्त्री श्री सोकीगिन ने भारत के प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री तथा पाक के राष्ट्रपति जनरल अयूब को जनवरी १९६६ में ताशकन्द में कश्मीर समस्या पर विचार करने के लिए आमन्त्रित किया। वहाँ रूस के प्रधान मन्त्री के प्रयत्नों से श्री शास्त्री तथा श्री अयूब अपनी अपनी सेनाओं को अपने अपने क्षेत्रों में वापिस बुलाने के लिए राजी हो गये और यह भी निश्चय किया कि दोनों देश कश्मीर तथा अन्य सभी समस्याओं को आपसी बातचीत द्वारा हल कर लेंगे। यह घोषणा ताशकन्द घोषणा के नाम से प्रसिद्ध है। यद्यपि घोषणा पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद ही ताशकन्द में श्रीलालबहादुर शास्त्री का देहान्त हो गया पर भारत ने उस घोषणा का स्वागत किया और दोनों देशों की सेनाएँ अपने अपने क्षेत्रों में वापिस आ गईं। तब से लेकर आज तक कश्मीर की गुत्थी जैसी की तैसी उलझी पड़ी है। भारत आज भी ताशकन्द घोषणा का अक्षरशः पालन कर रहा है, पर पाकिस्तान अनेक बार भारतीय सीमा का उल्लंघन कर चुका है।

शेख अब्दुल्ला तथा उपसंहार—इस बीच में शेख अब्दुल्ला को एक बार जेल से छोड़ा गया। वे विदेश गये पर उन्होंने कश्मीर को स्वतन्त्र राज्य बनाने की अपनी माँग को पुनः दोहराया और कुछ बातें ऐसी कहीं जो भारत में अशान्ति उत्पन्न कर सकती थीं, अतः उन्हें पुनः गिरफ्तार करना पड़ा। अब उन्हें दिसम्बर १९६७ में पुनः छोड़ दिया गया है पर उनकी पुरानी रट अभी बन्द नहीं है। उनके भाषणों को लेकर जनवरी १९६८ में मेरठ में दंगे हो गये हैं। अभी उनका रूप पूर्णतया स्पष्ट नहीं है। भविष्य ही उनके बारे में कुछ कह सकेगा।

कश्मीर समस्या अभी ज्यों की त्यों है। लगभग ⅓ भाग अब भी पाकिस्तानी अधिकार में है। कुछ भाग पर चीन का भी अधिकार है। आज कश्मीर भारत का अन्य राज्यों की भाँति एक राज्य है। वहाँ की जनता भारत के साथ रहने में ही अपना हित समझ रही है। और भारत की धर्म निरपेक्षता को प्रमाणित कर रही है। भगवान पाक को ऐसी सुबुद्धि दे कि वह शान्तिपूर्वक कश्मीर की समस्या को सुलझा सके।

सीमा-विवाद

१—प्रस्तावना। २—पाकिस्तान के साथ सीमा-बिवाद (क) कच्छ के रन का विवाद (ख) कश्मीर विवाद। ३—चीन के साथ सीमा विवाद (क) चीन द्वारा युद्ध-विराम की घोषणा (ख) कोलम्बो का कान्फ्रेंस। ४—उपसंहार।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तावना—अंग्रेज भारत को स्वतन्त्र तो कर गये, किन्तु उन्होंने भारत और पाकिस्तान के नाम से देश के दो भाग कर दिये। इस विभाजन ने जिन अनेक विवादों को जन्म दिया है, उनमें सीमा-विवाद प्रमुख है।

पाकिस्तान के साथ सीमा विवाद—पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान की लम्बी सीमा भारत के साथ मिलती है। पंजाब, राजस्थान तथा बंगाल में पर्याप्त समय तक विवाद चलता रहा किन्तु आपसी बातचीत तथा कमीशनों के निर्णय के फलस्वरूप किसी न किसी प्रकार से वे सुलझ से गये हैं।

कच्छ के रन का विवाद—भारतीय संघ में कच्छ की रियासत का विलय ४ मई १९४८ को हुआ था। पाकिस्तान ने उसी वर्ष कच्छ (भारत) और सिन्ध (भारत) की सीमा का प्रश्न उठाया। १९५४ में पाकिस्तान ने पुनः यह प्रस्ताव किया कि कच्छ के रन को अन्तर्देशीय समुद्र माना जाय और इसके मध्य को भारत तथा पाक की सीमा माना जाय। इस प्रकार पाक ने उत्तरी रन के लगभग ७००० वर्गमील के आधे ३५०० वर्गमील के क्षेत्र पर अपना दावा किया। १९५५ में भारत द्वारा पाक के दावे को अस्वीकार कर देने के बाद पाक ने छुट-पुट हमले शुरू कर दिये। फरवरी १९६५ में पाकिस्तानी सेनाओं ने कंजरकोट के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया और वहाँ अप्रैल, १९६५ में दोनों देशों की सेनाओं में भयंकर संघर्ष आरम्भ हो गया। जून १९६५ में ब्रिटेन के एक प्रस्ताव के अनुसार दोनों देशों ने समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये और वहाँ युद्ध विराम हो गया। समझौते (यदि दो माह के अन्दर दोनों सरकारें किसी निर्णय पर नहीं पहुँच पाती हैं, तो इसके लिए तीन सदस्यों के एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण की नियुक्ति होगी और उसका निर्णय दोनों को मानना होगा) के अनुसार एक न्यायाधिकरण की नियुक्ति हुई इसमें भारत द्वारा मनोनीत युगोस्लाविया, पाक द्वारा मनोनीत ईरान तथा दोनों की सहमति से स्वीडन के जज नियुक्त हुए। इनमें स्वीडन के सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्ष डा० गुनथंवार लेगर ग्रेन प्रधान थे। इस न्यायाधिकरण की पहली बैठक १५ फरवरी १९६६ को हुई और १९ फरवरी १९६८ को अपने फैसले में विवादग्रस्त ३५०० वर्ग मील के क्षेत्र में से ३२० वर्गमील के क्षेत्र पर पाकिस्तान का तथा शेष पर भारत का अधिकार माना है। जो भाग पाक को दिया गया है वह सामरिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। फैसले में कहा गया है कि कुछ ऐसे भाग जो पाक से घिरे हुए हैं, स्थायी शान्ति बनाये रखने के उद्देश्य से पाक को दिये जा रहे हैं। इस प्रकार यह एक राजनीतिक फैसला हो गया है, जिसे पूर्व निश्चय के अनुसार भारत भाग को बाध्य नहीं है, फिर भी भारत सरकार ने देश के पर्याप्त विरोध के होने पर भी, शान्ति की रक्षा के लिए और अपने प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री की भावनाओं का आदर करने के लिए इसे मान लिया है।

कश्मीर विवाद—कश्मीर में भी भारत तथा पाकिस्तान की सेनाएँ आमने सामने खड़ी रहती हैं। वहाँ भी युद्ध विराम रेखा को लेकर छुटपुट झड़पें होती रहती हैं, पर वास्तव में यह सीमा विवाद नहीं है, यह तो कश्मीर का पूरा मामला ही है। इस समय दोनों देशों की लम्बी सीमाओं पर निशान लगाने का काम चल रहा है, जिसका अधिकांश भाग पूरा हो चुका है। 'कच्छ के रन' का फैसला भी हो चुका है। इस प्रकार कश्मीर को छोड़कर भारत तथा पाक का सीमा विवाद लगभग समाप्त सा है।

चीन के साथ सीमा विवाद—आरम्भ में भारत तथा चीन के सम्बन्ध बहुत ही मधुर थे। भारत सर्वदा से चीन को संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन को स्थान दिलाने का प्रयत्न करता रहा है। १९५० में चीन को प्रसन्न करने के लिए ही भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.
में तिब्बत की सदस्यता के प्रश्न को दबवा दिया था और तिब्बत पर चीन की राजनीतिक सत्ता स्वीकार कर ली थी। चीन के प्रधान मन्त्री चू एनै लाई ने १९५४ में भारत की यात्रा की थी और सह अस्तित्व के सिद्धान्त को स्वीकार करके 'पंचशील' को स्वीकार किया था और सारे भारत तथा चीन में 'हिन्दी चीनी भाई-भाई' का नारा बुलन्द हुआ था, किन्तु धीरे-धीरे मतभेद बढ़ने लगे। चीन के विस्तारवादी दृष्टिकोण के कारण ये मतभेद शत्रुता के रूप में प्रकट हो गये। आरम्भ में चीन ने तिब्बत पर आक्रमण करके उसे आत्मसात् कर लिया। भारत ने वहाँ के शासक श्री दलाई लामा को राजनीतिक शरण दी। इससे चीन और भी अधिक क्रुद्ध हो गया। और उसने भारत की १४००० वर्ग मील भूमि पर अपना दावा प्रस्तुत कर दिया। उसने २० अक्टूबर १९६२ को भारत की सारी उत्तरी सीमा (नेफा तथा लदाख) पर आक्रमण करके भारत के हजारों वर्गमील के क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लिया। उसने परम्परागत 'मेन मोहन रेखा' तथा प्राकृतिक सीमाओं को भी स्वीकार नहीं किया।

चीन द्वारा युद्ध विराम की घोषणा— पश्चिमी राष्ट्रों ने भारत को सैनिक सहायता दी, प्रायः विश्व के अधिकांश राष्ट्रों ने उसे नैतिक समर्थन दिया, भारत की जनता ने उसे भारत की भूमि से खदेड़ने का दृढ़ निश्चय किया, अतः चीन ने स्वयं २० नवम्बर १९६२ को युद्ध बन्द कर दिया और घोषणा की कि वह ७ नवम्बर १९५९ तक की स्थिति तक वापिस लौट जायगा। पर भारत ने घोषणा की कि जब तक चीन ८ सितम्बर १९६२ तक की स्थिति तक वापिस नहीं लौट जाता, तब तक सीमा विवाद पर कोई वार्ता नहीं होगी।

कोलम्बो कान्फ्रेंस— इस विवाद को शान्त करने के लिए श्रीलंका, घना, संयुक्त अरब गणराज्य, वर्मा, इन्डोनेशिया तथा कंबोडिया के प्रतिनिधियों ने कोलम्बो में एक कान्फ्रेंस की तथा श्री लंका की प्रधान मन्त्री ने भारत तथा चीन में जाकर दोनों देशों की सरकारों से इस पर बातें कीं। आरम्भ में चीन ने इसे स्वीकार करने का रुख अपनाया। भारत ने भी उसे निम्न दोषों के होते हुए भी शान्ति की अभिलाषा से स्वीकार कर लिया—

१—यह चीन को आक्रान्ता नहीं बतलाता—

२—इसके अनुसार लद्दाख में अनरूई चीन पर चीन को आक्रमण द्वारा प्राप्त अधिकार रखने का अधिकार मिलता है, जो आक्रमण जनित लाभ होने से अनुचित हैं।

३—इससे प्रकट होता है कि चीन युद्ध में विजयी है और भारत पराजित।

इतना होते हुए भी जब भारत इस पर तैयार हो गया, तब चीन ने अपने रुख में परिवर्तन करके इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

उक्त समय से वहाँ युद्ध बन्द है, पर सारी उत्तरी सीमा पर दोनों देशों की सेनाएँ जमा हैं, जिनमें यदा-कदा झड़पें होती रहती हैं। भारत ने चीन को बहुत से विरोध पत्र भेजे हैं, पर चीन इनकी चिन्ता नहीं करता। इस समय इस सीमा पर प्रायः शान्ति है, किन्तु भारत का एक बड़ा क्षेत्र चीन के अधिकार में है कहा नहीं जा सकता कि इस समस्या का हल क्या होगा और अन्त कब होगा।

उपसंहार—इस प्रकार भारत को पाकिस्तान तथा चीन के साथ सीमा समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनमें पाकिस्तान के साथ तो कश्मीर के अतिरिक्त प्रायः सभी विवादों पर समझौता हो चुका है और सीमा पर चिन्ह लगाये जा रहे हैं, किन्तु चीन के साथ इस विषय में कुछ भी नहीं हो रहा है। वास्तव में चीन केवल बल प्रयोग की ही भाषा समझता है, अतः भारत को भी अपनी सैनिक शक्ति को बढ़ाकर उसे युद्ध में परास्त करना होगा और तभी यह विवाद दूर हो सकेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

राष्ट्र भाषा

१—प्रस्तावना (परिभाषा) २—राष्ट्र भाषा का देश की अन्य भाषाओं से सम्बन्ध ३—राष्ट्र भाषा के गुण (क) सरलता (ख) राष्ट्र की प्रवृति के अनुसार विकसन शीलता (ग) नवीन शब्दों के निर्माण की शक्ति (घ) लिपि की सुबोधता तथा वैज्ञानिकता (ङ) अधिकांश जनता की मातृ भाषा का होना (च) विशाल साहित्य, ४—राष्ट्र भाषा से लाभ (क) राष्ट्रीय एकता, (ख) शासकीय कार्यों में सुविधा, (ग) शिक्षा की प्राप्ति में सरलता ५—मार्ग की बाधाएँ तथा उपसंहार।

१—प्रस्तावना (परिभाषा)—राष्ट्र भाषा का शाब्दिक अर्थ है—राष्ट्र की भाषा अर्थात् वह भाषा जिसे राष्ट्र की अधिकांश जनता समझ सके तथा जो सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रशासनिक, सामाजिक तथा शैक्षणिक कार्यों में प्रमुख रूप से व्यवहार में लाई जा सके, राष्ट्र भाषा कही जाती है। इस परिभाषा के अनुसार हमारे राष्ट्र भारत की राष्ट्रभाषा 'हिन्दी' है। वह देश की १८-२० करोड़ जनता की मातृ भाषा हैं और उसे लगभग ३० करोड़ व्यक्ति समझ सकते हैं। इसी कारण भारतीय संविधान में उसे 'राष्ट्र भाषा' के पद पर आसीन किया गया है।

राष्ट्रभाषा का देश की अन्य भाषाओं से सम्बन्ध—राष्ट्र भाषा का देश की समस्त भाषाओं से स्वाभाविक सम्बन्ध होना चाहिए। उसकी शब्दावली, उसके साहित्य की मूल भावनाएँ तथा विचारों को प्रकट करने की शैलियाँ देश की अन्य भाषाओं से मेल खाती हों। हिन्दी में ये सभी गुण हैं। भारत की सभी भाषाएँ या तो संस्कृत की पुत्रियाँ हैं या उससे अत्यधिक प्रभावित हैं। संस्कृत के शब्द, संस्कृत साहित्य की आदर्शवादिता, प्रकृति-प्रेम समन्वय की भावना, धार्मिक भावों की प्रचुरता प्रायः सभी भाषाओं में हैं। हिन्दी संस्कृत की ज्येष्ठ पुत्री कही जाती है, अतः उसका इस आधार पर भारत की सभी भाषाओं के साथ बहिनों का नाता है। यह एक प्रमुख कारण है जो हिन्दी को 'राष्ट्र भाषा' बनने की योग्यता प्रदान करता है।

राष्ट्रभाषा के गुण—राष्ट्र भाषा में राष्ट्र को अन्य भाषाओं के साथ भाई चारे के नाते के अतिरिक्त निम्न गुणों का होना भी आवश्यक है—

सरलता—उसे सरल होना चाहिए, जिससे अन्य भाषा भाषी भी उसे थोड़े से समय में सरलता से सीख सकें। हिन्दी में यह गुण पर्याप्त मात्रा में है। उसकी शब्दावली अन्य भाषाओं से मेल खाती है और उसे सरलता से सीखा जा सकता है।

राष्ट्र की प्रकृति के अनुसार विकसनशीलता—स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत राष्ट्र का सर्वतोन्मुखी विकास हो रहा है, अतः राष्ट्र भाषा के लिए यह आवश्यक है कि वह राष्ट्र के विकास के साथ साथ अपने विकास की भी क्षमता रखे। हिन्दी की साहित्यिक परम्पराएँ उसकी विविध शैलियाँ तथा संस्कृत निष्ठ शब्दावली उसके विकास में परम सहायक हैं। इसी के फलस्वरूप हम देखते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी का बहुमुखी विकास हुआ है। उसमें विज्ञान, राजनीति, दर्शन कानून आदि पर मौलिक तथा अनूदित ग्रन्थ लिखे गये हैं।

नवीन शब्दों के निर्माण की शक्ति—हिन्दी में संस्कृत के उपसर्ग तथा प्रत्ययों को ग्रहण करके उनके सहयोग से आवश्यकता के अनुसार विज्ञान, राजनीति, कानून आदि के असंख्य शब्दों का निर्माण हो सकता है और हो रहा है जो उसके राष्ट्र-भाषा होने के लिए आवश्यक है। समीक्षक, परीक्षक, निरीक्षक अधीक्षक आदि इसी प्रकार के शब्द हैं। इस प्रणाली के द्वारा पारिभाषिक शब्दों का निर्माण सरलता से हो सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

लिपि की सुबोधता तथा वैज्ञानिकता—हिन्दी की लिपि देवनागरी सुबोध तथा वैज्ञानिक है। उसकी प्रधान विशेषता यह है कि उसमें जो कुछ बोला जाता है, वही लिखा जाता है। थोड़े से परिवर्तन के द्वारा उसमें संसार की कोई भी भाषा अच्छी प्रकार से लिखी जा सकती है।

अधिकाँश जनता की मातृभाषा का होना—हिन्दी भारत के १८-२० करोड़ निवासियों की मातृभाषा है तथा उसे लगभग ३० करोड़ व्यक्ति समझ सकते हैं। प्रजातन्त्र के युग में बहुसंख्यकों की भाषा का राष्ट्र भाषा होना उचित ही है।

विशाल साहित्य—हिन्दी का साहित्य विशाल है। उसमें महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, समालोचना, आदि के अतिरिक्त राजनीति, विज्ञान, कानून आदि के ग्रन्थ भी पर्याप्त संख्या में हैं और लिखे जा रहे हैं—

राष्ट्रभाषा से लाभ—हिन्दी के राष्ट्र भाषा हो जाने से हमें अनेक लाभ हैं। इनमें मुख्य निम्न हैं—

राष्ट्रीय एकता—अंग्रेजी विदेशी भाषा है। भूतकाल में चाहे उसने देश में एकता लाने का प्रयत्न किया हो, पर वह अब इस कार्य को करने में सर्वथा असमर्थ रहेगी, क्योंकि अंग्रेजों के अनेक प्रयत्नों के होने पर भी उसे १ प्रतिशत जनता भी अच्छी तरह से न सीख पाई। प्रजातन्त्र में राष्ट्र भाषा का जानना साधारण से साधारण व्यक्ति के लिए भी आवश्यक है। हिन्दी को सभी सरलता से सीख सकते हैं। जब सभी इसे सीख लेंगे तो आपस में विचारों का आदान-प्रदान सरलता से हो सकेगा, जिससे देश में एकता की भावना का प्रसार होगा।

शासकीय कार्यों में सुविधा—इसका प्रचार हो जाने पर शासकीय कार्यों में सुविधा होगी। अभी साधारण जनता अंग्रेजी नहीं जानती, जिससे वह शासन के अंग्रेजी में लिखे कानूनों को वास्तविक रूप में न समझ कर समुचित रूप में पालन नहीं करती है। हिन्दी के व्यवहार होने पर यह कठिनाई दूर हो जायगी। दूसरे अभी अंग्रेजी से विभिन्न भाषाओं में अनुवाद कराने पर जो समय तथा धन का व्यय होता है, वह भी न होगा।

शिक्षा की प्राप्ति में सरलता—अभी अंग्रेजी के अध्ययन में छात्रों को अति कठिनाई का अनुभव होता है। निरन्तर प्रयास करने पर भी वे ठीक तरह से इसका बोलना तथा लिखना नहीं सीख पाते। हिन्दी के व्यवहार से यह दुरुपयोग बच सकेगा।

मार्ग की बाधाएँ तथा उपसंहार—यद्यपि हिन्दी में राष्ट्र भाषा होने के सभी गुण हैं और संविधान ने उसे राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार कर भी लिया है, पर उसके मार्ग में अनेक बाधाएँ हैं। अभी तक उसमें सर्वमान्य पारिभाषिक शब्दों का निर्माण पूरी तरह से नहीं हुआ है। विज्ञान, चिकित्सा-शास्त्र, कानून आदि के ग्रन्थों की भी कमी है। सबसे अधिक बाधा तो वे अंग्रेजी शिक्षित व्यक्ति हैं, जो आज ऊँचे ऊँचे पदों पर स्थित हैं। उन्हें भय है कि यदि हिन्दी का अधिक प्रचार हो गया और अंग्रेजी हट गई, तो वे इतना लाभ प्राप्त न कर सकेंगे। वे लोग साधारण जनता में भाषा-वाद' की भावनाओं को उभाड़ते हैं और नाना प्रकार के आन्दोलनों के द्वारा घृणा का प्रचार करते हैं। आधुनिक समय में हुए मद्रास, आंध्र, बंगाल आदि के झगड़े इसी का दुष्परिणाम है।

ऐसी स्थिति में हम हिन्दी भाषा-भाषियों का परम कर्तव्य है कि अहिन्दी भाषियों की समस्त आशंकाओं का उन्मूलन करें और उन्हें प्रेम पूर्वक हिन्दी सिखायें। जो अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को सीख सकते हैं, वे थोड़े से प्रयत्न से हिन्दी अवश्य सीख लेंगे।

हमारी सरकार का भी कर्तव्य है कि वह केवल कानून के द्वारा ही हिन्दी को राष्ट्र

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भाषा बनाकर अपने कर्तव्य की इतिश्री न समझ ले। वह उसके प्रचार और प्रसार के लिए निरन्तर प्रयत्न करें।

हमारे अहिन्दी की भाषा भाषी भाइयों का भी कर्तव्य है कि वे यह समझलें कि पराधीनता के अवशेष के रूप में अंग्रेजी को अधिक समय तक देश में प्रश्रय नहीं दिया जा सकता है। उसे एक न एक दिन अपना वर्तमान रूप छोड़ना ही होगा। उन्हें थोड़ा सा प्रयत्न करके हिन्दी सीख लेनी चाहिए। हम हिन्दी भाषी उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि हम उन पर किसी भी प्रकार का 'भाषा सम्बन्धी साम्राज्य' स्थापित नहीं करना चाहते हैं और न किसी प्रकार का अनुचित लाभ प्राप्त करना चाहते हैं, हम तो केवल इसी बात पर विश्वास करते हैं—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
निज भाषा उन्नति बिना, मिटै न हिय को शूल।।

राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का स्वरूप

१—प्रस्तावना (राष्ट्रभाषा की परिभाषा) २—राष्ट्र भाषा के कार्य ३—राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप (क) भाषा का स्वरूप १—सरल रूप २—संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त रूप ३—देश की विभिन्न भाषाओं से युक्त समन्वित रूप (ख) लिपि का स्वरूप ४—उपसंहार।

प्रस्तावना (राष्ट्रभाषा की परिभाषा)—राष्ट्रभाषा का शाब्दिक अर्थ है—राष्ट्र की भाषा। वह भाषा जिसे राष्ट्र की बहुसंख्यक जनता समझती तथा व्यवहार में लाती हो राष्ट्रभाषा कही जाती है। अतएव भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी है और भारतीय संविधान में भी उसे यह पद प्रदान किया गया है।

यद्यपि संविधान के अनुसार ही २६ जनवरी १९६५ से उसे राजभाषा के रूप में घोषित किया जा चुका है। किन्तु हमारी सरकार ने १९६७ में अंग्रेजी को अनिश्चित काल तक के लिए (जब तक अहिन्दी भाषी राज्य भाषा हिन्दी को स्वीकार न करलें) सह भाषा के रूप में स्वीकार करने के लिए एक कानून बना दिया है और उसमें कुछ संशोधन भी स्वीकार करके केन्द्रीय नौकरियों के लिए अंग्रेजी और हिन्दी में से किसी एक भाषा का ज्ञान अनिवार्य रखा है। उसके विरोध और समर्थन में उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, मद्रास, आन्ध्र आदि में भी अनेक आन्दोलन तथा प्रदर्शन हुए हैं और आज हिन्दी का 'राष्ट्रभाषात्व' विवाद का एक प्रमुख विषय बन गया है।

राष्ट्रभाषा के कार्य—राष्ट्रभाषा के इस संक्रमण काल में हिन्दी की प्रकृति, सुधार, स्वरूप, आवश्यकता आदि के विषय में अनेक प्रश्नों का उठना स्वाभाविक ही है। इन प्रश्नों में 'राष्ट्रभाषा हिन्दी का क्या स्वरूप हो'? यह एक विचारणीय प्रश्न है। राष्ट्रभाषा के स्वरूप निर्धारण से पहले हमें राष्ट्र-भाषा के विभिन्न कार्यों पर विचार करना चाहिए।

संक्षेप में राष्ट्रभाषा के निम्न प्रमुख कार्य हैं—

१—राष्ट्र के विभिन्न प्रदेशों अथवा राज्यों की सरकारों तथा जनता के मध्य में सम्पर्क रखना।

२—विभिन्न प्रदेशों अथवा राज्यों की सरकारों और केन्द्रीय सरकार के मध्य में सम्पर्क रखना।

३—न्यायालयों, उच्च न्यायालयों तथा सर्वोच्च न्यायालय में अपीलों के निर्णय को उचित रूप में प्रकाशित करना।

४—राष्ट्रीय एकता का प्रचार करना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

५—राजनीतिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, प्राविधिक आदि विषयों के उपयोगी पारिभाषिक शब्दों के निर्माण की योग्यता रखना।

६—मुद्रण यन्त्रों तथा टाइप राइटरों में सुविधाजनक रूप से प्रयोग में लाने की योग्यता रखना।

राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप—राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिये आवश्यक है कि वह इन सभी कार्यों को उचित रूप में करने की योग्यता का सम्पादन करे। उसका स्वरूप ऐसा हो, जो निस्संकोच भाव से इनको कर सके। इस प्रसंग में हमें हिन्दी के भाषा सम्बन्धी तथा लिपि सम्बन्धी रूपों पर विचार करना होगा।

भाषा का स्वरूप—हिन्दी के भाषा गत स्वरूप के विषय में विद्वानों में दो मत प्रचलित हैं पहला उर्दू तथा देशज शब्दों से युक्त हिन्दी का सरल रूप तथा दूसरा संस्कृत के तत्सम शब्दों में युक्त अपेक्षाकृत क्लिष्ट रूप।

सरल रूप—इस मत के अनुयायियों का कहना है कि राष्ट्र भाषा हिन्दी का रूप ऐसा होना चाहिए जिसमें प्रचलित उर्दू, तथा देशज शब्दों की अधिकता हो। बात सुनने में अच्छी लगती है और ऐसी भाषा हिन्दी-भाषा-भाषी राज्यों में तो सरलता से समझी जा सकती है, पर अहिन्दी-भाषी राज्यों में उसका समझना कठिन होगा। क्योंकि इस प्रकार के उर्दू तथा देशज शब्दों का उनकी भाषा से दूर का सम्बन्ध होना भी कठिन है, जिससे उसके समझने और प्रयोग करने में वहाँ के लोगों को कठिनाई होगी। दूसरे इस प्रकार की भाषा उपन्यास, कहानी नाटक आदि में तो खप सकती है, पर विज्ञान, दर्शन, प्राविधिक विषयों में यह खिचड़ी सर्वथा अनुपयुक्त रहेगी।

संस्कृत के तत्सम शब्दों से युक्त रूप—इस रूप के पक्षपाती विद्वानों का मत है कि भूतकाल में संस्कृत सारे भारत में समझी जाती रही है, उसके शब्द विभिन्न रूपों में देश की सभी भाषाओं में मिलते हैं, अतः इस प्रकार की भाषा को समस्त देश में सरलता से ग्रहण किया जा सकेगा। दूसरे संस्कृत से उपसर्ग तथा प्रत्ययों की सहायता से आवश्यकतानुसार पारिभाषिक शब्दों का निर्माण सरलता से हो सकेगा।

यह बात भी कुछ सीमा तक ठीक है, पर यह रूप कुछ अस्वाभाविक सा होगा और इसके विकास में पर्याप्त समय लग जायगा।

देश की विभिन्न भाषाओं के शब्दों से युक्त समन्वित रूप—उक्त कारणों से मेरे मत के अनुसार हिन्दी का ऐसा रूप होना चाहिये जो इसके ऊपर कहे हुए सभी कार्यों को पूरा कर सके और जिसे विभिन्न भाषा भाषी भी सरलता से ग्रहण कर सकें। इस रूप के लिए इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रधानता में साथ साथ उर्दू, अँग्रेजी, बंगाल, गुजराती, तेलगू, मराठी आदि के प्रचलित तथा उपयुक्त शब्दों को भी थोड़े से हेर-फेर से ग्रहण किया जाना चाहिए। ऐसा करने से अन्य भाषा भाषियों की हिन्दी विषयक अनेक आशंकाएँ दूर हो जायेंगी और वह सच्ची राष्ट्रभाषा बन सकेगी।

पारिभाषिक शब्दों के लिये संस्कृत के उपसर्गों तथा प्रत्ययों का आश्रय लेना चाहिए हाँ, उर्दू, अँग्रेजी तथा अन्य किसी देश भाषा के अति-प्रचलित बैंक, रेल जैसे शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण किया जा सकता है।

इसका वाक्य गठन सीधा तथा स्वाभाविक होना चाहिए। इसमें व्यर्थ के लम्बे लम्बे उपवाक्यों के प्रयोग का अभाव होना चाहिए। इसमें लम्बे लम्बे समासों से युक्त पदावली का त्याग भी आवश्यक है।

लिपि का स्वरूप—वैसे तो हिन्दी की वर्तमान लिपि वैज्ञानिक तथा सुविधा पूर्ण है,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पर इसमें घ, ध, म, भ, आदि कुछ वर्ण ऐसे लिखे जाते हैं, जो बहुत कम अन्तर रखते हैं और जल्दी में लिखने पर भ्रामक बन जाते हैं।

संयुक्ताक्षर तथा 'इ' की मात्रा भी मुद्रण कार्य तथा टाइप राईटिंग में कठिनाई उपस्थित करती है। उत्तर प्रदेशीय सरकार ने कुछ समय पूर्व इसे दूर करने का प्रयत्न किया था पर वह इस कार्य में सफल न हो सकी। सर्व सम्मत से किये जाने वाले निर्णय ही इस कार्य को सफल बना सकते हैं।

उपसंहार— मेरे मत के अनुसार ये ऐसे कुछ उपाय हैं, जिनका आश्रय लेकर हिन्दी के 'राष्ट्रभाषा रूप' को विकसित किया जा सकता है। पर यह सारा कार्य धैर्य और समझदारी के साथ धीरे-धीरे होना चाहिए, अन्यथा हानि होने की अधिक सम्भावना है। वास्तव में राष्ट्र भाषा किसी एक व्यक्ति या राज्य की सम्पत्ति नहीं है, वह तो समूचे राष्ट्र की सम्पत्ति है और वह आवश्यकता के अनुसार धीरे धीरे स्वयं विकसित होगी। हमें अपना कर्तव्य करते हुए उसके 'राष्ट्रभाषा रूप' के दर्शन की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

भाषा भेद और राष्ट्रीय एकता

१—प्रस्तावना (भाषाओं की विविधता) २—अहिन्दी भाषियों की आशंकाएँ तथा राष्ट्रीय एकता को खतरा ३—देश में होने वाले विविध उपद्रव ४—अहिन्दी भाषियों की आशंकाएँ और उनका निराकरण ५—राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति तथा उपसंहार।

प्रस्तावना (भाषाओं की विविधता)—क्षेत्रफल तथा जनसंख्या की दृष्टि से नहीं, भाषाओं की दृष्टि से भी भारत एक उपमहाद्वीप है। यहाँ भाषाओं तथा बोलियों की संख्या सैकड़ों तक जा पहुँचती है। यहाँ १४ भाषाएँ तो इतनी प्रमुख हैं, कि भारतीय संविधान ने भी उन्हें क्षेत्रीय भाषाओं के नाम से स्वीकार किया है। यहाँ की भाषाएँ कई भाषा परिवारों से सम्बन्ध रखती है और वाक्य विन्यास शब्दावली तथा लिपि में भी पर्याप्त भिन्नता है। ऐसी स्थिति में भाषा गत भेद भाव का होना स्वाभाविक ही है।

अहिन्दी भाषियों की आशंकाएँ तथा राष्ट्रीय एकता को खतरा—यद्यपि भारतीय संविधान ने हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया है और उसके अनुसार कार्य भी आरम्भ हो गया है, पर इतने से ही समस्या का हल सम्भव नहीं है। अपनी-अपनी मातृ भाषा से सभी को स्नेह तथा मोह होता है। सभी अपनी मातृ भाषा की उन्नति चाहते हैं। जब अहिन्दी भाषी हिन्दी की उन्नति देखते हैं तब उन्हें प्रतीत सा होता है कि उनकी भाषा और उनके साथ अन्याय हो रहा है। जब कुछ महत्वाकांक्षी व्यक्ति अपने स्वार्थ साधन तथा राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उन्हें व्यर्थ के भय दिखलाते हैं और कहते हैं कि उनके ऊपर 'हिन्दी भाषियों' का साम्राज्य लादा जा रहा है और हिन्दी को बलपूर्वक थोपा जा रहा है। कुछ ही दिनों में केन्द्रीय नौकरियों में हिन्दी भाषियों की प्रमुखता हो जायगी। तब तो साधारण जनता वास्तविकता को न समझकर बौखला जाती है और अपने धैर्य तथा संयम को खोकर हिंसा तथा तोड़ फोड़ के मार्ग को भी अपनाने से नहीं चूकती। इस प्रकार इस भाषा भेद के कारण राष्ट्रीय एकता को खतरा पैदा हो जाता है।

देश में होने वाले विविध उपद्रव—गत २६ जनवरी १९६५ को जब पूर्व निश्चय के अनुसार हिन्दी को (केवल नाम मात्र के लिए ही सही) केन्द्र में राजकीय कार्यों में व्यवहार करने के लिए 'राज भाषा' के पद पर आसीन किया गया, देश में एक तूफान सा आगया। मद्रास और आन्ध्र में करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई सैकड़ों व्यक्ति आहत हुए और पचासों हताहत हुए। बंगाल, मैसूर और केरल में भी पर्याप्त विरोध और प्रदर्शन हुए। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो उन पर कोई आफत का पहाड़ टूट रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हमारे प्रधानमन्त्री तथा नेताओं ने अपील की कि कोई नया कार्य नहीं हो रहा है। केवल प्राचीन निश्चयों को ही कार्य रूप दिया जा रहा है। हिन्दी को किसी पर थोपा नहीं जा रहा है। अँग्रेजी उस समय तक सह भाषा के रूप में बनी रहेगी, जब तक अहिन्दी-भाषी उसे चाहेंगे। पर विरोध बढ़ता ही गया। इन कान्डों से दुःखी होकर सन्त विनोबा ने अनशन आरम्भ कर दिया और बड़े प्रयत्नों से हिंसा बन्द हुई।

अहिन्दी भाषी राज्यों की आशंकाओं को दूर करने के लिए पं० जवाहरलाल नेहरू ने कुछ अश्वासन दिये थे। उन आश्वासनों को कानूनी रूप देने के लिए भारत सरकार ने दिसम्बर १९६७ में 'राजभाषा कानून' को प्रस्तुत किया जिसका तात्पर्य था कि 'अँग्रेजी तब तक बनी रहेगी, जब तक भारत के सभी अहिन्दी भाषी राज्य उसे चाहेंगे'। यह देश पर अनिश्चित काल तक अंग्रेजी को लादना था, अतः उत्तर प्रदेश तथा बिहार में इसके विरुद्ध उग्र प्रदर्शन हुए। इस भावना का आदर करने के लिए इसमें यह संशोधन किया गया कि केन्द्र की नौकरियों के लिए (जहाँ अनिवार्य न होगा) अँग्रेजी अथवा हिन्दी में से किसी एक भाषा का ज्ञान ही आवश्यक होगा तथा अहिन्दी भाषी और हिन्दीभाषी राज्यों के मध्य में होने वाले पत्र व्यवहार के साथ मूल-पत्र का हिन्दी अथवा अंग्रेजी अनुवाद रहेगा। केन्द्र भी उक्त प्रकार से ही अनुवाद भेजेगा मद्रास आन्ध्र, मैसूर आदि में भी उक्त कानून का विरोध हुआ और वहाँ पर भी उग्र प्रदर्शन हुए इन सभी प्रदर्शनों में करोड़ों रुपयों की राष्ट्रीय सम्पत्ति नष्ट हुई, गोलियाँ चलीं और बहुत से व्यक्ति हत-आहत हुए। कालिजों के बहुत समय तक बन्द रहने से शिक्षा की प्रगति में भी बाधा हुई।

अहिन्दी भाषियों की आशंकाएँ और उनका निराकरण —अहिन्दी भाषियों को सबसे प्रधान भय यह है कि हिन्दी को उनके ऊपर बलपूर्वक थोपा जा रहा है। वे लोग, जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी है, स्वभावतः ही उनसे अधिक हिन्दी जानते हैं। अहिन्दी-भाषी निरन्तर प्रयत्न करके भी उनके समान हिन्दी का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। बात किसी सीमा तक सत्य हो सकती है, पर प्रयत्न करने से सब कुछ सम्भव है। जो लोग अँग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को सीख सकते हैं क्या वे अपने देश की एक भाषा हिन्दी को नहीं सीख सकते। आज भी दक्षिण में हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान हैं। रूस जैसे विदेश में भी हिन्दी के अच्छे अच्छे ज्ञाता हैं। हाँ इसके लिए धैर्य और सहृदयता की आवश्यकता है।

उनके लिए यह आश्वासन भी आवश्यक है कि जब तक वे हिन्दी को नहीं सीख लेंगे उन्हें हिन्दी का अच्छा ज्ञान न होने के कारण किसी भी प्रकार से हानि नहीं पहुँचाई जायगी। उनकी निम्न स्तर की हिन्दी को भी सम्मान की दृष्टि से देखा जायगा। उन्हें इसमें प्रोत्साहित करने के लिए कुछ विशेष पुरस्कार तथा अतिरिक्त लाभ देने की योजनाओं का निर्माण होना चाहिए।

अहिन्दी भाषियों का दूसरा प्रमुख भय यह है कि उनकी मातृ-भाषा धीरे धीरे समाप्त हो जायगी। यह भय भी निर्मूल है, क्योंकि भारत की प्रत्येक भाषा उसकी अपनी भाषा है और उसे अपने क्षेत्र में विकसित होने और प्रयोग में लाने का पूरा अधिकार है। सब भाषाएँ हिन्दी की बहिनें हैं और उनके सहयोग से ही राष्ट्र भाषा का विकास सम्भव है।

अहिन्दी भाषियों का तीसरा आरोप यह है कि अभी वे दो भाषाएँ (अपनी मातृ भाषा और अँग्रेजी) सीखते हैं और हिन्दी सीखने पर उन्हें तीसरी भाषा भी सीखनी होगी, जबकि हिन्दी-भाषी केवल दो भाषाएँ (हिन्दी तथा अँग्रेजी) सीखेंगे। कुछ समय बाद अंग्रेजी के हट जाने पर अहिन्दी भाषियों को दो (मातृ भाषा तथा हिन्दी) और हिन्दी भाषियों को केवल एक (हिन्दी) भाषा सीखनी होगी। इस प्रकार वे सदा ही लाभ में रहेंगे। इसके लिए हिन्दी भाषियों का भी कर्त्तव्य है कि वे भी अभी तीन भाषाएँ अवश्य

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सीखें और यदि उनमें से दक्षिण की कोई एक भाषा हो, तो और भी अच्छा है। इन स्थितियों में सरकार, समाचार पत्रों और स्वयं सेवी संस्थाओं का कर्त्तव्य है कि वे प्रचार द्वारा व्यर्थ की आशंकाओं का निराकरण करें। विभिन्न लेखों, वृत्त चित्रों आदि के द्वारा सभी भाषाओं के साहित्य की सुन्दर रचनाओं का प्रचार करें, जिससे जनता उनकी ओर आकृष्ट हो।

राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति तथा उपसंहार—वास्तव में हिन्दी एक सरल भाषा है। संस्कृत के निकट होने तथा लिपि के वैज्ञानिक होने के कारण वह थोड़े ही प्रयत्नों से सीखी जा सकती है।

अभी देश के विभिन्न भाषा भाषी एक दूसरे की बात को नहीं समझ पाते। बंगाली आसाम में जाकर खाने-पीने की वस्तुओं को भी संकेत से ही मांगता है, इससे उनमें राष्ट्रीय चेतना कम मात्रा में देर में विकसित होती है। अभी यह कार्य अँग्रेजी कर रही है, पर उसको प्रयोग में लाते समय हर व्यक्ति को यह ध्यान रहता है कि वह एक विदेशी भाषा बोल रहा है। जब उसके हृदय और मस्तिष्क में यह भावना उपस्थित है, तो फिर इसके द्वारा 'राष्ट्रीय-एकता' किस प्रकार दृढ़ होगी, यह समझ में नहीं आता। दूसरे परतन्त्रता के इस 'भग्नावशेष' को अनिश्चित काल तक के लिए अपने यहाँ नहीं रखा जा सकता अतः हमें हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में विकसित करना होगा और उसी के माध्यम से देश में राष्ट्रीय-एकता की भावना को बल मिलेगा। परमात्मा वह दिन शीघ्र लाये जब हम लोग इस भाषा-भेद के भूत को भगाकर एक स्वर में गा उठें—

जय भारत, जय भारती !

भारत में भ्रष्टाचार की समस्या

१—प्रस्तावना (भ्रष्टाचार की व्यापकता) २—भ्रष्टाचार से होने वाली हानियाँ (क) बाँधों पुलों आदि का थोड़े समय में नष्ट होना (ख) व्यर्थ की देरी (ग) अयोग्य व्यक्तियों को पद की प्राप्ति (घ) तस्कर व्यापार से विदेशी मुद्रा की हानि (ङ) स्वास्थ्य-नाश (च) खाद्यान्न का अभाव। ३—भ्रष्टाचार के कारण (क) भौतिकता की वृद्धि (ख) स्वार्थ भावना (ग) सरकार की ढीली नीति (घ) वोटों को प्राप्त करने के लिए अनुचित समर्थन (ङ) मूल्यों की निरन्तर वृद्धि। ४—भ्रष्टाचार को दूर करने के उपाय (क) धार्मिक भावना का प्रचार (ख) आदर्श दंड की व्यवस्था तथा निर्णय में शीघ्रता (ग) ईमानदारी तथा सदाचारी अधिकारियों के लिए पुरस्कार की व्यवस्था (घ) मूल्य वृद्धि को रोकना (ङ) नेताओं तथा अधिकारियों के अनुचित हस्तक्षेप की रोक (च) नेताओं का कुर्सियों के मोह का त्याग ५—सरकार द्वारा किये जाने वाले प्रयत्न तथा उनके उदाहरण और उपसंहार।

प्रस्तावना—यद्यपि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत ने पर्याप्त उन्नति करली है, तीन पंचवर्षीय योजनाओं ने भारत के विकास में पर्याप्त योग दिया किन्तु विकास के लिए जितने प्रयत्न किये गये हैं और पूँजी का जितना व्यय हुआ है, उसके अनुपात में विकास की मात्रा बहुत ही कम है। विचार करने पर इसका प्रधान कारण 'भ्रष्टाचार' ज्ञात होता है। भ्रष्टाचार से तात्पर्य उस निन्दनीय आचरण से है, जिसके वश में होकर व्यक्ति अपने कर्त्तव्य को भूल कर अनुचित रूप से लाभ प्राप्त करता है। रिश्वत, सिफारिश, कालाबाजार, अनुचित मुनाफा खोरी की प्रवृत्ति सब इसी के विभिन्न रूप हैं। आज समाज के प्रत्येक क्षेत्र में इस भ्रष्टाचार के दर्शन हो रहे हैं। बड़े-बड़े नेता, मन्त्री अधिकारी, व्यापारी सभी इससे प्रभावित है। यही कारण है कि कोई भी कार्य सुचारु रूप से उचित समय पर नहीं होता रहा है और उससे देश तथा समाज की अपार हानि हो रही है।

हानियाँ (बाँधों पुलों आदि का टूटना)—भ्रष्टाचार के कारण होने वाली हानियों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की संख्या अपार है। बाँधों, पुलों, इमारतों आदि के निर्माण में फैले हुए भ्रष्टाचार के कारण सीमेण्ट के स्थान पर बालू लगाई जाती है, लोहे के स्थान पर खराब लोहा और बांस के टुकड़े लगाये जाते हैं, खराब ईटें लगाई जातीं है जिससे बड़े बड़े बाँधों, पुलों और इमारतों में शीघ्र ही दरारें पड़ जातीं हैं और उससे अपार धन-जन की हानि होती है।

व्यय की देरी—भ्रष्टाचारी अनुचित लाभ प्राप्त करने की प्रतीक्षा में कार्यों में व्यर्थ की देरी करते हैं। वे आवश्यक कागजातों, वस्तुओं तथा निर्णयों को बहुत समय तक दावे रखते हैं, जिससे सम्पूर्ण कार्य-प्रणाली ही ध्वस्त हो जाती है और महान् हानि होती है।

अयोग्य व्यक्तियों को पद की प्राप्ति—रिश्वत, शिफारिश तथा अन्य किसी दबाव से सरकारी पदों पर अयोग्य व्यक्तियों का चुनाव हो जाता है और वे योग्यता के न होने के कारण अपने कार्य को अच्छी तरह से नहीं कर पाते हैं। इससे भी हानि होती है।

तस्कर व्यापार से विदेशी मुद्रा की हानि—भ्रष्टाचार के फलस्वरूप देश में पर्याप्त मात्रा में तस्कर व्यापार हो रहा है। सोना, रेडियो, ट्रांजिस्टर, घड़ियाँ आदि भारी मात्रा में विदेशों से आ रहे हैं। इससे तटकर की हानि के साथ साथ विदेशी मुद्रा की भी हानि होती है और देश की आर्थिक व्यवस्था पर भारी बोझ पड़ता है।

स्वास्थ्य नाश—भ्रष्टाचारी खाद्य-वस्तुओं तथा औषधियों में हानि कारक द्रव्य मिला देते हैं। अधिकारी भी भ्रष्टाचार के वश में आकर ऐसे लोगों को पूरी तरह से दंड नहीं दे पाते हैं। मिलावट की वस्तुओं और औषधियों के प्रयोग से स्वास्थ्य की बहुत हानि होती है।

खाद्यान्न का अभाव—देश में फैली हुई खाद्यान्न की कमी का एक प्रधान कारण भ्रष्टाचार भी है। इसके वश में आकर व्यापारी, उत्पादक तथा पूँजी पति खाद्यान्न का अनुचित रीति से संग्रह करते हैं और देश में खाद्यान की बनावटी कमी हो जाती है, जिससे साधारण जनता को महान् दुःख होता है।

भ्रष्टाचार के कारण— (भौतिकता की वृद्धि) जब हम इस सर्वव्यापी भ्रष्टाचार के कारणों पर विचार करते हैं, तब हमें ज्ञात होता है कि भौतिकता की वृद्धि तथा आध्यात्मिक और नैतिक भावनाओं की कमी ही इसके प्रधान कारण हैं। भौतिकता के कारण हमें धन और सम्पत्ति से विशेष मोह हो गया है और हम उसे प्राप्त करने के लिए उचित अनुचित साधनों का कोई विचार नहीं करते हैं और भ्रष्टाचार को प्रश्रय देते हैं।

स्वार्थ भावना—स्वार्थ भावना भी भ्रष्टाचार को बढ़ाती है। स्वार्थी व्यक्ति अपने थोड़े से लाभ के लिए देश, समाज तथा जाति की अपार हानि कर देता है। इंजीनियर, ठेकेदार तथा अन्य कर्मचारी थोड़े से सीमेंट को बचाकर पूरे के पूरे बाँध को कमजोर बना देते हैं, जिससे वह थोड़े ही समय में समाप्त हो जाता है।

सरकार की ढीली नीति—सरकार की ढीली नीति भी भ्रष्टाचार को फैलाने में सहायक होती है। इसके कारण बहुत से कामों को करने में व्यर्थ की देरी होती है। सम्बन्धित व्यक्ति अपने काम को शीघ्रता से कराने के लिए भ्रष्टाचार का आश्रय लेते हैं। अपराधियों को दन्ड देने में ढील देने और देर करने से भी भ्रष्टाचार बढ़ता है।

वोटों को प्राप्त करने के लिए अनुचित समर्थन—प्रजातन्त्र में वोटों का विशेष महत्व है। जो लोग चुनाव में खड़ा होना चाहते हैं, वे प्रभाव शाली व्यक्तियों का अनुचित रीति से समर्थन करके उन्हें लाभ पहुँचाते हैं। चुने हुए व्यक्ति भी पुनः चुने जाने के लिये अपने मतदाताओं के भ्रष्ट कार्यों का समर्थन करते हैं और उन्हें दण्डित होने से बचाते हैं।

मूल्यों की निरन्तर वृद्धि—विभिन्न कारणों से जीवनोपयोगी वस्तुओं के मूल्यों में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इससे व्यापारियों तथा उत्पादकों में अधिक लाभ प्राप्त करने की आशा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

से जमाखोरी और जखीरेबाजी की प्रवृत्ति को जन्म मिलता है। ऐसे लोग भ्रष्टाचार का सहारा लेकर सरकारी कानूनों तथा टैक्सों से अपनी रक्षा करते हैं और 'काले बाजार' को प्रोत्साहित करते हैं।

भ्रष्टाचार को दूर करने के उपाय—इस सर्वग्राही भ्रष्टाचार को रोकना हम सभी का कर्तव्य है। इसके अभाव में हमारी उन्नति होना सर्वथा असम्भव है। विचार करने पर इसे रोकने के निम्न उपाय समझ में आते हैं—

धार्मिक भावना का प्रचार—धार्मिक भावना का प्रचार करने से भौतिकता के प्रेम में कमी तथा नैतिकता के प्रेम में वृद्धि होगी। इसके द्वारा हम अनुचित रीति से धन के कमाने में घृणा तथा पाप का अनुभव करेंगे और भ्रष्टाचार में कमी आयेगी।

आदर्श दण्ड की व्यवस्था तथा निर्णय में शीघ्रता—प्रायः भ्रष्टाचारी कहते सुने जाते हैं कि हमने भ्रष्टाचार से लाखों कमाया है, थोड़ा, बहुत (चार छः हजार) जुर्माना दे देंगे, तो क्या हानि है। चार छः महीने की सजा काट आयेंगे, फिर तो जीवनभर आनन्द है। हमने बहुत कमा लिया है, नौकरी जाये तो चली जाये..........। यदि आदर्श दण्ड की व्यवस्था हो जायगी, तो इस प्रकार के लोग भ्रष्टाचार नहीं करेंगे।

दण्ड के निर्णय में शीघ्रता होना भी आवश्यक है। जब निर्णय में देरी होती है, तो अन्य लोग इससे प्रभावित नहीं होते। शीघ्रता होने पर साधारण-जन-समाज इससे भयभीत होकर भ्रष्टाचार से दूर रहेगा।

ईमानदार तथा सदाचारी अधिकारियों के लिए पुरस्कार की व्यवस्था—प्रायः देखा जाता है कि बेईमान और भ्रष्ट अधिकारी तो पर्याप्त धन कमा कर चैन से जीवन बिताते हैं और ईमानदार अपने नित्य के व्यय में भी कठिनाई का अनुभव करते हैं। इससे भ्रष्टाचार के प्रति मोह बढ़ता है। इसको दूर करने के लिए भ्रष्ट अधिकारियों को दण्ड देने के साथ साथ ईमानदार अधिकारियों को अच्छा पुरस्कार तथा पद देना चाहिए, जिससे कि उन्हें भ्रष्टाचार के प्रति घृणा हो और सदाचार से प्रेम।

मूल्य वृद्धि को रोकना—भ्रष्टाचार को रोकने के लिए मूल्य वृद्धि को रोकना चाहिए। जब मूल्य इतनी तेजी से नहीं बढ़ेंगे, तब जमाखोरी मुनाफाखोरी, टैक्सों की चोरी और 'काला बाजार' समाप्त हो जायेंगे और भ्रष्टाचार में भी कमी आयेगी।

नेताओं तथा अधिकारियों के अनुचित हस्तक्षेप की रोक—नेताओं तथा अधिकारियों के अनुचित हस्तक्षेप के रुक जाने पर अपराधियों को उचित दण्ड मिल सकेगा, उचित व्यक्तियों को आयात की हुई वस्तुएँ तथा अन्य सामान प्राप्त होगा। इससे भ्रष्टाचार दूर होगा।

नेताओं की कुर्सियों के मोह का त्याग—भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए नेताओं को कुर्सियों के मोह को छोड़ना होगा। इससे वे भ्रष्टाचार का समर्थन करना छोड़ देंगे। इसके अतिरिक्त कुछ नेताओं को पद का त्याग करके जनता में भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए प्रचार भी करना होगा।

सरकार द्वारा किए जाने वाले प्रयत्न, उदाहरण और उपसंहार—हमारी जन प्रिय सरकार इसको दूर करने के लिए सतत प्रयत्नशील है। इसके लिए आवश्यक वस्तु नियन्त्रण कानून बनाया गया है। भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत भी इसे दूर करने के प्रयत्न जारी हैं। खाद्य व्यापार निगम की स्थापना से खाद्य वस्तुओं में होने वाले भ्रष्टाचार दूर हो सकेंगे। आयकर, बिक्रीकर, तटकर आदि की चोरी और तस्कर व्यापार को रोकने के लिए भी कानून बनाये गये हैं और बड़े बड़े पूँजीपतियों के यहाँ छापे मारकर उन्हें दण्डित किया गया है। पंजाब के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री प्रतापसिंह कैरों,

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उड़ीसा के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री बीजू पटनायक और श्री वीरेनमित्र तथा काश्मीर के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री बख्शी गुलाम मुहम्मद को भी इन्हीं कारणों से पद त्याग करना पड़ा था। केन्द्रीय सरकार ने प्रत्येक स्तर पर इसे रोकने के लिए सदाचार समितियों की स्थापना की है तथा विशेष अधिकारी नियुक्त किये हैं। हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि भ्रष्टाचार की समस्या शीघ्र ही भारत से दूर हो जायगी और भारत संमृद्धि को प्राप्त कर सकेगा।

आधुनिक युग की प्रमुख समस्याएँ

१—प्रस्तावना (मानव तथा समस्याओं का शाश्वत सम्बन्ध), आरम्भ में भोजन वस्त्र की समस्या बाद में स्थान, सम्मान, परिवार आदि की समस्याएँ २—वर्तमान युग के विचार विभेद तथा उनके कारण उत्पन्न समस्याएँ पूँजीवाद, साम्राज्यवाद, समाजवाद। ३—विश्वशान्ति की समस्या—संयुक्त-राष्ट्र संघ, जेनेवा सम्मेलन, नाटो, सीटो आदि सैनिक गुटबन्दियाँ। ४—विश्व के वर्तमान संघर्ष—चीन-भारत, भारत-पाकिस्तान दक्षिणी-पूर्वी एशिया, अरब राष्ट्र तथा फिलिस्तान ५—खाद्य समस्या ६—जनसंख्या की समस्या ७—रङ्ग-भेद तथा प्रकृति भेद की समस्या। ८—मानव मन की उदारता तथा अन्य उपायों द्वारा उक्त समस्याओं का निराकरण। ९—उपसंहार।

परिशिष्ट

पद्माकर

जीवनी तथा परिचय—पद्माकर का जन्म सं० १८१० में बाँदा में हुआ था। ये तैलंग ब्राह्मण थे। इनके पिता पं० मोहनलाल एक सहृदय कवि तथा तान्त्रिक थे। इनकी प्रेरणा से इन्होंने कविता के क्षेत्र में पदार्पण किया और मन्त्र सिद्धि भी की। ये रीतिकाल की परम्परा के अनुसार अनेक राजाओं के दरबार में रहे और उनकी प्रशंसा में अनेक रचनाएँ कीं। ये सबसे पहले सागर के राजा रघुनाथ राव अप्पा साहब के दरबार में रहे। एक बार इन्होंने अप्पा साहब की सम्पत्ति की तुलना कुबेर की सम्पत्ति से की, इस पर, प्रसन्न होकर राजा ने इन्हें एक लाख रुपये पुरस्कार में दिये। यह कवित्त आज तक पद्माकर के वंश में लखिया के नाम से पुकारा जाता है।

कुछ समय बाद ये वहाँ से चले आये और बाँदा के राजा अर्जुन सिंह के राज कवि तथा राज गुरु बन गये। इसके बाद ये सुगरा के नोने अर्जुन सिंह, रजघान के राजा हिम्मत बहादुर, जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह, उदयपुर के महाराजा भीमसिंह, ग्वालियर के महाराजा दौलत राव सिंधिया आदि अनेक राजाओं के आश्रय में रहे। जीवन के अन्तिम समय में इन्हें कुष्ठ रोग हो गया था। उसे दूर करने के लिए ये कानपुर जाकर गंगा जी के किनारे रहने लगे और यहीं इन्होंने 'गंगा लहरी' की रचना की। यहाँ इनका रोग ठीक हो गया, पर दुर्बलता के कारण गंगा के किनारे ही सं० १८९० में इनकी मृत्यु हो गई।

रचनाएँ—जगद् विनोद, हिम्मत बहादुर, विरुदावली, पद्माभरण, जयसिंह विरुदावली, आलीजाह प्रकाश, हितोपदेश, राम रसायन, प्रबोध पचासा तथा गंगा लहरी इनकी प्रसिद्ध रचानाएँ हैं। इनमें पद्माभरण कवि का रीति-ग्रन्थ है, जिसमें रस और अलंकारों का विवेचन है। गंगा लहरी और प्रबोध पचासा में कवि की भक्ति व्यक्त हुई है। 'राम रसायन' में राम कथा का वर्णन है, 'हितोपदेश' संस्कृत में हितोपदेश के आधार पर है तथा अन्य ग्रन्थों में आश्रय-दाताओं की प्रशंसा की गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भाव-पक्ष

वर्णन का क्षेत्र—पद्माकर आचार्य तथा कवि दोनों ही हैं। इनमें आचार्यत्व की अपेक्षा कवित्व की प्रधानता है। पद्माकर के काव्य में रीतिकाल की सभी विशेषताएँ और परम्पराएँ अपने सुन्दरतम रूप में मिलती हैं। इन्होंने 'पद्माभरण' में रस और अलंकारों का विवेचन करके अपने आचार्यत्व को प्रकट किया है, अपने या आश्रयदाताओं की अतिशयोक्ति प्रशंसा की है, भक्ति परक रचनाओं को लिखकर अपने भक्त-हृदय का परिचय दिया है तथा कवित्त सवैया आदि में मुक्तक काव्य लिखे हैं। अपने समय के अनुसार ही इन्होंने राधा और कृष्ण को साधारण नायक-नायिका के ही रूप में चित्रित किया है। इस प्रसंग में सावन की तीज के दिन हिंडोरे के निम्न झूलने को देखिए—

तीर पर तरनि तनूजा के तमाल तरें,
तीज की तयारी ताकि आई अँखियान में।
कहै 'पदमाकर' सो उमगि उमंग उठी,
मेंहदी सुरंग की तरंग अँखियान में।
प्रेम रंग बोरी गोरी नवल किसोरी भोरी,
झूलत हिंडोरे सों सुहाई अंखियान में।
काम झूलें उर में, उरोजन में दाम झूलें,
स्याम झूलें प्यारी की अनियारी अंखियानि में।।

भक्ति-भावना—पद्माकर के काव्य में उनकी भक्ति के भी दर्शन होते हैं। रीतिकालीन कवियों की भाँति इन्होंने कृष्ण के प्रति आलंकारिक भाषा में अपनी भक्ति का परिचय दिया है, इसलिए इसमें इनकी कल्पना और कलात्मकता की अधिकता होने से इनकी भक्ति दब सी गई है। कृष्ण को दिये उलाहने, अपनी दीनता और निवेदन से युक्त पद्माकर का निम्न सुझाव इस कथन को पुष्ट करता है—

ए व्रज चन्द गोविन्द गोपाल।
सुनो क्यों न एते कलाम किए मैं।
त्यों 'पदमाकर' आनँद के नँद,
हौं नँद नन्दन! जान लिए मैं।
माखन चोरी के खोरी ह्वै चलें,
भाजि कछू भय मान जिए मैं।
दूरि न दौरि दुरयो जो चह्यो तो,
दुरौ किन मेरे अँधेरे हिए मैं।।

पद्माकर की 'गंगा लहरी' में उनकी गंगा की भक्ति का सच्चा रूप दिखलायी देता है। गंगा की भक्ति के बल-बूते पर ही पद्माकर अपने पातकों को ललकार देते हैं।

जैसे तैं न मोसों कहूँ नैक हूँ न डरात हुतो
तैसे अब तोसों मौहूँ नेकहूँ न डरि हौं।
कहै 'पद्माकर' प्रचण्ड जो परैगो तो
उमंडि कर तो सों भुजदण्ड ठोकि लरिहौं।
चलो-चलु चलो-चलु, बिचलु न बीच ही तें,
कीच बीच नीच तो कुटुम्ब को कचरिहौं।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहि,
गङ्गा की कछार में पछार छार करि हौं।।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

रस—पद्माकर ने शृङ्गार, वीर और शान्त में रचना की है। इन्हें शृङ्गार का संयोग पक्ष अधिक प्रिय है। इसमें कवि ने अपनी कल्पना के बल से विभाव, अनुभाव और संचारी भावों के बड़े ही मनोरम चित्र प्रस्तुत किये हैं उक्त 'तीर पर तरनि तनूजा के तमाल तरैं' में ये सभी भाव स्पष्ट देखे जा सकते हैं। संभोग शृंगार के इस प्रसंग में होली खेलने का निम्न वर्णन भी अत्यन्त सुन्दर बन पड़ा है—

फागु की भीर अभीरन में गहि गोविंद भीतर लै गई गोरी।
भाई करी मन की पदमाकर ऊपर नाई अबीर की झोरी॥
छीन पीतम्बर कम्मर तें सुविदा दई मीड़ि कपोलनि रोरी।
नैन नचाय कही मुसकाय लला फिर आइयो खेलन होरी॥

वीर रस के चित्रण में पद्माकर ने अपभ्रंश काव्य शैली का सहारा लेकर शब्दों के नाद सौन्दर्य के वीर रस का वातावरण उपस्थित किया है, जो अति सुन्दर और भाव-व्यंजक बन पड़ा है—

टप्पे की टकोर टक्करन की तड़ा तड़ित,
माचै जब कुरम-करिंदों की लड़ालड़ी।
कहै पदमाकर झपट्ट को झड़ाझड़ में,
सुण्डों की सड़ासड़ भुसण्डों की भड़ाभड़ी।
मस्ती की मड़ामड़ जड़ाजड़ जंजीरन की,
पत्तों की पड़ापड़ गरज्जों की गड़ागड़ी।
छक्कों की धड़ाधड़ अड़ग की अड़ाअड़ में,
ह्वै रहे कड़ाकड़ सुदंतों की कड़ाकड़ी॥

कला पक्ष

भाषा—पद्माकर की भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है, जो अति रमणीय और स्वाभाविक है। इसमें शब्दों का चयन बड़ी ही सावधानी तथा व्यवस्था के अनुसार किया गया है। इनकी भाषा भावों के अनुसार बदलती रहती है।

शैली—पद्माकर की शैली सब प्रकार से रीतिकाल के अनुकूल अलंकारिक शैली है। वह कोमल भावों की व्यंजना में सरस तथा मधुर और वीर रस के उग्र भावों की व्यंजना में ओजपूर्ण तथा प्रवाहमयी हो जाती है। शब्दों के लाक्षणिक प्रयोग से इसमें चमत्कार आ गया है।

अलंकार—पद्माकर की कविता में अलंकारों की अधिकता है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों के प्रयोग से इनकी कविता में अपूर्ण सौन्दर्य आगया है। 'अनुप्रास' तो इनकी वाणी का सर्वत्र अनुगमन करता है। ऊपर लिखे हुए 'तीर पर तरनि तनूजा के तमाल तरैं' और 'टप्पे की टकार टक्करन की तड़ातड़····' छन्दों में अनुप्रास की छटा देखी जा सकती है।

संक्षेप में पद्माकर की कविता में भाव पक्ष और कलापक्ष का सुन्दर समन्वय है। उनकी भाषा उनके भावों को व्यक्त करने में पूर्ण समर्थ है, अतएव आचार्य शुक्ल ने इनके बारे में ठीक ही कहा है—

"ऐसा लोक प्रिय कवि रीतिकाल के भीतर बिहारी को छोड़कर कोई दूसरा नहीं हुआ।"

सारांश

जन्म संवत् तथा स्थान—१८१०, बांदा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पिता का नाम —पं० मोहन लाल
मृत्यु संवत् तथा स्थान—१८६०, गंगा किनारा, कानपुर।
रचनाएँ —ऊपर देखो।
वर्णन का क्षेत्र —रस अलंकारों का विवेचन, आश्रय दाताओं की प्रशंसा, भक्तिपरक वर्णन।
भक्ति भावना —कृष्ण तथा गंगा की भक्ति।
रस —श्रृंगार तथा वीर
भाषा —शुद्ध ब्रजभाषा
शैली —रीति कालीन अलंकारिक शैली

माखनलाल चतुर्वेदी

प्रश्न—चतुर्वेदी जी का जीवन—परिचय देते हुए उनके भाव-पक्ष और कलापक्ष पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—जीवनी तथा परिचय—'एक भारतीय आत्मा' के उपनाम से प्रसिद्ध चतुर्वेदी जी का जन्म चैत्र शुक्ल एकादशी संवत् १९४५ को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के बाबरी नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिताजी पं० नन्दलाल चतुर्वेदी एक सज्जन, मिलनसार तथा सुरुचिपूर्ण विद्वान थे। नार्मल परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् माखनलाल चतुर्वेदी ने एक अध्यापक के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया। अध्यापन काल में ही इन्होंने बंगला, मराठी, गुजराती, संस्कृत, अँग्रेजी आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। अध्यापन कार्य में चतुर्वेदी जी का मन न लग सका और इन्होंने एक पत्रकार का जीवन अपना लिया और ये 'कर्मवीर' का सम्पादन करने लगे। गान्धी जी के विचारों का चतुर्वेदी जी पर गहरा प्रभाव पड़ा और ये निरन्तर ही राष्ट्रीयता के विभिन्न आन्दोलनों में भाग लेते रहे, जिसके फलस्वरूप इन्हें कई बार जेल यात्रा भी करनी पड़ी।

चतुर्वेदी जी हरद्वार अधिवेशन में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति भी रह चुके हैं। आजकल ये 'कर्मवीर' के सम्पादन के द्वारा हिन्दी संसार की सेवा कर रहे हैं।

वर्णन का क्षेत्र

रचनाएँ—चतुर्वेदी जी की प्रतिभा बहुमुखी है। ये एक भावुक कवि ,सफल नाटककार, उत्कृष्ट कहानी लेखक, मर्मज्ञ समालोचक तथा ओजस्वी वक्ता हैं। इनकी कृतियाँ निम्न हैं—

काव्य-संग्रह—हिमकिरीटिनी, हिमतरंगिणी।
अनुवाद—शिशुपाल वध। कहानी-संग्रह—बनवासी, कला का अनुवाद।
नाटक—नागार्जुन युद्ध। गद्य-काव्य-साहित्य देवता।
पत्र-पत्रिकाएँ—प्रभा, प्रताप, कर्मवीर।

भाव पक्ष

वर्णन का क्षेत्र—चतुर्वेदी जी वास्तव में "एक भारतीय आत्मा" हैं, अतः उनकी गद्य-पद्य की सभी रचनाओं में भारतीयता पूर्ण रूप से विद्यमान है। ये शरीर से योद्धा हैं, हृदय से प्रेमी हैं, आत्मा से भक्त हैं और विचारों से क्रान्तिकारी युगद्रष्टा हैं, अतः इनकी रचनाओं में ये चारों तत्व समान रूप से प्रवाहित हुए हैं।

चतुर्वेदी जी की कविताओं को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—(१) राष्ट्रीय कविताएँ (२) प्रेम सम्बन्धी (३) अध्यात्मिक।

राष्ट्रीय कविताएँ—गान्धीवाद का चतुर्वेदी जी पर पूर्ण प्रभाव पड़ा है, अतः वे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपने सुख ऐश्वर्य की चिन्ता न करके देशोन्नति की ही इच्छा रखते हैं। 'एक फूल की चाह' नामक कविता में यह भावना स्पष्टतः देखी जा सकती है—

चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं प्रेमी माला में विध प्यारी को ललचाऊँ।

× × × ×

मुझे तोड़ लेना वनमाली। उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक।

इनकी राष्ट्रीय कविताओं में जागरण का अमर सन्देश है, क्रांति की भावना है और आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा है। जवानी नामक कविता में ये युवक आत्मोत्सर्ग के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं—

द्वार बलि का खोल, चल, भूडोल करदे, एक हिमगिरि एक सिर का मोल करदे।
मसल कर, अपने इरादों सी उठाकर, दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल करदे।।
रक्त है, या है नसों में क्षुद्र पानी? जाँचकर तू सीस दे-देकर जवानी।
आग अन्तर में लिये पागल जवानी!

ये राष्ट्र की सर्वाङ्गीण विकास को चाहते हैं और उसके लिए ये निस्संकोच भाव से रूढ़ियों का विरोध करते हैं, शोषकों को फटकारते हैं और शोषितों के प्रति सहानुभूति दिखलाते हैं। रूढ़ियों के विरोध के लिए तो ये सभी कुछ बदलने और पलटने के लिए तैयार बैठे हैं—

भला किया दुनिया पलटा दी प्रबल उमंगों के बल में।

प्रेम सम्बन्धी कविताएँ—प्रेम के क्षेत्र में चतुर्वेदी जी का हृदय प्रेम की कोमल तथा सरस भावनाओं से पूर्ण हो जाता है इनके प्रेम का क्षेत्र व्यापक तथा विस्तृत है। उसमें सौन्दर्य के साथ साथ वेदना, टीस, कसक, तथा सहानुभूति के भी दर्शन होते हैं। ये उसे केवल फूलों में ही नहीं काँटों में भी देखते हैं। उसमे सूफी कवियों की बिरह-वेदना और सगुण भक्तों जैसे समर्पण की भावना का सुन्दर समन्वय है।

आध्यात्मिक-कविताएँ—आध्यात्मिक कविताओं में ये साकार से निराकार की ओर बढ़ते हुए दिखलाई देते हैं। जहाँ कहीं ये प्रेम में अधिक डूब जाते हैं, वहाँ भावों की अधिकता से इनकी रचनाओं में अस्पष्टता तथा दुरूहता आ जाती है और 'रहस्यवाद' झलकने लगता है।

इनकी प्रत्येक प्रकार की कविताओं में इनकी कल्पना अपने विचित्र वेश तथा अलमस्त रूप में विकसित हुई है। इनकी कल्पना 'समदर्शी' भगवान् को भी नहीं छोड़ती और उससे भी तर्क पूर्ण भाषा में पूछ बैठती है—

क्या तू ही है, जो कहता है सम सब मेरे पास?
किन्तु प्रार्थना की रिश्वत पर करता शत्रु-विनाश।

कहानी कला—चतुर्वेदी जी की कहानियाँ व्यंग प्रधान हैं, जिनमें समाज के विभिन्न वर्गों पर व्यंग किया गया है। इनमें नेता, क्रांतिकारी, समाज सुधारक, साहित्यकार आदि को वास्तविकताओं के उद्घाटन में लेखक की अनुभूति तथा सूक्ष्म भेदिनी दृष्टि अपने पूर्ण कौशल के साथ प्रकट हो जाती है। 'कच्चा रास्ता' नामक कहानी में हमारे चुने हुए नेताओं का अमानवीय व्यवहार तथा जनता के मन में उनके प्रति उठने वाली भावनाओं का चित्र प्रस्तुत किया गया है। 'कला का अनुवाद' नामक कहानी में कवियों के जीवन पर व्यंग किया गया है।

इनकी कहानियों में वर्णन की अधिकता है, जिनसे कथा के विकास में बाधा पड़ जाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

रस—यद्यपि चतुर्वेदी जी ने रसों की दृष्टि से नहीं लिखा है, फिर भी इनकी कविताओं में वीर और शृंगार अपने स्वाभाविक रूप में दृष्टिगोचर होते हैं।

कला पक्ष

भाषा—चतुर्वेदी जी की भाषा ओजपूर्ण खड़ी बोली है। जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। कहीं-कहीं उर्दू शब्दों का भी प्रयोग किया गया है।

इनकी भाषा में व्याकरण के अनेक दोष पाये जाते हैं। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग खटकता है। इसके अतिरिक्त भावों के वेग के साथ साथ भाषा चलने में असमर्थ हो जाती है, जिससे उसमें अस्पष्टता आ जाती है।

शैली—चतुर्वेदी जी की कविताओं में ओज पूर्ण भावात्मक शैली के दर्शन होते हैं। इसमें भावों को ओज पूर्ण भाषा में व्यक्त किया गया है। जहाँ कल्पना की ऊँची उड़ान के साथ साथ भावों की तीव्रता होती है, वहाँ इनकी शैली में अस्पष्टता तथा दुरूहता आ जाती है।

कथा-साहित्य में कथात्मक शैली का प्रयोग किया गया है, जो सजीव तथा सशक्त है। प्रारम्भ में लम्बे लम्बे वर्णनों में छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग किया गया है। व्यावहारिक अलंकारों तथा मुहावरों के प्रयोग से शैली मनोहर हो गई है।

निबन्धों में कठिन तथा दुरूह शैली का प्रयोग किया गया है, जो गम्भीर विचारों को प्रकट करने में पूर्णतया समर्थ है।

अलङ्कार—आधुनिक काल के अन्य कवियों की भांति इन्होंने अलङ्कारों की दृष्टि से नहीं लिखा है, पर स्थान स्थान पर इनकी कविताओं में उपमा, उत्प्रेक्षा, विशेषण, विपर्यय, मानवीकरण आदि अलङ्कार स्वाभाविक रूप में आ गये हैं। भावों को व्यक्त करने के लिए कहीं ये मूर्त की तुलना अमूर्त से और अमूर्त की मूर्त से करते हुए दिखलायी देते हैं। निम्न उदाहरण में मूर्त पृथ्वी की अमूर्त इरादों से की गई तुलना कितनी मार्मिक तथा प्रभावोत्पादक है—

मसल कर अपने इरादों सी उठाकर, दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल कर दे।

छन्द—चतुर्वेदी की अधिकांश कवितायें गेय छन्दों में लिखी गई हैं।

सक्षेप में चतुर्वेदी जी अक्षरशः 'एक भारतीय आत्मा हैं। ये एक प्रमुख राष्ट्रीय कवि हैं। इनकी कविताओं में जो ओज, प्रेरणा और आत्मोत्सर्ग की जो भावना दृष्टिगोचर होती है, वे हिन्दी के अन्य कवियों में दुर्लभ है।

साराँश

जन्म संवत् तथा स्थान—	१९४५, बावड़ी।
रचनाएँ—	ऊपर देखो।
वर्णन का क्षेत्र—	राष्ट्रीय प्रेम सम्बन्धी तथा आध्यात्मिक कविताएँ और सामाजिक तथा क्रांतिकारी व्यंग पूर्ण कहानियाँ।
रस—	वीर तथा शृंङ्गार।
भाषा—	ओज पूर्ण खड़ी बोली।
शैली—	कविताओं में ओजपूर्ण भावात्मक शैली तथा कथा साहित्य में कथात्मक शैली, निबन्धों में कठिन तथा दुरूह शैली।
अलङ्कार—	उपमा, उत्प्रेक्षा, विशेषण विपर्यय, मानवीकरण।

प्रश्न २—चतुर्वेदी जी के राष्ट्र प्रेम पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—इसके लिए प्रश्न १ के 'राष्ट्रीय कविताएँ' शीर्षक देखिए।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.